सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६२

(१ अक्टूबर, १९३५–३१ मई, १९३६)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

नवम्बर १९७५ (अग्रहायण १८९७)

Rs 10.00

निदेशक, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली-१ द्वारा प्रकाशित
और शान्तिलाल हरजीवन शाह, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद-१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

जुलाई, १९३५ मे भारत सरकार अधिनियम १९३५, के पारित हो जानेसे देशके समक्ष एक नई राजनीतिक वस्तुस्थिति उपस्थित हो गई थी। जिन आठ महीनो (अक्टूबर, १९३५ से मई, १९३६ तक) की सामग्रीका समावेश प्रस्तुत खण्डमे है, उन दिनों कांग्रेस और लीग इस बात पर विचार कर रहे थे कि उक्त अधिनियमके अन्तर्गत दी गई प्रान्तीय स्वायत्तता स्वीकार की जाये अथवा नही। अन्तमे दोनोने इसे अस्वीकार करनेका ही निश्चय किया। गाधीजीने इस वाद-विवादमे कोई भी हिस्सा नही लिया, क्योकि उनका दिल तो गाँवोमे था (पृ० ३७०), और वे अपने समय तथा अपनी शक्तिका उपयोग गाँव पुर्नानिर्माणके कार्यक्रममे करते रहे जिसे उन्होंने अक्टूबर, १९३४ मे काग्रेससे अलग होनेके बाद हाथमे लिया था। यह बहुत कठिन काम था, और गांधीजीको अपने निजी पत्र-व्यवहारमे कमी करनी पड़ी ताकि कामके आधिक्य से उनका शरीर कही जवाब न दे जाये (पृ०२५)। फिर भी ७ दिसम्बरको गाधीजी बीमार पड़ ही गये और उन्हे "पूर्ण विश्राम" करने, "किसी तरह का पत्र-व्यवहार नही" करने और "न कुछ" स्वय लिखने अथवा बोलकर लिखवानेकी सलाह माननी पड़ी (पृ० १८१)। अगले वर्षके मई महीनेमे गाधीजी एक पखवाडेके विश्रामके लिए मैसूर राज्यमे अवस्थित नन्दी हिल गये। वहाँ पहुँचनेके पहले ही दिन, अर्थात् ११ मईको उन्हे डॉ० मु० अ० अन्सारीकी मृत्युका समाचार मिला। यह गांधीजीके लिए "एक जबर्दस्त धक्का" (पृ० ४२०) था, क्योकि उनके लिए स्वर्गीय डॉक्टरके साथ उनकी "दोस्ती महज राजनैतिक मित्रतासे कही अधिक थी" (पृ० ४२४)। उन्होने डॉ० जाकिर हुसैनको लिखा कि "इस मौतसे मैं जितना निराश हो गया हूँ वैसी निराशा मुझे कम ही मौतोसे होती है" (पृ० ४२१)।

यद्यपि रोजमर्राकी राजनीतिसे गांधीजीने अपनेको अलग रखा और उन्होने यहाँ तक कहा कि राजनीतिक हेतु सिद्ध करनेके लिए उस हेतुको भूल जानेकी आवश्यकता है (पृ० ९९), फिर भी आवश्यक होनेपर काग्रेस नेताओंको सलाह और मार्गदर्शन देना उन्होने जारी रखा। विशेष रूपसे जवाहरलाल नेहरूके साथ, मतभेदोके बावजूद भी, उन्होने पारस्परिक प्रेमका एक ऐसा सम्बन्ध बना लिया था जिसने आनेवाले वर्षोमे होनेवाली घटनाओकी दिशा निश्चित करनेमे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। नेहरू काग्रेसमें उग्र सुधारवादी विचारधाराका प्रतिनिधित्व करते थे और राजनीतिक तथा आर्थिक मसलोके प्रति गाधीजीका जो रुख था उससे वे सन्तुष्ट नही थे (पृ० ४२४), परन्तु जैसा कि गांधीजीने अगाथा हैरिसनको बताया, "जीवनके प्रति हमारे दृष्टिकोणों के बीचकी खाई बेशक चौड़ी हुई है, फिर भी दिलोंमे हम एक-दूसरेके जितने नजदीक शायद आज हैं, उतने पहले कभी नही थे" (पृ० ३८०)। एक सच्चे वैष्णवकी

भाँति गाधीजी यह मानते थे कि मानव-इतिहास भगवानकी लीला मात्र है जिसमे हर व्यक्तिकी भूमिका पहलेसे निश्चित है और सचाईके साथ निभाई जानेवाली सभी भूमिकाएँ अपनी जगह महत्त्वपूर्ण है। गाधीजी चूँकि ऐसा स्वीकार करते थे, इसी कारण उनके और नेहरूके बीच प्रेम-सम्बन्ध और भी अधिक मजबूत हो गया। नेहरूकी आत्मकथाकी पाण्डुलिपि पढनेके बाद अपने तथा नेहरूके दृष्टिकोणकी भिन्नता पर टिप्पणी करते हुए गाधीजीने लिखा: "आखिर हम है क्या? घटनाओके प्रबल प्रवाहमे बहते असहाय अभिनेता-मात्र ही तो! अत जहाँ हमसे गलती हो, वहाँ घटनाओको हमे सुधारनेकी सुविधा देते हुए या उनसे सुधारकी अपेक्षा रखते हुए अपनी-अपनी समझके अनुसार हमे अपने-अपने काम करते जाना चाहिए" (पृ० १८३)। इसके अलावा गाधीजी यह भी मानते थे कि "अपने तरीकोको पेश करनेमें उग्र होते हुए भी" जवाहरलाल "कार्यमे गम्भीर है" (पृ० ३८०)। इसलिए उन्होने यह समझा कि देशकी बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियोमे आवश्यक नेतृत्व प्रदान करनेमे नेहरू ही सबसे अधिक सक्षम है और इसलिए उन्होने उनसे आग्रह किया कि वे काग्रेसका अध्यक्ष बनना स्वीकार कर ले। उनकी स्वीकृति मिलनेपर गांधीजीने उन्हे लिखा कि "मुझे विश्वास है कि इससे बहुत-सी कठिनाइयाँ हल हो जायेगी और देशके लिए यही सबसे ज्यादा सही चीज हो सकती थी" (पृ० ७)।

नेहरूके साथ गाधीजीके सम्बन्धोमे परिवर्तन लानेमे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमे होनेवाली घटनाओंका भी सम्भवत कुछ हाथ था। अबीसीनियाकी लडाई शुरू हो चुकी थी और काग्रेसी नेताओमे केवल नेहरू ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जो यह समझ सकते थे कि अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियोका भारतीय आन्दोलन पर क्या प्रभाव पड सकता है। गाधीजी ने तत्काल यह बात समझ ली और नेहरूके समक्ष उन्होने स्वीकार भी किया कि "हममे से किसीको भी परिस्थितिकी जितनी पकड है, या कमसे-कम खुद मै उसे जितना समझ पानेकी आशा रख सकता हूँ, तुम्हारी पकड़ उससे कही गहरी है। इसलिए शायद तुम कोई ऐसा शोभनीय तरीका निकाल सको जिससे कि वाणी और कर्मके माध्यमसे राष्ट्रीय भावनाओको अभिव्यक्ति मिल सके" (पृ० ४१)। चाहे नेहरूके प्रभावका फल था या जो-कुछ भी हो, परन्तु गाधीजीने स्पष्ट रूपसे देख लिया कि विश्वकी घटनाओके परिप्रेक्ष्यमें भारतके अहिंसक प्रयोगका क्या महत्त्व है। नेहरूने भारतीय आन्दोलनको विश्वकी समकालीन घटनाओके सन्दर्भमे आधुनिक राजनीतिक मूल्योकी दृष्टिसे देखा और गाधीजीने उसे मौलिक मूल्य, अर्थात् अहिंसाके अपने सिद्धान्तकी दृष्टिसे देखा। अबीसीनियाकी लडाईसे प्रेरित होकर गाधीजीने अपने एक लेखमे लिखा कि "जिनके लिए अहिंसा धर्मरूप है, वे तो सदा और सर्वत्र उसके पालनका ध्यान रखेंगे"। इसलिए "इटलीने अबीसीनियाके खिलाफ जो लड़ाई छेड दी है उसकी ओरसे" वे उदासीन नही रह सकते थे और भारत पर अपने "प्रभावकी गम्भीर और स्पष्ट मर्यादाओ" से अभिज्ञ होते हुए भी उन्होने अहिंसाको "सबसे बडी शक्ति" बताया। उन्होने यह भी स्पष्ट किया कि इटलीके विरुद्ध अबीसीनिया किस प्रकार अहिसाका सफलतापूर्वक प्रयोग कर सकता है तथा इसकी (अहिंसाकी)

शक्तिका प्रदर्शन करनेके लिए ग्रेट ब्रिटेन अथवा भारत क्या कर सकता है। विशेष रूपसे भारतके बारेमें हालाँकि वे जानते थे कि "उसके प्राचीन इतिहासमें कभी भी ऐसा नहीं हुआ कि अहिंसा व्यवहारतः समस्त देशमें व्याप्त हो गई हो" और वर्तमान समयमें भी उसकी अहिंसा "कमजोरोंकी" अहिंसा थी, फिर भी उनका "दृढ विश्वास" था कि "एक-न-एक दिन उसे समस्त मानव-जातिके लिए अहिंसाका मन्त्र-दाता बनना है", क्योंकि यहाँ "अनादिकालसे अहिंसाकी एक अखण्ड परम्परा चली आ रही है" (पृ० २९-३१)।

अहिंसामें गांधीजीके विश्वासकी आधारशिला थी मनुष्यके स्वभावमें उनकी आस्था। एक अमेरिकी पत्रको सन्देश देते हुए उन्होंने कहा कि "स्थायी शान्तिमें विश्वास न करनेके अर्थ है मनुष्यके धार्मिक स्वभावपर ही अविश्वास करना", और अपने व्यक्तिगत अनुभवसे मैं कह सकता हूँ कि "गिरेसे-गिरे मनुष्यके लिए भी मानवताके बुनियादी गुणोंको अपने अन्दर पैदा कर सकना सम्भव है" (पृ० १८६-७)। अमेरिकी नीग्रो लोगोंके प्रतिनिधि-मण्डलको गांधीजीने बताया कि अहिंसा निष्क्रिय मनोवृत्तिका द्योतक नहीं बल्कि पृथ्वी पर स्वर्गका साम्राज्य है, जिसे मनुष्य यदि प्राप्त करनेका प्रयत्न करे, तो "शेष सब सहज ही प्राप्त हो जायेगा" (पृ० २१३)। यह "विश्वकी सबसे बड़ी और सबसे अधिक सक्रिय शक्ति" है "जो बिना किसी बाहरी प्रेरणा या सहायताके सक्रिय रहती है"। अहिंसाका अर्थ है 'प्रेम,' वह प्रेम जिसकी परिभाषा सन्त पालने १ कोरिन्थियन्स, १३ में की है। गांधीजीने बड़ी नम्रतासे यह स्वीकार कर लिया कि जिस अहिंसामें सब-कुछ समाविष्ट है वैसी अहिंसाका आचरण करनेवाले व्यक्तिका वे "एक अति तुच्छ उदाहरण" हैं, फिर भी इस सिद्धान्तमें उनकी असीमित श्रद्धा है (पृ० २१२-४)।

ग्राम पुनर्निर्माण कार्यक्रमको गांधीजीने सत्य और अहिंसाकी निश्चित अभिव्यक्तिके रूपमें अपनाया था। इस कार्यक्रमको किन तरीकों और किस भावनाके साथ कार्यान्वित किया जाना चाहिए इसके सम्बन्धमें उन्होंने कार्यकर्ताओंके साथ अनेक बार जो बातचीत की उनका प्रस्तुत खण्डमें समावेश किया गया है। उन बातचीतोंसे स्पष्ट हो जाता है कि आध्यात्मिक तथा नैतिक प्राणीके रूपमें मनुष्यके सम्बन्धमें गांधीजीका मुख्य दर्शन क्या था। इसी दर्शनसे ही इस कार्यक्रमको प्रेरणा मिली थी। ग्राम-सेवकोंके एक दलको गांधीजीने बताया कि यदि आप "ठीक ढंगका आहार शुरू कर देंगे और अपनी निगरानीवाले गाँवोंमें सफाईकी स्थिति कमसे-कम ऐसी बना देंगे कि वह किसी तरह रहने लायक हो जाये तो समझ लीजिए कि आपने मानव शरीरको ईश्वरका निवास-स्थल होने योग्य और अपना दिन-भरका काम ठीक तरहसे कर सकने लायक अच्छा साधन बना दिया है" (पृ० ६१-२)। गांधीजीने यह अच्छी तरहसे समझ लिया था कि शारीरिक-श्रम और जीवनकी नैतिकताके बीच घनिष्ठ सम्बन्ध है, इसलिए यदि उनका वश चलता तो वे "सबके लिए शरीर-श्रमको अनिवार्य" कर देते और ऐसी व्यवस्था करते कि "एक डाक्टर या बैरिस्टर उतना ही वेतन ले जितना कि एक मजदूर" (पृ० २३३-४)। 'गीता' में दी गई परिभाषाके अनुसार

किसी भी कामको कुशलतापूर्वक करना ही सच्चे अर्थोमें योग है। गाधीजी योगकी इस परिभाषासे परिचित थे, इसलिए वे कुशलतापूर्वक और अच्छे ढगसे किये गये कामके सौन्दर्य और सुखको बहुत गहराईके साथ महसूस कर सकते थे। अप्रैलमे काग्रेसके लखनऊ अधिवेशनके समय वहाँ आयोजित खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनीके बारेमे राय व्यक्त करते हुए उन्होने कहा कि यह प्रदर्शनी आँखो और कानोको रुचिकर लगनेवाली तथा बुद्धिको शुद्ध करनेवाली है। उन्होने उपस्थित लोगोसे प्रदर्शनी देखनेकी अपील करते हुए कहा कि "हाड-पिंजरोके देश उडीसाको तो आप जानते ही होगे। अस्थि-ककालोके उस भुखमरे दरिद्र देशसे भी कुछ कारीगर यहाँ आये हुए है। उनकी बनाई हुई हाथीदाँतकी, सीगकी और चाँदीकी चीजोको आप जाकर देखिए।" "आप देखे कि हाड़-पिंजरो तकमें बसनेवाली मनुष्यकी आत्मा किस तरह निर्जीव सीगो और धातुमे प्राण डाल सकती है" (पृ० ३४४)।

श्रम-पूँजी समस्याके बारेमे गांधीजीका जो दृष्टिकोण था वह भी श्रमकी नैतिक महत्तामे उनके दृढ विश्वास पर आधारित था। उनके विचारानुसार प्रश्न "एक वर्गको दूसके वर्गके विरुद्ध उभारनेका नही, बल्कि श्रमजीवियोके अन्दर अपनी गरिमाकी भावना भरनेका है। . . . श्रमजीवियो द्वारा अपनी गरिमा पहचानते ही पूँजी अपने उचित स्थान पर आ जायेगी, यानी श्रमिकोके हितार्थ वह एक न्यासकी चीज हो जायेगी" (पृ० ५०)। आर्थिक विषयोमे भी नैतिकताका विचार समान रूपसे महत्त्व रखता है। उन्होने बताया कि "माँग और पूर्ति का कानून मानवी नही, राक्षसी है। . . . सच्चा अर्थ-शास्त्र वही है जो प्रीतिसे चलेगा" (पृ० २५३-४)। अखिल भारतीय चरखा संघकी परिषद्को गाधीजीने सुझाया कि जनताकी प्रतिक्रिया चाहे जो हो, "हमे निरर्थक और आत्माका हनन करनेवाली *अर्थ-व्यवस्था* से होड लेनेका विचार सदाके लिए त्याग देना चाहिए" और जापानी कपडोसे होड़ लेनेके लिए अपने कपडोकी कीमतें कम करनेकी बात सोचनी हीं नही चाहिए। (पृ० ३२)। घनश्यामदास बिड़लाके साथ चर्चा करते हुए उन्होने चेतावनी दी कि "अगर हिन्दुस्तानमें जगह-जगह कल-कारखाने खडे कर दिये गये तो लूट-खसोटकी नीयतसे दूसरे देशोकी तलाश करनेके लिए हमें एक नादिरशाहकी जरूरत पडेगी" क्योकि बाजारकी खोजमे भारतको अन्य दूसरी औद्योगिक शक्तियोके साथ प्रतिस्पर्धा करनी होगी। गाधीजीने कहा, "इन संघर्षोके विषयमे सोचता हूँ तो मेरा सिर चकराने लगता है।" कुछ भावावेशमें उन्होने कहा, "नही, इसमे मुझे जरा भी सन्देह नही कि जहाँ यन्त्र-युगका लक्ष्य मनुष्योको मशीनोमें परिणत कर देना है, वहाँ मेरा यह लक्ष्य है कि जो मनुष्य आज मशीन बन गया है, उसे फिरसे उसकी मनुष्यताकी स्थितिमे पहुँचा दिया जाये।" किसी पैगम्बरकी भाँति उनका दृढ विश्वास था कि "मेरी श्रद्धाको दूसरी जो तमाम चीजें ललकारती हुई मालूम होती है उनका अन्त निश्चित है" (पृ० १५३)।

ग्राम-पुनर्निर्माण कार्यक्रमके पीछे मनुष्यको फिरसे "उसकी मनुष्यताकी स्थितिमें" पहुँचानेका जो नैतिक उद्देश्य था उसकी वजहसे गाधीजीने उस कार्यक्रमको राजनैतिक

स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए किये जानेवाले आन्दोलनसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण माना। प्राध्यापको और छात्रोके एक दलको उन्होने बताया कि "हमारी वर्तमान नीति तो राजनीति और राजनीति-अर्थनीतिके प्रश्नको अलग रखनेकी है" (पृ० १३८)। "वही राजसत्ता अच्छी गिनी जाती है, जिसका उपयोग कमसे-कम होता है," थोरोकी इस प्रसिद्ध सूक्तिको उद्धृत करते हुए गाधीजीने कहा कि "जिस राष्ट्रके अधिकाश मनुष्य बाह्य अकुशके बिना अपने काम व्यवस्थित रूपसे अच्छी तरह चलाते है वही राष्ट्र लोकतान्त्रिक शासनके योग्य होता है" और "जहाँ यह स्थिति नही है, वहाँका तन्त्र लोकतन्त्र भले ही कहलाये, वह वस्तुत. लोकतन्त्र नही होता।" इसके लिए आवश्यक है कि लोग अपने जीवनको स्वय ही विवेकपूर्वक व्यवस्थित बनाये, और इसलिए विचारका सुधार एक बहुत महत्त्वपूर्ण सुधार है। "शुद्ध विचारोमे" इतनी "बड़ी शक्ति है" कि "मनुष्य जैसे विचार करता है वैसा ही हो जाता है"। गाधीजीने बताया कि "इस अमर्यादित क्षेत्रमे राजसत्ताकी आवश्यकता नही है"। मनुष्य स्वाधीन भी "अपनी इच्छासे ही हो सकता है"। अत गाधीजीने प्रश्न उठाया कि महान् परिवर्तन करनेके लिए नेताओका मुँह ताकनेके बजाय लोग "क्यो न अपने आँगनकी गन्दगी दूर करे?" यही सच्चा स्वराज है और जो व्यक्ति "छोटा परिवर्तन नही कर सकता, वह भारी परिवर्तन करनेकी कला कभी हस्तगत नही कर सकता"। गाधीजीने बताया कि यही वजह है कि "लोगोके पाखाने किस तरह साफ रखे जाये, लोग धरती माताको जो सवेरे-सवेरे गन्दा करना शुरू कर देते है, उस घोर पापसे उन्हे किस तरह बचाया जाये, इस विषयमे विचार करना, इस पापके निवारण का उपाय ढूंढना मुझे तो बहुत ही प्रिय लगता है" (पृ० ९८-९)।

गाधीजीकी मान्यता थी कि इस प्रकारके शिक्षाप्रद कार्यक्रमके लिए ऐसे कार्यकर्त्ताओकी आवश्यकता है जो सेवाकी उच्चतम भावनासे ओतप्रोत हो। यदि वे शहरसे आये है तो उन्हे "ग्रामीण मनोवृत्ति अपनाकर उसके अनुसार ग्राम्य-जीवन बितानेकी कला सीखनी चाहिए" (पृ० ३४०)। "श्रम और सदाचारकी दृष्टिसे" ऐसा कार्यकर्त्ता ग्रामवासियोके लिए नमूना होगा। वह आठ घटे उत्पादक कार्य करेगा तथा ग्रामवासियोकी स्वैच्छिक सेवामे दो घटे लगायेगा (पृ० १४०)। उसे ऐसे भोजनका आदी बनना चाहिए जो पौष्टिक तो हो परन्तु "साथ ही ऐसा भी हो जो किसी औसत ग्रामवासीको भी सुलभ हो सके" (पृ० ५९)। गाधीजी चाहते थे कि कार्यकर्त्ता यही आदर्श अपने परिवारके दूसरे सदस्योके लिए भी उचित समझे। उन्होने कहा. "जो आदर्श हमारे लिए सत्य है, वही हमारी सन्तानके लिए भी सत्य है"। इस आदर्शका उन्होने स्वय अपने जीवनमे पालन किया, हालाँकि मानवीय दुर्बलताओके लिए उन्होने बराबर गुजाइश मानी (पृ० २३१)।

जिस अवधिकी सामग्रीका समावेश इस खण्डमे है, उस अवधिमे गाधीजीके सामने धर्म-परिवर्तनकी समस्या तीन विभिन्न रूपोमे आई और हर मामलेमे उनकी एक ही मौलिक स्थिति रही। उनका विचार था कि धर्म कोई ऊपरसे ओढा गया लबादा नही है, बल्कि यह तो व्यक्तिके आन्तरिक विकासका साधन है। १४ अक्टूबरको

वम्बई प्रान्तके दलित वर्गोके सम्मेलनमे डॉ० भीमराव अम्बेडकरने "धर्म-परिवर्तनकी धमकीका बमगोला हिन्दू समाजमे" फेंका (पृ० २९४)। उन्होने हरिजनोको सुझाया कि "जो भी धर्म आपको शेष लोगोके समान दर्जा और व्यवहार दे सके, उसे आप स्वीकार कर लीजिए"। इसपर टिप्पणी करते हुए गांधीजीने कहा कि धर्म तो कोई घर या पोशाक जैसी चीज है नही कि जिसे जब चाहे बदल ले। मनुष्यके अपने व्यक्तित्व का जैसा अभिन्न अंग उसका शरीर है उससे भी अधिक अभिन्न अग धर्म है। इसलिए गांधीजीने डॉ० अम्बेडकरसे अनुरोध किया कि यदि ईश्वर मे उनकी कोई आस्था है तो "वे अपने क्रोधको शान्त करके अपने निर्णय पर एक बार फिर विचार करें और अपने पैतृक धर्मको उसके श्रद्धाहीन अनुयायियोको दृष्टिमे रखकर नही, बल्कि स्वय उस धर्मके गुण-दोषोको ध्यानमे रखकर परखें" (पृ० ३८)। गाधीजीने हरिजनोकी शिकायतोकी वास्तविकताको तो स्वीकार किया और सवर्ण हिन्दुओको चेतावनी भी दी कि यदि वे हरिजनोको "मौलिक न्याय" देनेमे असफल होगे तो हिन्दू-धर्म ही नष्ट हो जायेगा, लेकिन साथ ही साथ उन्होने "प्रबुद्ध हरिजनो" को आग्रहपूर्वक यह भी समझाया कि "स्वयं उनका भी भला इसीमे है कि वे अपनी भौतिक उन्नतिके लिए धर्म-परिवर्तनकी धमकी" न दे (पृ० २९५-६)। यह भी भाग्यका व्यंग ही कहा जायेगा कि उनके सबसे बड़े लडके हरिलालने ठीक यही बात की। १४ मई या उसके आसपास उसने बम्बईमे इस्लाम धर्म कबूल कर लिया और अपना नाम बदलकर अब्दुल्ला रख लिया। वह नागपुरमें २६ अप्रैलको गाधीजीसे मिला था और उनसे कहा था कि "उसे तो पैसे और विषयभोगका लोभ है। इन्हे सन्तुष्ट करनेके लिए वह चाहे जो करनेके लिए तैयार हो सकता है"। उसके इस्लाम कबूल करनेसे कही अधिक दुःख गाधीजीको उसकी इसी मनोवृत्तिसे हुआ। उन्होने रामदासको लिखा कि "वह (हरिलाल) तो किसी भी धर्मका नही था। अब इस्लामका नाम लिया है, इसीलिए उसे धार्मिक तो नही कहा जा सकता"। गाधीजीने आगे लिखा कि इसके बावजूद भी "यदि वह सचमुच इस्लामकी खूबियोको अपने जीवनमें उतारे तो हमें सन्तोष ही होगा" (पृ० ४९७)। गाधीजीके ईसाई मित्र प्राय. उनसे कहा करते थे कि वे ईसाई धर्म स्वीकार कर ले क्योकि यही एक मात्र सच्चा धर्म है। एक ऐसे ही मित्रके पत्र पर टिप्पणी करते हुए गाधीजीने जवाब दिया था कि मेरे लिए ईसा "दूसरोके समान ससारके एक महान् धर्म-शिक्षक थे" परन्तु वे ही "एक-मात्र ईश्वर-प्रभव पुत्र" नही थे। गांधीजीने दावा किया कि "मेरे जीवन पर ईसाका कुछ कम प्रभाव नही है, क्योकि मै उसे अनेक ईश्वर-प्रभव पुत्रोमें से एक मानता हूँ"। गांधीजीके लिए 'गीता' ही "ससारके सब धर्मग्रन्थोकी कुजी" हो गई थी और उसकी सहायतासे उनके "गहरे-से-गहरे रहस्य" खोलनेके बाद उन्होंने पाया कि संसारके सभी महान् धर्म-शिक्षकोने शब्दोंके हेर-फेरके साथ यही बात कही है कि "मै कहता हूँ कि प्रत्येक वह मनुष्य, जो 'प्रभु-प्रभु' कहकर मुझे पुकारा करता है, स्वर्गमे प्रवेश नही करेगा। केवल वही मनुष्य स्वर्गमे प्रवेश पायेगा जो परम-पिता परमेश्वरकी इच्छाका पालन करेगा" (पृ० ३५७)।

३ और ४ दिसम्बरको गाधीजीने कृत्रिम सन्तति-निग्रहकी विख्यात समर्थक श्रीमती मार्गरेट सैंगरके साथ लम्बी वातचीत की। जैसाकि महादेव देसाईने लिखा है, उस वातचीतमे गाधीजीने "अपना पूरा जीवन उँडेल कर रख दिया" और "श्रीमती सैंगरको अपने निजी जीवनकी एक अन्तरंग झाँकी देते हुए उन्होने अपना सारा अन्तर मानो खोलकर रख दिया"। गाधीजीने उनके सामने अपनी मर्यादाएँ भी स्पष्ट कर दी — अपने उस जीवन-दर्शनकी मर्यादाएँ जिसका आग्रह "आत्म-सयमके बल पर अपना चरम विकास" करने पर है। उन्होने श्रीमती सैंगरसे स्पष्ट कहा कि उनके चलते वे गर्भ-निरोधके उपायको अपनानेकी सलाह नही दे सकते (१६५-६)। श्रीमती सैंगरके इस उद्देश्यसे गाधीजी सहमत थे कि स्त्रियोको मुक्ति मिलनी चाहिए। स्वय अपनी सारी जिन्दगी वे स्त्रियोको यह समझानेकी कोशिश करते रहे कि "वे न तो अपनी पतिकी और न अपने माता-पिताकी गुलाम है — और सो सिर्फ राजनीतिक क्षेत्रमे ही नही वल्कि घरेलू मामलोमे भी" (पृ० १६६), फिर भी वे इस विचारका समर्थन नही करते थे कि "सन्तानकी इच्छाके विना कामकी यह अभिव्यक्ति आत्माकी आवश्यकता है" (पृ० १६८)। एक पत्र-लेखककी इस वातसे वे सहमत थे कि "मनुष्य कलाकार और स्रष्टा है, इसमे तो शक नही। सुन्दरता और रग-विरगापन भी उसे चाहिए"। लेकिन उनका विचार था कि मनुष्यकी "कलात्मक और रचनात्मक प्रवृत्तिने अपने सर्वोत्तम रूपमे उसे यही सिखाया है कि वह आत्म-संयममे कलाका और अनुत्पादक सहवासमे (जो सन्तानोत्पत्तिके लिए न हो) कुरूपताका दर्शन करे"। गाधीजीके लिए कलाका सम्वन्ध कोरी कल्पनासे नही वल्कि जीवनसे भी था। "कलाकी ओर उसकी जो दृष्टि है" उसने मनुष्यको केवल यही नही सिखाया है कि "वह उपयोगितामे ही आनन्दकी खोज करे, अर्थात् वही आनन्दोपभोग करे जो हितकर हो" वल्कि, गाधीजीके विचारानुसार, "वादमे उसने यह भी जाना कि जीवित रहनेके लिए ही उसे जीवित नही रहना चाहिए, वल्कि अपने सहजीवियोकी, और उनके द्वारा उस प्रभुकी सेवाके लिए उसे जीना चाहिए जिसने उसे तथा उन सवको वनाया या पैदा किया है" (पृ० ३२९)। सेवा और त्यागमे ही जीवनकी सार्थकताका आनन्द निहित है, यह वोध गाधीजीके विचारोमे वार-वार परिलक्षित होता है।

७ दिसम्वरसे लेकर अगले दो महीनो तक वीमार रहना गाधीजीके लिए मनोवैज्ञानिक रूपसे एक वहुत ही कष्टकर अनुभव था। क्योकि, जैसाकि उन्होने 'हरिजन' मे प्रकाशित अपने एक लेख "प्रभु कृपाके विना कुछ नही" मे स्वीकार किया था, इससे न केवल यही वात स्पष्ट हुई कि "'गीता' का जो अर्थ मैंने समझा है उसका मेरा पालन वहुत त्रुटिपूर्ण है" वल्कि यह भी प्रकट हुआ कि अनजाने ब्रह्मचर्यका उल्लघन भी हुआ है। गाधीजीके अनुसार 'गीता' की मुख्य शिक्षा यह है कि मनुष्यको अनासक्त होना चाहिए, लेकिन उन्होने पाया कि जिन वहुत सारी समस्याओको हल करनेकी जिम्मेदारी उनपर आई, "'गीता'-भक्तको उनके प्रति जैसा अनासक्त रहना चाहिए वैसा मेरा मन या शरीर नही रहा है"। उन्होने कहा, "सचमुच मेरा यह विश्वास है कि जो व्यक्ति प्रकृति-माताके आदेशका पूर्णत: अनुसरण

करता है उसके मनमे बुढापेका भाव कभी आना ही नही चाहिए। ऐसा व्यक्ति तो अपने मनमें सदा तरोताजा और नौजवान महसूस करेगा और उसकी देह यथासमय जीर्ण होनेपर उससे उसी तरह पृथक् हो जायेगी जैसे किसी स्वस्थ वृक्षके सूखे पत्ते झर जाते है"। गाधीजीका विश्वास था कि "भीष्म पितामहने स्वय मृत्युशय्या पर पडे हुए भी युधिष्ठिरको जो दिव्य उपदेश दिया" (पृ० २२५), वह उक्त तथ्यका एक जीता-जागता नमूना है। बीमारीके दौरान गाधीजीने जो एक अन्य मानसिक उद्वेलन महसूस किया उसके चलते वे अपने-आपसे "तग" आ गये थे (पृ० २२६)। जैसा कि उन्होने प्रेमाबहन कटकको बताया, "शुकदेवकी स्थिति प्राप्त करनेका" प्रयत्न वे वर्षोसे करते आ रहे थे। वह स्थिति सिद्ध करके वे उन लोगोकी तरह "नपुसक" बन (जाना चाहते थे पृ० ४६२) जिन्होने, ईसामसीहके शब्दोमें, "स्वर्गके साम्राज्यके लिए अपने आपको नपुसक बना लिया था"। वे जानते थे कि "जिसका मन एक बार ईश्वरमे लग जाये वह कोई पाप नही कर सकता"। परन्तु बीमारीके दौरान उन्हे जो अनुभव हुआ उससे उन्हे मालूम हो गया कि इस स्थितिसे वे कितनी दूर थे। इस एहसासने उन्हे विनम्र बना दिया। इस अनुभवके बाद गाधीजीने "उस आराममे ढिलाई कर दी" जो उनपर "लादा गया था" और वे सक्रिय होकर कार्यमे जुट गये (पृ० २२६)।

फरवरी-मार्चमे हुई गाधी सेवा सघकी बैठकोमे यह प्रस्ताव आया था कि गाधी-विचारधारा-सम्बन्धी एक समिति बनाई जाये। जब यह बात गाधीजीके कानोमें डाली गई तो उन्होने यह स्पष्ट कर दिया कि अगर यह समिति कोई कार्य करे तो "सिर्फ यही कि मेरे मन्तव्यो और विचारोका सग्रह कर ले" क्योकि उनके दिमागमे गाधी-वाद जैसी कोई ऐसी चीज नही थी जिसकी एक सुव्यवस्थित सिद्धान्तके रूपमे सहिता बनाई जा सके। उनका तरीका नित्य जीवनमे विकास करनेका था, अमूर्त विचार प्रतिपादित करनेका नही। गाधीजीने बताया कि "मैने तो केवल बगैर योजनाके, अपने निजी ढगसे यही प्रयत्न किया है कि हम अपने नित्य जीवनमे सत्य, अहिंसा आदि सनातन तत्त्वोका व्यापक प्रयोग करे। बालककी तरह जैसी प्रेरणा मिली, प्रवाह मे जो चीजे आ गई, उसमे जो सूझा वही किया" और बादमे ही उन्हे पता चला कि "जो मै कर रहा हूँ, वे सत्यके प्रयोग है" (पृ० २३८)।

गाधीजी किसी गाँवमें जाकर बस जानेका स्वप्न देखते आ रहे थे। १ मईको उन्होने अमृत कौरको लिखा कि "आखिरकार मैं सेगाँव आ गया हूँ। . . . हम कल आये है। रात बहुत सुहावनी थी" (पृ० ३८५)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओ, व्यक्तियो, पुस्तकोके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओके आभारी हैं।

संस्थाएँ . साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और सग्रहालय; नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि और सग्रहालय, नई दिल्ली; नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली; राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली, बम्बई सरकारका गृह-विभाग और भारत कला भवन, वाराणसी।

व्यक्ति : श्री आनन्द तो० हिंगोरानी; श्री आर० जे० सोमन, श्री उमाशंकर जे० जोशी, अहमदाबाद, श्रीमती एफ० मेरी बार; श्री एम० मुजीब, दिल्ली; श्री एस० अम्बुजम्माल; श्री क० मा० मुशी; श्री कनुभाई ना० मशरूवाला; श्रीमती गंगाबहन वैद्य, बोचासन; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री चन्द त्यागी; श्री छगनलाल गाधी; श्री जीवनजी डा० देसाई, अहमदाबाद; श्री डाह्याभाई म० पटेल, बम्बई; श्री नानाभाई इ० मशरूवाला; श्री नारणदास गाधी, राजकोट; श्री नारायण देसाई, वाराणसी; श्री नीलकण्ठ मशरूवाला; श्री परीक्षितलाल एल० मजमूदार; श्री पी० जी० पानसे, वर्धा; श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली; श्रीमती प्रेमाबहन कटक, सासवड़; श्री फूलचन्द के० शाह; श्री भगवानजी अ० मेहता; श्री भगवानजी पु० पण्ड्या; श्रीमती मगला देसाई, बड़ौदा; श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, अकोला; श्री महेश पट्टणी, बम्बई; श्रीमती मीराबहन, गाडेन, आस्ट्रिया, श्री मुन्नालाल जी० शाह, वर्धा; श्री मुलुभाई नौतमलाल, वाकानेर; श्रीमती राजकुमारी अमृत कौर; श्रीमती रामेश्वरी नेहरू; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्रीमती वनमाला देसाई, नई दिल्ली; श्री वालजी गोविन्दजी देसाई, पूना; श्री शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई; श्रीमती शारदाबहन जी० चोखावाला, सूरत; श्री शिवाभाई जी० पटेल और श्री सतीश द० कालेलकर, नई दिल्ली।

पुस्तकें : 'ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली)का विवरण', 'टु द स्टुडेंट्स', 'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो – ६ : ग० स्व० गंगाबहेनने', 'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो – १० : श्रीमती प्रभावतीबहेनने', 'बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूकी छायामे मेरे जीवनके सोलह वर्ष', 'बापूके पत्र – ८ :

बीबी अमतुस्सलामके नाम', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री', 'श्रीमद्राजचन्द्र,' 'श्रीराम-चरितमानस', 'सत्याग्रह इन गांधीजीज वर्ड्स', 'सुरीनामके प्रवासी-भारतीयोंके नाम', 'हिन्दी संग्रहालय: संक्षिप्त परिचय' और '(ए) हिस्ट्री ऑफ इंडियन्स इन मॉरिशस'।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'गुजराती', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'लीडर', 'हरिजन', 'हरिजन-बन्धु', 'हरिजन-सेवक', 'हितवाद', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्सका पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके अनुसन्धान तथा सन्दर्भ विभाग और श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें मदद देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोमे मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जोकी स्पष्ट भूलोको सुधार दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके है, उनका हमने मूलसे मिलान और संशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमे संशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमे छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये है। भाषणो और भेटकी रिपोर्टोंके उन अंशोमे, जो गांधीजीके नही है, कही-कही कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोमे की गई है, और आवश्यक होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशन की है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ आधार पर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका और 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित-कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. पत्र : विश्वनाथको

वर्धा
१ अक्टूबर, १९३५

प्रिय विश्वनाथ,

तुम्हारा पत्र मिला। ५ तारीखको तुम्हारी राह देखूँगा। अगर स्टेशन पर तुम्हे यहाँ लिवा लानेके लिए गया कोई आदमी न मिले तो मगनवाड़ीका रास्ता पूछ कर आ जाना। स्टेशनसे यहाँ आनेमें दस मिनटसे भी कम ही लगते हैं। मगर वैसे तुम्हे लिवा लानेके लिए वहाँ कोई-न-कोई रहेगा जरूर।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

सतीश बाबूको नही लिख रहा हूँ।

श्रीयुत विश्वनाथ
खादी प्रतिष्ठान
१५, कॉलेज स्क्वेयर, कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३१) से।

२. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

१ अक्टूबर, १९३५

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं रामजीके बारेमें समझता हूँ। जैसाकि तुमने लिखा, उसका स्वभाव तो वैसा है ही। ऐसे व्यक्तिके बारेमें क्या कहा जाये जिसकी वजहसे लक्ष्मीदास-जैसा आदमी भी उकता गया हो। उसे सहन करनेमें हमारा प्रायश्चित्त है। शेष सब मिलने पर।

जब तुम आओ तो मुझे इजनके बारेमें भी बताना। इजनसे चलनेवाला पम्प यदि बैलोका शत्रु सिद्ध हो तो हमें उससे बचकर चलना होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९०) से।

३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

१ अक्टूबर, १९३५

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। इस पत्रसे मुझे काफी मदद मिलेगी। हकीम साहबका नाम लिख भेजना।

वच्छूभाई[1] ने तुम्हे अच्छी चिन्तामे डाल दिया है। व्याधि, जरा और मृत्यु तो जीवनके साथ जुडे ही हुए है। फिर भले चरक-जैसे वैद्य और लुकमान-जैसे हकीम इस दुनियामे आते-जाते रहे। अच्छी बात यह है कि व्याधिसे मुक्त होने और मृत्युकी तिथि ईश्वर अपने ही पास छिपाये रखता है। अत यथासम्भव दोनोका सामना करने का सीमित प्रयत्न हम कर सकते है। वच्छूभाईके समाचार मुझे देती रहना। उससे मेरे आशीर्वाद कहना।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती गगावहन वैद्य
रामदास भीमजीका वगला
बोरीवली

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ८५। सी० डब्ल्यू० ८८१९ से भी; सौजन्य : गगावहन. वैद्य

४. पत्र : फूलचन्द के० शाहको

१ अक्टूबर, १९३५

भाई फूलचन्द,

मैं तो मान बैठा था कि आप मुझे बिल्कुल भूल ही गये, इस कारण आपका पत्र आनेपर मुझे बहुत खुशी हुई।

हरिजनोसे प्रेम रखनेवालो के लिए मेरा इतना ही सन्देश है कि अपने कार्यकी शुद्धतामे उनका विश्वास दृढतर हो।

गुजरातीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य प्यारेलाल

१. गगाबहनका भतीजा।

५. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
२ अक्टूबर, १९३५

चि० अम्बुजम्[1],

तुम्हारा पत्र और ५५ रु० प्राप्त हुए। यह उत्तर लिखते समय मुझे एक नवयुवककी याद हो आई है जो दानपर ही निर्भर है और वह अपनी पढाई जारी रखनेके लिए मुझसे कुछ पूरक सहायता चाहता है। ये ५५ रुपये मैं खास उसी प्रयोजनके लिए अलग रखना चाहता हूँ। यदि मुझे पूछताछके बाद पता चले कि उसे और सहायता की आवश्यकता नही है तो मैं इसे सामान्य हरिजन कोषमें भेज दूँगा।

तुम्हारा भेजा हुआ फलोका पार्सल भी मिला। मेरे जन्मदिन पर मेरे दीर्घायु होनेकी जो शुभकामना तुमने लिख भेजी है उसके पीछे तुम्हारी भावनाकी गहराई मैं जानता हूँ। किन्तु तुम भी भली प्रकार जानती हो कि विधाताने जितनी आयु मुझे प्रदान की है उसमें मनुष्य चाहे कितना भी प्रयत्न कर ले, फिर भी एक पलकी भी अभिवृद्धि नही हो सकती। जो-कुछ हो, जबतक जीवन है तबतक हम हमेशा एक दूसरेके स्वास्थ्य और दीर्घायुके लिए प्रार्थना तथा अन्य प्रयत्न करते ही रहेंगे।

ऐसा लगता है कि अपने पिछले बुखारसे तुम पूरी तरह मुक्त होकर स्वास्थ्य-लाभ कर रही हो। इससे मुझे खुशी हुई।

बापूके आशीर्वाद[2]

श्रीमती अम्बुजम्माल
अमजद बाग, लुज
मैलापुर, मद्रास

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. एस० श्रीनिवास अय्यंगार की पुत्री। इस पत्रमें तथा अम्बुजम्मालको लिखे अन्य पत्रोंमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

२. यह देवनागरी लिपिमें है।

६. पत्र : पुरुषोत्तमदास बुझाको

२ अक्टूबर, १९३५

भाई पुरुषोत्तमदास बुझा,

आपका पत्र मिला। मैं तो पंडित रामचन्द्रके उपवासका विरोधी हूं। उसमें मैं अज्ञान और हिंसा पाता हूं। इसलिये उसमे मेरा अनुमोदन तो हो ही नही सकता है। जो मित्र मुझको लिखते हैं उनसे मैं यही विनय कर रहा हूं कि वे उनको भविष्यमे पशुबलि बंद करानेका आन्दोलन करनेका विश्वास दिलाकर उनका उपवास छुडवावे।

मो० क० गांधी

श्री पुरुषोत्तमदास बुझा
५, रॉयल एक्सचेंज प्लेस
कलकत्ता

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ९८३९) से, सौजन्य : भारत कला भवन

७. आभार[1]

[२ अक्टूबर, १९३५ के पश्चात्]

मेरी ६७ वी वर्षगाँठ पर भारत तथा विदेशोसे मित्रोने मुझे शुभकामनाओ तथा आशीर्वादके जो तार और पत्र भेजे है, उन सबके प्रति मैं कृतज्ञ हूँ। मैं यही आशा करता हूँ कि मेरे लिए जो-कुछ भी भविष्य बदा है उसमें मैं उनकी इस अमूल्य भेंट का सत्पात्र सिद्ध होऊँ। मैं व्यक्तिगत रूपसे हरएकको धन्यवाद भेजनेमे बिल्कुल असमर्थ हूँ जिसके लिए वे मुझे क्षमा करे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१०-१९३५

१. यह 'टिप्पणियाँ' के अन्तर्गत छपा था। देखिए अगला शीर्षक भी।

८. आभार[1]

[२ अक्टूबर, १९३५ के पश्चात्]

मेरे सडसठवे जन्मदिनके लिये मुझे वहूत वहीनो और भाईओने हर प्रातोमेसे अपनी शुभेच्छाके और अपने आशीर्वादके तार और खत भेजे है उनका उपकार कंगाल वाचासे तो माना ही नहि जा सकता है। ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि भाई बहनोके शुद्ध प्रेमके लिये मुझे लायक वनावे और जनताका सच्चा सेवक बननेकी शुद्धि वक्षे। मै जानता हू कि जो तार और खत आये है और रूखासूखा विनय नही है लेकिन हार्दिक भावोका प्रदर्शन है।

इन सदेशोका व्यक्तिगत स्वीकार असभव है ईसलिये मेरी आशा है कि इसी स्वीकारसे सव भाई वहिन सतुष्ट रहेगे।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०२) से।

९. पत्र : वियोगी हरिको

[२ अक्टूबर, १९३५ के पश्चात्][2]

भाई वियोगी हरि[3],

इसमे व्याकरणका अथवा महाविराका दोप है तो दुरस्त किया जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०२) से।

१. यह १२-१०-१९३५ के हरिजन सेवक में छपा था तथा इसका गुजराती अनुवाद हरिजनबन्धु, १३-१०-१९३५ में प्रकाशित हुआ था।

२. यह टिप्पणीके रूपमें पिछले शीर्षकके साथ भेजा गया था।

३. हरिजन सेवक के सम्पादक।

१०. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

वर्धा
३ अक्टूबर, १९३५

चि० अमला[1],

तुम्हारा पोस्टकार्ड पाकर बड़ी खुशी हुई। कान्ति तुमसे स्टेशन पर मिला, फिर भी तुम न उतरी—यह तुमने अनुचित किया। लेकिन अगर वहाँ तुम्हे कुछ मिल जाता है तो बहुत अच्छा। परेशान मत होना, धीरज न छोडना। हीरालाल जो पैसे दे, ले लेना। वे तुमसे फिर मिलेंगे। समय-समय पर मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद[2]

श्रीमती अमला

अंग्रेजीसे : स्पीगल पेपर्स; सौजन्य . नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

११. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३ अक्टूबर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल[3],

तुम्हारे पत्र घडीकी-सी नियमिततासे आते है और वरदान-जैसे लगते है।

मैं देखता हूँ कि कमला बडी बहादुरीसे प्रयत्न कर रही है। इसका फल मिलेगा। प्राकृतिक चिकित्साके लिए मेरा पक्षपात तुम्हे मालूम है। स्वयं जर्मनीमे अनेक प्राकृतिक चिकित्सालय है। सम्भव है, कमलाका मामला उस मंजिलसे गुजर गया हो। परन्तु कौन जाने कब क्या होता है। मुझे ऐसे मामले मालूम है जो चीर-फाडके काबिल बताये जाते थे, लेकिन प्राकृतिक चिकित्सासे अच्छे हो गये। जैसा भी है, मै अपना अनुभव तुम्हे लिख रहा हूँ।

१ और २. इस पत्रमें तथा मार्गरेट स्पीगलको लिखे अन्य पत्रोंमें सम्बोधन और हस्ताक्षर देवनागरी लिपिमें हैं।

३. जवाहरलाल नेहरू अपनी पत्नी कमलाके संग जर्मनीमें थे जहाँ सेनेटोरियममें उनकी पत्नीका इलाज चल रहा था।

अगले वर्षके लिए ताज पहननेके बारेमे तुम्हारा पत्र हर्षदायक था। तुम्हारी स्वीकृति पाकर मुझे प्रसन्नता हुई। मुझे विश्वास है कि इससे बहुत-सी कठिनाइयाँ हल हो जायेगी और देशके लिए यही सबसे ज्यादा सही चीज हो सकती थी। लाहौरमे तुम्हारी अध्यक्षता[1] लखनऊकी अध्यक्षतासे बिलकुल भिन्न वस्तु थी। मेरी रायमे लाहौर मे हर बातमे रास्ता साफ था। लखनऊमे किसी भी बातमे ऐसा नही होगा।[2] परन्तु मेरे खयालसे उस परिस्थितिका सामना जितनी अच्छी तरह तुम कर सकोगे, और कोई नही कर सकेगा। भगवान तुम्हे यह भार उठानेकी पूरी शक्ति दे।

मै तुम्हारे अध्यायोको अधिक-से-अधिक तेजीके साथ पढ रहा हूँ। वे मेरे लिए बड़े दिलचस्प है। इससे अधिक अभी नही कहूँगा।

इस पत्रके साथ तुम सबके लिए हम सबका प्रेम।

बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू

अग्रेजीसे. गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३५, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

१२. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

३ अक्टूबर, १९३५

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। पत्र स्पष्ट है। उसके मिलनेके पहले ही मुझे ठक्कर बापाका[3] पत्र मिला था और उन्होने पूरी जिम्मेवारी मुझपर डाल दी है। उसके आधार पर मैने छगनलालको एक लम्बा पत्र लिखा है। जीवनलालभाई पर मै और ज्यादा दबाव नही डालना चाहता। अपनी सामर्थ्यके अनुसार जो वह कर सके सो भले करे। फिलहाल छगनलालकी पद्धतिमे कुछ बहुत हेर-फेर नही किया जा सकता। सेवाके कार्यमे वह अपनी शक्ति खर्च कर सकता है और ठक्कर बापा उसपर मुग्ध है। अत उसे स्वयपर आत्मविश्वास होना चाहिए। वह स्वय ही किसी अध्यक्षको खोजकर काम करता रहे। ठक्कर बापाका सुझाव है कि या तो नानालाल अध्यक्ष हो या नारणदास। किन्तु नारणदास और छगनलालका मेल नही बैठेगा। क्योकि दोनो अपने-अपने ढगसे काम करनेवाले है इसलिए कोई एक-दूसरेका अध्यक्ष नही हो सकता। यदि यह सम्भव हो तो भी मै नारणदासको यहाँ बुला लेना चाहूँगा, बशर्ते कि उसके माता-पिताकी कोई अन्य व्यवस्था की जा सके। छगनलाल तो फिलहाल काठियावाड छोडनेकी स्थितिमे नही है। मै तेरा पत्र छगनलालको भेज रहा हूँ। तुम उसके साथ भरसक

१. १९२९ में।
२. काग्रेस-अधिवेशन अप्रैल १९३६ में होनेवाला था।
३. अमृतलाल वि० ठक्कर।

विचार-विमर्श करना। हमारा धर्म हरिजनोकी सेवा करना है और उक्त समस्या को हमें केवल इस दृष्टिकोणसे सुलझाना है कि सर्वोत्तम सेवा किस तरह की जा सकती है। तू स्वय भी असन्तुष्ट हे, उसका तो यह मतलव है नही कि तू हरिजन-सेवाका काम छोड देना चाहता है। वल्कि तेरे सामने भी वही समस्या है; अर्थात् यह जो अडचन आ पडी है उसे सुलझानेमें तू कहाँतक हाथ वँटा सकता है।

मुझे समय-समय पर लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१३. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा
४ अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

मैथ्यूको[1] लिखा मेरा पत्र तुमने देखा होगा। लीलावती आ सकती है। हमें उससे उतना ही काम लेना चाहिए जितना वह करना चाहे। मुझे हरिलालका पत्र मिला है। उसमें उसने यहाँ आनेका किराया और अनुमति माँगी है। साथका पत्र[2] उसे दे देना। यहाँ चरखा सप्ताहके दौरान लगभग पचास हजार तार सूत काता गया। कुछ लोगोने तो अखण्ड कताईमें भाग लेनेके अतिरिक्त कभी-कभी आठ-आठ घंटे भी कताई की। उन्होने इसमे खूब रस लिया। मनु भी उनमे थी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

जमनालालजी यहाँ पहुँच गये है। मैने उनसे बात की है। वे तुम्हारा निर्णय जाननेको अधीर है। उनकी इच्छा महिला आश्रम और कन्या आश्रम दोनोको एक करके उसकी पूरी जिम्मेदारी तुम्हे सौंपनेकी है। यह सुझाव मेरा था। यदि तुमने जमनादाससे वातचीत कर ली हो और खुशीसे माता-पिताकी आज्ञा मिल सकती हो तो मुझे तार देना। यदि तुम आनेका निश्चय कर सकते हो तो इतना काफी है। आनेमें कुछ समय लगे तो उसकी कोई चिन्ता नही। किन्तु यदि तुम्हारे निर्णयकी सूचना मिल जाये तो निश्चित प्रवन्ध किया जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. पी० जी० मैथ्यू।
२. पत्र उपलब्ध नहीं है।

१४. पत्र : शारदा चि० शाहको

४ अक्टूबर, १९३५

चि० शारदा[1],

मै तो तुम्हारा पत्र पानेकी आशा छोड ही बैठा था। मुझे अनेक बार तुम्हारा ध्यान आता है। यदि तुम चाहो तो इस विचारसे अपने मनको कुछ सन्तोष दे लो कि मुझे पत्र लिखनेसे कतरानेवाली एक तुम ही नही हो। तुमने मुझे नौ महीनेके बाद भी पत्र लिखा तो सही। हाँ, नारणदास तो तुम्हारे स्वास्थ्यकी सूचना मुझे देता ही रहता है। मुझे तुम्हारे कार्यकलापोकी भी सूचना मिली थी।

अच्छा, यदि तुम वहाँ अपनी पढाई नही कर पाती तो मै चाहूँगा कि तुम विद्यापीठ चली जाओ जहाँकि इस समय सभी सुविधाएँ है और तुम्हारी अनेक सहेलियाँ भी वही पढ रही है। किन्तु मेरी एक पक्की शर्त है और वह यह कि तुम्हे अपने माता-पितासे दूर नही होना है। वे जहाँ कही भी रहे, उन्हीके पास रहकर तुम यथाशक्य लाभ उठाओ। प्रमुख रूपसे तुम्हारे स्वास्थ्यका ध्यान रखकर ही मैंने यह शर्त रखी है। बेशक मैथ्यूजी वहाँसे चले जाये, फिर भी वही रहते हुए यदि तुम स्वय प्रयत्न करो तो अपनी अंग्रेजी सुधार लोगी। चूँकि तुम्हे परीक्षाओमे पास होनेका तो कोई मोह नही है, तुम सुशीलाबहनकी पाठशालामे जो विषय मिले उनमे से ही अपनी रुचिके विषय ले सकती हो। इसके अलावा उस पाठशालामे पढ़नेवाली लड़कियो पर सरलतासे तुम्हारा थोडा-बहुत प्रभाव पडेगा। उन लडकियोकी मौज उडानेकी प्रवृत्ति अपनानेका तुम्हे कुछ लोभ होगा, ऐसी आशका मुझे बिल्कुल भी नही है। और न ही तुम्हे ऐसी आशका होगी।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९६९) से, सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

1. चिमनलाल शाहकी पुत्री।

१५. तीन प्रश्न

श्री गोपवन्धु चौधरीने बारी, कटकसे लिखते हुए तीन प्रश्न भेजे है·

१. जिस खादीका उत्पादन वस्त्र-स्वावलम्बनकी दृष्टिसे किया जा रहा हो, उसमें बची हुई खादीका भाव क्या होना चाहिए?

२. अगर किसी ग्रामवासीके पास रुई है, मगर उसके परिवारकी आवश्यकताएँ पूरी करनेको कातनेवाले न हो और वह अपने परिवारकी जरूरतोके लिए अपने गाँवके या पड़ोसके गाँवोके लोगोसे अपनी रुई कतवाना चाहता हो तो मजदूरी क्या होनी चाहिए? क्या व्यापारिक खादीके लिए प्रस्तावित गुजरके लायक मजदूरी यहाँ लागू होगी? या वह आपसमें तय कर लेनेको छोड़ दी जायेगी?

३. जब कत्तिनके पास उसकी अपनी रुई न हो और वह आजीविकाके लिए नकद मजदूरी पर न कातकर अपने कपड़ेकी जरूरत पूरी करने लायक रुईके लिए ही कातती हो तो उसकी मजदूरी क्या होनी चाहिए?

चरखा सघकी मारफत आनेवाली बचतकी खादीका भाव वही हो सकता है जो प्रान्तमे और किसी खादीका होगा। अब चूँकि शहरोकी जरूरतके अलावा किसी प्रान्तमे पैदा होनेवाली खादीका अधिकाश उसी प्रान्तमे बेचा जायेगा इसलिए भिन्न-भिन्न प्रान्तोके भावोमे शायद आजसे अधिक फर्क रहेगा। परन्तु बचतकी खादी और दूसरी किसी खादी मे कोई भेद नही हो सकता। असलमे सारी खादी बचतकी खादी ही होगी, क्योकि जो पूरी तरह खादीधारी नही होगा ऐसे किसी भी व्यक्तिकी खादी चरखा सघ या उसकी शाखाएँ स्वीकार नही करेगी। अवश्य ही परिवर्तन-कालमे इस नियमको ढीला रखना पड सकता है।

पहले प्रश्नके उत्तरमे जो-कुछ कहा गया है उसे ध्यानमे रखते हुए, इसमें शक नहीं कि जहाँतक सघका सम्बन्ध है उसे तो सभी कत्तिनोको एक-सी मजदूरी देनी पडेगी। परन्तु कत्तिनोके आपसी व्यवहारका नियन्त्रण सघ नही करेगा। उन्हे यह आपसी लेन-देन खुद तय कर लेने देना चाहिए। दूसरी कोई भी नीति असफल रहेगी।

तीसरे मामलेमे भी पहले दो का ही सिद्धान्त लागू होता है। याद रखनेकी बात यह है कि सघ गुजारेके लायक न्यूनतम मजदूरी देनेके लिए वही जिम्मेदार रहेगा जहाँ उसका खुदका सम्बन्ध होगा। अगर उसकी नीति लोकप्रिय और इसलिए सामान्य हो जाती है तो इसमे सन्देह नही कि कम मजदूरी पर काम कराना किसीके लिए भी असम्भव नही तो कठिन जरूर हो जायेगा। और चरखा-सघ तथा ग्रामोद्योग सघमे सहयोग इतना प्रबल हो सकता है कि और सब विभागोका मापदण्ड

तुरन्त ऊँचा होकर बराबरी पर आ जाये। इस प्रयत्नकी सफलताका आधार खरीदार जनताके हार्दिक सहकार पर रहेगा। अगर वे अच्छी तरह समझ ले कि जिन गरीब ग्रामीणो पर उनका अस्तित्व निर्भर करता है उनका वे अब शोषण नही कर सकेगे, तो बेकारी और अर्ध-बेकारीकी समस्या अपने-आप हल हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-१०-१९३५

१६. कविठाको खाली कर दे

पिछले हफ्ते आये अपने एक पत्रमे[1] श्री अ० वि० ठक्कर लिखते है

अपनी सहायता आप करनेके समान दुनियामे कोई दूसरी सहायता नही। ईश्वर उन्हीकी मदद करता है, जो खुद अपनी मदद करते है। इन हरिजनोने कविठा छोडकर अन्यत्र चले जानेका जो इरादा किया है उसे अगर उन्होने पूरा कर दिखाया, तो इसमे सिर्फ उन्हीको चैन नही मिलेगा, बल्कि उन्हीकी तरह सताये जानेवाले दूसरे-भाइयोके लिए भी वे रास्ता तैयार कर देगे। अगर काम धन्धेकी तलाशमे लोग अपना गाँव छोडकर दूसरी जगह चले जाते है, तो फिर अपनी इज्जत-आबरूकी तलाशमे उनके लिए अपना घर-द्वार छोड देना क्या और भी अधिक आवश्यक नही है? मुझे आशा है कि हरिजनोके हितचिंतक इन गरीब हरिजन कुटुम्बोको उस क्रूर कविठा गाँवको खाली कर देनेमे, जो उन्हे आज पनाह नही दे रहा है, जरूरी मदद देगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-१०-१९३५

१७. एक अटपटा सवाल

जबसे कत्तिनोकी मजदूरीकी दर बढानेकी बात उठी है, तबसे खादी प्रेमियोके मनमे तरह-तरहकी शकाएँ पैदा होने लगी है। उदाहरणके लिए, उन्हे ऐसा लगता है कि खादीकी कीमत चढ जानेसे उसकी खपत कम हो जायेगी। पर मै यह आशा कर रहा हूँ कि खादीकी कीमतमे इस थोडी-सी वृद्धि की आवश्यकताका लोग समर्थन ही करेगे। आजतक चरखा सघने असाधारण प्रयत्न करके खादीकी कीमत बराबर घटाते रहनेका जो ध्येय रखा है उससे लोगोको लाभ ही हुआ है। खादी आज जितनी सस्ती है उतनी कभी नही थी। फिर भी प्रचार-कार्य न होनेके कारण खादी

१. यहाँ नहीं दिया गया है। अ० वि० ठक्कर ने लिखा था कि गुजरात के धोलका ताल्लुकाके कविठा गाँवके हरिजनोने स्थानीय सवर्ण हिन्दुओंके असह्य अत्याचारोंसे तग आकर इस गाँवको छोड देनेका निश्चय किया है। देखिए खण्ड ६१, पृ० ४१०-११ भी।

की बिक्री कम हो गई है। यदि व्यवस्था-खर्च बढाये बिना कुछ बाकायदा प्रचार-कार्य होता रहे, तो मुझे इस बातमें तनिक भी सन्देह नही कि कीमत बढ जानेपर भी खादी की बिक्री बढ़ सकती है।

किन्तु हमें बुरीसे-बुरी स्थितिके लिए पहले ही से तैयार रहना चाहिए। चरखा-संघको, खादीकी खपत घट जानेके डरसे, कत्तिनोके प्रति न्याय करनेसे मुँह नही मोडना चाहिए। अगर आवश्यक हो तो कत्तिनोकी सूचीसे उन बहनोके नाम निकाल दिये जायें, जिन्हे अपने पेटके लिए कातनेकी जरूरत नही पडती। कत्तिनोमे हजारो नही तो सैकड़ो स्त्रियाँ ऐसी जरूर होगी, जो अनाज-पानी वगैरह खरीदनेके लिए नही, बल्कि तम्बाकू, चूडियाँ या इसी तरहकी दूसरी चीजे खरीदनेके लिए कातती होगी। अगर जरूरत आ पडे तो इन स्त्रियोसे कहा जा सकता है कि उन्हे उन कत्तिनोकी प्रतिस्पर्धामें नही आना चाहिए जिन्हे अपने पेटके लिए पैसेकी जरूरत है। कत्तिनोका बहुत बड़ा भाग तो अन्नके लिए कातनेवालियोका है। इसलिए खादी-सेवकोके आगे तो चरखा-सघकी योजनाकी दृष्टिसे केवल जरूरतमन्द कत्तिनोको ही ढूँढ निकालनेका प्रश्न है। जो छोटे-छोटे किसान मजदूरो द्वारा खेती-बारीका कार्य कराते हो और जिन्हे साधारण रीतिसे अन्न-वस्त्रकी तगी न पडती हो, और खाने-पीनेकी चीजें खरीदनेके लिए जिन्हे अपनी जमीन या दूसरी मिलकियत बेच डालनेकी जरूरत न पडती हो उनका इस परिभाषामें समावेश नही होता। मगर जिनके पास न जमीन है न कोई जायदाद, और जिन्हे चरखा-सघ या ग्रामोद्योग-सघ यदि काम न दिलाये तो अधपेट रहना या भूखो मरना पडता हो, उन मजदूरोको कातने या कताईके सिलसिलेका कोई भी काम दिला देनेका प्रयत्न सघको अवश्य करना होगा; और उन मजदूरोको यह आश्वासन भी देना होगा कि रोजके आठ घटेके कामके हिसाबसे उन्हे पेट भरने लायक जरूर मजदूरी दी जायेगी। हाँ, जो स्त्री-पुरुष किसी दूसरी तरह गुजर करते होगे उनकी फिक्र ये सघ नही करेगे। इसका कारण यह नही कि उनमे इच्छाका अभाव है, बल्कि इसमे उनकी केवल असमर्थता ही समझिए। इन सघोको अगर अपने कार्यमे पूरी सफलता मिल गई तो वे अपना उद्देश्य पूरा कर लेगे। और इतना ही नही, बल्कि अप्रत्यक्ष रीतिसे दूसरे तमाम गरीब मनुष्योकी सहायता और उनके घोर निराशामय जीवनमें वे उज्जवल आशाका सचार करेगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-१०-१९३५

१८. टिप्पणियाँ

वृक्ष-कपास और कताई

नोआखलीकी श्रीमती किरणप्रभा चौधरीके विषयमे, जिन्होने कि मुझे खास अपने हाथकते सूतकी खादीका एक सुन्दर नमूना भेजनेकी कृपा की थी, उनके एक मित्र लिखते हैं:[1]

खादीके प्रति इस बहनकी जो गहरी लगन है उसके लिए मैं उसे बधाई देता हूँ। वृक्ष-कपास उगानेपर उसने जो जोर दिया है, उसका समर्थन देशके अनेक खादी-विशेषज्ञोने किया है। यह प्रयोग तमाम हिन्दुस्तानमे एक खासे-बड़े पैमानेपर करने लायक है। और यों इसपर पैसा ही क्या खर्च होता है? और अगर यह सही है कि इस कपासकी रुईको धुननेकी कोई आवश्यकता नही, तो इसका अवश्य ही यह अर्थ हुआ कि मामूली पौधेवाले कपाससे इस कपासमे यह एक बहुत बड़ा फायदा है। अच्छा हो कि जो लोग वृक्ष-कपासकी रुईका सूत कातते हो, वे मुझे अपने अनुभव और सम्भव हो तो अपनी रुई, सूत और कपासके बीजके नमूने भी भेज दे।

गुड़ रखनेकी एक तरकीब

एक सज्जनने एक ऐसा उपयोगी तरीका लिख भेजा है, जिससे गुड़ बहुत दिनो तक रखा रह सकता है। वे लिखते हैं:[2]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-१०-१९३५

१. यहाँ नहीं दिया गया है।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखक ने लिखा था कि बरसात के दिनोंमें गुड़ सुरक्षित रखने के लिए उसे ऐसे बोरेमें भरकर जिसके भीतर कपड़े का अस्तर लगा हो, चारों तरफ से गेहूँ के भूसे से ढँक देना चाहिए।

१९. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

मगनवाडी, वर्धा
५ अक्टूबर, १९३५

भाई भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। वह मैंने देवचन्दभाईको भेज दिया है। मैं अब ऐसे कामोके लायक बिल्कुल नही रह गया हूँ। मुझे एक मिनटका भी समय नही मिलता। लडकियोके बारेमें तुम जो कहते हो वह मैं समझता हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२८) से। सी० डब्ल्यू० ३०५१ से भी; सौजन्य : भगवानजी अ० मेहता

२०. पत्र : चन्दन पारेखको

५ अक्टूबर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा पत्र मिला। मैं तेरी बात समझ गया। मुझसे जहाँतक हो सकेगा मैं तुझे अपने पासतक आनेकी तकलीफ नही दूंगा। किन्तु यदि तकलीफ देनी ही पडी तो तू यह मान लेना कि सिर्फ तेरे भलेके लिए, जिन्हे तूने आजतक गुरु और पितातुल्य माना है उन . .[1] के लिए और जो तेरे जन्म-जन्मान्तरका सगी बननेवाला है उस शंकर[2] के लिए मैं ऐसा करूँगा। तू मेरे लिए बेटीके समान है, शकर बेटेके समान और . . पुराने साथी है। वे एक बड़ी राष्ट्रीय सस्थाके न्यासी हैं। फिलहाल तो मैं कुछ-एक प्रश्न पूछकर ही सन्तोष कर लूँगा।

किशोरलालभाईको तूने जो पत्र लिखा है यदि तू उसपर अक्षरश: कायम रहती है तो फिर तूने मनुभाईको जो पत्र लिखा है उसके बारेमे तेरा क्या कहना है? इन दोनोका मेल कैसे बैठाती है? किशोरलालभाईने तुझे जो पत्र लिखा था वह मेरे प्रेरित करनेपर लिखा था। मुझे अपना समय बचाना था। और किशोरलाल-भाईको तूने स्वेच्छासे जो पत्र लिखा था, उसमें किसी भी प्रश्नका स्पष्टीकरण करनेकी

१. इस पत्रमें तथा चन्दन पारेखको लिखे अन्य पत्रोंमें इनका नाम नहीं दिया गया है।

२. शकर उर्फ सतीश, द० बा० कालेलकर के बड़े लड़के।

तत्परता व्यक्त की थी। इसीलिए उन्होंने तुझे पत्र लिखे और प्रश्न पूछे थे। किशोरलालभाईने जो यह लिखा कि तू इनका उत्तर देनेको बाध्य नही है, यह तो उनकी शिष्टता थी, किन्तु उनका उत्तर देना तेरा प्रत्यक्ष कर्त्तव्य था, किसी और की खातिर नही तो निश्चय ही शकरकी खातिर। किन्तु तूने उनका उत्तर नही दिया इसकी चिन्ता नही। अब इस पत्रका उत्तर देना और किशोरलालभाईने जो प्रश्न पूछे है उनका भी उत्तर देना। सत्यनारायणको साक्षी मानकर निर्भयतासे उत्तर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३६) से, सौजन्य . सतीश डी० कालेलकर

२१. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

५ अक्टूबर, १९३५

चि० भुजगीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम जो-कुछ करो वह बहुत सोच-समझकर और शिष्टतापूर्वक करना। मै नही समझता कि जिस सगाईकी तुमने अनुमति दी, उसे किसी तरह तोडा जा सकता है। जबतक कोई बडा नीतिपूर्ण प्रश्न नही उठ खडा होता तबतक माता-पिताकी अवहेलना करना द्रोह है। नीतिका प्रश्न कब उठ खडा हुआ माना जायेगा, इसका निर्णय तुम्हे ही करना होगा। यहाँ बैठे हुए मुझसे कुछ भी नही हो सकेगा। जो लोग मेरे जीवनका ऊपरी तौरपर अध्ययन करके किसी मामलेमे यदि बिना सोचे-विचारे मेरा अन्धानुकरण करते है तो उन्हे बादमे निराशा होती है और कई बार उन्हे पछताना पडता है। देखना, अपने बारेमे ऐसा कभी मत होने देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५९५) से।

२२. पत्र : अमृत कौरको

७ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हे दो पक्ति लिख सकूँ, इतनी फुरसत भी नही मिलती। मगर लिखना तो मुझे है ही। अगर मुझे अपना स्वास्थ्य ठीक रखना है और बराबर बढते हुए कार्यभारको सँभालना है तो मुझे अपने-आपको प्रेम-पत्र लिखनेके सुखसे दिन-दिन अधिकाधिक वचित करना होगा। कही-न-कही तो कटौती करनी है। और मुझे लगता है, यह कटौती पत्र-व्यवहारमें ही करनी पड़ेगी।

हाँ, अगर तुम्हे बिना दाम दिये सेब आदि मिल जायें तो बेशक तुम कुछ मेरे पास भी भेज देना। मै जानता हूँ कि इसके पीछे तर्कका कोई बल नही है। लेकिन इस तरह मेरे लोभपर कुछ अंकुश रहेगा और तुम पसन्द करो तो कहूँगा कि तुम्हारे लोभ पर भी — मेरे लेनेके लोभपर और तुम्हारे देनेके लोभपर। अब इन दोनोमें ज्यादा बुरा कौन है, इसपर तो हम बहस नही करेगे। यह बात हम दोनोके लिए अच्छी होगी कि हम साथ-साथ इस आदतको छोड़ दें। इस तरह हम दोनोके झगड़ेमें कमसे-कम एक कारणसे तो हम बच सकेगे।

हाँ, अपने पोतो और उनकी माताके बीच जाकर बा प्रसन्न है।

साथके पत्र प्यारेलाल और देवदासके लिए है।

तुम सबको प्यार।

बापू

श्रीमती राजकुमारी अमृत कौर
मैनरविले, शिमला डब्ल्यू०

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५४) से; सौजन्य · अमृत कौर। जी० एन० ६३६३ से भी।

२३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

वर्धागंज
९ अक्टूबर, १९३५

चि० गगाबहन,

सचमुच तुम अच्छी चिन्तामे पड गई हो। बच्चूभाईसे कहना कि दु.खमे ही हमारे विश्वासकी परीक्षा होती है। समय-समय पर मुझे दो पक्तियाँ लिखती रहना। नाथ[1] वहाँ है और उनकी उपस्थिति तुम्हारे लिए बहुत बड़ा सहारा है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ८५। सी० डब्ल्यू० ८८२० से भी; सौजन्य : गगाबहन वैद्य

२४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
[१० अक्टूबर, १९३५][2]

प्रिय जवाहरलाल,

रविवारको तुम्हे पत्र लिखना चाहता था, लेकिन इतना व्यस्त रहा कि लिख नही पाया। वह तुम्हारे उस पत्रके उत्तरमें लिखनेकी सोच रहा था जिसके साथ तुमने अगाथा[3]को लिखे अपने पत्रकी नकल भेजी थी। अगाथाको लिखे उस पत्रमें मुझे तुम्हारे चिन्तनकी दिशाका अन्तरग परिचय मिला; और ऐसे परिचयकी सुविधा तो मै किसी भी कारणसे छोडना नही चाहूँगा। वह ऐसी ही स्पष्टवादिताकी पात्र थी। तुमने जो भावनाएँ व्यक्त की है उनमे से अधिकाशको मै ठीक मानता हूँ। तुम्हे मालूम नही होगा कि मैने भी उसे अनेक बार, बेशक अपने ही ढंगसे और अपनी ही भाषामे, बहुत-कुछ इसी स्वरमे पत्र लिखे है। फिर भी, अगर कमलामें सुधारके स्पष्ट लक्षण दिखाई दे और अगर तुम्हे लन्दन जानेका अवकाश हो और रास्ता खुला हो

१. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवाला के गुरु।

२. महादेव देसाईने अपनी डायरीमें इस पत्रका एक अंश इसी तिथि के अन्तर्गत रखा है, हालाँकि मूल पत्रमें, जो इस स्थानपर कुछ कटा-फटा है, तिथि "१८-१०-१९३५" पढ़ी हुई है।

३. अगाथा हैरिसन।

तो मैं चाहूँगा कि वहाँ जाकर 'बड़े लोगों' से भी मिलो और जिस तरह तुमने अगाथा से बिना लाग-लपेटके अपने मनकी बात कह दी, उसी तरह उनसे भी कहो।

लेकिन कल तुम्हारा जो पत्र मिला, उससे तो यही जाहिर होता है कि अभी तुम्हे कमलाके पाससे नही हटना चाहिए। आखिर इसी कामके लिए तो तुम्हे रिहा किया गया है और अगर विधाताका विधान यही है कि तुम कमलाकी खाट अगोरे बैठे रहो तो इसपर हमे कोई शिकायत नही होनी चाहिए। तुम वहाँ इसी लिए तो गये हो कि इस भीषण कष्टसे उबरनेमे उसका साथ दो। काश, मैं भी वहाँ रहकर तुम्हारा बोझ बँटाता और कमलाको ढाढ़स देता रहता। उसके प्रस्थान करनेसे पहले जब मैं उससे दो दिन बम्बईमें मिला था तब मैंने देखा कि उसे ऐसी मानसिक शान्ति प्राप्त है जैसी शान्तिका उपभोग उसने पहले कभी नहीं किया था। उसने कहा था कि ईश्वरकी दयालुतामे मेरी श्रद्धा उतनी प्रबल कभी नही थी जितनी आज है। उसकी मानसिक परेशानी जाती रही थी, क्योंकि उसका क्या होगा, इस बातकी उसे कोई परवाह ही नही थी। वह यूरोप इसलिए गई कि तुम सबकी यही इच्छा थी; वहाँ जाना उसे अपना स्पष्ट कर्त्तव्य जान पड़ा। अगर वह जीवित रही तो आजतककी अपेक्षा कही अधिक सेवामय जीवन व्यतीत करेगी। यदि उसकी मृत्यु हो गई तो वह इसीलिए होगी कि वह इस धरतीपर पुनः ऐसा शरीर धारण करके जन्म ले जो उसके कर्त्तव्यके पालनके लिए उसके इस शरीरकी अपेक्षा अधिक उपयुक्त हो।

यह भी अच्छा ही है कि कुछ समयके लिए इन्दु[1]की किताबी शिक्षा स्थगित रहे। मेरी दृष्टिमे तो आज वह ऐसा प्रशिक्षण प्राप्त कर रही है जो उसे कालेजमें मिलनेवाले हर प्रशिक्षणकी अपेक्षा अधिक मूल्यवान है। आज उसका प्रशिक्षण प्रकृति के विश्वविद्यालयमें हो रहा है। अलबत्ता वह चाहे तो अपनी किताबी शिक्षा पूरी करके इस प्रशिक्षणको और सँवार सकती है।

तुम्हारी कृतिके अध्याय मैं अत्यन्त रुचिपूर्वक पढ़ रहा हूँ। महादेव तो उसे लेकर बैठा तो समाप्त करके ही उठा; खुर्शेद[2]ने भी लगभग यही किया। मेरी भी इच्छा ऐसा ही करनेकी होती है, पर मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ! सम्मति तो अन्तिम परिच्छेद पढ़नेके बाद ही दूँगा।[3] इन्हे भेजनेके लिए तुम्हारा आभारी हूँ।

मैं तुमसे राजनीतिकी कोई चर्चा नही करूँगा। मेरे लिए तो इतना ही काफी है कि अगर तुमपर भार आ पड़ा तो तुम उसे सहर्ष वहन करोगे। वह भार तुम्हारे सिर आयेगा, यह तो मुझे निश्चित ही लगता है।

तुम चाहो तो कमलाको लिखा साथका पत्र पढ़ लेना। तुम वहाँ नही थे तो इन्दु दो-चार पंक्तियाँ लिख दिया करती थी। मेरा खयाल है, वह समझती है कि अब उसे इस काम से छुटकारा ही मिल गया है!

१. इन्दिरा गांधी, जवाहरलाल नेहरूकी पुत्री।

२. खुर्शेदबहन नौरोजी, दादाभाई नौरोजी की पोती।

३. देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", १९-१२-१९३५।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

देहाती स्याही और देहाती कलमसे देहाती कागजपर ही लिखनेके मेरे आग्रहको लिए माफ करना।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे भी; सौजन्य : नारायण देसाई

२५. पत्र : कमला नेहरूको

१० अक्टूबर, १९३५

चि० कमला,

तुमको खत क्या लिखना। सिर्फ ईतना हि कि तुमारा चिंतवन रोज होता है। ईश्वर तुमको हर हालतमें शांति देवे। किसी प्रकारकी चिंता छोड़ो।

बापुके आशीर्वाद

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य : नारायण देसाई

२६. पत्र : हीरालाल शर्माको

१० अक्टूबर, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारा बोस्टन पहोचनेके पहलेका खत मिला है। बहूत अच्छा है। बोस्टनमें मेरा खत नही मिलनेका दुःख भूल गये होंगे। मैं लाचार रहा। कुछ नया लिखनेका तो था ही नही। नया लिखनेका तो तुमको मिलता है और उस अवसरका अबतक तो अच्छा ही उपयोग कर रहे हो। ऐसे खत मिलते ही रहेंगे ऐसी आशा रखकर बैठा हूँ।

द्रौपदी[1] को भी खत भेजते होंगे। मैं तुमारे खत उसके पढ़नेके लिये भेज रहा हूं। द्रौपदी खुल्ले दिलसे नही लिख पाती। वह बच्चो तक खुश रहे तब तक मुझे उसके खत नही होनेका दुःख नही है। मेरी कोशीश उसे खींचनेकी जारी रहेगी।

१. हीरालाल शर्माकी पत्नी।

तुमने लडनके लिये खत[1] मागा है इसलिये मै भेजता हू। अमरीकासे जल्दी नही भागना। अगर वहासे कुछ पाने जैसा नही है अथवा खर्च बहूत है तो अवश्य भागो। जैसे अच्छा लगे ऐसा ही करो।

न्यूयार्कसे सालगिरीका तार[2] था। उसमें 'शर्मा' नाम भी रहा। तुमारा ही होगा। जो लोगोसे मिलो उनका शब्द-चित्र भेजा करो।

लडनके लिये एक ही खत भेजता हू, पर्याप्त होगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९८-९९ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

२७. तार : हृदयनाथ कुंजरूको

११ अक्टूबर, १९३५

कुजरू
मार्फत 'हितवाद'
नागपुर

आपके अकोलाके पत्रसे साफ पता चलता है कि आपको फलियाँ और हरी सब्जियाँ छोड देनी है और केवल शहद और फलोका रस, सोडा समेत या उसके बिना ही, लेना चाहिए तथा बार-बार कटिस्नान लेना चाहिए। कल आपसे दैनिक रिपोर्ट पानेकी आशा रखता हूँ।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२८. सन्देश : सुरीनामके प्रवासी भारतीयोंके नाम

मगनवाडी, वर्धा
११ अक्टूबर, १९३५

डच गायनाके पंडित भवानी भीख मिश्र, श्री बनारसीदास चतुर्वेदीके साथ मुझसे मिले और सुरीनामके प्रवासी भाइयोके लिये मुझसे सन्देश मागा। मेरी आप लोगोसे इतनी ही अर्ज है कि आप सब आपसमें मिलकर रहे। जीवनकी शुद्धताका — शरीर, मन और वचनकी पवित्रताका — खयाल रखें। परस्परकी बातचीतमें हिन्दी हिन्दुस्तानी भाषाका इस्तेमाल करें। हिन्दी स्कूल और पुस्तकालय खोले।

मो० क० गांधी

सुरीनामके प्रवासी भारतीयोके नाम मे प्रकाशित अनुकृतिसे।

१. अगाथा हैरिसनके नाम परिचय-पत्र जो उपलब्ध नहीं है।
२. गांधीजीके जन्म-दिवस पर भेजा गया बधाईका तार।

२९. पत्र : छगनलाल जोशीको

११ अक्टूबर, १९३५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे प्रोत्साहित करनेसे मै जीवनलालभाईसे आग्रह कर रहा हूँ। मै तुम्हारा पत्र उन्हे भेज रहा हूँ। उनका उत्तर मिलनेपर तुम्हे लिखूँगा।

यदि प्राणजीवन जोशी मुक्त हो गया होगा तो मै जाँच-पड़तालमे और अधिक समय वरवाद नही करूँगा।

हड्डियो और मृत पशुओसे खाद तैयार करनेके प्रयोगका जो परिणाम निकला हो, मुझे सूचित करना।

हाथका वना कागज प्रयोग करनेसे तुम्हारे सामने जो कठिनाई आई है, वह नही आनी चाहिए। इसी तरहका तर्क प्राय खादीके वारेमे भी दिया जाता है और उसका समाधान हमने एक ही प्रकारसे किया है। खादी महँगी होनेके वावजूद जिन्होने उसके महत्त्वको समझ लिया है, उन्होने उसे अपने लिए सस्ता वना लिया है। जैसे हम लोगोमे से वहुतोने महँगी खादी ली तो कपडेकी खपत कम कर दी और कुल मिलाकर पैसे वचाये। यदि खपत कम नही हो सकी तो अन्य खर्च कम करके पैसे वचाये किन्तु हार नही मानी। इसी प्रकार हाथके वने कागजका प्रयोग करनेका निश्चय करते ही हमने लिखना कम कर दिया या उतने ही वडे कागजपर अधिक लिखा। पाँच या चार पैसेके लिफाफेके वजाय तीन पैसेका पोस्टकार्ड लिखना शुरू किया। जिस तरह जेलमे मै पुर्जियोपर लिखा करता था, उसी तरह यहाँ भी लिखना शुरू किया। इसलिए सव मिलाकर डाकका खर्च वढा नही।

मै नही जानता कि दिल्लीमे कैसा चल रहा है, किन्तु आशा है कि मलकानीने वचत करनी शुरू कर दी होगी। हम सरकारको जो देते है- वह भी अपनेको ही देनेके वरावर है। अत. यह सोचना उचित नही कि हमें डाक भेजनेमे अधिक खर्च नही करना चाहिए, क्योकि ये पैसे हमे दूसरोको देने पडते है। यदि शासनकी वागडोर स्वयं हमारे हाथमे हो तो भी डाकपर हमारे कार्यकर्त्ता अनाप-शनाप खर्च नही कर सकेगे। जेलमे रहते हुए हम सभी वस्तुओका कमसे-कम प्रयोग करनेका प्रयत्न करते थे और वैसा हम उन्हे अपनी मिल्कियत समझकर करते थे। कारण, शासनकी वागडोर चाहे जिसके हाथमे हो फिर भी मिल्कियत तो हमारी ही है न? सरकारको हम जो पैसा देते है वह सरकारी काममे ही खर्च होता है।

यदि सत्ता विदेशियोके हाथमे हो और अनाप-शनाप ढगसे खर्च किया जाता हो तो उसका यह मतलव नही कि उनके द्वारा खर्च किया गया पैसा हमारा नही

है। उस अनाप-शनाप खर्चको रोकनेका प्रयत्न करना हमारा कर्त्तव्य है। किन्तु जबतक ऐसा चलता है तबतक किसी-न-किसी तरह उक्त खर्चको चलानेवाले भी हम ही हैं। इसलिए डाक-खर्चवाला तर्क हाथके बने कागजपर लागू नही किया जा सकता। इस कागजका प्रचार करते हुए सम्भवतः आरम्भमे डाक-खर्च ज्यादा हो सकता है। इसके बावजूद यदि अन्तमे हाथके बने कागजका प्रचार बढ़ सकता हो तो बढे हुए डाक-खर्चकी चिन्ता करनेका कोई कारण नही।

जो शिक्षक शारीरिक श्रम करना अपना कर्त्तव्य समझते होगे वे स्वय ही श्रमका कोई काम खोज लेगे। उन्हे अन्य कोई सलाह नही दे सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३६) से।

३०. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

११ अक्टूबर, १९३५

चि० बली[1],

तेरा पत्र मिला। तू बम्बई अच्छी पहुँची। तुलसीदासकी बीमारीके बारेमें मैं जानता हूँ। मैंने उसे पत्र लिखा है। अब तू लिखना।

हरिलालके बारेमें हम क्या कर सकते हैं? ऐसा लगता है कि अब उसका सर्वनाश सन्निकट है। वह मुझे मुश्किलसे ही लिखता है। उसके दोष क्या निकाले! मनुष्य अपने स्वभावको थोडे ही बदल सकता है?

मनु[2] आ गई है। दिल्लीमें वह काफी बीमार हो गई थी। अब अच्छी हो गई है। वह पत्र लिखनेमें तो आलस्य करती ही है। किशोरलालभाईने अपने भतीजे बालूभाईके पुत्र सुरेन्द्रके लिए उसे माँगा है। बा और मुझे तो यह सम्बन्ध बहुत पसन्द है। यदि तुम दोनो बहनें[3] और कुँवरजी[4] इस रिश्तेको पसन्द करो तो सगाई कर डालूँ। तुझे यह याद है न कि सुरेन्द्र आश्रममें था और आजकल बम्बईमें ही है? मनुका कहना है कि मुझे जो अच्छा लगे सो करूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५२) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

१. हरिलाल गांधीकी साली।
२. हरिलाल गांधीकी पुत्री।
३. बलीबहन अडालजा और कुमीबहन मनीआर।
४. कुँवरजी पारेख, हरिलाल गांधीकी ज्येष्ठ पुत्री रामीके पति।

३१. पत्र : पुरुषोत्तम जी० पानसेको

११ अक्टूबर, १९३५

चि० भाऊ,

तुमारे खतके उत्तर मै तो देता ही हू। सिर्फ एकका नही दे सका हू। तुमारे खत बहूत स्पष्ट और सतोषजनक रहते है। खर्चका हिसाब रखो लेकिन उसका ख्याल मत करो। जो खर्च इस बखत किया जाता है वह सब सेवा निमित्त किया जाता है। सबका बदला तुमसे ले लुगा। तुमारा कर्त्तव्यके खयालसे शरीर अच्छा बना लो।

बालकोबाको[1] वहा भेजनेका प्रयत्न कर रहा हू। गवरी शकर भाईको लिखा है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७५४) से। सी० डब्ल्यू० ४४९७ से भी; सौजन्य . पुरुषोत्तम जी० पानसे

३२. पत्र : एक ग्राम-सेवकको[2]

[१२ अक्टूबर, १९३५ से पूर्व]

इस फसलपर तो रुई उधार ले लेना, लेकिन अगले वर्ष तुम्हे खुद रुई पैदा करनी होगी। कपासके कुछ पौधे अपने खेतमे उगानेकी सुविधा तो तुम्हे कोई भी दे देगा। बीज देव कपासका होना चाहिए। यह पौधा दस-पन्द्रह सालतक हरा रहता है और मुझे बताया गया है कि इस कपासको पीजनेकी जरूरत नही होती। अभीतक मैने खुद तो इसका उपयोग नही किया है, पर अब करनेका इरादा है।

तुम अपनी जगहसे दो दिनके लिए भी अलग रहो, यह मुझे अच्छा नही लगा, तुम्हारा ऐसा सोचना ठीक ही है। मुझे यह अच्छा इसलिए नही लगा कि इस तरह बीच-बीचमे अपने कार्य-क्षेत्रसे अनुपस्थित रहना तुम्हारे लिए एक मनोरंजनका विषय बन गया है, और तुम्हारे लिए सबसे अच्छा प्रशिक्षण यही है कि तुम चुप-चाप किसी एक क्षेत्रमे जमकर बैठ जाओ और साल-भर वहाँ लगातार काम करते रहो। अपने काममे मगन ग्रामवासीको यहाँ-वहाँ मित्रोसे मिलते-फिरनेका समय कहाँ

१. बालकृष्ण भावे, विनोबा भावे के छोटे भाई।

२. महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से उद्धृत। ग्राम-सेवकने, जो गुजरात का एक श्रेष्ठतम कार्यकर्ता था, अपनी आवश्यकताएँ इतनी कम कर ली थीं कि प्रतिमास सिर्फ ५ रुपये में वह अपना काम चला लेता था।

मिलता है। हमें तो उसीका अनुकरण करनेकी कोशिश करनी है। इसलिए तुम्हे ऐसा नियम बना लेना चाहिए कि तुम वहाँसे दस मीलकी दूरीसे बाहर नही जाओगे। जबतक दीर्घकाल तक चौबीसो घटे हम ग्रामवासियोके बीच मे नही रहेगे तबतक हम उनसे एकात्म नही हो सकते। इस नियममे ढील देते ही तुम्हे अपने कार्य-क्षेत्रसे अनुपस्थित होनेके अनेक बहाने मिलने लगेगे।

गन्दगी और कुत्तोके कारण होनेवाली परेशानीसे छुटकारा पाना बेशक जरूरी है, लेकिन उनसे दूर तो नही भागना चाहिए। घरसे बाहर निकलने पर हरएकको अपने लिए सुविधाएँ बिछी पडी तो मिल नही सकती न? हमे स्वच्छताका वही बोध दूसरोमें भी विकसित करना है, इसलिए हमें लोगोसे दूर नही भागना है। उनसे एक निरापद दूरी रखकर हम उनकी सेवा नही कर सकते। मैं जानता हूँ कि यह सब कहना जितना आसान है, करना उतना नहीं, और अगर तुम इन बाधाओके बीच सो नही सकते तो सोनेके लिए खेत चले जानेकी आदत जारी रखो। मैं नही चाहता कि तुम ऐसा कुछ भी करो जिससे तुम्हारे स्वास्थ्यको हानि पहुँचनेकी आशंका हो।

हाँ, कालान्तरसे तुम अपने लिए फूसकी झोपड़ी बनवा सकते हो, लेकिन वह गाँवसे बहुत दूर नही होनी चाहिए। लोगोको दिन-रात किसी भी समय तुमसे मिलने आनेकी छूट होनी चाहिए। और हमे ऐसी जगह रहना चाहिए जहाँ लोग आसानीसे पहुँच सके। तुम तो रोज रातके ७ बजे ही गाँव छोड देते हो। इसका मतलब यह हुआ कि तुम गाँववालोको रातके भोजनके बाद तुमसे बातचीत करने और तुम्हारी सलाह लेनेके अवसरसे वचित कर देते हो और तुम घटे-भरके लिए भी रात्रि पाठशाला नही लगाओगे। गाँवोमे सेवा-कार्य करनेवाले आश्रमवासियोकी कठिनाई तो तुम देखते ही हो। आश्रमका जीवन और यहाँके नियम गाँवमे सहज ही विलासिताकी बातें बन सकते है। हमें यह समझना चाहिए कि हमारी बहुचर्चित सादगी और त्यागके बावजूद हम जिन सुविधाओका उपभोग करते है उनमे से भी अधिकाश हमारे ग्रामवासी भाइयोको मयस्सर नही है। मनुष्यकी यह स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि वह हर त्यागको भोगका रूप दे देता है। संन्यासका मतलब सर्वोत्तम कोटिका त्याग है, लेकिन आज बहुत-से लोगोके लिए यह आलस्य और भोगका सबसे बडा साधन बन गया है।

भगी लोग तुम्हारे प्रेमके इस कार्यको धीरे-धीरे समझेगे। तुम्हे उन लोगोको यह समझाना चाहिए कि तुम उनके पेशेसे उन्हे उखाडना नहीं चाहते, बल्कि उनकी कुशलता बढाना चाहते हो। तुम्हे उनके लिए आयके और साधन भी ढूंढने चाहिए।

मेरा हालका त्याग मेरे लिए व्यथाका कारण था, इसलिए तुम भी व्यथित हो, यह जरूरी नही है। वह व्यथा ही आनन्दका स्रोत था और ऐसी व्यथा तो अनिवार्य है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१०-१९३५

१. देखिए खण्ड ६१, पृष्ठ ४७०-७२।

३३. टिप्पणियाँ

निजी तौरपर पत्र लिखनेवालोंसे

समयके साथ-साथ मेरे निजी पत्र-व्यवहारका परिमाण भी तेजीसे बढता जा रहा है और वह अपने प्रतिस्पर्धी समयको वहुत पीछे छोडता जा रहा है। इस निरन्तर बढते हुए पत्र-व्यवहारसे निवटनेकी मेरी क्षमता उसी अनुपातमे कम होती जाती है जिस अनुपातमे पत्र-व्यवहारके परिमाणमे वृद्धि हो रही है। और मेरे हाथमे विन माँगे ही जो नये काम आ गये है, उनके कारण यह कठिनाई और बढ गई है। इनमे सबसे अधिक आकर्षक और मोहक गाँवोके पुनरुद्धार (रिजेनेरेशन), या अधिक प्रचलित शब्दका प्रयोग करूँ तो, पुनरुज्जीवन (रिजुविनेशन) का काम है। ज्यो-ज्यो इस कार्यमे निहित कठिनाईका बोध होता जाता है, इसका आकर्षण बढता जाता है। मेरा मन तो गाँवोमे लगा हुआ है। वे मुझे पुकार-पुकार कर कह रहे है कि तुम यहाँ आओ और सब-कुछ छोडकर यही रम जाओ। मुझे नही मालूम कि यह अन्तर्द्वन्द्व कैसे मिटेगा। इस तरह मेरे गाँवोमे रम जानेके मार्गमे कठिनाइयाँ पहलेसे ही उत्पन्न होने लगी है। न चाहते हुए भी मुझे गुजरातमे आगामी वर्षके प्रारम्भमे अपने सिर एक दायित्व लेनेका वचन देना ही पडा। मै जानता हूँ कि इस एक दायित्वके पीछे मेरे सिर और क्या-क्या जिम्मेदारियाँ आयेगी। खैर, ईश्वरकी जैसी इच्छा।

लेकिन अगर मुझे ऐसी स्थिति नही आने देनी है कि मेरा शरीर बिल्कुल जवाब दे दे तो यह जरूरी है कि मै अपने निजी पत्र-व्यवहारमे यथासम्भव अधिकसे-अधिक कमी कर दूँ और उसमेसे केवल उतनेका ही जवाब दूँ जितनेका जवाब देना वहुत जरूरी है, और सो भी अपने किसी प्रतिनिधिके द्वारा। ऐसा करके ही मै 'हरिजन' की मुझसे बढती हुई अपेक्षाएँ पूरी करनेकी आशा कर सकता हूँ। इसकी विषय-वस्तुकी व्यापकताके कारण महादेव देसाईपर और मुझपर भी अतिरिक्त बोझ आ पडा है। अगर पाठकोके साथ हमे न्याय करना है तो अबतक हम जितना समय और शक्ति बचाकर इसमे लगाते आये है, उससे कही अधिककी जरूरत है।

इसलिए यह बाते वहुत-से पत्र-लेखकोसे सहयोग माँगनेके लिए लिखी जा रही है। वे विश्वास रखे कि पत्र-व्यवहारसे मै ऊवता-थकता नही हूँ। मेरे प्रति उन्होने जो विश्वास दिखाया है उसे मै कितना मूल्यवान समझता हूँ, वह मै बता नही सकता। इससे मुझे मानव-स्वभावको परखने और उसके मूलमे निहित अच्छाईको देखनेका जैसा सुअवसर प्राप्त हुआ, वह अन्यथा दुर्लभ था। ऐसा पत्र-व्यवहार मै एक पीढीसे अधिक कालसे करता आया हूँ। जो लोग किसी समस्या-विशेष पर मेरी राय जानना चाहते हो उन्हे मेरे लेखो और कुछ प्रकाशित पत्र-व्यवहारसे पर्याप्त सहायता मिलेगी। मै यह जानता हूँ कि व्यक्तिगत सम्पर्कका स्थान दूसरी कोई चीज नही ले सकती।

लेकिन ऐसा सम्पर्क तो प्रकृतित नाशवान् है, क्षणभगुर है। इसलिए लोगोसे मेरा अनुरोध है कि वे हर तरहकी समस्यापर मेरी राय जाननेके लिए पत्र लिखनेका लोभ सवरण करे। नीति और धर्म-विषयक साहित्यसे जितनी सहायना मिल सके उतनी सहायता लेकर वे अपनी समस्याओका समाधान स्वय ही ढूँढनेका कष्ट उठाये। अन्तमे वे पायेगे कि हर प्रसगपर एक सन्दर्भ-कोषकी तरह मेरा उपयोग करनेके बजाय ऐसा करनेसे उन्हे अधिक लाभ हुआ है।

जो भी हो, पत्र-लेखक अबसे यह देखकर हैरान नही होगे कि सीधे मै ही उनको पत्र नही लिखता या उनके पत्रोके उत्तर नही मिलते, अथवा मिलते है तो मेरी ओरसे किसी औरके लिखे।

धीरे बोलनेका कर्त्तव्य

एक गुजराती सज्जनने लिखा है :[1]

> . . . हम लोगोंमें, और पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियों और बच्चोंमें आवश्यकतासे अधिक ऊँचे स्वरमें बोलनेकी आदत है और शिष्टताकी झूठी भावनाके वशीभूत होकर हममें से अधिकांश लोग उसे सहन कर लेते हैं . . .। . . . इसे हम अहिंसाका लक्षण भले मान लें, लेकिन 'शिष्टता' की श्रेणीमें तो नहीं रख सकते। आदर्श माण्टेसरी बाल-मन्दिर भले ही शान्तिके धाम बन जायें, पर हमारे तथाकथित घर ऐसे धाम नहीं बन सकते, और हमारी सार्वजनिक संस्थाओ और सड़कोंका तो कहना ही क्या। आप लोगोंको गन्दगीको बर्दाश्त न करनेकी सलाह देते हैं। क्या आप शोर-गुलके बारेमें, जो स्वास्थ्यके लिए उतना ही हानिप्रद है, ऐसी सलाह नहीं दे सकते? मेरा तो स्पष्ट मत है कि हमारी शिक्षा-प्रणालीमें जो स्थान सफाईके नियमोको प्राप्त है, वही कोमल स्वरमें बोलनेका भी होना चाहिए। और क्या मैं आपको चेतावनीके तौरपर यह कह सकता हूँ कि आप खुद अपने आसपास लोगोके ऊँचे स्वरमें बोलनेकी बुराईको बर्दाश्त करनेके दोषी हैं और इस तरह आप अपने स्वास्थ्यको क्षति पहुँचा रहे हैं और इस सम्बन्धमें लोकमतको सही दिशा देनेके अवसर खो रहे हैं?

पत्र-लेखकने मुझपर जो आरोप लगाया है उसे तो मुझे स्वीकार करना ही पडेगा। उनकी बातें अधिकाशत सच है। मैंने अकसर दिमागको भिन्ना देनेवाला शोर-गुल बर्दाश्त कर लिया है, हालाँकि उससे आसानीसे बचा जा सकता था। किन्तु इस पत्रको यहाँ छापनेका उद्देश्य इस राष्ट्रीय दोषकी ओर शिक्षकोका ध्यान आकृष्ट करना और उन्हे इस दिशामे पहल करनेको आमन्त्रित करना है। वे अपने विद्यार्थियोको कक्षाओ और कक्षाओंसे बाहर शोरगुल करने और ऊँचे स्वरमें बोलनेसे रोककर वह काम कर सकते हैं। रेलगाडियोमें तो सिर भिन्ना देनेवाला शोर होता है। लोग साथ बैठे यात्रियोकी भावनाका कोई खयाल किये बिना ऐसा करते हैं। बहुत-से लोग

१. यहाँ इसके कुछ अश ही दिये गये हैं।

जोर-जोरसे बातचीत करते हैं, हालाँकि वही बातचीत वे धीमी आवाजमें भी कर सकते हैं। इस सन्दर्भमें मुझे सिखोंकी सभाओंका स्मरण हो आता है। इन सभाओंमें जब भी जरूरत पड़ती है, मचपर बैठा कोई आदमी बाँसमें बँधा एक गत्ता या तख्ती ऊपर उठा देता है। इसपर "कृपया जोरसे बातचीत न करें" या "शान्त, शान्त" लिखा होता है। जिन यात्रियोंको ऐसे शोर-गुलका सामना करना पड़े, वे इस तरह के किसी उपायसे काम ले सकते हैं।

धूलमें से धन

इस पत्रमें सन्तुलित आहारके विषयमें प्रकाशित होनेवाली सामग्रीको ध्यानसे पढ़नेवाले पाठकोंने यह तो लक्षित किया ही होगा कि जिस चोकर-भूसीको हम यों ही फेंक देते हैं या अपने ढोरोंको खिलाते हैं वह वास्तवमें कितनी महत्वपूर्ण है। ढोरोंको चोकर-भूसी मिलती है, इसपर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन मुझे लगता है कि जिस तरह अन्य बहुत-सी बातोंमें हम विवेकसे काम नहीं लेते, उसी तरह ढोरोंको खिलाने-पिलानेमें भी हम विवेक नहीं बरतते। ढोरोंको जितनी जरूरत हरी घास और खलीकी होती है उतनी चोकर-भूसीकी नहीं, और अगर गाँवोंमें फिरसे कोल्हूका चलन हो जाये तो ढोरोंको अपने हिस्सेकी खली बड़ी आसानीसे मिल सकती है। लेकिन अगर हमें उत्पादन-वृद्धिके ऐसे सक्षम साधन बनना है जिन्हें दुनियाकी कोई भी जाति मात न दे सके — ध्यान रहे कि इसके लिए यह जरूरी नहीं है कि हम गला काटनेवाली स्पर्धामें पड़ें या सचमुच एक-दूसरेका गला काटने लगें — तो यह आवश्यक है कि हमें चावल और गेहूँसे जितनी चोकर-भूसी मिल सके उस सबका हम अपने आहारमें उपयोग करें। मगर मैं तो गेहूँके चोकरको राँधने-पकानेकी एक मित्र द्वारा लिखकर दी गई एक सरल-सी विधि बताने जा रहा था और यह उसकी बहुत लम्बी-चौड़ी भूमिका होती जा रही है। इसलिए अब इस चर्चाको यहीं छोड़ता हूँ। उपर्युक्त विधि इन सज्जनको अपनी बहनसे मालूम हुई है। वह इस प्रकार है

> इतना गेहूँ मोटा-मोटा पीस लें जिससे उसे मझोली चलनीमें चालनेपर उससे एक पौंड चोकर निकले। इस चोकरमें सवा पौंड ठंडा पानी, आठ तोला साफ गुड़का चूरा और छोटे चम्मचमें आधा चम्मच साफ नमक डालकर उसे ठीकसे मिलाइए। अब इस मिश्रणको किसी सपाट और छिछले बर्तनमें उड़ेल दीजिए और उसे ढँककर आधा घंटा उसी तरह छोड़ दीजिए। फिर, उस बर्तन पर उसमें ठीक-ठीक बैठ जानेवाला तवा या थाल डालकर उसे कोयलेकी आँचपर रख दीजिए और उसके ऊपरसे भी कोयला डाल दीजिए। बर्तनको पूरे पाँच मिनटतक इस दोहरी आँचमें रहने दीजिए। इसके बाद उस मिश्रणको लोहेकी कढ़ाईमें डालकर उसे धीमी आँचपर तबतक भूनिए जबतक कि उसका पानी ठीकसे सूख न जाये। अब बर्तनको चूल्हे परसे उतारकर मिश्रणको ठंडा होने दीजिए। फिर उसे साफ हाथसे दबाकर छन्नेमें छानिए। नीचे रखे साफ कपड़े या पटियापर वह मिश्रण

तार वन-वनकर गिरेगा। अव उसे धूपमे अच्छी तरह सुखा लीजिए। इसे चाहे तो ज्यो-का-त्यो खाये या गरम अथवा ठडे दूध या पानीमे मिलाकर खायें अथवा छाछके साथ। दो औसमें अच्छा नाश्ता हो जायेगा। कहा जाता है कि यह अनेक व्याधियोकी जड और आजके सभ्य जीवनके अभिशाप रूप कब्जको दूर करनेमें बडा सहायक होता है।

प्रतिमास चार रुपयेमें

कुनूर-स्थित पोषण अनुसन्धान सस्थाके निदेशक डॉ० आइकराडने हालमें वगलोरमे एक वडा ही शिक्षाप्रद व्याख्यान दिया। अखबारोमे यह भाषण जिस रूपमे छपा है उससे लगता है कि सन्तुलित आहारपर प्रतिमास ४ रुपयेसे अधिक नही लगना चाहिए। वक्ताने कहा कि

> **किसी भी वयस्क आदमीको आहारमें प्रति-दिन १६ औंस रागी[1], दो औंस सोयाबीन,[2] एक औंस गुड़, चार-चार औंस पालक और चौलाई, एक-एक औंस आलू और कोलाकासिया, १.५ औंस गोलेका तेल और छः औंस मक्खनदार दूध चाहिए और इस सबपर लगभग दो आनेका खर्च बैठेगा।**

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १२-१०-१९३५

३४. वृद्ध और अक्षम लोगोंके लिए सान्त्वनाका विषय

डॉ० प्रफुल्लचन्द्र रायकी अवस्था ७५ वर्ष है। युवावस्थासे ही वे शरीरसे दुर्बल रहे है। तथापि वे विश्वके रसायनशास्त्रियोमे अग्रगण्य है और आज भी उनमें युवको-जैसी शक्ति और स्फूर्ति है। उनकी सेवाकी पिपासा सतत अतृप्त है। कष्टमे पडे लोगो, विशेषकर विद्यार्थियोकी सहायता करनेसे वे कभी वाज नही आते। उदारमना तो वे ऐसे है कि वचको तकको उनके नामका उपयोग करके अनुचित लाभ उठाते देखा गया है। किन्तु उन्होने इसका बुरा नही माना है। अपनी अत्युदारता पर उन्हे गर्व है और जो लोग उनसे इस सम्बन्धमे विवेक वरतनेको कहते है उनसे वे दूर भागते हैं। वे काफी रात बीतेतक कार्य-रत रहते है। उनका द्वार सदा सभीके लिए खुला रहता है, उनके होठो पर प्रत्येक आगन्तुकका स्वागत करनेके लिए मुस्कान की रेखा खिची रहती है। उन्होने इतनी सेवा कर दिखाई है, फिर भी उनमें यह ताजगी क्यो वनी हुई है, जवकि उनके वहुत-से समवयस्क या तो परलोकवासी हो चुके है या इतने अशक्त-अक्षम वन चुके है कि उनसे कोई काम हो ही नही सकता? इसका उत्तर उन्होने अपनी आत्मकथाके दूसरे खण्डके लिए लिखे एक अति उत्कृष्ट अध्यायमे दिया है। मेरे जन्म-दिवसके अवसरपर उन्होने मुझे पत्र लिखा था। इस

१ तथा २. मूलमें "१६ औंस सोयाबीन, दो औंस रागी" दिया हुआ है जो शायद भूलसे लिखा गया है; देखिए "भूल-सुधार", १९-१०-१९३५।

(उनके लिए) महत्त्वहीन घटना (क्योकि उनकी तुलनामे मै छुटभैया ही तो हूँ) का कोई उल्लेख किये विना उन्होने चुपचाप उस अध्यायका[1] कच्चा प्रूफ भेज दिया। इसमे आशाका स्वर इतना प्रबल है कि मै इसे पाठकोके समक्ष प्रस्तुत करनेका लोभ सवरण न कर पाया — विशेषकर वृद्ध और अक्षम लोगोके समक्ष, यद्यपि मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही कि इसे पढकर युवक भी लाभ उठा सकते है। इसमे डॉ० रायने इस वृद्धावस्थामे भी अपने स्फूर्तिवान होनेके भी कारण बताये है उनमे मै उनकी अदम्य विनोद-वृत्ति तथा वाल-सुलभ स्वभाव और जोड देना चाहूँगा। मैने अपनी आँखोसे उन्हे सारा सकोच त्यागकर श्रीयुत जमनालालजी या मौलाना शौकतअली-जैसे भीमकाय मित्रोके कन्धोपर चढते और तरह-तरहके विनोद करते देखा है। तव उन्हे इस बातका कोई भान नही रहता कि ससार उन्हे एक गम्भीर वैज्ञानिक और विज्ञानके उस महान् कालेजके प्रधानाचार्यके रूपमे जानता है जिसकी स्थापनाका श्रेय भी प्राय. उन्ही को है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१०-१९३५

३५. सबसे बड़ी शक्ति

मेरी प्रत्येक प्रवृत्तिके मूलमे अहिंसा है और इसलिए उन तीन सार्वजनिक प्रवृत्तियोके मूलमे भी होनी ही चाहिए जिनपर अभी मै अपनी सारी शक्ति इस तरहसे लगा रहा हूँ कि लोगोको वह साफ दीखता है। ये तीन प्रवृत्तियाँ है — अस्पृश्यता-निवारण, खादी और ग्रामोद्धार। मुझे जिस चौथे विषयकी लगन है वह है हिन्दू-मुस्लिम एकता। लेकिन, जहाँतक इसके लिए कोई ऐसा काम करनेका सम्बन्ध है जो लोगोको साफ दिखे, मैने अपनी हार कबूल कर ली है। किन्तु लोग इससे यह न समझे कि इस विषयमे मै बिल्कुल निष्क्रिय हूँ। मै जानता हूँ कि मेरे जीते-जी नही तो मेरी मृत्युके वाद तो अवश्य ही हिन्दू और मुसलमान इस बातकी साक्षी भरेंगे कि साम्प्रदायिक सद्भावकी अपनी तीव्र लालसा मैने कभी नही छोडी थी।

जिनके लिए अहिंसा धर्म-रूप है, वे तो सदा और सर्वत्र उसके पालनका ध्यान रखेगे। मै अपनी एक प्रवृत्तिमे अहिंसाका पालन करूँ और दूसरीमे हिंसाका आचरण करूँ, यह नही हो सकता। ऐसा करनेसे अहिंसा जीवन-शक्ति नही रहेगी बल्कि एक व्यवहार-नीति बन जायेगी। इस दृष्टिसे इटलीने अबीसीनियाके खिलाफ जो लड़ाई छेड दी है उसकी ओरसे मै उदासीन नही रह सकता हूँ। लेकिन इस विषयमे अपनी राय जाहिर करने और देशको नेतृत्व प्रदान करनेके आग्रहपूर्ण आमन्त्रणोको मै अनसुना करता रहा हूँ।[2] अपने मनकी भावनाओको दवा रखना भी अकसर सत्य और अहिंसाके हितमे होता है। अगर एक राष्ट्रकी हैसियतसे भारतने सामूहिक तौरपर या

१. अध्यायमें दिये गये अंश यहाँ उद्धृत नहीं किये गये हैं।
२. देखिए खण्ड ६१, पृ० ३२५-२६।

राष्ट्रीय रूपसे अहिंसाको अपना धर्म बना लिया होता तो उसे नेतृत्व प्रदान करनेमें मुझे कोई सकोच न होता। देशके करोडो लोगोपर मेरा थोडा-बहुत प्रभाव तो है, लेकिन मैं उस प्रभावकी गम्भीर और स्पष्ट मर्यादाओको भी जानता हूँ। भारतमें अनादि कालसे अहिंसाकी एक अखण्ड परम्परा चली आ रही है। लेकिन जहाँतक मैं जानता हूँ, उसके प्राचीन इतिहासमे कभी भी ऐसा नही हुआ कि अहिंसा व्यवहारत. समस्त देशमें व्याप्त हो गई हो। फिर भी, मेरा यह दृढ विश्वास है कि एक-न-एक दिन उसे समस्त मानवजातिके लिए अहिंसाका मन्त्रदाता बनना है। हो मकता है, इस विश्वासके फलीभूत होनेमे युगो लग जाये। किन्तु, जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, इस कामको करनेमे कोई भी देश भारतसे आगे नही निकल सकता।

खैर, जो भी हो, यहाँ इस अद्वितीय शक्तिके फलितार्थोपर विचार कर लेना समीचीन होगा। कुछ मित्रोने कल प्रसगवश तीन प्रश्न पूछे

> **१. अगर अबीसीनिया, जिसके पास शस्त्रास्त्रोंका अभाव है, अहिंसा-धर्मसे काम ले तो वह शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित इटलीके मुकाबले क्या कर सकता है?**
>
> **२. अगर इंग्लैंड, जो राष्ट्रसंघका सबसे बड़ा और शक्तिशाली सदस्य है, अहिंसाकी आपकी कल्पनाके अनुसार अहिंसक बन जाये तो वह अपनी करने पर आरूढ़ इटलीके खिलाफ क्या कर सकता है?**
>
> **३. अगर भारत एकाएक अहिंसाकी आपकी कल्पनाके अनुसार अहिंसक बन जाये तो वह क्या कर सकता है?**

अहिंसाको जैसा मैंने समझा है उसके अनुसार उसमें पाँच बातें सहज रूपसे समाहित हैं और उपर्युक्त प्रश्नोके उत्तर देनेसे पूर्व मैं इनका उल्लेख कर देना चाहूँगा।

१. अहिंसाका अर्थ आदमीके लिए यथाशक्य अधिकसे-अधिक आत्म-शुद्धि है।

२ आदमी-आदमीके बीच मुकाबला करे तो देखेंगे कि किसी अहिंसक व्यक्तिमें हिंसा करनेकी जितनी अधिक क्षमता (इच्छा नही) होगी, उसकी अहिंसाकी परख उतनी-ही अधिक होगी।

३ अहिसा हर हालतमे हिंसासे श्रेष्ठ है, अर्थात् यदि कोई व्यक्ति हिंसक होता तो उसके पास जितनी शक्ति होती उसकी तुलनामे, यदि वह अहिंसक है तो, उसके पास सदैव अधिक शक्ति होगी।

४. अहिंसामे पराजय नामकी कोई चीज ही नही है। किन्तु हिंसामें तो अन्तमें पराजय होगी ही।

५ अहिसाके सन्दर्भमे यदि 'विजय' शब्दका प्रयोग किया जा सकता हो, तो हम कहेंगे कि अहिंसाका अन्त निश्चित विजयके रूपमे ही होता है।

उपर्युक्त प्रश्नोके उत्तर इन प्रत्यक्षसिद्ध सत्योको ध्यानमें रखकर दिये जा सकते हैं।

१. यदि अबीसीनिया अहिंसक बन जाये तो उसके पास कोई हथियार न होंगे, बल्कि उसे किसी हथियारकी जरूरत ही नही रहेगी। उस हालतमें वह राष्ट्रसघ अथवा अन्य किसी भी शक्तिसे सशस्त्र हस्तक्षेपके लिए गुहार नही करेगा। वह

किसी को अपने खिलाफ कोई शिकायत रखनेका मौका ही नहीं देगा। और अगर अबीसीनिया न सशस्त्र प्रतिरोध करेगा और न रजामन्दीसे या मजबूरीमे सहयोग ही करेगा तो इटलीके सामने जीतनेके लिए कुछ रह ही नही जायेगा। उस हालतमे तो उसपर इटलीके कब्जेका मतलब यह हो जायेगा कि उसने एक निर्जन देशपर कब्जा कर रखा है। लेकिन इटलीका उद्देश्य ऐसे देशपर कब्जा करना नही है। वह तो उस सुन्दर देशकी जनताको बसमे करना चाहता है।

२ अगर अग्रेज एक राष्ट्रके रूपमे हृदयसे अहिसक बन जाये तो वे साम्राज्य-वादका त्याग कर देगे, शस्त्रास्त्रोका प्रयोग छोड देगे। इस त्यागसे जो नैतिक शक्ति उत्पन्न होगी उसके सामने इटली विचलित हो उठेगा और वह अपनी दुर्योजनाएँ छोड़ देगा। तब इग्लैण्ड, ऊपर मैने जो पाँच उपसिद्धान्त बताये है, उनकी सजीव प्रतिमा बन जायेगा। ऐसा हृदय-परिवर्तन समस्त युगोका सबसे बडा चमत्कार होगा। लेकिन अगर अहिसा एक सपना-मात्र नही है तो कभी-न-कभी और कही-न-कही यह चमत्कार होना ही है। मै यही आस्था लेकर जी रहा हूँ।

३ अन्तिम प्रश्नका उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है। जैसाकि मैने कहा है, अहिसा शब्दके पूरे अर्थमे भारत एक राष्ट्रके रूपमे अहिसक नही है। साथ ही उसमे हिंसासे काम लेनेकी क्षमता भी नही है——और सो इसलिए नही कि उसके पास शस्त्रास्त्र है। बहादुरोके लिए कोई जरूरी नही है कि उनके पास हथियार हो ही। भारतकी अहिसा कमजोरोकी अहिसा है। उसके दिन-प्रतिदिनके अनेक कार्योसे उसकी कमजोरी प्रकट होती है। उसे देखकर आज दुनियाको यही लग रहा है कि वह एक क्षयशील राष्ट्र है। यहाँ मेरा मतलब भारतके राजनीतिक दृष्टिसे क्षयशील होनेसे नही, बल्कि अहिसा तथा नैतिकताकी दृष्टिसे क्षयशील होनेसे है। उसमे शरीर-बलसे प्रतिरोध करनेकी क्षमता नही है। उसे अपनी शक्तिका कोई बोध नही है। वह तो सिर्फ अपनी कमजोरियोको ही जानता है। अगर उसकी यह स्थिति न होती तो उसके सामने कोई साम्प्रदायिक या राजनीतिक समस्या ही नही रहती। यदि वह अपनी शक्तिका यथोचित बोध रखते हुए अहिसक होता तो अग्रेज हमारे प्रति अविश्वाससे भरे विजेताकी भूमिका स्वत छोड़ देगे। राजनीतिकी भाषामें हम चाहे जो कहे, उसमें कोई हर्ज नही है, और हमारा अग्रेज शासकोपर दोषारोपण करना भी अकसर उचित हो सकता है। लेकिन अगर हम भारतीयोके रूपमें एक क्षणको अपने-आपको एक ऐसे सशक्त राष्ट्रके रूपमें देख सके जो किसीपर प्रहार करनेको तैयार नही है तो अग्रेजोसे——चाहे वे सिपाही हो या व्यापारी अथवा प्रशासक——हमे कोई डर नही रह जायेगा और न उनके मनमे हमारे प्रति कोई अविश्वास रह जायेगा। मतलब यह कि अगर हम सच्चे अहिसक बन जाये तो अपने हर काममे अग्रेजोका सहयोग प्राप्त कर सकते है। दूसरे शब्दोमें, हम अपनी करोड़ोकी आबादीके कारण उस दशामें विश्वके लिए सबसे बड़ी नैतिक शक्ति बन जायेगे और तब इटली हमारी मैत्रीपूर्ण सलाहको अनसुना नही करेगा।

आशा है, अब पाठक समझ गये होंगे कि मैंने यहाँ जो-कुछ कहा है वह मेरे उन सिद्धान्तोको सिद्ध करनेका एक भोडा और साधारण-सा प्रयत्न-मात्र है जो यदि सचमुच सिद्धान्त हैं तो उन्हे सिद्ध करनेकी कोई आवश्यकता नही है।

जबतक मुझमें ज्यामितिकी समझ नही आई थी, मैं यूक्लिडके बारहवें सिद्धान्तको बार-बार पढ़ता, लेकिन मेरा दिमाग चकरा कर रह जाता, मेरी समझमें कुछ नही आता। लेकिन जब मुझमे ज्यामितिकी समझ आ गई तो मुझे लगने लगा कि इससे आसान तो कोई और विज्ञान है ही नही। अहिंसाके सम्बन्धमे यह बात और भी लागू होती है। यह एक सीमाके बाद दलीलका नही, बल्कि आस्था और अनुभवका ही विषय रह जाता है। जबतक दुनियामे यह आस्था नही जगती तबतक उसे किसी चमत्कारकी, अर्थात् बड़े पैमानेपर अहिंसाकी प्रत्यक्ष शक्तिके दर्शन करनेकी प्रतीक्षा करनी ही है। कहते है, अहिंसा मानव-स्वभावके विरुद्ध है, वह केवल व्यक्तिके आचरणके लिए है। अगर ऐसा है तो फिर मनुष्य और पशुमें रूपाकृतिके अतिरिक्त और अन्तर क्या है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१०-१९३५

३६. भाषण: अ० भा० च० सं० की परिषद्की बैठकमें[1]

वर्धा
[१३ अक्टूबर, १९३५ या उसके पूर्व][2]

हमें निरर्थक और आत्माका हनन करनेवाली अर्थ-व्यवस्थासे होड लेनेका विचार सदाके लिए त्याग देना चाहिए। क्या आप जानते हैं कि किस धोखेबाजीसे जापानी कपड़ोंके टुकडे बाजारमे भरे जा रहे हैं। पाँच वर्ष पहले ऐसा कपडा कुछ हजार गज ही आता था, लेकिन आज लाखो गज आ रहा है। इससे आप कैसे होड ले सकते है? नही, अब हमें इस होडमे शामिल होनेके लिए अपने कपड़ोकी कीमतें कम करनेकी कोशिश नही करनी चाहिए। इन तमाम वर्षोंमे हम उपभोक्ताओका ही खयाल करते रहे हैं और कतैयोंके लिए कुछ नही किया है; हम यह भूल ही गये है कि यह सघ उपभोक्ताओका नही, कतैयोका है। हमें कतैयोंके सच्चे प्रतिनिधि होना है, लेकिन आज हम उनके प्रतिनिधि नही रह गये हैं, नतीजा यह है कि हम सिर्फ किसी तरह दिन काटते रहे हैं और राजनीतिक उथल-पुथल पर भरोसा करते रहे हैं तथा एक प्रकारसे जुआ खेलते रहे हैं। मैंने जेराजाणीसे[3] पूछा कि 'ये सुन्दर

१. महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' से उद्धृत। इससे पहले सदस्योंने "गांधीजी की नई खादी नीति से सम्बन्धित प्रस्ताव" के बारे में अपनी शकाएँ व्यक्त की थीं।

२. बैठक ११ से १३ अक्टूबरतक चली थी।

३. विट्ठलदास जेराजाणी।

सुहाने विज्ञापन देनेसे क्या फायदा? 'वह दिन दूर नही जब हम अपने कार्योंसे इस आरोपको उचित ठहराते पाये जायेंगे कि हम मध्यवर्गके बेरोजगार लोगोको काम देनेके लिए ही यह सस्था चला रहे है।' इसीलिए मै कहता हूँ कि अपने सबसे ज्यादा जरूरतमन्द भाइयोका शोषण करनेके निमित्त हमे इस तरह घाटा उठानेसे अब बाज आना चाहिए। मुझसे यह पूछा गया कि 'तो क्या सौ स्त्रियोको सन्तोष-जनक मजदूरी देनेके लिए आप उनमे से हजारोको बेरोजगार कर देनेका खतरा उठाना चाहेंगे?' मेरा कहना है कि इस स्थायी बुराईको दूर करनेके लिए यह कठिन स्थिति लाना आवश्यक है। हमारा लक्ष्य हर वयस्कके हाथमे एक चरखा और हर गाँवमे एक करघा देखना है। भले ही हमने करोड़ो रुपयेकी खादी तैयार की हो, किन्तु उसकी बदौलत हम इस लक्ष्यके तनिक भी निकट नही पहुँच पाये है। मै आपसे नगरो और नगरोके उपभोक्ताओको भूल जानेको कहता हूँ। आप हमारे तीस करोड़ ग्रामवासियोंको खुद खादी तैयार करके उसका इस्तेमाल करनेपर राजी कीजिए। फिर तो एक करोड़ या लगभग एक करोड़ शहरी लोग सहज ही खादी पहनने लग जायेंगे। बीचमे कुछ समयके लिए मन्दी आ जाये या गति रुक-सी जाये तो उसकी परवाह न कीजिए। अगर माँग नही है तो माल भी तैयार नही कीजिए। जहाँ आपके भण्डार घाटेमें चल रहे है वहाँ उन्हे बन्द कर दीजिए, और जिनको आपसे खादी खरीदनेकी फिक्र हो उन सबसे कह दीजिए कि हम आपके लिए खादी तैयार करवानेको तो तैयार है, लेकिन सशोधित दरो पर ही।

लेकिन, मै अपना प्रस्ताव आप पर जबरदस्ती नही थोपना चाहता। अगर इसमे आपका दिल नही जमे तो आप भले इसे अस्वीकार कर दे। जितनी जिम्मेदारी आप निभा सकते है उससे ज्यादा अपने सिर न लीजिए। अपनी सामर्थ्यके मुताबिक ही मनसूबे रखिए। आपको बता दूँ कि सावलीके उत्पादन केन्द्रमे ऐसे कतैये आज भी मौजूद है जो नई मजदूरीकी शर्तें पूरी कर रहे है, प्रतिदिन तीन-चार आना कमाने लग गये है। जहाँ भी सम्भव हो, वस्त्र-स्वावलम्बन पर जोर दीजिए; फिर खादीके अनुकूल वातावरण उससे अपने-आप तैयार हो जायेगा। उदाहरणके लिए, काठियावाड़मे लोगोंने कई केन्द्र चलाने और इस तरह तैयार खादी बेचनेकी जी-जानसे कोशिश की। अब उन्होने यह कोशिश छोड़ दी है और श्रीयुत शकरलाल बैंकरको जो उत्तर मिले है उनमे काठियावाड़ शाखाके मन्त्रीका इस आशयका भी उत्तर शामिल है कि नई नीतिके सम्बन्धमे उन्हे न कोई राय जाहिर करनी है और न उसकी कोई आलोचना करनी है, क्योकि उस केन्द्रमे जितनी भी खादी तैयार की जाती है, सब वस्त्र-स्वावलम्बनकी शर्तोके अनुसार ही तैयार की जाती है।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-१०-१९३५

१. बैठकमें पास किये गये प्रस्तावों के लिए देखिए परिशिष्ट-१।

३७. तिरसठ वर्ष पहले और आज

२४ फरवरी, १८७२ की एक गश्ती चिट्ठीसे यह पता चलता है कि काठियावाड़के अन्तर्गत वड़ोदमे नीचे लिखे अनुसार रुई काममे लाई जाती थी :

वस्तु	सेर
सुतली	३००
रस्सी और मोहरा	२५०
सूतकी डोरी	४६
देशी कपड़ा	२,०००
गद्दे	७५
सीनेका डोरा	५०
दीयेकी बत्ती	७५
जनेऊ	४
	कुल २,८०० सेर

१०,००० सेर रुई दूसरी जगह जाती थी। इसी सर्क्युलरमे लिखा है कि क. ताई चरखो पर ही होती थी; और कुनबी, कोली, राजपूत, बनिया, ब्राह्मण, खोजा, मोमिन, दर्जी, लुहार, बढई, मोची, तेली, ढेड, भगी आदि जातियोकी स्त्रियाँ कातती थी। बुननेका काम करघेपर सिर्फ ढेड लोग ही करते थे। कुल ५३ चरखे और १० करघे चलते थे। चरखे चलानेवाली स्त्रियोकी जातियाँ उसमे नीचे लिखे अनुसार दी गयी है :

११ कुनबी	८ बनिया	१ दर्जी
१० कोली	१ नाई	१ लुहार
५ सुनार	२ बढ़ई	२ मोची
१ पिंजारा	१ ब्राह्मण	३ मोमिन
१ भरवाड़	४ राजपूत	१ बाबा (गुसाईं)
१ खोजा	१ भगी	१ खवास

सर्क्युलर भेजनेवाले सज्जन लिखते है कि ६३ वर्ष पहले जहाँ २००० सेर रुई काती जाती थी, वहाँ आज दो सेर भी नही कतती। एक भी चरखा नही चलता, एक-दो जो बुनकर है—वे मिलके सूतका कपड़ा बुनते है। इसी वड़ोदमे और इसी काठियावाडमें रुईका उत्पादन आज कम नही है, वल्कि ज्यादा ही है। और जो स्थिति बड़ेसे-बड़े उद्योगकी हुई, वही छोटे उद्योगकी भी हुई है। हम इसकी सहज ही कल्पना

कर सकते हैं, और प्रत्यक्ष देख सकते हैं कि जो लोग अपनी ही सीमामें पैदा होनेवाले कच्चे मालकी चीजें न बनाकर उसे यों ही बेच डालते है वे किस बुरी तरहसे कंगाल हो जाते हैं। जो अनेक तरहके धन्धे गाँवोमे पहले चलते थे, वे आज बन्द हो गये हैं। नतीजा इसका यह हुआ है कि आज अधिकाश स्त्री-पुरुष बेकार बैठे है। फिर ये बैठे-ठाले लोग सर्वनाशकी ओर न जाये तो और करे क्या?

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १३-१०-१९३५

३८. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

वर्धा

१३ अक्टूबर, १९३५

प्रिय गुरुदेव,

आपका हृदयस्पर्शी पत्र इसी ११ तारीखको पहुँचा। उस दिन मै बैठकोमे व्यस्त था और अनिल इस आशामे पत्रको बेकार रोके रहा कि वह उसे खुद ही मेरे हाथमे देगा। आशा है, अब उसका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो गया होगा।

हाँ, अब आर्थिक स्थिति मेरे सामने स्पष्ट हो गई है। आप भरोसा रखे कि आवश्यक धन-राशि जुटानेकी मै भरपूर कोशिश करूँगा। अभी तो मै इधर-उधर टटोल रहा हूँ। मै कोई रास्ता निकालनेकी कोशिश कर रहा हूँ। अपनी इस खोजका नतीजा आपको बता सकनेमें मुझे कुछ समय लगेगा।

यह सोचा भी नही जा सकता कि अब इस उम्रमे आपको एक बार फिर भिक्षाटनपर निकलना पड़े। जितने पैसेकी जरूरत है, वह आपको शान्तिनिकेतनसे निकले बिना मिलना चाहिए।[1]

आशा है, आपका स्वास्थ्य ठीक होगा। अभी कुछ दिन पहले पद्मजा[2] आपके साथ थी, लेकिन आज एक दिनके लिए यहाँ आई हुई है। उसने मुझे बताया है कि आप कितने बूढ़े हो गये हैं।

श्रद्धामय स्नेह-सहित,

आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२८७) से।

१. इन दिनों रवीन्द्रनाथ ठाकुर विश्वभारतीके लिए धन एकत्र करने के निमित्त एक नृत्य-नाटच मण्डली के साथ दौरा कर रहे थे।

२. सरोजिनी नायडू की पुत्री।

३९. पत्र : अमृत कौरको

१३ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमृत,

महिलाओंकी स्थिति पर तुम्हारी टिप्पणी कल दोपहर बाद मिली। मैं इसको पढ़ गया हूँ। इसमें सुधारकी जरूरत नही है। तुम्हारी लिखी हुई चीज हमेशा ठीक होती है और आसानीसे समझमें आ जाती है। दलीले सहज हैं। लेकिन ये वैसी नही है जैसी मैंने अपेक्षा की थी। इसमे स्थितिका पूरी तरहसे स्पष्ट चित्रण नही है। तुम्हारा यह कहना कि तुम्हे पहले कभी भी ऐसा काम नही करना पड़ा, अब मेरी समझमें आता है। तुम्हारा प्रस्तुतीकरण प्रभावशाली नही बन पड़ा है, इसमें तुम्हारा दोष नही है। मैं नही चाहता कि तुम किसी भी विषयके सम्बन्धमें फिलहाल इस तरहका कोई दूसरा प्रयत्न करो। जब तुम यहाँ आओगी तो इस पर विचार करेंगे और मैं तुम्हे बताऊँगा कि मैं इसे किस रूपमें पसन्द करता। उसके बाद यदि तुम्हारा मन हो तो तुम स्वतन्त्र रूपसे कुछ लिखना–शायद अपने सघ[1] के लिए।

मुझे देवदासकी कोई चिन्ता नही है। मैं जानता हूँ कि यदि देवदास मेरे साथ रहता तो भी उसको कोई अधिक लाभ नहीं होता। और इतना तो निश्चित है कि उसकी जितनी अच्छी तरह देखभाल तुमने और शम्मी[2] ने की है उतनी मैं तो नही कर पाता। मुझे लगता है कि तुम अनावश्यक रूपसे चिन्तित हो रही हो।

मैं अभी अखिल भारतीय चरखा संघ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन आदिकी बहुत सी बैठकोंमें भाग ले रहा हूँ। इस स्थितिमे खतो-किताबत या किसी दूसरे मामले पर कोई ध्यान नही दिया जा सकता।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५५) से; सौजन्य . अमृत कौर। जी० एन० ६३६४ से भी।

१. अखिल भारतीय महिला सम्मेलन।

२. कुँवर शमशेर सिंह, एक अवकाश-प्राप्त शल्यचिकित्सक, और अमृत कौरके बड़े भाई।

४०. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१३ अक्टूबर, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र मिले। तुम जैसे चाहो वैसे सीता[१] की पढाईकी व्यवस्था करो।

सुरेन्द्रके साथ मनुकी सगाईकी बात चल रही है। किशोरलालकी ऐसी इच्छा हुई है।

देवदास अभी शिमलामें ही है। प्यारेलाल उसके साथ है। यह कहा जा सकता है कि वह ठीक होता जा रहा है। किन्तु अभी उसकी तीमारदारी बहुत जरूरी है। चिन्ताका कोई कारण नहीं।

रामदास बम्बईमें अपने भाग्यसे लड रहा है। इसमें उसे आनन्द भी आता है। अत: मुझे सन्तोष है।

मैं यह तो लिख ही चुका हूँ कि बा यहाँ आ गई है।

मीराबहन अच्छी हो गई है। थोडे दिनमें एक गाँवमें रहने चली जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४५) से।

४१. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

वर्धा
१४ अक्टूबर, १९३५

मेरे कामके बोझके बारेमें तो तू कुछ पूछ ही मत।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १६१

१. मणिलाल और सुशीला गांधीकी पुत्री।

४२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

वर्धा

१५ अक्टूबर, १९३५

येवलोमें डॉ० अम्बेडकर द्वारा दिये गये भाषण[2] के सम्बन्धमें महात्माजीने कहा :

डॉ० अम्बेडकर द्वारा जो भाषण दिये जानेकी खबर है, वह विश्वास योग्य नही है। लेकिन अगर उन्होने ऐसा भाषण दिया हो और सम्मेलनने हिन्दू धर्मसे सारा सम्बन्ध तोड़ लेने और जो धर्म उन्हे समानताकी गारटी दे उसे स्वीकार करनेका प्रस्ताव पास किया हो तो मै दोनोको दुर्भाग्यपूर्ण बातें मानता हूँ, विशेषकर इसलिए कि हम देख रहे है कि विपरीत परिणामका आभास देनेवाली कुछ छुट-पुट घटनाओके वावजूद अस्पृश्यता अपनी अन्तिम घड़ियाँ गिन रही है। कविठा तथा अन्य गाँवोमें जैसी बर्बरता दिखाई गई[3], उसपर डॉ० अम्बेडकर-जैसे महात्मा और उच्च शिक्षाप्राप्त व्यक्तिका क्रोध मै समझ सकता हूँ। लेकिन धर्म तो कोई घर या पोशाक-जैसी चीज है नही कि जिसे जब चाहे बदल ले। मनुष्यके अपने व्यक्तित्वका जैसा अभिन्न अग उसका शरीर है उससे भी अभिन्न अग धर्म है। धर्म मनुष्यको उसके स्रष्टासे जोड़ रखनेवाला सूत्र है। मृत्युके साथ शरीर तो नष्ट हो जाता है, किन्तु धर्म उसके बाद भी अक्षर रहता है। यदि डॉ० अम्बेडकरको ईश्वरमें आस्था है तो मै उनसे अनुरोध करूँगा कि वे अपने क्रोधको शान्त करके अपने निर्णयपर एक वार फिर विचार करें और अपने पैतृक धर्मको उसके श्रद्धाहीन अनुयायियोके दोषोको दृष्टिमें रखकर नही, बल्कि स्वयं उस धर्मके गुण-दोषोको ध्यानमें रखकर परखे। और अन्तमें, मेरा विश्वास है कि उनके और उक्त प्रस्ताव पास करनेवाले अन्य लोगो द्वारा अपना धर्म बदल लेनेसे वह उद्देश्य तो सिद्ध नही हो सकता जिसके लिए वे ऐसा करना चाहते है। कारण, जब डॉ० अम्बेडकर और उनके साथी अपने

१. १९ अक्टूबर, १९३५ के *हरिजन*में यह "अनफॉर्चुनेट" ("दुर्भाग्यपूर्ण") शीर्षक से छपा था।

२. १४ अक्टूबर को नासिक में हुए बम्बई प्रान्त के दलित वर्गों के सम्मेलन में डॉ० अम्बेडकर ने कहा था: "चूँकि हम दुर्भाग्य से हिन्दू कहे जाते हैं, इसीलिए हमारे साथ ऐसा व्यवहार किया जाता है। यदि हम किसी और धर्म के अनुयायी होते तो हमारे साथ ऐसा बरताव करने का साहस किसी में नहीं होता।... तो जो भी धर्म आपको शेष लोगों के समान दर्जा और व्यवहार दे सके, उसे आप स्वीकार कर लीजिए।" *डॉ० अम्बेडकर की सलाहपर सम्मेलन ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पास किया, जिसमें दलित वर्ग के लोगों से यह अनुरोध किया गया कि वे हिन्दू धर्म से अपना सम्बन्ध तोड़ लें और जिस धर्म को भी स्वीकार करने से उन्हें शेष लोगों के समान दर्जा और व्यवहार प्राप्त हो सके, उसे स्वीकार करें।*

३. देखिए "कविठाको खाली कर दें," ५-१०-१९३५।

पैतृक धर्मका त्याग कर देंगे तब करोड़ों भोले-भाले और अशिक्षित हरिजन उनकी बात नही सुनेंगे — विशेषकर इस कारणसे कि उनका जीवन, चाहे यह अच्छी बात हो या बुरी, सवर्ण हिन्दुओंके जीवनसे अभिन्न रूपसे गुँथा हुआ है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, १६-१०-१९३५

४३. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

१५ अक्टूबर, १९३५

चि० अम्बुजम्,

तुमने हिन्दीमें बहुत अच्छा पत्र लिखा है, सो मुझे मिला। तुम्हे बुखारसे पूरी तरह पिंड छुड़ा लेना चाहिए। कितना अच्छा होता कि तुम यहाँ होती! फिलहाल मौसम बहुत सुहावना है। किन्तु मैं समझता हूँ कि ऐसा हो नही सकता।

जनवरी मास मुझे गुजरातमें बिताना होगा और सम्भवत फरवरी मास दिल्ली के लिए लगाना होगा। उस समय वहाँ कड़ी ठंड नही रहेगी।

वसुमती इस सप्ताह यहाँ आनेवाली है। अमतुस्सलाम और प्रभावती यहीं हैं और बा भी है। देवदास वापस दिल्ली लौट गया है। वह अभी भी उदास रहता है।

सप्रेम,

बापु

[पुनश्च :]

क्या मैंने तुमसे रसम् बनानेकी तुम्हारी विधि लिख भेजनेको कहा था? यदि नही, तो अब कहता हूँ। और रसम्के गुणो पर डाक्टरोका मत भी बतलाना।

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधि ने जब डॉ० अम्बेडकर से इसपर टिप्पणी करने का अनुरोध किया तो उन्होंने कहा कि "मैंने तो अपना धर्म बदलने का निश्चय कर लिया है। अगर जन-साधारण साथ नही आता तो मुझे उसकी फिक्र नहीं है। यह तो उनके तय करने की बात है।... कविठा इस तरह की छुट-पुट घटनाओं का उदाहरण ही नहीं है, बल्कि यह तो उस प्रणाली का आधार है जिसपर हिन्दुओं का पैतृक धर्म खड़ा है।"

४४. पत्र : बलवन्तसिंहको

१५ अक्टूबर, १९३५

चि० बलवंतसिंह,

तुमारी बात सच्ची है। मैं कोशीश[1] करूंगा। "बिगरी कौन सुधारे राम बिन, बिगरी कौन सुधारें।" देखें रामजी क्या कराते हैं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८२) से।

४५. तार : राजेन्द्र प्रसादको

१७ अक्टूबर, १९३५

बाबू राजेन्द्र प्रसाद
मार्फत कांग्रेस
मद्रास

जवाहरलालको शायद मोहनलाल नेहरू[2]का स्वराज्य-भवन-सम्बन्धी पत्र मिल गया होगा। वह उसके विषयमें कांग्रेस समितिकी पक्की सुनिर्धारित नीति जानना चाहता है।

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. बलवन्तसिंह ने गांधीजी से प्रार्थना की थी कि वे पहले से ही बिगड़ते हुए अपने स्वास्थ्यका अच्छी तरह खयाल रखें।

२. स्वराज्य भवन ट्रस्ट की प्रबन्धक समिति के मन्त्री; देखिए अगला शीर्षक भी।

४६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
१७ अक्टूबर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पत्र मिला। स्वराज्य भवनके बारेमे मैने राजेन्द्रबाबूको तार दिया है।[1] मुझे नही मालूम कि क्या कुछ हो रहा है। मै तुम्हारी इस रायसे पूरी तरह सहमत हूँ कि कमेटीकी नीति बिलकुल स्पष्ट निर्धारित कर दी जाये।

जहाँतक वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिके प्रति हमारे रवैयेका सम्बन्ध है, मै नही समझता कि उसे परिप्रेक्ष्यमे ग्रहण नही किया जा रहा है। लेकिन हमारी असहायावस्था हमे चुप रहने पर मजबूर करती है। इसमे कमजोरीकी भी कोई बात नही है। तुम चाहो तो कह सकते हो कि यह महज एक अच्छे ढगका नीति-कौशल मात्र है। खैर, मुझमे तो कमजोरीकी कोई भावना नही है। लेकिन मै जानता हूँ कि इस समय मेरे कुछ बोलनेका कोई प्रभाव नही होगा। लोग क्या कर सकते है, यह जाने बिना मै उन्हे नेतृत्व प्रदान नही कर सकता। मै यह जानता हूँ कि उन्हे क्या करना चाहिए। और जो बात मुझ पर घटती है वही हमारे अधिकाश कार्यकर्त्ताओ पर भी लागू होती है। लेकिन इन बातोमे तुमपर मेरा बडा भरोसा है। हममें से किसीको भी परिस्थितिकी जितनी पकड़ है या कमसे-कम खुद मै उसे जितना समझ पानेकी आशा रख सकता हूँ, तुम्हारी पकड़ उससे बहुत अच्छी है। इसलिए शायद तुम ऐसा कोई शोभनीय तरीका निकाल सको जिससे कि वाणी और कर्मके माध्यमसे राष्ट्रीय भावनाओको अभिव्यक्ति मिल सके। यह कहनेकी तो जरूरत ही नही है कि अभी सीधी कार्रवाईके लिए कोई गुजाइश नही है।

कमलाके बारेमे तुमने जो-कुछ लिखा है, वह चिन्तामें डालनेवाला है। लेकिन इस उतार-चढ़ावके लिए तो हम तैयार ही है। सविधानके[2] सम्बन्धमें तुम्हे और भी जो सुझाव देने हो उनके मिल जाने पर ही मै कुछ कह सकूँगा। सविधानकी प्रति तुम्हे जितनी जल्दी हो सके, मिल जाये, इसके लिए मैंने जो पैसा खर्च किया[3] उसकी मुझे खुशी है।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. कांग्रेसका संविधान।

३. संविधान को हवाई डाक से भेजकर पैसा खर्च करने के लिए जवाहरलाल नेहरूने विरोध प्रकट किया था।

तुम सबको प्यार।

बापूके आशीर्वाद

अंग्रेजीसे: गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

वर्धा
१८ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमला,

तुम्हारे पत्रोंका स्वर संयत होता जा रहा है, इससे लगता है कि तुम्हारा मन वहाँ स्थिर होता जा रहा है। अब लालच मत करो। जो-कुछ मिल रहा है, उसमें सन्तोष मानो। ५० रु० + २५ रु० तुम्हारे लिए काफी होने चाहिए। तुम कुमारी चट्टोपाध्यायके सम्पर्कमें आ गई हो, यह अच्छा हुआ। अब चूंकि तुम वहाँ नये सम्पर्क बना रही हो और तुम्हारा मन स्थिर होता जा रहा है, इसलिए अभी यहाँ आनेकी बात तुम्हे नही सोचनी चाहिए, हालाँकि वैसे तुम जब चाहो आ सकती हो। अबतक तो तुम स्थितिको अच्छी तरह जान ही गई हो।

बापूके आशीर्वाद[1]

अंग्रेजीसे: स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४८. पत्र : विश्वविद्यालयके एक छात्रको[2]

[१९ अक्टूबर, १९३५ पूर्व]

तुम देश सेवा कर सकते हो

१. दरिद्रनारायणके लिए रोजाना बराबर और मजबूत सूत कातकर, कितनी देर काता, काते गये सूतकी मात्रा और इसका वजन और सूतका अक डायरीमें लिखकर; और हर महीनेकी रिपोर्ट मुझे भेजकर। सूत सावधानीसे लपेटा जाये और मुझे भेज दिया जाये।

१. हस्ताक्षर गुजरातीमें है।
२. महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से उद्धृत। इसमें एक विद्यार्थीने "अपनी पढ़ाई को हानि पहुँचाये बिना अपने खाली समयमें सेवाके लिए उत्सुकता प्रकट की थी।"

२. स्थानीय प्रमाणित भण्डारके माध्यमसे रोजाना कुछ खादी बेचकर, और रोजानाकी अपनी बिक्रीका हिसाब रखकर।

३. प्रतिदिन कमसे-कम एक पैसा बचाकर।

४ एकत्र धन मुझे भेजकर। "कमसे-कम" विशेषणका निहितार्थ अच्छी तरह समझ लेना चाहिए, यानी यदि तुम ज्यादा बचानेमें समर्थ हो तो तुम्हें दरिद्रनारायण की गुल्लकमें अधिक पैसा डालना चाहिए।

५ अन्य छात्रोंके साथ हरिजनोके घरोम जाकर; और अपने साथियोके साथ उनके घरोको साफ करके, उनके बच्चोसे घुलमिलकर और उन्हे सफाई और स्वास्थ्यके बारेमें उपयोगी पाठ देकर।

अपनी पढाईके बाद यदि तुम्हारे पास कुछ वक्त बचे तो गाँववालोंकी भावी सेवाके लिए तुम्हे कुछ ग्रामोद्योग सीखने चाहिए। अगर इतना करनेके बाद अब भी तुम्हारे पास वक्त बचे और पढाईके साथ-साथ कुछ और-अधिक करनेकी महत्त्वाकाक्षा हो तो तुम मुझसे पूछ सकते हो; मै तुम्हे और सुझाव भेज दूंगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-१०-१९३५

४९. सोयाबीन

यह मालूम हुआ है कि सोयाबीनको हम किसी भी फलीकी तरह समूची ही पकाकर खा सकते है। बड़ौदाके श्री नरहरि भावे, जिन्होने अपने तीनो सुयोग्य और साधुमना सुपुत्र—विनोबा, बालकृष्ण और शिवाजी—देशकी सेवामे अर्पित कर दिये है, स्वय प्रत्येक वस्तुका खूब ध्यानसे अवलोकन करते हैं। उनकी आयु ६१ वर्ष है। वे लगभग केवल दूध और ६ औस सोयाबीन खाकर रहते है, और उनका स्वास्थ्य खूब अच्छा है, शरीरमें शक्ति भी पूरी है। उनकी यह राय है कि उनकी कोष्ठबद्धता दूर करनेमें सोयाबीन अच्छी सहायता देता है। केवल दूध अथवा अनाज और सब्जी के साथ दूधसे कोष्ठबद्धता दूर न हो पाती। उनकी यह भी राय है कि सोयाबीनने वायुकी शिकायत, जो दूसरी दालो और दूधके कारण होती है, दूर करनेमें उन्हे मदद दी है। इस निष्कर्ष पर वे दस महीनेसे ऊपरके अखण्ड अनुभवके बाद पहुँचे है। यहाँ मै इतना और बतला दूं कि श्री भावेको गठिये और मुटापेकी भी शिकायत रहती थी, कुछ मधुमेहके लक्षण भी प्रकट हुए थे। केवल आहारपर ठीक-ठीक ध्यान देनेसे ही उनकी ये तीनो शिकायते दूर हो गई। श्री भावेकी देखादेखी मगनवाडीके निवासी—जिनमें मै भी शामिल हूँ—पिछले कुछ दिनोसे सोयाबीनका प्रयोग करके देख रहे है। इतनी जल्दी हम उसपर अपनी कोई राय कायम नही कर सकते। हरएक व्यक्तिको नित्य कलछुल-भर सोयाबीन मिलता है। सोयाबीन को इस तरह पकाते है: कूड़ा-करकट वगैरह बीनकर साफ की हुई फलियोको ठडे पानीमे धोकर कमसे-कम बारह घटे तक भीगने दीजिए, पर अठारह घंटेसे अधिक नही। फिर वह पानी फेक

दीजिए। इसके बाद खौलते हुए पानीमें फलियोको डालकर उन्हे तेज आँचपर पन्द्रह मिनट तक पकाइए। पकाते समय उनमें नमक या सोडा न मिलाया जाये। बादमें नमक मिला सकते हैं। मगनवाड़ीमें तो हम फलियोको दो घंटे तक पकाते है।

गरीबोकी दृष्टिसे जो लोग आहार-सुधारमे रस लेते हैं, उन्हें इस प्रयोगकी परीक्षा करनी चाहिए। यह याद रखना चाहिए कि सोयाबीन एक अत्यन्त पौष्टिक आहार है। जितने खाद्य पदार्थोंका हमें पता है उनमे सोयाबीन सर्वोत्कृष्ट है, क्योकि उसमें कार्बोहाइड्रेटकी मात्रा कम और क्षारों, प्रोटीन और स्निग्ध तत्त्वकी मात्रा अधिक होती है। उसका शक्तिका परिमाण प्रति पौंड २१०० कैलोरी[1] होता है, जहाँ गेहूँका १७५० और चनेका १,५३० होता है। सोयाबीनमें ४० प्रतिशत प्रोटीन, और २०.३ प्रतिशत स्निग्ध तत्त्व होता है, जबकि चनेमें १९ प्रतिशत प्रोटीन और ४.३ प्रतिशत स्निग्ध तत्त्व तथा अण्डेमें १४.८ प्रतिशत प्रोटीन और ४.३ प्रतिशत स्निग्ध तत्त्व होता है। अतः प्रोटीन तथा स्निग्ध तत्त्वयुक्त सामान्य भोजनके साथ अतिरिक्त खाद्यके रूपमें सोयाबीन नही लेना चाहिए। गेहूँ और घी की मात्रा कम कर देनी चाहिए, और दालको तो बिलकुल निकाल ही देना चाहिए, क्योकि सोयाबीन खुद ही एक अत्यन्त पौष्टिक दाल है। हम लोग अभी मचूरियाई जातिके सोयाबीनका परीक्षण कर रहे हैं। बड़ौदाकी फलियोकी हमनें परीक्षा नही की। मगनवाडीमें सोयाबीनकी हमने खुद अपनी काश्त की है। भारतीय किस्मोका ज्ञान मुझे जैसे-जैसे प्राप्त होगा, उनके विषयमें एक साधारण व्यक्तिकी हैसियतसे अपनी राय देनेकी आशा करता हूँ। जिनके पास इसकी भारतीय किस्में हो, वे कृपाकर मुझे उनके नमूने, और उनका मूल्य क्या है, इसकी सूचना भेज दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१०-१९३५

५०. बिच्छूके डंकका सरल उपचार

श्री एम० एस० नारायणनने, जो एक अवकाश-प्राप्त इंजीनियर है, निम्न पत्र लिखा है[2]:

श्री नारायणनने जो सावधानी रखनेका सुझाव दिया है, वह उनके योग्य ही है।[3] वे अपनी बचत, समय और कौशलका उपयोग, मुख्यत: खादीके द्वारा, ग्रामोद्धारके कार्यमें कर रहे हैं। वैसे मगनवाड़ीमे काफी विच्छू हैं, लेकिन बिच्छूके डंक मारने की वारदाते यहाँ उतनी नही होती, जितनी श्री नारायणनके यहाँ होती हैं। उन्होने

१. यह 'हीट' अर्थात् ताप की इकाई हैं, और भिन्न-भिन्न खाद्य पदार्थों में भिन्न-भिन्न परिमाण में पाई जाती है। १ पौंडसे २१०० कैलोरी मिल सकती हैं, इसका अर्थ यह हुआ कि वह उतने तापका उत्पादन कर सकता है।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें नारायणनने बिच्छूके डंकका उपचार करनेके लिए साधारण नमक से एक प्रकारका घोल तैयार करने की विधि बताई थी।

३. पत्र-लेखकने लिखा था कि स्थानीय परीक्षण करनेके बाद यह जानकारी आप और लोगोंको भी दे सकते हैं।

जो-कुछ कहा है, उसमें शंका करनेका मेरे पास कोई कारण नही है। इसलिए इस मुफ्तके इलाजको इस भयसे कि कही यह बेअसर न साबित हो, जनताके सामने न रखूं, यह उचित नही होगा। जो लोग इस इलाजको आजमाये वे अपने प्रयोगोके परिणाम मुझे सूचित करनेकी कृपा करे। अगर मेरे पास इसके बराबर विफल सिद्ध होनेकी ही सूचना आती है तो आम लोगोको भी उसकी जानकारी दे दी जायेगी। जो लोग इस इलाजको आजमाना चाहे वे यहाँ बताई गई रीतिसे घोल तैयार कर लें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१०-१९३५

५१. नहीं, यह पैबन्दगिरी नहीं है

एक सज्जनने, जिनकी ईमानदारीके बारेमे किसीको भ्रम नही हो सकता, कुछ समय पहले मुझे एक बड़ा लम्बा पत्र लिखा था। उसमे उन्होंने अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलन और हरिजन-सेवक सघ द्वारा अस्पृश्यता दूर करनेके लिए अपनाये गये उपायोके विरुद्ध बहुत-कुछ लिखा है। इस कामको उन्होंने यों ही इधर-उधर पैबन्द लगाने जैसा काम बताया है। उनका वह पत्र कई हफ्ते मेरे कागज-पत्रोमे पड़ा रहा। जब लिखनेको बैठता, तब कोई-न-कोई ऐसा काम आ जाता जिसे मैं अधिक महत्त्वका और जरूरी समझता था। इसीसे उनके पत्रपर अबतक कुछ लिख नही सका। बडी कठिनाईके साथ अब उस पत्रको ठीक तरहसे सक्षिप्त रूपमे नीचे दे रहा हूँ :

> मैं समझता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धित आपके कार्यक्रमकी अवधारणा गलत ढंगसे की गई है। मेरे ऐसा कहनेके कारण निम्नलिखित हैं: आप समझते हैं कि दसमें से नौ हिस्साका कष्ट उनकी अस्पृश्यता है, और उस कष्टको दूर करनेका एकमात्र इलाज अस्पृश्यता-निवारण है। आप इसे सामाजिक और धार्मिक अभिशाप मानते हैं। क्षमा कीजिए, मैं यहाँ आपसे सहमत नहीं हूँ। मैं तो यह मानता हूँ कि यह सारी विपदा बिलकुल आर्थिक है। लोगोंके मनपर इसके जो सामाजिक तथा धार्मिक पहलू हावी हो गये हैं वे तो सिर्फ वास्तविकताको छिपानेके लिए ऊपरसे चढ़ाये गये मीठे आवरणका काम करते हैं। हमारे पूर्वज (जिन्हें इसकी सही कुंजीका पता था) हमें युगोंसे इस मीठे आवरणमें छिपी कड़वी चीजकी ओरसे अपनी आँखें बन्द रखना सिखाते आये हैं, लेकिन इसके बावजूद अन्दरकी वह चीज अपनी समस्त वास्तविकताके साथ प्रकट होकर बड़ी क्रूरतासे हम पर हँस रही है। मेरा विश्वास

है कि हरिजनोंकी हीनताकी भावनाके नष्ट होते ही अस्पृश्यता निश्चय ही मिट जायेगी। हरिजनोंकी गरीबीके कारण दूर कीजिए, उनकी आर्थिक अवस्था सुधारिए, राष्ट्रीय सम्पत्तिके जरा और भी उचित विभाजनके लिए लड़िए और हरिजनोंको यह महसूस कराइए कि उन्हें इस मौजूदा पूँजीवादी शोषणके विरुद्ध विद्रोह करना है; और फिर देखिए कि उनके उज्ज्वल भविष्यके द्वार चारों ओर से किस तरह खुल जाते हैं। तब उन्हें यह बतानेके लिए बाहरी संस्थाकी जरूरत नहीं रहेगी कि वे प्रगतिपथ पर कितने डग चले हैं, और बीच-बीचमें कहाँ किस मंजिलपर उन्हें एहतियातके तौरपर ठहरना चाहिए।

आपकी यह धारणा है कि अस्पृश्यता केवल हिन्दू-समाजमें ही है, और यह सिर्फ हमारे ही देशमें है। मगर मेरा विचार तो इससे बिलकुल ही अलग है। यह तो एक विश्वव्यापी समस्या है। इसका सामना हर देशको और उसमें रहनेवाले हरिजनोंको करना पड़ रहा है। इसलिए इस बुराईको निर्मूल करनेका उपाय तो ऐसा होना चाहिए, जो सब देशों पर एक-सा लागू हो सके, जो उसकी जड़पर कुठाराघात करे और सिर्फ ऊपर-ऊपरकी डालियाँ ही छाँटकर हम सन्तुष्ट न हो जायें। आखिर अस्पृश्यता है क्या चीज? यही तो कि उसके नामपर मानव-जातिके एक पूरे हिस्सेके साथ कोढ़ियोंकी तरह बरताव किया जा रहा है और उसे मनुष्यके प्राथमिक अधिकारों तकसे वंचित रखा जा रहा है। महज 'छूना' या 'न छूना' तो उस भीषण क्षयकारी रोगका, हरिजनोंकी गुलामीका एक बाहरी लक्षण-मात्र है, और जबतक उस खास नासूरको दूर करनेका प्रयत्न नहीं किया जाता तबतक रोगीको उससे कुछ भी फायदा नहीं हो सकता। इस दृष्टिसे, अस्पृश्यता एक विश्वव्यापी अभिशाप है और इसके विरुद्ध सभी सताई हुई जातियोंको बगावत करनी है। भिन्न-भिन्न देशोंमें इस मायाविनीने भिन्न-भिन्न भेष धारण कर रखे हैं, अन्तर है तो बस केवल न्यूनाधिक मात्रामें। कहीं यह अस्पृश्यता कम है तो कहीं अधिक, पर है सर्वत्र। हर जगह उसका आधार आर्थिक ही है, जिसे गलतीसे हम 'राजनीतिक' प्रश्न कहते हैं। मेरा खयाल है कि भारतीय अस्पृश्यताका उद्भव उन तथाकथित 'मूल-निवासियों' पर आर्योंकी विजयके साथ हुआ, जो शायद आजके हरिजनोंके पूर्वज थे। अमेरिकामें आज नीग्रो लोगोंके प्रति जो 'अस्पृश्यता' बरती जाती है, उसका मूल कारण सबसे पहले अमेरिका पहुँचनेवाले गोरोंकी भूमि-लिप्सामें ढूँढ़ा जा सकता है। यहूदियोंके प्रति हिटलरशाहीकी घृणा, बुर्जुआ वर्गके प्रति बोलशेविकोंकी घृणा और 'मिकाडो' (जापानियों)से चीनवालोंका भय, इन सबका मूल कारण एक ही है, यानी आर्थिक शोषण, जिसे मधुर भाषामें 'राजनीति' कहते हैं। हिन्दुस्तानकी 'अस्पृश्यता', अमेरिकाका 'लिंचिंग', बेलजियमका 'कांगो' और नाजियोंका यहूदियों पर जुल्म ढाना, ये सब उसी

अन्यायके जीते-जागते उदाहरण हैं और दुनियामें जो बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ होती हैं वे इन्हींके स्वाभाविक परिणाम हैं।

फिर अस्पृश्यता, या अधिक सही शब्दोंका प्रयोग करें तो, इस देशके विजित मूल निवासियोंमें हीनताकी भावना भर देना असलमें आर्योंकी बुर्जुआ-वर्गवाली एक राजनीतिक आवश्यकता थी, क्योंकि वे अपने विशुद्ध आर्थिक उद्देश्योंकी सिद्धिके लिए अपेक्षाकृत हीनतर हरिजन जातियोंको इसी तरह स्थायी रूपसे अपनी गुलामीमें रख सकते थे, अर्थात् विजितों पर विजेताओंके ऊँचे दर्जेकी धाक सदाके लिए कायम रख सकते थे। इंडियन सिविल सर्विसके "फौलादी ढाँचे" की उत्कृष्टता, जिसका आज इतना अधिक विज्ञापन किया जा रहा है, आफ्रिकाके नीग्रो सरदार टेश-केंडीको उसके यूरोपीय मालिकों द्वारा हालमें दी गई असभ्यतापूर्ण चेतावनी और यूरोपीय जातियोंके लोगोंका अपने प्रति विशेष सम्मानपूर्ण व्यवहारका दावा किया जाना और उनके इस दावेका स्वीकार किया जाना, कुछको श्रेष्ठ और कुछको हीन बनाकर रखनेकी उस कूट-योजनाकी ही तो जीती-जागती स्मृतियाँ हैं जो छोटे किन्तु शक्तिशाली राष्ट्रोंको बड़े किन्तु कमजोर राष्ट्रोंके शोषणकी सुविधा प्रदान करनेके लिए बड़ी सावधानीके साथ तैयार की गई हैं।

इस विवेचनसे बहुत हदतक स्पष्ट हो जाता है कि विजेता आर्योंने अपने आर्थिक स्वार्थ साधनेके लिए विजित मूल-निवासियों पर निर्दयतापूर्वक तरह-तरहकी कठिनाइयाँ और असुविधाएँ क्यों थोप दीं। अब इसके बाद दमन-चक्रका चल पड़ना तो उसी तरह स्वाभाविक था जिस तरह दिनके बाद रातका आना। सो रहन-सहन, सामाजिक समागम, खान-पान आदि जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें इस जातीय श्रेष्ठताकी भावनाको दाखिल कराकर उसे पुख्ता और स्थायी बनानेकी हर सम्भव कोशिश की गई। कवियोंने इस प्रणालीका गुण-गान किया और पुराणोंने इसपर दैवी-स्वीकृतिकी मुहर लगा दी। नेटालके भारतीय व्यापारियोंकी तरह हरिजनोंसे उन्हें डर था कि व्यापारिक स्पर्धामें उतरकर वे कहीं उनसे उनका व्यापार न छीन लें। निदान उन्होंने उनको मुख्य व्यापारिक केन्द्रोंसे निकाल बाहर करने और फूलते-फलते व्यापारोंसे उन्हें अलग रखनेके लिए कानून बनाये। अब बेचारे हरिजन मेहनत-मशक्कत करनेवाले मजदूर बनकर रह गये। उनके पास तन ढँकनेको पूरा कपड़ा नहीं रहा, वे टूटी-फूटी, छोटी-छोटी झोपड़ियोंमें पशुओंकी तरह रहनेको मजबूर हुए, गन्दगी उनकी आदतमें समा गई, वे अशिक्षित अनपढ़ बन गये और आर्नोल्डके शब्दोंमें कहूँ तो उन्होंने असहाय-असमर्थ होकर "अपने सिर झुका लिये ताकि यह तूफान उनके ऊपरसे गुजरता रहे"। गरज यह कि दुनियाकी दूसरी विजित जातियोंको जो-कुछ भोगना पड़ता है, वह सब उन्हें भी भोगना पड़ा।

आप वर्ग-संघर्षके अस्तित्वमें विश्वास नहीं करते और न उन तथाकथित निहित स्वार्थवालोंको ही पदच्युत करनेको ही तैयार हैं — और यह महज इस-लिए कि उनके दर्जेमें किसी तरहका खलल डालना मुनासिब नहीं है। आप यह माननेको तैयार नहीं हैं कि जबतक पूंजीपतियों और श्रमिकोंकी मौजूदा स्थितियोंके बीच असमानताको हम स्वीकार करते रहेंगे और उसे कायम रखनेकी कोशिश करते रहेंगे तबतक उनके हितोंमें निश्चय ही संघर्ष होता रहेगा।

हरिजन माँगते हैं रोटीका टुकड़ा और उन्हें मिलता है पत्थर! जहाँतक मैं हरिजनोंके सम्बन्धमें जानता हूँ, उन्हें इस 'छुओ मत' की बलासे कोई वास्ता नहीं। मुझे यकीन है कि आप यह मानते हैं कि हरिजनोंकी अस्पृश्यता इतनी गहरी जड़ जमा चुकी है कि कभी-कभी उनके साथ बैठकर खा-पी लेनेसे, प्रदर्शनके तौरपर उनके मोहल्लोंमें झाड़ू लगा आनेसे, गाँवोंके मन्दिरोंमें उन्हें विधिपूर्वक दाखिल करा देनेसे और दया-भावसे प्रेरित होकर उनके बीच कपड़े तथा मिठाई बाँट आनेसे वह दूर नहीं हो सकती। यह तो एक ढला-ढलाया कार्यक्रम मालूम होता है, जो शायद लड़ाईसे परिश्रान्त कांग्रेसजनोंके लिए तैयार किया गया है। यह कार्यक्रम यों बड़े मजेमें चलता हुआ मालूम देता है। 'हरिजन' में यह सब प्रकाशित होता रहता है कि इतने हरिजन लड़के उन स्कूलोंमें पढ़ रहे हैं जिनके द्वार उनके लिए अभी हालतक बन्द थे, इतने मन्दिरोंके द्वार उनके लिए खुल गये हैं, और इतने कुँओंके उपयोगकी सुविधा उन्हें मिल गई है। लेकिन मेरे मनमें तो यह बिलकुल सीधा सवाल उठता है: क्या हरिजन इस सबसे सन्तुष्ट होनेवाले हैं? क्या हम यह कह सकते हैं कि इस तरह उनका जल्दीसे-जल्दी उद्धार हो जायेगा? लोगोंसे अगर यह कहा जाये कि हरिजनोंसे काम तो कम घंटे कराया जाये और मजदूरी उन्हें अधिक दी जाये और इस तरह उन गरीबोंके प्रति वे अपना कर्त्तव्य पूरा करें, तो फिर देखें, इसका क्या जवाब मिलता है।

आपके साथ ईमानदारीसे पेश आऊँ तो मुझे मजबूरन यह कहना पड़ेगा कि हरिजनोंके जीवनके लिए जो अधिक आवश्यक प्रश्न हैं उनके मुकाबलेमें आपने अस्पृश्यताके इस छोटेसे प्रश्नपर जरूरतसे ज्यादा जोर दे रखा है। इससे हरिजन आत्म-प्रवंचनाके जालमें फँस रहे हैं, पूंजीपतियोंके शोषण-चक्रसे बँधते जा रहे हैं और उनकी उस आर्थिक स्वतन्त्रताका शुभ दिन अनिश्चित कालके लिए दूर होता जा रहा है, जिसे उनके दूसरे देशोंके भाई-बन्धु प्राप्त करनेके लिए जी-तोड़ प्रयत्न कर रहे हैं।

हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें जब मैं दक्षिण भारतका दौरा कर रहा था, तब ऐसी ही दलीलें मेरे सुननेमें आई थीं। यह अच्छा हुआ कि उन सब दलीलोंको एक पत्र में एकत्र करके रख दिया गया है। पत्र-लेखकने एक भूल की है। उनका यह खयाल है कि

अस्पृश्यता-निवारणकी यह लड़ाई छूतछात दूर हो जानेके साथ ही खत्म हो जायेगी। धर्मके अभेद्य प्रतिबन्धके निवारणसे इस प्रवृत्तिका आरम्भ किया जाना लाजिमी था। धार्मिक प्रतिबन्धके दायरेमे जो लोग आते है, उनका एक अलग वर्ग है। अस्पृश्यताका काला दाग तो जन्मके साथ ही उनके शरीरपर लगा आता है। यह कौन नही जानता कि उनकी आर्थिक अवस्था ठीक होते हुए भी उनके साथ सामाजिक कोढियोका-सा सलूक किया जाता है? त्रावणकोरके हजारो एजवा और बगालके नामशूद्र काफी सम्पन्न है, तो भी उनके लिए यह कितने दु खकी, और सवर्ण कहे जानेवाले हिन्दुओके लिए कितनी शर्मकी बात है कि उन हरिजनोकी सम्पन्नतासे उनके सामाजिक दर्जेमे कोई अन्तर नही आता।

यह बात तो मै बेहिचक स्वीकार करता हूँ कि इस अनिष्टकारी प्रतिबन्धके दूर होनेके बाद भी काफी काम करनेको रह जायेगा। सच तो यह है कि इस स्पष्ट सत्यको स्वीकार करके ही हरिजन-सेवक सघने हरिजनोके बीच शैक्षणिक और आर्थिक कार्य आरम्भ किया है, मगर मालूम होता है कि पत्र-लेखक सज्जन इसके महत्त्वको घटाकर आँक रहे है। इस कामसे हरिजनोकी असली सेवा हो रही है और सुधारकोकी सचाईकी परीक्षा भी इससे हो जाती है। और फिर इस कामके जरिये वे उन लोगोके निकट सम्पर्कमे आते है, जिनकी सेवा करनेका उन्होने संकल्प किया है।

अस्पृश्यता जब पूर्ण रूपसे दूर हो जायेगी; तब दूसरोके साथ-साथ हरिजन भी शान्त किन्तु निश्चित रूपसे हो रही आर्थिक उन्नतिसे लाभ उठायेगे। हिन्दुस्तानकी कुल जनसख्यामे लगभग १६ प्रतिशत हरिजन है। लेकिन जो लोग आर्थिक शोषणके शिकार हो रहे है, वे कमसे-कम ९० प्रतिशत है। इसीलिए मैंने 'हरिजन' मे लिखा है कि चरखा सघ, ग्रामोद्योग सघ और हरिजन सेवक संघ परस्पर एक-दूसरेसे जुडे हुए है और इसीसे 'हरिजन' की विषय-वस्तुका विस्तार किया गया है।

पत्र-लेखकका यह कहना सही नही कि मै वर्ग-सघर्षके अस्तित्वमे विश्वास नही करता। जिस चीजमे मै विश्वास नही करता, वह है वर्ग-सघर्षको उत्तेजन देकर उसे जारी रखना। दिन-दिन मेरा यह विश्वास बढ़ता ही जाता है कि इस सघर्षको मिटाना पूर्णतया सम्भव है। उसे उकसानेमे कोई तारीफ नही। तारीफ तो उसे रोकनेमे है। पूंजीपतियो और श्रमिकोके बीचका सघर्ष केवल ऊपरी है। श्रमिकोमे जब अपना सगठन कर लेने लायक समझदारी आ जायेगी और वे बिलकुल एकमत होकर काम करना सीख जायेगे तब उनके श्रमका महत्त्व भी पूंजीसे अधिक नही तो उसके बराबर तो अवश्य हो जायेगा। झगड़ा तो असलमे समझ और नासमझीके बीच है। ऐसे झगडेको जारी रखना निश्चय ही एक नादानीका काम होगा। नासमझी दूर की ही जानी चाहिए।

रुपयेका उतना ही उपयोग है जितना कि श्रमका। आखिरकार रुपया विनिमयका एक साधन ही तो है। किसीके पास २५ रुपये है और अगर प्रतिदिन आठ घंटेके कामकी मजदूरी ८ आने मानी जाये तो इसका मतलब यह हुआ कि उसके पास ५० मजदूर है। उधर एक श्रमजीवी है। उसके साथ उसके ४९ श्रमजीवी भाई

पूर्णत संगठित होकर काम करते है। अत. उस ४९ साथियोवाले श्रमजीवी और उस व्यक्तिमें जिसके पास २५ रुपये है, कुछ भी अन्तर नही है। दोमें से यदि किसीकी स्थिति कुछ सुविधाजनक है भी तो उसीकी है जिसके पास श्रमिकोका इजारा है। अगर दोनोकी स्थिति समान है, तो उनमे मेलजोल रहेगा ही। इसलिए प्रश्न एक वर्गको दूसरे वर्गके विरुद्ध उभारनेका नही, बल्कि श्रमजीवियोके अन्दर अपनी गरिमा की भावना भरनेका है। दुनियामे धनिकोकी सख्या है ही कितनी? श्रमिकोमें जब अपनी शक्तिका बोध जग जायेगा और इसके बावजूद वे प्रामाणिक व्यवहार करेगे तो जल्दी ही पूंजीपति लोग भी उनके साथ वैसा ही व्यवहार करने लग जायेंगे। धनिकोके खिलाफ मजदूरोको उभाडना वर्ग-द्वेष और तज्जनित तमाम कुपरिणामोको स्थायी रूप देना है। यह द्वन्द्व एक ऐसा दुश्चक्र है जिसे हर कीमतपर टालना ही चाहिए। यह तो कमजोरीको कबूल करने जैसा है, हीनताकी भावनाका एक चिह्न है। श्रमजीवियो द्वारा अपनी गरिमा पहचानते ही पूंजी अपने उचित स्थानपर आ जायेगी, यानी श्रमिकोके हितार्थ वह एक न्यासकी चीज हो जायेगी। कारण, पूंजीकी अपेक्षा श्रमका मूल्य अधिक है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१०-१९३५

५२. सुधारकोंका कर्त्तव्य

लाहौरके सनातन धर्म कालेजके प्रिन्सिपलका निम्नलिखित पत्र[1] मैं सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ:

इस बुराईके खिलाफ हमे अविराम लडाई लडनी चाहिए, इस विषयमे तो शका हो ही नही सकती। इस पत्रके साथ भेजी गई रिपोर्टें पढ़ गया हूँ। उन्हे पढकर मन घृणासे भर उठता है। प्रिन्सिपल साहबने मेरे जिन लेखोका[2] उल्लेख किया है, उनमें जिस प्रकारके मामलोकी मैने चर्चा की थी, ये मामले उससे अलग प्रकारके है। वे मामले केवल अध्यापकोकी अनीतिके थे, जिनमें उन्होने बालकोको फुसलाया था। अब जब रिपोर्टे भेजी गई है उनमें अधिकतर मामले ऐसे है जिनमें गुण्डोने कोमल वयके बालको पर अप्राकृतिक व्यभिचार करके उनकी हत्याकी है। अप्राकृतिक व्यभिचार और उसके बाद खून किये जानेके मामले हालाँकि और भी अधिक घृणा पैदा करनेवाले मालूम होते है, तो भी मेरा यह विश्वास है कि जिन मामलोमे बालक स्वेच्छासे अपने अध्यापकोकी विषय-वासनाके शिकार होते है, उनकी अपेक्षा इस प्रकारके मामलोका इलाज करना ज्यादा आसान है। दोनो तरहके मामलोमे सुधा-

१. यहाँ नहीं दिया गया है।
२. देखिए खण्ड ३१, पृष्ठ ३८७-८ और खण्ड ४१, पृष्ठ ८६-७।

रकोके सतत जाग्रत रहने और इस वीभत्स कार्यके विरुद्ध लोगोकी अन्तरात्माको जगानकी आवश्यकता है। चूंकि ऐसा लगता है कि पजाबमे इस प्रकारके अपराध सभी जगहोसे ज्यादा हो रहे है, इसलिए वहांके नेताओका यह कर्त्तव्य है कि वे जाति और धर्मका भेद एक ओर रख दे और आपसमे मिल-बैठकर ऐसे उपाय सोच निकाले जिनसे इस पचनद प्रदेशके किशोरोको फुसलाकर उनके साथ व्याभिचार करनेवाले और जबरदस्ती उठा ले जाकर उनके साथ व्यभिचार करने और फिर उनकी हत्या कर देनेवाले, दोनो तरहके अपराधियोसे उन्हे बचाया जा सके। प्रस्ताव पास करके अपराधियोकी निन्दा करनेसे कुछ भी होनेवाला नही है। सारे अपराध भिन्न-भिन्न प्रकारके रोग है और उन्हे ऐसे रोग समझकर ही सुधारकोको उनका इलाज करना चाहिए। इसका अर्थ यह नही कि पुलिस इन मामलोको सार्वजनिक अपराध मानना और इनके सम्बन्धमे उचित कार्रवाई करना बन्द रखेगी। किन्तु पुलिस जो कार्रवाई करती है उसका उद्देश्य इन सामाजिक अपराधोके मूल कारण ढूंढकर उन्हे दूर करनेका नही होता। यह तो सुधारकोके ही करनेका काम है। और अगर समाजकी सदाचार-सम्बन्धी भावनाको उभाड़ा नही गया, तो अखबारोमे कितने ही लेख लिखने पर भी ऐसे अपराध होते ही रहेगे—और किसी कारण नही तो इस कारण कि इन पथभ्रष्ट लोगोकी नैतिक भावना तो बिलकुल कुठित हो चुकी है और वे अखबारोको, खासकर उनके उन अशोको जिनमे ऐसे दुराचारोके विरुद्ध जोरदार सीखे दी जाती है, शायद ही कभी पढ़ते है। इसलिए मुझे तो एक यही प्रभावकारी उपाय सूझ रहा है कि सनातन धर्म कालेजके प्रिन्सिपल-जैसे कुछ उत्साही सुधारक, यदि वे उनमे से एक हो तो, दूसरे सुधारकोको एकत्रित करे और इस बुराईको दूर करनेके लिए सामूहिक रूपसे कोई कार्रवाई करे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १९-१०-१९३५

५३. एक भूल-सुधार

'हरिजन'के पिछले अकमे एक गम्भीर भूल हो गई है। अन्तिम पृष्ठपर आखिरी टिप्पणीमे[1] कहा गया है कि डॉ० आइकराइके अनुसार किसी वयस्क व्यक्तिके दैनिक आहारमें अन्य वस्तुओके अलावा १६ औस सोयाबीन होना चाहिए। पाठक इसे सुधारकर १६ औस रागी और २ औस सोयाबीन पढ़े।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १९-१०-१९३५

१. देखिए पृष्ठ २८।

५४. पत्र : एन० आर० मलकानीको

मगनवाड़ी, (वर्धा)
१९ अक्टूबर, १९३५

प्रिय मलकानी,

तुम्हारे या मेरे लिए कोई खुशखबरी नही है। इस वर्षके अन्तसे पहले मै वर्धासे कही बाहर जानेवाला नही हूँ। जनवरी गुजरातको देनी है और फरवरी शायद दिल्लीको देनी होगी।

संघकी[1] परिषदकी बैठक यहाँ नवम्बरमे होगी, ऐसी उम्मीद करता हूँ। लेकिन अगले साल मुझसे कलकत्ता या बंगलौर जानेकी आशा न रखो। पूरा साल यात्रामे ही नही बिताना चाहता हूँ। यहाँ करनेको बहुत काम पडा हुआ है। गुजरात जानेका भी वादा बड़ी अनिच्छाके साथ किया है। दिल्लीको महीना-भर देना ही पडेगा।

तुम भले बधाइयोकी आशा न रखो, लेकिन इतनी ठीक लागतपर उसे तैयार कर लेने पर तुम उसके पात्र तो होगे ही, और तुमने जो तफसीले भेजी है उनसे तो मुझे लगता है कि सब-कुछ अत्यन्त विचारपूर्वक तय किया गया। अगले सालसे पहले अमतुस्सलामका सहयोग तो नहीं मिलेगा और शायद वियोगी हरिका भी नही।

सप्रेम,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२३) से।

५५. पत्र : चन्दन पारेखको

१९ अक्टूबर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा ९ तारीखका पत्र मिला। यह मुझे बहुत अच्छा लगा। पत्र स्पष्ट है। किशोरलालभाईने जो-कुछ लिखा था वह बहुत ही निर्मल उद्देश्यसे लिखा था। शकरके प्रति जिस समय मेरे मनमे सन्देह घर कर गया था उस समय किशोरलाल उसका पक्ष लेते थे। . . [2]के मामलेमें उनका मन डाँवाँडोल हुआ, किन्तु तेरे लिखे पत्रसे उन्हे पुन. ऐसा लगा कि शकर जो मानता है वह शायद सत्य न हो। अत. सच बातका

१. हरिजन सेवक संघ।
२. नाम छोड दिया गया है।

पता लगानेके लिए, और इसकी तूने अनुमति भी दी थी, उन्होने तुझसे और अधिक प्रश्न पूछे। इसलिए उनसे बुरा माननेका कोई कारण नही है। किन्तु अब तो तूने पत्र मुझे लिखा है इसलिए यह प्रकरण तो समाप्त हो गया।

नानाभाई[1] से मै अभी मिल रहा हूँ। . . . लौटकर आयेंगे। तेरी मददकी तो मुझे जरूरत पड़ती ही रहेगी। तू आराम कर रही है इसलिए इस बीच मैं तुझे यहाँ आनेका कष्ट नही दूँगा। तू अपने भाई-भाभीके पास रहकर अपनी थकावट अवश्य दूर कर। जब तेरे वहाँ रहनेका समय पूरा हो जायेगा तो उस समय शायद तुझे यहाँ होते हुए वरतेज जानेका सुझाव देना पडेगा। मैं समझता हूँ कि ऐसा करना आवश्यक होगा। और यदि तू चाहेगी तो तुझे लानेके लिए किसी विश्वस्त व्यक्तिको भेज दूंगा। इस बीच यदि तुझे कुछ सूझे तो मुझे लिखना। क्या तुम दोनो बहनोके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसी बालिका है जो इस वर्तमान प्रकरणपर प्रकाश डाल सके? यदि हो, तो मुझे उसका नाम-धाम लिख भेजना। इसके अतिरिक्त यदि कोई अन्य व्यक्ति भी सहायता कर सके तो मुझे सूचित करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३६) से; सौजन्य: सतीश डी० कालेलकर

५६. सर्प-दंशके बारेमें

'हरिजन' के एक पाठक द्वारा पूछे गये प्रश्नोको मै अपनी भाषामें, संक्षेपमे, उत्तर सहित नीचे दे रहा हूँ:

प्रश्न. क्या दशके स्थानको आडा-सीधा काटनेमें कोई खतरा है? और यदि है, तो क्या एक खतरेको टालकर दूसरा खतरा मोल लेना उचित होगा?

उत्तर· दंशके स्थानको काटनेमे किसी तरहका खतरा नही है। यदि अनुवादक ने 'काटने' के बदले 'चीरा' शब्दका प्रयोग किया होता तो उसे समझनेमे ज्यादा आसानी होती। चीरा लगानेका मतलब सिर्फ खालमे से खून बाहर निकालना है। उस तरहका चीरा लगाने पर बहुत ही कम तकलीफ होती है; और जिसे साँपने काटा हो उसे तो तकलीफ होती ही नही, क्योकि उसके ज्ञानतन्तु बहुत ही निर्बल हो जाते है और शरीरपर की जानेवाली क्रियाका उसे कम ही भान होता है।

प्रश्न. हड्डीके ऊपरकी कोमल चमड़ीको क्षति न पहुँचे, इसे स्पष्ट रूपसे समझाएँ।

उत्तर· पहले वाक्यमे इसका स्पष्टीकरण आ जाता है। चीरा लगाते हुए उस्तरेकी धार हड्डीतक पहुँचती ही नही। यहाँ हमें चमडीके बदले परत समझना चाहिए। हमे यह कल्पना करनी चाहिए कि जिस चमड़ीको हम देख और छू सकते

१. नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट, लोकभारतीके संस्थापक।

है उसके नीचे परते है। जो नश्तर लगाना है, वह चमडीको खोलने-भरको लगाना है। तो फिर हड्डीके बिलकुल ऊपर चमड़ीकी जो परत है उसतक चाकूकी धार पहुँच ही नही सकती।

प्रश्न: "यदि हो सके तो सेफ्टी रेजरकी पत्तीको आगकी लौ मे से निकालकर काममे लाना चाहिए,"का क्या मतलब है?

उत्तर: दियासलाईकी सीकको जलाकर पत्तीको लौ के ऊपर तबतक इधर-उधर फिराना चाहिए जबतक कि सीक पूरी न जल जाये। यह क्रिया कुछ ही सेकेण्ड चलेगी।[1]

प्रश्न: क्या मुँहसे (विष) चूसनेवालेके लिए मृत्युका खतरा नही है?

उत्तर यदि चूसनेवालेके मुँहमे कही व्रण न हो तो मृत्यु या अन्य किसी प्रकार का भय नही है। और यदि व्रण हो तो विष चूसनेका प्रश्न ही नही उठता।

प्रश्न: आपने मिट्टीकी पट्टी आजमानेकी वात लिखी है, किन्तु आप कोई आश्वासन तो नही दे सकते न?

उत्तर: मै आश्वासन कदापि नही दे सकता। और आश्वासन देने लायक प्रयोग मुझे कौन करने देगा?

प्रश्न: और छठा प्रश्न यह है कि साँपकी विभिन्न जातियोको पहचाननेके वारेमे आपको उपलब्ध जानकारी देनी चाहिए थी।

उत्तर: जिस चीजको समझने और समझ लेनेके वाद पहचाननेमे मुझे स्वय कठिनाई होती है उसे पाठकोके सामने रखनेमें कोई लाभ नही। जो लोग इस विषयको मेरी अपेक्षा और अच्छी तरह समझना चाहे वे तो स्वय सम्बन्धित साहित्य प्राप्त करके देख सकते हैं, और ऐसा ही होना भी चाहिए; और यह साहित्य सामान्यत सभी पुस्तकालयोमे मिल सकता है।

और अन्तमे मै इतना कह देना चाहता हूँ कि मै सर्पदंशके वारेमे अब भी और अधिक ज्ञान प्राप्त करनेमे लगा हुआ हूँ और जितना मै प्राप्त कर चुका हूँ उसकी अपेक्षा यदि कुछ और अधिक मुझे मिला तो उसे मै पाठकोंके सामने अवश्य रखूँगा। मेरे एक पुराने मित्रने, जो अनुभवी डाक्टर है, लिखा है कि सूचित करने लायक कुछ और अधिक मिलनेकी सम्भावना नही है। ऐसा कहा जाता है कि जहरीले नागके दंशकी औषध रामनाम ही है। सौभाग्यसे ऐसे नागोकी संख्या कम है। अन्य साँपोंके काटेका इलाज यदि बताये ढगसे किया जाये तो मृत्यु होनेकी सम्भावना कम है।

[गुजरातीसे]
हरिजनवन्धु, २०-१०-१९३५

१. देखिए खण्ड ६१, पृ० ३६४-६५।

५७. दो प्रश्न

चरखा-सघकी जो नई नीति वन रही है उसके सम्बन्धमें अनेक प्रकारके प्रश्न उठते ही रहते हैं। उनमें से दो प्रश्न ये है

प्रश्न १ : नई नीतिको अमलमें लानेके लिए कार्यकर्त्ता किस तरह तैयार हो सकते हैं ?

एक सर्वोत्तम उपाय यह है कि जिनके मनमें नई नीति अच्छी तरह बैठ गई है वे गाँववालोमे से और अग्रेजी न जानने वालोमे से कार्यकर्त्ता तैयार करे। यदि स्वावलम्बन-पद्धति व्यापक बनानी है तो हमे असख्य कार्यकर्त्ताओकी जरूरत पडेगी। यदि हम उन्हे बडे-बडे वेतन देते है तो इस गरीब देशमे यह पुसा नही सकता। अग्रेजी पढे-लिखोमे से ही कार्यकर्त्ता तैयार करे तो उन्हे वेतन बहुत चाहिए। उनकी आवश्यकताएँ बढ गई है। उनका शरीर तकलीफ झेल सकने लायक या मेहनत करने लायक नही रहा है। और जहाँ अग्रेजी भाषाके ज्ञानकी आवश्यकता नही, वहाँ उनकी उपयोगिता विशेष नही होती; बल्कि अकसर कम ही होती है। उन्हे गाँवोमे रहना दूभर मालूम होता है, और वे अपने शहरके जीवनको गाँवोमें भी ले जानेकी कोशिश करते है। उनमें शरीरका कौशल कम हो गया है, और वे कुशल कारीगर शायद् ही हो सकते है। जब वे कारीगरी सीखते है, तब भी वें सामान्य कारीगरके साथ शायद ही मुकाबला कर सकते है। यहाँ तो मुझे इतनी ही सलाह देनी है कि हमे अग्रेजो जाननेवाले कार्यकर्त्ताओको प्राप्त करनेका मोह छोड देना चाहिए। इसका अर्थ यह नही कि हमें अग्रेजी जाननेवालोका त्याग कर देना है या उनके प्रति द्वेप करना है। उनमे से कोई अगर ऐसा मिल जाये तो हमे उसका सहर्ष स्वागत करना है। जहाँ वे अपने उपयुक्त स्थानमे होते है वहाँ वे उसकी शोभा ही बढाते है। यहाँ आशय केवल इतना ही है कि अग्रेजी जाननेवाला ही कार्यकर्त्ता चाहिए, ऐसा भ्रम हमें छोड देना चाहिए। यदि कोई गाँवका सेवक मिल जाये तो उसे जितना पैसा दिया जायेगा वह अपने कामके जरिये हमें उससे कुछ अधिकका ही लाभ पहुँचायेगा। ऐसे कार्यकर्त्ताके लिए १०) या १५)से अधिक वेतनकी जरूरत नही होनी चाहिए। और इतना तो हर महीने वह सहज ही कमाकर दे देगा। जहाँ-जहाँ खादी-केन्द्र है, वहाँ-वहाँ सचालक ऐसे कार्यकर्त्ता पैदा करें और कामका विस्तार उतनी ही मात्रामे बढाये। कार्यकर्त्ताको कपास बोनेसे लेकर खादी बनाने तककी तमाम क्रियाओकी जानकारी होनी ही चाहिए। और केन्द्रमे काम करनेवाला यदि खुद कार्य-कुशल हो तो वह आसानीसे तथा बगैर पैसा खर्च किये ऐसे कार्यकर्त्ता पैदा कर सकता है।

मेरी दृष्टिके सामने अभी कार्यकर्त्ता तैयार करनेके लिए कोई नई सस्था बनानेकी कल्पना नही है।

प्रश्न : २ नई पद्धतिको अमलमें लानेसे खानगी व्यापारी बढ़ेंगे या घटेंगे?

खानगी व्यापारी इसमे वढ़ तो सकते ही नही। मुख्य प्रवृत्ति स्वावलम्बनकी रहेगी। उसमे तो खानगी व्यापारीको कही स्थान ही नही है। यह सही है कि शहरोमे खादीकी विक्रीके लिए ऐसे व्यापारी रहेगे। पर उनकी सख्या वढनेकी सम्भावना वहुत कम है, क्योकि ज्यो-ज्यो कारीगरोकी अधिकाधिक कमाई करनेकी वृत्ति वढ़ती जायेगी, त्यो-त्यो खानगी व्यापारी घटते जायेगे। कारण, उन्हे मुनाफा करनेका लोभ होता है। वहाँ उनकी तृप्ति नही हो सकती। नई योजनामे वेचनेवालेकी कमाईकी एक हृद वँध जायेगी और जो मुनाफा होगा, वह कारीगरोकी ही जेवमे जायेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनवन्धु, २०-१०-१९३५

५८. एक पत्र[1]

मगनवाडी, वर्धा
२० अक्टूबर, १९३५

यह सही है कि उसे राहपर लानेके लिए अहिंसक प्रहार करनेकी शक्ति मुझमे है, किन्तु हर वार उसका प्रयोग करना स्वतन्त्र धर्म नही है।

जिनके बारेमे यह कहा जाता है कि उनकी हियकी आँखे खुली हुई है अथवा खुली हुई मानी जाती है, उनमे भी आपसमे मतभेद देखनेमे आया है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७७०) से।

५९. पत्र : नारणदास गांधीको

२० अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

मैथ्यू यहाँ पहुँच गया है और वेकार वैठा है। वह पूना जानेकी वात करता तो है। मै उसे तुम्हारे पास नही भेजूंगा। आजकल डिग्री प्राप्त करनेकी इच्छा तो सार्वभौमिक होती जा रही है। तो फिर इसमे शारदा[2] और विजया[3]का क्या दोष है? वे भले अपनी यह इच्छा पूरी करे। सिर्फ हमसे पैसोकी आशा न करे।

१. पत्रका केवल अन्तिम पृष्ठ ही उपलब्ध है।
२. शारदा चि० शाह।
३. विजया एन० पटेल।

नानुभाईका पत्र मिला है। उसका उत्तर देनेकी जरूरत तो नही है न? मुझे उसका चेहरा याद नही पडता।

जमनादासके सम्बन्धमे पढकर दु ख और आश्चर्य होता है। वह यहाँ तो मुझे आश्वस्त कर गया था।

सचमुच यदि देखा जाये तो चरखा-सप्ताह[1] के दौरान जो रकम इकट्ठी हुई है उसका उपयोग खादीकी प्रवृत्तियोको बढावा देनेमे होना चाहिए। किन्तु तुम्हे जैसा उचित जान पड़े वैसा करना।

अभी तो लीलावती[2] को भोजनालयका काम-काज सौपा है। मै उसे तुम्हारे पास जानेके लिए प्रोत्साहित तो कर ही रहा हूँ, किन्तु फिलहाल वह दिसम्बरसे पहले यहाँसे हिलनेकी बात नही सोचती। जब मै जनवरीमे यहाँसे निकलूँगा तब तो वह बेचैन हो ही जायेगी। अब जो हो सो ठीक है। मीराबहन तो कबकी अच्छी हो गई है। (वहाँ उसके लिए महल-जैसी झोपडी तैयार की गई है।) वह सिन्दी गाँवमे रहने गई है।

देवदास दिल्ली लौट आया है। वह अच्छा होता जा रहा है। किन्तु पूरी तरह ठीक होनेमे अभी कुछ समय लगेगा। घनश्यामदासने उसे अपने यहाँ रखा है। जेठालाल जोशीका पत्र मै इसके साथ भेज रहा हूँ। क्या तुमने प्राणजीवन जोशीको मुक्त कर दिया? और यदि मुक्त कर दिया तो किस कारण? जेठालाल जो-कुछ लिखता है वह सब क्या है? यह सेवा सघ क्या है? उसमे सुशीलाका कितना हिस्सा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७९ से, भी सौजन्य नारणदास गाधी

६०. भेंट : दलित वर्ग संघके प्रतिनिधियोंको[3]

२० अक्टूबर, १९३५

इस मुलाकातके दौरान महात्मा गांधीने कहा कि डॉ० अम्बेडकर यदि अपना धर्म बदलने जा रहे है तो इसके लिए धर्मको कोई दोष नहीं दिया जा सकता।[4] सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनोंका एक ही धर्म है। दोनों पक्षोंकी शत्रुता उनके अपने धर्मके विरुद्ध जानेका पर्याप्त कारण प्रस्तुत नहीं करती। डॉ० अम्बेडकर

१. विक्रम सवत्के अनुसार पड़नेवाले गांधीजी के जन्म-दिवस तथा २ अक्टूबर के बीच लगभग एक सप्ताहका समय; देखिए खण्ड ६१, पृ० ४७९-८०।

२. लीलावती आसर।

३. बरार महाराष्ट्र मन्दिर-प्रवेश सत्याग्रह आन्दोलनके प्रधान पतितपावनदास, मध्य प्रान्त तथा बरार मातग संघके अध्यक्ष डी० के० भगत, आखीके टी० ए० पुरोहित और नागपुरके डी० एस० शिन्दे ने रातके ९ बजे गांधीजी से भेंट की थी।

४. देखिए पृष्ठ ३८-९।

और हरिजन सवर्ण हिन्दुओंके खिलाफ खड़े हो जायें और अपनी समानताके अधिकारके लिए लड़ें तो यह ठीक होगा। यह सच है कि कविठामें सवर्ण हिन्दुओंने हरिजनोंको परेशान किया, मारा-पीटा। मगर परेशान किये जानेके ऐसे इक्के-दुक्के प्रसंगोंके कारण डॉ० अम्बेडकर-जैसा व्यक्ति अपने धर्मके विरुद्ध खड़ा हो जाये, यह बात जँचती नहीं। कविठाके हरिजन चाहें तो कविठा छोड़कर अन्य स्थानोंमें जा सकते हैं और वहाँ ठीक परिवेशमें रहकर जीवन बिता सकते हैं। यदि डॉ० अम्बेडकर अपना धर्म बदल लेंगे, तो भी दलित वर्गोंके ज्यादा लोग उनका अनुसरण नहीं करेंगे। खैर, इस्लामको अंगीकार करने लायक उपयुक्त धर्म समझा जाता है। मगर मुसलमान दलित वर्गोंके बहुत-से लोगोंको अपने धर्ममें शामिल नहीं कर पायेंगे, क्योंकि वे अपने समाजमें उन्हें सँभाल नहीं सकेंगे। इसके अतिरिक्त हरिजन सेवक संघ तथा अन्य संस्थाओंके प्रयत्नोंसे अस्पृश्यताकी जकड़ ढीली हो चुकी है। इन परिस्थितियोंमें अपना धर्म बदल लेनेकी डॉ० अम्बेडकरकी धमकीसे उनका अधैर्य ही प्रकट होता है और इस स्थितिमें कोई भी उनकी मदद नहीं कर सकता।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, ३-११-१९३५

६१. पत्र : अमृत कौरको

२१ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमृत,

शिमलामें तुम जितने ज्यादा दिन रह रही हो, मुझे उतनी ही ज्यादा खुशी हो रही है। अब तो धूम-धड़ाकेका मौसम बीत चुका है। इससे यह फर्क पड़ जाता है कि तुम्हें कुछ आराम मिल सकेगा। मैं समझता हूँ, शिमलामें रहनेका असली मौसम तो अभी आया है — शान्त और स्फूर्तिदायक। जलन्धर आनेकी कोई जल्दी नहीं करनी है। जरा देरसे भी वहाँ जाओगी तो वहाँका काम भाग नहीं जायेगा।

भारतमें महिलाओंकी स्थितिके सम्बन्धमें तुम्हारी लिखी पुस्तिकापर मैंने जो सम्मति[1] दी है उससे परेशान मत होना। सामग्री तो बिलकुल ठीक है, दोषपूर्ण उसका प्रस्तुतीकरण ही लगा। पुस्तिका इस बातकी चुगली खा रही है कि तुमने उसे थके होनेपर भी रातमें देर-देरतक जगकर लिखा है। उसके राजनीतिक अंशपर भी मेरा ध्यान गया। उसमें उसकी अपेक्षा तो नहीं थी। लेकिन इस सबकी चर्चा बादमें जब हम मिलेंगे तबके लिए छोड़ता हूँ — और किसी वजहसे न सही, इसी वजहसे कि इसके लिए तुम शायद जल्दी यहाँ आ जाओ।

तुम्हें इसकी चिन्ता करनेकी भी जरूरत नहीं है कि देवदास पूर्ण रूपसे स्वस्थ नहीं हो पाया है। डॉ० अन्सारीको तो पूरा सन्तोष है। दिल्लीमें मौसम अब बहुत

[1] देखिए पृ० ३६।

अच्छा है और देवदास एक अच्छे घरमें रह रहा है। प्यारेलाल अब चौबीसों घंटे उसके पास नहीं रहता। देवदासका कहना है कि उसको जितना सेवा-स्नेह तुम्हारे घर मिला, उतना और कहीं नहीं मिल सकता था। किसी बातकी चिन्ता मत करो।

तुम सबको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५६) से; सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३६५ से भी।

६२. पत्र : प्रभावतीको

२१ अक्टूबर, १९३५

चि० प्रभावती,

तेरे पत्र मिलते रहते हैं। नियमित रूपसे या लम्बे पत्रोंकी आशा मुझसे मत रखना। हालाँकि पत्र लिखनेकी मेरी बहुत इच्छा होती है किन्तु कांग्रेसकी [कार्य] समितिमें होनेके कारण मुझे जरा-भी समय नहीं मिलता। यह सन्तोषकी बात है कि तेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है। मैं नहीं जानता कि मुझे यहाँ कबतक रुकना पड़ेगा। लगता है कि मुझे दौरा करना पड़ेगा। किसी विशेष कारणसे वहाँ तुरन्त आना पड़े तो बात अलग है।

मैं अच्छा हूँ। दायें हाथसे जान-बूझकर नहीं लिखता। प्रतिदिन ढाई [पौंड] दूध पीनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – १० : श्री प्रभावतीबहेनने, पृष्ठ ७३-४

६३. भाषण : ग्राम-सेवकोंके समक्ष[1]

२२ अक्टूबर, १९३५

आजके भोजनमें शामिल की गई चीजोंका चुनाव काफी सोच-विचार करके मैंने ही किया था और खासकर ग्राम-सेवकोंकी जरूरतोंको ध्यानमें रखकर। इसलिए इसके सम्बन्धमें मुझे किंचित् विस्तारके साथ आपसे कहना होगा। इसके पीछे यह विचार काम कर रहा था कि आपको पौष्टिक भोजन भी दिया जाये और साथ ही वह ऐसा भी हो कि किसी औसत ग्रामवासीको भी सुलभ हो सके, अर्थात् आठ घंटेके लिए जो न्यूनतम मजदूरी तय की गई है, उतनेमें, यानी तीन आनेमें वह प्राप्त हो सके।

१. भाषणका यह सार-संक्षेप महादेव देसाईने तैयार किया था। ग्राम-सेवकोंका कोर्स ८ से २२ अक्टूबर तक चला था।

खानेवाले हम कुल ९८ लोग थे और हमारे भोजनपर खर्चा आया ९ रुपये १४ आने ३ पाईका। इसका मतलब यह हुआ कि प्रत्येक व्यक्तिपर ६ पैसेसे कुछ ज्यादा खर्च बैठा। तफसीलवार विवरण इस प्रकार है

	रु०	आ०	पा०
३६ पौंड गेहूँका आटा	१	८	०
१२ पौंड टमाटर	०	११	३
४ पौंड गुड़	०	६	३
२४ पौंड कुम्हड़ा	०	७	६
६ पौंड अलसीका तेल	१	२	०
५० पौंड दूध	३	१३	०
४ पौंड सोयाबीन	०	६	०
४ नारियल	०	४	०
१६ कोथ फल	०	२	०
इमली और नमक	०	२	३
ईंधन	१	०	०
कुल	९—१४—३		

विनोबाने तो मुझे यह सलाह दी थी कि आप सबको रोटी देनेकी फिक्र करनेके बजाय गेहूँका दलिया (जो हम लोग यहाँ सुबह खाया करते हैं) ही परोस दिया जाये जिससे रोटी बनवानेकी झंझटसे बचा जा सके। लेकिन मैंने कहा, नहीं, आप नौजवानोंको तो, जिन्हें ईश्वरने अच्छे मजबूत दाँत दिये हैं, अच्छी करारी और ठीकसे सिंकी हुई भाखरी ही मिलनी चाहिए। इसे तो कोई भी बना सकता है और फिर इसे साथमें लेकर यहाँ-वहाँ जानेमें भी सुविधा रहती है और यह दो दिनोंतक तो खराब नहीं होती। आटा गूँधनेके पहले उसमें अलसीका तेल मिला दिया गया था, जिससे भाखरी मुलायम और खस्ता भी हो गई। फिर, कुछ हरी और कच्ची सब्जी होना भी जरूरी था, सो हमने टमाटर और दो तरहकी चटनी शामिल की — एक कोथ फलकी, जो इस इलाकेमें खूब मिलता है और दूसरी हमारे बगीचेमें उगी पत्तियोंकी थी। कोथ फलके बारेमें ऐसा माना जाता है कि वह रेचक भी होता है और कोष्ठको बाँधनेवाला भी। इसके साथ गुडका अच्छा मेल बैठता है और गुड मिलाकर इसकी बड़ी स्वादिष्ट चटनी बन जाती है। दूसरी चटनीकी पत्तियोंको जायकेदार बनानेके लिए उसमें थोड़ा नारियल, इमली और नमक मिला दिया गया था। हमें किसी-न-किसी रूपमें यही हरी पत्तियाँ खानी ही चाहिए, जिससे हमें अपने आहारमें ठीक पोषक तत्त्व मिल सके। हमने जो तरकारियाँ चुनी थीं वे सहज सुलभ तरकारियोंमें सबसे सस्ती थीं और उन्हें गाँवोंमें सर्वत्र उगाया जाता है। आपने लक्ष्य किया होगा कि मैंने चटनीमें इमली भी मिलवाई थी। इमलीको लोग हानिकर चीज मानते

है, इसके वावजूद ऐसा देखा गया है कि यह एक अच्छा रेचक है और रक्तको साफ करता है। एक मलेरियाग्रस्त आश्रमवासीको मैं काफी मात्रामें इमलीका पानी पिलाता हूँ और इसका नतीजा भी अच्छा निकला है। कब्जकी शिकायतवाले तो कई लोगो पर मैंने इसका प्रयोग किया है।

दूध आहारका एक आवश्यक अग है। आपके भोजनमें प्रतिव्यक्ति आधा पौड दूध शामिल किया गया था, लेकिन आपने देखा होगा कि मैंने आपको घी नही दिया। मगर आशा करता हूँ कि आपको उसकी कमी खटकी नही होगी। क्योकि वदलेमे आपको सोयाबीन और तेल तो दिया ही गया था। सोयाबीनमे तेल तत्त्व खूब (२० प्रतिशत) होता है और प्रोटीन भी (४० प्रतिशत)। तेल तत्त्व तो मूँग-फलियोमे भी खूब होता है, लेकिन खरावी यह है कि उनमे स्टार्च बहुत होता है, जबकि सोयावीनमे अपेक्षाकृत कम होता है। दूध और सोयाबीनसे हमे जितना चाहिए उतना पूरा स्निग्ध तत्त्व मिल जाता है और घी की कोई जरूरत नही रह जाती। फिर यह घी बनानेकी बेकारकी झझटमे क्यो पडे? और जब शुद्ध घी मिलना सन्दिग्ध हो तब मिलावटी घी क्यो खाये? लेकिन दूध या छाछ, चाहे जितनी कम मात्रामे हो, मिलना आवश्यक है। चिकित्सा-शास्त्रियोका कहना है कि इससे सब्जीसे मिलनेवाले स्निग्ध तत्त्व और प्रोटीनको पचानेमें सहायता मिलती है। इसलिए घी को तो आप अपने आहारसे बेखटके निकाल सकते हैं। अभी हालमे दो छोटे-छोटे वच्चे मेरी निगरानीमे थे। उनके आहारके बारेमे मै बडी सावधानी बरतता था। उसमेसे घी निकाल देनेपर भी मैंने देखा कि उससे उनका कोई नुकसान नही हुआ। अलबत्ता दूध वे जितना चाहते थे उतना देता था।

हमारे भोजनपर प्रतिव्यक्ति ६ पैसेसे कुछ ज्यादा खर्च बैठा है। यह एक वक्तका अच्छा-खासा भोजन था और कोई जरूरी नही कि दूसरे वक्तोंके भोजनमे भी इतनी ज्यादा चीजे शामिल रहे। इसलिए उसपर एक आनेसे ज्यादा खर्च नही बैठना चाहिए। दूसरे वक्तोके भोजनमे से दूधको निकाल दिया जा सकता है। गेहूँकी भाखरी, सोयावीन और चटनी काफी होनी चाहिए।

तो आपको जो दो मुख्य बाते करनी है उनमे से एक तो यह है — अर्थात् ग्रामवासियोको सन्तुलित आहार सुलभ करानेकी निश्चित व्यवस्था करना और स्वयं भी उसी आहारसे सन्तुष्ट रहना। हो सकता है कि कुछ लोग अपने आहारमे तरह-तरहकी बेकारकी चीजे शामिल करके उसे वहुत भारी बना देते हो और कुछ लोगोको पोषक तत्त्वोसे रहित आहार मिलता हो। उनमे आपको ठीक ढगसे सन्तुलित आहारकी आदत डालनी है। आप खुद भी गो-पालन सीखे और ग्रामवासियोके बीच भी उसे प्रोत्साहन दे। हमारे अनेक गाँवोमे दूध नही मिलता, यह हमारे लिए लज्जाका विषय होना चाहिए। दूसरा मुख्य कर्त्तव्य सफाईसे सम्बन्धित है। यह सचमुच वहुत कठिन काम है। लेकिन यदि आप ठीक ढगका आहार शुरू कर देंगे और अपनी निग-रानीवाले गाँवमे सफाईकी स्थिति कमसे-कम ऐसी बना देंगे कि वह किसी तरह रहने लायक हो जाये तो समझ लीजिए कि आपने मानव शरीरको ईश्वरका निवास-स्थल

होने योग्य और अपना दिन-भरका काम ठीक तरहसे कर सकने लायक अच्छा साधन बना दिया है।

खादी तो, निस्सन्देह, ग्रामोद्योगोका केन्द्र होगा ही। लेकिन, याद रखिए कि हमें गाँवोको खादीके मामलेमें आत्म-निर्भर बनानेपर अपना ध्यान केन्द्रित करना है। आत्म-निर्भरता आ जानेपर तो व्यापारिक उद्देश्योसे उसका उत्पादन स्वभावत होने ही लगेगा। इस विषयमे विस्तृत दलील आपको 'हरिजन' के स्तम्भोमे देखनेको मिल जायेगी। लेकिन खादीकी सफलता-विफलता आपपर ही निर्भर होगी। लोग कुछ निराधार बातोसे नाहक ही डर गये है। आपको खादीमें उनकी श्रद्धा पुन जगानी है और उन्हे हमारी नई नीति[1] समझानी है।

कहनेकी जरूरत नही कि गाँवोमे और भी जो उद्योग सुलभ हो और जिनसे उत्पादित वस्तुओकी खपत की गुजाइश हो, उनके विकासपर भी आप ध्यान देंगे, लेकिन इसमें इस बातका खयाल रखना होगा कि कोई भी भण्डार घाटेपर नही चलाना है और जिसकी खपतकी गुजाइश न हो, ऐसी किसी चीजका उत्पादन नही करना है। आप अपनी पसन्दके किसी भी घरेलू उद्योगमें प्रति-दिन आठ घटे लगाकर ग्रामवासियोको यह दिखाइए कि आपको जो-कुछ मिलता है, उसे आप अपनी मेहनतकी बदौलत पाते है और इसी तरह वे भी आठ घटे काम करके अपनी आजीविका उपार्जित कर सकते है। आप विनोबाको अपना आदर्श बनाइए। उनकी तरह विद्वान् बन पाना या वैसी अद्भुत स्मरण-शक्ति प्राप्त करना तो आपके लिए असम्भव है, लेकिन उनमे परिश्रम करनेकी जो क्षमता है और कामके प्रति जो लगन है, उसका अनुकरण तो आप कर ही सकते है। आप गाँव जा रहे है तो वहाँ उपनिषदोका भाष्य लिखनेकी साध लेकर न जाइए, वे तो आप शहरो और नगरोमे रहकर भी कर सकते है। जिस प्रकार एकाग्रचित्त होकर किये गये विनोबाके कार्य उपनिषदोके सबसे अच्छे भाष्य है उसी प्रकार आपका भी काम ही उनकी अच्छी टीका होगा। अपने कार्यके प्रति हममें जो लगन है, वही लगन गाँववालोमें भी भरनी है। हम कहते है, वे तो बस लकडहारे और पनहारे बनकर रह गये है। वे अपना सिर ऊँचा करके खडे हो सके और कह सके कि अब वे हमारे लिए खटनेवाले लकडहारे और पनहारे ही नही बने रहेगे, इसके लिए यह जरूरी है कि आप उन्हे उनके प्रत्येक कार्यका कारण ठीक-ठीक समझाये और उनमे अपने गुजारेके लायक कमाई कर सकनेके लिए राजी-खुशी काम करनेकी वृत्ति जगायें। जो-कुछ विनोबाने किया है वह सब करना इन भोले-भाले ग्रामवासियोके लिए तो और भी आसान होना चाहिए। मुझे बताया गया है कि कताईमे तो गुलाब नामक एक ग्रामीण युवक विनोबासे भी बाजी मार ले गया है।

आपको काम करनेके लिए अपने साथ कोई साथी भी नही ले जाना है। हमारी नीति यह है कि एक गाँव या कई गाँवोके समूहके लिए केवल एक ही कार्यकर्ता

१. देखिए पृ० ३२-३।

भेजा जाये। इस तरह उसे अपनी शक्ति-सामर्थ्य, सूझबूझका पूरा प्रयोग करनेका मौका मिलेगा। वह खुद उस गाँवसे चाहे जितने साथी चुन ले। वे उसके मार्ग-दर्शनमे काम करेंगे, लेकिन जो गाँव उसके जिम्मे लगाया जायेगा उसके लिए मुख्य रूपसे उत्तरदायी वही होगा।

हमे इस यन्त्र-युगके लोभ-पाशमे नहीं फँसना चाहिए। इसके वजाय हमे इस शरीर-रूपी यन्त्रको ही काम करनेका निर्दोष और चुस्त साधन बनानेपर ध्यान देना चाहिए और इसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना चाहिए। यही आपका कर्त्तव्य है। इसीको लेकर आप आगे वढ़े, अपने पैर कभी डिगने न दे। जिस क्षेत्रको विनोबाने अपना वना लिया है और जिसे सँवारनेमे अपने जीवनके १५ वर्षोंका सर्वोत्तम भाग लगा दिया है, उसमे निराशाका तो कोई कारण ही नही हो सकता। कमसे-कम मुझे तो इसका कोई कारण दिखाई नही पडता और इसीलिए आप लोग मुझे यहाँ वैठे देख रहे है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-११-१९३५

६४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

मगनवाडी, वर्धा
२३ अक्टूबर, १९३५

चि० अम्वुजम,

तुम्हारा खत मिला। अव तो ज्वर सर्वथा दूर होना चाहिये। ओम[1] वहां रह गई है, उसे मिलते रहना। माता-पिताकी समति मिलने पर ही आना। रस बनानेका विधि पढ गया। भारतनके कहने पर कि रसम ज्वरादि व्याधिवालोको दिया जाता है, मैने पूछा था। वहाके वैध डॉ० का अभिप्राय रसमके बारेमे क्या है, सो लिखो।

मद्रासमे सोयावीन मिलते है? यदि मिलते है तो उसका दाम क्या है? हिंदुस्तानके है कि विदेशी? उसका नमुना भेजो।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे : अम्वुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. उमादेवी, जमनालाल वजाजकी पुत्री।

६५. प्रस्तावना : 'श्रीमद्‌राजचन्द्र' की

वर्धा
२४ अक्टूबर, १९३५

इसमें कोई सन्देह नहीं कि स्व० रायचन्द भाईकी रचनाओंमें से तैयार की गई यह चयनिका मूल ग्रन्थकी प्रवेशिकाके रूपमें समुपयुक्त सिद्ध होगी। सामग्रीके विषयानुसार वर्गीकरणके कारण यह जिज्ञासुओंके लिए अत्यन्त सहायक सिद्ध होगी।

[गुजरातीसे]
श्रीमद्‌राजचन्द्र

६६. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

वर्धा
२५ अक्टूबर, १९३५

भाई नानाभाई[1],

तुम्हारे कुटुम्बके साथ अपने-आप ही सम्बन्ध बढ़ता जा रहा है। इसमें नियतिका कोई शुभ हेतु ही होगा। अब तुमने एक लड़कीको अपने परिवारमें ले लिया। जिस प्रकार मणिलाल सुशीलाको और सुशीला मणिलालको सुख पहुँचाती है, उसी प्रकार सुरेन्द्र और मनु एक-दूसरेको सुख पहुँचायें। मनु निरीह, भोली और कोमल प्रकृतिकी है अतः मैं यह मानता हूँ कि वह तुम्हारे यहाँ और सुरेन्द्रके पास जितनी सुरक्षित रहेगी, उतनी दूसरी किसी जगह नहीं रह सकती। हम लोग यह कामना करें कि दोनों दीर्घायु हों और निःस्वार्थ भावसे सेवा करना सीखें। अभी-अभी साढ़े नौ बजे जमनालालजी आये और उन्होंने मनुकी माँ की पूर्ण सहमतिसे सगाईकी रस्म पूरी की है। नारियल तोड़ा और टीका किया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२४) से। सी० डब्ल्यू० ५००० से भी; सौजन्य : कनुभाई एन० मशरूवाला

१. सुशीला गांधी के पिता।

६७. पत्र : जाईजी पेटिटको

२५ अक्टूबर, १९३५

प्रिय बहन,

तुम्हारी ओरसे तो पत्रकी आशा रखी ही कैसे जा सकती है? फिर भी तुम्हारे बारेमे प्राय: सोचता ही रहता हूँ। और फिर चार्लीभाई[1] का पत्र मिला जिसमें उन्होने तुम्हारे स्वास्थ्यका वास्तविक चित्र खीचा है। उक्त पत्रसे मै यह कल्पना कर सकता हूँ कि तुम किस यन्त्रणामे से गुजर रही हो और कितनी हिम्मतसे सब-कुछ सहन कर रही हो। तुमने इतना अधिक मानसिक कष्ट झेला है कि उसकी तुलनामे इस शारीरिक कष्टको तुम्हे नगण्य ही मानना चाहिए। मै तुमसे यह आशा रखता हूँ कि बढ़ते हुए कष्टोके साथ-साथ ईश्वरकी उपस्थितिका तुम्हारा बोध भी बढता जायेगा। यह सोचकर कि हिल्डा तुम्हारे पास है, मै राहत महसूस करता हूँ। उससे कभी मुझे पत्र लिखनेको कहना।

चार्लीभाईके पत्रमे पढा कि तुम प्राय: यह कहती हो कि यदि मै पचगनीमें होती तो कितना अच्छा होता। कई बार मुझे ऐसा लगा है कि तुम भारतमे ही होती तो अच्छा होता। यदि आज तुम यहाँ होती और चगी होती तो मैं तुमसे ग्रामोद्योगका काफी काम ले सका होता। किन्तु ईश्वरकी जैसी इच्छा। अब तुम जल्दी अच्छी हो जाओ। मै यह आशा लगाये हुए हूँ कि तुम किसी दिन लौट आओगी और अपनी बहनोकी सेवा करोगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१५७) से।

१. सी० एफ० एन्ड्रयूज।

६८. पत्र : द्रौपदी शर्माको

२५ अक्टूबर, १९३५

चि० द्रौपदी,

यह कैसी बात है? तुमारे तरफसे कोई खत नही? तुमको शर्माका लम्बा खत भेजा है, वह वापिस मगवाया है।[1] न वह मिला है, न तुमारा खत मिला है। अमतुल सलाम कुछ बीमार-सी रहती है। वह भी तुमारे खतकी इन्तजार (में) है। वहा सब कुशल होगा। खत लिखनेमे आलस्य न किया जाय। शर्माका एक और खत तुमको रामदासने भेजा होगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृष्ठ १९१

६९. पत्र : हीरालाल शर्माको

मगनवाडी, वर्धा

चि० शर्मा,

जबतक स्टीमरमें थे तबतक तो लवे सुदर खत आते ही रहते थे। अमेरिका पहुच गये तो खत ही बद हो गये। बोस्टन पहोचनेके पहले लिखा हुआ खत मिला। उसके बाद एक भी नही। यह बडी आश्चर्यकी बात है। स्टीमरोके बदर पर मै नही पहुच सका। अब मै करीब हर सप्ताह लिखनेकी कोशीश करता हू। तो तुम्हारे ही खत बद हो गये है। प्रति सप्ताह राह देखता हू और प्रति सप्ताह निष्फल होता हू। दिल तो यही कहता है कि तुमने तो खत लिखे हैं लेकिन न्युयोर्कसे यहा खत पहोचनेमें ही वख्त चला गया है। डाक कल आनेवाली है, उसमे तुम्हारा खत आना चाहिये। बोस्टनसे लिखनेके बाद अब तीन हफ्ते हुए। तुमने इगलन्डके लिये खत मागा था, वह तो भेज दिया है, मिल गया होगा।

१. देखिए खण्ड ६१, पृ० ३८२।

द्रौपदीके खत नही आते है। मै लिखता हूँ। अन्तमे शायद नियमबध्ध खत लिखेगी।

तुम्हारा ठीक चलता होगा।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृष्ठ २०६ के सामने प्रकाशित अनुकृतिसे।

७०. अन्तिम साँसे गिन रही है

डॉ० अम्बेडकरने धमकी दी थी कि हिन्दू धर्मंमे [अस्पृश्य] रहकर मरनेके बजाय वह कोई और धर्म स्वीकार कर लेगे। इसके उत्तरमे मैंने कहा था कि कविठाकी घटनाके बावजूद सचाई यह है कि अस्पृश्यता अपनी अन्तिम साँसे गिन रही है। कुछ आलोचकोने मेरे इस दावेको अनर्गल तक कहनेमे सकोच नही किया। किन्तु सच तो यह है कि स्वय कविठाकी घटनासे मेरे दावेकी पुष्टि होती है। कविठा गाँव जबसे बसा, वह बडे चैनसे अपने दिन बिता रहा था। तभी एक अत्युत्साही कार्यकर्त्ता सामने आया। उसे अपनी मर्यादाओका ज्ञान नही था, सो उसने कविठाके हरिजनोको अपने बच्चोको स्थानीय पाठशालामे भेजनेकी हिम्मत दिलाई, हालाँकि उसे मालूम था कि कविठाके कुछ सवर्ण इसके विरुद्ध है। उसने तो यह सोचा था — जैसा अन्य स्थानोमे हुआ था — कि हरिजनोने अपने बच्चोको सार्वजनिक पाठशालाओमे भेजनेके अपने अधिकारपर सफलतापूर्वक आग्रह किया है। लेकिन कविठाके सवर्णोंने यह दिखा दिया कि उन्होने समयकी गतिको अभी नही पहचाना है।

अगर ऐसी ही घटना कुछ वर्ष पहले घटी होती तो उस ओर किसीका ध्यान नही जाता। तब सुधारकोकी सख्या बहुत कम थी। जो थोड़े-से सुधारक थे, वे भी मुख्यतः कस्बो और नगरो तक ही सीमित थे। ईश्वरकी कृपासे उनकी सख्या बढती जा रही है और वह दिन दूर नही जब प्रत्येक गाँवमे एक अपेक्षित सख्यामे ऐसे सुधारक होगे। लेकिन अभी कुछ साल पहले तक हरिजनोको किसी भी तरहसे अस्पृश्यताके विरुद्ध खड़े होनेको प्रेरित नही किया जा सकता था। तब वह जिस प्रकार सवर्णोके लिए धर्मका अग थी उसी प्रकार हरिजन भी उसे अपने धर्मका हिस्सा मानते थे। अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनकी साप्ताहिक प्रगतिका पर्याप्त प्रमाण इन स्तम्भोंमे मिल सकता है। यद्यपि इस क्षेत्रमे बड़ी जबरदस्त प्रगति हुई है, फिर भी कविठाकी-जैसी घटनाओसे प्रकट होता है कि कई स्थानोमे यह आन्दोलन सवर्णोके बहुमतको प्रभावित नही कर पाया है। यह तथ्य सुधारको और हरिजनोके लिए एक चेतावनी है कि सवर्णोके कठोर हृदयोको पिघलानेके लिए अभी बहुत-कुछ करना शेष है।

और फिर यह भी ध्यान देनेकी बात है कि कविठाकी दुःखद घटनाको इतना विज्ञापित करने और उसे अखिल भारतीय महत्त्व प्रदान करनेका काम भी सवर्ण

सुधारकोने ही किया। इस घटनासे हरिजन जितने क्षुब्ध हुए है, उससे कही अधिक सवर्णोकी अन्तरात्मा जागृत हुई है। मुझे बडे दु.ख और लज्जाके साथ यह लिखना पड रहा है कि अब कविठाके हरिजन भी अपने अधिकारोके लिए हलचल मचानेको तैयार नही है। सवर्णोकी उद्धतताके सामने उन्होने दीन बनकर सिर झुका दिये है। उनको हर तरहकी मदद देनेकी तत्परता बताई गई, फिर भी वे कविठा छोडनेको तैयार नही हुए। वहाँ जो थोड़े-से हरिजन है, उनके लिए कही और जाकर इज्जतकी रोजी कमाना बहुत आसान है। सुधारकोने उन्हे अपने सरक्षणमे कविठा छोडनेपर राजी करनेकी पूरी कोशिश की, लेकिन वे असफल रहे।

यदि उनका धर्म-परिवर्तन — जिसका कारण उनके वर्तमान धर्मका कोई अपना दोष नही, बल्कि उसके बहुत-से अनुयायियोका विवेकशून्य पूर्वग्रह है — उचित भी हो तो भी उसका परिणाम केवल उस प्रयोजनको ही निष्फल करना होगा जिसके लिए धर्म-परिवर्तन किया जायेगा। डॉ० अम्बेडकर-जैसे दृढ और प्रभावशाली व्यक्तियोके हिन्दूधर्मसे अलग हो जानेका कोई नतीजा होगा तो यही कि हरिजनोका सुरक्षा-दुर्ग कमजोर पड जायेगा। हम यह तो जानते ही है कि गैर-हिन्दू हरिजन चाहे जितने प्रभावशाली हो, वे हिन्दू हरिजनोकी कोई सहायता नही कर पाते। सच तो यह है कि उन्होने जिस धर्मको अपना लिया है, उसके अनुयायियोके समाजमें भी आजतक उनका एक अलग ही वर्ग बना हुआ है। भारतमे जिस ढगकी अस्पृश्यता प्रचलित है, उसकी जकड ही इतनी मजबूत है।

मगर डॉ० अम्बेडकरके इस उचित क्रोधसे सुधारक लोग हिम्मत न हारे, बल्कि वे इस बात से और भी जुटकर प्रयत्न करनेकी प्रेरणा लें। कारण, यह तो सच है कि अस्पृश्यताके विरुद्ध काम करनेवाले कार्यकर्त्ताओकी सख्यामे बहुत वृद्धि हुई है, किन्तु इसमें भी कोई सन्देह नही कि इस युगो पुराने पूर्वग्रहको मिटानेकी दृष्टिसे उनकी सख्या अभी बहुत कम है। फिर भी अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनने जब इतना व्यापक और प्रभावपूर्ण रूप धारण कर लिया है कि छोटी-सी अशोभन घटना होते ही उसकी ओर सारी दुनियाका ध्यान खिच जाता है तो इसमे निर्विवादरूप से यही निष्कर्ष निकलता है कि अस्पृश्यता अपनी अन्तिम साँसें गिन रही है। मानवता उसे अब और ज्यादा बर्दाश्त नही करेगी।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २६-१०-१९३५

७१. "देव कपास"

'हरिजन' के कुछ पाठकोको शायद याद होगा कि किसी वक्त समय-समयपर खादी-सम्बन्धी सूचना-पत्रक प्रकाशित हुआ करते थे, जिनमे खादी-सेवकोके लिए तरह-तरह की उपयोगी जानकारी दी जाती थी। चरखा-शास्त्रके निर्माता स्व० मगनलाल गाधीने कई क्षेत्रोंमे सबसे आगे बढकर काम करके लोगोको रास्ता दिखाया था। खादी-सूचना-पत्रकोका प्रकाशन भी उनका एक इसी तरहका काम था। सिकन्दराबाद-निवासी श्री टी० श्रीनिवासने मुझे इन सूचना-पत्रकोमें से एककी प्रति भेजी है। इसका नाम है "देव कॉटन" ('देव कपास') और यह १९२३ मे प्रकाशित हुआ था। यह तो किसी भविष्यदर्शीकी कृति-जैसा जान पडता है, या यो कहिए कि इससे प्रकट होता है कि यह प्रवृत्ति जब अपनी प्रारम्भिक अवस्थामे थी तभी किस प्रकार वस्त्र-स्वावलम्बनकी योजना तैयार करनेकी कोशिश की जा रही थी। अब चूँकि अखिल भारतीय चरखा संघकी प्रवृत्तियोमे वस्त्र-स्वावलम्बनको सबसे पहला स्थान दिया जानेवाला है, इसलिए यहाँ इस सूचना-पत्रक का उद्धृत किया जाना[1] पाठक अवश्य ही पसन्द करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २६-१०-१९३५

७२. खादीकी नई योजना

चरखा-सघने कत्तिनोकी मजदूरी तथा साधारण खादी-नीतिके विषयमे जो प्रस्ताव[2] पास किया है साधारणतः उसका प्रत्येक खादी-सेवकको ध्यानपूर्वक अध्ययन करना चाहिए। यदि इस नई खादी-नीतिका ठीक-ठीक अमल हो, तो उससे बड़े-बडे परिवर्तन हो सकते है। इस नीतिको ठीक तरहसे अमलमें लानेके लिए चरखा-सघकी ओरसे समय-समयपर निकलनेवाली हिदायतोका पूरी सावधानीके साथ पालन करना आवश्यक है।

खादीकी समस्त सस्थाओमें वस्त्र-स्वावलम्बनको प्रथम स्थान मिलना चाहिए। एक तरहसे वस्त्र-स्वावलम्बन और विक्रीके लिए उत्पादन, दोनो साथ-साथ चलेंगे। वस्त्र-स्वावलम्बनके साथ विक्रयार्थ खादी भी सहज ही बनती रहेगी और उसमे सफलता मिलेगी तो वस्त्र-स्वावलम्बनकी ही बदौलत मिलेगी। खादी-उत्पादनके साथ अब

१. यहाँ नही दिया गया है।

२. देखिए परिशिष्ट १।

शर्त यह है कि खादी बनानेवाले कारीगरोंको खादीधारी होना ही चाहिए, इसलिए उन्हे अपने लिए खादी या तो बनानी होगी या खरीदनी होगी। यह तो वे आसानीसे कर सकते है, क्योकि उनकी मजदूरीमे (उनकी दृष्टिसे) जो इतनी अधिक बढोतरी होगी जिसकी न उन्होने आशा की थी और न जो माँगी ही थी, उसमे से वे इतना पैसा खर्च कर सकते है। मगर मजदूरी पाना तो, अपने घरेलू उपयोगके अतिरिक्त वे जो खादी तैयार करेगे उसपर निर्भर होगा और वह खादी कामकी तभी होगी जब वह बाजारमे तुरन्त बिक जायेगी। इस तरह वस्त्र-स्वावलम्बनका तरीका वहाँ आसान होगा जहाँ खादीके उत्पादन-केन्द्र है। कारण, जिन लोगोके सम्पर्कमे खादी-सेवक कभी आये ही नही, उनकी अपेक्षा कत्तिनो और खादीके दूसरे कारीगरोके गले यह बात अधिक सुगमतासे उतारी जा सकेगी।

किन्तु लोग यह पूछते है कि खादीकी कीमत बढा देनेसे उसे खरीदेगा कौन? मै मानता हूँ कि यह प्रश्न अज्ञान, अविश्वास और परिस्थितिसे निबटनेकी सूझ-बूझका अभाव ही प्रगट करता है।

अबतक हमने सिर्फ शहरोमे ही खादीकी माँग बढानेकी तरफ ध्यान दिया है, हम शहरोको ध्यानमे रखकर ही सब-कुछ सोचते-करते रहे हैं। खादी जिन केन्द्रोमे बनती है उनके आस-पासके गाँवोका अध्ययन करनेकी हमने कभी परवाह ही नही की, हम खादी-उत्पादकोकी ही उपेक्षा करते रहे है। अब हम उत्पादकोको परखनेसे भी पहले यह विश्वास करते जान पडते है कि नई योजनाके प्रति उनकी प्रतिक्रिया अनुकूल होगी। तब पास-पडोसके तथा गाँवोके लोगोके सम्बन्धमें हम ऐसा ही विश्वास क्यो न रखें? उन्हे नित्यके उपयोगके लिए कपडेकी जरूरत तो पडती ही है। तब वे अपने पडोसियोकी बनाई हुई थोडी-सी खादी खरीद ले, उनसे ऐसी आशा रखना क्या बहुत ज्यादा है? मै जानता हूँ कि जिन्होने इस दिशामे लगनके साथ प्रयत्न किया है, उन्हे कभी विफलता नही मिली। विफलता तो हमारी है, भावी ग्राहकोकी नही। वे आज चाहे जैसा कपडा खरीदकर पहनते हो, लेकिन हमेशा से वे हमारे साथ है। हम अगर इर्द-गिर्दके गाँवोकी आवश्यकताओका अध्ययन करे तो हम ऐसी खादी बनायेगे जो उनकी अभिरुचिके अनुकूल हो और उनका ध्यान आकर्षित करे। खादी-सेवकोने शहरके लोगोके लिए ऐसा ही किया है और उन्हे कामयाबी भी मिली है। अब क्या वे इसी तरह गाँवोकी ओर दृष्टि फेरेगे? लोग खादीसे जो दूर भागते है, उसका कारण खादीका महँगापन नही, बल्कि हमारी अश्रद्धा और सूझ-बूझकी कमी है। हम लोगोमें यदि श्रद्धा होगी तो हम एक दिन पायेंगे कि सुदूर पूर्वसे आनेवाले कपडोके टुकडे बेचनेवाले लोग जिन करोडो ग्राहकोको ये टुकडे बेचते है उन्ही करोडोको हम खादी बेच सकते है। ये लोग अपनी चीजोकी माँग बढानेके लिए विदेशी कपडोके सस्तेपन पर निर्भर करते है। हम अपना माल बेचनेके लिए अपने ग्राहकोकी अपने इलाकेके प्रति प्रेमकी भावना और अपने मालकी सफाई तथा सुन्दरतापर निर्भर कर सकते है।

चरखा-सघकी परिषद्ने जो यह आग्रह रखा है कि खादीका काम करनेवाली प्रत्येक सस्थाको स्वावलम्बी, अत स्वतन्त्र होना चाहिए, उसका कोई उचित कारण

न हो, यह बात नही। इन सस्थाओको अब चरखा-सघसे पोषण मिलनेकी आशामे बैठे नही रहना चाहिए। चरखा-सघकी केन्द्रीय पूँजीको अब हमे ऐसे क्षेत्र विकसित करनेमे लगाना चाहिए जिनकी ओर अभीतक हमारा ध्यान ही नही गया था।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-१०-१९३५

७३. पत्र : बेचरदास दोषीको

मगनवाड़ी, वर्धा
२६ अक्टूबर, १९३५

भाई बेचरदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे लिए नव वर्ष[1] फलदायी हो। आशा है, तुम वहाँ शान्तिपूर्वक होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३४२) से।

७४. पत्र : कुँवरजी के० पारेखको

२६ अक्टूबर, १९३५

चि० कुँवरजी,

कल साढे नौ बजे मनुकी सगाई सुरेन्द्र मशरूवालाके साथ कर दी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२४) से।

१. विक्रम संवत् (गुजराती)के अनुसार दिवालीके अगले दिनसे नववर्षका आरम्भ माना जाता है।

७५. पत्र : अभिमन्युको

२६ अक्टूबर, १९३५

चि० अभिमन्यु,

तूने वहाँ पहुँचते ही मुझे पत्र लिखकर अच्छा किया। अब भविष्यमे जब पत्र लिखें तो अक्षर सँवारकर लिखना। तुझे यहाँ क्यो अच्छा नही लगता था? भोजनमें कौन-सी चीज पसन्द नही आई? भूखमें तो सब-कुछ अच्छा लगना चाहिए। अच्छा लगने-न लगनेका सवाल तो बीमारो या बूढोके लिए होता है। बडे लोग बालकोंके सामने जो रख दे सो खाकर उन्हे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए। तुम सबके लिए नया वर्ष समृद्धिदायक हो।

माँको मै अलगसे पत्र नही लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री अभिमन्यु
मार्फत श्री हेमेन्द्र ब० दीवानजी
खार, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७४४) से।

७६. पत्र : नारणदास गांधीको

२६ अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

प्राणजीवन जोशीको लिखा जो पत्र मैंने तुम्हे भेजा था, उसीमे मैं लिखना चाहता था किन्तु वैसा हो नही सका।

जीवरामभाई वाला चेक हाथ लग गया है। उसकी हास्यास्पद कहानी तो तुम्हे सुननेको मिली होगी।

जेठालाल जोशीको मै पत्र लिख चुका हूँ। यह विचित्र मामला है।

मैथ्यू यहाँ पहुँच गया है। मैंने पूरी बात साफ कर दी है। उसका दैनिक कार्यक्रम निश्चित कर दिया है। केवल शारीरिक श्रमका ही काम है। मैंने उससे कह दिया है कि यदि वह इतनी हिन्दी सीख ले जिससे मुझे सन्तोष हो और जी-जानसे मजदूरीमें जुट जाये तो उसके माता-पिताके भरण-पोषणकी व्यवस्था करनेको मै तैयार हूँ। और वह यही रहेगा। मै देखूंगा कि वह क्या कर पाता है।

तुम्हारे हाथके कते सूतकी खादीका हिसाब मैंने 'हरिजन' में प्रकाशित करनेके लिए भेज दिया है।[1] तुम्हारा सूत कितने घंटेमे काता गया है? गति क्या है? सूत का अक क्या है? यदि तुम यह पूरा विवरण दे सको तो उससे मुझे काफी मदद मिलेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८० से भी; सौजन्य नारणदास गाधी

७७. सफाई-कार्यकर्त्ताकी विडम्बना

गाँवकी सफाईका काम करनेवाले एक स्वयसेवकने लम्बा पत्र लिखा है; इस पत्रसे निम्न अश मैं यहाँ उद्धृत करता हूँ[2]:

पत्रको दो भागोमें बाँटा जा सकता है। एक तो सामान्य कार्यकर्त्ताकी ढिलाईके बारेमे और दूसरा सफाईके काममें निहित कठिनाईयोके बारेमे। निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि जो काम ज्ञानपूर्वक नही किया जाता, उसमे बहुत ही कम प्रगति होती है या बिलकुल नही होती।

जो स्वयंसेवक अपना काम मन लगाकर करता है, वह आखिर उसे ज्ञानपूर्वक अवश्य करेगा। ऐसा तो हो सकता है कि कोई व्यक्ति सौपे हुए कामको अगुआके प्रति वफादारीके कारण ही करे और वह न तो मनसे किया गया हो और न ज्ञान-पूर्वक। ऐसे स्वयसेवक अपेक्षित काम पूरा अवश्य कर देते है किन्तु उनसे ज्ञानकी और ज्ञानपूर्वक किये गये कामके फलस्वरूप नई-नई खोजोकी आशा करना तो कठिन है। प्रत्येक स्वयसेवकको चाहिए कि वह सौपे हुए काममें तन्मय होकर उसके बारेमें नई-नई खोजे अवश्य करता रहे। 'हरिजन' मे प्रकाशित होनेवाले अनुभवोसे हम यह देख सकते है कि कुछ स्थानोमे ऐसा हुआ है। कोई लोगोकी उदासीनता दूर करनेके उपाय खोज रहा है, तो कोई इस बातकी खोज कर रहा है कि कमसे-कम खर्च और कमसे-कम मेहनतसे मल की सफाई कैसे हो सकती है। सिन्दी गाँवके मामलेमें ऐसा ही किया जा रहा है। लोगोकी उदासीनता मिटती नही। उनकी तरफसे कोई उत्तर नही मिलता। इसलिए आखिरकार मीराबहन उसी गाँवमे रहने गई है। उसके पीछे यह धारणा रही है कि जबतक हर गाँवमे लोगोके बीच चौबीसो घंटे रहनेवाला कोई व्यक्ति नही मिलेगा तबतक लोगोकी उदासीनता दूर नही होगी। जल्दसे-जल्द मल को साफ करनेके उपाय भी किये जा रहे है।

१. देखिए "सावधानीकी जरूरत", ३०-११-१९३५।
२. पत्र का अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है।

स्वयसेवककी मुश्किलोका तो अन्त ही नही है। सफाईका काम अन्य सभी प्रकारकी सेवाओंकी अपेक्षा ज्यादा कठिन है, क्योकि उसे बहुत ही ओछा काम माना जाता है। इस कामके बारेमे बहुत घृणा फैली हुई है। बहुत कम लोग यह काम करनेको तैयार है। मेरा अभिप्राय यह है कि हर गाँवमे एक ही स्वयसेवक होना चाहिए। सम्भवत इसी प्रकार जल्दसे-जल्द सफलता मिल सकेगी। वह स्वयसेवक यह मानेगा कि पूरे गाँवकी सफाईका भार उसीपर है और यदि गाँवमें ही उसकी मदद करनेवाले लोग नही मिलते तो वह अकेला पूरे गाँवकी सफाई कभी नही कर सकता। जब मनुष्य कठिनाईमें पड जाता है तो वह नये-नये उपाय खोजता है, अत अग्रेजी कहावतके अनुसार कठिनाईकी उपमा नये आविष्कारोकी जननीसे दी गई है। जैसे सफाईके काममें ग्रामवासियोकी सहायता मिलना कठिन है, वही बात मल की सफाईके बारेमे है। हम सिन्दीका ही उदाहरण ले। वहाँ लोग घरके आँगनमे ही खुले तौरपर मल-त्यागके लिए बैठ जाते है। आसपासके खेत बाडसे घिरे होते है इसलिए वे उनमे नही जा सकते और बहुत दूर जानेको कोई तैयार नही होता। यह मजदूरोका गाँव है और मजदूरोको दूर जानेका वक्त कैसे मिल सकता है? औरतें कितनी दूर जा सकती है? बालकोका तो पूछना ही क्या। इसलिए अन्तमे घरके आँगनके सिवा लोगोके पास और कोई साधन नही रह जाता। हर घरमे पाखाना बनानेकी आदत गाँवके लोगोमे होती नही। इसलिए जबतक काफी तादादमे पाखाने नही बन जाते या लोग अपना-अपना पाखाना बनवानेको तैयार नही होते तबतक सार्वजनिक रास्ते ही पाखाने बने रहेगे। असलमे जबतक प्रत्येक व्यक्ति सफाईके नियमोका ज्ञान नही प्राप्त कर लेता और जबतक वह उन नियमोको अमलमे नही लाता तबतक रास्तेमे पाखाना फिरनेका तरीका आँखोको न रुचनेके बावजूद, आरोग्यकी दृष्टिसे शायद कमसे-कम हानिकर है और सहन करने लायक है।

ऐसी स्थितिमे गाँवमे रहनेवाला अकेला स्वयसेवक सफाईका काम किस तरहसे करे? उसे सफाईके लिए प्रतिदिन एक समय निश्चित कर लेना चाहिए। जबतक वह स्वय वहाँ रहता है तबतक उसे लोगोको सिखाने और अकेलेसे जहाँतक बन पड़े मुहल्लेको साफ रखनेमे अपना समय बिताना चाहिए। इस बीच उस मुहल्लेमें सफाईका काम करनेके लिए यदि वहींका कोई व्यक्ति तैयार हो जाये तो उसे अपने लिए उसी गाँवमें कोई अन्य मुहल्ला खोज लेना चाहिए। यदि उसे जानकारी हो तो उस गाँवके सुधारके लिए वहाँ जिला-बोर्ड आदि जो सगठन हो, उनकी मदद लेनी चाहिए। प्रतिदिन इकट्ठा होनेवाले मल का उसे अच्छेसे-अच्छा उपयोग खोज लेना चाहिए। वह स्वयसेवक उस मल को या तो आसपासके खेतवालोको बेच दे और उससे जो थोड़े-बहुत पैसे मिले, उनका उपयोग उसी मुहल्लेको और अधिक साफ-सुथरा बनाने में करे। या यदि कोई उस मल को लेनेको तैयार न हो तो जो किसान मल की इस खादका प्रयोग करनेको इच्छुक हो, उसे दे दे और यह सिद्ध करके दिखाये कि उक्त खाद कितनी उपयोगी है। यह तो मैंने अपनी विचारधारा पाठकके सामने रखी है। मै स्वय पूरी तरहसे इस विचारधाराके अनुसार अमल नही कर सका हूँ और

न किसी अन्यसे इसपर अमल करा पाया हूँ। यह सर्वथा नया कार्यक्षेत्र है। इसलिए फिलहाल तो विचारोंका आदान-प्रदान ही हो सकता है। जो स्वयसेवक सफाईके काममें लगे हुए हैं, वे इसमेंसे जो-कुछ ग्रहण करने योग्य, होगा सो ग्रहण कर लेगे। उन्हे मेरी इस विचारधारामें जो दोष दिखाई दे, उनके बारेमें वे मुझे सूचित करे और जहाँ इसपर अमल किया गया हो, वहाँ प्राप्त अपने अनुभवोका विवरण मुझे भेजे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २७-१०-१९३५

७८. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

वर्धा
२७ अक्टूबर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारे दो पत्र मिले थे। मै जानता हूँ कि हरिजनोके लिए जो हो सकता है, वह तुम करते रहते हो। कविठाकी स्थितिपर नजर रखे रहना। यदि हरिजन उस जगहको छोडना चाहे तो हमें उन लोगोको प्रोत्साहन अवश्य देना चाहिए। आशा है, तुम्हे यह याद होगा कि आर्थिक सहायताकी अपीलके लिए मै तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षामे हूँ। नरहरिसे कहना कि वह भाई वेलचन्दके सम्बन्धमे मुझसे कुछ कहना चाहता था किन्तु वह भूल गया और मै पूछना भूल गया। अब वह मुझे लिखे। शशिकान्त बीमार पड गया था। आशा है अब वह अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५७)से। सी० डब्ल्यू० १२९ मे भी; सौजन्य . परीक्षितलाल एल० मजमूदार

७९. पत्र : चन्दन पारेखको

२७ अक्टूबर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा पत्र मिला। जब तू वरतेज जाये तो यहाँ होकर ही जाना। दिसम्बर तक तो तू लौटेगी ही; उस समय मैं यही रहूँगा। इस बीच जितनी जाँच-पडताल कर सकता हूँ, वह मैं कर ही रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३७) से, सौजन्य सतीश डी० कालेलकर

८०. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२८ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमृत,

इस पोस्टकार्डके विषयमें तुम्हारा क्या कहना है? चौधरीने तो भारी प्रगति की है। आनेपर तुम काम देखना।

यह आशा तो करता ही हूँ कि तुम शिमलामें पूरा विश्राम कर रही होगी। मुझे तुम्हारी इस आदतसे डर लगता रहता है कि पहले तो तुम अपने लिए बहुतसा काम जुटा लेती हो और फिर झुंझलाती हो कि आजका काम पूरा नही हुआ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७१८) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८७४ से भी।

८१. पत्र : शारदा चि० शाहको

२८ अक्टूबर, १९३५

चि० शारदा,

आज मौनवार है। मैंने 'हरिजन' का काम अभी-अभी पूरा किया है इसलिए दो पंक्तियाँ लिखे दे रहा हूँ। मैं लिखूं या न लिखूं किन्तु तुझे तो कभी-कभी अपने कामका विवरण देते हुए मुझे पत्र अवश्य लिखना चाहिए। आजकल लीलावती भोजनालयका कामकाज चलाती है। वह बहुत मेहनत करती है। तुम सबके लिए यह वर्ष सुखमय हो। चिमनलालका पत्र मिला है। यह अच्छा ही है कि तू फिर राजकोट जा रही है। जो-कुछ सीखना चाहे वह वहाँ भी सीख सकती है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९७०) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

८२. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

२८ अक्टूबर, १९३५

भाई भगवानजी,

तुम इतनेमें ही सन्तोष मानना कि देवचन्दभाईने मुझे तो लिखा। यह स्पष्ट है कि देवचन्दभाई तुम्हें नहीं लिखना चाहते। ऐसी स्थितिमें उनपर जोर डालनेकी मुझे तनिक भी इच्छा नहीं होती। जो-कुछ उन्होंने मुझे लिखा वही वे सीधे तुम्हें लिखें तभी तुम्हें न्याय मिलेगा, यह तो तुम नहीं मानते होगे।

नववर्ष तुम्हारे लिए मंगलमय हो। देसी दवाकी बात मेरे ध्यानमें है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

श्री भगवानजी अनूपचन्द, वकील साहब
राजकोट

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२९) से। सी० डब्ल्यू० ३०५२ से भी; सौजन्य : भगवानजी अ० मेहता

८३. पत्र : नारणदास गांधीको

२८ अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। जेठालालके बारेमे मै समझ गया। बहुत विचित्र मामला है। सुशीला इसमें क्यो पडी है? मै यह जाननेको उत्सुक रहूँगा कि प्राणजीवन जोशी क्या कहता है।

मै जमनादासके बारेमे समझ गया। मनुकी सगाई सुरेन्द्र मशरूवालाके साथ हो गई है।

कनु[1] अब अच्छी तरह जम गया है। वह इतनी सावधानीसे अपने समयका उपयोग करता है कि एक-एक मिनटका हिसाब दे सकता है। उसका स्वास्थ्य अच्छा और मन प्रफुल्लित रहता है। फिलहाल उसकी वहाँ आनेकी तनिक भी इच्छा नही है। इसलिए तुम उसे यहाँसे खीच लेनेकी इच्छा छोड दो। यदि उसकी वहाँ आनेकी तनिक भी इच्छा होगी तो मै उसे नही रोकूंगा।

मै उसे अपने साथ दौरेमे तो ले जाना चाहूँगा ही। दौरा शुरू करते समय मै निर्णय कर सकूंगा। मेरा झुकाव उसे साथ लेकर दौरा करनेकी ओर है। यह मानो कि मै १० जनवरी तक यही हूँ। शायद मुझे एक दिन पहले रवाना होना पडेगा। ३१ दिसम्बर तक तो कही जाना ही नही है। मुझे १२ तारीखको परिषदमे[2] अहमदाबाद पहुँचना है। और फिर थोडे दिन गुजरातका दौरा करना है। उसका कार्यक्रम वल्लभभाई निश्चित करेंगे।

नववर्ष तुम सबके लिए मंगलमय हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ९४८१ से भी; सौजन्य . नारणदास गाधी

१. नारणदास गांधीके पुत्र।

२. गुजराती साहित्य परिषद्, जिसकी अध्यक्षता गांधीजीको करनी थी। वैसे, 'गांधीजीकी बीमारीके कारण अधिवेशन स्थगित होकर ३१ अक्टूबरसे २ नवम्बर, १९३६ तक हुआ था। गांधीजीके अध्यक्षीय तथा समापन भाषणोंके लिए देखिए खण्ड ६३।

८४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२९ अक्टूबर, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। जब तुम थक जाओ तो वहाँका काम समेट सकते हो। बिलकुल घिर जानेतक प्रतीक्षा मत करना। मनुष्यको अपनी सीमा समझनी चाहिए। झगडा बढता जाये और उसे शान्त करनेमे तू कोई मदद न कर सकता हो तो खुले मनसे अपनी हार स्वीकार करके सब समेट लेना। बाग किसीको किरायेपर दे देना और यदि बिक सकता हो तो बेच देना। यदि लोग अखबार[1] चाहते है तो उन्हे उसका खर्च उठाना चाहिए। यदि वे न चाहे तो जबरदस्ती [अखबार] निकालना हमारी नीतिके विरूद्ध है। न्यासके बारेमे मै सोचकर लिखूंगा।

रामदासको प्रागजीके साथ भेजनेकी मेरी बहुत इच्छा थी किन्तु वह नही माना। मनुकी सगाई सुरेन्द्रसे हो गई अर्थात् मशरूवाला-परिवारके साथ हमारे रिश्तेदारीके सम्बन्ध और बढ गये।

नववर्ष तुम्हारे लिए समृद्धिदायक हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४६) से;

१. इंडियन ओपीनियन।

८५. पत्र : सुरेन्द्र ब० मशरूवालाको

२९ अक्तूबर, १९३५

चि० सुरेन्द्र,

तेरी सगाईके लिए मैं जिम्मेदार नहीं हूँ बल्कि किशोरलाल और उनके बाद जमनालालजी हैं। तूने अपने छोटे-से पत्रमें भी हिज्जोंकी काफी भूलें की हैं। मनु जब तेरी भूलें निकालेगी तो क्या तू इसे सहन कर सकेगा? देखना।

मुझे विश्वास है कि तुम दोनों सुखी तो रहोगे ही।

बापूके आशीर्वाद

श्री सुरेन्द्र मशरूवाला
टोपीवाला चाल
सैंडहर्स्ट रोड, बम्बई[1]

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६६) से; सौजन्य : कनुभाई नानालाल मशरूवाला

८६. पत्र : छगनलाल गांधीको

२९ अक्तूबर, १९३५

चि० छगनलाल,

यदि वहाँकी कातनेवाली स्त्रियाँ खादी न ले या अपने पहनने लायक सूत रखकर बुननेको दें तो तुम्हें उन लोगोंको सूत कातनेको कदापि नहीं देना चाहिए। फिर भले ही बीजापुरमें एक भी कातनेवाली न रहे। मध्य वर्गके लोग यदि अपने कपड़ों लायक सूत कातें तो तुम उनके लिए आवश्यक व्यवस्था कर सकते हो। यदि कोई व्यक्ति खादी पहननेकी तुम्हारी बातपर कान न दे या अपने कपड़ोंके अथवा परमार्थके लिए कातनेको तैयार ही न हो तो तुम इस कामको समेट लेना। और यदि लोग कोई अन्य ग्रामोद्योग या गृह-उद्योग सीखने और चलानेको तैयार हो जायें तो तुम आवश्यक सुविधाओंकी व्यवस्था कर सकते हो। किन्तु उसका खर्च हमारे सिर नहीं पड़ना चाहिए। उक्त खर्च उस उद्योगमें उत्पादित वस्तुओंकी बिक्रीमें से निकलना चाहिए। ऐसे ही उद्योगोंमें हाथ डालना जिनका उत्पादन बजारमें आसानीसे खप सके, जैसे, घी, तेल, गुड़, कागज और अमुक अचार या औषधियाँ आदि।

१. पता पत्रकी प्रतिपरसे लिया गया है।

इन चीजोके नाम मैंने उदाहरणके रूपमे सुझाये है। यदि इनमे से कोई काम हाथमे न ले सको तो हरिजन बालक-बालिकाओका छात्रावास चला सको तो चलाना। यदि यह भी न कर सको तो कोई अन्य सेवा-कार्य खोज सको तो खोज लेना।

देखता हूँ गगाबहन[1] जमीन और मकान आश्रमके न्यासियोके नाम करनेसे सम्बन्धित रजिस्ट्रीके कागजातपर हस्ताक्षर करके हमे नही देना चाहती। उनके हस्ताक्षर करके न देनेके बावजूद जमीनको तो कोई खतरा है ही नही। उनका हस्ताक्षर किया हुआ एक दस्तावेज तो हमारे पास पड़ा हुआ है इसलिए उनकी तरफसे कोई अड़चन नही आ सकती। और कोई तीसरा हमे उलझनमे नही डाल सकता। यह ठीक है न? यदि इसमें किसी तरहका खतरा हो तो तुम मावलकर[2] से सलाह-मशविरा कर लेना।

परसों मनुकी सगाई सुरेन्द्र मशरूवालासे हो गई। आजकल मनु यही है। कल दो दिनके लिए अकोला गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९६८२) से, सौजन्य छगनलाल गाधी

८७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

[२९ अक्टूबर, १९३५ के लगभग][3]

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। कमलाके स्वास्थ्यमे उतार-चढावके लिए तो हमे तैयार रहना ही है। कमला रोगसे जूझनेकी जिस शक्तिका परिचय दे रही है उसपर तो मै चकित हूँ, और जबतक उसके पास इतनी अधिक शक्ति और मनोबल शेष है तबतक हमे यही आशा करनी चाहिए कि सब ठीक ही होगा — कमसे-कम मै तो यही आशा करता हूँ। बम्बईसे उसे विदा करते समय मुझे ऐसा नही लगा कि उसको सदाके लिए विदा दे रहा हूँ, और इसलिए स्वभावत मैंने उससे कहा: 'अगर मै अगले सालतक जेलसे बाहर रहा तो तब हम फिर मिलेगे।' मुझमें तो अब भी वह आशा कायम है और तुम्हारी भेजी खबरोको मै उसी आशाके परिप्रेक्ष्यमें देखता समझता हूँ।

उन 'बडे लोगो'[4] से मिलनेकी तुम्हारी तीव्र अनिच्छाके पीछे तुम्हारी भावनाकी गहराईको मै समझता हूँ, लेकिन साथ ही यह भी जानता हूँ कि अगर तुमसे वास्तवमे

१. गगाबहन मजमूदार।

२. गणेश वासुदेव मावलकर।

३. जवाहरलाल नेहरू इग्लैंड २९ अक्टूबर, १९३५ को पहुँचे थे। स्पष्ट है कि यह पत्र उसी दौरान लिखा गया होगा। फिर ७ नवम्बर, १९३५ को जवाहरलाल नेहरू को लिखे अपने पत्रमें महादेव देसाईने लिखा है कि खुर्शेद पहले ही रवाना हो चुकी है।

४. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", १०-१०-१९३५।

सम्पर्क करनेकी कोशिश की गई तो अपनी अनिच्छाके बावजूद तुम ऐसे नही हो कि तुमतक पहुँचा न जा सके। मुझे मालूम है कि तुम जिस समय जो फैसला करते हो, उस समयकी दृष्टिसे वह बराबर ठीक ही होता है। इसलिए तुम्हारे इस दृढ निश्चयसे मुझे डर नही लगता। लेकिन तुम्हारे इस विचारसे मै सहमत हूँ कि इस चुनावकी सरगर्मीमे कोई भी तुमसे मिलना नही चाहेगा, कोई भी किसी ऐसे विषयकी चर्चा करनेकी मन स्थितिमे नही होगा जो उसके चुनाव-प्रयत्नोसे सम्बन्धित न हो, और भारतकी समस्याका तो वहाँके चुनाव-सघर्षमें कोई महत्व कभी होता ही नही। अपने दृष्टिकोणसे तो तुम ठीक समयपर ही इग्लैड जाओगे।

खुर्शेदबहन शायद बुधवारको बम्बई छोड देगी। उसके पास कुछ साहित्यिक कार्यक्रम है, जिसमे वह कुछ महीने व्यस्त रहेगी।

'हरिजन' तो तुम्हे नियमित रूपसे भेजा जाता है, लेकिन क्या उसे देखनेका समय कभी मिल पाता होगा?

सप्रेम,

बापूके आशीर्वाद

अग्रेजीसे . गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६; सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

८८. पत्र : अभिमन्युको

मगनवाडी, वर्धा
३० अक्टूबर, १९३५

चि० अभिमन्यु,

तेरी लिखावट बहुत अच्छी तो कही ही नही जा सकती, फिर भी ठीक मानी जायेगी। अक्षर भी चित्र ही है और वही चित्र तो अच्छा माना जायेगा जो मूलकी हूबहू नकल हो। यदि तू अक्षरोके ऐसे चित्र बनाकर भेज सके तो मै यह मानूँगा कि तेरी लिखावट अच्छी है। मेरे हिसाबसे अक्षर बनाना सीखना चित्रकला सीखनेका ही एक भाग है। यदि तुझे ऐसे अक्षर बनानेका शौक होगा तो अवश्य सीख सकेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७४६) से।

८९. पत्र : गो० कृ० देवधरको

३१ अक्टूबर, १९३५

प्रिय देवधर,[1]

किशोरलालने आपसे अपनी मुलाकातका हाल विस्तारसे बताया, बड़ा दर्दनाक लगा। कौन कहता है कि आप किसी कामके नहीं हैं। आपका अतीत आस्थापूर्ण सेवाकी एक गाथा है और अगर ईश्वरकी इच्छा हुई तो आप फिर रोग-शय्यासे उठकर और भी सेवा करेंगे। लेकिन ईश्वरकी इच्छा कुछ और हुई, तब? तब भी आपका अतीत – निष्कलंक अतीत – इस बातका पूर्ण आश्वासन देता है कि ईश्वर चाहे आपका जो करे, आपका भविष्य भी उतना ही निष्कलंक रहेगा। आप तो आस्थावान व्यक्ति हैं। आस्थावान व्यक्तियोंका सदा कल्याण ही होता है। ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि वह आपको अनेक वर्षों तक हमारे बीच रखे।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

९०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
३१ अक्टूबर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

साथमें परीक्षितलालका पत्र है। ऐसा लगता है कि इसे तुमने देखा है। मैं समझता हूँ मेरे सुझावमें कोई-न-कोई भूल हुई है। अपनी भूलको सुधारनेसे पहले उसे मैं जरा गहराईसे समझ लेना चाहता हूँ।[2] मेरे खयालसे जहाँ हरिजनोंपर मार पड़े और वहाँ उन्हें किसी प्रकार कोई इन्साफ न मिले, तो उन्हें वह गाँव छोड़ देना चाहिए और इसके लिए हमें उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए। मैं तो बहुत वर्षोंसे व्यक्तियों और समूहोंके मामलेमें भी इस नीतिको मानता और उसपर अमल करता रहा हूँ। मैंने सन् १९०६ में इसका प्रचार करना शुरू किया, सन् १९०८ में इन विचारोंको लेखबद्ध किया और आजतक ऐसी ही सलाह देता आया हूँ। तलाजा और

१. सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसायटीके एक संस्थापक सदस्य, समाज-सुधारक और हरिजनोंके हितकामी इनकी १६ नवम्बर, १९३५ को मृत्यु हो गई, देखिए-"तार : आर० आर० बखलेको", १६-११-१९३५।

२. देखिए "कविठाको खाली कर दें" ५-१०-१९३५।

मेरठके पासके गाँवोमे जब हरिजनो पर जुल्म हुए तब भी मैंने यही सलाह दी थी। तलाजामें पट्टणीसाहब[1] ने न्याय करवाया। मेरठके पासके गाँवोमे लम्बा मुकदमा चला था जिसमे हरिजन हार गये। वकीलो और अन्य सलाहकारोने उस मामलेमें कमजोरी दिखाई और बात अधूरी रह गई। कविठाके बारेमे हरिजनोके हिजरत न करनेका कोई खास कारण हो सकता है। परन्तु यदि ये सब हरिजन या उनमें से कुछ लोग कविठाके सवर्णोको चेतावनी देकर निकल आयें तो इसमे बुराई क्या है? यदि मेरे इस विचारसे तुम सहमत न हो तो मुझे समझाना। कविठाकी यदि कोई खास परिस्थिति हो तो मैं उससे परिचित नही हूँ। तुम तो वहाँ हो आये हो, इसलिए इसपर अच्छी रोशनी डाल सकते हो। हम कविठा प्रकरणको पूरा हुआ न मानें। जैसा गुजरातमे होता है वैसा अन्य प्रान्तोमे देखनेमें नही आता। यह ठीक है कि तमिलनाडुमे नायरो तथा हरिजनोके बीच ऐसा होता है। और कही तो ऐसा मैंने नही सुना। हमें कोई-न-कोई रास्ता निकालना होगा।

वालचन्द[2] अम्बेडकरको लेकर यहाँ आनेकी सोच रहे हैं।

मुझसे पूछा गया है कि जनवरीमे मेरे वहाँ आने पर मेरे लिए क्या कार्यक्रम रखा जाये। उसमे भीलोके क्षेत्रका और हरिजनोके लिए लोगोसे चन्दा उगाहनेका दौरा शामिल है।

यदि तुम्हारे लिए ऑपरेशन कराना आवश्यक हो, तो तुरन्त करा लेना अच्छा होगा। यदि डाक्टर न चाहे तो दूसरी बात है।

भाजेकरके अस्पतालमें देवधर मृत्यु-शय्या पर पडे हैं। उन्हे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
डॉ० कानूगा का बगला
एलिस ब्रिज, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९०-१

१. प्रभाशंकर पट्टणी, भावनगर के दीवान।
२. वालचन्द हीराचन्द, एक उद्योगपति।

९१. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

३१ अक्टूबर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

तुमने जो लिखा वह मेरी समझमें नही आया। तुमने जो यह लिखा था कि सरदार जाकर समझौता करा आये, यह मुझे याद है। किन्तु मैं यह नही जानता कि हरिजनोंके तैयार होनेके बावजूद सरदारने उनके हिजरतके इरादेको पसन्द नही किया। यदि बात ऐसी हो तो मुझे अपनी गलती सुधार लेनी चाहिए। मैं सरदारसे पूछ रहा हूँ कि ऐसा किस प्रकार किया जा सकता है। तुम भी इस बातपर प्रकाश डालना। कविठाके बारेमें समाचार देनेवाले तो तुम, डाह्याभाई[1] और पुरातन[2] हो।

वार्षिक बजटके लिए चन्देकी अपील करनेका सुझाव ठक्कर बापाने दिया था और इस सम्बन्धमें मैंने तुमसे योजना बनाकर भेजनेको कहा था। या तो उक्त पत्र तुम्हे नही मिला अथवा तुमने जो उत्तर दिया होगा वह मुझे नही मिला। मैं तुम्हारे उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४००५) से। सी० डब्ल्यू० १३० से भी; सौजन्य. परीक्षितलाल एल० मजमूदार

९२. पत्र : डाह्याभाई म० पटेलको

३१ अक्टूबर, १९३५

भाई डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि तुम गाँवमें जाकर मूक भावसे सेवा करोगे तो वहाँ पहुँचते ही स्वस्थ हो जाओगे। लोग तुम्हारे भाषणका अनुकरण नही करेंगे, किन्तु तुम्हारे कठोर परिश्रमका अनुकरण अवश्य करेंगे। कविठाके हरिजनोंमें से यदि अब भी कोई निकलनेकी सोचते हो तो वे वहाँसे निकल सकते हैं। परीक्षितलाल वहाँकी स्थिति पर नजर रखे हुए है।

१. डाह्याभाई म० पटेल।

२. पुरातन बुच।

जैसा तुम कहते हो वैसा तभी सम्भव है जब अकेला व्यक्ति एक पाखाना इस्तेमाल करे। किन्तु सान्ताक्रुजके बँगलोमे जहाँ दस-बीस लोग रहते हो-जहाँ पच्चीस-तीस फुटकी ऊँचाईसे पाखाना जमीनपर गिरता हो और जिसे एक अँधेरे-सँकरे रास्तेसे होकर साफ किया जा सकता हो, वहाँ यदि भगी न हो तो बँगलेके पाखानेको कौन और कैसे साफ करेगा? और जैसा कि तुम लिखते हो क्या वैसी सफाई रखी जा सकती है?

खान-पानके बारेमे तुम जो लिखते हो वह सही है, किन्तु बहुत प्रयत्न करनेके बावजूद मै उस आदर्श स्थितितक नही पहुँच पाया, इसलिए मै उसपर क्या प्रकाश डालूँ? यह सम्भव है कि उक्त आदर्श स्थितितक पहुँचनेके लिए खुराकके सिवा और भी बहुत-कुछ करना पड़ता होगा। हम सब उस आदर्श स्थिति तक पहुँचनेका यथाशक्ति प्रयत्न करते रहे।

नववर्ष तुम्हारे लिए समृद्धिदायक हो।

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई म० पटेल
धोलका

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० २७०७) से; सौजन्य डाह्याभाई म० पटेल

९३. पत्र : मणिबहन पटेलको

३१ अक्टूबर, १९३५

चि० मणि,

तू बार-बार बीमार क्यो पडती रहती है? पितृ-भक्तिका यह अर्थ तो नही लगाती कि पिता बीमार पड़े तो तुझे स्वय भी बीमार पडना चाहिए। माता-पिताके अपग होनेपर श्रवणने अपना शरीर वज्रके समान बना लिया था और अपने कन्धेपर काँवर रखकर दोनोको यात्रा कराई थी। किंग लियरकी लडकीने स्वय स्वस्थ रहकर पिताकी सेवा की थी। फिर तू क्यो बुढिया-जैसी बन बैठी है? यदि तुझे अपच नही होता तो बुखार होता है और बुखार नही होता तो सर्दी होती है, किन्तु कोई-न-कोई बीमारी बनी ही रहती है। इसका कारण ढूँढकर तू वज्र-जैसी काया क्यो नही बना डालती?

बापूके आशीर्वाद

मणिबहन पटेल
८९, वार्डन रोड, बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-४: मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ११८

९४. पत्र : नारणदास गांधीको

अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला था। तुमने हरिलालका विश्वास कैसे कर लिया? नशेमे कही हुई बात कैसे मानी जा सकती है? किन्तु मै सुरक्षित हूँ। मै उसे यहाँ आने या रखनेके लिए सार्वजनिक कोषमें से एक कौडी भी देनेवाला नही हूँ। आशा है तुमने भी उसे उक्त कोपमे से किराया देनेकी बात मजूर नही की होगी। तुम जानते हो कि उसने पहले भी मुझसे किरायेके पैसे माँगे थे, किन्तु मैने साफ इनकार कर दिया था।

कनुको उसकी इच्छाके विरुद्ध तुम वहाँ बुलानेका आग्रह क्यो करते हो? अब वह यहाँ जम गया है, उसकी पढाई-लिखाई चल रही है और उसका स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। उसे राजकोटमे रहना बिलकुल अच्छा नही लगता। ऐसी स्थितिमें उसे वहाँ बुलानेसे क्या फायदा? अभी तो उसे यहाँ आये हुए चौदह महीने ही हुए है। यहाँ जिम्मेवारीका काम उसके हाथमे रहता है। इस दृष्टिसे भी उसका वहाँ आना मुश्किल होगा।

यदि वह दौरेमे मेरे साथ हो तो उसमेसे एक दिन गँवाना भी उसे नहीं पुसाता। इससे उसके व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करनेमे विघ्न पडता है और ऐसे समय शायद मै उसे छोड भी न सकूं। ऐसे समय जबकि उसकी यहाँ जरूरत होगी तुम उसे वहाँ कदापि मत बुलाओ। इसलिए उसके वहाँ आनेका सबसे सुविधाजनक और सर्वोत्तम समय तो वही है जब मै यहाँ रहता होऊँ। अत. सन्तोक[1] अबसे लेकर ३१ दिसम्बर तक किसी भी दिन यहाँ पहुँच जाये, या फिर जब मै यहाँ लौटकर स्थिर हो जाऊँ तब अर्थात् जल्दीसे-जल्दी मार्च महीनेके बाद। यदि तुम कनुकी इच्छा और मेरी सुविधाकी बात सोचो तो वह मार्चके बाद ही वहाँ आ सकता है या थोडे दिनके लिए अभी आ सकता है। वह स्वय तो यहाँसे अभी जाना ही नही चाहता। यह बात भी सोचने लायक है। किन्तु अन्तमें जैसा तुम चाहोगे वही होगा। तुम निर्णयपर पहुँच सको उस विचारसे मैने वे सब तथ्य सामने रख दिये हैं जो मुझे ज्ञात थे। वह यहाँ क्या-क्या कर रहा है, यह तुम उसके पत्रसे जान सकोगे। और तुम जो निर्णय करो उसकी सूचना मुझे देना। मै उस पर अमल करूँगा।

यदि जमनादास इतना बीमार रहता है तो वह जिम्मेवारीका काम कैसे सँभाल सकेगा? उसके खर्चकी क्या व्यवस्था है? चिमनलालका कितना खर्च आता है?

१. स्वर्गीय मगनलाल गांधी की पत्नी।

क्या वह सब आश्रमके कोषमें से दिया जाता है? वह वहाँ क्या-क्या कर रहा है? आश्रमकी स्थायी निधिमे से हर महीने कितना खर्च होता है, इसके आँकडे मुझे भेजना।

तीन गज और दो गज खादीका हिसाब इस प्रकार है सतीश बाबू और जेठालाल यह मानते है कि जो कातनेवाला तीन गज खादी पहनना चाहे यदि वह दो गज खादी बेचनेके लिए तैयार करे, तो इससे वह अपने पर होनेवाला [तीन गज खादीका] खर्च बचा लेगा। इन आँकडोकी कोई कीमत नही है। हमने यहाँ अलग ढगसे हिसाब करवाया है। मैने उस पर नजर नही डाली है। समय मिलने पर मै उसे प्रकाशित करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८२ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी।

९५. पत्र: एक ग्राम-सेवकको[1]

[२ नवम्बर, १९३५ के पूर्व]

तुम्हारा आहार बहुत कम है। इतनेमे तो आदमी बराबर भूखा ही रहेगा। मेरे विचारसे ईश्वरने तुम्हे जो साधन प्रदान किया है, उसका तुम पूरा उपयोग नही कर रहे हो। तुम वह कथा तो जानते हो न जिसमे उन लोगोसे, जो अपनी प्रतिभाओका उपयोग करना नही जानते थे या जानकर भी नही करते थे, उनकी प्रतिभाएँ वापस ले ली गई थी?[2]

देहका दमन तब आवश्यक होता है जब वह अपने धारकके प्रति विद्रोह करती है। जब वह धारकके वशीभूत हो और उसका उपयोग सेवाके साधनकी तरह किया जा सकता हो तब उसका दमन करना पाप है। दूसरे शब्दोमे देह-दमनको ही सिद्धि मानकर देह-दमन करनेमें कोई पुण्य नही है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-११-१९३५

१. महादेव देसाई ने अपने "वीकली लेटर" में, जहाँ से यह पत्र लिया गया है, बताया है कि इस ग्राम-सेवक ने आहार के विषय में अपने ऊपर कड़े प्रतिबन्ध लगा रखे थे। वह एक ही वक्त भोजन करता था और सो भी एक आना मूल्य का ही।

२. सेंट मैथ्यू, २५, २८-९।

९६. एक चर्चा[1]

[२ नवम्बर, १९३५ के पूर्व]

एक मुलाकातीने गांधीजीसे पूछा कि अगर यह न भी कहा जा सके कि आप कर्म-योगको एक अन्ध-श्रद्धाका विषय बनाये दे रहे हैं तो भी इतना क्या सच नहीं है कि आप इसपर जरूरतसे ज्यादा जोर दे रहे हैं। इसपर गांधीजीने उत्तर दिया :

नही, बिलकुल नही। मैंने जो भी कहा है, बराबर मेरा आशय भी ठीक वही रहा है। कर्मपर तो जितना भी जोर दिया जाये, उचित ही होगा। मैं तो मात्र 'गीता'के सन्देशको ही दोहरा रहा हूँ। भगवान् कृष्ण कहते हैं 'यदि मैं सतत जाग्रत रहकर कर्मरत न रहूँ तो मेरा अनुकरण करनेवाले मानवोके समक्ष मैं एक गलत उदाहरण प्रस्तुत करूँगा।"[2] क्या मैंने विभिन्न व्यवसायोमे लगे लोगोसे चरखा, चलाकर सारे देश-भाइयोके समक्ष एक ठीक उदाहरण प्रस्तुत करनेका अनुरोध नही किया है?

[मुलाकाती :] क्या आप -- उदाहरणके तौरपर मान लीजिए -- भगवान् बुद्ध-जैसोसे भी यही कहेंगे?

हाँ, और बिना किसी सकोचके।

तो तुकाराम और ज्ञानदेव जैसे महान् सन्तोंके बारेमें आपका क्या कहना है?

उनके सम्बन्धमे कोई, फतवा देनेवाला मैं कौन होता हूँ?

मगर बुद्धके बारेमें फतवा देंगे?

ऐसा तो मैंने कभी नही कहा। मैंने तो इतना ही कहा कि यदि मुझे उन-जैसे किन्ही महात्माके साक्षात्कार करनेका सौभाग्य मिले तो उनसे मैं निस्सकोच कहूँगा कि आप ध्यानयोगके स्थानपर कर्मयोगकी शिक्षा क्यो नही देते। इन सन्तोसे मिलनेपर भी मै यही कहूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-११-१९३५

१. महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से उद्धृत।
२. भगवद्गीता, ३, २३।

९७. मानव-दयाकी भावनावाले ग्राहकोंकी आवश्यकता

डॉ० प्रफुल्लचन्द्र राय ७५ वर्षकी इस वृद्धावस्थामे भी दीन-दुःखी जनोकी सेवा करनेमें नौजवानोवाले उत्साह और शक्तिका परिचय दे रहे है। वे लिखते है:[1]

कीमतोमे वृद्धि होनेकी जो आशा, या कहिए, आशका थी, वह वृद्धि होनेसे पूर्व ही महीन खादीके ग्राहकोकी सख्या घट गई है। अब अगर और कमी आई तो उसका कारण मूल्य-वृद्धि नही, बल्कि ग्राहकोमें खादी-प्रेम या मानव-दयाकी भावनाका अभाव होगा। जिसमें मानव-दयाकी भावना है वह बराबर सौदेबाजीकी भावनासे काम लेकर चीजें कम कीमतोपर ही खरीदनेकी फिक्रमें नही रहता। जिसमें मानव-दयाकी भावना होती है वह खरीदारी करते समय भी सेवाके अवसरकी ताकमें रहता है, और इसलिए वह सबसे पहले खरीदी जानेवाली चीजकी कीमत नही, बल्कि उसे तैयार करनेवालोकी अवस्थाकी जानकारी पाना चाहता है और फिर ऐसी खरीदारी करता है जिससे सबसे ज्यादा जरूरतमन्द और सुपात्र व्यक्तिका सबसे अधिक लाभ होता हो। यदि मानव-प्रेमकी भावनासे अनुप्राणित लोगोकी एक खासी बडी सख्या हो तो खादीकी माँग बराबर बढती ही रहे, और अब तो सब दिनसे ज्यादा, क्योकि लोग जानते है कि आज ऐसी व्यवस्था की जा रही है जिससे साधारण-से-साधारण कतैयेको भी कमसे-कम निर्वाहके लायक मजदूरी मिल सके — ऐसी मजदूरी जिसके सहारे वह केवल जैसे-तैसे गुजारा ही न करे बल्कि उसे कुछ पौष्टिक आहार भी मिल सके।

खादी-उत्पादनमें लगे कारीगरोको निर्वाह करने योग्य मजदूरी देनेके प्रयत्नके साथ-साथ खादीके लिए बेहतर, अर्थात् अधिक स्वाभाविक बाजार ढूँढनेकी भी कोशिश की जानी चाहिए। अभीतक तो हम बम्बई, कलकत्ता, मद्रास आदि बडे-बडे नगरोमें ग्राहक ढूँढ़नेके आसान रास्तेपर चलकर ही सन्तोष करते आये है। मैंने डॉ० रायको यह सुझाव दिया है कि अगर उनका स्वास्थ्य साथ दे तो वे उत्पादन-केन्द्रोके आसपासके क्षेत्रोमें अपना प्रेमका सन्देश पहुँचाये। सारा बगाल मिलके बने महीन कपडे पहनता है, फिर वह महीन खादी ही क्यो न पहने? इस नई योजनाके अन्तर्गत खादी सस्ती की जा सकती है, बशर्ते कि बगाल सट्टेके लिए नही, बल्कि केवल घरेलू उपयोगके लिए कपास पैदा करे। लेकिन वह दिन शायद अभी बहुत दूर हो। फिलहाल तो बगालको और सारे भारतको वणिग्वृत्तिसे कीमतोका खयाल रखकर नही, बल्कि मानवताकी खातिर खादी खरीदनी चाहिए। हम अपने बच्चो और वृद्ध माता-पिताओ पर होनेवाले

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। प्रफुल्ल चन्द्र राय ने लिखा था कि बंगाल में खादी की खपत न होने के कारण वहाँ के खादी-उत्पादकों को बम्बई के बाजार का सहारा लेना पड़ता है।

खर्चका हिसाव तो कभी नही लगाते। चाहे जितना खर्च पड़े, हम उनकी परवरिश तो करते ही है। तव क्या जिन करोडो भाई-वहनोकी हम सदियोसे अपराधपूर्ण उपेक्षा करते आये और फलत जो भुखमरीकी अवस्थामे पहुँच गये है उनके प्रति क्या हमारा इससे कुछ कम कर्त्तव्य है? हमे भारतके किसी भी हिस्सेको उपेक्षित नही छोड़ना है। खादी-शास्त्र उत्पादन और उपभोगके विकेन्द्रीकरणकी अपेक्षा रखता है। जहाँतक सम्भव हो, खादीकी खपत उत्पादन-केन्द्रोके आसपास ही होनी चाहिए। हमे इसी लक्ष्यको प्राप्त करनेमे अपना सारा जोर लगाना चाहिए। हम भले ही नगरोकी माँगकी पूर्तिके लिए भी उत्पादन करे, लेकिन स्थानीय वाजारकी तरह उनपर कभी निर्भर न रहे। हमे सवसे पहले स्थानीय वाजारका अध्ययन करके उसकी माँगोकी पूर्ति करनी चाहिए। और चूँकि खादी-उत्पादनमें लगे सभी कारीगरो और जहाँ सम्भव हो वहाँ अखिल भारतीय चरखा सघ या अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघके तत्वावधानमें काम करनेवाले सभी कारीगरोसे भी खादीका उपयोग करनेकी अपेक्षा की जायेगी, इसलिए एक न्यूनतम माँग तो वरावर वनी ही रहेगी। सतीशवावू और अनन्तपुरवाले श्री जेठालाल खुद अपनी ओरसे हिसाव लगाकर इस नतीजेपर पहुँचे है कि स्वावलम्वी खादीके लिए यह जरूरी है कि जहाँ तीन गज खादी स्वय कारीगर पहने वहाँ दो गज वाहर विके। अगर यह हिसाव सही हो तो स्वावलम्वी खादीको लोकप्रिय वनानेके लिए स्थानीय वाजारोकी ओरसे काफी सहायता और सहयोग मिलना जरूरी है। चूँकि खादीके साथ-साथ दूसरे उद्योग भी चलेगे, इसलिए हो सकता है कि स्वावलम्वी खादीको खादीके अतिरिक्त दूसरे ग्रामोद्योगोसे भी सहारा मिले। स्वावलम्वी खादीकी कसौटी इस वातमे है कि उसे पहननेवालेको उसपर अपने श्रमके अलावा लगभग कुछ नही खर्च करना पडे। जवतक सारे देशमे खादीके लिए स्थानीय वाजार तैयार नही किये जाते और उसकी माँग सुस्थिर नही कर दी जाती तवतक स्वावलम्वी खादीका प्रसार नही हो सकता। सुस्थिर माँगके लिए यह जरूरी है कि हर उत्पादन-केन्द्रके लिए एक खास क्षेत्र निश्चित कर दिया जाये, जिससे न दोहरा काम करना पड़े और न एक ही सस्थासे जुडे कार्यकर्त्ताओके वीच आपसमे हानिकर स्पर्धाका प्रसग उपस्थित हो।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-११-१९३५

१८. घी

जिन्हें पुसा सकता है वे बडे शौकसे घी खाते है। करीब-करीब सभी मिठाइयाँ बनानेमे घी लगता है। लेकिन तब भी, या शायद इसी कारणसे, घी खाने-पीनेकी उन चीजोमे से है जिनमे ज्यादासे-ज्यादा, मिलावट होती है। बाजारमे जो घी बिकता है वह बेशक, अधिकाशमे मिलावटी ही होता है। यदि अधिकतर भागमे नही तो कुछमे तो ऐसी हानिकारक चर्बी जरूर मिली होती है जिसे निरामिषभोजियोको खाना ही नही चाहिए। बहुधा घीमें वनस्पति तेल मिलाये जाते है। इस मिलावटके तेलमे अगर चीकटपन न हो तो भी घीमे जो पोषक गुण है वह कम हो जाता है। जब चीकटा तेल मिलाया जाता है तो वह घी खाने लायक नही रहता।

मगनवाडीमे हम गायका ही घी प्राप्त करनेपर आग्रह रखते रहे है। इसमे कठिनाई बहुत है और पैसा भी ज्यादा खर्च होता है। हमने ४० पौड घीका २९ रुपया तक दिया है, और रेल-भाडा अलग।

यह तो अमीर आदमीके ही बूतेकी बात है। हम तो गरीब आदमियोके आहारके पैमानेके निकट पहुँचनेका जितना हमसे बनता है प्रयत्न कर रहे है, लेकिन उसके साथ सन्तुलित आहारके प्रमाणका खयाल भी रखते है। मैंने देखा कि डॉ० आइकराडने अपने सन्तुलित आहारके पैमानेमें घीको शामिल नही किया है।[1] डाक्टरी प्रमाण ले तो उसका आग्रह दूध या छाछपर जरूर है, लेकिन उसका यह आग्रह नही है कि मक्खन या घी हमारे नित्यके आहारका एक अनिवार्य अग है। अत हमने बतौर एक प्रयोगके घीको अपने आहारमे से निकाल दिया है। यहाँ सिर्फ वही लोग घी खाते है जो उसे अपने स्वास्थ्यके लिए जरूरी समझते है। घीके स्थानपर हम उसी प्रमाणमे शुद्ध ताजे वनस्पति तेल दे रहे है। हिन्दुस्तानके करोडो आदमियोने घीको कभी चखा भी नही है। खैर, यह बात याद रखनी चाहिए कि जो लोग दूध पीते है, उन्हे शुद्धसे-शुद्ध और अच्छी तरह हजम होनेवाले रूपमे कुछ घी तो मिल ही जाता है। स्वादकी बात छोड दें तो निरापद रूपसे कहा जा सकता है कि जबतक ग्रामसेवकोको कुछ दूध या दही या छाछ मिल सकता है तबतक उन्हे घी खानेकी जरूरत नही। अपने आहारमेसे बिना किसी भयके वे घीको निकाल सकते है।

इसके साथ ही धनिक लोगो तथा नगरपालिकाओ जैसी सार्वजनिक सस्थाओका यह फर्ज है कि वे ऐसा प्रबन्ध कर दे कि गरीब आदमियोको सस्ता और खालिस दूध तथा उससे बनी चीजे मिलने लगें। दूध अथवा दूसरी खानेकी चीजोमे मिलावट करना उतना ही मुश्किल हो जाना चाहिए जितना कठिन जाली सिक्के, या नोट

१. देखिए पृष्ठ २८।

या डाक-टिकट वनाना है, और जिस तरह डाक-टिकटोका एक निश्चित मूल्य है उसी तरह इन चीजोका भी एक मानकीकृत मूल्य निश्चित हो जाना चाहिए।

निजी लाभके लिए चलाई जानेवाली व्यापारिक पेढियोकी व्यवस्थामे जितनी निपुणतासे काम लिया जाता है अगर जनताके हितार्थ दुग्धशालाएँ और खाद्य वस्तुओकी दुकाने चलानेमे उससे आधी भी निपुणतासे काम लिया जाये, तो वे स्वावलम्वी सस्थाओकी तरह वडे मजेमे चल सकती है। कोई कारण नही कि वे स्वावलम्बी न हो सके, हाँ, यह बात अलग है कि ऐसी लोकहितैपिणी दुग्धशालाओ और भोजन-वस्तु-भण्डारोको उचित सूझ-वूझ और धनकी सहायता देनेकी लोगोमे इच्छा ही न हो। धनिकोकी परोपकारिता या दानशीलता तो सदाव्रत चलाने अर्थात् भिख-मगोकी दिन-दिन वढती हुई फौजको गलत तरीकेसे खिलाने-पिलानेके प्रयत्नमें ही चुक जाती है। ये भिखमगे समाजके लिए भार-रूप है, क्योकि ये बिना हाथ-पैर हिलाये मुफ्तमे खाते है। इसे यदि अपकारशीलता न भी कहा जाये तो भी परोपकारशीलताका दुरुपयोग तो यह है ही। हरएक कस्वे और गाँवमे आहारकी शुद्ध स्वास्थ्यकर चीजोका ठीक दामपर मिलना कठिन ही नही, वल्कि असम्भव हो रहा है। यह बात ग्राम-सेवकोके मार्गमे एक वहुत बड़ी वाधा है। ग्राम-सेवक जब अपने प्रयोगोके द्वारा यह पता लगानेका प्रयत्न करते है कि इस वाधाके बावजूद उपयुक्त आहार प्राप्त करनेके क्या-क्या देशी साधन है, तव वे अपना समय कुछ यो ही नष्ट नही करते।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २-११-१९३५

९९. टिप्पणियाँ

मुलाकातियोंसे क्षमा-प्रार्थना

मगनवाडीपर जितना भार पड रहा है उससे अधिक भार सहनेकी उसमे तनिक भी क्षमता नही है। यहाँ अधिकसे-अधिक १२ अतिथियोके रहनेका स्थान है। वह मुख्यत' अ० भा० ग्रा० उ० स० बोर्डके सदस्यों और अध्यक्ष अथवा मन्त्री द्वारा सलाह-मशविरेके लिए या अन्य प्रयोजनोसे आमन्त्रित लोगोके लिए है। लेकिन मै जहाँ भी रहता हूँ, वहाँ लोग सभी जगहोसे खिचते चले आते है। मैने ऐसे लोगोसे, यथासम्भव, यही कहनेका नियम वना लिया है कि मेरे पास जितनी जगह और जो-कुछ है, उसीमें वे हिस्सा वँटायें। नतीजा यह हुआ है कि मेरा निवास-स्थान एक धर्मशाला वन गया है, जिसमे खानगी ढगकी कोई जगह ही नही है। खुश्क मौसममे तो इससे कोई कठिनाई नही होती। लोग मेरे और बोर्डके कार्यालयवाले कमरोकी विस्तृत और चौरस छतपर सो जाते है। दिनमे तो यहाँ-वहाँ लेट-बैठकर किसी तरह काम चला ही लेते है। इस तरह रहते हुए मेरे लिए यह सम्भव नही है कि मै अनगिनत मुलाकातियोके लिए आरामसे रहने लायक कमरोकी व्यवस्था कर सकूँ।

फिर, वे पूर्व-सूचना दिये बिना और पहलेसे समय तय किये बिना चले आते है। इसपरसे इस बातकी ओर ध्यान दीजिए कि हम बिना नौकरोके ही अपना काम चलाते है। खाना बनाना, धुलाई, सफाई, सब काम हम खुद करते है। इसलिए जब मुलाकाती लोग पूर्व-सूचना दिये बिना आ जाते है — और वे वास्तवमें इसी तरह आते है — तो मगनवाडीके पास जो-कुछ साधन-सामग्री है उसमें उन्हे खपा पाना सचमुच बहुत भारी पडता है। मुझे उनके भोजन और रहनेकी व्यवस्था करनेसे इनकार करना पड़ता है। गत रात जितने लोगोके आश्रममे रहनेकी बात मालूम होती है, दिनमे उतने ही लोगोके लिए रसोई तैयार की जाती है। यह सब लोकाचारके विपरीत है। किसी भी भारतीय गृहस्थके घर सयोगसे आ जानेवाला आदमी सम्मानित अतिथिकी तरह सत्कार पाता है और घरमे जो-कुछ तैयार किया जाता है वही घरवालोके साथ वह भी खा लेता है। लेकिन मगनवाडी किसी गृहस्थका घर नही है। यह तो अधपेट रहकर जीनेवाले करोडो बेकार या अर्धबेकार लोगोकी ही सेवा करनेके लिए स्थापित किया गया एक न्यास है। हममे जैसी और जितनी समझ है उसके मुताबिक हम एक-एक पैसा बचानेके लिए पूरी किफायतशारीसे चलनेकी कोशिश कर रहे है। इसलिए विविध व्यजनोसे युक्त ऐसी पगत लगाना हमारा काम नही है जिसमें चाहे जो आकर शामिल हो जाये।

इसलिए रूखे या कजूस स्वभावका माने जानेका खतरा उठाकर भी मुझे बहुत सख्तीसे काम लेना पड़ता है और जो लोग समय लिये बिना आ जाते है उन्हे निकाल देना पड़ता है। इसलिए न चाहते हुए भी मैंने जिनका आतिथ्य करनेसे इनकार कर दिया वे मुझसे सहानुभूति रखते हुए मुझे क्षमा करेगे। मगनवाडीमे हम जिस स्थितिमे रहते हैं, भविष्यमे यहाँ आनेवाले लोग उसका ध्यान रखें। जो लोग पूर्व-सूचनाके बिना ही आये उनकी सुविधाके लिए मैं यह बता दूं कि मगनवाडीसे कुछ ही दूर एक अच्छी धर्मशाला है, जिसमे काफी अतिथियोके लिए गुजाइश है। थोड़ेसे लोगोके लिए उसमें खानगी तौरपर भी रहनेकी व्यवस्था है। यहाँ इतना और कह देना चाहूँगा कि भविष्यमे जो लोग मुझसे मिलने आना चाहे वह मुलाकातका समय माँगनेमें मुझपर तनिक दया करे। यहाँ दिन-ब-दिन जो काम करने पडते है, उन्हीमें मुझे अपनी पूरी शक्ति खपा देनी पड़ती है। इसलिए लोग मुझसे मुलाकातका समय माँगें भी तो उन्ही कार्योके हकमें माँगे जिनमे आज मैं सब-कुछ छोडकर लगा हुआ हूँ।

लाजपतराय सप्ताह

स्वर्गीय लाला लाजपतराय द्वारा स्थापित अखिल भारतीय अछूतोद्धार समितिने पजाब-केसरीकी पुण्य-स्मृतिमे ११ नवम्बरसे १७ नवम्बरतक हरिजन-सप्ताह मनानेका निश्चय किया है। स्थानीय समितियाँ जो कार्यक्रम निश्चित करेगी वे तो होगे ही, उनके अलावा अखिल भारतीय अछूतोद्धार समितिने हरिजन-कार्यमें लगे भारत-भरके सभी कार्यकर्त्ताओंके पास एक परिपत्र भेजकर उनसे इस सप्ताहके कार्यक्रममें निम्न बाते शामिल करनेको कहा है :

११ नवम्बर: प्रभातफेरी करते हुए ऐसे गीत गाना जिनमें हरिजनोंके साथ अपने भाई-बहनोंकी तरह व्यवहार करनेकी आवश्यकता समझाई गई हो और हरिजन-कार्यमें लालाजीके योगदानका वर्णन किया गया हो।

१२ नवम्बर: पुरोहित और पण्डित हरिजन हल्कोंमें 'रामायण', 'गीता', 'भागवत' आदि धर्मग्रन्थोंसे कथाएँ सुनायें। इन कथाओंको सुननेके लिए अन्य हिन्दुओंको भी आमन्त्रित किया जाये।

१३ नवम्बर: हरिजन बस्तियों या मन्दिरोंमें पंचायतोंकी बैठकें की जायें जिनमें सभी हरिजन-समूहोंको बुलाया जाये। इनमें व्याख्यान देकर स्वयं हरिजनोंके बीच अस्पृश्यता मिटाने और उनके बीच मौजूद अन्य बुराइयोंको दूर करनेकी जरूरत समझाई जाये।

१४ नवम्बर: सवर्ण स्त्रियोंसे हरिजन-बस्तियोंमें जाकर अपनी हरिजन बहनोंसे मिलने और उनके साथ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करनेको कहा जाये।

१५ नवम्बर: बच्चोंका मेला। उस दिन हरिजन माताओंको अपने बच्चोंके साथ मन्दिरों या धर्मशालाओंमें बुलाया जाये, जहाँ सवर्ण स्त्रियाँ उनसे मिलें और बच्चोंको सफाई तथा अच्छे स्वास्थ्यके लिए उपहार और पुरस्कार दें।

१६ नवम्बर: खेल-कूद। उसमें सवर्ण हिन्दू विद्यार्थी हरिजन विद्यार्थियोंसे भाई-भाईकी तरह मिलें और उनके साथ देशी खेल खेलें तथा अन्तमें कुछ हलका जलपान कराया जाये।

मित्रोंके पास उपर्युक्त परिपत्र श्री अलगूराय शास्त्रीने भेजा है। अब उन्होंने मुझे सूचित किया है कि ऊपर कार्यक्रमकी जो रूपरेखा बताई गई है उसमें परिवर्तन भी किये जा सकते हैं। इसलिए प्रधान कार्यालयसे भेजे जानेवाले परिवर्तनोंके सुझावके लिए पाठक तैयार रहें। याद रखनेकी असल बात यह है कि यह सप्ताह इस ढंगसे मनाना है जो इस महान कार्य और भारतके उस प्रसिद्ध देशभक्त और सुधारककी स्मृतिके उपयुक्त होना चाहिए। कार्यकर्त्ताओं और समितियोंको इसको सफल बनानेमें सोत्साह जुट जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-११-१९३५

१००. दो प्रश्न

हरिजन-आन्दोलनके एक कार्यकर्त्ताने मुझे दो प्रश्न लिख भेजे है। उनमे से पहला यह है[1]:

इसमे धर्म-संकटका तो सवाल ही नही उठता। जब हम किसी भंगी हरिजनको अपना कुटुम्बी बनाकर रखे, तो पहलेसे ही उसे अपने घरके सब नियम बता देने चाहिए। उससे यह साफ-साफ कह देना चाहिए कि हमारे यहाँ अस्पृश्यता माननेवाले मेहमान भी आते है, और उनके दिलको न दुखानेके लिए हम खुद ही उन्हे पानी वगैरह देते है या दूसरे नौकरोसे दिला देते है। जो भंगी नौकर हमारी इस आदतको जानता है, उसे दु ख माननेका कोई कारण नही रह जाता। लेकिन उक्त प्रश्नमे यह अध्याहार है कि इस बर्तावसे भंगीके सामने एक नई समस्या खडी हो जाती है। इसलिए ऐसे मौको पर हम अपने मेहमान और भंगी सेवक दोनोके सामने अपनी आपत्तिको खोल दें, तो न तो किसीको धोखा ही होगा और न किसी प्रकारका धर्म-सकट ही आयेगा।

दूसरा प्रश्न यह है[2]

यह प्रश्न अगर किसी बीती हुई घटनाके बारेमें है, तो बिलकुल निरर्थक है। मैं भविष्यके बारेमे ही कह सकता हूँ। जब हम सब प्रकारके हरिजनोको भोजनके लिए बुलायें, तो उन्हे पहलेसे ही बता देना चाहिए कि भोजन बनाने और परोसने-वाले भंगी हरिजन ही होगे। अगर हम यह बात साफ नही करते तो सरासर धोखा देना है। हमे यह बात कभी न भूलनी चाहिए कि अस्पृश्यता रूपी जहर हरिजनोमें भी फैला हुआ है।

हरिजनसेवक, २-११-१९३५

१. यहाँ नहीं दिया गया है। कार्यकर्त्ताने पूछा था कि क्या मैं अपने हरिजन नौकरसे अपने मेहमानोंकी सेवा करा सकता हूँ।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें पूछा गया था कि क्या भोजन करनेवालोंको रसोइयों आदि की जाति के बारेमें पहले से ही बता देना चाहिए।

१०१. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

वर्धा
२ नवम्बर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

साहित्य परिषद्के सिलसिलेमें मैं जब वहाँ जाऊँ, यदि उस समय हरिजन कोषके लिए चन्दा उगाहनेकी व्यवस्था की जाये तो कैसा रहेगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४००४) से। सी० डब्ल्यू० १३१ से भी; सौजन्य: परीक्षितलाल एल० मजमूदार

१०२. पत्र : माणेकलाल और राधा गांधीको

२ नवम्बर, १९३५

चि० माणेकलाल तथा राधा,

तुम दोनोंने नव-वर्षके उपलक्ष्य पर जो पत्र भेजे, मुझे मिले और उन्हें पढ़कर आनन्द हुआ। तुम्हारा यह वर्ष सुखमय हो।

बा यहाँ है। देवदास अभी ही बीमारीसे उठा है। अब आराम करनेके लिए यहाँ आयेगा। रामदास बम्बईमें है किन्तु वहाँ कुछ काम नहीं कर रहा है। अभीतक वह ठीक-ठिकाने जम गया है ऐसा नहीं कहा जा सकता। मनु और कान्ति यहाँ हैं। मनुकी सगाई किशोरलालभाईके भतीजे सुरेन्द्रके साथ कर दी है।

बापूके आशीर्वाद[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३) से।

१. पत्रमें इसके बाद किसी के लिए यह टिप्पणी लिखी हुई है: "पढ़कर खुशी हुई"। दिनांक २ नवम्बरको सोमवार होनेके कारण गांधीजीका मौन-दिवस था।

१०३. एक भ्रम

मेरे कागज-पत्रोंमें निम्नलिखित प्रश्न बहुत दिनोंसे पड़ा हुआ है :

> आपको क्या ऐसा नहीं लगता है कि जबतक राजनीतिक सत्ता हाथमें नहीं होगी, तबतक कोई महान् परिवर्तन नहीं हो सकता? फिर हमें मौजूदा आर्थिक रचनाके सवालको भी हल करना है। राजनीतिक नवरचनाके बिना अन्य किसी भी क्षेत्रमें कोई नवरचना सम्भव नहीं है। इसलिए हरी पत्तियाँ, साग-भाजी, पालिश किया हुआ और हाथ-कुटा चावल आदि यह सारी चर्चा निरर्थक मालूम होती है।

बहुत-सी चीजोंके बारेमें, उन्हें न करनेके समर्थनमें, ऊपर जैसी दलील मैंने अक्सर सुनी है। कुछ काम तो जरूर राजनीतिक सत्ताके बिना नहीं होते, पर असंख्य कामोंके साथ राजनीतिक सत्ताका कुछ भी वास्ता नहीं होता। इसलिए थोरो-जैसा विचारक लिख गया है कि "वही राजसत्ता अच्छी गिनी जाती है, जिसका उपयोग कमसे-कम होता है"। मतलब यह कि जब राज्यका तन्त्र पूरी तरह जनताके हाथमें आये तब लोगोंके जीवनमें सरकारका हस्तक्षेप बढ़नेके बजाय घटना चाहिए। इसी चीजको दूसरे शब्दोंमें यों कह सकते हैं कि जिस राष्ट्रके अधिकांश मनुष्य बाह्य अंकुशके बिना अपने काम व्यवस्थित रूपसे अच्छी तरह चलाते हैं वही राष्ट्र लोकतान्त्रिक शासनके योग्य होता है। जहाँ यह स्थिति नहीं है, वहाँका तन्त्र लोकतन्त्र कहा भले जाये, वह वस्तुतः लोकतन्त्र नहीं होता।

अपने विचारके ऊपर तो किसीका अंकुश होता नहीं। लेकिन सुधारक आजकल इस बातपर जोर दे रहे हैं कि पहले हमें अपने विचारोंका शोधन करना चाहिए। पर हम कितने आदमी विचारोंमें सुधार कर रहे हैं? शुद्ध विचारोंमें बहुत बड़ी शक्ति है, ऐसा आजके वैज्ञानिक स्वीकार करते हैं, और इसीसे यह कहा जाता है कि मनुष्य जैसे विचार करता है वैसा हो जाता है। हत्याका नित्य चिन्तन करनेवाला हत्यारा हो जायेगा। व्यभिचारका चिन्तन करनेवाला व्यभिचारी हो जायेगा, सत्यका चिन्तन करनेवाला सत्यमय, अहिंसाका चिन्तन करनेवाला अहिंसामय और भगवानका चिन्तन करनेवाला भगवत्स्वरूप हो जायेगा। इस प्रकार यदि इस कल्पित क्षेत्रमें राजसत्ताकी आवश्यकता नहीं, तो हमें सहज ही यह समझ लेना चाहिए कि हमारी अनेक प्रवृत्तियोंका राजसत्तासे कोई सरोकार नहीं होता। उपर्युक्त प्रश्न उठानेवाले सज्जनको, और जिनके मनमें ऐसा प्रश्न उठता है उन्हें मेरी यह सलाह है कि वे अपने लिए एक ही दिनके तमाम कार्योंको लिख डालें। ऐसा करनेपर वे देखेंगे

कि उनके अधिकाश कार्योमे राजसत्ताका जरा भी हिस्सा नही है। मनुष्य पराधीन अपने अपराधसे होता है, और स्वाधीन भी वह अपनी इच्छासे ही हो सकता है।

प्रश्नकर्त्ताने महान् परिवर्तनका प्रश्न खडा करके अपने मार्गको अपने ही हाथो दुर्गम बना दिया है। जो छोटा परिवर्तन नही कर सकता, वह भारी परिवर्तन करनेकी कला कभी हस्तगत नही कर सकता। जो कार्य हमारी शक्तिकी सीमाके अन्दर है उन्हे करनेवाला अपनी शक्ति नित्य बढाता जायेगा, और अन्तमे यह होगा कि जो परिवर्तन उसे बडा मालूम होता था वह छोटा-सा लगने लगेगा। जो मनुष्य इस प्रकार अपने जीवनकी रचना करता है उसका जीवन नैसर्गिक या स्वाभाविक बन जायेगा, जो ऐसा नही होगा वह कृत्रिम होगा। राजनीतिक हेतु सिद्ध करनेके लिए उस हेतुको भूल जानेकी आवश्यकता है। सभी बातोमे इस हेतुकी सिद्धि-असिद्धिकी चर्चा समस्याको अकारण उलझाना है। जो चीज हमारी पीठ पर लदी हुई है उसका विचार क्यो करे? मृत्यु जबतक आ नही जाती तबतक किसलिए मरे?

इसलिए मुझे तो हरी पत्तियाँ, साग-भाजी, पालिश किया हुआ और हाथकुटा चावल आदिमे बहुत रस आता है। लोगोके पाखाने किस तरह साफ रखे जाये, लोग धरती माताको जो सवेरे-सवेरे गन्दा करना शुरू कर देते है, उस घोर पापसे उन्हे किस तरह बचाया जाये, इस विषयमे विचार करना, इस पापके निवारणका उपाय ढूँढना मुझे तो बहुत ही प्रिय लगता है। लोगोको लगता है कि इन प्रश्नोपर विचार करनेका कोई राजनीतिक महत्त्व नही है, महत्त्व तो सरकारकी आर्थिक नीतिपर विचार करनेका ही है। मै ऐसा नही सोचता और न मुझे यही स्पष्ट है कि लोग ऐसा क्यो सोचते है। मै जो काम कर रहा हूँ उसे चाहे तो करोडो मनुष्य कर सकते है; और सरकारी नीतिपर विचार करनेका काम करोडोको आता ही नही, उसे वे समझते ही नही। यह काम तो कुछेक लोगोको ही करना चाहिए, ऐसा मै मानता हूँ। उसे करनेकी योग्यता जिसमे हो वह भले ही करे। पर ऐसे नेता महान् परिवर्तन करा सके तबतक मेरे जैसे करोडो मनुष्य अपनी सारी योग्यताका उपयोग जनताके हितार्थ क्यो न करे? वे क्यो अपने निर्बल शरीरको सबल न बनाये? क्यो न अपने आँगनकी गन्दगी दूर करे? वे व्याधिग्रस्त क्यो बने रहे, और क्यो कुछ भी सेवा करनेके अयोग्य रहे?

मुझे भय है कि प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नके पीछे आलस है, निराशा है, और हमारे आसपास आज जो शैथिल्य दिखाई दे रहा है वह उसीके प्रवाहमे बह गया है। मेरा यह दावा है कि देशकी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी लगन मुझमे कम नही। मै काम करनेसे थका नही हूँ। पर अनेक वर्षोके अनुभवसे मैने यह देखा है कि जिन प्रवृत्तियोमे मै लगा हुआ हूँ उनमे बराबर राष्ट्रकी स्वतन्त्रता हासिल करनेके उपाय निहित है, उन्हीमे से शुद्ध स्वतन्त्रताकी मूर्ति खडी होगी। इसीलिए इस महायज्ञमे सभीको — स्त्रियो, पुरुषो, बालको, सर्व वर्णो और सब जातियोको मै निमन्त्रण दे रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३-११-१९३५

१०४. गोसेवाके कुछ तरीके

स्वयको गोसेवक कहनेवाले भाई पुरुषोत्तम नरहर जोशी निम्नानुसार लिखते हैं :[१]

यह पत्र विचार करने लायक है। उसमें जो सुझाव दिये गये है उनपर तो कोई सस्था ही अमल कर सकती है। कुछ सुझावों पर सरकार द्वारा ही अमल कराया जा सकता है। किन्तु 'हरिजनबन्धु' का प्रत्येक पाठक एक बातपर अमल कर सकता है। उसे केवल गायके दूध और घीका ही प्रयोग करना चाहिए। भैसके दूधकी अपेक्षा गायका दूध ज्यादा अच्छा और ज्यादा पुष्टिकर है। बालकोको तो गायका दूध ही देना चाहिए। गायके दूधका घी जल्दी हजम होता है। इन दोनो बातोके बारेमें डाक्टरो और वैद्योकी राय 'हरिजनबन्धु' मे प्रकाशित हो चुकी है। इसके बावजूद बहुत-से लोग स्वादकी वजहसे भैसका दूध-घी ही लेते हैं। कुछ लोग गायका दूध पीनेको तो तैयार हैं, किन्तु उसका घी खानेको राजी नही हैं। उनका कहना है कि घी तो भैसके दूधका ही अच्छा होता है। देखनेमें सफेद चिट्टा और ज्यादा घना होता है। जिन्हे भैसका घी देखने-खानेकी आदत पड़ गई है, उनमें से बहुत-से लोग गाय अथवा देशकी खातिर उसे छोडनेको तैयार नही होते, हालांकि भैसके घीकी सफेदी और गाढापन ही उसके विरुद्ध एक प्रमाण है। गायो और भैसोको साथ-साथ बचाये रखना असम्भव जान पडता है। यदि भैसे रहेगी तो गायें मर ही जायेंगी। भैसे तो आज भी मर रही हैं। हम जान-बूझकर पाडोका वध होने दे रहे है, इसीसे भैसे बची हुई हैं। इसलिए यदि हम लापरवाही करेंगे तो अपने ही हाथो गाय और भैस दोनोका नाश करेंगे, और हम लोग उन देशोसे आनेवाले दूध-मक्खनपर ही गुजर करनेवाले बन जायेंगे जहाँ प्रतिदिन हजारो गायें काटी जाती है तथा जहाँ किसी भी गायको बूढी नही होने दिया जाता। जो पाठक इस भयानक परिस्थितिसे बचनेके लिए और कुछ नही तो मैंने जो सुझाव दिया है यदि सिर्फ उतना ही आग्रह रखेंगे तो वे गोरक्षाके मामलेमे कुछ हदतक अपना योगदान देंगे।

भाई जोशीने गोसेवा सघका उल्लेख किया है। यह सघ खत्म नही हो गया है, अभीतक उसके कुछ सदस्य बने हुए हैं। यह कहा जा सकता है कि सघके वर्तमान रूपमें उसकी प्रवृत्तियाँ बहुत ही सीमित है, किन्तु उसके बावजूद यह भी कहा जा सकता है कि सघ चल रहा है। छुटपुट गोसेवक तैयार हो रहे हैं। उसकी देख-रेखमे एक दुग्धालय चल रहा है। दूसरेको उससे प्रेरणा मिलती है। इस समय मैं उसका कोई उल्लेखनीय परिणाम नही बता सकता। ऐसे प्रयत्न किये जा रहे हैं कि उसके परिणाम प्रत्यक्ष देखे जा सके।

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है।

इसमे सन्देह नही कि भाई जोशीने जो सुझाव दिये है यदि रियासते उनके अनुसार काम करने लगे तो बहुत काम हो सकता है। यदि सिर्फ काठियावाड़की रियासतोमे भी बड़े पैमानेपर सामूहिक रूपसे काम हो तो वह सफल हुए बिना नही रहेगा। और एक बार इसकी सफलता सिद्ध हो जानेपर यह चीज अन्य भागोमे फैले बिना नही रहेगी। भाई जोशीने इस बातका उल्लेख नही किया कि गायोको बचानेमे चर्मालय एक मुख्य साधन है। और इस बातका प्रतिपादन 'हरिजनबन्धु' मे बहुत बार किया जा चुका है, इसलिए मैने उसका यहाँ पुन उल्लेख नही किया। किन्तु प्रत्येक गोसेवकको यह बात ध्यानमे तो रखनी ही चाहिए।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३-११-१९३५

१०५. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

४ नवम्बर, १९३५

प्रिय मैथ्यू,

तुम्हारा पत्र मिला। मैने तो तुम्हारा परित्याग कभी नही किया। तुम्हारे साथ उससे अलग ढंगसे कभी पेश नही आया जैसा अपने सगे बेटे या सगी बहनके साथ पेश आया हूँ। मै फिर तुम्हे यही सलाह देता हूँ कि अगर और कही तुम ठीक ढगसे खप सको तो यहाँ मत आओ। जबतक मुझे यह भरोसा नही हो जायेगा कि तुम अपने हाथ-पैरसे सारे दिन सहर्ष श्रम कर सकते हो और पूरी तत्परताके साथ अपनी हिन्दी ठीक कर लोगे तथा तुमने मेरे माध्यमसे अपने-आपको रचनात्मक-कार्यके लिए अर्पित कर दिया है और तुम्हारी शुद्धतामे सन्देह करनेका कोई कारण नही रह गया है तबतक मै तुम्हारे माता-पिताकी परवरिशकी जिम्मेदारी लेनेको कभी भी तैयार नही होऊँगा।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य . नारायण देसाई

१०६. पत्र : एस० दत्तको

४ नवम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

श्रीयुत कृष्णदासको मैं भलीभाँति जानता हूँ। यदि आप अपनी कन्याका हाथ किसी ऐसे व्यक्तिके हाथमें देना चाहें जो चरित्रवान् हो, दृढ और सच्चा हो, भले ही उसकी उम्र ४० से ऊपर हो और उसके पास कोई साधन-सम्पत्ति न हो और न शरीरसे ही बलिष्ठ हो, तो कृष्णदास सर्वथा उपयुक्त पात्र होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

एस० दत्त
मार्फत प्रो० बोस
बालीगंज, कलकत्ता

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१०७. पत्र : तारा ना० मशरूवालाको

वर्धा
४ नवम्बर, १९३५

चि० तारा,

तेरा पत्र मुझे बहुत ही अच्छा लगा। ७ तारीखको मैं तेरी यहाँ पहुँचनेकी राह देखूंगा। तेरे दृष्टिकोणसे मैं पूरी तरह सहमत हूँ। मैं किसी तरह भी तुझे ललचाना नहीं चाहता। फिलहाल तो मैं तेरे स्वास्थ्यको सुधारनेमें जितनी सहायता दे सकता हूँ उतनी सहायता देना चाहता हूँ। नानाभाई[1] को मैं अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती ताराबहन
मार्फत नानाभाई मशरूवाला
अकोला, बरार

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६९७) से। सी० डब्ल्यू० ४३४२ से भी; सौजन्य : नानाभाई इ० मशरूवाला

१. ताराबहन के पिता।

१०८. पत्र : निर्मलकुमार बोसको

वर्धा

६ नवम्बर, १९३५

प्रिय निर्मल बाबू,

गनी[1] ने मुझे बताया है कि उसके हिसाबमे दस रुपये कम पड रहे है जिसको आप अपनी जेबसे भरपाई करके यह घाटा पूरा कर देना चाहते है। ऐसी बात तो एक क्षणके लिए भी नही सोचनी चाहिए। ऐसे मौके तो उठते ही रहेगे, खास तौरपर जहाँ गनी की बात है। वह तो सुख-सुविधाओकी गोदमे पला है और परिवारका लाड़ला, सिरचढा बेटा है। इस कारण इस घाटेपर आप बिलकुल चिन्ता न करे। क्या इतना काफी नही है कि आपने उसपर अपना अमूल्य समय लगाया और उसकी इतनी अधिक देखभाल कर रहे है?

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

श्रीयुत निर्मलकुमार बोस
६/आई०ए० ब्रिटिश इडियन स्ट्रीट
कलकत्ता

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५२१-ए) से।

१०९. पत्र : एस० पी० कामतको

६ नवम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

मुझे मालूम है कि कुछ खादी भण्डार अ० भा० च० स० की अनुमतिसे नही तो उसका इशारा पाकर अपनी खादी मिलोमे रँगवाते और ब्लीच करवाते है। उनके मामलेमें मैं एकदम ही दस्तन्दाजी नही करना चाहता, लेकिन आपकी आपत्ति बिलकुल वाजिब है। खादीको मिलोमे रँगवाने और ब्लीच करवानेका चलन

१. अब्दुल गफ्फार खाँ के पुत्र अब्दुल गनी।

कई वर्षोंसे है, सो मैं देखूंगा कि इस बातको ध्यानमें रखते हुए क्या-कुछ करना सम्भव है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एस० पी० कामत
अकोला (उत्तर कनारा जिला)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६८०) से।

११०. पत्र : एस० वी० कौजलगीको

६ नवम्बर, १९३५

प्रिय श्रीनिवासराव,

बीजापुरमें हमारी मुलाकात हुई थी, वह तो मुझे अच्छी तरह याद है; लेकिन आपके किसी पत्रकी याद मुझे नहीं है। मेरे सभी 'सचिव' सचिव नहीं, बल्कि [उत्साही] नौजवान थे जो मेरा भार बँटानेकी भरसक कोशिश करते थे। महादेव बेलगाँव जेलमें था। लेकिन आपके पत्रों और आपके सहयोगकी मैं कितनी कद्र करता हूँ, यह जाहिर करनेके लिए आपके पत्र[1] का उत्तर लौटती डाकसे दे रहा हूँ।

१. एस० वी० कौजलगीने १ नवम्बरको लिखे अपने पत्रमें जो प्रश्न पूछे थे वे संक्षेपमें इस प्रकार थे: (१) रावण जब सीताका हरण करके लंका ले गया था तब राम ने बन्धु-बान्धवों सहित उसका नाश करने के बजाय सत्याग्रह क्यों नहीं किया? (२) 'गीता' का उपदेश देनेवाले श्रीकृष्ण ने कहा है:

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वापि स इमांल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते॥ १८/१७

इतना ही नहीं, स्वयं निरस्त्र रहकर भी अपने बुद्धि-कौशल से उन्होंने कौरवोंको पराजित करनेमें पाण्डवों की सहायता की। पाण्डवोंने अपने जन्म-सिद्ध अधिकारोंको प्राप्त करनेके लिए यह युद्ध किया था जिसमें लाखों योद्धा खेत रहे थे। इससे क्या यह प्रकट नहीं होता कि श्रीकृष्ण बुराईके सुधारके बजाय उसके विनाशमें विश्वास रखते थे? (३) जब विश्वामित्र वशिष्ठसे कामधेनु छीनने आये तो कामधेनुने वशिष्ठसे सुरक्षाकी माँग की। इसपर वशिष्ठने कहा कि मैंने तो कभी क्रुद्ध न होने की प्रतिज्ञा ले रखी है, लेकिन तुम स्वयं अपनी सुरक्षाकी व्यवस्था कर सकती हो। इसपर कामधेनुके प्रत्येक रोमसे एक-एक सशस्त्र सैनिक उद्भूत हुआ और उस विशाल वाहिनीने काफी नरसंहारके बाद विश्वामित्रकी सेनाको परास्त किया। वशिष्ठने विश्वामित्रको कामधेनु ले क्यों नहीं जाने दिया? उन्होंने शान्तिपूर्वक उसे अपने पास रखनेके लिए सत्याग्रह क्यों नहीं किया? (४) कहते हैं, बुद्धका देहान्त किसीभक्त द्वारा परोसे मांसको ग्रहण करनेसे हुआ। उनके सभी अनुयायी मांसाहार करते हैं। अहिंसासे इसका मेल कैसे बैठता है? (५) क्या इतिहासमें कोई ऐसा दृष्टान्त है जहाँ न सुधर सकनेवाली बुराई को अच्छाई के द्वारा शान्तिपूर्ण तरीकेसे जीता गया हो?

१. मेरी समझमें राम और रावणकी कथा एक अन्योक्ति है। 'अनासक्तियोग'की अपनी प्रस्तावना[1] मे मैंने स्पष्ट किया है कि 'अवतार' से मै क्या समझता हूँ। दशशीश रावणके भौतिक अस्त्रोके विरुद्ध रामने जिसका प्रयोग किया वह आध्यात्मिक अस्त्र, अर्थात् सत्याग्रह था। तुलसी-कृत 'रामायण' में इस व्याख्याकी प्रबल पुष्टि करनेवाले उद्धरण है।

२ आपने 'भगवद्गीता' से जो श्लोक उद्धृत किया है, वह मेरे विचारसे, 'गीता' की सम्पूर्ण शिक्षाकी मैने जो व्याख्या की है, उसीको बल देता है। मेरी वह व्याख्या यह है कि जब मनुष्य अपना अह त्याग देता है और उसकी बुद्धि निर्मल बनी रहती है तब वह जीव-हत्या भी करे तो उससे कोई अन्तर नही पड़ता। दूसरे शब्दोमे, ऐसा व्यक्ति हत्या कर ही नही सकता।

३. कामधेनुकी कथाकी मेरी व्याख्या यह है कि विश्वामित्र उतने क्रुद्ध होकर भी कामधेनुके एक रोम तकका स्पर्श न कर पाये। यह कथा 'अनाथोका नाथ ईश्वर' वाली प्रसिद्ध कहावतकी सत्यता सिद्ध करती है।

४. दूब और वनस्पतिमें भी तो जीवन है, किन्तु उनका भक्षण अहिंसाके आचरणसे असगत नही माना जाता। इसी प्रकार आदतन मासाहार करना भी अहिंसाके पालनके विरुद्ध नही है। मैंने अन्यत्र समझाया है कि देहधारी द्वारा सम्पूर्ण अहिंसाका पालन सर्वथा असम्भव है।

५ शायद आप प्रश्न ठीकसे प्रस्तुत नही कर पाये है। बुराईको परास्त करनेकी तो कोई बात ही नही हो सकती। बुराईमे बुराईके विकार-गुण तो सदा रहेगे ही, लेकिन हम प्रयत्न बराबर इस बातका करते है कि हम अपने साथियोको उसी प्रकार इस बातके लिए प्रेरित करे कि वे स्वयको और हमे भी बुराईसे मुक्त करनेका प्रयत्न करें, जिस प्रकार हम स्वयं इसके लिए यत्नशील रहते है। क्या इतिहास अत्यन्त बुरी प्रवृत्तियोवाले ऐसे स्त्री-पुरुषोके उदाहरणोसे भरा हुआ नही है जिन्होने अपनी उच्चतर भावनाओके जगाये जानेपर अपने-आपको सुधार लिया है? मैंने बात विस्तारसे नही समझाई है, क्योकि मै मानता हूँ कि आप 'अनासक्तियोग' की मेरी प्रस्तावनाकी कोई प्रति कहीसे प्राप्त करके पढ लेगे। मराठीमे इसका अनुवाद हुआ है — मेरा खयाल है, कन्नड़मे भी। अग्रेजी अनुवाद 'यग इडिया' मे प्रकाशित हुआ था, लेकिन जहाँतक मुझे याद है, पुस्तक रूपमे वह अबतक प्रकाशित नही हुआ है।

आशा है आप स्वस्थ होगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एस० वी० कौजलगी
वकील, बीजापुर

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५६९) से।

१. देखिए खण्ड ४१।

१११. पत्र : हीरालाल शर्माको

मगनवाडी, वर्धा
७ नवम्बर, १९३५

चि० शर्मा,

तुम्हारा खत बहुत इन्तेजारीके बाद मिला। ताज्जुबीकी बाते है कि मेरी तरफसे एक भी खत अमेरिकामे तुमको नही मिला है। कमसे-कम तो तीन खत मिलने चाहिये थे ही। मेरे पास पोस्ट करनेकी तारीख है, इस खतके अन्तमे तारीख दी जायेगी, क्योकि रोजनिशीमें से ढूढना होगा। लेकिन मै लिखु या न लिखु, तुम्हारे तो हर सप्ताह लिखना ही था, ऐसा हमारा करार था। यहासे मुझको कुछ ज्यादा लिखनेका भी नही हो सकता है, लेकिन तुम्हारे तो हमेशा नई नई बात लिखनेको होनी ही चाहिये। खैर, जो हुआ सो हुआ, अब तो प्रति-सप्ताह तुम्हारे खतकी इन्तेजारीमे रहूगा। मैंने तुम्हारे खत द्रौपदीको और रामदासको भेजनेका सिलसिला भी जारी कर दिया है। रामदासने खसुस मागा था। द्रौपदीको ऐसे ही भेजनेका आरम्भ कर दिया था। इसका एक नतीजा यह हुआ है कि द्रौपदी उसके उत्तरमे कुछ-न-कुछ भेजनेके लिए मजबूर हो जाती है। अन्यथा वह कहासे मुझको लिखनेवाली थी?

अमेरिकामें जल्दीसे स्वावलंबी बन जाओगे, ऐसी तो मै कोई आशा नही रखता था, लेकिन ऐसा जरूर माना था कि कम खर्चमें रहना मुश्किल नही होगा। कैसे भी हो, अब तो अमेरिकामे हो; जबतक तुमको सन्तोष न मिले तबतक रहो। जब ऐसी प्रतीत हो जाय कि तुमको नैसर्गिक दृष्टिसे कुछ भी अधिक नही मिलनेवाला है तब ही वहांसे छूटना। जो अनुभव अमेरिकामे होते है वही करीब-करीब इग्लैडमे भी होनेवाले है। वहा भी नैसर्गिककी दृष्टिमे ज्यादा नही पाओगे, लेकिन तुमको पश्चिममे जाना आवश्यक था ही। कई प्रकारके भ्रम रहते है, जो अनुभव विना दूर होते ही नहीं। इस दृष्टिसे तुम्हारा जाना बेकार नहीं समझता हू।

तुमने शेल्टनका स्थान नही देखा होगा तो अवश्य देखो। गोबिल[1] उसकी बड़ी तारीफ करता था। उसकी हेल्थ स्कूल सैन एन्टोनीओ, टेक्सास [में] है।

तुमने इग्लैन्डके लिए एक खत मांगा था सो मैंने भेज दिया था। मिल गया होगा।

अमेरिका जाकर तुम खुल जाओगे, ऐसा मैंने कहा था, उसका अर्थ तुमने मागा है। इसका अर्थ यह था कि जो एक प्रकारकी अस्वाभाविकता याने एक प्रकारका टेढ़ापन कहो कि जो कुछ था वह दूर हो जायेगा और सबके साथ मिलजुलकर

१. साधन-सूत्रमें हीरालाल शर्माने इसे सुधारकर 'गोबिन्द' छापा है; देखिए **बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष**, पृ० २०९।

रहनेकी आदत बन जायेगी। तुम्हारा हिसाब मिला है। भाई ब्रजमोहनजीको खत लिखा करो। उनको हिसाब भेजनेकी आवश्यकता नही है। तुमको 'हरिजन' मिलता होगा। मेरे खत और 'हरिजन' डा० होम्सके ठिकानेसे आज तक तो गये है। अब तुमने जो ठिकाना डा० केलागका भेजा है उस ठिकाने पर यह खत भेजता हू। डा० केलागका जो खत मेरे पास आया था वह तो मैने तुमको भेज ही दिया था। तुम्हारे शरीरके बारेमें यहासे मै क्या लिखू? इतना तो है कि थंडीसे बचो, नित्य कमसे-कम दस मैल घूमो। दूध और फल अच्छी तरह खाओ। सेलड भाजीआकी खाओ। इतना करनेसे अवश्य शरीर अच्छा रहेगा। प्राणायाम का अभ्यास रखा जाय।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

अमेरिका भेजे हुए खतकी तारीख

१ २० सप्टेम्बर शुक्र
२ ३ अक्तूबर गुरु
३ १० अक्तूबर शुक्र[1]

तीन खत

हरवर्ट शेल्टनका हेल्थ स्कूल
सेन एनटोनियो (टेक्सास)[2]

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २०८-९ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

११२. पत्र : उमादेवी बजाजको

मगनवाडी, वर्धा
८ नवम्बर, १९३५

चि० ओम्,

बहुत दिनो राह देखनेके बाद आखिर तेरा पत्र आया तो सही। मै तुझे उलाहना थोडे ही दे सकता हूँ। जितना तू देती है उतना मै स्वीकार कर लेता हूँ। उतनेसे ही मुझे सन्तोष मानना चाहिए। अम्बुजम् भी समय-समयपर तेरी खबर देती रहती है। वहाँ तुझे अच्छा अनुभव मिल रहा है, उससे पूरा-पूरा लाभ उठाना।[3] अपनी अग्रेजी तो तू अच्छी बना ही लेगी। वहाँका सगीत भी बहुत ही अच्छा माना जाता है। उसे अच्छी तरह सीख लेना। आशा है तू तमिल तो सीख ही लेगी। और मै यह भी आशा रखता हूँ कि तू वहाँ हिन्दीका प्रचार भी करेगी, अपनी चरबी भी कम करना। सक्षेपमे इतना ही कि जब तू इतनी दूर जा पहुँची है और तूने इतना बडा एक

१. यहाँ 'गुरुवार' के स्थान पर भूलसे शुक्र लिखा गया है।

२. मूलमें पता अग्रेजी लिपिमें है।

३. जमनालाल बजाजकी पुत्री उमाने मदनपल्लीके विद्योदय विद्यालयमें प्रवेश ले लिया था। श्रीनिवास अय्यगारकी पुत्री एस० अम्बुजम् इस विद्यालयकी मुख्याध्यापिका थी।

अक्षरका नाम [ॐ] रखा है तो उसे शोभान्वित करना। जो नाम तू धारण किये बैठी है उसे शास्त्रोंमें कल्याणकारी कहा गया है, तो उसका कोई अर्थ तो होगा न? अत मेरी इच्छा है कि उस नामको तू सार्थक कर। इसके लिए कुछ आवश्यक गुण तो तुझमें है ही। यदि कुछ और आ जायें तो बेडा पार समझो। यदि तू न जानती हो तो मैं तुझे एक और खबर देता हूँ। महाराष्ट्रके समान तमिलनाडुमे भी सस्कृतका बहुत शुद्ध उच्चारण किया जाता है। महाराष्ट्रमे उच्चारण तो शुद्ध है पर वहाँ उतना उत्तम सगीत नहीं है। तमिलनाडुमे तो मत्रादि मधुर ध्वनि और सुरमे गाये जाते हैं। अम्बुजम्‌की सहायतासे तू यह सीख सकती है। यह सब सहजमें ही सीखा जा सकता है। इसके लिए बहुत समय देनेकी जरूरत नही है। यह वर्ष तेरे लिए मगलदायक हो। अब तूने पत्र लिखना आरम्भ कर दिया है तो समय-समयपर लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृष्ठ ३४१-२

११३. टिप्पणी : कलकत्ता नगर निगमके सम्बन्धमें[1]

मैंने मन-ही-मन कई बार इसपर विचार किया है कि यदि मै निगमका सदस्य बन जाऊँ तो क्या करूँ। और वर्षों पूर्व जब मै कलकत्ताकी सड़कोपर पैदल चलते हुए सफाईकी व्यवस्थासे पूर्ण रूपसे युक्त बड़ी-बडी सुन्दर इमारतोकी तुलना वहाँकी गरीबोकी बस्तियोकी कुरूपता और गन्दगीसे करता था तो मनमें यही कहता था कि कलकत्ता क्या है, इसका अनुमान उसकी बड़ी-बडी इमारतोंकी सख्या या सुन्दरतासे नही, बल्कि उसकी इन गन्दी बस्तियोकी दशासे लगाना चाहिए, और तब मुझे लगता था कि नगर निगमने अपने कर्त्तव्योंकी उपेक्षा कर रखी है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ९-११-१९३५

११४. दवा-दारूकी सहायता

भिन्न-भिन्न संस्थाओकी ओरसे किये जानेवाले ग्राम-कार्य या समाजसेवाके कामकी जो रिपोर्टें मेरे पास आती है, मैं देखता हूँ कि उनमे से बहुतोमें दवा-दारूकी सहायताके कामको एक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। यह सहायता बीमारोको दवा बाँटनेके रूपमे की जाती है—और बीमारोका तो कहना ही क्या। जहाँ उन्होंने किसीको दवा बाँटनेकी बात कहते सुना नही कि उसे आकर घेर लिया। इस तरह जो व्यक्ति दवा बाँटता है उसे इसके लिए कोई खास कष्ट नहीं उठाना पडता। रोग और उसके लक्षणोंका विशेष या किसी तरहका ज्ञान रखनेकी उसे जरूरत नही

1. यह अ० वि० ठक्करके लेखके साथ टिप्पणीके रूपमें छपा था। लेख यहाँ नहीं दिया गया है।

होती। दवाएँ भी अकसर कृपालु दवा-फरोशोसे मुफ्त ही मिल जाती है। इसके लिए चन्दा भी ऐसे दानियोसे हमेशा मिल ही जाता है, जो चन्दा देते वक्त ज्यादा उधेड-बुन नही करते। बस इसी खयालसे उन्हे आत्म-सन्तोष हो जाता है कि हम जो दान दे रहे है उससे दीन-दुखियोकी मदद होगी।

सेवाके जितने भी तरीके है, उनमे यह सामाजिक सेवा मुझे सबसे ज्यादा काहिली और अकसर बुराईसे भरी हुई भी मालूम पडती है। जहाँ मरीजसे दवाको निगल जानेके अलावा और कोई अपेक्षा नही की जाती, वही इसमे बुराई दाखिल हो जाती है। दवा पा जानेसे उसकी समझदारी बढती नही; अलबत्ता, उसके विवेकमें कमी जरूर आ जाती है। कारण, वह समझता है कि अनियमितता और लापरवाहीसे स्वास्थ्यमें कुछ गडबडी पैदा हुई भी तो क्या, मुफ्तमे या नाम-मात्रको कुछ पैसा देकर प्राप्त की गई दवासे वह ठीक हो जायेगी। नतीजा यह होता है कि उस अनियमितताको दोहरानेमें उसे कोई हिचक नही होती। फिर, इस तरह मुफ्तकी मदद पानेसे आदमीकी आत्म-सम्मानकी भावना भी कमजोर हो जाती है, क्योकि जिसमें आत्म-सम्मान है उसे मुफ्तमे तो कभी कुछ लेना गवारा नही हो सकता।

लेकिन दवा-दारूकी सहायताका एक और भी तरीका है और निस्सन्देह यह हमारे लिए एक बडी नियामत है। ऐसी सहायता देना उन्हीके बसकी बात है जो रोगकी प्रकृतिको जानते है, जो रोगीको यह बता सकते है कि उसे अमुक रोग क्यों हुआ और यह भी कि वह उससे कैसे बच सकता है। ऐसे सेवक रात-दिनकी कोई परवाह न करेगे और हर समय सहायताके लिए तत्पर रहेगे। ऐसी विवेकपूर्ण सहायतासे लोगोको स्वास्थ्य-विज्ञानकी शिक्षा मिलेगी, जिससे वे यह जान सकेगे कि स्वास्थ्य और सफाईके नियमोका पालन करते हुए वे किस प्रकार तन्दुरुस्त रह सकते है। लेकिन ऐसी सेवा बहुत कम देखनेमें आती है। अधिकांश रिपोर्टोमे तो दवा-दारूकी सहायताका उल्लेख बतौर इश्तिहारके ही होता हैं, ताकि लोग उसे पढकर उनके दूसरे ऐसे कामकाजके लिए चन्दा देनेको प्रेरित हो, जिनमे शायद दवा-दारूकी सहायताकी तरह ही बहुत कम श्रम या ज्ञानकी आवश्यकता होती है। इसलिए समाज-सेवाके कार्यमे लगे हुए सब भाइयोसे, चाहे वे शहरोमें काम करते हो या गाँवोमें, मेरी प्रार्थना है कि दवा-दारूकी अपनी इस हलचलको वे अपने सेवा-कार्यका सबसे कम महत्त्वपूर्ण अग शुमार करे। बेहतर तो यह होगा कि अपनी रिपोर्टोमे ऐसे सहायता-कार्यका वे कोई उल्लेख ही न करे। इसके बजाय वे ऐसे उपायोका सहारा ले जिनसे उनके इलाकोंमें बीमारी फैल ही न पाये तो यह बेशक अच्छा काम होगा। दवा-दारूका सामान तो जहाँतक हो कम करना चाहिए। जो दवाएँ उनके गाँवमें ही मिल सके उनके सम्बन्धमे उन्हे जानकारी प्राप्त करनी चाहिए, उनमे कौन-कौनसे तत्त्व है, यह जानना चाहिए और जहाँतक हो उन्हीका इस्तेमाल करना चाहिए। ऐसा करनेपर उन्हे पता लगेगा, जैसाकि सिन्दी गाँवमे हमे मालूम होता जा रहा है, कि बहुत-से रोगोमें तो गरम पानी, धूप, साफ नमक और सोडाके साथ कभी-कभी अण्डीके तेल और कुनैनका प्रयोग करनेसे ही काम चल जाता है। जो भी ज्यादा बीमार

हों, उन सबको शहरके बड़े अस्पतालमे भेज देनेका हमने नियम बना लिया है। मीराबहनके पास झुण्ड-के-झुण्ड मरीज आते है और उनसे स्वास्थ्य, सफाई और रोगोकी रोक-थामके उपाय मालूम करते है। दवाके बजाय इस तरह रोगोकी रोक-थामकी जानकारी प्राप्त करनेपर उन्हे कोई आपत्ति नही होती।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-११-१९३५

११५. सोयाबीन

लोग पूछताछ कर रहे है कि सोयाबीन कहाँ मिलता है, उसे कैसे बोया जाता है, और किस-किस रीतिसे पकाया जाता है।

बम्बई-हेल्थ-एसोसिएशन (बम्बई स्वास्थ्य सघ)की ओरसे प्रकाशित पुस्तिकाका सार अभी हालमे 'हरिजन' मे निकल चुका है, अब मै बडौदा राज्यके फूड सर्वे आफिस (आहार सर्वेक्षण कार्यालय) द्वारा प्रकाशित एक गुजराती पुस्तिकाके मुख्य-मुख्य अशोका स्वतन्त्र अनुवाद नीचे देता हूँ। उसका मूल्य एक पैसा है :

> सोयाबीनका पौधा एक फुटसे लेकर सवा फुट तक ऊँचा होता है। हरेक फलीमे औसतन तीन दाने होते है। इसकी बहुत-सी किस्मे है। सोयाबीन सफेद, पीला, कुछ काला-सा और रग-बेरगा आदि अनेक तरहके होते हैं। पीली किस्ममे प्रोटीन और चरबीकी मात्रा सबसे अधिक होती है। इस किस्मका सोयाबीन मास और अण्डेसे अधिक पोषक होता है। चीनी लोग सोयाबीन चावलके साथ खाते है। साधारण आटेके साथ इसका आटा मिलाकर चपातियाँ भी बना सकते है। मिश्रणमे एक हिस्सा सोयाबीनका और पाँच हिस्से गेहूँके हो।
>
> सोयाबीनकी खेतीसे जमीन अच्छी उपजाऊ हो जाती है। कारण यह है कि दूसरे पौधोकी तरह जमीनसे नाइट्रोजन लेनेके बजाय सोयाबीनका पौधा उसे हवासे लेता है, और इस तरह जमीनको उपजाऊ बनाता है।
>
> सोयाबीन दरअसल सभी किस्मकी जमीनोमें पैदा होता है। सबसे ज्यादा वह उस जमीनमे पनपता है, जो कपास या अनाजकी फसलोके लिए मुआफिक पडती है। नोनिया जमीनमे अगर सोयाबीन बोई जाये तो वह जमीन सुधर जाती है। ऐसी जमीनमे खाद अधिक देनी चाहिए। बिजबिजाया हुआ गोबर, घास-पत्तियाँ और गोबरके घूरेकी खाद सोयाबीनकी खेतीके लिए बहुत ही मुफीद है।
>
> सोयाबीनके लिए समशीतोष्ण जलवायु अनुकूल पडती है। जहाँ ४० इच से अधिक वर्षा नही होती, वहाँ इसका पौधा खूब पनपता है। उसे ऐसी जमीनमें

नही बोना चाहिए, जहाँ पानी-ही-पानी जमता हो। यो आम तौरपर सोयाबीनको पहला मेह पडनेके बाद बोते है, पर वह किसी भी मौसममे बोया जा सकता है। खुश्क मौसममे हफ्तेमें एक, या अगर जमीन जल्दी-जल्दी खुश्क हो जाती हो तो दो बार उसे पानीकी जरूरत पडती है।

जमीन तो सबसे अच्छी गरमीके मौसममे तैयार होती है। उसे खूब अच्छी तरह जोत डाले और उसपर तेज धूप पडने दे। फिर ढेलोको तोड-तोडकर मिट्टी को खूब महीन कर देना चाहिए।

दो-दो, तीन-तीन फुटके फासलेकी पक्तियोमे इसके बीज बोने चाहिए। पौधे कतारोमे तीन-तीन, चार-चार इचकी दूरीपर होने चाहिए। निराई इसकी बार-बार होनी चाहिए।

एक एकड जमीनमे २० से ३० पौड बीज लगता है। बीज दो इचसे ज्यादा गहरा नही बोना चाहिए। एक एकडके लिए १० गाडी खादकी जरूरत पडेगी।

अकुर निकल आनेके बाद हलके हलसे इसकी ठीक तरहसे निराई होनी चाहिए। जमीनकी सारी परत तोड देनी चाहिए।

बोनेके चार महीने बाद इसकी फलियाँ तोडने लायक हो जाती है। पत्तियाँ ज्यो ही पीली पडने और झडने लगे त्यो ही फलियोको तोड़ ले। छीमियोके मुँह खुल जाने तक उन्हे पौधोमे नही लगे रहने देना चाहिए, अन्यथा दाने गिरकर मिट्टीमे खो जायेगे।

यह तो हुई इसकी खेतीकी बात।

अब मगनवाडीमे सोयाबीनका जो प्रयोग किया जा रहा है, उसका क्या परिणाम आया है, इसके विषयमे थोडा-सा कहूँगा।

अभी इतनी जल्दी कोई परिणाम निकालना कठिन है। यह कह सकते है कि मनगवाडी-वासियोका वजन बराबर एक-सा है। कुछ लोगोका वजन जरूर बढा है; एकका तो इधर पन्द्रह दिनमे साढे चार पौड बढा है। पहले सप्ताहके अन्तसे घी बन्द कर दिया गया है। इससे वजनपर अबतक तो कोई असर पडा नही। घीकी जगह एक औस तेल दिया जाता है। पहले एक-एक, दो-दो औस सोयाबीन दिया जाता था, अब इस हफ्तेसे तीन-तीन औस दिया जाने लगा है। सुबह और शाम दोनो वक्त दिया जाता है। उसे कुछ घटे पानीमें भिगोकर फिर अच्छी तरह पकाया जाता है। जिस पानीमे वह पकाया जाता है, वह अलग छान लिया जाता है और उसमे इमली और नमक मिला देते है। इस रसेको लोग खूब पसन्द करते है। पानी अलग कर देनेके बाद सोयाबीनमे अलसी या तिलका तेल और नमक मिला देते है। अब वह स्वादिष्ट खाद्य बन जाता है। सवेरे तो उसे रोटी या भाखरीके साथ खाते है, शामको चावलके साथ। इसे खूब अच्छी तरह चबाकर खाना चाहिए। अभीतक कोई बुरा प्रभाव तो स्वास्थ्यपर इसका पडते सुना नही।

सोयाबीन बम्बई और बड़ौदामें मिल सकता है। कीमतमें कमी करनेके बारेमें बातचीत चल रही है। इस बीच मगनवाडीसे प्रति पौंड ३ आने देकर थोड़ा-बहुत सोयाबीन मँगवाया जा सकता है, रेलभाड़ा अलगसे लगेगा। यह कीमत बहुत ज्यादा है। बडौदासे हमने जो सोयाबीन मँगाया था वह कुछ गलतीसे बजाय मालगाडीके यात्रीगाड़ीसे आया। मेरी यह सलाह है कि मगनवाडीसे लोग सोयाबीन न मँगायें। बम्बईसे मँगाना हो तो गोदरेज कम्पनी (परेल, बम्बईके) पतेपर आर्डर दिया जाये, और बडौदासे मँगाना हो तो बडौदा आहार सर्वेक्षण कार्यालयको लिखा जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-११-१९३५

११६. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

वर्धा
९ नवम्बर, १९३५

प्रिय आनन्द,

पुस्तिकाएँ तो बहुत बढ़िया तैयार हुई हैं। मुझे खुशी है कि 'फ्रॉम यरवडा'[1] इतनी तेजीसे बिक गई।

तुम्हें कब्जको बने रहने देना नहीं चाहिए। उससे छुटकारा पानेके लिए तुम्हें कड़ा कदम उठाना है; औषधियाँ ले-लेकर नहीं, बल्कि आहारके उचित नियमोंका पालन करके कब्जको दूर भगाओ। गेहूँकी पावरोटी, आलूबुखारा, शुद्ध और कच्चा दूध तथा कच्चा और पकाया हुआ सागपात लेनेसे तुम्हारा काम बन जायेगा।

मुझे विद्या[2] का पत्र मिला था जिसका उत्तर देना अभी बाकी है। आशा करता हूँ कि वह अच्छी तरह है।

सप्रेम,

बापू

श्रीयुत आनन्द तो० हिंगोरानी
डी/३ कॉस्मोपॉलिटन कॉलोनी
कराची (सिन्ध)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

१. *फ्रॉम यरवडा मन्दिर*, जो *मंगल प्रभात*का अंग्रेजी अनुवाद था, देखिए खण्ड ४४, पृ० ४१ और खण्ड ४९, पृ० ४३ और।

२. आनन्द हिंगोरानीकी पत्नी।

११७. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

९ नवम्बर, १९३५

चि० नरहरि,

काका [देना] भूल गये इसलिए तुम्हारा पत्र मुझे कल रातको जाकर मिला। भाई वेलचन्दसे मासिक पाँच सौ रुपये यदि तुम अब किसी तरह ले सको तो अच्छा हो। यथार्थमें तो जब उन्होंने यह बात सोची थी तभीसे देना शुरू करना चाहिए था।

वनु[1]की तबीयत बिल्कुल सुधर गई, यह शुभ समाचार है। उसने विद्यापीठ छोड़ दिया, यह उसका महान् त्याग है। किन्तु विद्यापीठके प्रति उसका लगाव [यदि] निःशेष हो गया होगा तभी यह त्याग स्थायी होगा। आशा है तुमने जैसे-तैसे उससे यह त्याग नहीं कराया होगा। अन्यथा उसे हमेशा उसका खेद बना रहेगा और वह मन ही मन उसका चिन्तन करती रहेगी। बाकी, तुमने जो व्यवस्था की है यदि वह बनी रही तो वहाँका काम अच्छा चमक उठेगा।

मेरा कहीं रहना तो मेरे हाथकी बात नहीं है। मैं समझता हूँ कि यह व्यवस्था तो साहित्य [परिषद्] ही करेगी। इसलिए कर्त्ता-धर्त्तासे मिलकर यदि कुछ किया जा सके तो करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०९१) से।

११८. पत्र : चन्दन पारेखको

९ नवम्बर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा पोस्टकार्ड मिला। तू जनवरीमें मिलेगी किन्तु तबतक बहुत देर हो जायेगी। मेरे बुलानेसे हरभाई यहाँ १२ तारीखको पहुँच रहे हैं। जबतक मैं चाहूँगा तबतक वे यहाँ रुके रहेंगे। तेरे पत्रके आधारपर मैंने उन्हें यहाँ जल्दी बुला लिया है। तेरे भतीजेको मैं यहाँसे भावनगर पहुँचानेकी व्यवस्था कर दूँगा और यहाँका काम हो जानेके बाद तुझे भी भावनगर पहुँचानेकी व्यवस्था कर दूँगा। यह स्थान तो तेरे लिए घर-जैसा ही है अतः तू यहाँ आराम ले सकती है और कुछ नई चीजें

१. वनमाला, नरहरि परीखकी पुत्री।

भी देख सकती है। तू यह जानती होगी कि यहाँ महिलाश्रम, कन्या विद्यालय, चरखा सघ, ग्रामोद्योग सघ आदि प्रवृत्तियाँ चलती है। विभिन्न प्रान्तोकी बहनें यहाँ है। अत: अनुभवके खयालसे भी तेरा समय व्यर्थ नही जायेगा और अपने पत्रमें तूने जो संकल्प व्यक्त किया है वह भी सिद्ध हो जायेगा। जनवरीमें तू फिर अहमदाबाद आ जाना। अत. यदि किसी भी तरह तुरन्त वर्धा आ सकती हो तो आनेमें चूकना नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३८) से, सौजन्य सतीश कालेलकर

११९. पत्र : ए० एस० सत्यार्थीको[1]

[१० नवम्बर, १९३५ के पूर्व][2]

देशमें और कांग्रेसमें मालवीयजीका स्थान अद्वितीय है। कमसे-कम उनपर तो आक्षेप न किये जायें। यदि आपका अनुवाद सही है तो मानना पड़ेगा कि मालवीयजीको बदनाम करनेकी फिक्रमें लेखकने सत्यका पूरा खयाल नही रखा। मालवीयजीने साम्प्रदायिक निर्णय (कॉम्युनल एवार्ड) के लिए प्रार्थनापत्र कभी नही दिया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-११-१९३५

१२०. पत्र : उमाशंकर जेठालाल जोशीको

मगनवाडी, वर्धा

१० नवम्बर, १९३५

भाई उमाशकर,[3]

आप भले ही अत्यन्त सामान्य पुरुष हो, फिर भी क्या आप तर्क-वितर्क किये विना एक पोस्टकार्डमें मुझे यह लिखकर अपना अभिप्राय नही बता सकते कि मुझे सम्मेलनका सभापति होनेके नाते क्या करना चाहिए? और यदि आपके मनमें यह शक है कि आपका पहला पत्र समझ-बूझकर भी मैंने आपको यह लिख भेजा कि मैं उसे समझ नहीं पाया तो आप इस शकको मनसे निकाल डालिए। मैंने तो उस

१. लाहौरके एक गैर-अंग्रेजी अखबारमें मदनमोहन मालवीयके विरुद्ध कुछ गलतबयानियाँ छापी गई थीं जिनकी ओर ए० एस० सत्यार्थी कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी, पंजाबके महामन्त्री थे, गाधीजीका ध्यान आकृष्ट किया था।

२. यह पत्र *हिन्दुस्तान टाइम्स* में दिनांक "लाहौर, १० नवम्बर, १९३५", के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. गुजरातीके एक कवि।

पत्रको समझनेमे महादेवकी मदद तक ली थी, किन्तु जब वह भी समझनेमें असमर्थ रहा तो मैंने आपको वह उत्तर भेजा था।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७०५) से; सौजन्य : उमाशंकर जेठालाल जोशी

१२१. पत्र : जमनालाल बजाजको

१० नवम्बर, १९३५

चि० जमनालाल,

मैं सभी पत्र पढ़ गया। कमलनयन[1] द्वारा डॉ० जवाहरलालको पत्र लिखनेकी कोई जरूरत मुझे नजर नही आती। तुम स्वय ही उन्हे लिख दो तो काफी होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७६) से।

१२२. पत्र : छगनलाल जोशीको

[१२ नवम्बर, १९३५ के पूर्व][2]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। नारणदासके पत्रसे आज ही यह भी पता चला कि तुम्हे बुखार आता है। तुम्हारा पत्र इसके बाद आया था।

लगता है कि मैंने जेठालाल[3] को जो लिखा है उसे तुम भली-भाँति समझ नही सके। मुझे भारतन[4] के ५० रु० अखरे किन्तु भारतन ३०० रु० की नौकरी छोड़कर आया है और फिलहाल उसे कमसे-कम इतने तो मिल ही सकते है। वह जो ५० रु० लेता है उसमे से आधे-आध वह अपने आश्रममे रहनेवाले गरीब विद्यार्थीको देता है। भाई जेठालाल कोई दूसरी नौकरी या धन्धा खोज रहे है और ऐसा काम मिल जानेपर वे सेवा-संघका काम छोड़ देगे। यदि मैं इस बातको ठीक समझ सका होऊँ

१. जमनालाल बजाजके पुत्र।

२. छगनलाल जोशीके अनुसार यह पत्र उन्हें १२ नवम्बर, १९३५ को मिला था।

३. जेठालाल जोशी जिन्होंने नेशनल स्कूलसे त्यागपत्र देकर ४० रु० महावारपर राजकोट सेवा संघ का मन्त्रीपद स्वीकार कर लिया था।

४. भारतन कुमारप्पा, अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके पदाधिकारी।

तो इन दोनो मामलोंमें जो अन्तर है उसे तुम भी देख सकोगे। फर्क इतना ही है कि तुममें से जो लोग जेठालालकी अपेक्षा अधिक लेते है वे सदाके लिए सेवा-कार्यमें लगे हुए हैं और तुम्हारी बाजार-दर जितना तुम लेते हो उसकी अपेक्षा अधिक है। इसके बावजूद मैं तुम सब लोगोसे यथाशक्ति उत्तरोत्तर अधिक त्यागकी आशा तो करता ही हूँ, किन्तु यदि मेरी यह कामना पूरी नही हो सकी तो मैं निराश भी नही होऊँगा।

तुम जल्दी अच्छे हो जाओ। भाग्यमें जब हमारा मिलना लिखा होगा तब हम मिलेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३७) से।

१२३. पत्र : वियोगी हरिको

वर्धा
१२ नवम्बर, १९३५

भाई वियोगी हरि,

तुम्हारा खत मिला। मुझे संतोष हुआ। मलकानीने भी तुम्हारे बारेमें लिखा। तुम्हारे वही रहते हुए भी सपादक तो तुमको ही रक्खना चाहता हूं। जो कुछ वहाँसे भेज सकते हो भेजा करोगे। दिल्लीमें 'हरिजन सेवक' की एजेन्सी भी यदि संभवित है तो रखी जाय। यहाँका सब काम करनेके बारेमे अगर कोई व्यक्ति तुम्हारे ध्यानमें है तो उनका नाम भेजो और उनको क्या चाहियेगा वह भी लिखो। तुम्हारी आजीविकाका प्रबंध तो हरिजन सेवक सघसे होगा — जैसे मलकानी लिखते है। और सपादक ओनररी रहोगे। यहाँसे 'हरिजन सेवक' छापनेकी तारीख होनेसे मैं लिखूंगा। लिस्ट वगैरहकी तैयारी रखी जाय तो काफी है। यदि डुप्लिकेट लिस्ट बन सके तो एक लिस्ट पहलेसे ही भेज दिया जाय।

ग्राहकके नामठाम छपे हुए रहते हैं तो वह भी भेज दिया जाय। किसीके बारेमें कोई शीघ्रता तो है नही। क्योंकि इस मासके आखिरके पहले यंत्रादि ही नही आ सकेंगे।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७८) से।

१२४. पत्र : एन० आर० मलकानीको

१२ नवम्बर, १९३५

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा पत्र मिला। 'हरिजन सेवक'का प्रकाशन यहाँसे करनेके कई कारण है। घनश्यामदासने सभी सुझावोंसे सहमति प्रकट की है — वियोगी हरिके यहाँ आनेके बारेमें भी। लेकिन तुम्हारी कठिनाइयाँ मै समझता हूँ। तुम उसे बखूबी वही रखना। मै कोई व्यवस्था कर लूँगा। उसे भी वहाँ रहनेका विचार पसन्द है। शेष मिलने पर।

साथमें वियोगी हरिके लिए पत्र[1] भेज रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

प्रो० एन० आर० मलकानी
दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६८) से।

१२५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

१२ नवम्बर, १९३५

अब तो तेरी लिखावटके दर्शन दुर्लभ हो गये है। किन्तु मुझे इस बातका सन्तोष है कि ठीक मौकेपर तू उसके दर्शन कराता रहता है।

अब मै यह आशा करता हूँ कि फिलहाल तेरे पोस्टकार्ड तो यथासमय मिलते रहा करेंगे। सरदारने [ऑपरेशन करानेमे][2] जितनी देर की उतनी ही अधिक तकलीफ वे भोग रहे है। किन्तु उन्हे दु:ख भोगना आता है और वे कष्टमे भी हँस सकते है, इसलिए कोई परवाह नही।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १५९-६०

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. सरदार पटेलका बवासीरका ऑपरेशन ९ नवम्बर, १९३५को हुआ था।

१२६. पत्र : जयन्ती ना० पारेखको

१२ नवम्बर, १९३५

चि० जयन्ती,

तेरा पत्र मिला।

निश्चय ही स्वराज्य राजनीतिका अग है। किन्तु हमारी बहुत-सी प्रवृत्तियोके मूलमे राजनीति नही बल्कि स्वराज्य है। जैसे कि फिलहाल तुम तीनो भाई[1] अपने निजी स्वार्थवश नही बल्कि पिताजी[2] की सहायताके विचारसे यदि किसी तरहके व्यापारमें लगकर उनका कर्ज चुकाओ तो मैं उसे भी स्वराज्य-प्राप्तिमे यत्किंचित् योगदान मानूंगा। यह याद रखना कि हम अहिंसक साधनोके द्वारा स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है और अहिंसक साधनोमें धर्मपालन मुख्य है।

यह वर्ष तुम सब लोगोकी शुभ इच्छाएँ पूर्ण करनेवाला सिद्ध हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७१) से।

१२७. पत्र : कान्ति ना० पारेखको

१२ नवम्बर, १९३५

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला।

यदि तू किसान न रहकर व्यापारी बन गया तो कोई बात नही। सुन्दर होनेके बावजूद हमारे सभी सपने थोडे ही पूरे होते है?

अस्सी [व्यक्तियो] की टुकडी[3] मेसे बहुत-से अपने-अपने काममें लग गये है तो फिर जयन्ती या इन्दु[4] का क्या दोष? इसके अतिरिक्त जैसा तेरे समक्ष, उसी प्रकार जयन्ती और इन्दुके समक्ष भी एक विशेष कर्त्तव्य उठ खडा हुआ है। यदि तुम

१. जयन्ती, कान्ति और इन्दु।
२. नाथूभाई पारेख कालीकटके एक व्यापारी।
३. जिन्होने दाण्डी-यात्रामें भाग लिया था।
४. अस्सी की टुकड़ी में इन्दु शामिल नहीं थे।

तीनों भाई उक्त कर्त्तव्यका पालन करो, तो इसमें मुझे तुम्हारी प्रतिज्ञा[1] भंग होती नजर नही आती। जिस पिताने तुम्हारे लिए सब-कुछ निछावर कर दिया है, यदि मुसीबतके समय तुम उनकी मदद नही करते तो तुम्हे पितृभक्त नही माना जायेगा। इसके अतिरिक्त और कोई विशेष कर्त्तव्य फिलहाल तुम्हारे सामने नही है। इतना सही है कि मैं यह चाहता हूँ कि पिताकी खातिर अर्थोपार्जन करनेके लिए भी तुम अपने सिद्धान्तोंको भंग न करो।

इन्दुको समयसे पहले ही पढ़ाई खत्म करनेके लिए कहनेमे इसके सिवा और कोई उद्देश्य मेरे ध्यानमे नही है।

यह वर्ष तेरी शुभ इच्छाएँ पूर्ण करनेवाली सिद्ध हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७३) से।

१२८. पत्र : इन्दु ना० पारेखको

१२ नवम्बर, १९३५

चि० इन्दु,

मुझे तो इस बातकी कोई जानकारी ही नही कि तू कालीकट पहुँच गया है। मैंने तेरे दोनों भाइयोको पत्र लिखवा दिये है, इसलिए तुझे कुछ विशेष लिखनेको नही है।

हरभाई और मूलशंकर[2] आज मेरे पास आ गये है, और कुछ दिन यहाँ रहेगे। यदि तू पत्र लिखे तो उन्हे मिल जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७२) से।

१. देखिए खण्ड ४३, पृ० ३७५।

२. मूलशंकर मोहनलाल भट्ट।

१२९. पत्र : मणिबहन पटेलको

१२ नवम्बर, १९३५

चि० मणि,

इसके पीछेका भाग बापू[1] को पढवा देना। ऐसा सुननेमे आया है कि जवाहर-लालके व्यवहारसे सब बहुत खुश हो गये थे।[2]

आशा है बापू सानन्द होगे और डाक्टरोको हँसाते रहते होगे। तू अपने स्वास्थ्यके विषयमें गाफिल मत रहना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो-४ : मणिबहन पटेलने, पृ० ११८

१३०. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा

१३ नवम्बर, १९३५

चि० मेरी[3],

तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला। मैंने मार्गरेटको पत्र लिखा है और उसे हिदायतोका एक चिट्ठा भी भेजा है।

मै समझता हूँ, शान्ताकी बीमारी यही थी कि वह बहुत ज्यादा थक गई थी और यह थकावट ऐसी थी कि उसे बुखार चढ गया। अब लगता है कि बुखारसे उसने छुटकारा पा लिया है। वह काफी पौष्टिक आहार ले रही है—प्रतिदिन पाँच-छ पौड दूध और फल। सुमित्रा[4] की रात बहुत बुरी कटी। उसे बहुत बुखार चढ गया था, लगभग १०५ डिग्री। इसलिए उसे आज अस्पताल भेजना पडा। स्वभावत देख-भालकी जिम्मेदारी तारापर है। यहाँ तो उससे जितना विश्राम करना सम्भव हुआ,

१. मणिबहनके पिता सरदार पटेल।

२. गांधीजीके आग्रहपर जवाहरलालने इग्लैंडमें कई ब्रिटिश राजनीतिज्ञों से भेंट की थी।

३. सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

४. रामदास गांधीकी पुत्री।

खुशी-खुशी किया। लेकिन जब तारा यहाँ थी तो सुमित्राके साथ किसी औरको भेजनेका खयाल मेरे मनमें आ ही नही पाया। वैसे दिनमे दो बार उसे फुरसत तो दी जायेगी। डाक्टरका विचार है कि पिछली बार जब उसे अस्पतालसे छुट्टी दी गई, उस समय उसके जख्म मे फैला जहर पूरी तरह दूर नही हुआ था।

आशा है, तुम स्वस्थ होगी। इस बार तो तारा प्रश्नोकी झड़ी नही लगाती रही है। बस; खानेके समय कुछ प्रश्न पूछ लेती है। वह दूसरोंका बहुत खयाल रखती रही है और उसका स्वास्थ्य भी अच्छा रहा है। अबतक तो ऐसा नही लगता कि सोयाबीनका उसपर कोई बुरा असर हुआ है।

सप्रेम,

बापू

मेरी बार
खेड़ी सावलीगढ, (बैतूल)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५९) से। सी० डब्ल्यू० ३३८९ से भी; सौजन्य . एफ० मेरी बार

१३१. पत्र : जितेन्द्रनाथ कुशारीको

वर्धा
१४ नवम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

इस बातमे मुझे रचमात्र भी सन्देह नही है कि वर्त्तमान मतभेदोके बावजूद काग्रेस पूर्ण स्वराज्य अवश्य प्राप्त करेगी।

तुलसीके पत्तोको उबाल कर थोडे-से गुड और अदरकके साथ स्वादिष्ट और स्फूर्तिदायक चाय बनाई जा सकती है। चायमे जो हानिकर तत्त्व है, वे इसमे बिलकुल नही है और यह चायसे हर तरहसे अच्छी है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत जितेन्द्रनाथ कुशारी
मार्फत होम हॉल, न्यू मार्केट
पटना

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१९२) से।

१३२. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

१४ नवम्बर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

१२ तारीखको मैं वहाँ[1] पहुँच रहा हूँ। अत हरिजन-कोष इकट्ठा करनेके सम्बधमें मैं कहाँतक उपयोगी सिद्ध हो सकता हूँ इसपर अभीसे सोच-विचार कर लेना आवश्यक है। इस महीनेकी २३ तारीखको ठक्कर बापा यहाँ आ जायेंगे। इस बीच यदि तुम यहाँ आना चाहो तो आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४००३) से। सी० डब्ल्यू० १३२ से भी; सौजन्य : परीक्षितलाल एल० मजमूदार

१३३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१४ नवम्बर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

अब तो तुम गपशप करने लायक हो गये होगे। अम्बेडकरके नाम लिखा तुम्हारा पत्र मैं पूरा ही पढ गया। यह अकाट्य है, मगर इस समय उनपर इसका कुछ भी असर नही हो सकता। मेरी निन्दा किये बिना उनसे रहा ही नही जा सकता। फिर तुम्हे वे कैसे छोड सकते है? लन्दनकी तरह यहाँ भी उनके पीछे अनेक शक्तियाँ काम कर रही है। दुख इतना ही है कि उनकी धमकियोसे डरकर इस बातको बहुत बडा रूप दे दिया गया है। इसकी भी चिन्ता नही, परन्तु उसका सदुपयोग होनेके बदले दुरुपयोग हो रहा है। अस्पृश्यताको मिटानेका जोरोसे प्रयत्न करनेके बदले लोग उनकी खुशामद कर रहे है। खैर, हमे इसी वातावरणमें काम करना है। जहाँ देखो वही भय और दुर्बलताके दर्शन होते है।

पाटडीके मामलेमें तुम कोई कदम क्यों नही उठा सकते? क्या तुम्हारा निजी सचिव[2] तुमसे पूछे विना जहाँ-तहाँ सभापति बन सकता है?[3]

१. अहमदाबादमें।

२ और ३. मोरारजी देसाई इस समय सरदार पटेल के निजी सचिव थे। दीवानी और फौजदारीके अधिकार पाटडीके दरबार को सौंपने के प्रस्तावका विरोध करने के लिए पाटडीमें ८ नवम्बर, १९३५को ब्रिटिश भारतके १७ गाँवोंके लोगोंका जो सम्मेलन हुआ था उसका उन्होंने सभापतित्व किया था।

आशा है, जनवरी मासमें गुजरातके मेरे कार्यक्रमके विषयमें अब तो तुम्हें समझमें आ गया होगा। जैसे मेरे अहमदाबाद पहुँचनेकी १२ तारीख निश्चित हो चुकी है, वैसे ही यहाँ पहुँचनेकी भी २८ तारीख निश्चित हो चुकी है; क्योंकि उसी दिन यहाँ राधाकृष्ण[1] और अनसूया[2] की शादी होगी। इसलिए देर करूँ तो भी उस वक्ततक तो मुझे यहाँ पहुँच ही जाना चाहिए। अतः गुजरातको अधिक-से-अधिक १५ दिन दिये जा सकते हैं। इस दौरान जो हो सकता हो, करना।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
८९, वार्डन रोड
बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९२-३

१३४. पत्र : अवधेशदत्त अवस्थीको

[१४ नवम्बर, १९३५][3]

चि० अवधेश,

बहुत दिनोंके बाद तुम्हारा पत्र आया। क्यों अब तक निश्चित कार्य नहीं लिया है? भयमुक्त होनेके लिये हमारे सबसे प्रेम करना और सत्यके राह पर रहना। पुण्यात्मा बनना सरल है, यह कहनेका मतलब यह है कि सबको ऐसे अपनेको मनवाना प्रिय है और कोई अपनेको पापी मनवाना नहीं चाहता है, इसलिये पापी बनना कठिन है, ऐसा कहा जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२१४) से।

१. जमनालाल बजाजके पुत्र।
२. श्रीकृष्णदास जाजूकी पुत्री।
३. राष्ट्रीय अभिलेखागारमें सुरक्षित मूल पत्रपर लगी डाक-मुहर से।

१३५. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

वर्धा
१५ नवम्बर, १९३५

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। वह जर्मन कार्ड ज्यो ही महादेवके हाथमे दिया गया, उसने उसे तुरन्त नये पतेपर भेज दिया और तुम्हे वह मिल गया। उसे तुम्हारे नये पतेपर पुनर्प्रेषित करनेमे ऐसी कोई देर नही की गई जान पडती है जिससे बचा जा सकता था। पहले वह तुम्हे बम्बईके पतेपर भेजा गया था। वहाँसे मगनवाडी नही, आश्रमके पतेपर भेजा गया। आश्रममे अभी बड़ी अव्यवस्था है, क्योकि सब-कुछ नये सिरेसे जमाया जा रहा है। कोई नही बता सकता कि अन्तमें वह कार्ड कब यहाँ लाया गया। तुम उसपर डाककी पाँच मुहरोको ध्यानसे देखना। तारीखोकी जाँच करो, फिर शायद इस विलम्बका रहस्य तुम्हारे सामने खुल जाये। ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण बातें अनिवार्य है और तुम तो इससे भी बडे दुर्भाग्यको सहन करनेकी सामर्थ्य रखती हो।

यह जानकर खुशी हुई कि तुम्हारी आय तेजीसे बढ़ रही है। कोई आश्चर्य नही कि बम्बई तुम्हे पसन्द है। अपने भोजनकी लागतपर ध्यान न दो, बल्कि तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक रखनेके लिए जो-कुछ जरूरी हो, वह लेती रहो।

खुर्शेदबहन तुम्हारे साथ है तो तुम्हारा सब-कुछ ठीक-ठीक ही चलेगा। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि कृष्णा अपने साथी-सगियोके साथ तुमसे मिलने आई।

बापूके आशीर्वाद

डॉ० मार्गरेट स्पीगल
मार्फत श्रीमती भण्डारकर
माधव निवास
८ लैबर्नम रोड, बम्बई ७

अग्रेजीसे : स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१३६. पत्र : शिवाभाई जी० पटेलको

१५ नवम्बर, १९३५

चि० शिवाभाई,

तुम्हारा पत्र आजतक अनुत्तरित पडा रहा। तुम अपनी प्रतिज्ञाका ठीक पालन कर रहे हो। दृढताके साथ अभी और आगे बढना। खुराकभी ठीक जान पड़ती है, किन्तु उसमे पत्तीवाली हरी सब्जियोकी कमी है। तुम्हे कच्ची हरी सब्जियाँ अवश्य खानी चाहिए। ये सब्जियाँ तुम्हे स्वय उगानी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वसुमतीसे मुझे लिखनेको कहना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५१६) से। सी० डब्ल्यू० ४३२ से भी; सौजन्य शिवाभाई जी० पटेल

१३७. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

१५ नवम्बर, १९३५

चि० रामेश्वरदास,

तुम्हारा पत्र मिला था। जैसे जमनालालजी कहे ऐसा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २१०) से।

१३८. पत्र : विद्या आ० हिंगोरानीको

१५ नवम्बर, १९३५

चि० विद्या,

तुम्हारा खत मिला था। समय नही मिलता। किसी तरह अच्छी हो जाओ। डा० अन्सारी कहे ऐसा करना अच्छा ही है। अतमे हमारा वैद्य परमेश्वर ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१३९. नीमके पत्ते और इमली

मेरे कुछ प्रश्नोंके जवाबमें पोषण अनुसंधान (न्यूट्रीशन रिसर्च)के निदेशक डॉ० आइकरॉइडने निम्नलिखित रोचक उत्तर भेजे हैं

आप आहारके तत्त्वोंके बारेमें पूछते हैं। इस सम्बन्धमें यहाँ तथा भारतके दूसरे प्रान्तोंमें तथ्य तेजीके साथ इकट्ठे किये जा रहे हैं और मुझे आशा है कि बहुत जल्दी तमाम साधारण आहारोंकी रासायनिक रचना, विटामिनकी मात्रा इत्यादि बतलानेवाली प्रामाणिक पुस्तिका आहार-विज्ञानमें दिलचस्पी रखनेवालोंको प्राप्त हो जायेगी। आप जो यह कहते हैं कि भिन्न-भिन्न प्रकारकी वनस्पतियोंकी चरबी और तेल शरीरपर भिन्न-भिन्न प्रकारका असर करते हैं, उसके सही होनेमें मुझे कोई सन्देह नहीं। इसका कारण शायद उनकी भिन्न-भिन्न रासायनिक रचना हो, किन्तु दुर्भाग्यसे अभी इसमें हम रासायनिक रचना और आहार-विषयक प्रभावका पारस्परिक सम्बन्ध जाननेकी स्थितितक नहीं पहुँचे। बहुत सम्भव है कि संसारमें कहीं कोई शोधकर्त्ता शीघ्र ही हमें इस विषयमें ज्ञान कराये।

हमने प्रयोगशालामें नीमके पत्तोंका विश्लेषण किया है। पहले जिन अनेक हरी भाजियोंके बारेमें अन्वेषण किया गया है, उनके मुकाबलेमें इन पत्तोंमें पोषक तत्त्व अधिक मात्रामें हैं। पके हुए पत्तों और कोंपलों, दोनोंमें ही प्रोटीन, कैलशियम, लोहा और विटामिन 'ए' खासी अच्छी मात्रामें होते हैं और इन दृष्टियोंसे नीमके पत्ते चौलाईके साग, धनियाकी पत्तियों, सहजनकी छीमी, सलाद, मरुआके पत्तों और पालकसे बढ़कर होते हैं। परम्परासे इन पत्तोंके अधिक पौष्टिक माने जानेका शायद यही कारण है। मेरा विश्वास है कि चीनकी आधुनिक प्रयोगशालाओंमें जो अन्वेषण हुए हैं, उनसे बहुधा यह मालूम हुआ है कि प्राचीन चीनी ग्रन्थोंमें जिन वनस्पतियों और आहारकी अन्य वस्तुओंकी सिफारिश की गई है, उनमें विटामिन आदि बहुत अच्छी मात्रामें पाये जाते हैं।

विटामिनकी दृष्टिसे देखते हुए इमली और नींबू करीब-करीब एक सरीखे हैं; नींबूमें सिर्फ प्रति-प्रशीताद (एंटी-स्कॉर्ब्यूटिक) विटामिन 'सी' की मात्रा अधिक है। नींबूमें तो नहीं, पर इमलीके गूदेमें टार्टरिक एसिड खासा अच्छा — यानी लगभग १४ प्रतिशत है। नींबूमें मुख्य एसिड साइट्रिक एसिड है। यों ये दोनों फल आहारकी दृष्टिसे एक-दूसरेसे मिलते हैं। ऐसा मानते हैं कि इमलीकी कुछ रेचक तासीर है। लोगोंकी जो यह धारणा है कि इमली खानेसे ज्वर

और गठिया हो जाता है, इसके समर्थनमें कहनेके लिए मेरे पास कुछ भी नहीं है।

पाठकोंको जानना चाहिए कि मैं नीमके पत्तो और इमलीके अनेक प्रयोग कर रहा हूँ। नीमके पत्ते तो हममें से कई आदमी खा रहे हैं, पर किसीको कोई नुकसान नही हुआ। कठिनाई मेरे लिए यह है कि नीमको स्वादिष्ट किस तरह वनाया जाये। इमलीके काफी गूदे और नमकके साथ या नीबू और नमकके साथ बतौर चटनीके खानेसे वह कमसे-कम कडवा मालूम होता है। कोई-कोई तो दो-दो, तीन-तीन तोला पत्ते वडे मजेसे चवा जाते है। यह मैं ठीक-ठीक नही कह सकता कि इस तरह पत्तोके खानेसे शरीरपर क्या असर होता है। जिन्हे अपनी खुशीसे इसे आजमाना हो, उन्हे जो मैं इसके लिए ललचाता रहा हूँ, उसका कारण यह है कि एक तो आयुर्वेदमें इसका खूब गुणगान किया गया है और दूसरे श्री भणसाली[1] पर इसका निश्चय ही अच्छा असर हुआ है। इसका आम तौरपर उपयोग होने लगे तो गरीब लोगोको विना किसी अतिरिक्त खर्चके हरी पत्तियाँ खानेको मिलने लगें, जिनके खानेपर आधुनिक आहार-वैज्ञानिक वहुत अधिक जोर दे रहे हैं। नीमके पत्ते खानेका कोई वुरा परिणाम नही होता, इतना तो मैं पूरे भरोसेके साथ कह सकता हूँ।

इमलीके अच्छे प्रभावके बारेमें भी मैं इतने ही विश्वासके साथ लिख सकता हूँ। भोजन करते समय इमलीका आधा छटाँक गूदा लेनेसे कइयोके पेट साफ हो गये है। इसे साग, भात या दालमें भी मिला सकते है। जरा ज्यादा गुड़के साथ मिलाकर इसका मुरब्बा वनाकर भी खा सकते हैं। मैंने इमलीका पना वुखार कम करनेके लिए दिया तो उसका अच्छा ही असर हुआ है। जैसा कि वहुतसे लोग मानते है, मेरे देखनेमें यह नही आया कि इससे किसीको सर्दी लगी हो, या गठिया हुआ हो या फोड़ निकले हो। दक्षिणमें तो शायद ही कोई स्त्री या पुरुष ऐसा होगा, जो किसी-न-किसी रूपमे इमली न खाता हो। उनके रसममें मुख्य चीज यह इमली ही तो होती है।

शहरोंमें जो खर्चीली किन्तु उपयोगी चीजे काममें लाई जाती है और जो गाँवोंमे भेंटमें या पैसा देनेपर भी नही मिल सकती उनकी जगह जहाँतक हो सके सस्ती, प्रभावकारी और अहानिकर चीजें ग्रामसेवकोको ढूँढ़ निकालनी होगी। इमली और नीमकी पत्तियाँ ऐसी ही चीजे है।[2]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-११-१९३५

१. जयकृष्ण पी० भणसाली।

२. देखिए "सावधानीकी जरूरत", ३०-११-१९३५

१४०. जाति-प्रथाको मिटना है

सर गोविन्दराव मडगाँवकरकी खुली चिट्ठी[1] इस अकमें मैं सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ। इस सम्बन्धमें मेरा अपना क्या मत है, इसपर मैं 'हरिजन' मे अनेक वार लिख चुका हूँ। सार-रूपमे मेरे विचार ये है.

१ मै वेदोक्त वर्णाश्रममे विश्वास करता हूँ, जो मेरी रायमे दरजेकी पूर्ण समानतापर आधारित है, यद्यपि स्मृतियो तथा अन्य ग्रन्थोमें ऐसे अश भी मिलते हैं जो इसके विपरीत है।

२ शास्त्रोमें गिनी जानेवाली सभी मुद्रित पुस्तकोका प्रत्येक शब्द मेरी रायमे परम सत्य नही है।

३. जिन्हें हम प्रामाणिक वचन मानते है उनकी व्याख्यामे वरावर विकास होता आया है और मनुष्यकी वुद्धि और हृदयकी तरह उस व्याख्यामे भी असीम विकासकी गुंजाइश है।

४. शास्त्रोंमें जो वस्तु स्पष्ट ही सर्वव्यापी सत्यों और सदाचारोके विरुद्ध है, वह कभी ठहर नही सकती।

५ युक्तिवादसे सिद्ध की जानेवाली शास्त्रोकी कोई भी वस्तु यदि वुद्धिके विरुद्ध जाती है तो वह कभी टिकनेकी नही।

६ शास्त्रोक्त वर्णाश्रम आज व्यवहारतः विलुप्त हो गया है।

७ वर्तमान जाति-प्रथा वर्णाश्रमके विलकुल ही विपरीत है। लोकमत इसे जितनी ही जल्दी नष्ट कर दे उतना अच्छा।

८. वर्णाश्रममें विभिन्न वर्णोंके वीच परस्पर रोटी-वेटी-व्यवहारके लिए कोई निषेध नही था और न होना चाहिए। निषेध तो उसमें अर्थलाभके लिए अपनी आजीविकाका वंशपरम्परागत धन्धा वदल देनेका है। इसलिए इस मौजूदा जाति-प्रथामें तो दो-दोदोष है — एक ओर तो उसने रोटी-वेटी-व्यवहारके सम्वन्धमे कठोर प्रतिवन्ध लगा रखे है और दूसरी ओर चाहे जिसके द्वारा जो धन्धा ग्रहण कर लेनेकी अराजकता वह वर्दाश्त किये जा रही है।

९ यद्यपि वर्णाश्रममें रोटी-वेटी-व्यवहारका कोई निषेध नही है, तो भी उसमें कोई जोर-जवरदस्ती नही हो सकती। कोई विवाह-सम्वन्ध किसके साथ करे या कहाँ और किसके साथ खाये-पिये, यह तो व्यक्तिकी इच्छापर ही छोड़ देना चाहिए।

१. यहाँ नही दी गई है। इसमें वम्बई उच्च न्यायालयके भूतपूर्व न्यायाधीश सर गोविन्दरावने गांधीजी, मालवीयजी और केल्कर-जैसे हिन्दू नेताओं से सामाजिक सुधारको उत्तजन देनेकी पुरजोर अपील की थी।

यदि वर्णाश्रमके नियमका पालन किया जायेगा तो विवाहके सम्बन्धमें स्वभावतः लोगोकी प्रवृत्ति यह होगी कि अपने वर्णके भीतर ही विवाह-सम्बन्ध किया जाये।

१०. यह मै अनेक बार कह चुका हूँ कि शास्त्रोमे जन्मना अस्पृश्यता-जैसी चीजका तो कही नाम भी नही है। अतः आजकी इस वर्तमान अस्पृश्यताको मै एक पाप और हिन्दू-धर्मका सबसे बड़ा कलक मानता हूँ। मै इस बातको पहलेसे भी अधिक महसूस कर रहा हूँ कि अगर यह अस्पृश्यता जीवित रही, तो हिन्दू-धर्मका नाश निश्चित है।

११. जात-पाँत नष्ट करनेका सबसे अधिक प्रभावकारी, सबसे अधिक सत्वर और सबसे अधिक विनम्रतायुक्त मार्ग यह है कि सुधारक स्वय उसपर अमल करना आरम्भ कर दे और जहाँ आवश्यक हो वहाँ सामाजिक बहिष्कारका दण्ड सिरपर लेनेको तैयार रहे। कट्टर विचारके लोगोको कोसने या गालियाँ देनेसे सुधार होनेका नही। परिवर्तन धीरे-धीरे और सूक्ष्म रूपसे होगा। निम्न-वर्गीय कहे जाने वालोंपर उच्च-वर्गीय कहे जानेवाले कोई असर डाल सके, इसके लिए उन्हे अपनी श्रेष्ठताका अभिमान छोडना होगा। ग्राम-कार्यका दैनिक अनुभव हमे यह बतलाता है कि नगर-निवासियो और ग्रामवासियो, उच्च वर्गो और निम्न वर्गोके बीच जो खाई पड़ गई है, उसे पाटना कितना कठिन काम है। ये दोनो समानार्थक शब्द नही हैं; क्योकि वर्ग-भेद तो शहरो और गाँवों, दोनोमे मौजूद है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-११-१९३५

१४१. बाल-विवाहकी भीषणता

बाल-विवाह-निषेधक समितिने बाल-विवाह-विषयक एक उपयोगी तथा शिक्षाप्रद सूचनापत्र प्रकाशित किया है। उसमेसे मुख्य-मुख्य भाग मै नीचे उद्धृत कर रहा हूँ:[1]

१९३१ की जनगणना रिपोर्टमें १५ वर्षसे नीचेकी उम्रमें ब्याही हुई लड़कियोंके आँकड़े उम्र-वर्गके अनुसार इस तरह दिये गये हैं:

उम्र-वर्ग	विवाहिताओंका प्रतिशत
० से १	०.८
१ से २	१.२
२ से ३	२.०
३ से ४	४.२
४ से ५	६.६

१. यहाँ कुछ अंश ही दिये गये हैं।

५ से १०	१९.३
१० से १५	३८.१

इस तरह एक वर्षसे कम उम्रवाली सौ लड़कियोंमें से लगभग एक विवाहित है; और १५ वर्षसे कमकी सभी उम्र-वर्गकी लड़कियोंके सम्बन्धमें ऐसा ही भयावह चित्र देखनेको मिलता है।

इसका एक नतीजा यह हुआ है कि हमारे देशमें इतनी बड़ी संख्यामें बाल-विधवाएँ मौजूद हैं जिसपर विश्वास नहीं होता। इसके जरा आँकड़े देखिए:

उम्र-वर्ग	विधवाओंकी संख्या
० से १	१,५१५
१ से २	१,७८५
२ से ३	३,४८५
३ से ४	९,०७६
४ से ५	१५,०१९
५ से १०	१,०५,४८२
१० से १५	१,८५,३३९

बाल-विवाहका दूसरा दुष्परिणाम यह हुआ कि एक बड़ी संख्यामें अल्पवयकी माताएँ प्रसव-कालमें ही मर जाती हैं। हिन्दुस्तानमें हर साल प्रसव कालमें औसतन २,००,००० स्त्रियाँ मरती हैं, अर्थात् हर घंटे २० की मृत्यु होती है। उनमें ज्यादातर कम उम्रकी लड़कियाँ ही होती हैं। . . .

बाल-विवाहके कारण माताओंकी ही नहीं, बल्कि बच्चों और इसलिए समस्त जातिकी भी अपरिमित हानि होती है। हिन्दुस्तानमें प्रति हजार जन्मे हुए बालकोंमें १८१ बालक मर जाते हैं। यह तो औसत है; परन्तु इस देशमें ऐसी कितनी ही जगहें हैं जहाँ यह औसत फी हजार ४०० तक पहुँच जाता है।...

ये आँकडे देखकर हम सबको अपना सिर शर्मसे नीचा कर लेना चाहिए। पर इससे वह कुप्रथा दूर होनेकी नही। बाल-विवाहकी यह बुराई जितनी शहरोंमें फैली हुई है, कमसे-कम उतनी ही गाँवोमें भी फैली हुई है। यह काम तो खास करके स्त्रियोका है। पुरुषोको भी अपने हिस्सेका काम करना तो है ही, परन्तु पुरुष जब पशु बन जाता है तब वह समझदारीकी बात सुनना पसन्द नही करता। इसलिए माताओको ही उनके इनकार कर देनेका अधिकार बताना है और उन्हे उनका धर्म समझाना है। यह उन्हे सिवा स्त्रियोके और कौन सिखा सकता है? इसलिए मै यह सलाह देनेका साहस करता हूँ कि अखिल भारतीय महिला-परिषदको यदि अपना नाम सार्थक करना है तो उसे शहरोसे हटकर गाँवोके कार्य-क्षेत्रमें उतरना चाहिए। ये सूचनापत्र बड़े मूल्यवान है। परन्तु थोड़ी-सी शहरोमे रहनेवाली अंग्रेजी पढ़ी-लिखी

बहनोंतक ही वे पहुँचेंगे। असल जरूरत तो गाँवोंकी स्त्रियोंके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क जोड़नेकी है। यह सम्बन्ध अगर कभी जुड़ भी गया तो भी जुड़नेके साथ ही काम सरल नहीं हो जायेगा। किन्तु किसी-न-किसी दिन तो इस दिशामें शुरुआत करनी ही पड़ेगी। उसके बाद ही किसी परिणामकी आशा की जा सकती है। अखिल भारतीय महिला परिषद क्या अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके साथ-साथ काम करेगी? कोई भी ग्राम-सेवक या ग्राम-सेविका चाहे कितनी ही कुशल हो, तो भी उसे मात्र समाज-सुधारके लिए गाँवोंके लोगोंके पास जानेका विचार नहीं करना चाहिए। उसे तो ग्राम-जीवनके सभी अंगोंके सम्पर्कमें आना पड़ेगा। मैंने अनेक बार कहा है और फिर कहूँगा कि ग्राम-सेवा ही सच्ची जन-शिक्षा है। शिक्षा अक्षर-ज्ञानकी नहीं देनी है, बल्कि ग्रामवासियोंको यह सिखाना है कि मनुष्य, जो विचार करनेवाला प्राणी माना जाता है, वास्तविक जीवन व्यतीत करनेके योग्य किस प्रकार बन सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-११-१९३५

१४२. तार : आर० आर० बखलेको

[१६ नवम्बर, १९३५][1]

बखले
सर्वइन्डिया
बम्बई

सोसायटीने[2] अपना एक संस्थापक, देशने एक सच्चा और अथक सेवक तथा हरिजनोंने एक निर्भीक मित्र खोया है। देवधर श्रेष्ठतम कोटिके समाज-सुधारक थे। इस शुद्ध आत्माका सब प्रकारसे कल्याण होगा। उनसे सम्बन्धित सभी लोगोंके प्रति मेरी संवेदना है।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

१. यह संवेदना-सन्देश १६ नवम्बर को गो० कृ० देवधरका देहान्त होनेपर भेजा गया था।
२. सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी।

१४३. पत्र : द्रौपदी शर्माको

वर्धा
१६ नवम्बर, १९३५

चि० द्रौपदी,

तुमारा ३० अक्तूवरका खत मिला। ८ अक्तूबरका नही मिला है, न मुझे कोलम्बोका पत्र वापिस आया है। रामदासके पत्रके साथ जो था वह मिल गया। इस वक्त तो लङ्का वाले पत्रकी नकल भेजनेकी तकलीफ नेंही दूंगा। वहांसे कुछ पता निकल सकता है तो निकालो। किसको दिया था? तुमारे पत्र न होनेकी शिकायत शर्मा करता है। पत्र लिखनेका आलस्य न किया जाये। जब आलस्य है ऐसा स्वीकार करती है तो पीछे तुमारे आलस्य निकाल देना चाहिये। सब अच्छे होंगे। पत्र लिखो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९२

१४४. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

वर्धा
१७ नवम्बर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

साथका पत्र यदि तुम्हे ठीक लगे तो उसे कविठा भेज देना। और हिजरतके लिए यदि तुम्हे किसी व्यक्तिका नाम मिले तो गुलजारीलाल[1] से मिलकर फिलहाल उसे किसी मिलमे रखवानेकी व्यवस्था कर देना। यदि तुम्हे किसी तरहकी अड़चन पेश आये तो मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३४) से। सी० डब्ल्यू० १३३ से भी; सौजन्य . परीक्षितलाल एल० मजमूदार

१. गुलजारीलाल नन्दा, जो उस समय श्रमिक संघ, अहमदाबाद के मन्त्री थे।

१४५. पत्र : चन्दन पारेखको

१७ नवम्बर, १९३५

चि० चन्दू,

बहुत प्रतीक्षाके बाद तेरा पत्र मिला। . . . यहाँ रुके हुए हैं। . . . भी उतने ही दृढ़ हैं जितनी तू है। मुझे तो तुम दोनोंकी प्रतिष्ठा प्यारी है। तुम दोनोंकी भलाईमें ही मेरी भलाई और शान्ति निहित है। फिलहाल मेरी और काकासाहबकी ओरसे शंकरका मन भले फिर गया हो, किन्तु तू यह क्यों भूल जाती है कि तू काकासाहबकी पुत्रवधू होनेवाली है। इस कारण भी तेरे हितकी चिन्ता सहज ही बढ़ जाती है। . . . से तो पुराना सम्बन्ध है ही। तेरे आये बिना मैं सचाईका पता नहीं लगा सकता और यदि तू इस समय नहीं आती तो अपने कर्त्तव्यसे च्युत हो जायेगी। अतः अड़चन झेलकर भी तुझे आना चाहिए। बाल[1]की सलाह और सहायता लेना।

शेष मिलनेपर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३९) से, सौजन्य : सतीश कालेलकर

१४६. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा

१८ नवम्बर, १९३५

दोबारा नहीं पढ़ा

प्रिय अमृत,

तुमने गाँवकी अपनी यात्राका और वहाँ अपने कार्यका जो वर्णन किया है उससे मनको बड़ी राहत और प्रेरणा मिली। यहाँ सिन्दीका हाल लिखते हुए तो हम अपनी निराशाका ही बयान कर सकते हैं। इसलिए तुम्हारी रिपोर्ट हमारे निराशाजनक अनुभवके सन्दर्भमें तो बहुत आकर्षक है। आशा है, प्रगति कायम रखी जायेगी।

१. द० बा० कालेलकरके बड़े पुत्र।

तो तुम सहारनपुर नही गई — या न जा सकी? जा सको तो जाना चाहिए।

मुझसे लम्बे पत्रकी आशा न ही करो। हाँ, सोमवारको, अर्थात् जिस दिन मैं लिखनेके लिए अपने दाये हाथका उपयोग करता हूँ उस दिन जरूर तुमसे अपने मनकी बात कहनेको बडा जी चाहता है।

तुम तो यहाँ आनेसे भी पहले मुझपर पिस्तौल ताने हुई हो कि तुम्हे यहाँसे कब प्रस्थान कर जाना चाहिए। अगर तुम यह भी बता दो कि तुम अन्तत. कबतक यहाँ पहुँचोगी तो तुम्हारा यह पूछना शायद कुछ उचित हो।

देवदास जमनालालजीके यहाँ है। उसकी तबीयतमें ठीक सुधार हो रहा है। अब भी वह खुद कुछ करनेकी कोशिश करता है तो थक जाता है। वह बोलकर लिखानेका काम काफी करता है।

अभी प्यारेलाल और उसकी बहन भी यही है।

'हरिजन' के इस अकमें बाल-विवाह-सम्बन्धी टिप्पणी[1] देखना। दूसरी [टिप्पणी] समय पर आंशिक रूपसे प्रकाशित की जायेगी। उसे वापस तो नही चाहती?

तुम सबको प्रेम।

बापू

[पुनश्च:]

श्रीमती सैंगर[2] २६ के आसपास आने वाली है, तुम भी तब यहाँ रहतीं तो कितना अच्छा होता।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५७) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६३६६ से भी।

१४७. पत्र: रामचन्द्र जे० सोमनको

१८ नवम्बर, १९३५

भाई सोमन,

दूधकी बजाय गायके दूधका दही दिनमें एक ही बार लो। फिलहाल २० तोला दूधपर ही सन्तोष करो। दहीमें १० ग्रेन सोडा बाइकार्ब डालकर और उसे चम्मचसे अच्छी तरह मिलाकर चम्मचसे दही चाटना चाहिए। दही खट्टा नही होना चाहिए। बीस तोला कच्चा दूध नाप लो। उबालनेके बाद दूध कुछ कम हो जायेगा। दूधको औटाना नही चाहिए। यह हुआ सुबहका पूरा नाश्ता। दही खानेके पहले कमसे-कम आध घंटे तेजीसे घूम आना चाहिए। भूख होनेपर ही दही लेना चाहिए अन्यथा नही लेना चाहिए। यह तुम ७ बजे ले चुके होगे। घडी सामने

१. देखिए "बाल-विवाहकी भीषणता", १६-११-१९३५।
२. देखिए "भेंट: मार्गरेट सैंगरको", ३/४-१२-१९३५।

रखकर खानेमें बीस मिनट लगाना। ग्यारह बजे दस तोले गेहूँके मोटे आटेकी अच्छी तरह सिकी हुई भाखरी और रँधी हुई मेथीकी भाजी खाना। यदि उसमें राई, हल्दी और जरा-सा तेल डालना चाहो तो डाल लेना। साथ ही लाल-लाल कच्चे टमाटर भी खाना। इसके सिवा और कुछ नही।

अपराह्नमे गरम पानीमे नीबू और सोडा मिलाकर यदि पीना चाहो तो पीना। साँझको छह बजे ऊपर बताये अनुसार भाखरी और दूध या अरवीके पत्तोका साग लहसुन डालकर लेना चाहिए और मेथीकी थोडी-सी कच्ची भाजी लेनी चाहिए। टमाटर लेना चाहो तो ले सकते हो। फिलहाल फल लेनेकी जरूरत नही है। इस तरह एक सप्ताह चलानेके बाद इसमे हेर-फेर किया जा सकता है।

रोज साँझको एक घटे घूमना चाहिए। सुबह और शामको खाली पेट ध्यानपूर्वक प्राणायाम करना चाहिए। प्यास लगनेपर आवश्यकतानुसार उबाला हुआ पानी, गरम या ठडा, पीना चाहिए। फिलहाल गुड़ या चीनी बन्द रखनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०५०) से। सी० डब्ल्यू० ९५ से भी; सौजन्य : रामचन्द्र जे० सोमन

१४८. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
१९ नवम्बर, १९३५

चि० अम्बुजम्,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने मुझे थोड़ी-सी रागी भेजी है सो ठीक किया। मैं तो सिर्फ नमूनेके लिए थोडी-सी रागी चाहता था। अब मैं उसका प्रयोग करके देखूँगा। क्या उसकी केवल रोटियाँ ही बनाई जाती है या उसको चावलकी तरह भी इस्तेमाल कर सकते है? उसका दाम क्या है? मैं दाम तुम्हें भेजनेके लिए नही बल्कि दामोकी तुलना करनेके लिए पूछ रहा हूँ। अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके बारेमें तुम्हारी कठिनाई मैं समझ गया। मैं सहमत हूँ कि तुम्हे उसका सामान्य सदस्य नही बनना चाहिए। मै नियमोको पढ़ूँगा और देखूँगा कि क्या किसी भी श्रेणीके अन्तर्गत तुम आसानीसे प्रवेश पा सकती हो। सम्भवत भारतन् या [जे० सी०] कुमारप्पा तुम्हे लिखेगे।

तुम्हारी भेजी हुई रागीका प्रयोग कर लेनेके बाद तुम्हे लिखूँगा कि तुम और रागी भेजो या न भेजो।

अगली बार जब तुम यहाँ आओगी तब तुम्हें कमसे-कम कुछ-एक दिन तो रहनेके विचारसे आना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्री अम्बुजम्
मद्रास

मूल अंग्रेजीसे: अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१४९. पत्र: डाह्याभाई म० पटेलको

१९ नवम्बर, १९३५

भाई डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। मेलेमें चलनेवाली बुराइयोंके बारेमें तुम मुझसे लिखनेको कहते हो। यह तो ठीक है कि मैं लिखना चाहूँगा, लेकिन क्या इसका किसीपर असर पड़ेगा? लिखना तो तभी अच्छा लगता है जब उसके फलस्वरूप कुछ असर पड़नेकी आशा हो। एक हजार रुपये दूसरेवाली बात भी चर्चा तो सारे देशमें हो रही है। यदि हम ऐसे दुःखोंकी बात सुन-सुनकर रोते रहेंगे तो कोई लाभ नहीं हो सकेगा। जो अपरिहार्य है उसका दुःख ही नहीं करना चाहिए, जो परिहार्य अर्थात् हमारी पहुँचके भीतर है हम उससे ही पार पा सकेंगे। इसलिए यदि सच्चा ग्रामीण बनना हो तो तुम्हें ग्रामीणोंकी भाँति दूसरी अन्य सब चीजें भूल जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई मनोरभाई पटेल
कांग्रेस ऑफिस
धोलका

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७०८) से; सौजन्य: डाह्याभाई म० पटेल

१५०. पत्र : कोकाभाई एल० वघेलाको[1]

[२१ नवम्बर, १९३५ के पूर्व][2]

पण्डित मालवीयजी वर्धा नही पहुँचे है। उनके आनेकी बहुत कम सम्भावना है। डॉ० अम्बेडकरसे मेरा मिलना जरूरी नही होगा, लेकिन होगा तो मिलनेमें सकोच नही करूँगा। अहमदाबाद जाऊँगा, तब हरिजन-क्षेत्रोको भी देखनेकी कोशिश करूँगा, लेकिन मेरे अहमदाबाद जानेपर मेरा कार्यक्रम श्री वल्लभभाई पटेल निश्चित करेगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-११-१९३५

१५१. पत्र : हीरालाल शर्माको

वर्धा
२१ नवम्बर, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला था। 'हिन्दुस्तान टाइम्स' तुमको यो ही मिलता रहेगा। देवदास यहा है। उसने कबूल कर लिया है। द्रौपदीका खत आया है। वह खुश रहती है, ऐसा लिखती है और अब हमेशा खत लिखती रहेगी।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २१०-११

१. अहमदाबादके एक हरिजन नेता।
२. यह पत्र दिनाक "अहमदाबाद, २१ नवम्बर, १९३५" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

१५२. भाषण : प्राध्यापकों और छात्रोंके समक्ष, वर्धामें[1]

[२३ नवम्बर, १९३५के पूर्व]

यह मालूम होनेपर कि वे लोग[2] वयस्कों और बच्चोके लिए रात्रि-पाठशालाएँ खोलनेका विचार कर रहे है, गाधीजीने उनसे पूछा कि आप लोग अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके अधीन काम करना पसन्द करेगे या अपना कोई अलग रास्ता निश्चित करेंगे। अगर अलग रास्ता निश्चित करना हो तब तो स्वभावतः मुझे आपको कोई सुझाव नहीं देना है। यदि आपको अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके अधीन काम करना हो तो ग्रामवासियोंको जिस प्रकारकी शिक्षाकी जरूरत है उसके सम्बन्धमें अपने विचार मैं आपको बताऊँगा। उन्होंने कहा :

उन्हे जरूरत लिखने-पढने और गणितके ज्ञानकी नही, बल्कि अपने आर्थिक जीवन का ज्ञान प्राप्त करने और उसमें किस प्रकार सुधार किया जा सकता है, यह जानने की है। आज तो वे मात्र यन्त्रोकी तरह काम कर रहे है, उन्हे न तो अपने परिवेश और पडोसके प्रति अपने दायित्वोका कोई बोध है और न श्रमके सुखका एहसास। इसमें सारा दोष हमारा है, क्योकि हमने उनके साथ कोई सम्पर्क ही नही रखा। स्वर्गीय रमेशचन्द्र दत्तकी तरह उनकी राजनीतिक और आर्थिक अवस्थाका अध्ययन हमने अवश्य किया है। हमे यह तो बताया गया है कि वे किस हीनावस्थामें पहुँच गये है, मगर उन्हे नही मालूम है कि अपनी गरीबीको वे खुद पूर्णत अथवा अंशत कैसे दूर कर सकते है। मै समझता हूँ, अब उन्हे यह बताया जा सकता है कि वे अपनी आय दुगुनी कैसे कर सकते है। आप कहेगे कि वे भारी करोके बोझसे दबे हुए है। वे दबे हुए जरूर है, लेकिन अभी मेरा वास्ता उस समस्यासे नही है। हमारी वर्तमान नीति तो राजनीति और राजनीति-अर्थनीतिके प्रश्नको अलग रखनेकी है। इसलिए आपको अपना कार्य उनकी सामाजिक, स्वास्थ्य-विषयक तथा नैतिक अवस्थाके अध्ययनसे प्रारम्भ करना है। इस कामके लिए आप चाहे तो जादुई दीप (मैजिक लैटर्न)की सहायता ले सकते है। आपको उन्हे यह समझाना है कि अस्पृश्यता धर्मका हिस्सा नही है और ऊँच-नीचकी भावनाके लिए किसी भी धर्ममे स्थान नही है। जिस प्रकार कोई स्वस्थ व्यक्ति किसी अस्वस्थ व्यक्तिको दर्जेमें अपनेसे नीचा नही मानता, उसी प्रकार किसी शिक्षक या व्यापारीको किसी भगीको अपनेसे नीच नही मानना चाहिए। आपको उन लोगोको धर्म और नीतिकी ये बुनियादी बाते सिखानी है। इसके बाद आप उन्हे भूगोल और इतिहास पढायें। इसे आप

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत।
२. वर्धामें एक नवस्थापित कालेजके प्राध्यापक और छात्र।

खुद उनके गाँवके इतिहासकी पढाईसे शुरू करे। अब मै उन्हे इन चीजोके सम्बन्धमें ज्ञान देनेके साधनके रूपमे उन्हे पढाई-लिखाई और गणित सिखानेको कहूँगा, लेकिन इसके लिए आपको उन्हे मैट्रीकुलेट या ग्रेजुएट बनानेकी जरूरत नही है। आजके जमानेमें अंग्रेजीका ज्ञान आयका एक साधन भले हो सकता हो, लेकिन किसीके मस्तिष्क और शरीरके सही विकासके लिए वह आवश्यक नही है। हमारी सारी शक्ति तो एक विदेशी भाषापर अधिकार पाने और असख्य ऐसी पुस्तकोके अध्ययनमे चुक जाती है जिनसे न तो हमे अपने-आपको शारीरिक तथा नैतिक दृष्टिसे स्वस्थ रखनेमे सहायता मिलती है और न ग्रामवासियोकी कोई सेवा करनेमें। तो इस प्रकार आप इस बातपर गौर करेगे कि पढाई-लिखाई और गणितको कहाँसे आरम्भ करना मै उचित मानता हूँ। इसकी जरूरत आरम्भमें नही, बल्कि सबसे अन्तमें और बहुत बादमें होती है और सो भी स्थायी वस्तुओकी प्राप्तिमे सहायक एक साधनके रूपमे ही। ग्रामवासियोके बीच आपके समयका इससे अच्छा उपयोग और कुछ नही हो सकता कि आप हर रात घटा-भर उन्हे आरोग्यके नियम, सामाजिक नैतिकता तथा सहज श्रमके आधारपर खड़े किये गये उद्यमशील जीवनकी शिक्षा दिया करे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २३-११-१९३५

१५३. भयकी भावना

बहुत-से ग्राम-सेवक ग्राम्यजीवनसे इतने भयभीत है कि उन्हे बराबर यह आशंका बनी रहती है कि अगर कोई सस्था उनका खर्चा नही देती तो वे गाँवोमे अपने श्रमके बलपर अपनी जीविका उपार्जित नही कर पायेगे — विशेषकर उस अवस्थामें जब वे विवाहित हो और उनपर उनके कुटुम्बके भरण-पोषणका दायित्व हो। मेरी रायमे यह उनके नैतिक बलको तोडनेवाली धारणा है। इसमे शक नही कि अगर कोई आदमी शहरी मनोवृत्तिके साथ गाँवमे जाये और शहरकी ही तरह वहाँ भी अपना रहन-सहन रखना चाहे, तब तो उसके लिए वहाँ अपने गुजारे लायक कमाई करना असम्भव ही है। उस हालतमे तो वह तभी उतनी कमाई कर सकता है जब शहर-वालोकी तरह वह ग्रामवासियोका शोषण करे। लेकिन अगर कोई किसी एक गाँवमे जा बसे और वहाँ गाँववालोकी तरह ही रहनेकी कोशिश करे, तो अपने परिश्रम द्वारा अपना गुजारा करनेमे उसे कोई दिक्कत नही होगी। उसे इस बातका विश्वास होना चाहिए कि जब वे ग्रामवासी भी किसी-न-किसी तरह अपने गुजारेके लायक कमा ही लेते है, जो बारहो महीने बाप-दादोके वक्तसे चले आये ढर्रेपर, अपनी बुद्धिका उपयोग किये बगैर, आँख मूँदकर मेहनत करनेको तैयार है तो वह भी कमसे-कम उतना तो कमा ही लेगा जितना कि औसतन कोई ग्रामवासी कमा लेता है। और ऐसा करते हुए वह किसी ग्रामवासीकी रोजी भी नही मारेगा, क्योकि गाँवमे वह उत्पादक बनकर जायेगा, न कि परोपजीवी बनकर।

गाँवमे जानेवाले ग्राम-सेवकके साथ अगर उसका साधारण सदस्य-सख्यावाला परिवार भी हो, तो उसकी पत्नी तथा परिवारके किसी एक अन्य व्यक्तिको चाहिए कि वे भी दिन-भरकी पूरी मशक्कत करे। यह तो नही कहा जा सकता कि गाँवमें जाते ही कोई कार्यकर्त्ता गाँववालोकी तरह कडी मशक्कत करने लगेगा। लेकिन अगर वह अपनी हिचक और भयकी भावना छोड दे, तो यह जरूर है कि अपनी मेहनतकी कमीकी पूर्ति वह बुद्धिमत्तापूर्वक काम करनेसे कर लेगा। जबतक कि गाँववाले उसकी सेवाकी इतनी कद्र न करने लगे कि उसका सारा समय उनकी अधिकसे-अधिक सेवामे ही लगने लगे, तबतक उसे कोई ऐसा उत्पादनका कार्य करते रहना चाहिए, जिससे दूसरोपर बोझ पडे बिना उसका खर्च चलता रहे। हाँ, जब उसका सारा समय सेवामे ही लगने लगे, तब वह उस अतिरिक्त उत्पादनमे से बतौर कमिशनके कुछ पानेका पात्र होगा, जो उसके द्वारा प्रेरित उपायोके फलस्वरूप होने लगेगा। लेकिन ग्रामोद्योग सघकी देखरेखमे जो ग्राम-कार्य शुरू हुआ है, उसका कुछ महीनोका अनुभव तो यह जाहिर करता है कि गाँववाले हमारे प्रयत्नोके प्रति अनुकूल प्रतिक्रिया बहुत धीरे-धीरे दिखायेगे और कार्यकर्त्ताको गाँववालोके सामने अपने आचरणसे यह सिद्ध कर देना पडेगा कि श्रम और सदाचरणकी दृष्टिसे वह उनके लिए एक नमूना है। यह उनके लिए सबसे अच्छा पदार्थ-पाठ होगा और अगर कार्यकर्त्ता गाँववालोका सरक्षक बनकर उनसे एक खास दूरी रखते हुए उनसे अपनी पूजा करानेके बजाय उनके साथ हिल-मिलकर रहेगा तो देर-सवेर उसका असर पडे बिना नही रहेगा।

अब सवाल यह है कि जीविकाके लिए अपनी पसन्दके गाँवमे वह कौन-सा काम करे? उसे और उसके घरवालोको अपना कुछ-न-कुछ समय तो गाँवकी सफाईमें लगाना ही होगा, चाहे गाँववाले इसमें उसकी मदद करे या न करे। फिर, साधारण तौरपर दवा-दारूकी जो सीधी-सादी मदद वह कर सकता है वह भी करेगा ही। इतना तो प्रत्येक व्यक्ति कर ही सकता है कि कुनैन या इसी तरहकी मामूली दवा बता दे, घाव या जख्म धोकर साफ कर दे, मैली आँखो और कानोको धो दे और घावपर साफ मरहम लगा दे। मै ऐसी किसी किताबकी खोजमे हूँ, जिसमे गाँवोमें हमेशा ही होनेवाली मामूली बीमारियोके लिए सरल-से-सरल उपाय और हिदायतें हो। क्योकि कैसी भी हो, ये दोनो बाते तो ग्राम-कार्यका मूल अग होगी ही। इनमें ग्राम-सेवकका दो घटे रोजसे अधिक समय नही लगना चाहिए। ग्राम-सेवकके लिए 'आठ घटे का' दिन जैसी बात नही। ग्रामवासियोके लिए वह जो श्रम करता है, वह तो उसके प्रेमका श्रम है। अत अपने गुजारेके लिए, इन दो घटोके अलावा, उसे कमसे-कम आठ घटे तो लगाने ही होगे। यह ध्यान रखनेकी बात है कि चरखा सघ और ग्रामोद्योग संघने जो नई योजना बनाई है, उसके अनुसार तो सब तरहके श्रमका एक न्यूनतम समान मूल्य है। इस प्रकार जो पिंजक अपनी पीजनपर एक घटा काम करके औसत परिमाणमे रुई धुनकता है, वह ठीक उतनी ही मजदूरी पायेगा जितनी कि उतने समयके अर्थात् एक घटेतक निश्चित परिमाणमे किये हुए कामके लिए किसी बुनकर, कतैये या कागज बनानेवालेको मिलेगी। इसलिए ग्राम-सेवक अपनी इच्छाके अनुसार

कोई भी ऐसा काम चुनकर उसे सीख सकता है, जिसे वह आसानीसे कर सके; अलबत्ता, यह सावधानी हमेशा रखनी चाहिए कि काम ऐसा ही चुना जाये, जिसके फलस्वरूप तैयार होनेवाला माल उसी गाँवमे या उसके आसपासके इलाकेमे खप सके अथवा जिस मालकी सघोको जरूरत हो।

हर गाँवकी एक वहुत बडी आवश्यकता यह है कि वहाँ एक ऐसी अच्छी दुकान हो, जहाँसे खाने-पीनेकी शुद्ध चीजे और दूसरी वस्तुएँ भी लागत मूल्यपर वाजिव मुनाफा देकर मिल सके। यह ठीक है कि दुकान चाहे कितनी ही छोटी हो, फिर भी उसके लिए थोडी-वहुत पूँजी तो चाहिए ही। लेकिन जो कार्यकर्त्ता अपने कार्य-क्षेत्रमें थोडा भी परिचित होगा, उसकी ईमानदारीपर लोगोका इतना विश्वास तो होगा ही कि दुकानके लिए थोडा-सा थोक माल उसे उधार मिल जाये।

इस तरहके और उदाहरण देनेकी अव जरूरत नही। जो सेवक सतत निरीक्षणकी वृत्तिसे काम करेगा, उसे नित नई बातोका पता लगता ही रहेगा और वह जल्दी ही यह जान लेगा कि उसे कौन-सा ऐसा काम करना चाहिए, जिससे उसका निर्वाह भी हो और जिन ग्रामवासियोंकी उसे सेवा करनी है, उनके लिए वह एक पदार्थ-पाठ भी प्रस्तुत कर सके। अतएव उसे ऐसा कोई काम चुनना पड़ेगा, जिससे ग्रामवासियोका शोषण न हो और न उनके आरोग्य या नैतिकताको ही धक्का लगे, बल्कि उन्हे अपने फुरसतके समयमें हुनर-उद्योगका कोई काम करके अपनी मामूली आमदनीमें कुछ वृद्धि करनेकी शिक्षा मिले। सतत निरीक्षणसे उसका ध्यान उन चीजोकी ओर जायेगा, जो गाँवोमे अकारण ही वरवाद होती है — जैसे खेतोमे फसलके साथ उग आनेवाले घासपात और अपने-आप पैदा होनेवाली दूसरी चीजे। बहुत जल्द उसे पता लग जायेगा कि उनमें से वहुत-सी चीजोका तो वह अच्छा उपयोग कर सकता है। यदि वह खानेवाला मोथा उखाडा करे तो इसका मतलब तो यह हुआ कि उसने अशत: अपना आहार अपनी मेहनतसे जुटा ही लिया। मीरावहनने तरह-तरहके पत्थर गाँवसे लाकर मुझे दिये है, जो देखनेमे सगमरमर-जैसे सुन्दर लगते है और बडे उपयोगी है। मुझे फुरसत मिली तो शीघ्र ही मैं कुछ मामूली औजार लेकर उनसे उन्हे तरह-तरहकी शक्लोमे वदलकर बाजारमे वेचने लायक बना दूँगा। काकासाहवने बाँसकी खपचियोको, जो वेकार समझकर जलाई जानेवाली थी, एक मामूली चाकूके सहारे कागज काटनेके चाकुओ और लकडीके चम्मचोमे परिणत कर दिया, जिन्हे एक हदतक वाजारमे वेचा भी जा सकता है। मगनवाडीमें कुछ लोग फुरसतके समयका उपयोग रद्दी कागजोके, जो एक तरफ कोरे होते है, लिफाफे बनानेमे करते है।

दरअसल वात यह है कि गाँववाले अव विलकुल निराश हो चुके है। किसी भी अजनवीको देखकर उन्हे यही खयाल होता है कि वह उनका गला दवाने और उनका शोषण करनेके लिए ही आया है। वुद्धि और श्रमका सम्वन्ध-विच्छेद हो जानेसे उनकी विचारशक्ति कुण्ठित हो गई है। कामके समयका भी वे सर्वोत्तम उपयोग नही करते। ग्राम-सेवकको चाहिए कि ऐसे गाँवोमे वह अपने हृदयमें प्रेम और आशा भरकर जाये। उसे इस बातका भरोसा होना चाहिए कि जहाँ स्त्री-पुरुष बुद्धिका

प्रयोग किये बिना काम करते हैं और सालमें छ महीने बेकार बैठे रहते हैं, वहाँ यदि वह पूरे साल बुद्धिपूर्वक काम करेगा, तो निश्चय ही ग्रामवासियोका विश्वासपात्र बन जायेगा और उनके बीच परिश्रम करते हुए ईमानदारीके साथ अपने निर्वाहके लायक अच्छी कमाई कर सकेगा।

'लेकिन मेरे बाल-बच्चो और उनकी पढाईका क्या होगा?' यह बात ग्राम-सेवाके इच्छुक कार्यकर्त्ता पूछते हैं। अगर बच्चोको आधुनिक ढगकी शिक्षा देनी हो, तो मैं कोई ऐसी बात नही बता सकता जो कारगर हो। हाँ, अगर उन्हे ऐसे स्वस्थ, मजबूत, ईमानदार और समझदार ग्रामवासी बनाना काफी समझा जाये, जो जब चाहे तब गाँवमे अपनी रोजी कमा सके, तो उन्हे सारी शिक्षा अपने माँ-बापकी छत्रच्छायामे ही मिल जायेगी; और उसके साथ-साथ जैसे ही वे सोचने-समझने लायक उम्रको पहुँचेगे और अपने हाथ-पैरोका ठीक-ठीक उपयोग करने लग जायेंगे, वैसे ही अपने परिवारके लिए वे थोडी-बहुत कमाई भी करने लगेंगे। सुघड घरके समान कोई स्कूल नही हो सकता, न ईमानदार और सदाचारी माता-पिताके समान कोई अध्यापक हो सकते हैं। आधुनिक माध्यमिक शिक्षा तो गाँववालों पर एक बोझ है। उनके बच्चे कभी भी उसे ग्रहण नही कर सकेंगे, और यदि सुघड़ घरेलू शिक्षा उन्हे प्राप्त हो, तो ईश्वरकी कृपासे जीवनमें उस शिक्षाका अभाव उन्हे कभी खलेगा भी नही। ग्राम-सेवक, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, अगर ऐसा न हो कि अपने घरको सुघड़ रख सके, तो उसके लिए ग्राम-सेवकका विशेष और सम्माननीय पद प्राप्त करनेकी आकाक्षा न रखना ही ठीक होगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-११-१९३५

१५४. एक महान् समाज-सेवक

श्री गो० कृ० देवधरके देहान्तसे देशने अपना एक महान् समाज-सेवक और हरिजनोका एक दृढ और निष्ठावान् मित्र खो दिया है। वे गोखले द्वारा स्थापित सस्थाके प्रारम्भिक सदस्योमे से थे। वे महाराष्ट्र प्रान्तीय हरिजन सेवक सघके अध्यक्ष थे। देशमे कभी अकाल पडा हो या बाढ आई हो और उस ओर इस मानव-सेवकका ध्यान न गया हो, ऐसा कभी नही हुआ। वे चाहते तो बडी आसानीसे सम्पत्तिशाली बन सकते थे, किन्तु उन्होने दरिद्रताको एक जन-सेवकके जीवन-सिद्धान्तके रूपमें वरा। उनकी अनथक कार्य करनेकी शक्ति उनके सम्पर्कमे आनेवाले अन्य लोगोमें भी वैसी ही शक्तिका सचार करती थी। जब भी समाज-सेवाके लिए उनकी पुकार हुई, उन्होने अपने साथ कभी कोई रिआयत नही की। उनका जीवन सम्पूर्ण पवित्रताका नमूना था। पूना सेवा सदनकी वे आत्मा थे। इससे उन्हे अतीव प्रेम था और इसके लिए उन्होने इतना अधिक श्रम किया कि एक छोटी-सी सस्थासे बढते-बढते उसने ऐसा

रूप ले लिया है कि भारतकी कोई भी उस ढगकी सस्था उसे मात नही दे सकती। दिवगत आत्माके परिवारके प्रति मैं हार्दिक सवेदना निवेदित करता हूँ।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २३-११-१९३५

१५५. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
२३ नवम्बर, १९३५

चि० अम्बुजम्,

तुम्हारे दो पत्र, रागी और सोयाबीनका नमूना भी, मिले और अब लोबिया भी मिला है। रागी तो हम पका चुके है किन्तु तुम्हारी बताई विधिसे नही। लोबियामे सोयाबीन जितना मेद-तत्त्वका परिमाण नही होता। अब मै रागीके रासायनिक तत्त्वोका पता लगानेकी कोशिशमें हूँ। यदि तुम्हे किसी डॉक्टरसे इसकी जानकारी मिले तो कृपया लिख भेजो।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१५६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२३ नवम्बर, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारे खतके उत्तर देनेमें ठीक-ठीक देरी हुई है। क्या करू? तुम्हारा बजेट कुछ भारी-सा लगता है। इतने कामोको पहुचने लायक तुम्हारे पास आदमी नही है। अगर तुम्हे आर्थिक मदद मिल सके और काम करनेवाले भी मिले, तो योजना अवश्य अच्छी है। प्रत्येक उद्योग स्वाश्रयी होना ही चाहिये। और वही चीज़ पैदा कि जाय कि जिसके बारेमे मागका आजसे ही विश्वास हो।

तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। मलकानीजीने कहा कि आज तुम नये मकानमे जानेवाले थे।

सोयाबीन कहासे लिये? क्या दाम दिया?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३२) से।

१५७. एक सच्चे हरिजन-सेवकका स्वर्गवास

धर्मनिष्ठ होनेके बावजूद जिन्हे अस्पृश्यताकी भावना छू तक नही सकी है और जो हरिजन-सेवापरायण है, ऐसे स्त्री-पुरुष काठियावाडमे गिने-गिनाये है। ऐसे एक अग्रगण्य सज्जन अमरेलीके श्री हरिलाल गोविन्दजी पारेख थे। स्वर्गीय हरिलाल अमरेलीके प्राण थे। काठियावाड़मे ऐसी कोई लोकोपयोगी प्रवृत्ति नही थी जिसमें श्री हरिलालका योग न रहा हो। सभीको उनकी सेवा और सलाहकी जरूरत रहती थी और सभी उसे स्वीकार करते थे। बहुत तरहसे उनका जीवन आदर्श स्वरूप था, उससे हम जितना सीख सके उतना सीखकर उनकी स्मृतिको बनाये रखे।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २४-११-१९३५

१५८. सभी गुजरातियोंसे

वर्धा
२४ नवम्बर, १९३५

गुजरातके हरिजन सेवक सघको इस वर्षके कामके लिए लगभग २९,००० रुपये की राशिकी आवश्यकता है। सघकी सहायतासे ५७ पाठशालाएँ और ३ आश्रम चलते है। सघका कामकाज ठक्कर बापा-जैसे सेवककी देखरेखमें चलता है। श्री परीक्षितलाले मजमूदार उसके लिए जी-तोड मेहनत कर रहे है। मेरे विचारसे प्रतिवर्ष २९,००० रुपयेका खर्च कुछ भी नही है। यदि हरिजन-सेवाको हम अपना कर्त्तव्य मानते हो और जो लोग ५०० रुपये प्रतिवर्ष कमाते हो यदि वे उसमे से एक रुपया इसी धर्मकार्यके लिए निकालनेका निश्चय कर ले तो भी हर वर्ष लाखो रुपये मिल सकते है। किन्तु इतनी धार्मिक जागृति हममें नही है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक सवर्ण हिन्दू अस्पृश्यताको अधर्म नही मानता, इसलिए हरिजन-सेवाके कर्त्तव्यको वह स्वीकार नही करता। इसलिए जो लोग इसे अपना कर्त्तव्य स्वीकार करते है, उनपर इस कार्यको निभानेकी दुहरी जिम्मेवारी आ जाती है।

अस्पृश्यता-निवारणका काम एक व्यक्तिका नही है। केवल पैसेके बलपर भी यह काम नही किया जा सकता। किन्तु पैसा उक्त सेवा करनेका एक साधन माना जा सकता है। और कुछ नही तो प्रत्येक सवर्ण हिन्दू, जो अस्पृश्यता-निवारणको अपना कर्त्तव्य समझता है, यदि अपनी सामर्थ्यके अनुसार प्रतिवर्ष चन्दा देता रहे तो इस कामको चालू रखा जा सकता है और इस कामको चलानेवाले लोग आर्थिक चिन्तासे उबर जायेंगे।

गुजराती साहित्य परिषद्के लिए जनवरीके दूसरे सप्ताहमे मेरा अहमदाबाद आना होगा। उस समय गुजरातियोसे उक्त रकम इकट्ठी करनेकी आशा मै सँजोये हुए हूँ। गुजरातके बाहर रहनेवाले मित्रोसे [भी] यह भिक्षा माँगनेका सुझाव मुझे दिया गया था, किन्तु मैने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया। कारण, ऐसा करनेसे गुजरातकी बदनामी होगी और मेरी भी बदनामी होगी। हिन्दुस्तानमें गुजरात गरीब प्रान्त नही माना जाता। आड़े मौकेपर गुजरातने अन्य प्रान्तोकी मदद की है। गुजरातने अन्य प्रान्तोसे भिक्षा नही माँगी और न माँगकर उचित ही किया है। फिर ऐसे धर्म-कार्यमे वह क्यो नही देगा? यह सही है कि गुजरातको बहुत-सी निधियोमें पैसा देना पडता है। और यह भी सही है कि गुजरातके किसानो पर बहुत-सी मुसीबते आईं और नुकसान भी हुआ है। किन्तु मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि ये सब बातें धर्मपालनके विरोधमे उद्धृत नही की जा सकती। अत. मै आशा करता हूँ कि सभी भाई-बहन कोशिश करके उपर्युक्त छोटी-सी रकम इकट्ठी कर लेगे और ठक्कर बापा, मुझे तथा अन्य कार्यकर्त्ताओको इस चिन्तासे मुक्त कर देगे। गुजरातमें बहुत-से कामोकी जिम्मेवारी सरदार पर ही रहती है। मै यह जानता हूँ कि उन्हे बहुत-सी प्रवृत्तियोके लिए चन्दा उगाहना पड़ा है। इसलिए मैने जान-बूझकर यह बोझ उनपर नही डाला। किन्तु इसके बावजूद जबतक यह पैसा इकट्ठा नही हो जाता तबतक वे स्वयको चिन्तामुक्त नही मानेगे। किसीको ऐसा नही मानना चाहिए कि अस्पृश्यता-निवारणका कार्य मेरा और ठक्कर बापाका ही है; उसका नही है। मै आशा करता हूँ कि गुजरात मुझे खाली हाथ वापस नही लौटने देगा।

आपका सेवक,
मोहनदास करमचन्द गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१८४) से। सी० डब्ल्यू० .४७८१ तथा हरिजनबन्धु, ८-१२-१९३५ से भी।

१५९. पत्र : एम० आर० मसानीको

वर्धा, मगनवाड़ी
२५ नवम्बर, १९३५

प्रिय मसानी,

अगले पखवाड़े जब चाहो आ जाओ, मगर सोमवारको छोड़कर, क्योकि वह मेरा मौन-दिवस होता है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१२७) से।

१६०. पत्र : अमृत कौरको

२५ नवम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

अब मेरे सामने दो पत्र हैं। कोई पत्र न देनेसे पोस्टकार्ड भेज देना भी बेहतर है। तुम्हारे पहले पत्रके उत्तरमें तुम्हें तार भेजा था। अब इस पत्रके उत्तरमें मैं किसी भी दिन खुद तुम्हारे पहुँचनेका इन्तजार करूँगा।

सप्रेम,

बापू

श्री राजकुमारी अमृत कौर
जलन्धर सिटी
पंजाब

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७१९) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८७५ से भी।

१६१. पत्र : गणेश वासुदेव मावलंकरको

२५ नवम्बर, १९३५

भाई मावलंकर,

स्वागत-समितिमें तुम तो होगे ही। उद्घाटनके लिए समितिसे पूछकर मुझे ले जाना चाहो तो लिवा ले जाना। मेरी ओरसे मृतात्माके कुटुम्बको ढाढस बँधाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२४६) से।

१६२. पत्र : मनु गांधीको

[२५ नवम्बर, १९३५ या उसके पश्चात्][1]

तू कुछ कहना चाहती है क्या? जल्दी लौट आना और मुझे नियमित रूपसे लिखती रहना। पूरे समाचार देना। खूब सादगीसे रहना। हरिलालसे बिलकुल मत डरना। पूनियोंके बारेमें मैं नारणदासको लिखूंगा। कान्ति तुझे छोड़ने जायेगी। टिकट सीधे राजकोट तकका माँगना।

तू सुरेन्द्रको लिखती रहती है न? वहाँसे भी नियमित रूपसे लिखती रहना। क्या वह तुझे लिखता है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५३) से; सौजन्य . मनुबहन सु० मशरूवाला

१६३. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धा

२६ नवम्बर, १९३५

भाई घनश्यामदास,

मलकानी सहमंत्री रहकर अपना अलग काम करेगा, ऐसा कल ठक्कर बापाके सामने ही तय किया था। लेकिन फजरमें[2] मेरे पास आया और कहा "मैं सहमंत्री नही रह सकूंगा।" इस बारेमें मैंने ठक्कर बापाको लिखा है, उसकी नकल इसके साथ रखता हूं।[3] इसलिये यहां ज्यादह लिखनेकी आवश्यकता नही।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०१४ से; सौजन्य . घनश्यामदास बिडला

१. मौन-दिवसका यह पत्र २० नवम्बर, १९३५ को लिखे गये पोस्टकार्ड के पीछे लिखा गया था। २० नवम्बर के बाद सोमवार २५ नवम्बर, १९३५ को था।

२. बिलकुल सुबह।

३. पत्र उपलब्ध नहीं है।

१६४. पत्र : चन्दन पारेखको

वर्धा
२७ नवम्बर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा पत्र मिला। एक प्रतिशत जो [सन्देह] बाकी रह गया है, उसका अर्थ ही यह है कि तू या पिताजी जो-कुछ कहना चाहे मैं उसे सुनने और उसपर विचार करनेको तैयार हूँ। यदि एक प्रतिशत सन्देह भी बाकी नही रहता तो मुझे किसीसे कुछ सुननेको ही न रहता। तू यह मत भूल कि तुझसे बातचीत करनेके पहले . . . और उसके मित्र जो-कुछ कहते थे उसे मैं सन्देहकी दृष्टिसे देखता था। बहुत धैर्यपूर्वक तुझसे बातचीत करनेके बाद मैं . . . की तरफ झुका। तेरी बात कुछ ऐसी है: तुझे साँपने काटा किन्तु उसके जहरका तुझपर कोई असर नही हुआ, हालाँकि तू अनुभवके आधारपर जहरके गुणसे परिचित थी। जिस तरह यह बात बेतुकी है उसी तरह . . . के स्पर्श [से तेरे अप्रभावित रहने]की बात भी बेतुकी है। विषयी पुरुषके डकका जहर सर्पदंशकी अपेक्षा ज्यादा जहरीला होता है। दाँतोसे अपने बच्चेको उठाते हुए यदि साँपके जहरीले दाँत लग जाये तो सँपोलेको भी विष चढ जायेगा। बच्चा माता-पितासे प्रभावित होता है इसलिए यदि वे विष उगलेगे तो बच्चा भी उसके प्रभावसे मुक्त नही रह सकता। अत तू यह जान ले कि तेरी ही गवाहीसे . . . ९९ प्रतिशत निर्दोष सिद्ध हो सका है। और इसीलिए मैंने तुझसे कहा, और फिर कहता हूँ कि पत्र लिखती रहना और सभी समाचार देती रहना। यदि तू मेरी मदद करती रही, तो बाकी एक प्रतिशत सन्देहका भी निवारण हो जायेगा। तेरी गवाहीके बाद को दोषी माननेको मेरा मन तैयार नही होता। किन्तु तू सफेद झूठ बोल रही है, यह भी मेरा मन स्वीकार नही करता। इसलिए जबतक किसी प्रकार कोई विशेष प्रमाण मुझे नही मिल जाता तबतक तेरे प्रति एक प्रतिशत सन्देह, तेरे हिस्सेका, बाकी रहेगा। यदि तू शत-प्रतिशत सच्ची होगी और रोष किये बिना प्रयत्न करती रहेगी तो उस एक प्रतिशत सन्देहको सौ प्रतिशत विश्वासमे बदल सकेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९४०) से, सौजन्य : सतीश द० कालेलकर

१६५. पत्र : उमादेवी बजाजको

२७ नवम्बर, १९३५

चि० ओम,

तेरा पत्र मिला। शिक्षिकाएँ लड़कियोके साथ अग्रेजीके सिवा अन्य किसी भाषामे बोल ही न सके, यह मुझे तो सर्वथा असह्य लगता है। इसके बारेमे तुझे विनयपूर्वक सचालकोसे कुछ निवेदन करना चाहिए। वे लोग ऐसा क्यो करते है? तेरा पत्र ठीक है। तुझे तो ऐसी बातोका अभ्यस्त होनेमे देर नही लगती। वहाँ जो-कुछ अच्छा हो उसे ग्रहण करना और जो त्याज्य है उसका त्याग करनेकी आदत डालना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३४२

१६६. पत्र : रमेशचंद्रको

२७ नवम्बर, १९३५

भाई रमेशचद्रजी,

कृत्रिम उपाय-साधित सतति-निरोध हानिकर है। ऐसा तो मैंने कहा ही है और अभी भी मानता हू। यदि कोई अपवाद शक्य है तो उसका ख्याल तक करना अनुचित समझा जाय। ठीक इसी तरह बीमाकी बात समजी जाये। फरक इतना है कि बीमामे ज्यादा मात्रामें अपवाद हो सकते है। जो आत्मिक हानि सतति-निरोधमें कृत्रिम उपायसे होती है उतनी हानि बीमासे नही होती है।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०९४) से।

१६७. जाति और वर्ण

वर्धा
२८ नवम्बर, १९३५

एक सज्जन लिखते है :

> **आप जो यह कहते है कि "जातियाँ नष्ट हो जानी चाहिए; वर्ण स्थिर है और होने चाहिए। इसे कृपया उदाहरण देकर समझाइए।**

जातियाँ अनेक है और वे मनुष्यकृत है। उनमें निरन्तर परिवर्तन हुआ करते है। पुरानी जातियोका नाश होता है, नई पैदा होती है। धन्धोके अनुसार जातियाँ तो सारी दुनियामें है। लेकिन जातियोके बीच रोटी-बेटीसे सम्बन्धित प्रतिबन्ध केवल भारतमे ही दिखाई पडते है और फिर ये प्रतिबन्ध ऐसे है कि बुद्धिकी पकड़में नही आते। यह वस्तु बहुत हानिकारक है। यह राष्ट्रकी प्रगतिको रोकती है। इसका धर्मके साथ कुछ भी सम्बन्ध नही।

वर्ण अनेक नही, किन्तु चार है। शास्त्रोमें चातुर्वर्ण्यका प्रतिपादन है। लोग इस बातको समझते हो या न समझते हो पर ये वर्ण भी सारे जगतमें देखनेमें आते हैं। जगतके कल्याणार्थ ईश्वर-विषयक ज्ञान देनेवाला; अनेक प्रकारके भयोसे प्रजाकी रक्षा करनेवाला; उनके पोषणके लिए खेती-व्यापार इत्यादि धन्धे करनेवाला, और, इन तीनो वर्गोंकी नौकरी करनेवाला — ये चार विभाग होने ही चाहिए। इनमें ऊँच-नीचका भाव नही होता। किन्तु जगतमें इस चातुर्वर्ण्य-व्यवस्थाको सृष्टिके एक महान् नियमके रूपमें न पहचान सकनेसे वर्णोका सकर हो गया है। अर्थात्, जहाँ होना यह चाहिए था कि इन चारों कार्योमे से प्रत्येक उस कार्यसे सम्बन्धित वर्णमे ही रहता वहाँ अब कोई भी मनुष्य मनचाहे कामोको करता है, और चाहे जिस तरह अपना स्वार्थ साधता है। भारतवर्षमें एक समय इस महान् नियमका ज्ञानपूर्वक पालन होता था और सब सुखपूर्वक रहते थे। सब अपने-अपने वर्णके धन्धे लोक-कल्याणार्थ करके सन्तोष पाते थे। धन या कीर्तिके लोभसे एक वर्णमें से कूदकर दूसरे वर्णोमें छलाँग मारनेवाली, लोगोका अहित करनेवाली प्रतिस्पर्धाएँ नही चलती थी। आज तो भारतवर्षमें भी वर्णकी इस विशेषताका प्राय लोप हो गया मालूम होता है। नाशकारिणी प्रतिस्पर्धा बढ गई है, सभी लोग चाहे जिस धन्धेको करने लगे है और वर्णका अर्थ 'रोटी-बेटी विषयक कृत्रिम और अनावश्यक प्रतिबन्ध'के रूपमे किया जा रहा है। इसके फलस्वरूप राष्ट्रकी प्रगति रुक गई है। यदि ये अनेक प्रकारके प्रतिबन्ध दूर हो जाये, शुद्ध वर्णनीतिका पुनरुद्धार हो, ऊँच-नीचके भेद मिट जायें तो हिन्दू-धर्म पुन उज्ज्वल हो जाये, भारतका कल्याण हो और उसके साथ ही जगतका भी कल्याण हो।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १९-१-१९३६

१६८. पत्र : एस० वी० कामतको

२८ नवम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। मैं उसे उत्तरके लिए श्री गंगाधररावके पास भेज रहा हूँ। उनका उत्तर प्राप्त होनेके बाद आपको और अधिक लिखूँगा।

मित्रोंके साथ जो-जो वार्त्तालाप होते हैं उन सबका मुझे स्मरण तो नही रह सकता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य प्यारेलाल

१६९. पत्र : स्वरूपरानी नेहरूको

२८ नवम्बर, १९३५

प्रिय भगिनी[2],

महीनोंके बाद आपका खत मिला और वह भी मेरे खतके बाद। कुछ न मिले उससे तो यह भी अच्छा ही है।

कमलाका टेंपरेचर वढनेका खत मुझको भी था। आशा करें कि अब तो अच्छा भी हो गया होगा।

कृष्णा[3] के खत जाते होंगे। वह मुझे कहा लिखनेवाली थी। जवाहरलाल को काम कही छोड़नेवाला नही है। जेलमें भी कहां आराम लिया? जेलमें पुस्तक लिखा। वाहर होकर पुस्तक-जैसे खत लिखता है।

१. अपने २७ नवम्बर के पत्र में एस० वी० कामत ने कन्नड़ प्रदेश में राहत-कार्य के लिए गांधीजी द्वारा गंगाधरराव देशपाण्डे को सौंपे हुए २०,००० रु० में से २,६७५ रु० का ब्योरेवार हिसाब पूछा था।

२. जवाहरलाल नेहरूकी माता।

३. कृष्णा हठीसिंह, जवाहरलाल नेहरूकी बहन।

रामदास यों हि है। बवईमे पडा है। इस हफ्तेमे आनेकी उमीद है। बा मजेमे है। महादेव भी मजेमें है। आप अच्छी और प्रसन्नचित्त रहती होगी।

मोहनदास

मूलसे. गाधीजी-इन्दिरा गाधी करेस्पाडेस; सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय.

१७०. पत्र : मीराबहनको[1]

मगनवाडी
२९ नवम्बर, १९३५

चि० मीरा[2],

तुम्हारे पत्र-वाहकको जानेकी जल्दी है। तुम्हारा पत्र आते ही पढ़ा गया। पढनेके तुरन्त बाद उत्तर लिखाया जा रहा है। मँगाई हुई चीजे कल जो आदमी कलका पत्र लेकर आयेगा, उसके साथ भेजी जायेगी। गाय रखनेका विचार अच्छा है। वहाँ कोई गाय न हो तो शायद मै यहाँसे एक गाय भेज सकूँ। वह तुम्हारे लिए अच्छी साथी होगी और उसके कारण तुम्हे अच्छा काम भी मिल जायेगा। तबतक जैसा दूध वहाँ मिले लेती रहो। क्या वहाँ बकरियाँ है? हो तो तुम्हे कुछ बकरियाँ उधार ले लेनी चाहिए। तुम्हे जितना घी लेना आवश्यक हो उतना लेना चाहिए और मगनवाडीसे मँगाते रहना चाहिए। मुझे खुशी है कि तुम्हारा पहला अनुभव इतना सुखद रहा। यहाँ सब खैरियत है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०७) से, सौजन्य. मीराबहन। जी० एन० ९७७३ से भी।

१. **बापूज लेटर्स टु मीरा** में मीराबहन ने बताया है कि यह पत्र उन्हें एक घटनापूर्ण लम्बे अन्तराल के बाद लिखा गया था। कारण यह था कि इस बीच वे गांधीजी की सेवा करती हुई मगनवाड़ी में उनके साथ ही रहती थी। गांधीजी दुर्बल हो गये थे और उनका रक्तचाप बहुत बढ़ गया था। कुछ ठीक होनेपर उन्होंने सिंदी गाँव जाने का इरादा जाहिर किया, क्योंकि एक तो वहाँ की समस्या ज्यों-की-त्यों बनी थी और दूसरे मगनवाड़ी में बहुत भीड़ हो गई थी। गांधीजी के इस निर्णय से लोग बड़े चिन्तित हुए। आखिर मीराबहन ने उन्हें इस बातपर राजी कर लिया कि गाधीजी के बदले वही सिंदी जायें। पर वहाँ जा कर उन्होंने पाया कि सिंदी तो गाँव-जैसा गाँव है ही नहीं। निदान वह सिंदी से सेगाँव चली गई, जहाँ के पतेपर यह पत्र लिखा गया।

२. मीराबहन को लिखे इस पत्रमें तथा अन्य दूसरे पत्रोंमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है'

१७१. चर्चा : घनश्यामदास बिड़लाके साथ[1]

[३० नवम्बर, १९३५ के पूर्व]

घ० दा० बिड़ला : आप कहते है कि जिन सज्जनकी निगरानीमें यह चर्मालय चल रहा है[2], वे केवल निर्वाह लायक थोड़ा-सा पैसा लेकर ही काम कर रहे है। उनकी यह त्याग-वृत्ति तो बहुत प्रशंसनीय है।

गाधीजी हाँ, वह जातिका ब्राह्मण है और ग्रैजुएट भी है। आठ आने रोजसे ज्यादा वह लेता ही नही। उसकी पत्नी भी एक दूसरी जगह सारे दिन काम करती है, और केवल निर्वाह लायक ही पैसा लेती है।

हाँ। इस सबसे मुझे आश्चर्य होता है, पर पता नहीं, मशीनोंके इस युगमें यह चीज कबतक चल सकेगी।

मुझे ऐसा कोई भय नही है, क्योकि मेरे अन्दर यह पक्का विश्वास है कि जब यन्त्र-युगके ये सारे पराक्रम लुप्त हो जायेंगे, तब भी हमारी ये दस्तकारियाँ रहेगी; जब तमाम लूट-खसोट बन्द हो जायेगी, तब भी सेवा और सच्ची मेहनत-मजदूरी रहेगी। यह श्रद्धा ही मुझे जिला रही है और इसीके भरोसे मै काम कर रहा हूँ। और फिर हम हताश किस लिए हो? कालके विराट् विस्तारमे थोड़े-से वर्षोका लेखा ही क्या? मनुष्य-जातिके आदि उद्भवका अध्ययन हमे करोड़ो वर्ष पीछे ले जाता है। स्टीफेंसन और कोलम्बस-जैसे लोगोको अपने कार्यके प्रति उनकी अदम्य श्रद्धाने ही जीवित रखा। अपने काममे मेरी जो श्रद्धा है, वही मुझे टिकाये हुए है, किन्तु उसके साथ मेरी यह दृढ धारणा भी है कि मेरी श्रद्धाको दूसरी जो तमाम चीजें ललकारती हुई मालूम होती है उनका अन्त निश्चित है। क्या यह बात आपको दिखाई नही देती कि अगर हिन्दुस्तानमे जगह-जगह कल-कारखाने खडे कर दिये गये, तो लूट-खसोटकी नीयतसे दूसरे देशोकी तलाश करनेके लिए हमे एक नादिरशाहकी जरूरत पड़ेगी, ब्रिटेन और जापान तथा अमेरिकाकी, और रूस तथा इटलीकी नौ-सेना और अन्य सैन्य-शक्तिका हमे मुकाबला करना पडेगा? इन सघर्षोके विषयमे सोचता हूँ तो मेरा सिर चक्कर खाने लगता है। नही, इसमे मुझे जरा भी सन्देह नही कि जहाँ यन्त्र-युगका लक्ष्य मनुष्योको मशीनोमे परिणत कर देना है, वहाँ मेरा यह लक्ष्य है कि जो मनुष्य आज मशीन बन गया है, उसे फिरसे उसकी मनुष्यताकी स्थितिमे पहुँचा दिया जाये।

१. महादेव देसाई के 'वीकली लेटर' से उद्धृत। घनश्यामदास-बिडला हरिजन-सेवक-सघ की कार्यकारिणी की बैठक के सिलसिले में वर्धा गये थे।

२. नालवाड़ीमें।

सो तो मैं आपकी इस अदम्य श्रद्धाको अच्छी तरह समझता हूँ, पर शायद आप अपने अदम्य उत्साहमें आकर यह भूल जाते है कि आप हमारे साथ अनन्त कालतक तो रहेंगे नहीं। आप वृद्ध होते जा रहे हैं। आप खूब पैसा इकट्ठा करके अपने ग्राम-कार्यको काफी विशाल क्षेत्रमें क्यों नहीं फैलाते?

नही; जितनेकी मुझे जरूरत होती है, उससे ज्यादा पैसा इकट्ठा करनेमें मै विश्वास नही करता।

पर मान लीजिए, आप बीस या बीस न सही, दस ही गाँव नमूनेके बना दें तो कैसा हो?

अगर यह इतना आसान काम है, तो आप अपने पैसेसे यह कर सकते है। मगर मैं जानता हूँ कि यह काम इतना आसान नही है। धनरूपी जादूकी लकडी फेरकर ही कोई आदर्श गाँव नही खडा किया जा सकता। और मै यह मानता हूँ कि जनतासे जो भी पैसा मुझे मिलता है, उससे पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए। फिर यह भी है कि मै अब कोई केन्द्रीय कोष इकट्ठा नही करना चाहता। गुजरातमें इतनी अधिक हरिजन-पाठशालाएँ और आश्रम हैं कि जिनका खर्चा चलानेके लिए २९,००० रुपये वार्षिक चाहिए।[1] मै आपसे गुजरातके कामके लिए क्यो माँगूं? क्या यह गुजरातियोका धर्म नही है कि गुजरातमे ही वहाँके हरिजन-कार्यके लिए वे पैसा इकट्ठा कर लिया करे? अगर उन्हे इस तरह पैसा नही मिल सकता, तो बाहर सहायता माँगनेसे तो यह बेहतर होगा कि वे अपनी सस्थाएँ बन्द कर दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-११-१९३५

१७२. एक रोचक बात

गत सप्ताह वर्धामे हरिजन-सेवक सघकी कार्यकारिणी समितिकी बैठक हुई थी। मेरे 'जाति-प्रथाको मिटना है'[2] शीर्षक लेखको लेकर उसमें कुछ सदस्योने यह प्रश्न उठाया कि क्या 'हरिजन' में, जो हरिजन-सेवक-सघकी ओरसे निकलता है, सघके बारेमें अपने विचार व्यक्त करना मेरे लिए उचित है? अथवा, क्या मै ऐसे विचार प्रकट कर सकता हूँ, जो सघ द्वारा अपनाई गई नीतिके बाहर हो अथवा क्या सघ अपने उद्देश्योके क्षेत्रका विस्तार कर सकता है?

इन प्रश्नोपर अपनी राय जाहिर करते हुए मैंने बताया कि एक व्यक्तिके रूपमे मुझे 'हरिजन' मे ऐसे विचार प्रस्तुत करनेका अधिकार है जो मेरी जानकारीके

१. देखिए पृ० १४४-५।
२. देखिए पृ० १२८-९।

अनुसार शायद सघके कुछ सदस्योके विचारोके विरुद्ध हो या शायद ऐसे हो जिन्हे अभी संघने अपनी नीतिके तौरपर न अपनाया हो। मेरी रायमे सघके हरएक सदस्यको उस सीमातक यह स्वतन्त्रता प्राप्त है, जहाँतक उसके विचारोसे सघके उद्देश्यमें कोई बाधा नही पडती। सघकी नीति तो नरम-गरम दोनो तरहके सुधारकोके विचारोके बीच अधिक-से-अधिक सामजस्यका प्रतीक है। हरिजन-सेवक सघमे दोनो ही तरहके लोग काफी सख्यामे मौजूद है। उसमे जहाँ ऐसे सनातनी है, जो अस्पृश्यता-निवारणको केवल स्पर्शतक ही सीमित रखना चाहते है, वहाँ ऐसे लोग जो है जो रोटी-बेटी व्यवहारतकको उसमे शामिल करना चाहते है। सदस्यताके प्रतिज्ञापत्रमें तो वही बात रखी गई है जिसे मानना और जिसपर अमल करना हरएक सदस्यके लिए आवश्यक है। उससे किसी सदस्यको और आगे बढनेमे उस वक्ततक कोई बाधा नही पड़ती, जबतक कि वह उन विचारोका प्रतिपादन सघकी नीतिके रूपमे न करे। इसके आरम्भमें सभी विचारोके हिन्दुओकी एक सभा हुई थी और अधिक-से-अधिक हिन्दुओको अपने साथ ले चलनेके खयालसे उस प्रातिनिधिक सभाने एक ऐसा व्यापक प्रस्ताव पास किया था[1], जिस पर उपस्थित जनोमे से ज्यादा-से-ज्यादा लोगोने अपनी हार्दिक सहमति प्रदान की थी। इस निर्णयमे निहित समझदारी इस बातसे सिद्ध है कि पण्डित मालवीयजीकी कृपासे वह निर्णय प्राय सर्व-सम्मतिसे लिया गया था। यह स्पष्ट है कि उस प्रस्तावमें अगर यह बात होती कि सघके सदस्य व्यक्तिगत रूपसे भी सघकी नीतिसे अधिक प्रगतिशील विचार नही रख सकते या उनपर अमल नही कर सकते तो अनेक सदस्य उन पाबन्दियोको स्वीकार न करते। इसके विपरीत दूसरी ओर, साधारण सदस्य तो दूर, व्यवस्थापक-मण्डलके सदस्योका बहुमत भी, जहाँतक उद्देश्यका सम्बन्ध है, सघका विधान नही बदल सकता। यह तो खास तौर पर इस कामके लिए बुलाई गई हिन्दुओकी ऐसी आम सभाके द्वारा ही हो सकता है, जिसमें सब तरहके विचार रखनेवाले हिन्दुओका प्रतिनिधित्व हो। इसलिए जहाँ फूंक-फूंक कर कदम रखनेवाले सुधारकको सघकी मूल नीतिके सम्बन्धमे निश्चित रहना चाहिए, वहाँ अत्यन्त उग्र सुधारक भी, व्यक्तिगत रूपमें, निर्बाध रीतिसे उन विचारोका प्रतिपादन कर सकते है, जिनसे उनकी रायमे हिन्दू-जाति शुद्ध और स्वस्थ हो सकती है।

प्रसगवश यहाँ यह भी बतला देना चाहिए कि 'जाति-प्रथाको मिटना है' शीर्षक लेखमे मैने जो विचार प्रकट किये है, उन्हे अलग शीर्षकोसे मै अकसर इस पत्रमे प्रकट करता रहा हूँ। फिर वह लेख सवर्ण और हरिजन हिन्दुओके पारस्परिक सम्बन्धके बारेमे नही है। उसमे तो सवर्णोके ही बीच सुधारकी चर्चा है। जब अस्पृश्यता नही रहेगी, तो अस्पृश्योकी बिलकुल वैसी ही स्थिति हो जायेगी जैसीकि आज सवर्णोकी है। और तब जो भी नियम या प्रथा सवर्ण लोगोका नियमन करेगी वही उन हरिजनो पर भी लागू होगी जो तब हरिजन नही रह जायेगे। इसलिए

१. देखिए खण्ड ५१, पृ० १४८-९।

अगर उस वक्त भी आजकी ही तरह जाति-भेद बना रहा, तो हरिजनो और सवर्णोंके बीच न तो खान-पानका सम्बन्ध होगा और न व्याह-शादीका ही। लेकिन अगर जाति-प्रथा अपने वर्तमान स्वरूपमे कायम नही रह जायेगी, जैसाकि किसी-न-किसी दिन अवश्य होगा, तो फिर हरिजनों और सवर्णोंके बीच आपसमे उसी तरह रोटी-बेटी व्यवहार होने लगेगा जिस तरह सवर्ण-सवर्णके बीच होता है। और अगर वर्ण-व्यवस्था कायम रही --और मुझे तो उम्मीद है कि रहेगी --तो अतीतकी तरह लोगोके धन्धे भी एक प्रकारकी मर्यादासे बँधे होंगे, लेकिन रोटी-बेटी-व्यवहारमे उसी तरह कोई प्रतिबंध नही रहेगा जिस तरह पहले नही था। जो कुछ होगा वह एक संस्थाके रूपमे संघकी प्रवृत्तियोके कारण नही, बल्कि उन शक्तियोके कारण होगा जिनका न संघ नियमन कर सकता है और न जिनपर वह नियन्त्रण रख सकता है। व्यक्तिके रूपमे तो इसके सदस्य, निस्सन्देह, इन शक्तियोको अपनी-अपनी रुचिके अनुसार मोड़ देनेमें यथोचित हिस्सा लेगे ही।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-११-१९३५

१७३. आदर्श और व्यावहारिक

श्री गोपबन्धु चौधरी लिखते हैं:[1]

"मानव-दयाकी भावनावाले ग्राहकोंकी आवश्यकता"[2] शीर्षक लेखमें आपने हिसाब लगाया है कि "स्वावलम्बी खादीके लिए यह जरूरी है कि जहाँ तीन गज खादी स्वयं कारीगर पहने वहाँ दो गज बाहर बिके।" स्पष्ट ही यह हिसाब इस बातपर निर्भर है कि रुई और बुनाईके दामोके लिए स्वावलम्बी कतैयेको कुछ अतिरिक्त सूत कातना पड़ेगा। बेशक आप यह स्वीकार करते हैं कि रुई खरीदने या बुनकरको बुनाईके दाम देनेके लिए कतैये दूसरे ग्रामोद्योगोसे भी उपार्जन कर सकते है। लेकिन लेखको पढ़कर ऐसा भासित होता है, मानो स्वावलम्बी खादी पूर्णतः खादीकी बिक्रीपर निर्भर है। मगर क्या यह सही आदर्श है? क्या स्वावलम्बी खादीका आदर्श यह नहीं है कि अधिकांश कतैये अपनी पैदा की हुई या खरीदी हुई रुई कातेंगे और बुनकरका पारिश्रमिक दूसरे ग्रामोद्योगों या कृषि-श्रमसे किये गये उपार्जनमें से देंगे?

अन्यथा तो जब हमारा उद्देश्य गाँवके हरएक घरको स्वावलम्बी बना देना है, तब कतैयों द्वारा बिक्रीके लिए तैयार किये हुए अतिरिक्त दो गज की बिक्री कहाँ होगी? क्या शहरोंकी माँग इतनी बढ़ जानेकी सम्भावना है?

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।
२. देखिए पृ० ९०-१।

मुझे तो ऐसा मालूम पड़ता है कि स्वावलम्बी खादीको व्यावसायिक खादी पर निर्भर करके हम स्वावलम्बी खादीका पक्ष कमजोर कर रहे है और खादी-कार्यकर्त्ताओंके मनमें उसे लगभग दूसरे स्थानपर ला छोड़ते हैं, जबकि आपका इरादा उनके मनमें इस विषयमें क्रान्तिकारी परिवर्तन लानेका है। स्वावलम्बी खादीको तो अपने गुण-दोषके अनुसार स्वतन्त्र रूपसे फूलना-फलना चाहिए, क्योंकि बहुत-सी ऐसी जमीन अभी अनुपयोगी पड़ी हुई है जिसमें स्वावलम्बी खादीके लिए आवश्यक रुई पैदा की जा सकती है और लोगोंके पास इतना समय भी फालतू है ही कि उसमें वे सूत कात सकें।

निस्सन्देह आदर्श तो यही है कि जैसे हरएक परिवारको अपनी जमीनमे खेती करके अपने द्वारा पैदा किये अनाजको ही पकाकर खाना चाहिए, ठीक उसी तरह हरएक परिवारको खुद ही अपनी रुई पैदा करना, कातना, बुनना और इस तरह अपना ही तैयार किया कपडा पहनना चाहिए। लेकिन हम यह जानते है कि हरएक परिवार इस आदर्शको प्राप्त नही करना चाहेगा और न कर ही सकेगा; साथ ही हम यह भी जानते हैं कि स्वावलम्बी खादीके विशुद्ध सन्देशका प्रचार आरम्भ करनेके साथ ही कार्यकर्त्ताको सफलता नही मिल जायेगी। गोपबन्धु बाबूने खुद जो बात सुझाई है, अर्थात् यह कि गृहस्थ आवश्यक रुई खरीदकर उसको कात ले और फिर अपनी बचतके पैसोंसे उसे बुनकर द्वारा बुनवा ले, वह स्वय एक बीचका उपाय है। लेकिन लाखों व्यक्तियोके पास तो बचत ही नही होती और लाखो व्यक्ति ऐसे मौजूद है जो इनमें से कोई भी काम न कर, सीधे बाजारसे ही बना-बनाया कपड़ा खरीदते है। अपने लिए सूत कातना और अन्य किसी धन्धेकी कमाईसे रुई खरीदना और अपने काते सूतसे कपडा बुनवा लेना एक बीचका उपाय है। अपनी आवश्यकतासे अधिक सूत कातकर जो कमाई हो उससे कपड़ा बुनवा लेना इस तरहका दूसरा बीचका उपाय है और सम्भवत. कार्यकर्त्ता और बुनकर दोनोकी दृष्टिसे सबसे आसान तरीका है। और इसको अजाम देनेके लिए खादी-भण्डार तो है ही। खादी-भण्डारोके कार्यकर्त्ताओको चाहिए कि वे कतैयो और दूसरे कारीगरोको इस बातके लिए प्रेरित करे कि अगर उन्हे अखिल भारतीय चरखा-सघके द्वारा काम पाते रहना है तो उन्हे खादी ही पहननी चाहिए। उनमे अनेक ऐसे है जो कताई, बुनाई, धुनाई या रँगाईका काम करके ही अपनी जीविका चलाते हैं। अगर वे अपनी जरूरतसे ज्यादा खादीका उत्पादन करे और उस खादीकी बाजारमे खपत हो तभी वे खुद खादी पहन सकते है। और अगर कतैयोकी मजदूरी बढ़ा देनेपर भी खादीकी मौजूदा माँग बनी रहे तो यह मुश्किल भी नही होना चाहिए।

अमलमे तो सभी उपायोपर साथ-ही-साथ काम किया जायेगा। नई योजनामे तो जो बात ठीक है उसपर जोर देते हुए ध्येयको स्पष्ट-मात्र कर दिया गया है। अब खादी-कार्यकर्त्ता खादीकी कीमत घटाने तथा बिक्री बढानेपर जोर नही देगे। अबसे तो वे इसी बातपर जोर देगे कि जहाँतक कपड़ोंका सवाल है, कमसे-कम कताई तक

तो लोग स्वावलम्बी हो ही जायें। उन्हे कारीगरोके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करना होगा, उनसे मेलजोल करना पड़ेगा, उनकी जरूरतोका पता लगाकर उनकी मदद करनी होगी और उनके फुरसतके समयका अच्छे-से-अच्छा उपयोग करके और साथ ही सबके लिए समान अवसर उपस्थित करके उन्हे उत्तरोत्तर उनकी आर्थिक स्थितिको सुधारना होगा। यह ऐसा कार्यक्रम है जो बड़े-से-बड़े महत्त्वाकाक्षी कार्यकर्त्ताके लिए भी काफी होना चाहिए। उनके लिए सबसे मुश्किल बात तो यह होगी कि एक ओर तो लाखो व्यक्तियोको समझा-बुझाकर इस बातके लिए तैयार करे कि वे अपने फुरसतके समयका उपयोग अपनी भलाईके लिए करे और दूसरी ओर खरीदने-वालोको — शहरी लोगो और बिचौलियोको — यह महसूस करायें कि गाँवका बना कपड़ा जाहिरा तौरपर भले ही अपेक्षाकृत कुछ महँगा, और जैसे कपड़ेका वे अबतक इस्तेमाल करते आये है उससे देखनेमे भले ही कुछ अलग किस्मका है, पर यदि वे उसे खरीदेगे तो आखिरमें उनको लाभ ही होगा। लाभ इस अर्थमें होता है कि इससे लोगोकी माली हालत सुधरकर उनकी क्रय-शक्ति बढती है। इसलिए नई योजनाका उद्देश्य 'जाति, रंग या धर्म' के भेदभावके बिना राष्ट्रकी सर्वोत्तम शक्तियोका उपयोग करना है। लेकिन अन्तमे बात यही सामने आती है कि इस कामके लिए जैसे शुद्ध, त्यागी, अध्यवसायी और परिश्रमी कार्यकर्त्ताओकी आवश्यकता है, क्या वैसे कार्यकर्त्ता पर्याप्त सख्यामे हमारे पास है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-११-१९३५

१७४. एक अनुभव

एक सज्जन, जो कई वर्षोंसे अपने ही सूतकी खादी पहनते आ रहे है, लिखते है

> इस वर्ष मैंने ५० इंच अर्जकी ८० गज खादी तैयार की। इसपर मोटे तौरपर २० रुपयेका खर्च बैठा। लोग मेरी उस खादीके १० आने गजके हिसाबसे ५० रुपये देना चाहते है। इस तरह अगर मैं ३ गज खादी खुद अपने उपयोगमें लाना चाहूँ, तो मुझे सिर्फ सवा गज खादी बेचनेकी जरूरत होगी। अगर मैं अपने लिए २० गज खादी रख लूँ और बाकी सब बेच दूँ, तो अपनी खादीकी कीमत चुका देनेके बाद मुझे १७ रुपये ८ आनेका मुनाफा हो जायेगा।

मै इन सज्जनको जानता हूँ। उनकी एक खास अनुकूल स्थिति है। वे ऐसा कर सकते है, क्योकि उनका सूत बारीक, एकसार और मजबूत होता है। बुनकर उनके सूतको वाजिब दरपर बुनते है, और इसीसे वह खादी टिकाऊ और देखनेमें

सुन्दर होती है, और उसकी माँग भी खूब रहती है। हरएक व्यक्ति, जिसमें श्रद्धा और धैर्य हो, खुद इसका प्रयोग करके जाँचे कि इस कथनमें कहाँतक सचाई है। मजबूत, एकसार और बारीक सूत ही खादीकी सफलताका रहस्य है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-११-१९३५

१७५. सावधानीकी जरूरत

नीमकी पत्तियो और इमलीके बारेमे डॉ० आइकराडके लिखे पत्रके[1] प्रकाशनके बाद पाठक पोषण-अनुसन्धानके निदेशक द्वारा भेजे गये निम्नलिखित पत्रके[2] महत्त्वको सहज ही समझेंगे।

१. आहार विषयक जानकारीसे सम्बन्धित छोटी-छोटी बातोंको उनके वैज्ञानिक सन्दर्भसे अलग करके प्रकाशित करनेमें मेरी समझमें कुछ खतरा रहता है। अज्ञानी पाठक उनका गलत अर्थ लगा सकते हैं। उदाहरणके लिए, ६ नवम्बरके अपने पत्रके नीमकी पत्तियोसे सम्बन्धित उस अनुच्छेदको, जिसे आप अपने पत्रमें प्रकाशित करना चाहते हैं, दोबारा पढ़नेपर मुझे लगता है कि इससे लोग शायद ऐसा समझ सकते हैं कि किसीको चाहे जो बीमारी हो, पर्याप्त मात्रामें नीमकी पत्तियाँ खानेसे वह अवश्य दूर हो जायेगी। सच तो यह है कि आजतक हमने इस विषयमें जो थोड़ा-सा शोध-विश्लेषण किया है, उससे पता चला है कि बहुत-सी अन्य पत्तीदार सब्जियोंकी अपेक्षा नीमकी पत्तियोंमें आहार-तत्त्व अधिक है, किन्तु यहाँ सवाल कम या ज्यादाका ही है। संक्षेपमें कहूँ तो आम लोगोंको इस विषयका ज्ञान करानेकी दृष्टिसे किसी एक वनस्पतिको अलग करके उसीके गुण बताने और उसकी प्रशंसा करनेके बजाय सभी हरी और पत्तीदार सब्जियोंके महत्त्वपर प्रकाश डाल देना बेहतर है। इसलिए कड़वी नीमकी पत्तियोंसे सम्बन्धित उस अनुच्छेदको मैं निम्न रूपसे पेश करना चाहूँगा

प्र० : नीमकी पत्तियोंका आहारकी दृष्टिसे क्या महत्त्व है?

उ० : रचनाकी दृष्टिसे नीमकी पत्तियाँ दूसरी हरी पत्तीदार सब्जियोंसे मिलती-जुलती हैं। प्रोटीन, कैल्शियम, लौह तत्त्व, और कैराटिनकी दृष्टिसे नीम की नई पत्तियाँ और प्रौढ़ पत्तियाँ सलाद और पालकसे बढ़कर हैं। जिस आहार में अन्नकी मात्रा अधिक हो उसमें पोषणके पूरककी दृष्टिसे ये महत्त्वपूर्ण हैं और इस मायनेमें ये दूसरी पत्तीदार सब्जियोंसे मिलती-जुलती हैं।

१. देखिए पृ० १२६-७।

२. पत्र के कुछ अंश ही यहाँ दिये गये है।

२. इमली और नींबूसे सम्बन्धित अनुच्छेदको सुधारकर इस रूपमें पेश करना बेहतर होगा :

विटामिन तत्त्वोंकी दृष्टिसे इमली और नींबू मोटे तौरपर समान हैं। फर्क इतना ही है कि नींबूमें प्रशीतमारक विटामिन 'सी' ज्यादा है। नींबूके विपरीत इमलीमें टारटरिक एसिड ज्यादा है — लगभग १४ प्रतिशत। नींबूमें मुख्य रूपसे साइट्रिक एसिड है। ताजी इमलीमें नींबूकी अपेक्षा अधिक प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और खनिज तत्त्व हैं। सूखी इमलीमें लगभग ३ प्रतिशत प्रोटीन और ७३ प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होता है। इमलीमें विरेचनकारी तत्त्व भी बताया जाता है। लोगोंकी जो यह मान्यता है कि इससे बुखार आता है और गठिया हो जाती है, उसके समर्थनमें मैं कोई प्रमाण नहीं दे सकता। . . .

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-११-१९३५

१७६. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

३० नवम्बर, १९३५

चि० भगवानजी,

रोज कितनेकी सब्जी आती है? कितनेके फल लिये जाते हैं? जिस मात्रामें खाना दिया जाता है उसके अनुसार हर महीने प्रति व्यक्ति कितना खर्च होता है? क्या तुम इसका हिसाब रखते हो कि प्रतिदिन कितना सीधा खर्च होता है? क्या खानेवालोंके नाम प्रतिदिन लिखे जाते हैं? तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है? इसके अतिरिक्त तुम किन अन्य प्रवृत्तियोंमें लगे हुए हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ३८३) से, सौजन्य : भगवानजी पु० पण्ड्या

१७७. पत्र : क० मा० मुंशीको

वर्धा
३० नवम्बर, १९३५

भाई मुंशी,

तुम्हारा पत्र मिला। परिणामसे मुझे तनिक भी आश्चर्य नहीं हुआ। अन्तिम क्षण उत्तर दे देनेसे तुम्हारा कर्त्तव्य पूरा हो गया। ताताचारीकी खुशीका कोई पार नही था। उन्होंने मुझे एक सुन्दर पत्र लिखा था। अपील कौन सुनेगा? कोई भी सुने; अपील की जानी चाहिए, इसमे मुझे कोई सन्देह नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७५८६)से; सौजन्य: क० मा० मुशी

१७८. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

३० नवम्बर, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

जो चार नाम तुमने लिखे हैं उनके पास बजेट लेकर अबसे जाओ। मेरे आने तक ठहर जानेकी कोई आवश्यकता नही। जो परिणाम आवे सो मुझे लिखो। माताजी अब अच्छी हो गई होगी।

मुबईके सोयाबीनके दो भाव[1] है। (१) सीधीके ०)०।।। रतल, (२) मंचुरिया के ०)०।। रतल। दोनो गोसीवहनके मार्फत मिल सकते हैं।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

गोसीवहनका पता:

श्रीमती गोसीवहन कैप्टन
नायर बिल्डिंग
गांधी सेवा सेना
सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३१)से।

१. मूल में यहाँ "भाग" शब्द है जो स्पष्टतः चूक है।

१७९. तार : घनश्यामदास बिड़लाको[1]

वर्धागंज
२ दिसम्बर, १९३५

घनश्यामदास बिडला,
अलबुकर्क रोड
नई दिल्ली

मान्यता-प्राप्त सघके प्रभावमे कोई कमी आने दिये बिना या उसके दर्जेको नुकसान पहुँचाये विना, चाहे जो भी शिकायत करे उसे सुननेकी तत्परता दिखाइए और उचित तथा असन्दिग्ध शिकायतोको दूर कीजिए। जो लोग खुद कर्मचारी नही है, उन्हे शिकायत करनेवाले मजदूरोकी ओरसे बोलनेका अपना अधिकार सिद्ध करना चाहिए। यदि इस सलाहके प्रति आपके हृदयकी प्रतिक्रिया अनुकूल न हो तो स्पष्ट है कि मै स्थितिको ठीकसे समझ नही पाया हूँ। उस हालतमे आपको अपने विवेकके अनुसार काम करना चाहिए।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७७८५) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१८०. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२ नवम्बर, १९३५

तेरा पत्र मिला। मैने जो विचार व्यक्त किये थे वे दृढ होते जा रहे है। तेरा तर्क[2] उस तरह ही सभी चीजो पर लागू होता है। किन्तु जिस प्रकार उन सब चीजोंका प्रचार नही किया जा सकता उसी प्रकार इसका भी नही किया जा सकता। ऊर्ध्वगतिवाली चीजोका प्रचार करना शोभा देता है। किन्तु अधोगतिवाली

१. बिड़ला कॉटन मिलके मजदूरों ने अपनी मजदूरी घटाये जानेके विरोधमें हड़ताल कर दी थी, और सत्यवती के नेतृत्व में उन्होंने अपने हकों के लिए लड़ने की खातिर एक तदर्थ समिति बना ली थी। किन्तु घनश्यामदास बिड़ला सत्यवती को मजदूरोंका प्रवक्ता मानने को तैयार नहीं थे, और इस बात पर आग्रह कर रहे थे कि वे समझौतेकी बात तो बिड़ला कॉटन मिल सघ से ही करेंगे, जो १९२८ से काम कर रहा था।

२. सन्तति-निरोध के कृत्रिम उपायोंके बारे में।

चीजोंका प्रचार कैसा? यहाँ 'अधोगति' का कोई बुरा अर्थ नहीं करना है। सन्तान उत्पन्न किये बिना भोग करना सबको अच्छा लगेगा। इसलिए उसमें प्रयोग किये जानेवाले साधन माजूमकी[1] तरह फैलते जा रहे हैं। यदि दुःखका कोई कारण हो तो वह यह है कि जो वस्तु [नैतिक दृष्टिसे] दोषपूर्ण है उसे धर्मसम्मत माना जा रहा है। श्रीमती अर्स्किनकी पुस्तक अभी हालमें मेरे हाथमें आई है। यह पुस्तक विचार करने लायक है। हालाँकि नियमनकी बात तो इसमें भी है किन्तु कुछ अलग ढंगसे। और अधिक लिखनेका समय नहीं है।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १६०

१८१. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२ दिसम्बर, १९३५

भाई घनश्यामदास,

तुमारे दोनो खत पढा। तुमको आज सवेरे तार दिया सो पहुचा होगा।

मेरा अभिप्राय है कि सत्यवतीको[2] मिलनेमें कुछ हानि नही हो सकती है। हर हालतमें इनसाफ करना है। उसके पास मजदूरोका मुखतारनामा होना चाहीये। अच्छा यह होगा कि सब शिकायत कोई निश्चित पंचके पास जाय। इसमे शर्त यह होनी चाहीये कि पीछे हड़ताल हो ही नही सकती। मैंने तो पंच बनेनका नही लिखा है। मैं कैसे बन भी सकता हू? पंच तो किसी औरको ही बनाना होगा। सब कार्य धैर्यसे ही करोगे।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०१५ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. भाँगसे बननेवाली एक नशीली मिठाई।

२. पत्रपर महादेव देसाईने यह टिप्पणी लिखी हुई है: "हिन्दुस्तान टाइम्स की एक रिपोर्टमें सत्यवतीको 'एक बरखास्त कर्मचारीकी पत्नी' बताया गया गया है।" इससे बापूको दुःख हुआ। उन्होंने सत्यवतीको, जिन्होंने बापूसे शिकायत की थी, लिखा कि रिपोर्टरने भारी गलती की है और घनश्यामदास भी इसे पसन्द नही करेंगे।

१८२. पत्र : सुरेन्द्रको

वर्धा
३ दिसम्बर, १९३५

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पिछला पत्र मिला था। उसमे जवाब देने लायक कोई खास बात नही थी, इस कारण मैने दूसरे कामोके लिए समय बचा लिया। किन्तु २९ नवम्बरके इस पत्रके सम्बन्धमे ऐसा नही करूँगा।

सब मीठे-कडवे अनुभव मुझे लिखते रहो। सिन्दीके अनुभवोको 'हाथीके पाँवमे सबका पाँव' मान लेना भूल होगी। सिन्दीके अनुभवोका महादेवने जैसा निरूपण किया है उसको मिलाजुलाकर मेरे मनमे जो बनी आई है उसमे मुझे अपने व्यक्तिगत अनुभवोकी परछाई नही दिखती। महादेवके वर्णनमे बहुत सयमसे काम लिया गया है, जिसके कारण उसमे वर्णित कड़वे अनुभव तो मीठे जैसे लगते है और मीठे अनुभवोमें मशीनमे तैयार की गई शुद्ध चीनी जैसी मिठास आ गई है। सिन्दीके विषयमें अपना अनुभव मै मात्र एक वाक्यमे कह सकता हूँ। वह यह कि अभीतक सिन्दीके प्रति न्याय नही हो पाया है। इच्छापूर्वक या बेमनसे, उसका सचालक तो मै ही हूँ और वह भी भला कैसा? पहले तो दिन-दो-दिन पर वहाँ चक्कर लगा आता था। और अब रोज पाँच-एक मिनट वहाँ रुककर फिर वापस आ जाता हूँ। वहाँके लोगोसे मै मिलाजुला नहीं हूँ। मीराबहनने उनसे मेलजोल बनानेका खूब प्रयत्न किया है। किन्तु वह तो मुझे सिन्दीमे बसनेसे रोकनेकी ही खातिर वहाँ गई थी।[1] उसका मन तो वहाँ टिका नही था और वह सिर्फ मेरे दबावमें आ गई थी। अब वहाँ गजानन[2] है और वह भी मात्र एक प्रयोगके रूपमे ही। इसी कारण तुमने सिन्दीको जो दूसरोंकी पाँतमे डाल दिया सो सम्भवत. एक भूल है। मै यह कह सकता हूँ कि मेरे लिए तो सिन्दीका कार्य पर्याप्त विशाल कार्य है।

वाड़जके लिए तो हमने कुछ भी नही किया है। नालवाड़ीमे अलग एक आश्रम बन गया है, जिसका वहाँके लोगो पर कुछ खास असर पडा हो ऐसा नही कहा जा सकता। यह आश्रम एक अलग ही प्रकारका प्रचार-स्वरूप है। अभीतक हम गाँवमें रहनेकी कला हस्तगत नही कर सके है। गाँवोमे ओतप्रोत हो जानेकी विद्या हमें अभी सीखनी बाकी है। इसी कारण नालवाड़ी, वाड़ज और सिन्दीको लिया है। ये तीनो हमारे लिए अनोखी बाते है। तुम्हारा प्रयोग चौथी बात है और इस समय जो प्रयोग चल रहे है उन्हीके अनुरूप है। अब देखे कि इसका परिणाम कैसा निकलता

२. देखिए, पृ० १५२, पाद-टिप्पणी १।

१. गजानन नायक।

है। इस कारण मैं तुम्हारे कामको खूब बारीकीसे देख रहा हूँ। तुमसे और बहुत काम लेनेके प्रलोभनको जानबूझ कर छोड रहा हूँ। नावलीको उत्तर भेजनेमे मुझे बहुत सख्ती बरतनी पड़ी . . .।[1]

गुजरातीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१८३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

३ दिसम्बर, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारा खत मिला। स्वदेशी उद्योगवालोको मैं भूल गया हू। जैसा तुमको उचित लगे ऐसा करो। यहाँसे क[ह]लवा देना अच्छा नही होगा।

उन साधूको मिलनेका समय तो मैंने भेज दिया था, लेकिन वे मुझको अपने स्थान पर बुलाना चाहते थे। मैंने इन्कार किया था। मेरे दिल्ली आने पर यदि चाहे तो अवश्य मिल सकेंगे।

तुम्हारा शरीर अच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३०) से।

१८४. भेंट : मार्गरेट सैंगरको[2]

[३/४ दिसम्बर, १९३५][3]

अपनी बातचीतमें गांधीजीने अपना पूरा जीवन उँड़ेल कर रख दिया। श्रीमती सैंगरको अपने निजी जीवनकी एक अन्तरंग झाँकी देते हुए उन्होंने अपना सारा अन्तर मानो खोलकर रख दिया। उन्होंने उनके सामने स्वयं अपनी मर्यादाएँ भी स्पष्ट रूपसे स्वीकार कीं — विशेषकर अपने उस जीवन-दर्शनकी मर्यादाएँ जिसका आग्रह आत्म-संयमके बलपर अपने चरम विकासपर है। उन्होंने कहा कि मैं तो केवल एक ही समाधान बता सकता हूँ।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ छूटा हुआ है।

२. इसे महादेव देसाई के लेख "मिसेज सैंगर ऐंड बर्थ-कन्ट्रोल" से लिया गया है।

३. चन्दूलाल दलाल की लिखी गांधीजीनी दिनवारी नामक पुस्तकसे। श्रीमती सैंगर गांधीजीसे ३ और ४ दिसम्बर को मिली थीं।

[गा० .] कोई स्त्री यदि मेरी सहमति चाहे तो उसे मैं गर्भ-निरोधके उपायको अपनानेकी सलाह नही दे सकता। मैं तो उससे इतना ही कहूँगा कि मैं जो उपाय बताऊँगा वह तुम्हारे किसी कामका नही है, तुम्हे दूसरोंकी सलाह लेनी चाहिए।

श्रीमती सैंगरने कुछ ऐसे लोगोंके उदाहरण दिये, जिनके लिए गांधीजीके सुझाये उपायको अपनाना बहुत कठिन था। इस पर गांधीजीने कहा:

मैं यह मानता हूँ कि इसमे मुश्किले है। अन्यथा गर्भ-निरोधके उत्साही समर्थकों का कोई पक्ष ही नही रहता। लेकिन मैं कहूँगा, आप उपाय बेशक ढूँढ़ निकालिए, लेकिन वे उपाय नही जो आपने सुझाये है। यदि मुझ और आप-जैसे नैतिक सुधारक इस [गर्भ-निरोधके] उपायके खिलाफ डटकर खड़े हो जाये और कहे कि "आपको तो अन्य उपायोका ही सहारा लेना पडेगा" तो ऐसे उपाय अवश्य निकल आयेंगे।

दोनों इस बात पर सहमत जान पड़े कि स्त्रियोंको मुक्ति मिलनी चाहिए, उन्हें अपने भाग्यका निर्णायक स्वयं बनना चाहिए। लेकिन श्रीमती सैंगरका आग्रह इस बात पर था कि गांधीजी उन्हींके प्रिय उपायसे यह कार्य सम्पन्न करे। उनका रवैया ठीक वैसा ही था जैसा हिंसावादियोंका है, जो चाहते हैं कि गांधीजी हिंसाके बल पर भारतको स्वतन्त्र करायें, क्योंकि वे निश्चित रूपसे ऐसा मानते लगते हैं कि अहिंसा तो कभी सफल हो ही नहीं सकती।

यह दिखानेकी उतावलीमें कि गांधीजी भारतकी स्त्रियोंको नहीं जानते, श्रीमती सैंगर उक्त मौलिक अन्तरको भुला ही देती है। और गांधीजीका अज्ञान वे इस आधार पर सिद्ध करना चाहती है कि गांधीजी भारतकी स्त्रियोसे [श्रीमती सैंगरके अनुसार] एक असम्भव बातके लिए अपील कर रहे हैं — यह कि वे अपने पतियोंको मना करें। खैर, गांधीजीने इस प्रकार कहा:

मैंने तो अपनी पत्नीको ही सभी स्त्रियोकी प्रकृति और प्रवृत्तिको समझनेकी कुजी बना लिया। उसके माध्यमसे मैंने सभी स्त्रियोका अध्ययन कर लिया। दक्षिण आफ्रिकामे मैं बहुत-सी यूरोपीय महिलाओके सम्पर्कमें आया और भारतीय महिलाओमें से तो लगभग सभीको जानता था। मैंने उनके साथ काम किया। मैंने उन्हें यह समझानेकी कोशिश की कि वे न तो अपने पतिकी और न माता-पिताकी गुलाम है — और सो सिर्फ राजनीतिक क्षेत्रमे ही नही, बल्कि घरेलू मामलोमें भी। लेकिन, कठिनाई यह थी कि उनमें से कुछ अपने-अपने पतियोका विरोध नही कर पाती थी। उपचार स्वय स्त्रियोके ही हाथोमें है। उनके लिए यह संघर्ष कठिन है और मैं उन्हे दोष भी नही देता। दोष तो मैं पुरुषोको देता हूँ। पुरुषोने उनके विरुद्ध नियम बनाये है। उन्होने स्त्रियोंको अपने हाथका खिलौना माना है। उन्होने खिलौना बनना सीख लिया है और अन्तमे उन्हे इस स्थितिमें पहुँच जाना अच्छा और आनन्ददायक लगा, क्योंकि जब कोई गिरतेको घसीटता है तो उसका गिरते चले जाना अपेक्षाकृत

सुखकर हो जाता है। . .[1] मुझे लगता है कि अब मेरे जीवनके जो वर्ष शेष हैं, उनमे यदि मै स्त्रियोके मनमे यह सत्य उतार सका कि वे वास्तवमे मुक्त है तो भारतमे हमारे सामने सन्तति-निग्रहकी कोई समस्या नही रह जायेगी। जरूरी सिर्फ यह है कि जब उनके पति वासना-प्रेरित होकर उनके निकट आये तो वे 'ना' कहना सीख ले। मै नही समझता कि सभी पति पशु होते है, और यदि स्त्रियाँ यह जान ले कि उनका विरोध कैसे करना चाहिए तो सब ठीक ही होगा। मेरे सम्पर्क मे आनेवाली स्त्रियोको मै यह सिखा सका हूँ कि वे अपने पतियों की इच्छाका विरोध किस प्रकार करे। असली समस्या यह है कि बहुत-सी स्त्रियाँ विरोध करना ही नही चाहती। . . सौमे से निन्यानबे मामलोमे ऐसा प्रतिरोध करनेकी जरूरत होगी ही नही जो कटुताकी सीमातक जाता हो। अगर पत्नी पतिसे कहे कि "नहीं, मै यह नही चाहती," तो वह झगड़ा खडा नही करेगा। लेकिन उसे ऐसा कहना सिखाया ही नही गया है। अधिकांश माता-पिता तो उसे ऐसा करना सिखायेंगे नही। वैसे कुछएक ऐसे माता-पिताओंकी जानकारी मुझे है जिन्होने अपनी लडकियोके पतियोसे यह अनुरोध किया है कि वे उन्हें मातृत्व-पद प्राप्त करने पर विवश न करे। और मुझे ऐसे पति भी देखनेको मिले है जो समझाने-बुझानेसे मान जाते है। मै यही चाहता हूँ कि स्त्रियाँ विरोध करनेका अपना प्राथमिक अधिकार समझ ले। अभी तो वे यही समझती है कि उन्हे यह अधिकार है ही नही। . . .

श्रीमती सैंगरने "श्री गांधीकी सलाहके परिणामस्वरूप घरमें खड़े होनेवाले कलह-क्लेश, अपूर्ण इच्छाओं आदि"का हौवा दिखाया। . . . उन्होंने ऐसे उदाहरण दिये जिनमें आत्म-संयम बरतनेके कारण लोग स्नायविक और मानसिक दृष्टिसे टूट गये। इस पर गांधीजीने प्रत्येक डाकसे प्राप्त होनेवाले अनेकानेक पत्रोंसे मिलनेवाली अपनी जानकारीके आधारपर उनसे कहा:

यह प्रमाण तो दुर्बल और जड़बुद्धि लोगोकी जाँच करके निकाले गये परिणामो पर आधारित है। ये निष्कर्ष स्वस्थ मनवाले लोगोंके आचरणसे नही निकाले गये है। वे जिन लोगोको उदाहरणके रूपमे पेश करते है उन्होने कभी नाममात्रको भी आत्म-सयमका जीवन नही व्यतीत किया है। ये स्नायुरोग-विशेषज्ञ यह मान लेते है कि लोगोसे पहलेकी ही तरह अनियमित जीवन बिताते हुए आत्म-सयम बरतनेकी अपेक्षा की जाती है। इस तरह तो ये आत्म-सयम बरतनेके बजाय विक्षिप्त हो जाते है। ऐसे बहुत-से लोगोके साथ मेरा पत्र-व्यवहार चलता है और वे अपनी परेशानियाँ मुझे बताते रहते है। मै तो इतना ही कहूँगा कि अगर मै उनसे सन्तति-निग्रह का यह तरीका अपनानेको कहूँ तो वे और भी बुरा जीवन व्यतीत करने लगेंगे।

गांधीजीने उनसे कहा कि अगर आप कलकत्ता जायेंगी तो जानकार लोग आपको बतायेंगे कि गर्भ-निरोधके साधनोंने वहाँ अविवाहित युवकों और युवतियोंकी क्या

१. साधन-सूत्रमें यहाँ स्थान रिक्त है।

दशा बना दी है। लेकिन स्पष्ट ही, कमसे-कम बातचीतके प्रयोजनके लिए, श्रीमती सैंगरका कहना था कि वे तो केवल विवाहित दम्पतियोंके बीच ही अपने सन्तति-निग्रहके ज्ञानका प्रचार करना चाहती हैं। . . . गांधीजीने प्रेम और वासनाके बीच जो अन्तर दर्शाया वह बातचीतके निम्नलिखित अंशसे स्पष्ट हो जायेगा :

जब दोनों प्राणी परिणामोंकी आशंकासे मुक्त होकर अपनी-अपनी काम-पिपासाको तृप्त करते हैं तो यह प्रेम नहीं, बल्कि वासना कहलायेगा। लेकिन अगर प्रेम शुद्ध है तो वह काम-वासनासे ऊपर उठकर श्रेयस्कर रूप ग्रहण करेगा। हमें वासनाकी ठीक समझ नहीं दी गई है। पति कहे कि 'हमें बच्चे तो नहीं चाहिए, किन्तु हम समागम करें,' तो यह पाशविक वासना नहीं तो और क्या है? यदि वे सन्तान नहीं चाहते तो सीधी-सी बात है कि उन्हें समागम करना ही नहीं चाहिए। जिस क्षण आप प्रेमको कामकी तृप्तिका साधन बना लेते हैं, वह वासना बन जाता है। यही बात भोजन पर भी लागू होती है। हम चाकलेट अपनी भूख मिटानेके लिए तो नहीं खाते। उसे हम स्वादके लिए खाते हैं और तब डाक्टरसे उसका खराब असर दूर करनेवाली दवा माँगते हैं। व्हिस्की पीनेके बाद लोग शायद डाक्टरसे यह भी कहते होंगे कि इसके कारण मेरे दिमागमें धुंधलका-सा छा गया है और वह उन्हें उसकी दवा देता होगा। क्या चाकलेट या व्हिस्की न लेना ही बेहतर न होगा?

श्रीमती सैं० : नहीं, मैं यह तुलना ठीक नहीं मानती।

गां० : आप तो नहीं ही मानेंगी, क्योंकि आपके विचारसे सन्तानकी इच्छाके बिना कामकी यह अभिव्यक्ति आत्माकी आवश्यकता है, किन्तु मैं इसका समर्थन नहीं कर सकता।

श्रीमती सैं० : हाँ, कामकी अभिव्यक्ति एक आध्यात्मिक आवश्यकता ही है और मैं मानती हूँ कि इस अभिव्यक्तिके परिणामसे अधिक महत्त्व उस अभिव्यक्तिमें निहित गुणका है, क्योंकि परिणामोंके सिवा भी दोनोंके सम्बन्धोंका गुण तो इसमें विद्यमान रहता ही है। हम सभी जानते हैं कि बहुत बड़ी संख्यामें बच्चे संयोगवश ही जन्म लेते हैं; उनके माता-पिताओंको गर्भाधानकी इच्छा नहीं रहती। ऐसा यदा-कदा ही होता होगा कि स्त्री-पुरुष सन्तानेच्छासे समागममें प्रवृत्त हुए हों। . . . क्या परस्पर प्रेममें बँधे, एक-दूसरेके सान्निध्यसे सुखपूर्वक जीते हुए स्त्री-पुरुषके लिए आप यह सम्भव समझते हैं कि वे दो वर्षमें एक ही बार समागम करनेका नियम बना लें, ताकि उनका यह सम्बन्ध तभी हो जब उन्हें सन्तान-प्राप्तिकी इच्छा हो? क्या आप इसे सम्भव मानते हैं?

गां० : स्वयं मैंने यह कर दिखानेका गौरव प्राप्त किया है और ऐसा अकेला आदमी सिर्फ मैं ही नहीं हूँ।

श्रीमती सैंगरके विचार से यह बात तर्कसंगत नहीं थी कि सन्तानेच्छासे समागम करना प्रेम है और कामेच्छाकी पूर्तिके लिए करना वासना है, क्योंकि दोनों

स्थितियोंमें कार्य तो एक ही तरहका किया जाता है। गांधीजीने उनकी यह बात झट स्वीकार कर ली और कहा कि मैं सभी स्त्री-पुरुष संयोगोंको वासनाका अंग कहनेको तैयार हूँ। उन्होंने स्वयं अपने जीवनके तथ्योंको उदाहरणोंके रूपमें पेश करके बातको बिलकुल स्पष्ट कर दिया। उन्होंने कहा :

मैं स्वयं अपने अनुभवसे जानता हूँ कि जबतक मैं अपनी पत्नीको वासनामय दृष्टिसे देखता था तबतक हमारे बीच सच्ची सहमति नही थी। हमारा प्रेम तब उच्चतर धरातल तक नही पहुँचता था। हम दोनोमें स्नेह तो बराबर था, लेकिन ज्यो-ज्यो हमने, या कहिए मैंने, अधिकाधिक सयम बरता, हम एक-दूसरेके निकटतर होते गये। मेरी पत्नीमे सयमकी कमी कभी नही रही। अकसर वह सयमका परिचय देती थी, लेकिन वह मुझे मना शायद ही कभी करती हो, हालाँकि अनिच्छा प्राय. व्यक्त करती थी। जब तक मैं विषयानन्द चाहता रहा, मैं उसकी सेवा नही कर सका। जिस क्षण मैंने विषयानन्दके जीवनको त्याग दिया उसी क्षणसे हमारे सारे सम्बन्ध आध्यात्मिक हो गये। वासनाकी रात समाप्त हुई, प्रेमका सूर्य चमक उठा। . . .

श्रीमती सैंगर गांधीजीको सपनोंकी दुनियामें विचरनेवाला व्यक्ति साबित करनेको इतनी अधीर हैं कि उनके बताये सभी उपायोंकी ओरसे उन्होंने आँखें बन्द कर लीं। उन्होंने पूछा :

तो क्या स्त्री-पुरुष संयोग जीवनमें केवल तीन-चार बार ही होना चाहिए?

गा० : लोगोको यह बात क्यो न समझाई जाये कि तीन-चार बच्चोसे अधिक को जन्म देना अनैतिक है और इतने बच्चोंको जन्म देनेके बाद पति-पत्नीको अलग-अलग सोना चाहिए? यदि उन्हे यह सिखाया जाये तो धीरे-धीरे यह चीज एक मान्य प्रथा बन जायेगी। और समाज-सुधारक यदि लोगोको यह बात न समझा सके तो इस आशयका एक कानून क्यो न बनाया जाये? तीन-चार बच्चोको जन्म देते-देते तो पति-पत्नी पर्याप्त विषयानन्दका उपभोग कर चुके होगे। फिर उनका प्रेम यदि उच्चतर धरातल पर पहुँचा दिया जाये तो इसमे कोई हर्ज नही है। उनके शारीरिक सम्बन्ध हो चुके हैं। जितने बच्चे चाहते थे, उतने प्राप्त कर लेनेके बाद उनका प्रेम आध्यात्मिक स्वरूप ग्रहण कर लेता है। यदि ये बच्चे मर जाये और वे और बच्चे चाहे तो फिर शारीरिक रूपसे मिल सकते हैं। जब लोग अन्य इच्छाओ के दास नही है तो इसीके क्यो बने? गर्भ-निरोधकी शिक्षा देकर तो मानो हम उन्हे यह बताते है कि समागम करना उनका कर्त्तव्य है। आप उनसे कहती है कि यदि वे यह न करेगे तो उनके आध्यात्मिक विकासमे बाधा पड़ेगी। आप तो इस सम्बन्धके नियमनकी भी बात नही करती। उन्हे गर्भ-निरोधकी शिक्षा देनेके बाद आप उनसे यह भी तो नही कहती कि 'बस इतना ही, इससे आगे नहीं'। आप लोगोसे सयत ढगसे मदिरा पीनेको कहती हैं, मानो मदिरा पीकर भी सयत रहा जा सकता हो। मैं इन सयत ढंगसे मदिरा पीनेवालोको अच्छी तरह जानता हूँ। . . .

फिर भी श्रीमती सैंगरकी व्यग्रताको देखते हुए गांधीजीने एक उपाय, जो स्वयं उन्हें किसी हदतक पसन्द आ सकता था, अवश्य बताया। वह उपाय था असुरक्षित *अवधिमें स्त्री-पुरुषका समागम न करना और महीनेके लगभग दस 'सुरक्षित'* दिन तक ही इस कार्यको सीमित रखना। उनके विचारसे उसमें आत्म-संयमका थोड़ा तत्त्व तो है ही; यह आत्म-संयम असुरक्षित दिनोंमें बरतना पड़ता है। मुझे नहीं मालूम कि यह उपाय श्रीमती सैंगरको जँचा या नहीं। लेकिन इस सुझावके पीछे सत्यन्वेषी गांधीजीकी आवाज थी। श्रीमती सैंगरने न किसीके साथ हुई भेंटवार्त्तामें और न 'इल-स्ट्रेटेड वीकली' में लिखे अपने लेखमें ही इसका कोई उल्लेख किया है। सन्तति-निरोध के समर्थक यदि इस सरल उपायसे सन्तुष्ट हो जायें तो शायद सन्तति-निरोधके सभी चिकित्सालयों और उसके प्रचारकोंका धन्धा ही बैठ जाये। . . .[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-१-१९३६

१८५. संदेश[2]

[४ दिसम्बर, १९३५][3]

साठ वर्षकी आयु मनुष्यके पूर्ण विकासका समय है न कि वृद्धावस्थाका; किन्तु दुर्भाग्यसे इस देशमे हम बहुत कम आयुमें लडखडाने लगते हैं और इसलिए पचास वर्ष पूरे कर लेनेपर प्रसन्न होते हैं। लेडी विद्यागौरी जराग्रस्त नही है। परमात्मा करे वे आगामी बहुत वर्षोतक वुढापेसे दूर रहे!

[गुजरातीसे]
गुजराती, ५-१-१९३६

१. मार्गरेट सैंगर का प्रत्युत्तर २२-२-१९३६ के हरिजनमें प्रकाशित हुआ था।

२. यह संदेश रमणभाई महीपतराम नीलकण्ठकी पत्नी विद्यागौरीके षष्टिपूर्ति समारोहके अवसर पर दिया गया था।

३. चन्दूलाल दलाल कृत **गांधीजीनी दिनवारीसे**।

१८६. पत्र : मनु गांधीको

वर्धा
४ दिसम्बर, १९३५

चि० मनुडी,

मैंने तुझे कल नेटालसे आये हुए पत्र भेजे हैं। [डाक] टिकटके लिए मैंने पैसे खर्च किये किन्तु उत्तर लिखना तो रह ही गया था, अत मैं फिर लिख रहा हूँ। तूने पत्र लिखकर अच्छा किया। मुझे पत्र लिखती रहना। तू वहाँ पहुँच गई, यह बहुत अच्छा हुआ। अपनी मौसियोंकी खूब सेवा करना और यदि वे अनुमति दे तो जल्दी आ जाना। अपने समयका सदुपयोग करना। मुझे अपना कार्यक्रम लिखना। यहाँ मेहमानोंकी अच्छी भीड़ लगी हुई थी। आज भीड कुछ छँटी है, किन्तु फिर बढ जायेगी।

अपने स्वास्थ्यका ठीक ध्यान रखना। यदि तू खाने-पीनेमे सावधानी बरतेगी तो निश्चय ही स्वास्थ्य ठीक रहेगा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मनुबहन गाधी
मार्फत बलीबहन वोरा
हाईस्कूलके सामने
राजकोट सदर (काठियावाड)

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६७) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

१८७. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

वर्धा
५ दिसम्बर, १९३५

भाई ठक्कर बापा,

तुमने शान्तचित्तसे विचारपूर्वक जो पत्र लिखवाया, मुझे वह प्राप्त हुआ है।

हरिजन सेवक सघ जितना मेरा है उतना ही तुम्हारा भी तो है।

तुम स्वधर्मसे चिपके रहो। वहाँ तुम्हे पूर्ण सफलता मिल जाये तो नावलीको बहुत कुछ मिल जायेगा। वहाँ देवकपास होना तो चाहिए। हेमुभाई भले आदमी हैं। खूब मेहनत करते हैं। मै स्वय तो उनको अधिक समय नही दे सका। किशोरलालके दो-एक दिनमे आ जानेकी आशा है। मुझे जनवरी महीनेमे गुजरात तो आना ही है। अब मुझे बस करना चाहिए।

गुजरातीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

१८८. पत्र : चन्दन पारेखको

५ दिसम्बर, १९३५

चि० चन्दू,

तूने शान्तचित्तसे अपना पत्र लिखकर बहुत ही अच्छा किया। यदि तू विस्तारपूर्वक लिखती रहे तो फिर पिताजीको लिखनेकी जरूरत नही पडेगी।

यह पूरी तरह समझाना बहुत मुश्किल है कि मैने तेरी बात पर विश्वास क्यो नही किया।[1] तूने जो समानता बताई है वह ठीक नही है। तू जिस घटनाका वर्णन करती है वह मनमे विकार उत्पन्न हुए बिना कदापि नही घट सकती थी, यह तो तू भी मानती है।' जब उक्त घटना घटी उस समयतक तू विकारसे परिचित हो चुकी थी। किन्तु तेरा कहना है कि विकारपूर्ण क्रियाओके बावजूद न तो तू . . . के मनके विकारको पहचान सकी और न तेरे मनमें विकार उत्पन्न हुआ। इस बातमें कोई तालमेल नही बैठता। इसलिए मै तेरी अन्य सब बातो पर ध्यान नही देता। यदि मै तेरी बात मान लूं, तो उससे मुझे यह भयकर निष्कर्ष निकालना

१. देखिए पृ० १४८।

पड़ेगा कि तेरे मनमे भी विकार उत्पन्न हो चुका था। किन्तु उसे स्वीकार करनेमें तू अब हिचकिचा रही है। यह निष्कर्ष मैं कैसे निकाल सकता हूँ? अतः मैं यह मानता हूँ कि तेरा कथन जाने-अनजाने अतिशयोक्तिपूर्ण है। मै ऐसा मानता हूँ, अतः तू जो पहेलियाँ मेरे सामने रखती है उनकी कोई कीमत नही रह जाती। तूने कमुकी दैनन्दिनीसे उद्धरण भेजकर अच्छा किया। उसकी तारीख लिखना। उसके बाद मैं फिर लिखूँगा।

मेरे अहमदाबाद पहुँचने पर तू मुझसे अवश्य मिल जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९४१) से; सौजन्य: सतीश कालेलकर

१८९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

५ दिसम्बर, १९३५

भाई घनश्यामदास,

तुम्हारा खत मिला। हनुमत सहायको जो खत लिखा है वह बिलकुल ठीक है। न उनको न सत्यवतीको मजदूरोके प्रतिनिधि मान सकते है। मजदूर लोग उनको चूने तब ही उनमेसे कोई प्रतिनिधि बन सकते है। लेकिन जो मिलना चाहिये उनको मिले। इतना ही कहनेका मेरा मतलब था[1] और उतना तो तुमने किया भी है, ऐसा मैं समझा हू।

मेरी उम्मीद है कि अब तो सब कुछ खतम हो गया होगा। जो कुछ 'आफर'[2] तुमने की है वह पर्याप्त-सी लगती है।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०१६ से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. देखिए पृ० १६३।

२. यह जानने के लिए कि मजदूरोंकी शिकायतें कहाँ तक न्यायसंगत है, मिल के रिकार्ड की जाँच करने के बारे में।

१९०. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

वर्धा
६ दिसम्बर, १९३५

मैंने शास्त्रार्थ करनेकी दृष्टिसे नहीं लिखा था। तूने मेरे विचार जानने चाहे थे और वे मैंने व्यक्त कर दिये।[1]

नगर-निगम[2] द्वारा चिकित्सालय खोलने अथवा लोगोसे उसका लाभ उठानेकी अपील करनेके लिए पोस्टर निकालनेके पक्षमें मैं अपनी राय कैसे दे सकता हूँ?

श्रीमती सैंगरसे मेरी विस्तारसे बातचीत हुई।[3] मैं जैसे-जैसे उनके तर्क सुनता गया वैसे-वैसे मेरा विचार दृढ़ होता गया। यदि बहुत अधिक खानेवाला बीमार हो जाये तो उसमें वैद्य क्या करेगा? वह उससे उपवास करनेको ही तो कहेगा न? बाकी, हाजमेकी गोलियाँ तो लोग खाते ही रहेंगे और बीमार होते रहेंगे। यही बात तू परिवार-नियोजनके बारेमें भी समझना। मेरा सुझाव तो यह है कि तू अपने बारेमें जैसा उचित समझे वैसा कर, किन्तु प्रचार-कार्यके बारेमें तटस्थ रह। यदि इस मामलेमें तेरे विचारोंने स्पष्ट रूप ले लिया हो और उसकी सार्वत्रिक आवश्यकता तेरे मनमें सिद्ध हो चुकी हो तो फिर मेरे लिए कहनेको कुछ नहीं है।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी पृ० १६१

१९१. पत्र : पुषोत्तम जी० जोशीको

६ दिसम्बर, १९३५

भाई पुरुषोत्तम,

आपका पत्र मिला। मुझे आश्चर्य हुआ। उसका उत्तर देनेकी आवश्यकता तो थी नहीं।

पुरुषोत्तम जीवराज जोशी
अमरेली

गुजराती प्रतिसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. देखिए पृ० १६२-३।
२. बम्बई नगर-निगम, जिसके मथुरादास सदस्य थे।
३. देखिए पृ० १६५।

१९२. पत्र : शंकरलाल बैंकरको

६ दिसम्बर, १९३५

चि० शंकरलाल,

तुम्हारा उस सर्कुलरके सम्बन्धमे लिखा पत्र मिला जिसमें कोई भी रकम निकालनेका निषेध है। सर्कुलर तो बिलकुल सही है। . . .[1] का नियम उसके विपरीत बैठता है। अतः सर्कुलरका अनुसरण करनेके विषयपर अभी विचार करना होगा। प्रमुखकी अनुमतिसे रकम निकालनेके मामलेमे क्या कदम उठाना उचित होगा, इसपर मैं अभी एकदम कोई निर्णय नही दे सकता। अब १२ ता० तो निकट ही आ रही है इसलिए हम तभी और विचार-विमर्श कर लेंगे। फिलहाल तुम्हारा सर्कुलर भले रहे। स्वय मुझे तो वह पसन्द है। मूल रकममे से कर्मचारियोका उधार लेना मुझे जरा भी पसन्द नही आता। फिर भी प्रमुखकी अनुमतिसे उधार लेनेकी आवश्यकताकी मैं कल्पना कर सकता हूँ। कर्मचारी बाहर व्यक्तिगत रूपसे कर्ज ले, उसकी अपेक्षा उनका प्रकट रूपसे सस्थासे उधार लेना अधिक इष्ट है।

गुजराती प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१९३. पत्र : सुशीला नैयरको

६ दिसम्बर, १९३५

चि० सुशीला,

देखे यह खत तुमको मिलता है या नही। मैंने ऐसा न तो माना है कि लिखा है कि तुम्हारी इच्छा पैसे कमाने की रही है। अगर यह रहती तो बचनेवाली रकम मुझको भेजने का इरादा तक भी कैसे रख सकती थी? अब तो तुम्हारी इच्छा भी मैं समझ गया हूँ। देखे भगवान क्या करता है?

प्यारेलाल पर शस्त्र-क्रिया कल हुई होगी। आज अधिक पता मिलना चाहिए।

लेडी हार्डिंग मेडिकल कालेज
न्यु दिल्ली

पत्रकी प्रति से : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

१. शब्द अस्पष्ट है।

१९४. चर्चा : एक ग्राम-सेवकके साथ[1]

[७ दिसम्बर, १९३५ के पूर्व]

ग्राम-सेवक : खादी और पौष्टिक आहार-सामग्री पर क्यों इतना अधिक जोर दिया जा रहा है, जबकि आप जानते हैं कि इस देशमें अंग्रेजोंके आनेके पहले भी हम लोग खादी पहनते थे और पौष्टिक आहार-सामग्री हमारे यहाँ मौजूद थी, तब भी हमारी स्थिति कुछ बहुत अच्छी नहीं थी?

गांधीजी : अगर आप उन दिनों 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' पढते होंगे, तो आपको मालूम होगा कि उन पत्रोंमें इस प्रश्न पर अनेक बार विस्तारसे चर्चा हुई थी। खैर, सार-रूपमें इस प्रश्नका उत्तर मैं आपको देता हूँ। बेशक, खादी हमारे यहाँ थी, पर हम उसका महत्त्व नहीं समझते थे, हम स्वात्म-निर्भर तो थे, पर आत्म-निर्भरताकी आवश्यकता अनुभव नहीं करते थे। खादी और हमारी दूसरी दस्तकारियोंके पीछे हमारी समझदारी नहीं थी, और हम यह अनुभव नहीं करते थे कि हम उन्हींके बल पर टिके हुए हैं। इसीसे जब वे हमारे देशसे विलुप्त हो गईं तब हमें उनका अभाव खला नहीं, और आज जब उनके पुनरुद्धारका प्रयत्न किया जा रहा है, तब हममें से कुछके मनमें यह प्रश्न उठ रहा है कि उनके पुनरुद्धारसे लाभ ही क्या हो सकता है।

प्र० . तब उसका यह अर्थ हुआ कि राजनीतिक शिक्षा और प्रचारकी जरूरत है, और आपने इनका निषेध कर दिया है।

उ० लोगोंको आत्म-निर्भर बनानेका, आहार सुधारनेका और अपनी जडता दूर करके खाली समयका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करनेका पाठ पढानेके लिए किसी राजनीतिक शिक्षा और प्रचारकी जरूरत नहीं।

प्र० : मेरी कठिनाई तो यह है कि हमारे गाँवोंमें हालाँकि लोग सुबहसे लेकर रात तक जानवरकी तरह मशक्कत कर रहे हैं और उन्हें एक घंटेकी भी छुट्टी नहीं मिलती, तो भी उन्हें पेट-भर रोटी नसीब नहीं होती। और आप उनसे और भी ज्यादा मेहनत लेना चाहते हैं।

उ०. आप जो कहते हैं यह तो मेरे लिए नई बात है। मैं तो उन गाँवोंको जानता हूँ, जिनमें लोगोंका काफी समय यों ही नष्ट हो रहा है। लेकिन अगर, जैसा आप कहते हैं, ऐसे भी लोग हैं जो अपनी शक्तिसे ज्यादा काम करते हैं, तो मैं उनसे

१. महादेव देसाई के 'वीकली लेटर' से उद्धृत।

यह कह रहा हूँ कि ठीक आठ घंटेके कामकी पेट भरने लायक जितनी मजदूरी होती है उससे वे एक पाई भी कम न ले।

प्र० : लेकिन यन्त्रोंको क्यों न अपना लें? उनमें जो अच्छी-अच्छी बातें हों उन सबको ले लें, और उनकी बुरी बातोंको अलग कर दें।

उ० : मुझे यह नही पुसा सकता कि हमारे मानव-यन्त्र बेकार पड़े रहे। हमारे यहाँ इतनी अधिक मानव-शक्ति बेकार पड़ी हुई है कि किसी दूसरी शक्तिसे चलनेवाली मशीनोके लिए हमारे यहाँ गुंजाइश ही नही है।

प्र० : आप शक्तिसे चलनेवाली मशीनोंको दाखिल कीजिए और उन्हें उतने ही समय तक चलाइए जितना कि हमारे मतलबके लिए आवश्यक हो।

उ० . आपका आशय क्या है? मान लिया कि हमारी आवश्यकता-भरका तमाम कपड़ा खासकर इसी मतलबसे खड़ी की गई मिलोमे बन जाता है और उनमे करीब ३० लाख आदमियोको काम मिल जाता है; फिर? फिर तो वह सारा पैसा इन ३० लाख आदमियोके पास ही पहुँच जायेगा जो सौ बरस पहले ३० करोड़ आदमियोमें बँट जाया करता था।

प्र० : जी नहीं, मेरी यह तजवीज है कि हमारी आवश्यकताओंके लिए जितने कामकी जरूरत हो उससे अधिक काम हमारे आदमियोंको नहीं करना चाहिए। कुछ काम वास्तवमें हम सबके लिए जरूरी है, पर हम रोज चन्द घंटे से ज्यादा काम क्यों करें, और अपने बचे हुए समयको क्यों न अन्य आह्लादप्रद कार्योमें लगायें?

उ० : इससे अगर हमारे आदमियोको रोज एक ही घंटा काम करना हो तो आप सन्तुष्ट हो जायेंगे?

प्र० : यह तो बादमें हिसाब करके देखना चाहिए। लेकिन मै तो अवश्य सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

उ० . यही तो कठिनाई है। जबतक सबके-पास काफी उत्पादक काम, यानी रोज आठ घटेका काम न हो तबतक मै तो सन्तुष्ट होनेका नहीं।

प्र० : लेकिन मेरी समझमें नहीं आता कि आप इस कमसे-कम आठ घंटेके काम पर क्यों इतना आग्रह कर रहे हैं?

उ० : क्योकि मै यह जानता हूँ कि करोड़ो आदमी कामकी खातिर ही काम मे नही लगेंगे। अगर उन्हें अपने पेटके लिए काम करनेकी जरूरत न हो तो उन्हे प्रेरणा ही न मिले। मान लीजिए कि चन्द करोड़पति अमेरिकासे आये और हमारे पास तमाम खाने-पीनेकी चीजे भेज देनेके लिए कहे, और हमसे प्रार्थना करे कि आप लोग कोई काम न करे, बल्कि हमे परोपकार वृत्तिसे अपने यहाँ सदाव्रत खोल लेने दें, तो मै तो उनकी यह बात स्वीकार करनेसे साफ ही इनकार कर दूँ।

प्र०: क्या इसलिए कि उससे आपके आत्म-सम्मान पर चोट पहुँचेगी?

उ०: नही, सिर्फ इसी कारणसे नही, बल्कि खासकर इसलिए कि उससे हमारे जीवनके इस मौलिक नियमका मूलोच्छेद होता है कि हमे अपने पेटके लिए श्रम करना ही चाहिए, हमे अपने पसीनेकी कमाईकी ही रोटी खानी चाहिए।

प्र०: पर यह तो आपका व्यक्तिगत विचार है। क्या आप समाजकी व्यवस्थाको खुद समाज पर ही छोड़ देंगे, या चन्द अच्छे मार्ग-दर्शकोको सौंप देंगे?

उ० मै तो चन्द अच्छे मार्ग-दर्शको पर समाजकी व्यवस्था छोड देना चाहूँगा।

प्र०: इसका अर्थ यह हुआ कि आप तानाशाहीके पक्षमें है?

उ० नही, और इसका सीधा-सा कारण यह है कि मेरा मौलिक सिद्धान्त अहिंसा है, और मुझे किसी व्यक्ति या समाज पर बलात्कार नही करना चाहिए। मार्ग-दर्शनका अर्थ 'तानाशाही' नही है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-१२-१९३५

१९५. उधार बिक्रीसे हानि

आज जब कि खादीके बारेमें चरखा-सघकी पूरी-की-पूरी नीति पर पुनर्विचार हो रहा है, यह अच्छा होगा कि जिन लोगोकी निगरानीमे इतने सारे खादी-भण्डार चल रहे हैं उन्हे यह जता दिया जाये कि खादीको उधार बेचनेके रिवाजसे कुल मिलाकर अन्तमे फायदेके बजाय नुकसान ही हुआ है। मित्रो, परिचितो और सम्पन्न लोगोको उधार देनेका प्रलोभन निस्सन्देह बहुत बडा है। उधार लेनेवाले ऐसे लोग कहते है कि उन्हे उधार देनेमे तो कोई जोखिम है ही नही, इसलिए जब उन्हें उधार नही दिया जाता तो अकसर वे इसका बुरा मान जाते है। ये भले आदमी यह नहीं देखते कि किसी विक्रेतासे यह आशा करना ही गलत है कि वह ग्राहकोमें कोई अनुचित भेद-भाव करेगा। अपने मित्रो और सम्पन्न लोगोके बारेमें अनेक खादी-भण्डारोके व्यवस्थापकोकी शिकायते आई है कि वे अपना कर्जा नही चुका रहे हैं। अदालतके जरिये कर्जा वसूल करनेका प्रयत्न निरर्थक और अत्यन्त खर्चीला है। उससे जितना लाभ मिल सकता है उससे कही ज्यादा परेशानी उठानी पड़ती है। इसलिए निरापद रास्ता तो यही है कि कुछ ग्राहकोका जी दुखाने और उनसे हाथ तक धो बैठनेकी जोखिम उठाकर भी "यहाँ उधार बिक्री नही होती", इस सुनहले नियमको कदापि नही छोडे।

खादी-सेवकोको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि खादीका कार्य उन्हे शहरोमें सीमित नही रखना है, बल्कि उसका करोडो ग्रामवासियोमे, जो उसकी बाट जोह रहे हैं, प्रचार करना है। उन तक हम किस तरह पहुँचें, यह हमे मालूम नही।

अबतक तो हमने घुमावदार रास्तेसे जानेकी कोशिश की है। शहरोके खादी-भण्डारोके बही-खातोमें दिन-ब-दिन बढती हुई बिक्री दिखानेका निरर्थक प्रयत्न करने से हमे सीधा और सच्चा रास्ता नही मिल सकता । उन्हे यह जानना चाहिए कि शहरोमे तो उन्हे वही खादी बेचनी है जो गाँवोमे उसकी ठीक खपत होनेके बाद बची रहे। अधिकाश खादीका उत्पादन और उपयोग गाँववालोको खुद ही करना है। गाँववालोके पास पहुँचनेका सच्चा रास्ता यह है कि हम उन्हीके झोपडोमें उनके बीच रहकर उनके लिए काम करे। इसलिए खादी-कार्यकी उन्नति शहरकी बिक्रीके बही-खातोसे नही आँकी जा सकती। भविष्यमे खादीके आँकड़ोको यह बतलाना होगा कि गाँवोमे प्रति-वर्ष खादीने क्या उन्नति की है। गाँवोमे खादी-कार्यका प्रसार करनेके लिए अगर हमें काफी बड़ी सख्यामे खादी-सेवकोको मुक्त करना है, तो हमे अपने शहरोके काममे कमी करनी ही होगी। इसका एक मार्ग यह है कि उधार बिक्री न करना हम अपना धर्म समझे, और सिर्फ उन्ही ग्राहको पर ध्यान दे जो सचमुच खादी चाहते हो, और नकद दाम देनेके महत्त्वको समझते हो। उधार बिक्रीका हमेशा ही अर्थ है दाम चढ़ जाना, क्योकि उसमें अधिक काम, यानी अधिक खर्चेका समावेश रहता है। किसी भी दृष्टिसे देखें, थोडे-से ग्राहकोकी सन्दिग्ध सुविधाके सिवा उधारके पक्षमे और कोई दलील पेश की ही नही जा सकती। मगर खादी उन थोड़े-से ग्राहकोकी सुविधाके लिए तो है नही। उसका उद्देश्य तो सर्वजन-हित है। इसलिए खादीकी बिक्री केवल नकद सौदे तक ही सीमित करके चरखा-सघ सिर्फ करोडों भूखो मरनेवाले ग्राम-वासियोका ही नही बल्कि शहरोके खादी-ग्राहकोका भी हित-साधन करना चाहता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-१२-१९३५

१९६. हाथका बना कागज

श्री यादवराज एस० चौधरी जर्मनीमे प्रशिक्षित एक कागज विशेषज्ञ है। उन्होने मगनवाड़ीमें हाथ-बुना कागज तैयार करनेकी विधि दर्शाते हुए निम्नलिखित टिप्पणी[1] पेश की है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-१२-१९३५

१. यहाँ नहीं दी गई है।

१९७. पत्र : उदित मिश्रको

वर्धा
७ दिसम्बर, १९३५

भाई उदित मिश्र,

आपका पत्र भाई शर्माके बारेमे मिला है। मुझे संतोष नही हुआ है। आपका जो पहला खत आया था उसमे शर्माकी तारीफ दी थी। शर्माने जो कुछ भी कहा उसका यथार्थ वर्णन मुझको देनेका आपका धर्म हो जाता है। देनेकी कृपा करे। ब्रजमोहनजीका पत्र नही मिला है।

पत्रकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

१९८. पत्र : फूलचन्द कस्तूरचन्द शाहको

७ दिसम्बर, १९३५

भाई फूलचन्द,

जयसुखलालने अखबारमे पढा कि तुम फेफडोकी भयकर बीमारीसे ग्रस्त हो। अखबारोकी खबरे विश्वासके योग्य नही होती। आशा करता हूँ कि यही बात इस खबरके बारेमें भी होगी। जो स्थिति हो सो मुझे लिखना या किसीसे लिखवाना। तुम्हारे-जैसोको बीमार पड़ना पुसाता नही। अभी तो बहुत-सा काम करना बाकी है। तुम्हारी उम्र कितनी है?

बापूके आशीर्वाद[1]

श्री फूलचन्द कस्तूरचन्द शाह
राष्ट्रीय शाला, वढवान
वढ़वान शहर, काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९११७) से। सी० डब्ल्यू० २८५० से भी; सौजन्य : फूलचन्द क० शाह

१. अन्त में महादेव देसाई की एक टिप्पणी जुड़ी हुई है जिसमें कहा गया है कि यह पत्र लिखनेके बाद बापू स्वयं बीमार पड़ गये और डाक्टरोंने उन्हें काम करनेको बिलकुल मना कर दिया। अब आज तो पत्र पर उनके हस्ताक्षर भी नही लिये। महादेव देसाईने अपने १३ दिसम्बरके पत्रमें जवाहरलाल नेहरूको लिखा था : "मेरा खयाल है, कई महीनेसे उनका [गांधीजीका] रक्तचाप बहुत ऊँचा रहा है।

१९९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
११ दिसम्बर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

आज बहुत दिनो बाद तुम्हे लिख रहा हूँ। शायद डाक्टरोकी आज्ञाओका भंग होता हो। जमनालालजी घबरा गये है। तुम मत घबराना। आनेका समय हो जाये तभी आना। मै आनन्दमें हूँ। मेरी, तुम्हारी, सबकी डोर 'मीराके बालम' के हाथमे है। वह जैसे खीचेगा वैसे हम खिंचेगे। वह कब किसीकी चलने देता है? प्यारेलाल सकुशल है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९३

२००. मूँगफलीकी खलीकी सराहना

प्रोफेसर डी० एल० सहस्रबुद्धेने मूँगफलीकी खलीकी सराहना करते हुए उस पर जो सम्मति प्रकट की है, वह एक मित्रने मेरे पास भेजी है। उसे नीचे दिया जा रहा है।[1] यह चीज बेशक आजमा कर देखने लायक है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-१२-१९३५

उनके सिरके पिछले हिस्सेमें पता नही क्यों, कुछ दर्द रहता था. . .ठीक मालिश करनेसे दर्द दूर हो जाता था, किन्तु २-३ घंटेके अन्तरालसे बार-बार होता रहता था। जब डाक्टरको बुलाया गया — मैंने जीवराजको तार देकर बुलाया तभी यह पता चल पाया कि उनका रक्तचाप ऊपर २०० से भी अधिक और नीचे १२० था। तबसे वे पूर्ण विश्राम कर रहे है। किसी तरहका पत्र-व्यवहार नही करते और न कुछ लिखते है, न लिखाते है।"

१. यहाँ नही दिया गया है। प्रो० सहस्रबुद्धेने बताया था कि प्रोटीन, अमीनो एसिड तथा खनिज तत्त्वोंकी दृष्टिसे मूँगफली सोयाबीनके ही समान है और उसकी खली तो मनुष्यके लिए एक बहुत ही पोषक आहार है।

२०१. पत्र : हीरालाल शर्माको

वर्धा
१४ दिसम्बर, १९३५

चि० शर्मा,

तुम्हारे खत आने शुरू हो गये है। यह अच्छी बात है। द्रौपदीका एक छोटा-सा पत्र आ गया था। तुम्हारे खत रामदासको और उसको भेजता रहता हू। केलोगको मैंने दूसरा खत नही- लिखा है। तुम्हारे वहां जानेके बाद आवश्यकता समझी जायेगी तो अवश्य लिखुगा। भली-बुरी सब चीज वहा देख रहे हो यह अच्छा ही है। यहाके लायककी कोई चीज देखी जाय तो मुझे बता देना।[1] हर जगह पर हमेशा दो प्रकार-की दुकान रहती है। एक गरीब लतेमें और दूसरी धनिक लोगोके लतेमें। गरीब लतेमे रहती है, वहा कोई वख्त बहुत कामकी चीज सस्ती मिलती है ऐसा तजरबा मुझे लण्डन और पारिसका है। न्युयारकमे गरीब हिस्से भी देख लिये जाय। गैल्टनका हेल्थ होम देखोगे।

अमतुल सलाम यही है। तुमारे खत वह पढ़ लेती है। मुझे मालूम नही था कि तुमको वह बिलकुल लिखती नही। रामदास अब तक बम्बईमें है। स्थिर नही हुआ।

तुम्हारा खुराक सादा और अच्छा दिखता है। शरीर तो अच्छा बना ही दोगे।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २१३ पर प्रकाशित अनुकृतिसे।

२०२. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
१९ दिसम्बर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

पिछले हफ्ते मैंने आपको बापूका स्वास्थ्य अचानक बिगड़ जानेके बारेमें लिखा था।[2] अब उनमें ठीक सुधार हो रहा है, लेकिन उनके रक्तचापके सामान्य होनेमें कुछ समय लगेगा। लगता है, पिछले कुछ महीनेसे वे बहुत अधिक काम करते रहे

१. अमेरिकाके प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्रोंमें हीरालाल शर्माने विभिन्न प्रकारके उपकरण देखे थे, किन्तु भारत-जैसे देशके लिए उन्हें वे बहुत महँगे और जटिल जान पड़े।

२. देखिए पृ० १८० परकी पाद-टिप्पणी।

है और दो दिन पहले डॉ० जीवराज मेहता तथा डॉ० गिल्डरने उनकी जाँच करके निश्चित राय दी है कि अब दो महीने उनको विश्राम करना चाहिए। वे इसपर राजी हो गये हैं। पिछले दस दिनोंसे वे आराम करते और सोते हुए बिस्तर पर पड़े रहे हैं। इस बीच उन्होंने न कुछ पढ़ा है, न लिखा है और न लिखाया है। लेकिन आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इन दिनों भी उन्होंने शौच करते समय पढ़ना जारी रखा है। और आपकी महान् कृति — यह सचमुच महान् है — का नौवाँ भाग उन्होंने आज शाम समाप्त कर दिया है।

और इसे समाप्त करते ही उन्होंने मुझे अपने बिस्तरके पास बुलाकर कहा कि मैं इसके बारेमें उनकी सम्मति आपको सूचित कर दूँ। स्वस्थ होते तो उन्होंने खुद लिखा या लिखाया होता, लेकिन डाक्टरकी सलाहके खिलाफ वे अपने शरीर पर जोर नहीं डालना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने विचार मुझे गुजरातीमें एक-दो मिनटमें बता दिये। इसलिए मैं जो-कुछ लिख रहा हूँ वह उनकी नहीं, मेरी भाषामें है। उन्होंने कहा :

कहनेकी जरूरत नही कि पुस्तक बहुत श्रेष्ठ ढगसे लिखी गई है और यह एक महान् साहित्यिक कृति है। कुछ ऐसे अश जरूर है जिनके बारेमे मेरा तुमसे मौलिक मतभेद है और मैं उनकी आलोचना भी करना चाहूँगा, लेकिन मैं करूँगा नही, क्योकि वह जरूरी या उपयोगी नही है। कारण, सब-कुछ कहने-करनेके बाद भी इसमे तो सन्देह ही नहीं कि यह एक बहुत ही आत्म-निरीक्षणात्मक विवरण है, जिसमें तुम्हारे मनकी पूरी गहराईमे सचित विचारो और मान्यताओको अभिव्यक्ति मिली है। यदि तुम्हे उस अभिव्यक्तिको कुछ सयत या मृदु बनाने पर राजी करनेकी आशा की जा सकती हो तो भी मै उसके लिए कोशिश नही करूँगा, क्योकि इससे कृतिकी सत्मूलकतामें भले ही कमी न आये, स्वाभाविकता पर तो आँच आयेगी ही। आखिर हम है क्या — घटनाओके प्रबल प्रवाहमे बहते असहाय अभिनेता-मात्र ही तो! सो जहाँ हमसे गलती हो, वहाँ घटनाओको हमें सुधारनेकी सुविधा देते हुए या उनसे सुधारकी अपेक्षा रखते हुए अपनी-अपनी समझके अनुसार हमे अपने-अपने काम करते जाना है। हाँ, एक बात है, जिसके बारेमें मैं शायद कुछ उपयोगी सुझाव दे सकूँ। लिबरलो पर आक्षेप करनेमे अति कर दी गई लगती है। ऐसा लगता है जैसे पाठकका ध्यान ख्वामख्वाह इस पर बार-बार दिलाया जा रहा है। इससे वर्णनकी सौम्यता और सुन्दरता भी किसी हद तक कम हो जाती है। तुम्हारी कही किसी बातमे ईर्ष्या-द्वेषका भाव हो, ऐसा नही है, इससे तो तुम्हारा वर्णन कोसो दूर है, लेकिन तुम्हे अनजाने भी उनके साथ अन्याय करनेका दोषी नही होना चाहिए। तुमने शास्त्रीके बारेमे जो लिखा है, उससे तो मुझे यही लगा है कि तुम अनजाने ही इसके दोषी बन गये हो। इन भाइयोने अपने-अपने समयमे अपनी-अपनी समझके मुताबिक देशकी सेवा तो की ही है, और उनके साथ भले ही हमारे गम्भीर मतभेद हो, किन्तु उनपर सार्वजनिक रूपसे प्रहार करके हम देशकी सेवा नही करते। इसलिए अगर तुमने

पाण्डुलिपि प्रकाशकके पास न भेज दी हो तो तुम चाहो तो इन अंशोमे परिवर्तन कर दो। . . .[१]

सस्नेह आपका,
महादेव

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२०३. तार : जवाहरलाल नेहरूको[२]

२२ दिसम्बर, १९३५

हमारा पूरा हृदय तुम्हारे और कमलाके साथ है।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५, सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२०४. पत्र : पद्मावतीको

वर्धा
२६ दिसम्बर, १९३५

प्रिय पद्मावती,

अपनी तथाकथित बीमारीके बाद मैंने कल एक पत्र देवदासको लिखा। यह दूसरा तुम्हारे लिए। तुम्हारे गत २० नवम्बरके पत्रका खयाल मुझे बराबर बना रहा है। लेकिन मैं डाक्टरकी चेतावनीकी उपेक्षा नही करना चाहता था।

कान्ति[३] के लिए तुम्हारा प्रेम अगाध है। ईश्वरसे यही कामना है कि वह उसके योग्य बने। खुद मुझे तो सगाईकी घोषणा किये जाने पर कोई आपत्ति नही है। लेकिन शायद यह सरस्वती[४] के हकमे अच्छा न हो। उसके वयस्क हो जाने पर उसे

१. पत्रका शेष अंश यहाँ नहीं दिया गया है।

२. जवाहरलाल नेहरूको २३ दिसम्बर, १९३५ को महादेव देसाई द्वारा लिखे उस पत्रसे उद्धृत जिसमें उन्होंने लिखा था कि सरूपबहनको एकके-बाद-एक भेजे गये आपके दो तार सरूपबहनने बापूके पास तारसे ही दोहराकर तुरन्त भेज दिये थे, और बापूने फौरन कल आपको एक तार भेजा है।

३. हरिलाल गांधीके पुत्र।

४. पद्मावतीकी पुत्री।

इनकारका अधिकार होना चाहिए। जैसाकि तुम खुद ही कहती हो, वह तुम्हारे और कान्तिके बीच, या कहो कि हमारे बीच तय हुई बातके बारेमे बहुत कम जानती है। उसके मनको निर्बन्ध, मुक्त छोड़ देना चाहिए।

उससे कहो कि वह हमारे पुराने सम्बन्धको याद करके दो पंक्तियाँ लिख भेजे।

सप्रेम,

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९७७०) से।

२०५. 'सत्याग्रह इन गांधीजीस ओन वर्ड्स' की भूमिका[1]

[२७ दिसम्बर, १९३५के पूर्व][2]

राजेन्द्रबाबूने अपने एक पत्रमे एक ऐसी पुस्तिकाकी माँग की थी जिसमे अन्य चीजोके अलावा 'सत्याग्रह' के दर्शन पर भी कुछ सामग्री हो। एक प्रिय मित्रने यह पत्र देखकर मुझसे पूछा कि क्या मै ऐसी कोई पुस्तिका लिखूँगा। राजेन्द्रबाबूको मेरी व्यस्तताका पता था और इसलिए उन्होने मुझे इसके लिखनेका समय निकालनेकी कोई माँग नही की थी। अत जब मुझसे ऐसा करनेको कहा गया तब मैंने अपनी असमर्थता प्रकट की। इसपर एक दूसरा सुझाव यह आया कि कोई एक ऐसे मित्र, जो मेरे लेखोसे परिचित है, उन लेखोमे से प्रासगिक अंश निकाल कर वैसी पुस्तिका तैयार कर दे। इसका मैंने खुशीसे समर्थन किया। काफी निस्स्वार्थ श्रमके फलस्वरूप यह पुस्तिका तैयार हुई। इसको तैयार करनेवाले कार्यकर्त्ता अज्ञात रहना चाहते हैं। मैंने पाण्डुलिपिको सरसरी तौर पर देखा और मुझे लगा कि कामको योग्यतापूर्वक किया गया है। मेरा विश्वास है कि इससे पाठकको सत्याग्रहके अत्यन्त महत्त्वपूर्ण फलितार्थोको समझनेमे मदद मिलेगी। अहिंसाके निचोड-स्वरूप, इस [अर्थात् सत्याग्रहके] सिद्धान्तके प्रति मेरा आकर्षण दिनो-दिन बढता ही जा रहा है, और मुझे तनिक भी सन्देह नही है कि यदि एक जीवन-योजनाके रूपमें कोई व्यक्ति या राष्ट्र इसे अपना ले, तो इससे उनकी सुख-शान्तिमे वृद्धि होगी, और जिस विश्व-शान्तिके लिए हम सब लालायित है, उसकी प्राप्तिकी दिशामे उनका यह सबसे बडा योगदान होगा।

[अंग्रेजीसे]

सत्याग्रह इन गांधीजीस ओन वर्ड्स।

१ और २. हिन्दू, २७-१२-१९३५ ने भूमिकाकी अन्तिम पंक्तिको दिनाक "इलाहाबाद, २७ दिसम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित करते हुए लिखा था कि यह "अ० भा० का० क० कार्यालयकी ओरसे सत्याग्रहके विषय पर जुबली ओशरकी गांधीजी द्वारा लिखी हुई भूमिका है।"

२०६. प्रस्तावना : 'टु द स्टुडेंट्स' की

[२८ दिसम्बर, १९३५ के पूर्व][1]

उपयुक्त शीर्षकोसे मेरे लेखोका सग्रह तैयार करनेका आनन्द हिंगोरानीका विचार मुझे पसन्द आया। उन्होने सग्रहकी आकर्षक छपाई और जिल्दके लिए जो श्रम किया है उसकी कद्र करनेमे पाठक चूकेगे नही।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
टु द स्टुडेंट्स

२०७. सन्देश : कांग्रेस स्वर्ण-जयन्ती सम्मेलनको

[२८ दिसम्बर, १९३५ के पूर्व][2]

इतने सारे भूतपूर्व अध्यक्ष इस अवसर पर एकत्र हो रहे है, यह सोचकर प्रसन्नता होती है। अध्यक्षकी भावना भ्रातृवत् स्नेहकी भावना होती है। यह राष्ट्रके लिए शुभ हो, यही कामना करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३५

२०८. उत्तर : "कास्मोपोलिटन"[3] को

[१९३५][4]

स्थायी शान्तिमे विश्वास न करनेके अर्थ है मनुष्यके धार्मिक स्वभाव पर ही अविश्वास करना। अभी तक अपनाये गये तरीके विफल रहे, इसका कारण यह है कि जिन लोगोने इसके लिए कोशिश की है उनके अन्दर सच्ची श्रद्धाका ही अभाव रहा है। ऐसी बात नही है कि वे इस तथ्यको समझ गये है। जिस प्रकार अमुक रासायनिक मिश्रणको प्राप्त करनेके लिए उसकी सभी शर्तोको पूरा न किया जाये

१. पुस्तकका प्रथम संस्करण २८ दिसम्बर, १९३५ को प्रकाशित हुआ था।

२. यह सन्देश सम्मेलनमें २८ दिसम्बर, १९३५ को पढकर सुनाया गया था।

३ और ४. न्यूयॉर्कसे प्रकाशित होनेवाला एक पत्र। इस उत्तरको महादेव देसाई लिखित "वीकली लेटर" में से लिया गया है, जिसमें कहा गया है कि "गांधीजीने यह उत्तर तीन वर्ष पहले दिया था, लेकिन यह आज भी दोहरानेके योग्य है।"

तो अपेक्षित परिणाम प्राप्त नही होगा, उसी प्रकार शान्तिकी शर्तोकी आशिक पूर्तिसे शान्ति नही प्राप्त की जा सकती। विनाशके साधनो पर नियन्त्रण रखनेवाले मनुष्य-जातिके मान्य नेता उन साधनोके त्यागके फलितार्थोको अच्छी तरह जानते हुए भी यदि उनका त्याग कर दे, तो स्थायी शान्ति स्थापित हो सकती है। जबतक ससारकी महाशक्तियाँ अपने साम्राज्यवादी इरादोंका त्याग नही करती, तबतक यह सम्भव नही है। यह तबतक भी असम्भव दिखता है जबतक बडे राष्ट्र आत्माका हनन करनेवाली प्रतिस्पर्धाका, और आवश्यकताओको बढाने तथा फलस्वरूप अपनी भौतिक सम्पत्तिको बढानेकी इच्छाका परित्याग नही करते। मेरा पक्का यकीन है कि एक जीवन्त परमात्मामे जीवन्त विश्वासका अभाव ही सारी बुराईकी जड है। मानवजातिके लिए यह बहुत बडे दुःखकी बात है कि ससारके वे इन्सान जो ईसा मसीहको शान्तिका देवता बताते है और उनकी शिक्षामे विश्वास करते है, वे ही लोग अपने आचरणमे इस विश्वासका कोई सबूत नही देते। यह देखकर दुःख होता है कि ईमानदार ईसाई धर्मतत्त्वज्ञ लोग ईसाके सन्देशको चन्द चुने हुए लोगोकी हदतक सीमित करनेका प्रयास करते है। मुझे बचपनसे ही यह सिखाया गया है, और मैंने अनुभवसे इसकी सचाई भी परखी है, कि गिरेसे-गिरे मनुष्यके लिए भी मानवताके बुनियादी गुणोको अपने अन्दर पैदा कर सकना सम्भव है। यही असदिग्ध सार्वत्रिक सम्भावना मनुष्यको परमात्मा द्वारा रचे गये अन्य प्राणियोसे अलग करती है। यदि एक भी बड़ी शक्ति बिना शर्त लगाये त्यागका रास्ता अपना ले, तो हममें से कितने ही लोग अपने जीवन-कालमे ही पृथ्वी पर शान्तिको साकार होते देख सकते है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-६-१९३८

२०९. तार : अखिल भारतीय चरखा संघको

[१९३५][1]

चरखा संघ

जिम्मा सम्हाल लीजिए और स्टॉकको सूची भेजिए। साथ ही मालकी वर्तमान कीमते और व्यक्तिगत ऋण तथा अन्य बकाया रकमोकी सूची भी। बिकने लायक सारा स्टॉक निकाल दीजिए किन्तु अनुमति प्राप्त किये बिना लागत से कम मूल्य पर कदापि नही।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१. साधन-सूत्रमें यह तार १९३५ की सामग्रीमें रखा हुआ है।

२१०. पत्र : चन्द त्यागीको

मगनवाड़ी, वर्धा
[१९३५][1]

चि० चन्द्र त्यागी

राजकिशोरी[2] आ रही है। कोई ऐसी बात नहीं है। लेकिन वह भी थोड़ी चिन्तित रहती थी। ९९ टेम्प्रेचर हो जाता है। यो भी वहा आनेका इरादा रखती थी। एक मासकी छुट्टी लेकर जाती है। ऐसी अच्छी लड़की है कि सबको प्रिय लगती है। सादी, भोली, निर्मल हम सबको लगती है। मेरे सामने प्रतिज्ञा करके जाती है कि मुझको वख्तन्-वख्तन् खत लिखती रहेगी। इस प्रतिज्ञा पालनमे उसको प्रोत्साहन दिया जाय। कैसा चलता है, मुझको लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६३४) से। सी० डब्ल्यू० ४२८२ से भी; सौजन्य : चन्द त्यागी

२११. पत्र : अमृतलाल नानावटीको

वर्धा
४ जनवरी, १९३६

चि० अमृतलाल,

यदि मुझसे कुछ कहना हो, तो लिखना। लीलावतीसे पूरा-पूरा काम लेना। भोजनालयके काममे तो वह बहुत हद्द तक हाथ बँटा सकती है। सिन्दी गाँवमे सफाईके काममें भी जानेकी उसकी इच्छा है। उसे भजन और श्लोक सस्वर बोलना नही आता। यदि वह सीखनेके लिए समय माँगे तो सिखा देना। रामजीलालको भोजनालयका पूरा काम सीखनेमे लगा देना। छोटी-मोटी जिम्मेदारी उठा सके तो अच्छा हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१३)से।

१. साधन-सूत्रमें केवल १६ तारीख दी हुई है, किन्तु विषय-वस्तुमे यह अनुमान किया जा सकता कि यह पत्र १९३५ में लिखा गया होगा जब गांधीजी मगनवाड़ीमें रहा करते थे।

२. चन्द त्यागीकी विधवा पुत्रवधू। फरवरी, १९३५ से वे आश्रममें रहने लगी थीं।

२१२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

४ जनवरी, १९३६

भाई वल्लभभाई,

वहाँ न आ सकनेका बड़ा दुख है। परन्तु डाक्टरोंकी कठिन शर्तें स्वीकार नहीं कर सका। यदि तबीयत सचमुच उतनी खराब हो जितनी वे मानते हैं तो न जाना ही ठीक है। अब तो थोड़े दिनोंमें हरिजनोंके लिए चन्देकी उगाही पूरी करके यहाँ आना। राजेन्द्रबाबूको भी लाना। शायद अहमदाबादमें ही तुम चन्दा पूरा कर लोगे।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
गुजरात विद्यापीठ
अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९४

२१३. भेंट : योने नोगूचीको[1]

[११ जनवरी, १९३६ के पूर्व]

भेंट-मुलाकातके लिए डाक्टरोंके मना करनेके बावजूद गांधीजीने जापानी-कवि योने नोगूचीके सम्बन्धमें अपवाद-रूपमें छूट लेते हुए उन्हें मिलनेको आमन्त्रित किया। उन्होंने कहा :

वे मेरे साथ किसी विषय पर बहस करने तो आ नहीं रहे हैं। मैं तो सिर्फ उनकी बातें सुननेका आनन्द लेना चाहता हूँ।

कवि महोदय आये और उन्होंने गांधीजीको सिरपर गीली मिट्टीकी पट्टी बाँधे शैय्या पर पड़ा हुआ देखा। गांधीजीने कहा :

भारतकी मिट्टीमें मैंने जन्म लिया है, और इसीसे भारतकी यह मिट्टी मैं अपने मस्तक पर धारण किये हुए हूँ।

१. महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से उद्धृत।

नोगूची: जापान और भारत दोनों ही देश त्याग, सादगी और जीवनके साथ काव्यके तादात्म्यके उपासक हैं, इसलिए आपको दो-चार शब्दोंमें श्रद्धांजलि अर्पित करनेके लिए आये हुए इस जापानीको भी आप मूलतः अपनेसे अभिन्न समझिए।

गांधीजीके उनसे यह पूछनेपर कि भारतकी यात्राकी उनके मनपर क्या छाप पड़ी है, उन्होंने कहा, "भारतने तो मुझे इतना मोह लिया है कि कुछ कहते नहीं बनता। मैंने यहाँ इतनी चीजें देखी हैं कि जिनको देखनेकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। कभी-कभी मुझे निराशा भी हुई है। नागपुरकी प्रदर्शिनीमें मैंने एक नये भारतको देखा। लोग वहाँ काममें बहुत व्यस्त थे।" . . . उन्होंने गांधीजीसे पूछा कि क्या आप जापानके सम्बन्धमें कुछ जानते हैं। गांधीजीने कहा:

बस उतना ही जितना मैंने आजसे ठीक ४५ वर्ष पूर्व जापानी जीवन पर एडविन आर्नोल्डके लिखे वर्णनात्मक लेखोंमें[1] पढा था। ये लेख पत्र-रूपमे एक अंग्रेजी अखबारमे प्रति सप्ताह प्रकाशित होते थे। उन्होंने एक जापानी महिलाके साथ शादी की थी और इसीसे उन्होंने जो भी लिखा, वह प्रगाढ़ सहानुभूतिके साथ लिखा।

नोगूची: आप ठीक कहते हैं, आर्नोल्डकी पुस्तकमें हमें आज भी सत्यके दर्शन होते हैं। प्रेम और सहानुभूतिके बगैर आप किसी राष्ट्रका यथार्थ चित्रांकन कर ही नहीं सकते।

गांधीजी . जी हाँ, और बुराइयोको देखना तो आसान काम है। जिस तरह जापानके व्यापार और व्यापारिक प्रतिस्पर्धाके द्वारा जापानकी बुराइयोको हम जानते है, उसी तरह आपने भी हमारी त्रुटियोको अवश्य देखा होगा। लेकिन अच्छाइयाँ देखना ही सबसे उत्तम बात है, और जापानकी जो अच्छाइयाँ हैं उन्हे मैंने महान् सुधारक कगावा[2] की आँखोसे देखा है।

इतनेमें कस्तूरबा आई, और कविवर नोगूचीसे उनका परिचय कराया गया। गांधीजीने कहा:

आपको क्या वह एक जापानी स्त्री-जैसी नही लगती?

नोगूची: जी हाँ, यह तो मेरी माता-जैसी हैं।

भारतवर्षके सम्बन्धमें कविने जो इतना थोड़ा कहा उससे गांधीजीको भला संतोष कैसे हो सकता था? इसलिए उन्होंने एक बार फिर कहा:

जहाँ तक जानता हूँ, आपका देश संसारमे अतिथि-सेवाकी दृष्टिसे सबसे आगे है। मै आशा करता हूँ कि मेरे देशको आप अतिथि-सेवामें कम-से-कम दूसरा नम्बर तो देंगे ही।

१. ये लेख बादमें सीज़ ऐंड लैंड्स (१८९१) तथा जैपोनिका (१८९२) शीर्षक पुस्तकोंमें प्रकाशित हुए थे।

२. एक जापानी साधु जो गांधीके साथ उनके आश्रम में रह चुका था।

नोगूची: नहीं, आपका ही देश सबसे अधिक अतिथि-सेवी है।

वे शायद कमजोरीकी इस हालतमें गांधीजीका अधिक समय नहीं लेना चाहते थे। इसलिए उन्होंने कहा, "मुझे आपसे कोई बात पूछनी तो है नहीं, क्योंकि आपका जीवन मेरे लिए एक खुली हुई किताब है। आपने कोई वस्तु गोपनीय नहीं रखी।"

पर जब वे उठने लगे, उन्होंने गांधीजीसे पूछा कि क्या जापानके लिए आप मुझे कोई सन्देश देंगे? गांधीजीने कहा:

आपको कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरने जो सन्देश दिया है, उसमें मेरे सन्देशका समावेश हो जाता है। हममें से अनेक व्यक्ति जो सन्देश दे सकते हैं, वे उनके सन्देशमें आ जाते हैं।

गांधीजीने कविवर नोगूचीसे अहमदाबाद आनेकी प्रार्थना की, और सेठ अम्बालाल साराभाईकी मार्फत उन्हें निमन्त्रण देनेकी भी व्यवस्था की।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-१-१९३६

२१४. पत्र: डॉ० शमशेरसिंहको

वर्धा
१५ जनवरी, १९३५

प्रिय शम्मी,

मैं जानता हूँ, अमृतको यहाँ इतने दिन रोक रखनेके लिए तुमने मुझे क्षमा कर दिया है। उसकी उपस्थितिसे मुझे बड़ी राहत मिलती थी। उसके अन्दर स्नेहका जो महान् भाव देखनेको मिला, वह एक निधिकी तरह सँभालकर रखनेकी चीज है। आशा है, तुमने उसे स्वस्थ पाया होगा। मैं ठीक हूँ। अमृतने मुझे तुम्हारे सभी सुविचारित सुझाव बता दिये थे। धन्यवाद।

दोनोको प्यार।

बापू

[पुनश्च]

साथमें अमृतके लिए प्रभावतीका पत्र है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६०)से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६३६९ से भी

२१५. सन्देश : बिहार राजनीतिक सम्मेलनको

[१७ जनवरी, १९३६के पूर्व][1]

मेरे लिए किसीको चिन्ता करनेकी जरूरत नही। अगर किसीको चिन्ता है तो वह मुझसे दस गुना ज्यादा काम करके दिखाये।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-१-१९३६

२१६. पत्र : अमृत कौरको

बम्बई

१८ जनवरी, १९३६

स्वस्थ हूँ। हमेशा तुम्हारा खयाल आता रहता है। अकसर आँखोके सामने तुम्हारी तसवीर उभर आती है—मुस्काती, स्नेह-भरी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५९)से; सौजन्य. अमृत कौर। जी० एन० ६३६८ से भी

२१७. तार : महारानी मेरीको

[२१ जनवरी, १९३६][2]

महात्मा गांधीने महामहिम सम्राट्के निधन पर अपना दुःख और अपनी हार्दिक संवेदना प्रकट करते हुए महामहिम महारानी और राज-परिवारके सदस्योंको एक तार भेजा है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २२-१-१९३६

१. राजेन्द्रप्रसादके माध्यम से पहुँचाया गया यह सन्देश दिनाक "चतरा (हजारीबाग), १७ जनवरी, १९३६" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. चन्दूलाल दलाल-कृत गांधीजीनी दिनवारी से। सम्राट् जॉर्ज पंचमकी मृत्यु २० जनवरी, १९३६ को हुई थी।

२१८. पत्र : मीराबहनको

[२२ जनवरी, १९३६के पश्चात्][1]

चि० मीरा,

तो तुम बिस्तर पर पड गईं।[2] आशा है, तुम शीघ्र ही नीरोग होकर अपने काम पर लग जाओगी। तुम्हे पहाडोका एकान्त अवश्य प्राप्त करना चाहिए। रक्तचाप के बावजूद मेरा स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा है। मुझे लगता है कि इस समय रक्तचाप बढनेका कारण मैं जान गया हूँ। लेकिन बुधवार तक ज्यादा ठीक पता चल जायेगा। चिन्ताकी कोई बात नही है। मुझे पर्याप्त शारीरिक श्रम करने और ठोस आहार करनेकी इजाजत है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०८)से; सौजन्य. मीराबहन। जी० एन० ९७७४ से भी।

२१९. पत्र : अनसूया जाजूको

अहमदाबाद
२५ जनवरी, १९३६

चि० अनसूया,

यह बात मुझे सालती रहती है कि मैं तेरे विवाहके समय उपस्थित नही रहूँगा, किन्तु लाचार हूँ। तू आदर्श पत्नी बनना। आदर्श सेविका बनी रहना और धर्म तथा देशको शोभान्वित करना। तू यह निश्चित समझना कि तेरे लिए राधाकृष्णकी अपेक्षा अधिक योग्य पति नही मिल सकता था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९११९)से।

१. **बापूज लेटर्स टु मीरा** में यह पत्र ८ फरवरी, १९३६ वाले पत्रसे पहले दिया गया है, और इसपर यह टिप्पणी भी दी हुई है: "बापूको स्थान-परिवर्तनके लिए अहमदाबाद ले जाया गया था।" गांधीजी बुधवार, २२ जनवरी, १९३६ को अहमदाबाद पहुँचे थे।

२. मीराबहनको बुखार हो गया था।

२२०. पत्र : राधाकृष्ण बजाजको

२५ जनवरी, १९३६

चि० राधाकृष्ण,

मुझे इस बातका कम दुख नही है कि तुम्हारे विवाहके समय मैं वर्धामे उपस्थित नही रहूँगा। किन्तु यदि भगवान्‌की ऐसी ही इच्छा हो तो हम क्या कर सकते है? *अनसूयाको लिखे पत्रमे*[1] *मैने अपनी जो इच्छाएँ व्यक्त की है वही व्यक्ति-भेदसे तुम्हारे* लिए है। मेरा विश्वास है कि तुम्हारे लिए अनसूयाकी अपेक्षा अच्छा जोडीदार मिलना असम्भव था। तुम दोनोके सम्बन्धसे मै जो बहुत बड़ी-बडी आशाएँ बाँधे बैठा हूँ, उन्हे पूरा करना। इसके साथ तुम दोनोके लिए मेरे हाथके सूतकी मगल मालाएँ है, उन्हे पहनकर तुम दोनो फेरे लेना। दीर्घायु हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९११९)से।

२२१. पत्र : सादुल्ला खाँ और सोफिया सोमजीको

[२६ जनवरी, १९३६]

अगर बापू स्वस्थ होते तो उनकी ओरसे जो-कुछ मैं लिख रहा हूँ, वे स्वयं ही लिखते। ईश्वरसे यही कामना है कि २६ जनवरीका यह शुभ दिन आप दोनोंके लिए सेवा और समर्पणमय जीवनका शुभारम्भ सिद्ध हो — उस सेवा और समर्पणमय जीवनका जिसे आप दोनोंको एक सूत्रमें बाँधनेवाले इस अटूट बन्धनने और भी सशक्त और समृद्ध बना दिया है।

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-१-१९३६

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२२२. पत्र : अमृत कौरको

२६ जनवरी, १९३६

जब जालिम फूलते-फलते है तब वागी[1] गुलाम बन जाते है। मै तो फूल-फल रहा हूँ। तुम्हारा कैसा है?

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५८)से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६३६७ से भी।

२२३. पत्र : अमतुस्सलामको

२६ जनवरी, १९३६

प्यारी बेटी अमतुलसल्लाम,

मेरे खत मिले होगे। बहुत दिनोसे तुम्हारे खत नही है। खत लिखनेमे आलस न किया जाय। अब तुम्हारा कैसे चल रहा है? तुमको अब तो खास जगह मिल गई है। रसोड़ेकी सब जिम्मेदारी तुम्हारे सरपे आई न?[2] कुछ दवा चलती है?

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२९) से।

१. इससे बादके पत्रोंमें गांधीजीने अमृत कौरको "वागी" कह कर सम्बोधित किया है और हस्ताक्षरमें "जालिम" शब्दका प्रयोग किया है।

२. अमतुस्सलाम इन दिनों किग्सवे, दिल्लीमें नवस्थापित हरिजन बस्तीमें रह रही थी।

२२४. पत्र : जीवनजी डा० देसाईको

[५ फरवरी, १९३६के पूर्व][1]

भाई जीवनजी,

तुम्हारे भाईके स्वर्गवासका समाचार मुझे सरदारसे मिला था। मुझे पता नही था कि तुम बाहर गये हुए हो। मै तुम्हे क्या सान्त्वना दूं? 'अनासक्तियोग' के प्रकाशक[2] होनेके कारण तुम तो जानते हो कि जिसे तुम भाई मानते थे वह तो मरा ही नही है और मरेगा भी नही। देह तो आज है और कल नही। फिर उसका दु:ख क्या करना? दिवगतकी आत्माका कल्याण हो और हम सब और अधिक सेवापरायण बनें।

बापूके आशीर्वाद

श्री जीवनजी डाह्याभाई देसाई
छापरा, वाया– नवसारी
बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४२) से। सी० डब्ल्यू० ६९१७ से भी; सौजन्य : जीवनजी डाह्याभाई देसाई

२२५. पत्र : मीराबहनको

[८ फरवरी, १९३६][3]

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्रने मेरी सारी चिन्ता दूर कर दी है। मुझे आशा है तुम पिछली भूलो पर न सोचनेका अपना वादा पूरा कर सकोगी और भविष्यमे वैसी भूले दुबारा न करनेकी आशा करोगी। मुझे पूरा विश्वास है कि कोई निर्णय करते समय यदि तुम बिलकुल मत सोचो कि दूसरे लोग क्या कहेगे तब तुम बिलकुल ठीक रहोगी। अपने अन्तरमें बसनेवाले परमात्मासे परामर्श करो, वह तुम्हे कभी धोखा नही देगा।

१. पत्रपर वितरणकी डाक-मुहर ५ फरवरी, १९३६ की है।
२. जीवनजी डा० देसाई नवजीवन प्रेसके प्रबधक थे।
३. **बापूस लेटर्स टु मीरा** परसे; देखिए अगला शीर्षक भी।

मेरा स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा है। डाक्टर लोग कल आयेंगे। तुम्हे उनकी रायकी सूचना दे दी जायेगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०९) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७७५ से भी।

२२६. पत्र : मीराबहनको

अहमदाबाद
९ फरवरी, १९३६

चि० मीरा,

कल तुमको एक पत्र लिखा है।[1] आज तुम्हारा वह पत्र मिला जिसमे तुमने जमनालालजीके साथ अपनी बातचीतका विवरण दिया है। अपमानको प्रसन्नतासे सह लेना बहुत बडी बात है। भविष्यके विषयमें सोचे बिना तुम्हे अपने सामने पडे कामको करना चाहिए। जमनालाल बजाज यही है। अबतक उनसे मिला नही हूँ। बेशक, उनसे मिलकर उनसे तुम्हारे बारेमे बाते करूँगा। किसी तरहकी चिन्ता मत करना। डाक्टरी जाँचके बारेमें तुम्हे प्रभा[2] लिख रही है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१०) से; सौजन्य. मीराबहन। जी० एन० ९७७६ से भी।

२२७. पत्र : मीराबहनको

१२ फरवरी, १९३६

चि० मीरा,

वर्धासे भेजा तुम्हारा पत्र मिला, लेकिन सशोधन अबतक नही मिले। तुम्हारा यहाँ आना निश्चय ही बहुत अच्छी बात थी।[3] जब आत्माकी निश्चित इच्छा हो गई तो उसे दबाना मूर्खता होती। अब बात सिर्फ इस यात्रासे अधिकसे-अधिक लाभ उठानेकी रह गई है। जमनालाल बजाजसे तुम्हारे विषयमे पाँच मिनट तक मेरी बातचीत हुई है। वे इस बातसे तो सहमत है कि तुम्हारा जैसे चल रहा है, तुम्हे

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. प्रभावती।
३. **गांधीजीनी दिनवारी** के अनुसार मीराबहन ५ फरवरी, १९३६को गांधीजीके पास आई थीं।

उसी तरह चलाते रहना चाहिए और पहाड़ीपर तुम्हे कोई एक कुटीर मिल जाना चाहिए। शेष मिलने पर। २३ को वहाँ पहुँचनेकी आशा करता हूँ। मनमे किसी बातकी चिन्ता बिलकुल न रखो। प्रभावती आज पटना गई। मैंने सोचा कि अब तो मैं काफी हदतक ठीक हो गया हूँ, इसलिए उसका अपने पतिके पास जाना जरूरी है। देखे, अब, क्या होता है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३११) से, सौजन्य. मीराबहन। जी० एन० ९७७७ से भी।

२२८. पत्र : मीराबहनको

[१३ फरवरी, १९३६][1]

चि० मीरा,

मैं देखता हूँ कि तुम्हे सेगाँव जानेसे डर लगता है।[2] जी न करे तो मत जाना। 'गीता' का यह श्लोक जानती हो 'निग्रह किं करिष्यति?'[3] विवश करनेसे क्या लाभ? यह अपनेको विवश करना है। एक हद तक, दिलको रोकना धर्म है। जब प्रेरणा और उल्लास न हो, तब वह विवशता हो जाती है। सयमसे जबतक बल मिलता हो, तबतक वह अच्छा और लाजिमी है। जब आदमी हर प्रयत्नसे थक जाता है, तब विश्वास रखो कि वह विवशता है और उससे बचना चाहिए। तुम्हारे साथ खराबी यह है कि तुमने अपनी इच्छाके विरुद्ध कुछ बाते करनेके लिए अपने साथ ज़बरदस्ती की है। यह असत्य है। इसलिए अगर तुम्हे ऐसा लगे कि तुम्हे सेगाँव जाना ही चाहिए, और न जानेसे दुःख होगा, तभी जाना वरना मत जाना।

१. **बापूस लेटर्स टु मीरा** के आधारपर; देखिए पृ० २०१ भी।

२. मीराबहनने इसका खुलासा इस प्रकार किया है : "मेरे मनमें भारी संघर्ष चल रहा था। . . . मेरे मनमें सदासे गाँवोंमें रहनेकी प्रबल इच्छा और बापूके सन्निकट रहनेकी उत्कट अभिलाषाके बीच सघर्ष होता रहा था। अब मुझे आशा दिख रही थी कि दोनों ही की पूर्ति कर सकनेका समय आ गया है। परन्तु परिस्थिति अत्यन्त पीड़ाजनक बन गई। यदि सेगाँवमें जाकर रहनेका अर्थ स्थायी तौरपर बापूसे पृथक् रहना हो तो मेरा स्वास्थ्य और मेरा मन उतना सहन नही कर पायेंगे। इस मानसिक तनावके बोझसे मेरा स्वास्थ्य पहले ही लड़खड़ा रहा था कि कुछ लोगोंने यह कहकर उसे और बिगाड़ दिया कि यदि मैं सेगाँवमें स्थायी तौर पर नही रहूँगी तो बापूका रक्त-चाप और भी अधिक बढ़ जायेगा। जब बापूको यह पता चला कि मैं इस सबको मानसिकरूपसे बर्दाश्त नही कर पा रही हूँ तो उन्होंने कहा कि यदि मैं सेगाँवमें नही रह सकती तो वे स्वयं वहाँ चले जायेंगे।"

३. भगवद्गीता, ३, ३३।

क्या यह बिलकुल स्पष्ट है? कान्ति और कनु बडी मेहनत और सावधानीसे मेरी सार-सँभाल कर रहे हैं।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१२) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७७८ से भी।

२२९. पत्र : अमृत कौरको

अहमदाबाद
१३ फरवरी, १९३६

प्रिय बागी,

बागीपनसे भरे तुम्हारे सभी पत्र मुझे दे दिये गये हैं। लम्बा उत्तर देनेकी कोशिश मुझे नही करनी चाहिए। प्रभा कल अपने पतिके पास पटना चली गई। मुझे लगा कि अब तो मैं लगभग अस्पतालसे छुट्टी पाये रोगीके समान हूँ, इसलिए उसे और ज्यादा रोकना गलत होगा। बहस वगैरह करने-झेलने लायक शक्ति तो धीरे-धीरे ही आयेगी। वह थकान कोई नई चीज नही है। यह अनिच्छा तो मुझमे साल-भर या इससे भी पहले आ गई थी।

कान्ति और कनु मेरी देखभाल कर रहे है और बहुत कुशलतासे कर रहे है। मणिबहन उनका मार्ग-दर्शन करती है। और मणिबहन इन बातोमे तो पारगत ही है। सफाईमे तो वह लाजवाब है। बा अब भी बम्बईमे लक्ष्मी[1] की शुश्रूषामे लगी हुई है।

ईश्वरने चाहा तो हम १९ तारीखको यहाँसे चल देंगे, रास्तेमे दो दिन बारडोली मे बिताकर वहाँसे फिर वर्धाके लिए रवाना हो जायेंगे। हम (मै और सरदार) सात या आठ मार्चको दिल्ली पहुँचेंगे। दिल्ली आनेमे देर करनेका कारण अशत तुम्हारे पत्र भी है। कारण, तुम्हारे हालके सभी पत्रोमे मुझे फरवरीके अन्तसे पहले दिल्ली जानेके खिलाफ चेतावनी दी गई है। और सरदार कोई खतरा उठानेको तैयार नही है।

आशा है, शम्मी बिलकुल स्वस्थ होगा। मिलने पर तुम्हारे ग्राम-कार्योका विवरण जाननेको उत्सुक हूँ।

बापू या जालिम, जिसे चाहो
उसकी ओरसे ठेला-भर प्यार

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६१) से; सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३७० से भी।

१. देवदास गांधीकी पत्नी।

२३०. पत्र : प्रभावतीको

१३ फरवरी, १९३६

चि० प्रभा,

तू मुझसे जयप्रकाशको पत्र लिखवाना भूल गई। उक्त पत्र मैं अब इसके साथ भेज रहा हूँ। आशा है रास्तेमें तुझे कोई कठिनाई नहीं हुई होगी। कान्ति और कनु अपने-अपने काममें ठीक तरहसे लग गये हैं और समयका ठीक-ठीक पालन कर रहे हैं। मणिबहन उनका पथ-प्रदर्शन कर रही है। आज प्रात घूमते समय मैंने उसके कन्धेका सहारा लिया था। आनन्दी[1] दोपहरको तेलसे मालिश करती है और कान्ति तथा कनु साँझको। तू मेरी जरा भी चिन्ता मत करना। कल घी न लेनेके कारण मुझे अच्छा लगा। आज भी मैंने घी नहीं लिया किन्तु और सब चीजें ठीक ली हैं। नींद बहुत अच्छी आई थी। ठण्ड जरा भी नहीं है। नियमित रूपसे पत्र लिखती रहना। खबरदार! दुखी मत होना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५५)से।

२३१. पत्र : अमतुस्सलामको

१३ फरवरी, १९३६

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला है। पटियाला जानेके बारेमें तो कान्तिको लिखनेको कह दिया था। ३०० रु० बापा[2] से ले लो और लाला दुनीचन्द[3] को दे दो। कमरेका किराया देती है वह अच्छा है। मेरे देहली आनेके बाद देखेंगे क्या करना चाहिए। ढाका[4] जाना मुझे अच्छा लगता है। तुम्हारे बारेमें डॉक्टर अन्सारीसे पूछो। तबीयत अच्छी हो जानी चाहिए। बाकी खबर कान्तिसे मिलेगी। मेरी तरफसे इतना बस समझो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३०)से।

१. लक्ष्मीदास आसर की पुत्री।

२. ठक्करबापा।

३. अम्बालाके एक कांग्रेस कार्यकर्ता।

४. दिल्लीके पास हरिजनोंका एक गाँव।

२३२. पत्र : मीराबहनको

अहमदाबाद
१४ फरवरी, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे खयालसे तुमने मेरा कथन सही तौर पर उद्धृत नही किया। लेकिन इससे तुम्हारे तर्क पर असर नही पडता। मेरे कलके पत्रमें[1] तुम्हारे अधिकाश तर्कका उत्तर पहले ही दे दिया गया है। मै नही समझता कि तुम्हे प्रायश्चित्तके तौर पर सेगाँव जानेकी जरूरत है। वहाँ गये बिना तुम खुशी न महसूस करो तो ही जाना चाहिए। जवतक मै मगनवाड़ीमे हूँ, तुम जितनी चाहो मेरी व्यक्तिगत सेवा कर सकती हो। सिर्फ बा जितना चाहे उतना भाग उसे लेने दिया जाये। जब मै सेगाँव जाऊँ—और जाना तो है ही—उस वक्त अगर तुम वहाँ न रहो, तो वर्तमान साथियोमे से कोई भी मेरे साथ नही रह सकता। मुझे सेगाँवमे नये मित्र और साथी बनाने पडेगे। तुम चाहो तो किसी और पडोसके गाँवमे वस सकती हो, ताकि मेरे नजदीक रहो। निकट भविष्यमे मेरा इरादा बहुत सफर करनेका नही है, हिन्दुस्तानसे बाहर तो कतई नहीं। "मै दूरके दृश्य नही देखना चाहता, मेरे लिए तो एक कदम काफी है।" मेरा दिल गाँवोमें है। वहाँ जानेको कोई बहाना चाहिए। अपनी ही इच्छासे जानेकी या मित्रोके तर्कका विरोध करनेकी हिम्मत नही है। लेकिन मेरे अच्छा होकर लौटते ही तुम सेगाँव छोडनेके लिए अपने दिलको राजी कर सको, तो मुझे सेगाँव जाना बहुत अच्छा लगेगा, और यह तुम्हे सजा देनेके लिए नही, बल्कि किसी गाँवमे जानेके लिये ईश्वरके दिए एक सुअवसरका लाभ उठानेके रूपमे होगा। वरसातकी मुझे जरा भी चिन्ता नही होगी। मुझे वहाँ जितना भी आराम चाहिए अपने-आप जुटा लूँगा। इसलिए मै चाहता हूँ कि तुम मेरे लिए चिन्तित न रहो। तुम्हे देहातका काम करनेकी प्रेरणा होती हो, तो ही सेगाँव जाना चाहिए। प्रेरणा न होती हो तो तुम्हे चुपचाप मगनवाडीमे वस जाना चाहिए। तुम्हारी झोपडी वहाँ है ही। तुम्हे बेहतर इन्तजाम चाहिए तो वस तुम्हारे कहनेकी देर है। सार यह है कि तुम्हे अन्तरात्माकी आवाज, अन्तर जो भी कहे, उसके खिलाफ कुछ भी नही करना चाहिए। मेरा काम चल रहा है। हाँ, हम दो दिन बारडोली ठहरेगे और भगवान् चाहेगा तो वहाँ २३ तारीखको पहुँच जायेगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१३) से, सौजन्य मीरावहन। जी० एन० ९७७९ से भी।

१. देखिए पृ० १९८।

२३३. पत्र : मनु गांधीको

१४ फरवरी, १९३६

चि० मनुडी,

तेरा पत्र मिला। तू समुचित रूपसे सेवा करना। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना और थोडा-बहुत अध्ययन तो करती ही रहना। इसमे सुशीलाबहनकी सहायता लेना। वह तेरा पथ-प्रदर्शन करेगी। कुछ सामान्य वाचन करती रहना।

बा अभी बम्बईमे है। हम यहाँसे १९ को रवाना होनेकी सोचते है। मैं २३को वर्धा पहुँचूँगा। ऐसा लगता है कि बा तो वर्धा भी नही आ सकती। मौसियोको आशीर्वाद। भानुसे पूछना कि अब तो वह मुझसे नही डरेगा न? कुमीसे कहना कि वह वर्धा आनेकी बात भूल न जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५४) से, सौजन्य . मनुबहन एस० मशरूवाला

२३४. भूमिका : "बे खुदाई खिदमतगार" की

यह बहुत अच्छी बात है कि दो ईश्वर-भक्तोकी यह संक्षिप्त जीवनी गुजराती पाठकोके सामने पेश की जा रही है। मेरे विचारसे इन दोनो भाइयोका जीवन बहुत पवित्र है। उनमें भी श्री अब्दुल गफ्फार खाँ तो फकीर ही जान पडते है। जेलसे लिखे गये उनके पत्रोमें भी यही ध्वनि दिखाई देती है। दिन-दिन उनकी त्यागवृत्ति बढती जाती है। दिन-दिन उनके हृदयमे ईश्वरकी रट और भी तीव्र होती जाती है। गुजराती पढनेवाला ऐसा कोई घर नही होना चाहिए जहाँ यह पुस्तक न पहुँचे।

यह पुस्तक मूल अंग्रेजीका[1] हूबहू अनुवाद नही है। दोनो भाषाएँ जाननेवाले सहज ही यह देख सकते है कि लेखकने[2] इसे स्वतन्त्र रूपसे लिखनेका प्रयास

१. अंग्रेजी पुस्तकका नाम था द सर्वेंट्स ऑफ गॉड; इस पुस्तकके लिए लिखित गांधीजीकी भूमिकाके लिए देखिए खण्ड ६०, पृ० ८६।

२. महादेव देसाई।

किया है और उसमे वह सफल हुआ है। इसमे कुछ हद तक नवीनता भी आ गई है।

मोहनदास क० गांधी[1]

गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद
१६ फरवरी, १९३६

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४१) से। सी० डब्ल्यू० ६९१६ से भी।

२३५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

अहमदाबाद
१६ फरवरी, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिलते रहे है किन्तु मै तो विवश था। मुझमे लिखनेकी सामर्थ्य तो थी ही किन्तु डाक्टरोने मना कर दिया था और मै उनके कहनेके अनुसार चलता था। अब मैंने इस तरहके कुछ पत्र लिखनेकी अनुमति ले ली है। एजेंटके विवाहका क्या हुआ? इस बारेमे तू कुछ लिखता ही नही। शायद तेरे अगले पत्रसे कोई खबर मिले। यदि इस बारेमे तूने मुझे न लिखा हो और मेरे जानने लायक कुछ हो तो लिखना। 'इंडियन ओपिनियन' के बारेमे भी जो लिखना हो सो लिखना। मेरी तबीयत अब तो अच्छी ही मानी जायेगी। वैसे चिन्ता करने लायक तो कभी कुछ नही था, सिर्फ आरामकी जरूरत थी। हालाँकि मैंने थोडा-थोडा लिखना ही आरम्भ किया है किन्तु फिर भी आराम तो लेना ही है। लक्ष्मीकी बीमारीका समाचार तो किसी-न-किसीने लिखा ही होगा। बा उसीके पास है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मेढके लिए एक पत्र[2] इसके साथ है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४७) से।

१. इसके बाद यह टिप्पणी लिखी हुई है: "स्थान और तारीख दी जाये या नही, इसके बारेमें सोच लेना। कदाचित् न देना ही उचित होगा।" प्रकाशित पुस्तकसे ज्ञात होता है कि स्थान और तारीख छोड़ दी गई थी।

२. उपलब्ध नही है।

२३६. भाषण : हरिजन आश्रम, अहमदाबादमे[1]

[१६ फरवरी, १९३६][2]

हालाँकि पिछले दो महीने या इससे भी कुछ अधिक समयसे मै आराम कर रहा हूँ, फिर भी आश्रमके नियमो और प्रतिज्ञाओ[3] पर मै बराबर विचार करता रहा हूँ। बूढे और जवान, काफी आश्रमवासियोने या तो आश्रमकी प्रतिज्ञाओका परित्याग कर दिया है या वे उनके अनुसार अपने जीवनको बनानेमें असफल रहे है। इसलिए मुझे हैरानी हुई कि उन प्रतिज्ञाओके मूलमें ही तो कही कोई गलती नही है? लेकिन सोच-विचारके बाद मै इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि उनमें ऐसी कोई बात नही है। इसलिए हमने उन्हे ग्रहण करके और हममे से हरएकने अपनी योग्यताके अनुसार उनका पालन करनेकी कोशिश करके कोई बुराई नही की है। और हमने उन्हे ग्रहण किया, इसके लिए अफसोस करनेका तो कोई कारण ही नही। मै तो 'गीता' का भक्त हूँ और कर्मके अटल सिद्धान्तमे मेरा पक्का विश्वास है। छोटीसे-छोटी बात भी बिना किसी कारणके नही होती। मै समझ नही पाता कि जिसने मन, वचन और कर्मसे 'गीता' का अनुसरण करनेकी चेष्टा की है उसे कोई बीमारी क्यो होनी चाहिए? डाक्टरोंका कहना है कि खूनके भारी दबावकी यह गडबड़ सिर्फ मानसिक श्रम और चिन्ताका ही परिणाम है। अगर यह बात सही है, तो सम्भवत मै अनावश्यक रूपसे चिन्ताएँ मोल लेता रहा हूँ, अनावश्यक रूपसे व्याकुल रहा हूँ और गुप्त रूपसे काम, क्रोध, आदि विषयोको मैंने आश्रय दिया है। लेकिन मेरे भारी प्रयत्नके बावजूद किसी बात या घटनासे मेरे मनकी शान्ति यदि भग हो जाये तो उसका मतलब यह नही कि 'गीता' के आदर्शमें कोई दोष है, बल्कि समझना यह चाहिए कि मेरी श्रद्धामे ही कोई न कोई कमी है। 'गीता' का आदर्श तो सदा-सर्वदाके लिए सत्य है, अलबत्ता मेरे उसे समझने और उसका पालन करनेमें गलतियाँ हो सकती है। यही बात उन प्रतिज्ञाओकी है। वे प्रतिज्ञाएँ तो सदा-सर्वदाके लिए सत्य है लेकिन उनका पालन हमने ठीक तरहसे नही किया। मुझे तो उन प्रतिज्ञाओका विचार ही बड़ा आनन्द देता है।

पुराने सत्याग्रह आश्रमके कुछ लोग यहाँ रह रहे है, यह मुझे मालूम है। जरूर किसी उद्देश्यसे वे यहाँ रह रहे होगे, जोकि हरिजनोकी सेवाके सिवा और कुछ

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत। इसकी मूल गुजराती १-३-१९३६ के हरिजनबन्धु में प्रकाशित हुई थी।

२. इस तिथिको गांधीजी हरिजन आश्रम गये थे, देखिए अगला शीर्षक।

३. देखिए खण्ड ३६ पृ० ४१९-३१।

नहीं हो सकता। अगर वे पुरानी प्रतिज्ञाओंका ध्यान रखकर उन पर अमल करनेकी कोशिश करें तो उससे हरिजनोंकी बड़ी सेवा होगी। हरिजनोंकी सेवाके लिए खाली आर्थिक सहायता ही जरूरी नहीं है। आत्म-शुद्धि और सेवाकी भावनासे प्रेरित होकर हम ऐसा करते है सही, लेकिन उसका यही एक तरीका नहीं हो सकता। उदाहरणके लिए, सरकार उनको जितनी आर्थिक सहायता दे सकती है उतनी हम कभी नहीं दे सकते। हमारी सहायताका सार-तत्त्व तो उनको मदद करने और उनके लिए कष्ट-सहनकी हमारी उत्कट इच्छामें है, और ऐसी इच्छा तभी उत्पन्न हो सकती है जब उन प्रतिज्ञाओंकी पूर्तिके द्वारा, जिन पर कि हम इतने सालोंसे जोर देते आ रहे है, पहले हम अपनी आत्म-शुद्धि कर ले। यही उनकी सेवा करने और उन्हे सच्चे अर्थोंमे 'हरिजन' बनानेकी हमारी योग्यता की माप होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-२-१९३६

२३७. पत्र : अमृत कौरको

अहमदाबाद
१७ फरवरी, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र मिला। याद रखना कि जालिम बागीको ज्यादा दिन बर्दाश्त करनेवाला नहीं। बागीको गुलाम बनना ही होगा।

आ सको तो बेशक वर्धा आ जाओ। इसका मतलब है, वर्धासे १५० मील की दूरी पर स्थित सावली गाँव। वहाँ अन्य बैठकोंके अलावा अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघकी भी बैठक होनेवाली है। १०० से कुछ ज्यादा लोग — सभी गांधी सेवा संघके सदस्य — वहाँ एकत्र होंगे। हम चार-पाँच दिन वहाँ रहेंगे। फिर दिल्लीके लिए प्रस्थान करेंगे। कहनेकी जरूरत नहीं कि दिल्लीमें तुम मेरे साथ ठहरोगी। उन्हें बता दूँगा।

कल विद्यापीठसे १½ मील चल कर हरिजन आश्रम तक गया और वहाँ धनीराम और उनके लड़केसे मिला। दोनों अच्छा काम कर रहे है। उन्होंने मुझे अपना आविष्कार दिखाया। उन्हे मै ज्यादा समय नहीं दे सका। उनसे वहीं जम जानेको कहा है। जो कारखाना बारडोलीमें था, अब आश्रममें बैठा दिया गया है। इसलिए क्षमताके उपयोगकी काफी गुंजाइश है। वे काफी प्रसन्न जान पड़ते है। लक्ष्मीदास, जिसे तुम जानती ही हो, उनकी देख-भाल करता है।

कान्ति और कनु मेरी जरूरतोंका खयाल रखते है। मणिबहन उनका मार्ग-दर्शन करती है।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

यह जानकर खुशी हुई कि तुम खेल-तमाशे देखनेके वजाय ग्राम-कार्य करती रही हो।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६२)से, सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६३७१ से भी।

२३८. पत्र : हीरालाल शर्माको

१७ फरवरी, १९३६

चि० शर्म्मा,

तुमारा खयाल तो आया ही करता है। अव थोड़े खत लिखनेकी इजाजत ले ली है, इसलिये आज दो शब्द लिखता हू। लडनमे ठीक अनुभव मिलता लगता है। अव मुझे वताओ क्या २ पढते हो, कहाँ २ क्या खाते हो? कपडे पहनने-ओढ़नेके लिये सकोच मत रखो। शरीर गरम रहना चाहिये। मुझे अव ठीक है। दो दिनमे वर्धा जायेगे। मार्च मास दिल्हीमे जायगा। वादमे वर्धा। मिस एगथा हेरिसनका परिचय कैसे जँचा?

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २२८ पर प्रकाशित अनुकृतिसे।

२३९. पत्र : नारणदास गांधीको

अहमदावाद
१८ फरवरी, १९३६

चि० नारणदास,

आज तो मै इतना ही लिखूंगा। भानुशंकरने थोडी-थोड़ी करके एक हजार रुपयेसे अधिक रकम आश्रममे जमा कराई है। छगनलालके[1] समयमे जमा कराई लगती है। वही-खाते देखकर या छगनलालसे पूछताछ करके इसका विवरण मुझे वर्धा भेज देना। मैंने कुसुमकी वहुत राह देखी। अव तो वह शायद ही आये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. छगनलाल जोशी, जो कुछ समय तक सत्याग्रह आश्रम, साबरमती के मंत्री थे।

२४०. श्रद्धांजलि: दिनशा इदुलजी वाछाको[1]

[१९ फरवरी, १९३६][2]

राष्ट्रने एक महान् देशभक्त खो दिया है। मुझे जिस प्रथम कांग्रेसमें शामिल होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, उस कलकत्ता-कांग्रेसके[3] अध्यक्ष वही थे। उनकी महान् श्रमशीलता और सबके प्रति सतत प्रकट होनेवाली शिष्टताकी स्मृति मेरे मनमें अच्छी तरह बनी हुई है। मुझे भली-भाँति याद है कि सरकारी कार्रवाइयोंकी उनकी आलोचना और वित्तीय प्रश्नोंकी उनकी पकड किस प्रकार सभी कांग्रेसियोंकी प्रशंसाका विषय थी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-२-१९३६

२४१. भाषण: गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबादमें[4]

१९ फरवरी, १९३६

यह मत भूलिए कि उद्देश्य और प्रयोजन[5] आज भी वही हैं जो पहले थे। संयोजकों तथा शिक्षकोंने काफी सोच-विचारकर उनकी रचना की थी। आपको उन सबको अपने सामने रखकर चलना है। अभी-अभी आपने जो प्रार्थना गाई है, उसमें वे सब समाहित हैं। हम सबको असत्यसे सत्य, अन्धकारसे प्रकाशकी ओर बढ़ना है। सत्य तो हमारे सभी लक्ष्यों और प्रतिज्ञाओंके मूलमें ही समाया हुआ है और अगर आप सत्यके इस वृक्षको अहिंसा-जलसे न सींचेंगे तो वह न विकसित होगा, न फल देगा। लेकिन आपके लिए तो सत्य मनमें सच्ची ग्राम्य-प्रवृत्तिका विकास करनेमें ही निहित है। यह विद्यापीठ शहरी लोगोंके बच्चोंको गाँवोंके सच्चे सेवक बनानेके लिए आरम्भ किया गया था। हमने अपना पाठ्यक्रम इसी बातको ध्यानमें रखकर निर्धारित किया। लेकिन आप तो शहरी लोगोंके बच्चे नहीं हैं। आप सब गाँवोंसे आये हैं, आप उन ग्रामवासियोंकी सन्तान हैं जिन्होंने स्वातंत्र्य संग्राममें

१. १८ फरवरीको बम्बईमें इनका निधन हो गया था।

२. गांधीजीनी दिनवारीके आधारपर।

३. दिसम्बर १९०१ में।

४. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत। इसे मूल गुजरातीसे मिला लिया गया है जो "साप्ताहिक पत्र" के अन्तर्गत हरिजन बन्धु १-३-१९३६ में प्रकाशित हुआ था।

५. देखिए खण्ड १८, पृ० ४८४-८९।

कष्ट सहे हैं, त्याग किया है और इसलिए गाँवोंके प्रति आपका कर्त्तव्य और भी बड़ा है।[1] ईश्वरसे यही कामना करता हूँ कि आप जो-कुछ सीखें, सबका उपयोग गाँवोंके लाभके लिए करें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-२-१९३६, तथा बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-२-१९३६

२४२. पत्र : राधाकृष्ण बजाजको

वर्धा जाते हुए
बारडोली
२० फरवरी, १९३६

चि० राधाकृष्ण,

तुम्हारा पत्र मिला। पढ़कर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। अनसूयासे तुम्हें जो सन्तोष हुआ वह सन्तोष अनसूयाको भी अवश्य होगा। ऐसा ही सन्तोष सदा तुम दोनोंके बीच बना रहे। वहाँ तुम अपना स्वास्थ्य अच्छी तरह सुधार सकोगे और अन्य लोगोंके उपचारकी कला भी तुम्हारे हाथ आ जायेगी।

आशा है नर्मदा और ताराका[2] स्वास्थ्य भी सुधर रहा होगा।

मैं आज बारडोली पहुँचा हूँ और रविवारको वर्धा पहुँचनेकी आशा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१२०) से।

२४३. पत्र : अनसूया बजाजको

[२० फरवरी, १९३६][3]

चि० अनसूया,

तेरा पत्र मिला। सरदार मेरे साथ हैं और हम लोग बारडोली होते हुए वर्धा जा रहे हैं। राधाकिशनने तो तुझे और मुझे प्रमाण-पत्र दे दिया। किन्तु तूने अभी तक राधाकिशनको और मुझे प्रमाण-पत्र नहीं दिया। मैं यह मान लेता हूँ कि तूने संकोचवश ऐसा नहीं किया।

१. बॉम्बे क्रॉनिकलमें यहाँ इतना और लिखा हुआ है : "आपको ग्रामोद्योगोंकी मदद करनी चाहिए। . . . आपको कातनेकी आदत डालनी चाहिए जिससे अपने कपड़ोंके लिए जितने सूत की जरूरत है, उतना आप कात सकें।"

२. तारा एन० मशरूवाला, सुशीला गांधीकी छोटी बहन।

३. पत्रकी विषय-वस्तुसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह पत्र उसी तारीखको लिखा गया जिस दिन इससे पहलेका शीर्षक।

तेरे द्वारा भेजी हुई पूनियाँ मिल गई थी। अच्छी है। तूने सेवाधर्मको स्वीकार किया है, इसलिए मुझे यह जानकर आश्चर्य नही होता कि तू खूब सेवा-कार्य करती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१३०)से।

२४४. पत्र: फूलचन्द कस्तूरचन्द शाहको

बारडोली
२० फरवरी, १९३६

भाई फूलचन्द,

मुझे तो सरदारसे पता चला कि तुम बहुत बीमार हो। मुझे अब कुछ पत्र लिखनेकी अनुमति मिल गई है इसलिए यह लिख रहा हूँ। तुम्हे क्या तकलीफ है, यह लिखना या किसीसे लिखवाना। जल्दी अच्छे हो जाओ। अभी तो मुझे तुमसे बहुत-सा काम लेना है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च.]

वर्धाके पते पर लिखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१९८)से। सी० डब्ल्यू० २८५१ से भी; सौजन्य. फूलचन्द क० शाह

२४५. पत्र: तारा ना० मशरूवालाको

२० फरवरी, १९३६

चि० तारा,

हालाँकि मैं तुझे लिखता नही किन्तु तेरे बारेमे सोचता तो रहता ही हूँ। जबतक गौरीशकरभाई हार न माने तबतक तू भी हिम्मत न हारना और श्रद्धा-पूर्वक उपचार चलाती रहना। मुझे लिखना। नर्मदाके बारेमे भी मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२५)से। सी० डब्ल्यू० ५००१ से भी; सौजन्य: कनुभाई ना० मशरूवाला

२४६. पत्र : प्रभावतीको

बारडोली
२१ फरवरी १९३६

चि० प्रभा,

हाथरससे कान्तिके नाम लिखा तेरा पत्र मिलनेके बाद फिर कोई समाचार नहीं मिला. सो क्यों? तेरे जानेके अगले दिन ही मैंने जो पत्र[1] लिखा था, आशा है वह तुझे मिल गया होगा। पत्र लिखनेमें आलस्य मत करना। यह पत्र मैं बारडोलीसे लिख रहा हूँ। तबीयत अच्छी है, और कान्ति तथा कनुने तेरा काम भली-भाँति सँभाल लिया है। रवाना होते समय मेरा वजन ११२ पौंड था और रक्तचाप १५०-९० था।

आशा है तेरी तबीयत अच्छी रहती होगी और तू नियमित रूपसे दूध पीती होगी। तेरे आईने, पट्टू[2], तेरी बत्ती और कैंचीका प्रतिदिन उपयोग करनेके कारण तेरी याद ताजा बनी रहती है। अपनी खादीकी जूतियाँ ले जाना तू भूल गई वे यहाँ सुरक्षित हैं। तुझे वहाँ थोड़ा-बहुत अध्ययन तो करना ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५६) से।

२४७. भेंट : अमेरिकी नीग्रो लोगोंके प्रतिनिधि-मण्डलको[3]

[२१ फरवरी, १९३६][4]

गांधीजी : रंग-सम्बन्धी पूर्वग्रह बढ़ रहा है या घट रहा है?

डॉ० थरमन[5] : कहना कठिन है, क्योंकि कहीं तो स्थितिमें सुधार दिखाई देता है, लेकिन कहीं अब भी अन्धकार ही घिरा हुआ है। दक्षिणी क्षेत्रके बहुतसे गोरे छात्रोंमें अपने पुरखोंकी तुलनामें सुधारकी अधिक प्रवृत्ति दिखाई देती है और विश्व-युद्धके कारण लोगोंके एक भागसे दूसरे भागमें जा बसनेसे निश्चय ही रंग-भेदकी दीवारें काफी हद तक टूटी हैं। लेकिन आर्थिक प्रश्न तो सब जगह

१. देखिए पृ० २००।

२. एक प्रकारका ऊनी कपड़ा।

३. यह महादेव देसाई द्वारा लिखे "विद आवर नीग्रो गेस्ट्स" शीर्षक लेखके रूपमें प्रकाशित हुआ था।

४. चन्दूलाल दलालकी लिखी गांधीजीनी दिनवारी से।

५. तुलनात्मक धर्म तथा दर्शनके प्राध्यापक।

गम्भीर ही बना हुआ है और मध्य पश्चिमके अनेक औद्योगिक केन्द्रोंमें नीग्रो-विरोधी पूर्वग्रह बुरेसे-बुरे रूपमें प्रकट होता रहता है। आम मजदूर-समुदायोंके बीच बहुत तनाव है। यह स्वाभाविक ही है, क्योंकि गोरे लोग तो नीग्रो लोगोंके अस्तित्वको ही अपने लिए खतरनाक मानते हैं।

गा०. क्या नीग्रो और गोरे लोगोंके बीच विवाह-सम्बन्धको कानूनी मान्यता प्राप्त है?

कारल[1]: २५ राज्योंमें तो ऐसे सम्बन्धोंके खिलाफ स्पष्ट कानून बने हुए हैं। खुद मुझे ५०० डालरका एक मुचलका देकर यह वादा करना पड़ा है कि मैं ऐसे किसी सम्बन्धका पंजीयन नहीं करूँगा।

थरमन: वैसे दासताके ३०० वर्षोंके दौरान नीग्रो स्त्रियोंके शरीरके साथ गोरोंके स्वेच्छाचारके कारण जातीय मिश्रण काफी हुआ है। . . . क्या दक्षिणी आफ्रिकी नीग्रो लोगोंने आपके आन्दोलनमें कोई हिस्सा लिया था?

गा० नहीं, मैंने जानबूझ कर उन्हें इसके लिए आमन्त्रित नहीं किया। इससे तो उनका हित खतरेमें पड़ जाता। वे हमारे संघर्षके तरीकेको न समझ पाते और न अहिंसाका प्रयोजन या उपयोगिता ही उनकी समझमें आती।

इस परसे दक्षिण आफ्रिकाके नीग्रो लोगोंके बीच ईसाई-धर्मकी स्थिति पर एक रोचक चर्चा छिड़ गई और गांधीजीने विस्तारसे समझाया कि वहाँ ईसाई-धर्मके मुकाबले इस्लाम क्यों सफल रहा। यह चर्चा डॉ० थरमनको बहुत जँचती हुई जान पड़ी। उन्होंने कहा, "हमसे अकसर कहा जाता है कि अगर अरब न होते तो गुलामी नामकी कोई चीज न होती; मगर मैं यह नहीं मानता।"

गा०. नहीं, इस बातमें तनिक भी सचाई नहीं है। सचाई तो यह है कि जिस क्षण कोई गुलाम इस्लामको स्वीकार कर लेता है उसी क्षण उसे अपने मालिककी बराबरीका दर्जा प्राप्त हो जाता है। इतिहासमें इसके बहुत-से उदाहरण मिलते हैं।

इस पूरी चर्चामें खूब प्रश्न-प्रति-प्रश्न हुए और बहसके दौरान हमारे अतिथियोंको यह जाननेका अवसर मिला कि सभी धर्मोंका समान आदर करनेकी गांधीजीकी मान्यता कोई कोरा सैद्धान्तिक सूत्र नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक वस्तु है। अब चर्चा उस मुख्य विषय पर केन्द्रित हो गई जो इन विशिष्ट लोगोंको गांधीजीके पास खींच लाया था। डॉ० थरमनने पूछा, "आपके दृष्टिकोणसे क्या अहिंसा एक प्रकारकी सीधी कार्रवाई ही है?"

गा०: यह उसका एक नहीं, एकमात्र प्रकार है। हाँ, यहाँ मैं 'सीधी कार्रवाई' की व्याप्ति तकनीकी अर्थतक ही सीमित नहीं रख रहा हूँ। किन्तु, मेरी समझसे तो अगर अहिंसाकी प्रत्यक्ष और सक्रिय अभिव्यक्ति न की जा सकती हो तो वह एक

१. सेलमके पादरी।

निरपेक्ष चीज है। यह विश्वकी सबसे बड़ी और सबसे अधिक सक्रिय शक्ति है। निष्क्रिय रहकर कोई अहिंसाका आचरण नहीं कर सकता है। दरअसल 'नान-वायलेंस' शब्द मुझे 'अहिंसा' शब्दके मूल अर्थको व्यक्त करनेके लिए गढ़ना पड़ा। 'नान' ('अ') उपसर्गके बावजूद 'नान-वायलेंस' ('अहिंसा') कोई नकारात्मक शक्ति नहीं है। ऊपरसे देखें तो जीवन चतुर्दिक संघर्ष और रक्तपातसे घिरा हुआ है, जीवके ध्वंस पर जीवका अस्तित्व कायम है। किन्तु युगों पूर्व इस कुहेलिकाको भेद कर उसकी सत्यके दर्शन करनेवाले किसी द्रष्टाने कहा था: मनुष्य संघर्ष और हिंसाके द्वारा नहीं, बल्कि अहिंसाके द्वारा ही उस ऊँचाईको प्राप्त कर सकता है, जिसे प्राप्त करना उसका परम श्रेय है और उसीके द्वारा वह अपने सह-प्राणियोंके प्रति अपने कर्तव्यका निर्वाह कर सकता है। यह विद्युतसे भी अधिक सक्रिय, ईथरसे भी अधिक प्रबल शक्ति है। इसके केन्द्रमें एक ऐसी शक्ति निहित है जो बिना किसी बाहरी प्रेरणा या सहायताके सक्रिय रहती है। अहिंसाका अर्थ है 'प्रेम', वह प्रेम जिसकी परिभाषा सन्त पॉलने की है। लेकिन सच कहें तो यह उससे भी कुछ बढ़कर ही है, यद्यपि मैं जानता हूँ कि इस शब्दकी सन्त पॉल द्वारा की गई सुन्दर परिभाषा सभी सम्भावित प्रयोजनोंके लिए पर्याप्त है। अहिंसामें केवल मनुष्य ही नहीं, सृष्टि-मात्रका समावेश है। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी भाषामें 'लव' ('प्रेम') शब्दके कुछ अन्य अर्थ भी हैं और इसीलिए मुझे एक नकारात्मक शब्दका प्रयोग करना पड़ा। लेकिन, जैसाकि मैंने आपको बताया है, यह किसी नकारात्मक शक्तिका द्योतक नहीं है बल्कि ऐसी शक्तिका बोध कराती है जो शेष समस्त शक्तियोंके योगसे भी श्रेष्ठ है। यदि कोई एक ही व्यक्ति अपने जीवनमें अहिंसाका आचरण करता है तो इसका अर्थ यह है कि वह एक ऐसी शक्तिका प्रयोग कर रहा है जो दूसरोंकी समस्त शक्तियोंकी तुलनामें श्रेष्ठ है।

प्र० : और क्या किसी भी व्यक्तिके लिए इस शक्तिको प्राप्त करना सम्भव है?

गां० : निस्सन्देह। यदि इसमें किसीको भी छोड़कर चलनेकी योजना होती तो मैं इसे अस्वीकार कर देता।

प्र० : और परिग्रहके लिए इसमें अवकाश नहीं है?

गां० : हाँ, इसका आचरण करनेवाले व्यक्तिके पास चूँकि कुछ नहीं होता इसलिए सबकुछ उसीका होता है।

प्र० : क्या केवल एक व्यक्तिके लिए [प्रेम और अहिंसाके] गुणके विरुद्ध होनेवाले सतत प्रहारोंका प्रतिरोध करना सम्भव है?

गां० : हाँ, सम्भव है। लेकिन यहाँ शायद आपका प्रश्न, आप जितना चाहते हैं, उससे अधिक व्यापक हो गया है। आपका मतलब शायद यह है कि—उदाहरणके तौर पर कहें तो—किसी एक भारतीयके लिए क्या यह सम्भव है कि वह ३० करोड़ भारतीयोंके शोषणको समाप्त कर दे? या कि आपका मतलब किसी एक व्यक्ति पर सारी दुनिया द्वारा किये गये प्रहारसे है?

डॉ० थरमन : हाँ, यह मेरे प्रश्नका आधा हिस्सा तो है। मैं यह जानना चाहता था कि क्या कोई एक व्यक्ति सारी दुनियाकी हिंसाका सफलतापूर्वक सामना कर सकता है?

गा० ' यदि नही कर सकता है तो समझ लीजिए कि उसमे सच्ची अहिंसा नही है। मान लीजिए कि मै जीवनमे ऐसा कोई भी दृष्टान्त न दे सकूँ कि किसी व्यक्तिने सचमुच अपने प्रतिपक्षीका हृदय-परिवर्तन कर दिया है तो उस हालतमे मै यही कहूँगा कि इसका कारण यह है कि अबतक कोई भी अपने जीवनमे अहिंसाका पूर्ण आचरण नही कर पाया है।

प्र० : तो यह मान ले कि यह सभी शक्तियोंसे श्रेष्ठ है?

गा० हाँ, जीवनमे यही एक सच्ची शक्ति है।

डॉ० थरमन : क्षमा कीजिएगा, मै आपकी बात समझ नही सका। लेकिन क्या मै यह पूछ सकता हूँ कि हम व्यक्तियों या समुदायोंको इस कठिन कलाकी शिक्षा कैसे दें?

गा० इसका कोई बना-बनाया रास्ता तो नही है। जो रास्ता है वह यही कि हम इस धर्मका आचरण करके दिखाये, वह लोगोके लिए इस विषयकी सजीव शिक्षा होगी। हाँ, इसे अपने जीवनमे आचरित करनेके लिए बहुत अधिक अध्ययन-मनन, कठिन धैर्य और लगन तथा सम्पूर्ण आत्म-शुद्धि तो आवश्यक है ही। यदि भौतिक विज्ञानो पर अधिकार प्राप्त करनेके लिए हमे पूरा जीवन लगा देना पड़ता है तो फिर मनुष्यको ज्ञात इस महानतम आध्यात्मिक शक्तिका स्वामी बननेके लिए ऐसे कितने जीवन न लगाने पड सकते है? लेकिन यदि इसमे कई जीवन लगाने पडे तो भी चिन्ताकी क्या बात है? कारण, यदि जीवनमे यही एक स्थायी वस्तु है, यही एकमात्र चीज है जिसका कोई महत्त्व है, तो इस पर अधिकार पानेके लिए हम जितना प्रयत्न करेंगे सबका सदुपयोग हुआ ही माना जायेगा। [कहा है न कि] मनुष्य यदि स्वर्गका साम्राज्य प्राप्त करनेका प्रयत्न करे, तो शेष सब सहज ही प्राप्त हो जायेगा। यह स्वर्गका साम्राज्य अहिंसा है।

श्रीमती थरमन : मान लीजिए, मेरी आँखोंके सामने मेरे भाईकी हत्या की जा रही हो तो उस समय मेरा कर्त्तव्य क्या होगा?

गा० आत्म-बलिदान नामकी भी तो एक चीज है। मान लीजिए मै एक नीग्रो होऊँ, और कोई गोरा मेरी बहनके साथ बलात्कार करे या एक पूरा समुदाय उसकी हत्या करनेका प्रयत्न करे तो उस हालतमे मेरा क्या कर्त्तव्य होगा? मै खुदसे यह प्रश्न पूछता हूँ। उत्तर मिलता है मुझे इन लोगोंके अहितकी कामना नही करनी चाहिए, लेकिन साथ ही इनके साथ सहयोग भी नही करना चाहिए। हो सकता है कि सामान्यत मै अपनी रोटीके लिए उन अत्याचारियो पर ही निर्भर रहता होऊँ। मै उनके साथ सहयोग करनेसे इनकार करता हूँ, उनसे प्राप्त भोजन तकका स्पर्श नही करता और मेरे जो नीग्रो भाई इस अन्यायको सहते है उनके साथ भी मै सहयोग

नही करता। मेरा मतलव है, यही आत्म-बलिदान है। अपने जीवनमे मैने अकसर इस योजनाका सहारा लिया है। कहनेकी जरूरत नही कि विना किसी भावना और श्रद्धाके सिर्फ भूखो मर जानेका मतलव कुछ नही होगा। जव प्रतिक्षण जीवन-शक्ति छीजती जा रही हो तब भी मेरी श्रद्धा मन्द नही पडनी चाहिए। लेकिन मै तो अहिंसाका आचरण करनेवाले व्यक्तिका एक अति तुच्छ उदाहरण हूँ, और इसलिए हो सकता है कि मेरे उत्तरसे आपका समाधान न हुआ हो। लेकिन मै प्रयत्न पूरा कर रहा हूँ, और यदि मै इस जीवनमे पूरी तरह सफल नही होता तो भी मेरी श्रद्धामे कोई कमी नही आयेगी।

"हम आपको अमेरिका बुलाना चाहते है", अतिथियोंने कहा।

श्रीमती थरमन: हम आपको अमेरिका बुलाना चाहते है — लेकिन गोरोंके लिए नहीं, बल्कि नीग्रो लोगोंके लिए। हमारे सामने अनेक समस्याएँ है, जो चीख-चीखकर समाधानकी माँग कर रही है। हमें आपकी सख्त जरूरत है।

गा० मेरी भी उत्कट इच्छा है कि मै वहाँ आऊँ, लेकिन मै जो-कुछ कहता रहा हूँ वह सब जबतक मै यहाँ स्पष्ट रूपसे करके न दिखा दूँ तबतक मै आपको कुछ दे नही पाऊँगा। पहले मै यहाँ अपने सन्देशको कार्यान्वित करा लूँ तभी उसे लेकर आपके पास आऊँगा। मै यह नही कहता कि मै हार गया हूँ, लेकिन अभी मुझे अपने-आपको और भी पूर्ण बनाना है। आप आश्वस्त रहे कि जिस क्षण मेरी अन्तरात्माका आदेश होगा, मै वहाँ आनेमे तनिक भी सकोच नही करूँगा।

डॉ० थरमन: अमेरिकामें हमारे जीवनकी जो अलग ढंगकी पृष्ठभूमि है वह, ईसाई-धर्मकी हमने जैसी व्याख्या की है, उसीका फल है। नीग्रो लोगोंके सैकड़ों धार्मिक गीतों को पढ़ने पर ऐसी बहुत-सी विलक्षण बातें मनके सामने आती हैं जो आज आपकी कही बातोंकी याद दिलाती हैं।

गा० : यदि यह सच साबित होता है तो हो सकता है कि विश्वको अहिंसाका विशुद्ध सन्देश नीग्रो लोगोके द्वारा ही प्राप्त हो।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-३-१९३६

१. गांधीजीसे विदा लेनेसे पूर्व श्रीमती थरमनने नीग्रो लोगोंके दो प्रसिद्ध भजन गाकर सुनाये।

२४८. भाषण : ग्राम-कार्यकर्त्ताओंकी सभामें[1]

बारडोली
२२ फरवरी, १९३६

पहला प्रश्न ग्रामसेवकोंके कर्त्तव्योंके बारेमें था। गांधीजीने कहा कि ग्रामसेवकका एकमात्र कर्त्तव्य यह है कि वह गाँववालोंकी सेवा करे; और वह उनकी सर्वोत्तम सेवा तभी कर सकता है, जब वह ग्यारह व्रतोंको प्रकाशस्तम्भकी तरह सदा अपने सामने रखे। ये बातें विनोबाके बनाये हुए दो श्लोकोंमें[2] दी हुई हैं, जिन्हें देशके अधिकांश आश्रमोंमें प्रार्थनाके समय रोज गाया जाता है:

अर्थात् अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य, असंग्रह (किसी चीज पर अपना कब्जा करके न बैठ जाना), शारीरिक श्रम, अस्वाद, निर्भयता, सब धर्मोंके प्रति एक-सा आदर-भाव, स्वदेशी, छूतछातका भाव न रखते हुए सबके प्रति भ्रातृ-भाव — इन ग्यारह व्रतोंका विनम्रताके साथ पालन करना चाहिए।

दूसरा प्रश्न ग्रामसेवकोंकी जीविकाके बारेमें था। उन्हें अपनी जीविका कैसे जुटानी चाहिए? क्या वे किसी संस्थासे वेतन लें या उसके लिए कोई काम करें, अथवा गाँववालोंपर आश्रित रहें? गांधीजीने कहा कि आदर्श तरीका तो गाँववालोंपर आश्रित रहना ही है। इसमें शर्मकी कोई बात नहीं; यह तो विनम्रता है। इसमें कार्यकर्त्ताके अपने ऊपर बहुत खर्च करनेकी भी गुंजाइश नहीं है, क्योंकि मैं समझता हूँ कि कहीं भी गाँववाले उसके खर्चीलेपनको न तो प्रोत्साहन देंगे और न बर्दाश्त ही करेंगे। इस दशामें कार्यकर्त्ताका काम इतना ही होगा कि कामके समय वह गाँववालोंके लिए ही काम करे और अपने लिए जितने अनाज और साग-सब्जीकी जरूरत हो उसे गाँववालोंसे जुटा ले। (डाकके तथा अन्य) छोटे-मोटे खर्चकी अगर उसे जरूरत हो — हालाँकि मेरे खयालमें तो ये खर्च ऐसे नहीं है कि उनके बिना ग्रामसेवकोंका काम ही न चल सके — तो उनके लिए भी वह उनसे थोड़ी रकम ले सकता है। अगर

१. इसे महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से लिया गया है। इसे मूल गुजराती से मिला लिया गया है जो हरिजनबन्धु, १-३-१९३६ में प्रकाशित हुआ था। ग्राम-कार्यकर्त्ताओंने गांधीजीको प्रश्नोंकी एक सूची दी थी और उनसे उत्तर देनेका अनुरोध किया था।

२. अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य असंग्रह
शरीरश्रम अस्वाद सर्वत्र भय-वर्जन
सर्वधर्मी समानत्व स्वदेशी स्पर्श-भावना
ही एकादश सेवावीं नम्रत्वे व्रत-निश्चये।

गाँववालोंके कहने पर ही वह गाँवमें गया होगा, तो गाँववाले खुशीसे उसका खर्च चलायेंगे। हाँ, ऐसा भी हो सकता है कि गाँववालोंको उसके विचार न पटें और वे उससे सहयोग करना बन्द कर दें, जैसाकि १९१५ में जब मैंने अस्पृश्योंको सत्याग्रह-आश्रममें प्रविष्ट किया तब मेरे साथ हुआ था। उस स्थितिमें ग्रामसेवकको अपनी जीविकाके लिए खुद कोई काम करना चाहिए; तब किसी संस्था पर आश्रित रहना व्यर्थ होगा।

तीसरा प्रश्न शारीरिक श्रमके बारेमें था। गाँवमें काम करनेवालेको जहाँतक हो सके ज्यादासे-ज्यादा शारीरिक श्रम करके गाँववालोंको अपनी काहिली दूर करनेकी शिक्षा देनी चाहिए। वैसे तो वह हर तरहकी मेहनतके काम कर सकता है, लेकिन मैला उठानेके कामको उसे तरजीह देनी चाहिए। यह निश्चय ही उत्पादक श्रम है। कुछ कार्यकर्त्ताओंने कमसे-कम आधा घंटा पूर्णतः सेवामें और उत्पादक-श्रममें ही लगाने पर जोर दिया है; वह मुझे पसन्द है। और मैला उठानेका काम निश्चय ही इस तरहका है। यही हाल चक्की पिसाईका है, क्योंकि बचत करना भी तो एक तरहसे कमाई ही है।

चौथा प्रश्न डायरी रखनेके बारेमें था। गांधीजीने कहा कि मेरा यह निश्चित मत है कि ग्रामसेवकको अपने समयके एक-एक मिनटका हिसाब देनेके लिए तैयार रहना चाहिए और हर समयके कार्यको स्पष्ट रूपसे अपनी डायरीमें अंकित करना चाहिए। सच्ची डायरी तो डायरी लिखनेवालेके मन और आत्माकी एक झाँकी होती है। लेकिन यह जरूर है कि बहुतोंको अपनी मानसिक हलचलोंका सच्चा विवरण अंकित करना बहुत मुश्किल मालूम पड़ेगा। उस हालतमें वे अपनी शारीरिक हलचलोंको ही उसमें अंकित करें। लेकिन यह लापरवाहीके साथ नहीं होना चाहिए। खाली इस तरह लिख देनेसे काम नहीं चलेगा कि "रसोईमें काम किया"। इसके साथ निश्चित रूपसे यह भी लिखना होगा कि कबसे कब तक क्या-क्या और किस तरह काम किया।

पाँचवाँ प्रश्न दुबला लोगोंके बीच काम करनेके सम्बन्धमें था, जो गुजरातके कुछ हिस्सोंमें लगभग अर्धदासोंकी ही तरह काम करते हैं। गांधीजीने कहा, दुबला लोगोंकी सेवाका अर्थ यह है कि हम उनके दुख-दर्दोंमें भागीदार बनें और उनके मालिकोंसे मिल-जुलकर इस बातका प्रयत्न करें कि वे उनके साथ न्याय और दयाका व्यवहार करें। अन्तमें गांधीजीने कहा:

> ग्राम-सेवकको राजनीतिसे अलग रहना चाहिए। वह कांग्रेसका सदस्य तो बन सकता है, लेकिन चुनावकी हलचलमें उसे भाग नहीं लेना चाहिए, क्योंकि वह तो अपने कामकी दिशा निश्चित कर चुका है। ग्रामोद्योग संघ और चरखा-संघ दोनों कांग्रेसके बनाये हुए हैं, मगर अपना काम वे स्वतन्त्र रूपसे करते हैं। यही कारण है कि वे और उनके सदस्य कांग्रेसकी राजनीतिक हलचलोंसे अलग रहते हैं। यही अहिंसक मार्ग है।

गाँवकी दलबन्दियो, वहाँके झगडो-टंटोमें भी उसे नही पडना चाहिए। उसे तो वहाँ इस निश्चयके साथ जाकर जमना चाहिए कि जिन बहुत-सी बातोके बिना शहरमे उसका काम नही चलता था, उनके बिना उसे वहाँ रहना होगा। अगर मैं किसी गाँवमे बैठ जाऊँ तो मुझे इस बातका निश्चय करना पडेगा कि कौन-कौन-सी चीजे ऐसी है जो चाहे जितनी निर्दोष हो फिर भी मुझे गाँवमे नही ले जानी चाहिए। देखना यह होगा कि वे चीजें साधारण ग्रामवासियोके जीवनसे मेल खाती है या नही, और उनसे वहाँ बजाय भलाईके कोई बुराई तो नही फैलेगी। ग्रामसेवक बहुत शुद्ध और ऊँचे दर्जेका होना चाहिए, जो खुद तो किसी प्रलोभनमे फँसे ही नही, साथमें गाँववालोको भी प्रलोभनोका शिकार न होने दे। यह तो निश्चित है कि एक शुद्धात्मा अकेला हो तो भी सारे गाँवको उसी तरह बचा सकता है, जिस तरह एक विभीषणने लकाको बचाया था। सोडोम और गोमोरामे जबतक एक भी शुद्धात्मा मौजूद था तबतक वे नष्ट नही हुए थे।[1] इसलिए बहुत पहले ही मै यह कह चुका हूँ कि अपनी रक्षाके लिए हिन्दुस्तान सत्यको छोडे, इसके बजाय खुद वही मिट जाये तो कोई बुराई न होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-२-१९३६

२४९. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२४ फरवरी, १९३६

प्रिय बागी,

स्टेशन पर कुमारप्पाने तुम्हारा लम्बा-सा पत्र दिया। पाकर खुशी हुई। फ्लिटके बारेमे उसमे जो नुस्खा दिया है, उसे देखकर और भी खुशी हुई। मुझे उसकी जरूरत थी। वह तुम्हारे नामके बिना यथा समय 'हरिजन' मे प्रकाशित किया जायेगा। पार्सल भी समय पर पहुँच ही जायेगा। तुम्हे आधा गज काट देनेकी इजाजत देकर मैंने कैसी समझदारीका परिचय दिया! जब चीजे आयेगी तो बागीकी तथाकथित कलाको यह कला-विहीन जालिम परखेगा। लेकिन बागी यह पहलेसे ही जान ले कि कभी-कभी प्रकृति द्वारा खीची हुई मोटी-पतली और टेढी-मेढी रेखाओको न छेडनेमे ही कला निहित रहती है। जरा सोचो तो कि अगर धरतीकी सतहको ठोक-पीट कर बिलकुल चौरस कर दिया जाये तो क्या हो? तब शायद हमारा अस्तित्व ही न रह जाये। इसलिए तुम समझ सकती हो कि अगर मैं तुम्हारी कलाको श्रेष्ठ करार दूं

१. **जेनेसिस**, १३-४ तथा १८-९।

तो वह तुम्हारे ताजमें एक और कलगी जुड जानेके समान होगा। मगर तव उस कलगीको धारण करनेके लिए तुम्हे ताज पहननेकी जहमत भी उठानी ही पडेगी।

इस सवसे तुम देख सकती हो कि इस यात्राके वावजूद मै कितना तरोताजा हूँ।

यह जानकर दु ख हुआ कि तुम सावली नही आ सकती।

दिल्लीमे मिलनेपर हम सोचेगे कि तुम कौन-सी सेवा करोगी या कर सकती हो। तुम्हे तो इतने सारे लोगोसे मिलना-जुलना होगा कि तुम्हारे पास समय ही नही रह पायेगा।

तुम सवको प्यार।

जालिम

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६३) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६३७२ से भी।

२५०. पत्र : प्रभावतीको

२४ फरवरी, १९३६

चि० प्रभा,

तेरे दो पत्र एक साथ मिले। तूने मुझे जरा चिन्तामे डाल दिया था। तुझे वहाँ पहुँचते ही पत्र लिखना चाहिए था न? अव मै निश्चिन्त हो गया हूँ। यदि जयप्रकाशके पास तेरे लिए कोई काम ही न हो अर्थात् किसी तरहकी सेवाका काम न हो तो तू अवश्य अपनी माताके पास चली जाना। यदि तुझे अपने अन्य सम्वन्धियोसे मिलना हो तो उनसे भी मिल लेना। किन्तु यदि जयप्रकाश तेरी सेवा स्वीकार करे, तू खिलाये और वह खाये, तो तुझे उसके साथ ही रहना चाहिए। यदि उसे तेरी सेवाकी विलकुल जरूरत न हो और तू वहाँसे खुशीसे छुटकारा पा सके तो वुजुर्गोसे मिलकर मेरे पास आ जाना। किन्तु पहले यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि तू विशेष रूपसे मेरी सेवाके लिए नही वल्कि मै जो काम तुझे सौंपूं वह काम करनेके लिए आयेगी। यह स्पष्ट है न?

तेरी भाषा अच्छी मानी जायेगी। तूने गुजराती पर अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया है।

अपनी तवीयत मत विगाडना। जयप्रकाशके पीछे पडकर उसकी वीमारीका इलाज करवाना।

हम लोग कल सकुशल वर्धा पहुँच गये। कन्या-आश्रममे ठहरे है। कान्ति और कनु ही मेरी सेवा करते है। वा अभी वम्वईमें ही है। मीरावहन मेरे पास ही वैठी है; किन्तु वह सेवाकार्यमें भाग नही लेती।

शेप तो कान्ति लिखेगा।

मुझे पत्र लिखनेमे आलस मत करना। किसी तरहकी चिन्ता मत करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५७) से।

२५१. पत्र : डॉ० खान साहबको

वर्धा
२५ फरवरी, १९३६

प्रिय खान साहब,

चूंकि आप सोफियाकी शादीमें शामिल नही होगे, मै आपका कोई पत्र न पानेकी शिकायत नही कर सकता। किन्तु अ० भा० ग्रा० सघ बहुत अपेक्षा रखनेवाली एक सस्था है जिसका कडा सविधान है। आप हमेशा अनुपस्थित रहकर भी उसके सदस्य और न्यासी बने रहे यह सम्भव नही। आपकी कठिनाईकी तो मुझे पूर्वकल्पना है। यदि आप उससे पार नही पा सकते तो आपको आप दोनोकी ओरसे त्यागपत्र भेज देना चाहिए और हम लोग बन्दी भाईके[1] जेलसे बाहर आने तक इन्तजार करे।

आप सबको प्यार।

आपका,
बापू

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य . प्यारेलाल

२५२. नारायणलालके नाम तारका मसविदा[2]

[२७ फरवरी, १९३६ या उसके पश्चात्][3]

नारायणलाल,

सरदार वल्लभभाईने बडौदाके मामले पर मुझसे चर्चा की। वह एक स्वतन्त्र जाँच कमेटी नियुक्त करना चाहते है। अस्वस्थता तथा अन्य कारणोसे पहले तो मै अनिच्छुक था, फिर भी अब उठाये गये मुद्दो

१. अब्दुल गफ्फार खाँ, जो ७ दिसम्बर, १९३४को गिरफ्तार हुए थे और २ अगस्त, १९३६ को रिहा हुए।

२. गांधीजीने जमनालाल बजाजके लिए इस तारका मसविदा तैयार किया था।

३. यह तथा अगला शीर्षक एक ही पन्ने पर लिखे हुए है। जमनालाल बजाजकी डायरी **बापू स्मरण** में लिखा है कि उन्होंने २६ तथा २७ फरवरीको बडौदाके मामले पर गांधीजीसे चर्चा की थी।

दिल्ली पहुँचनेकी तारीख अबतक तय नही हो पाई है। लेकिन अब भी उम्मीद कर रहा हूँ कि ८ मार्चको पहुँच जाऊँगा।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६४)से, सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६३७३ से भी।

२५५. पत्र : मीराबहनको

२८ फरवरी, १९३६

चि० मीरा,

कलका रक्तचाप तो एक धोखा था — बस, लहसुनका असर था। लहसुनका क्या असर होता है, यह देखनेके लिए रक्तचापका माप भोजनके तुरन्त बाद लिया गया था। मुझे सेगाँव जानेसे रोका गया होता तो मैं बहुत खिन्न हो जाता। जमनालाल बजाजने तो कमाल कर दिया। अपनी भावना उन्होंने दबा ली और मुझे आने दिया। लहसुनका तात्कालिक प्रभाव खत्म होते ही रक्तचापका उतरना निश्चित था।

यह जानकर खुशी हुई कि तुम घबराई नही। लोगोके बीच जाकर और उनसे बातचीत करके मुझे खुशी तो होगी ही। कमलाकी तबीयत फिर बिगड़ गई थी और जवाहरलालको अब ग्यारह दिन और देर हो जायेगी। इस हालतमें हो सकता है कि मै सीधे दिल्ली चला जाऊँ। तुम्हे सूचित कर दूँगा।

बिलकुल ठीक-ठाक हूँ और सावली जानेकी तैयारी कर रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१४) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७८० से भी।

२५६. पत्र : अमतुस्सलामको

२८ फरवरी, १९३६

चि० अमतुलसलाम,

तूने मुझे लिखनेको मना कर दिया था, इसलिए मैंने नही लिखा। मैंने अभी दूसरोसे लिखवाना शुरू नही किया है। आज हम सावली जा रहे है। मै तो वहाँ [दिल्ली] ८ तारीखको पहुँचनेकी आशा रखता हूँ। इस सम्बन्धमे सावलीमे और अधिक मालूम हो सकेगा। तेरा स्वास्थ्य और भी अच्छा देखनेकी आशा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३१) से।

२५७. पत्र : फूलचन्द कस्तूरचन्द शाहको

२८ फरवरी, १९३६

भाई फूलचन्द,

तुम्हारा पत्र पाकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। तुम अहमदाबाद जाकर तलवलकर[1] से इलाज क्यो नही कराते? कुछ बीमारियोमे उनके इलाजसे अच्छा लाभ पहुँचता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१९९) से। सी० डब्ल्यू० २८५२ से भी, सौजन्य फूलचन्द क० शाह

१. डॉ० तलवलकर, अहमदाबादके क्षयरोग-विशेषज्ञ।

२५८. तार : विजयलक्ष्मी पण्डितको[1]

२८ फरवरी, १९३६

हम सबकी समुचित सहानुभूति तुम सबके साथ है। इसे बहादुरीके साथ झेलना है। सप्रेम।

बापू

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-२-१९३६

२५९. श्रद्धांजलि : कमला नेहरूको[2]

२८ फरवरी, १९३६

कमलाका निधन एक महान राष्ट्रीय क्षति है। मुझे उनको वर्षों तक निकटसे जाननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनसे अधिक सत्यनिष्ठ, बहादुर और ईश्वरसे डरनेवाली महिला मेरी दृष्टिमें नहीं आई। उनका जीवन हम सबके लिए एक अनुकरणीय आदर्श बने।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-२-१९३६

१. कमला नेहरूके निधनपर।
२. यह सन्देश गांधीजी ग्रैंड ट्रंक एक्सप्रेससे सावलीको रवाना होते समय महादेव देसाईको सौंप गये थे।

२६०. प्रभु कृपाके बिना कुछ नहीं

डॉक्टर मित्रो और स्वेच्छासे मेरे जेलर बननेवाले सरदार वल्लभभाई तथा जमनालालजीकी कृपासे मै 'हरिजन'के पाठकोसे अपनी बातचीत फिर शुरू करनेके काबिल हो गया हूँ, हालाँकि अभी यह काम मुझे एक सीमाके भीतर और आज-माइशके तौरपर ही करना है। इन लोगोने मेरी स्वतन्त्रता पर यह बन्धन लगा दिया है और मैने उसे स्वीकार भी कर लिया है कि फिलहाल मै 'हरिजन'मे उससे अधिक किसी हालतमे नही लिखूँगा जितना मुझे बहुत जरूरी मालूम पडे और वह भी इतना ही जिसके लिखनेमे प्रति सप्ताह कुछ घटेसे अधिक समय न लगे। सिवा उनके, जिनके साथ मै लिखा-पढी शुरू कर चुका हूँ, किसी भी औरकी निजी समस्याओ या घरेलू कठिनाइयोके बारेमे मै निजी-पत्र-व्यवहार नही करूँगा। न मै किसी सार्वजनिक कार्यक्रमको स्वीकार करूँगा, न किसी सार्वजनिक सभामे भाषण दूँगा और न उसमे उपस्थित ही होऊँगा। सोने, मनोरजन, श्रम और आहारके बारेमे भी निश्चित निर्देश कर दिये गये है, लेकिन उनके वर्णनकी कोई जरूरत नही, क्योकि उनसे पाठकोका कोई सम्बन्ध नही है। मुझे आशा है कि इन हिदायतोका पालन करनेमे 'हरिजन'के पाठक तथा पत्र-लेखक मेरे और महादेवभाईके साथ, जिन पर सारे पत्र-व्यवहारको निबटानेकी पहली जिम्मेदारी है, पूरा-पूरा सहयोग करेगे।

मै बीमार कैसे पडा और उसके इलाजके लिए क्या-क्या किया गया, इसकी कुछ जानकारी पाठकोके लिए अवश्य ही रुचिकर होगी। जहाँतक मैने अपने डॉक्टर मित्रोकी बात समझी है, मेरे शरीरकी बहुत सावधानी और सतर्कताके साथ जाँच करने पर भी उन्हे मुझमे शारीरिक क्रियागत कोई खराबी नही मिली। उनकी रायमे सम्भवत शक्कर और स्टार्चके रूपमें प्रोटीनो और कार्बोहाइड्रेटोकी कमी और बहुत दिनोसे अपने रोजमर्राके सार्वजनिक काम-काजके अलावा लगातार लम्बे-लम्बे समय तक परेशान कर देनेवाली विविध प्रकारकी निजी समस्याओमे उलझे रहनेसे यह बीमारी हुई थी। जहाँ तक मुझे याद पडता है, पिछले बारह महीने या इससे भी अधिक समयसे मै इस बातको बराबर कहता आ रहा था कि लगातार बढ़ते जानेवाले कामके परिमाणमें अगर कमी न हुई तो मेरा बीमार पड जाना निश्चित है। इसलिए जब बीमारी आई, तो मेरे लिए वह नई बात नही थी। और बहुत सम्भव है कि दुनियामे इसका इतना ढिंढोरा न पिटता, अगर एक मित्रको जरूरतसे ज्यादा चिन्ता न सताती, जिन्होने मेरे स्वास्थ्यको गिरते देखकर जमनालालजीको सनसनीखेज पत्र भेज दिया था। बस, जमनालालजीने खबर पाते ही वर्धाके सभी होशियार डॉक्टरोको बुला लिया और विशेष सहायताके लिए नागपुर और बम्बई भी खबर भेज दी।

जिस दिन मै बीमार पड़ा, उस दिन सवेरे ही मुझे उसकी चेतावनी मिल गई थी। जैसे ही मै सोकर उठा, मुझे अपनी गर्दनके पास एक खास तरहका दर्द मालूम पडा, लेकिन मैने उसपर ज्यादा ध्यान नही दिया और किसीसे कुछ कहा नही। मै दिन भर अपना काम करता रहा। और अन्तिम प्रहार था मेरा वह बेहद थका देनेवाला गम्भीर वार्त्तालाप जो रोजकी तरह शामको टहलनेके वक्त एक मित्रके साथ मुझे करना पड़ा। मेरे स्नायु इससे पहले पखवाडेमे ऐसी समस्याओ पर सोच-विचार करते-करते पहले ही काफी ढीले पड चुके थे जो मेरे लिए स्वराज्यके सर्वप्रधान प्रश्न-जितना ही महत्त्व रखती थी।

मेरी बीमारीको अगर इतना तूल न दिया गया होता तो भी जो निश्चित चेतावनी प्रकृति मुझे दे रही थी, उसपर मुझे ध्यान देना पड़ता और मैने अपनेको थोडा आराम देकर उस सकटको हल करनेकी कोशिश की होती। लेकिन जो-कुछ हो गया उसपर नजर डालनेसे मुझे ऐसा मालूम पड़ता है कि जो-कुछ हुआ वह ठीक ही हुआ। डॉक्टर मित्रोने जो असाधारण सावधानी रखनेकी सलाह दी और उन्हीके समान उक्त दोनो जेलरोने जैसी असाधारण देखभाल रखी, उसके कारण मुझे मजबूरन आराम करना पड़ा, जो वैसे मै कभी न करता, और उससे मुझे आत्म-निरीक्षणका काफी समय मिल गया। इससे मुझे स्वास्थ्य-लाभ ही नही हुआ, बल्कि आत्म-निरीक्षणसे मुझे यह भी मालूम हुआ कि 'गीता' का जो अर्थ मैने समझा है उसका मेरा पालन बहुत त्रुटिपूर्ण है। मुझे पता लगा कि जो अनेकानेक समस्याएँ सामने उपस्थित है उनपर मैने पर्याप्त अनासक्त भावसे विचार नही किया है। स्पष्ट है कि उनमें से अनेक समस्याओके साथ मैने अपने हृदयमे लगाव महसूस किया है और इस प्रकार अपने भावना-पक्षको आन्दोलित होने देकर अपने स्नायु-मण्डलमे तनाव पैदा होने दिया है। दूसरे शब्दोमे कहूँ तो 'गीता'-भक्तको उनके प्रति जैसा अनासक्त रहना चाहिए वैसा मेरा मन या शरीर नही रहा है। सचमुच मेरा यह विश्वास है कि जो व्यक्ति प्रकृति-माताके आदेशका पूर्णत अनुसरण करता है उसके मनमे बुढापेका भाव कभी आना ही नही चाहिए। ऐसा व्यक्ति तो अपने मनमे अपनेको सदा तरोताजा और नौजवान महसूस करेगा और उसकी देह यथासमय जीर्ण होनेपर उससे इसी प्रकार पृथक् हो जायेगी जैसे किसी स्वस्थ वृक्षके पत्ते झर जाते है। भीष्म पितामहने स्वय मृत्युशय्या पर पड़े हुए भी युधिष्ठिरको जो दिव्य उपदेश दिया, मेरी समझमें, उसका यही अर्थ है। डॉक्टर लोग मुझे यह चेतावनी देते कभी नही थकते थे कि हमारे आसपास जो घटनाएँ हो रही है उनसे मुझे हरगिज उत्तेजित नही होना चाहिए। कोई दु खद या उत्तेजक घटना अथवा समाचार मेरे सामने न आये, इसकी भी खास सावधानी बरती गई। उनके सुझाये एहतियातोको देखते हुए मुझे अपने-आपको 'गीता'का जितना कच्चा अनुयायी मानना पड़ जाता है उतना कच्चा तो मै अपनेको नही समझता, फिर भी इसमे सन्देह नही कि उनकी हिदायतोमे सार अवश्य था, क्योकि मगनवाडीसे महिलाश्रम जानेकी जमनालालजीकी शर्त मैने कितनी अनिच्छासे कबूल की थी, यह मुझे मालूम है। जो भी हो, उन्हे यह विश्वास नही

रहा कि अनासक्त-भावसे मैं काम कर सकता हूँ। मेरा बीमार पड़ जाना उनके लिए इस बातका बड़ा प्रमाण था कि अनासक्तिकी मेरी जो ख्याति है, वह थोथी है। और इसमें मुझे अपना दोष स्वीकार करना ही पड़ेगा।

लेकिन इससे भी अधिक बुरा तो अभी बाकी था। मैं १८९९ से जान-बूझकर और निश्चयके साथ, बराबर ब्रह्मचर्यका पालन करनेकी कोशिश करता रहा हूँ। मेरी व्याख्याके अनुसार, इसमें न केवल शरीरकी, बल्कि मन और वचनकी शुद्धता भी शामिल है। और सिवा एक अपवाद के, जिसे कि मानसिक विचलन कहना चाहिए, अपने ३६ वर्षसे अधिक समयके सतत तथा जागरूक प्रयत्नके दौरान मुझे याद नही पड़ता कि कभी भी मेरे मनमे ऐसी बेचैनी पैदा हुई हो जैसीकि इस बीमारीके समय महसूस हुई। यहाँतक कि मैं अपनेसे तग आ गया। लेकिन जैसे ही मेरे मनमे ऐसी भावना उठी, मैंने अपने परिचारको और डॉक्टरोको उससे अवगत करा दिया। लेकिन वे मेरी कोई मदद नही कर सके। मैंने उनसे आशा भी नही की थी। अलबत्ता इस अनुभवके बाद मैंने उस आराममे ढिलाई कर दी जो मुझपर लादा गया था, और अपने इस बुरे अनुभवकी स्वीकारोक्तिसे मुझे बडी राहत मिली। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो मेरे ऊपरसे भारी बोझ हट गया हो और किसी हानिसे पहले ही मैं सँभल गया हूँ।[1] लेकिन 'गीता' का उपदेश तो स्पष्ट और निश्चित है। जिसका मन एक बार ईश्वरमे लग जाये वह कोई पाप नही कर सकता। मैं उससे कितना दूर हूँ, यह तो वही जानता है। ईश्वरको धन्यवाद कि अपने महात्मापनकी ख्यातिसे मैं स्वय कभी धोखेमें नही पडा। लेकिन इस जबरदस्तीके विश्रामने तो मुझे इतना विनम्र बना दिया है जितना मैं पहले कभी नही था। इससे अपनी मर्यादाएँ और अपूर्णताएँ भलीभाँति मेरे सामने आ गई हैं। लेकिन उनके लिए मैं इतना लज्जित नही हूँ जितना कि सर्वसाधारणसे उनको छिपानेपर मुझे होना ही चाहिए। 'गीता' के सन्देशपर सदाकी तरह आज भी मेरी वैसी ही अटल आस्था है। उस आस्थाको एक समृद्ध अचूक अनुभवमे परिणत करनेके लिए लगातार अथक प्रयत्नकी आवश्यकता है। लेकिन उसी 'गीता' मे साथ-साथ असदिग्ध रूपसे यह भी कहा गया है कि प्रभु-कृपाके बिना वह स्थिति प्राप्त ही नही हो सकती। अगर विधाताने इतनी काफी गुंजाइश न रखी होती तो हम अहकारी बन गये होते।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-२-१९३६

१. देखिए "पत्र: प्रेमाबहन कंटकको", ६-५-१९३६ तथा २१-५-१९३६।

२६१. पत्र : निर्मलाबहन जे० श्रॉफको

सावली
२९ फरवरी, १९३६

चि० निर्मला,

यह सवेदनाका पत्र नही है। किसीका भी देहावसान हो जाये तो हमे दुख होता है, इस दृष्टिसे तो तेरे पतिके देहावसानका दुख है ही। किन्तु तू विधवा नही हुई, अथवा हुई भी है तो विवाहित होनेके बावजूद तू ऐसी ही थी। आशा है तू यह नही मानती होगी कि उक्त स्थितिमे किसी तरहका परिवर्तन हुआ है। तू दृढता-पूर्वक अपने कर्त्तव्यका पालन करना। यदि तुझे बच्चेको अपने पास रखनेका अधिकार मिल जाये तो उसका लालन-पालन करना। अपना मुडन कदापि न कराना। तेरे रहन-सहनमे किसी तरहके हेरफेरकी जरूरत मुझे नजर नही आती। मेरे विचारसे तेरा कर्त्तव्य यह है कि जिस तरह तू आज सेवा कर रही है, उसी तरह भविष्यमे भी करती रहना। भगवान तुझे सम्मति और कर्त्तव्य-पालनकी शक्ति दे।

नाथजी[1] तो तेरे पास ही है इसलिए इतना लिखनेकी भी शायद जरूरत नही थी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७१८) से, सौजन्य नीलकण्ठ बी० मशरूवाला

२६२. भाषण : गांधी सेवा संघकी बैठकमें – १[2]

२९ फरवरी, १९३६

सच बात तो यह है कि मै प्रदर्शनी खोलकर यहाँ आया हूँ। मैने सोचा कि पहले प्रदर्शनी मै खुद देख लूँ और फिर आपसे कहूँ कि उसमें क्या-क्या देखने लायक है। अभी आपने उन भाइयोके, जोकि कुछ चीजे बाहरसे प्रदर्शनीमे लाये है, जबानी बयान भी सुन लिये।

जब मुझसे कहा गया कि यहाँ प्रदर्शनी होगी, तब मै समझा था कि उसमे सावली और उसके आसपासके देहातोकी ही चीजें होगी। वे बहुत तो नही होगी। खादीकी प्रवृत्ति यहाँ चल रही है। खादी बनती भी अच्छी है। उससे हरिजनोको

१. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।
२. यह द्वितीय वार्षिक बैठकके समय दिये गये मूल भाषणका सार है।

रोजी भी मिलती है, क्योंकि ज्यादा काम करनेवाले हरिजन ही है। इस दृष्टिसे खादीकी भिन्न-भिन्न क्रियाओं और प्रकारोंकी प्रदर्शनीका अभाव कुछ खटकता है। परन्तु उसका कारण यह बताया गया है — और वह कुछ अशमें ठीक भी हो सकता है — कि आप सावली गाँवको अच्छी तरह देख लेंगे और उसका अध्ययन करेंगे और इस प्रकार सावलीकी खादी-निर्माण-शक्तिका अन्दाजा अच्छी तरहसे कर सकेंगे।

दो-तीन महीनोंसे यह प्रयत्न हो रहा था कि सघके सदस्य यहाँ मिलेंगे। इस कारण मै तो ऐसी उम्मीद रखता था कि तभीसे प्रयत्न करके यहीकी चीजोंका प्रदर्शन करानेका प्रयत्न किया जायेगा। ऐसा होता तो हम सबको यह देखनेका मौका मिलता कि सावली क्या कर सकती है। पर यह टीका भविष्यके लिए ध्यानमें रखी जाये। हमारे सघका सम्मेलन देहातोमे ही होता रहेगा। उस समय एक बातका खयाल रखना चाहिए कि उस देहातमे और उसके आसपास बननेवाली चीजो और व्यवसायोका हम अध्ययन करे और वहाँपर क्या बन सकता है इसकी तलाश करे, और उन्ही चीजोकी प्रदर्शनी कराके सन्तोष माने। ऐसी प्रदर्शनीका उद्देश्य केवल प्राचीन वस्तु सग्रहालयके समान न माना जाये। जिन प्राचीन पदार्थोंका हमारे आर्थिक जीवनसे कोई सम्बन्ध नही है, उसकी भी प्रदर्शनी तो हो सकती है। परन्तु ऐसे सग्रहालय अन्यत्र बनाने चाहिए और वहाँपर शोभा दे सकते है। हमारे सम्मेलनमें उनका स्थान नही हो सकता। हमारा कर्त्तव्य तो उन्ही उद्योगोमें अपनी सारी शक्ति लगा देनेका है जिनका कि हम पुनरुद्धार कर सकते है। आप जब प्रदर्शनीको देखने जायें तो उसे इस दृष्टिसे भी देखें कि उसमे क्या नही है, और कौन-कौन-सी चीजे रखी जा सकती थी।

एक परिपत्र आपको भेजा गया था कि आपको यहाँ अपने साथ क्या लाना चाहिए। उसमे आपसे लालटेन, लिखनेका सामान, पोस्टकार्ड, लिफाफे, टिकट आदि लानेके लिए कहा गया था। यह सूचना योग्य ही थी क्योंकि ये चीजें देहातोमें नही मिल सकती। देहातोंमें ८० फी सदीसे अधिक लोग निरक्षर होते है। इस कारण यह सामग्री बेचनेके लिए कौन रखेगा? सम्मेलनकी तरफसे आप लोगोको लालटेन देनेका प्रबन्ध करनेमें नाहक खर्च होता।

लेकिन उस परिपत्रमें आपको यह भी सूचित किया गया था कि सावलीमें दूध मिलना मुश्किल है और गायका दूध प्राप्त करना तो असम्भव-सा है। जिनको गायके घी की आवश्यकता हो उन्हे उसे साथ लानेकी सूचना दी गई थी। यहाँ आने पर आपको ज्ञात हुआ होगा कि आपके लिए भैसके दूधका प्रबन्ध किया गया है। पर शायद आपको पता होगा कि आपके लिए दूध चादासे[1] आता है और साग नागपुरसे[2]। मेरी दृष्टिमें तो यह पाप है। इतनी दूरसे साग मँगानेके बजाय हमारा यह कर्त्तव्य था कि हम यही कुछ गायें पाल लेते। यहाँ हमारे इतने आदमी रहते हैं। वे कुछ गायें जरूर रख सकते थे। इसमे खर्च तो लगता। मुमकिन है कि चादासे

१. सावलीसे ३४ मील दूर स्थित।
२. सावलीसे १२० मीलसे अधिक दूरीपर स्थित।

दूध मगानेमे खर्च कम आता हो। परन्तु वह अधिक खर्च भी अयोग्य न होता। साग भी हमको यहीपर पैदा करवाना चाहिए था। दो-तीन महीनो पूर्व ही यहाँके किसानोको यह सूचना देनी चाहिए थी कि हमारे तीन-चार सौ लोग यहाँ आकर एक सप्ताह रहनेवाले है। उनके लिए रोजाना इतने मन सागकी आवश्यकता होगी। आप लोग आजसे ही उसके लिए बगीचा तैयार करे। वे लोग बड़ी खुशीसे आपकी सूचनाका स्वागत करते और सावलीमे सम्मेलन करनेके आपके निश्चयके लिए उपकार मानते।

यदि ऐसा स्थानीय प्रवन्ध असम्भव हो तो एक सप्ताह बिना दूध-सागके काम चला लेना मुनासिव होगा। केवल बीमारोके लिए या मेरे-जैसे जो बिना दूध-सागके बिलकुल काम नही चला सकते, उन्हीके लिए प्रवन्ध किया जाये। वह भी जितना उस स्थानमें प्राप्त हो सके उतनेसे ही। क्योकि यह भी तो सवाल हो सकता है कि ऐसी हालतमे वे लोग इतनी दूर आनेका कष्ट ही क्यो करे? हमको यह याद रखना चाहिए कि जिस देहातमे हम जायें, वहाँके लोगोको हमारे वहाँ ठहरनेसे अधिक-से-अधिक लाभ पहुँचे। कमसे-कम हमारी वैसी कोशिश हो। हम अपने लिए सारी आवश्यक चीजे वहीसे तैयार कराये और यदि ऐसे सम्मेलनके निमित्त हमारा व्यय तीन हजार रुपया होता है, तो हम यहाँकी जनताको अपने शरीर-श्रम और खरीददारीसे उतना तो लाभ पहुँचानेकी चेष्टा करें।

गांधी सेवा संघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० २५-७

२६३. भाषण : गांधी सेवा संघकी बैठकमें – २[1]

सावली
१ मार्च, १९३६

मैं नित्य एक घटा परिषद्को दूँगा। उसमे ज्यादा-से-ज्यादा तीस मिनट बोल सकूँगा और शेष ३० मिनट आप लोगोंके प्रश्नादि सुननेमे जायेंगे। मेरे पास आप लोगोके कुछ प्रश्न आये है। अध्यक्षने[2] भी अपने भाषणमे कुछ सवाल खड़े किये है। पहले मैं उनके प्रश्नोका उत्तर दूँगा। यदि उन परसे भी आपके दिलमें कोई सवाल पैदा हो तो उन्हे भी आप पूछ सकते है।

पहला प्रश्न निर्वाह-वेतन सम्बन्धी है। मेरा तो अभिप्राय यह है कि इस विषयमे हम कोई सूक्ष्म नियम नही वना सकते। इतना जरूर कह सकते है कि हम अमुक मर्यादासे आगे नही वढेगे। उदाहरणार्थ, सघमे ७५ रुपये मासिककी मर्यादा बना ली गई है। मेरी दृष्टिमे तो यह भी बहुत अधिक है क्योकि हमारा कार्यक्षेत्र अब देहातमे है। और देहातमे ७५ रु० या ५० रु० तो नही दिये जा सकते। और न वहाँ

१. गांधीजी सभामें तीसरे पहर ४ बजे पहुँचे थे।
२. किशोरलाल मशरूवाला।

उतनेकी जरूरत ही है। हाँ, सब लोग देहातमे नही जा सकते। उनकी कठिनाइयाँ भी है। फिर कुछ ऐसे भी है, जो अच्छे कार्यकर्त्ता है, जिनके आचार-विचार भी मानने लायक है, और जिन्हे हम सेवा-क्षेत्रसे जाने देना नही चाहते। परन्तु वे कम वेतनमें अपना निर्वाह भी नही कर सकते। उन्हे हम ७५ रु० भी दे सकते है। लेकिन हम यह दु खपूर्वक देते है और वे भी उसे दु खपूर्वक ही स्वीकार करते है। परन्तु इसमे दूसरोके लिए कोई विचार करने योग्य बात नही है। अगर एकका काम ५ रु०से चल सकता है तो वह दूसरेको ५० रु० मिलते है इसीलिए ५० रु० क्यो माँगे? ५० रु० या ७५ रु० वालेकी शरीर-सम्पत्ति अच्छी नही है, या उसमे दूसरी कमजोरियाँ है जो ५ रु० वालेमें नही है। इसमे स्पर्धाके लिए कोई क्षेत्र ही नही होना चाहिए। जिसकी जितनी जरूरत हो, वह उतना ही ले। उदाहरणके लिए मीराबहन कममें काम चला सकती है। लेकिन मैने उसे कहा कि उसे दूध और फल जरूर लेना होगा। इसलिए उसका खर्च मासिक १०-१५ रु० तक चला जाता है। लेकिन गजानन[१] जो उसकी जगह सिन्दीमें काम करता है, उसकी हाजत मीराबहनके मुकाबलेमें कुछ भी नही के बराबर है। उसके दिमागमे मीराबहनसे ईर्ष्या करनेका खयाल भी नही है, और न होना ही चाहिए। इस तरह जो जितने कममें काम चला सकता है, उससे अधिक स्वीकार वह न करे। जो व्यक्ति आजतक शहरमें रहा है, और अब देहातमें चला तो गया है, परन्तु अभी अपने जीवनको वहाँके अनुकूल नही बना सका है, वह कुछ समयके लिए अधिक वेतन ले सकता है।

दूसरा प्रश्न शरीर-श्रमके विषयमे है। उसका उत्तर भी मै जो-कुछ पहले कह चुका हूँ उसीमें आता है। प्रत्येक व्यक्तिके लिए अलग-अलग मर्यादा होगी। इससे अधिक हम नही कह सकते। हर आदमी जितना परिश्रम कर सकता हो, करे। एक सेवकने लिखा था कि वह देहातमे बैठकर अपनी आजीविकाका प्रबन्ध कर लेता है। लेकिन सारा समय शरीर-श्रममे ही चला जाता है। कातनेका तो उसने निश्चय कर लिया। यह भी प्रबन्ध कर लिया कि कताईसे आजीविका प्राप्त हो जाये। परन्तु दूसरा काम करनेके लिए उसे समय नही मिलता। मैने उसे लिख दिया है कि अगर वही काम एकनिष्ठासे करते रहोगे तो जनताके लिए उसमे भी पदार्थ-पाठ है। अगर देहातके लोग तुमसे सेवा लेना चाहे तो भले ही तुम बच्चोको पढा सकते हो, गन्दगी साफ कर सकते हो, और इसके बदलेमें गाँवके लोगोसे खाना पा सकते हो। अगर तुम दिलसे काम करोगे तो जरूर तुम्हारा निर्वाह चल जायेगा। लेकिन उनसे उतना ही खाना लेना चाहिए जितना जरूरी हो। लड्डू, घी, फल वगैरह चीजें माँगो तो शायद मिल भी जाये, परन्तु ये चीजें तो अगर लोग खुद-बखुद दे तो भी न लो। मै तो देहाती दृष्टि लेकर घूमता हूँ। इसलिए मेरे सामने दूसरे सवाल ही नही उठते। सार्वजनिक द्रव्यमें से अधिक-से-अधिक लेनेका सवाल ही नही खड़ा हो सकता।

१. गजानन नायक।

अध्यक्ष : शरीर-श्रमकी न्यूनतम मर्यादा क्या हो, जिससे अगर कोई सेवक उतना काम न कर सके तो उसे सार्वजनिक फंड परसे अपना बोझ उठा लेना उचित हो?

गाधीजी : मै तुम्हारा प्रश्न समझ गया था। परन्तु इस तरह सबके लिए एक-सी मर्यादा बनाना सम्भव नही। असलमे तो हरएकको उतना परिश्रम करना चाहिए जितना वह कर सके। जितनी रोजी मिल सके वह कमा ले। और जो घाटा रहे वह सघसे ले। अगर उसकी हाजत इतनी अधिक नही है कि उसको सुनकर दूसरोको दुःख हो, तो उसे सघसे लेनेमें सकोच नही करना चाहिए। मै हद तो नही बाँध सकता। अगर मेरे हाथोमे बागडोर हो तो मै मर्यादा नही बाँधूँगा। किस प्रकारके श्रमको शरीर-श्रम कहा जाये, वह भी निश्चित नही करना चाहता। इतना कह सकता हूँ कि पुस्तक लिखना शरीर-श्रम नही है।

तीसरा प्रश्न परिवार-विषयक है। बडा कडा प्रश्न है। उसे हल करनेमे सदस्योको प्रमुखकी सहायता करनी चाहिए। और इस विषयमें प्रमुखको भी जाग्रत रहना चाहिए। हमने अपने जीवन-मार्गको बदल दिया है, पुरानी प्रणाली छोड दी है; फिर भी हम शहरमे पैदा हुए है। हमारे माता-पिता है, पत्नी है, बाल-बच्चे है। वे पुराने ढगमे पले हुए है। उन्होने अपने जीवनमें परिवर्तन नही किया है। हम सोचते है कि हमे क्या अधिकार है कि हमने जिस नये जीवनको स्वीकार किया है, उसीको स्वीकार करनेके लिए उन्हे बाध्य करें? और हमारे लड़कोको भी हम उसी ढंगकी शिक्षा देना चाहते है जिसको स्वय हमने तो छोड दिया है। इसलिए कार्यकर्त्ताओको फिक्र हुआ करती है कि हमारे लड़कोका क्या होगा? क्या हम उन्हे वकील-डॉक्टर बना सकेगे? एक तरफ सदस्य गरीबीसे रहता है, पर वह यह महसूस करता है कि मेरा अपना धर्म तो अलग है और मेरी पत्नी और लड़कोके प्रति दूसरा है। वह मानता है कि स्वय उसके लिए तो 'त्याग' धर्म है, पर परिवारके लिए वह नही है। त्याग बुढापेका धर्म माना गया है। इस भावनाके पीछे वह पुराना हिन्दू-सस्कार है, कि जब हम बूढे हो तभी सन्यास ले। इसलिए हम अपने बच्चोको पुराने ढगके जीवनकी शिक्षा देना चाहते है। लेकिन हमने तो इस धारणाको छोड़ दिया है कि त्याग वृद्धावस्थामे ही धर्मरूप है, जवानीके लिए वह आवश्यक धर्म नही। हमने अपने लिए जवानीमे ही सारे भोगोके त्यागको तथा मुल्ककी सेवाको अपना कर्त्तव्य मान लिया है। अगर हम यह मानते है कि त्याग ही मानव-धर्म है, और भोग त्याग-धर्मसे अविरोधी ही होना चाहिए, तो हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हम वही धर्म अपनी पत्नी और बच्चोके लिए भी उचित समझे। अगर वे इससे अधिक चाहते है तो उनसे कह दे कि हमारी इतनी ही शक्ति है। जो मै खुद खाता हूँ, वही तुम्हे भी खिला सकता हूँ। जो बात मै अपने लिए ठीक समझता हूँ, वही तुम्हारे लिए भी ठीक समझता हूँ। इससे अधिक क्या कर सकता हूँ। मै स्वय दक्षिण आफ्रिकासे यही आदर्श रखता आया हूँ। कम कमानेकी इच्छा करनेमे दोष नही है। और जो आदर्श हमारे लिए सत्य है, वही हमारी सन्तानके लिए भी सत्य है। यदि इस

बातको हम मान ले तो सब प्रश्न आसानीसे हल हो जाते है। पर अगर हम ऐसा मान लेते है कि पत्नी और प्रजाके लिए भिन्न धर्म है तब द्वन्द्व चलता है। इस मार्ग पर जहाँतक हम जा सकते है, जाना चाहिए। कभी अविचारसे बहुत आगे बढ गये हो तो पीछे हटनेमे भी शर्म नही आनी चाहिए। सघके पास जितने साधन है, उतनेसे ही काम चलाना चाहिए। हम अपने साधनोको देखकर अधिक-से-अधिक मर्यादा कायम कर ले। परन्तु इसमे हमे देशकी ओर भी देखना होगा। जो देशमे चलेगा उसका असर भी हमपर होगा। और हमारा ध्येय भी यही है कि हम देशको भी अपने साथ ले ले। मुल्कको साथ लेकर ही अपनी प्रवृत्तियाँ चलानेकी हमारी वृत्ति होनी चाहिए। इन विषयोमें मै कोई नियम नही बतला सकता। ये तो व्यक्तिगत चीजें है और आदमीकी सचाईसे सम्बन्ध रखती है। पचहत्तर रुपयेकी अन्तिम मर्यादा मान ली गई है। यह प्रत्येकका व्यक्तिगत सवाल है कि इतना ले या नही।

जमनालालजी: परन्तु एक संस्थाकी दृष्टिसे कोई नियम बनाना जरूरी हो जाता है। माँगनेवाले व्यक्ति जितना ठीक समझें और संस्था उतना दे, तो वह नियम ठीक नहीं होगा। सार्वजनिक काम करनेवालेको बाजार-भावका भी तो विचार करना चाहिए।

गाधीजी इससे अधिक स्पष्ट करना मै सार्वजनिक दृष्टिसे कठिन मानता हूँ। एक आदमी महज इसी कारण कि वह मराठी और सस्कृत जानता है और अग्रेजी नही जानता, बाजारमे सिर्फ २५ रु० प्राप्त करता है, परन्तु हम उसकी कीमत २५ रु० ही क्यो आँके? कातनेवालीका उदाहरण लीजिए। बाजारमें उसे एक पैसा भी न मिलेगा। पर हमने तो उसे तीन आने देनेका निश्चय कर लिया है। कोई वकील या डॉक्टर हो तो वहाँ बाजारी दामका प्रश्न उठ जाता है। वह मनमाने पैसे लेता है। परन्तु हमे ऐसा फर्क नही करना चाहिए। अगर किसीके दाम कम होनेका कारण उसकी विशिष्ट योग्यता है तो हम फर्क कर सकते है। उदाहरणार्थ, यदि गजाननकी जरूरते मीराबहनकी जरूरतोसे कम है तो उसे उतना देनेकी आवश्यकता नही जितना मीराबहन लेती है। अगर एक बी० ए० एल-एल० वी० और दूसरा मराठी-सस्कृत जाननेवाला आचरणमे समान है, तो उनकी कीमत समान ही मानी जानी चाहिए।

जमनालालजी: लेकिन जो बाहर केवल २५ रु० ही कमा सकता है, वह यदि संघसे ४० रु० पाता है, तो वह केवल ४० रु०के लालचसे अपनी आत्माको गिराकर भी संघमें रहेगा।

गाधीजी यह ठीक है। लेकिन यह सघके सचालकोकी दृढतापर निर्भर है कि अगर ऐसे कोई हो तो वे उनसे कह दे कि हमने आपकी जितनी शक्ति समझी थी उतनी वह नही है। लेकिन रविशकरभाई[1] का उदाहरण लीजिए। बाजारमे उसकी शायद कुछ भी कीमत न हो, परन्तु वह तो बड़ा भारी सेवक है।

१. रविशकर एम० रावल।

जमनालालजी : बच्चोंकी शिक्षा और बीमारोंके इलाजके विषयमें कौन-सी नीति उचित होगी?

गांधीजी : लड़कोंकी शिक्षाका प्रश्न जरूर विचार करने योग्य है। मैं कह चुका हूँ कि जो धर्म हमारे लिए उचित है, वही हमारे परिवारके लिए भी उचित होना चाहिए। बच्चोंका धर्म-परिवर्तन नहीं कराना चाहिए। अगर मैंने शरीर-श्रम द्वारा अपना निर्वाह करनेको धर्म मान लिया तो मेरे लड़केको बैरिस्टर बनानेकी चेष्टा करना धर्म-परिवर्तन होगा। उसे मैं शरीर-श्रमकी ही शिक्षा दे सकता हूँ। साथ ही मैंने अपनी आजीविकाकी जो मर्यादा बना ली है, उसके भीतर रहकर ही जितनी शिक्षा मैं अपने बच्चोंको दे सकूँ, उतनी देनी चाहिए।

अब दवाकी बातको लेता हूँ। तिमप्पाका उदाहरण लीजिए। यह ठीक है कि अगर हम देहातमें जायें तो हम अपना सारा जीवन वैसा ही बनायें। लेकिन हमारे प्रयोगोंका नतीजा भी देखना चाहिए। तिमप्पाके कुछ दिन दूध न लेनेका नतीजा क्या हुआ? रेल-खर्च उठाकर बम्बई जाना पड़ा। डॉक्टरका उपकार लेना पड़ा। परन्तु यह भी गलती हुई। जब हम देहातमें जायें और गरीबीसे रहें तो गरीब देहाती अपने स्वास्थ्यके लिए जितने औषधोपचार प्राप्त कर सकता है उतनेसे ही हमें भी काम चलाना चाहिए। यदि आप कहें कि मैं स्वयं तो ऐसा नहीं करता हूँ तो उस आक्षेपको मान लेकर भी मैं अपने आदर्शको तो छिपा नहीं सकता। जो हमेशा बीमार रहें वे अपना इस्तीफा भेज दें।

राजेन्द्रप्रसाद : केवल शारीरिक-श्रमसे अपना निर्वाह करनेकी शर्तपर आप इतना जोर क्यों देते हैं? इससे तो सेवाके लिए समय कम मिलेगा। लोगोंके सामने उदाहरण रखनेके लिए यह ठीक है, परन्तु सिर्फ उदाहरणसे तो काम नहीं चलता। कहने-सुननेकी भी जरूरत रहती है। शरीर-श्रमको ही पकड़कर बैठ जानेसे कार्यकर्त्ताकी उपयोगिता कम हो जाती है।

गांधीजी : इसमें तो सारे भारतीय समाजके सुधारका सवाल छिपा हुआ है। प्रत्येक मनुष्यको अपना पोषण शरीर-श्रमसे ही करना चाहिए। इसे मैं ईश्वरीय कानून मानता हूँ। इसीलिए यह आदर्श रखा है। सवाल यह है कि फिर बुद्धिका विकास कैसे होगा? हाँ, सवाल है तो ठीक, परन्तु अगर संसार पर मेरी सत्ता हो तो मैं तो सबके लिए शरीर-श्रमको अनिवार्य कर दूँ। अपवाद तो उसमें भी करने ही पड़ेंगे। वे संन्यासीके जैसे होंगे। जनता खुद ही उन्हें शरीर-निर्वाहका साधन प्राप्त करा देगी। समाज कहिए, चाहे जनता कहिए या राज्य कहिए, मतलब वही है। इसमें मैं कोई नई या मौलिक बात नहीं कह रहा हूँ। रस्किनने 'अनटु दिस लास्ट' में (जिसके अनुवादको मैंने 'सर्वोदय' नाम दिया है)[1] भी यही कहा है। हमारे शास्त्रोंमें भी वही बात है। इतनी स्पष्ट भले ही न हो, पर ध्वनि तो है। मैं तो कोई शास्त्री नहीं हूँ। विनोबाजी और काकासाहब शास्त्रके आधार लेकर अधिकारपूर्वक बता सकते

१. देखिए खण्ड ८।

है। परन्तु मैंने तो इसे 'अनटु दिस लास्ट' में ही स्पष्ट रूपसे पाया और उसी रातमे अपने जीवनमे परिवर्तन कर दिया। रस्किनके कथनका सार यही है कि एक डॉक्टर या बैरिस्टर उतना ही वेतन ले जितना कि एक मजदूर।

राजेन्द्रप्रसाद मौजूदा सदस्य इस आदर्शकी ओर जानेके लिए क्या करें?

गाधीजी इस समय जो सदस्य है, उसके सामने भी आदर्श तो यही है। परन्तु उस ओर जाते हुए वह कोई प्रमाणिक धन्धा कर ले या सघसे वेतन ले ले। लेकिन सघ उसीको वेतन दे जिसकी सेवाका मूल्य वह मानता हो। मेहरबानीसे न दे। सघ किसीको अपना आश्रित न बनाये। यह सघ आश्रितोको पैदा करनेवाला नही है। सेवकोसे अधिक-से-अधिक श्रम लेकर चाहे वह खुद उनका आश्रित भले ही बने।

देवशर्माजी: क्या ७५ रु०की मर्यादा अधिक नहीं है?

गाधीजी अगर कम हो जाये तो अच्छा ही है। मैंने अपनी तरफसे तो १५ रु० की मर्यादा कायम् कर रखी है। आप चाहे तो ७५रु० से ५० रु० ही कर ले। परन्तु यह मुमकिन नही दिखाई देता।

गांधी सेवा संघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० ३२-६

२६४. पत्र : डॉ० मु० अ० अन्सारीको

३ मार्च, १९३६

प्रिय डॉ० अन्सारी,

चिकित्सक मित्रो द्वारा दी गई कुछ छूटके परिणामस्वरूप आपको यह पत्र लिख पा रहा हूँ। ८ तारीखको दिल्ली पहुँचनेकी आशा करता हूँ। उम्मीद है, आप लोगोको स्टेशन आनेसे रोकेंगे। भीडका सामना करने और उसके बीचसे रास्ता बनाकर निकलने लायक मेरा स्वास्थ्य नही है। मै तो चाहूँगा कि मुझे चुपचाप बिडलाके नये हरिजन आवास तक पहुँचा दिया जाये।

यह तो निश्चय ही महादेव ही लिखता — या लिख सकता था। फिर भी, यह पत्र मैं खुद आपको यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि आपकी इस महान् पुस्तक[1]को पाते ही मैं इसे पढने लगा और अगले ही दिन समाप्त कर दिया। इसे मैंने महान् इसलिए कहा है कि इसमे बहुत अधिक शोध और श्रमका प्रमाण मिलता है। व्यर्थका तो शायद ही कोई शब्द इसमे हो।

लेकिन इसे पढते हुए मेरे मनमें ये सवाल उठे "क्या यह पुस्तक मानव-जातिको ऊपर उठानेवाली है? क्या उसे इस तरहके पुनरुज्जीवनकी आवश्यकता है? यदि

१. रिजेनेरेशन इन मैन।

हम शरीरके लगातार दो सेकेंड तक भी कायम रहनेके बारेमें आश्वस्त नहीं हो सकते तो यौवनका पुनस्संचार किस कामका?"

क्या खोई हुई शारीरिक शक्ति-सामर्थ्य पुन प्राप्त करा देना ही चिकित्सा-शास्त्रका उद्देश्य है? क्या पता!

ये प्रश्न मेरे मनमें इसलिए उठे कि इस पुस्तकके लेखक आप है और मैंने तो आपको सदासे ईश्वरके अन्वेषकके रूपमें जाना है। जब कभी आपको कुछ क्षणकी फुरसत मिलेगी, मैं आपसे यह जानना चाहूँगा कि इस तरहके पुनरुज्जीवनका ईश्वरके अन्वेषकसे मेल कैसे बैठता है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

२६५. पत्र: पी० एम० नायडूको

३ मार्च, १९३६

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। मेरे लडकेने भूल स्वीकार करके अपना इरादा बदलते हुए जो पत्र लिखा है, उसे मैं कोई महत्त्व नहीं देता, और उसे जो काम दिया गया है वह यदि उसके इरादा बदलनेकी कीमत हो तब तो यह पापको और भी जघन्य करने-जैसा हुआ।[1] ऊपरसे देखनेमें तो ऐसा मालूम नहीं होता, लेकिन सचाई यही है कि वह बराबर नशेके असरमें रहता है; इसलिए वह ठीक तरहसे कुछ सोचने या बात करने लायक नहीं रह गया है। फिर भी, जो काम उसे दिया गया है, उसे यदि वह निष्ठापूर्वक करेगा तो उस हदतक तो यह बात अच्छी मानी ही जायेगी। मैं तो सिर्फ यही आशा कर सकता हूँ कि आपने और अन्य लोगोंने उसके प्रति जो असाधारण कृपा दिखाई है उसकी वह कद्र करेगा और जो पैसा उसे मिलेगा उसका अच्छा उपयोग करेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१. हरिलालने यह धमकी दी थी कि अगर उन्हें कोई काम नहीं दिया गया तो वे ईसाई या मुसलमान बन जायेंगे। इसपर पी० एम० नायडूने उन्हें नागपुर-नगरपालिकामें एक काम दिला दिया था। लेकिन हरिलालने काम छोड़कर २९ मई, १९३६ को चुपचाप इस्लाम धर्म कबूल कर लिया। देखिए खण्ड ६३, "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको," २-६-१९३६ भी।

२६६. पत्र : प्रभावतीको

सावली
३ मार्च, १९३६

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र आज सुबह मिला। खाना खानेके तुरन्त बाद तेरा पत्र पढकर मैंने कुछ चहलकदमी की और अब साढ़े आठ बजे यह उत्तर लिख रहा हूँ।

तेरा पत्र पढकर मैंने तुरन्त फाड डाला। किन्तु इस पत्रमे ऐसी कौन-सी गोपनीय बात थी कि तूने दुहरी सावधानी बरती? उसमे कोई गोपनीय बात तो थी ही नही। और तेरे लिए ऐसी गोपनीय बात हो भी क्या सकती है? फिर भी, जबतक तू अपने पत्रोपर 'गोपनीय' लिखती रहेगी और फाड देनेको कहती रहेगी तबतक मै तेरी इच्छाका पालन करता रहूँगा।

तेरे चले जानेसे मेरी चिन्ता तो अवश्य कम हो गई है, क्योकि जानेमे सत्य-धर्मका पालन निहित था और न जानेमे उसके भग होनेका भय था। किन्तु रक्तचाप तो कम होता ही जा रहा था और इसीलिए वह अपने-आप कम हो गया। तेरे रह जानेकी मुझे इतनी चिन्ता नही थी, क्योकि मै जानता था कि तू सही काम ही करेगी और तूने बडी तत्परतासे वह किया। बाकी रक्तचापका तो ऐसे ही चलता रहेगा। वर्धामें १८८–११० हो गया था। और एक बार तो २१२–१२० तक जा पहुँचा था, किन्तु फिर उसी दिन १८८–१०८ तक नीचे आ गया। अब कितना है, यह मै नही जानता। अत यह कदापि नही कहा जा सकता कि तेरे जानेसे रक्तचाप कम हुआ। तू जब आ सके तब आ जाना। जबतक वहाँ रहना तेरा कर्त्तव्य हो तबतक उक्त कर्त्तव्यका पालन करना। कर्त्तव्यका पालन करनेमें ही सुख है। और वही शान्ति है। इस बारेमे जरा भी सन्देह मत रखना कि जहाँ उसका अभाव है वहाँ सुख हो ही नही सकता।

दूध पीनेके बन्धनसे छुटकारा क्यो चाहती है? इसीमे तेरा भला है। हाँ, इतनी छूट तुझे अवश्य है कि जब ४ पौड दूध हजम न हो सके तो उसे कम कर सकती है। यदि तू नियमित रूपसे व्यायाम और नीद लेती रहेगी तो ४ पौड दूध हजम करनेमे तनिक भी कठिनाई नही होगी। आसानीसे जो फल मिल सके सो खाना। जो खुराक तू ले रही है यदि वही जयप्रकाश भी खाये तो अच्छा हो।

अपनी दिनचर्या लिखती रहना। पढाई-लिखाईके बारेमे मै समझ गया। तुझसे जितना बन पडे उतना करना। हिन्दी व्याकरण पढना। अपनी जरूरतके लिए यहाँसे कुछ मँगाना चाहे तो मँगा लेना। मै यहाँसे ६ तारीखको रवाना होऊँगा और आशा है कि ८ तारीखको दिल्ली पहुँच जाऊँगा। वहाँ पन्द्रह दिन तो लगेंगे ही।

तूने कमलाके बारेमे स्वरूपरानी आदिको तो लिखा ही होगा। वा बम्बईमे है, राजाजी वहाँ आये है और शायद यहाँ भी आये।

यहाँ उपस्थिति अच्छी है।[1] मौसम अच्छा है और वे लोग मुझे खूब शान्तिसे रहने दे रहे है।

ऐसा लगता है कि तेरा एक पत्र गुम हो गया है। मै समझ गया हूँ। मै यह जानता हूँ कि तू आलस्यवश पत्र न लिखे ऐसा नही हो सकता। डर यही है कि तुझे उदासी न घेर ले। किन्तु तुझे उदास बिलकुल नही होना चाहिए। क्या 'गीता'-माताकी यह शिक्षा नहीं है कि जैसी स्थिति आ पड़े उसे आनन्दपूर्वक सहन करना चाहिए?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५८) से।

२६७. भाषण: गांधी सेवा संघकी बैठकमें – ३

सावली
३ मार्च, १९३६

रामनारायणजी[2] ने एक पत्र अध्यक्षको दिया है। वह उन्होने मुझे दिखाया। मैंने उसे पढा भी। फिर मैंने जानना चाहा कि गाधी-विचारकी यह 'समिति क्या है?'[3] किन लोगोकी बनी है, इसके अधिकार क्या है वगैरह, तब कल जो-कुछ हुआ मुझे सुनाया गया। साथ ही मुझसे यह भी कहा गया कि यह कोई सम्मेलन द्वारा अधिकृत समिति नही है। इस सम्मेलनका कार्य इस ढगसे नही चल रहा है कि प्रस्ताव पास किये जायें। सम्मेलनमे अवसर देखकर एक विचार प्रकट किया गया। और उसमें से इस विचारसे दिलचस्पी रखनेवालोने अपनी एक समिति बना ली। पहले मैंने सोचा कि मुझे इस बातमे नही पड़ना चाहिए, और जब मै चर्चाके समय उपस्थित नही रह सकता तो मुझे राय देनेका कोई अधिकार भी नही है। फिर भी, इस विषयमे मै राय तो रखता हूँ और उसे बता देना भी कर्त्तव्य-रूप समझता हूँ, फिर भले ही वह अनधिकार चेष्टा क्यो न हो। मै इस समितिको उसकी मर्यादा

१. गाधी सेवा संघकी द्वितीय वार्षिक बैठकके लिए।

२. रामनारायण चौधरी।

३. ऐसा प्रस्ताव था कि द० बा० कालेलकरको अध्यक्ष बनाकर गाधी-विचारधारा-सम्बन्धी एक समिति बनाई जाये जिसके सदस्य ये सब व्यक्ति हों: शकर त्र्यम्बक धर्माधिकारी, महादेव देसाई, स्वामी आनन्द, किशोरलाल मशरूवाला, रगराव आर० दिवाकर, हरिभाऊ उपाध्याय, बलुभाई मेहता, देवशर्मा 'अभय', राजेन्द्रप्रसाद, शकरराव देव, रघुनाथ श्रीधर धोत्रे, सतीशचन्द्र दासगुप्त और सीताराम पुरुषोत्तम पटवर्धन।

वता देना चाहता हूँ। अगर कोई कार्य करे तो सिर्फ यही कि मेरे मन्तव्यो और विचारोका सग्रह कर ले। इससे अधिक करेगी तो मुझे भय है कि वही होकर रहेगा जो रामनारायणजीने अपनी शकाओ[1] मे प्रकट किया है।

गाधीवाद-जैसी कोई चीज मेरे तो दिमागमें ही नही है। मै कोई सम्प्रदाय-प्रवर्तक नही हूँ। तत्त्वज्ञानी होनेका तो मैंने कभी दावा भी नही किया है। मेरा यह प्रयत्न भी नही है। कई लोगोने मुझसे कहा कि तुम गांधी-विचारकी एक 'स्मृति' लिखो। मैंने कहा, स्मृतिकार कहाँ और मै कहाँ! मेरे पास कोई योजना नही है। स्मृति वनानेका अधिकार मेरा नही है। जो होगा मेरी मृत्युके वाद होगा। मैंने तो केवल वगैर योजनाके, अपने निजी ढगसे यही प्रयत्न किया है कि हम अपने नित्य जीवनमें सत्य, अहिंसा आदि सनातन तत्त्वोका व्यापक प्रयोग करे। वालककी तरह जैसी प्रेरणा मिली, प्रवाहमे जो चीजे आ गईं, उसमे जो सूझा वह किया।

फिर, मुझे पता चला कि जो मै कर रहा हूँ, सत्यके प्रयोग है। ऐसा करनेमें कभी-कभी मुझसे भूले भी हुई है। और अपनी भूलोसे मुझे शिक्षा भी मिली है। इस तरह मेरे लिए सारा जीवन एक सत्यका प्रयोग है। सत्यकी शोधमें ही अहिंसाका साधन मुझे प्राप्त हुआ। स्वभावसे मै शुरूसे ही सत्यका पुजारी था। लेकिन अहिंसक नही था। मुनि जिनविजयजीने मुझे एक वार कहा, 'तुम्हारे नजदीक सत्य ही सव कुछ है, तुम सत्यके लिए तो अहिंसाकी भी हिंसा करनी पडे तो करोगे।' मैंने इनसे कहा कि वात तो ठीक है। मेरे लिए सत्यसे परे कोई धर्म नही है, और अहिंसासे वढ़कर कोई परम कर्त्तव्य नही। 'सत्यान्नास्ति परो धर्म.' और 'अहिंसा परमो धर्म.' इन दोनो सूत्रोमें[2] धर्म शब्दके अर्थ भिन्न है। इसके मानी है सत्यसे वढकर कोई ध्येय नही और अहिंसासे वढ़कर कोई कर्त्तव्य नही है। इस कर्त्तव्यको करते-करते ही आदमी सत्यकी पूजा कर सकता है। सत्यकी पूजाका दूसरा कोई साधन नही है। सत्यके लिए देशके नाशका भी साक्षी वनना पडे तो वनना चाहिए। देशको छोड़ना पड़े तो छोड़ना भी चाहिए। पॉल रिशारने इस विषयमें मुझपर वडी कडी टीका भी की। मेरा और मनु महाराजका विरोध वताया था। विवादमें या गायकी रक्षाके लिए असत्य बोलना पड़े, तो मै धर्म नही मानता। ये विधान वरावर है। परन्तु इसमे मेरे लिए कोई शास्त्रीय चर्चाका विषय नही है।

यदि मेरा कोई सिद्धान्त कहा जाये तो वह इतना ही है। परन्तु इसमे गाधीवाद-जैसी कोई चीज नही है। इसमें कोई 'वाद' ही नही है, जिसपर पुस्तके लिखी जा

१. रामनारायण चौधरी की शकाएँ इस प्रकार थीं: १. गाधीवाद एक नया सम्प्रदाय वन जायेगा। २. अन्धश्रद्धा और वौद्धिक परावलम्बिता वढ़ेगी। ३. गाधीवादका अर्थ करनेमें गांधीवादियोंमें ही मतभेद वढ़ेगा। ४. आचरणका महत्त्व घटकर केवल विचार को अनावश्यक महत्त्व प्राप्त होगा। ५. गाधी-विचार की विकासशीलता घटेगी। ६. गाधीवाद शास्त्रका रूप धारण करके दभको जन्म देगा। ७ लिखने-पढ़नेकी अधिकता की कुटेव और वढेगी और सेवा की वृत्ति घटेगी। ८. पू० वापूजी के लिए निर्णय देनेका कष्ट भी वढ जायेगा।

२. महाभारत, आदिपर्व, ११-१३, तथा शान्तिपर्व, १६२-२४।

सके। मैंने जो-कुछ लिखा है वह, मैंने जो-कुछ किया है, उसका वर्णन है और मैंने जो-कुछ किया है वही सत्य और अहिंसाकी सबसे बडी टीका (व्याख्या) है। उसमे जिनका विश्वास हो, उन (सिद्धान्तो)का प्रचार केवल तदनुसार आचरण करके ही कर सकते है। उनके लिए पुस्तककी जरूरत नही है। मेरा कार्य उनके सामने है। कहा जा सकता है कि वह भी शाश्वत नही है। किसीने तो कहा भी है कि मेरे मरनेके बाद मेरे चरखेको कोई दो कौड़ीको भी नही पूछेगा, और उसकी चिता बनाकर मै जलाया जाऊँगा। फिर भी, उस चरखे पर मेरी जो श्रद्धा है, वह विचलित नही हुई है। मै तो नही मानता कि मैंने देशके सामने कोई अन्तिम वस्तु रखी हो। पर हाँ, यह कह सकते है कि मेरी श्रद्धा अचल हो गई है। यदि आप सब मुझे छोडकर चले जाये, तो भी मै निराश न होऊँगा। मेरा विश्वास बढता ही जायेगा। मुझे तो कभी निराशा और पश्चात्ताप हुआ ही नही है। मै इतनी बडी लडाई लड़ा, पैसा गँवाया, और जाने भी खोई, उसका मुझे पश्चात्ताप नही है। जब-जब मै देहातमे गया हूँ, तब-तब आशाके बर्तन भरकर लाया हूँ। परन्तु क्या यह विश्वास आपको कोई पुस्तक देगी? वह तो मौनपूर्वक काम करनेसे आपको मिलेगा। इसलिए, किसीके हृदयमे ऐसी निर्बलता नही आनी चाहिए कि समिति जबतक हमे पुस्तक नही देती तबतक हम क्या करे? कार्यकर्त्ता पूछते है कि सरकारी तथा दूसरे दलोके विद्वान लोग देहातियोके पास जाकर हमारे विचारोपर टीका करते रहते है और लोगोको बहकाते है। तब हम क्या करे? हमारे पास इतना ज्ञान नही है।

बात तो ठीक है। परन्तु उसमे पुस्तककी क्या जरूरत है। कहो कि हम तो चरखा चलाते है, सफाई करते है, जो चाहे हमारी सेवाको स्वीकार करे। आप लोग पूछेंगे कि क्या हमे टीकाकारोके बारेमे चिन्तित न होकर चुपचाप अपने काम ही करते जाना चाहिए। हाँ, अगर आप मौन-व्रत भी ले ले तो मुझे कोई चिन्ता नही है। अगर खुद आपको बिना लिखे सन्तोष न हो तो भले ही लिखिए। परन्तु यह न होना चाहिए कि आपके लेखन-कार्यसे आपके वास्तविक कार्यमे रुकावट आये।

फिर भी, यह तो एक आदर्श है। इस समितिकी खास आवश्यकता नही थी। परन्तु अब बन गई है तो विरोध भी नही है। जितना डर रामनारायणजीको लगता है उतने डरके लिए कोई कारण नही है। सावधानीकी जरूरत है। हम जिन कामोको करनेका प्रयत्न कर रहे है उनको समझानेके लिए कुछ प्रामाणिक साहित्य प्रकाशित करनेकी आप लोगोकी जो इच्छा है, वह मै समझता हूँ। वाद-विवादमे न पड़कर ऐसी पुस्तके आप प्रकाशित कर सकते है। इस समितिको बिना आडम्बरके शान्तिसे यह काम करना चाहिए। आडम्बरसे काम करेगी तो उसमे से जहर ही पैदा होगा। उसे स्वाश्रयी तो होना ही चाहिए।

इसके बाद बापूजीने अध्यक्षके भाषणमें खड़े किये गये सवालोंका जवाब देना शुरू किया। संघके मूल और नये सदस्योंके सम्बन्धमें उन्होंने कहा:

सघका सदस्य कही भी काम करे तो भी वह सघका सदस्य रह सकता है। वह यदि सत्य और अहिसाको मानता है तो बस है। परन्तु यदि कोई कहे कि मै

सत्य और अहिंसाको तो मानता हूँ पर चरखा, अस्पृश्यता-निवारण, ग्रामोद्योग या जिस तरह गाधी काग्रेसको चला रहा है, उसे मैं नही मानता तो उससे कहना चाहिए कि तुम उस सत्य और अहिंसाको नही मानते, जिसे गाधी मानता है। जो कोई इन सब बातोको मानते है, उनका एक रजिस्टर बनाया जाये। और वे कही भी काम करते हो तो भी वे गाधी सेवा सघके सदस्य माने जाये।

संघके भावी स्वरूपके विषयमें उन्होने कहा :

इस विषयमे मैं अध्यक्षसे सहमत हूँ।[1]

इस बातको दोहरानेकी जरूरत नहीं है कि सब अविवाहित रहनेका आदर्श रखें। परन्तु दो घोडोपर साथ-साथ सवारी नही हो सकती। जो अविवाहित है या विवाहित होकर भी अविवाहित-जैसे रहते है, वे अधिक सेवा कर सकते है। लेकिन इस विषयमे कोई सख्त नियम नही बनाया जा सकता और न उसकी जरूरत ही है। अगर विवाह न करनेवाले मिले तो ठीक ही है, पर यदि कल गजानन या सुरेन्द्र विवाह करना चाहे तो वे कर सकते है, और सदस्य भी बने रह सकते है। उनका निर्वाह-खर्च अगर बढ जाये तो वे सघसे ले सकते है। यह तो व्यक्तिगत सवाल है। इसमे नियम बनानेसे दम्भ और व्यभिचार आ जायेगा।

अध्यक्षने जिन दोषोकी ओर ध्यान आकर्षित किया है वे सारे हिन्दुस्तानके दोष है। इस विषयमे हमें जाग्रत रहनेकी आवश्यकता है। जो सत्य और अहिंसाका उपासक है, भारतकी और जीवमात्रकी सेवा करना चाहता है, वह सुस्त नही रह सकता। जो समयका नाश करता है वह सत्य, अहिंसा और सेवाका भी नाश करता है। यही बात सफाईकी भी है। स्फूर्ति, समय और स्वच्छताका ध्यान रहेगा तो ज्ञानका अभाव नही रहेगा। हम जिसे ज्ञानका अभाव कहते है, वह सचमुच तन्मयताका अभाव है। 'गीता'-माताका कहना है कि जो श्रद्धासे भक्ति करेगा उसे ज्ञान अपने-आप मिल जायेगा।[2]

अध्यक्षने तीन पहलू[3] रखे है। वास्तवमे परिग्रह मानसिक वस्तु है। मेरे पास घडी है, रस्सी है, और कच्छ (लगोटी) है। इनके अभावमें यदि मुझे क्लेश होता है, तो मै परिग्रही हूँ। यदि किसीको बड़े कम्बलकी जरूरत हो तो वह उसे रखे, परन्तु खो जानेपर क्लेश न करे तो वह अपरिग्रही है।

१. किशोरलाल मशरूवाला ने कहा था कि इस संघके कार्यकर्त्ता आवश्यकता पडनेपर समय-समय पर सभी अन्य सस्थाओं की मदद करेंगे। संघ गाधीजी के, आदर्शोंका प्रचार करेगा और किसी भी सदुद्देश्य के लिए कार्यकर्त्ताओंकी टोली बनानेको हमेशा तैयार रहेगा। उसपर विभिन्न संस्थाओंकी सम्पत्तिकी देख-रेखकी जिम्मेदारी होगी।

२. भगवद्गीता, अध्याय ४-३९।

३. अध्यक्ष महोदयने यह सुझाव दिया था कि निम्नलिखित तीन बातोंके सम्बन्धमें एक सीमा निश्चित कर देनी चाहिए: (१) किसी संस्थाके पास वर्षके अन्तमें कितनी रकम बकाया रहे; (२) संस्था कितना चन्दा प्राप्त कर सकती है, तथा (३) संस्थाके नामपर कोई कार्यकर्त्ता कितनी सम्पत्ति प्राप्त कर सकता है।

अध्यक्षने जो कहा[1] उतना काफी है। कुछ अधिक कहनेकी ज़रूरत नहीं।[2]

मैं अनेक बार कह चुका हूँ कि हमारे मनमें इन दो कार्यक्रमोंमें कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए। लेकिन यह देखनेमें आया है कि जो रचनात्मक कार्य करते हैं, वे राजनीतिक कामको हलका समझते हैं और राजनीतिक काम करनेवाले विधायक [रचनात्मक] कामको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और कुछ केवल रूढ़िके नाते उसका पालन करते हैं। जो रचनात्मक कार्यको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं वे इस संघके सदस्य नहीं हो सकते। यह हो सकता है कि संघके सदस्य राजनीतिक काम भी करें। वास्तवमें ये दोनों एक-सा महत्त्व रखते हैं। उसमें असल बात है कार्य-दक्षता और कार्य-विभाग। इसमें वाद-विवादके लिए कोई स्थान नहीं है। दोनोंको मैंने ही उत्पन्न किया है। यदि दोनोंमें मैं विरोध देखता, तो दोनोंको किस तरह निर्मित कर सकता? दोमें से कौन किसे करे, यह कार्य-दक्षताका सवाल है।

अंग्रेजोंकी कार्य-दक्षता देखो। जिसके प्रभावसे आज वह सल्तनत काम कर रही है, उस 'बैंक ऑफ इंग्लैंड' के गवर्नरका उदाहरण लो। वह सारी सल्तनतका आधार होते हुए भी क्या कभी पार्लमेंट या सिविल सर्विसमें जाता है? उसे तो पार्लमेंटकी चर्चा सुनने या पढ़नेका समय भी नहीं मिलता होगा। वह इन झंझटोंमें पड़ता ही नहीं होगा। हमें भी ऐसा कार्य-विभाग करना चाहिए।

हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न कार्यक्रम हैं। जैसे कि चरखा-संघ, हरिजन-सेवक संघ, ग्रामोद्योग संघ और गो-सेवा, जिसे मैंने अभी आपके सामने नहीं रखा है। लेकिन गो-सेवाका कार्य करनेवाला भी संघका सदस्य हो सकता है। इनमें से जो चाहे एकसे अधिक प्रवृत्तियोंमें भी भाग ले सकते हैं। वह उनकी शक्तिका सवाल है। मैं चरखा-संघका काम करते हुए और दूसरे काम भी कर लेता हूँ। सब ऐसा नहीं कर सकते। उदाहरणार्थ, पार्लमेंटरी बोर्डको[3] लो। उसे भी मैंने ही खड़ा किया है। लेकिन मैं उसमें थोड़े ही जाऊँगा। असेम्बलीमें जानेकी आज तो मेरे दिलमें कल्पना भी नहीं उठती। फिर भी, यह कोई सिद्धान्तकी बात तो नहीं है। जिस समय जो आवश्यक हो, करना चाहिए। और कल अगर वहाँ जाना मेरे लिए कर्त्तव्यरूप हो जाये तो चला भी जा सकता हूँ। कानून-भंगकी लड़ाई मैंने ही शुरू की थी। लेकिन दक्षिण भारतमें हिन्दी प्रचारवालोंसे मैंने कहा कि कोई जेल न जाओ, नहीं तो काम मिट जायेगा। उनमें से सिर्फ अण्णा (श्री हरिहर शर्मा) गये और वह भी मेरी इजाजतसे। शंकरलालसे मैंने यही कहा था कि चरखा संघके कामकी कीमत वही है, जो हजारों आदमियोंके जेल जानेकी है। शुरू-शुरूके कुछ दिनोंके बाद जेल जाना तो आराम

१. अध्यक्षने असत्य के प्रतिकार के सम्बन्धमें कहा था कि सत्याग्रही एक बातपर दृढ़ रहता है: वह अपना कर्त्तव्य समझता है कि दलितों की सहायता करे, उनका उद्धार करे और उन्हें जीवनके उत्साहसे अनुप्राणित करे। उसे हर परिस्थिति में, अपने प्रमुख की नाराजगी के बावजूद असत्यका प्रतिकार करना है।

२. महादेव देसाईने अपनी रिपोर्टमें लिखा है: "इन प्रश्नोंमें एक प्रश्न यह था कि रचनात्मक तथा राजनीतिक कार्यक्रममें कोई ताल-मेल है अथवा नहीं"।

३. मु० अ० अन्सारी की अध्यक्षता में इसकी स्थापना मई १९३४ में हुई थी।

हो गया। बाहर रहनेवालोने काफी कष्ट उठाया, और जेल जानेवाले हृष्टपुष्ट होकर आये, वहाँ जाकर जेलके नियमोका हिंसात्मक भग किया। ऐसे लोगोने जेल जाकर क्या भलाई की? रचनात्मक और राजनीतिक कार्य, यह भेद करना ही गलत है। मेरी दृष्टिमें तो राजनीतिक काम भी रचनात्मक है। मैंने 'यग इडिया' में कहा भी था कि सविनय भग भी मेरी नजरमे विधायक [रचनात्मक कार्य] है। लेकिन जगतकी दृष्टिसे वह बिनाशात्मक कहा जा सकता है। वास्तवमे दोनो सत्याग्रहकी शाखाएँ है, और इसलिए सजातीय है। एकके सिवा दूसरेकी पूर्णता नही होती। पर कई लोग यह समझते है कि गो-सेवा, अस्पृश्यता-निवारण और हिन्दी-प्रचारको भी क्या कोई राजनीतिक कहेगा? इनसे कही स्वराज्य मिलेगा? पर मै मानता हूँ कि इनके बिना स्वराज्य नही मिल सकता। इस बातपर कई काग्रेसवादियोकी भी श्रद्धा नही है। उनकी श्रद्धा बढ़ाना भी हमारा काम है। वे लोग इसे राजनीतिक नही समझते। इसलिए उसे रचनात्मक कहते है। ऐसा काम करनेवाले बहुत लोग है, जिसे लोग राजनीतिक समझते है। इसलिए हमें ज्ञानपूर्वक एक मर्यादाका पालन करना चाहिए। हम मर्यादाका पालन नही करेगे तो सब काम टूट जायेगा। गुजरातमें इसलिए काम ठीक तरहसे चल रहा है। आज इन चीजोके प्रति कच्ची श्रद्धा है, पौधा कोमल है। उसपर ध्यान देकर हमे उसे बढाना है। मेरा यह दृढ विश्वास है कि ये चार-पाँच काम हम अच्छी तरह करे तो स्वराज्य हस्तामलकवत है। उससे हमारी कार्यदक्षता भी बढ जायेगी। मुझे एक प्रसग याद आ रहा है। एक सभामें रचनात्मक कार्यपर बहस चली। वहाँ सप्रू,[1] चिन्तामणि,[2] और पाल[3] भी थे। चिन्तामणिने विधायक कार्यक्रम पर सख्त टीका की। पालने उनको जवाब दिया। यो तो वे मेरे विरोधी माने जाते थे, पर उनकी तीक्ष्ण बुद्धिमे यह बात जँच गई। भाषा पर उनका काबू था ही। मै समझा सकता, उससे कही अच्छी तरह उन्होने समझाया कि इस चीजसे देशकी कीमत बढ़ जायेगी। यह एक ऐसी चीज आ गई है कि जिससे हिन्दुस्तानकी जितनी शक्ति बढेगी उतनी आपके सारे कामोसे और अखबारोसे नही बढ सकती। उन्होने जो बात बहुत ही सुन्दर भाषामे कही उसे मैंने प्राकृत भाषामे कह दिया। उस समय मेरी उस कार्यमे जितनी श्रद्धा थी, शायद आज उससे दस गुनी बढ़ गई है।

पार्लमेंटरी बोर्डका काम भी मैंने ही पैदा किया है। पर इसलिए यदि आप वहाँ जाना चाहे तो नही जाने दूंगा। आज तो वहाँ भूलाभाई[4] को भेजूंगा। उनकी उसमे श्रद्धा है और शक्ति भी है। सत्यमूर्ति[5] का मै यहाँ क्या करूँगा? यदि मुझे सगीत द्वारा स्वराज्य हासिल करना हो, तो मै खरे[6], शास्त्री और बालकोबाको

१. तेजबहादुर सप्रू।
२. सी० वाई० चिन्तामणि।
३. बिपिनचन्द्र पाल।
४. भूलाभाई देसाई।
५. एस० सत्यमूर्ति।
६. नारायण मोरेश्वर खरे।

भेजूंगा। अगर विधायक कार्यमें आपकी श्रद्धा दृढ हो, तो इसीको आप करें, जैसे मेरी श्रद्धा गो-सेवामें है। मुझे तो स्वप्न भी गायका आता है। अपने-अपने काममें और अपने-अपने स्थानमें हम सब ध्यानावस्थित हो जायें। इसीको आप स्वधर्म समझें। और परधर्म उत्तम लगे तो भी समझें कि वह भयावह है।

गांधी सेवा संघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० ५०-४

२६८. भाषण: गांधी सेवा संघकी बैठकमें – ४

सावली
४ मार्च, १९३६

प्रश्नोंका[1] उत्तर देनेसे पहले कुछ बातें मैं अपनी तरफसे कहना चाहता हूँ। ऐसा कहनेका मुझे अधिकार तो नहीं है। फिर भी, मेरा स्वभाव है कि जो-कुछ सुनूं उसपर अपनी राय प्रकट कर दूं। आपकी चर्चाएँ सुननेकी मुझे इच्छा तो बहुत है, पर मैंने उसे रोक लिया है। फिर भी, कई बातें मुझे अपने जेलर (सरदार)से कभी विनोदमें, और कभी गम्भीरतासे मालूम हो जाती हैं। हम लोग यहाँ क्यों आये हैं? अपना समय क्यों बरबाद करते हैं? मैंने सुना है कि संघके सदस्योंके वेतनके बारेमें मत लिये गये। अनावश्यक वाद-विवादके रूपमें इसीमें चार घंटे चले गये। यह तो स्वयंसिद्ध बात थी। इसमें चर्चा योग्य क्या था? जमनालालजीने प्रश्न छेड़ दिया, क्योंकि पैसा उन्हींको पैदा करना पड़ता है। पर हमें कह देना चाहिए कि हम वेतनकी अपेक्षा नहीं रखते। गांधीवादको मैं नहीं जानता। लेकिन यह तो मैं जानता हूँ कि गांधी-शिक्षण क्या है? हम तो बगैर पैसे ही अपना काम चलानेकी कोशिश करें। जहाँ अहिंसा है, वहाँ कौड़ी भी नहीं रह सकती। हाँ, तो मैं कह रहा था, यहाँ हम बिना प्रस्तावके वाद-विवाद कर रहे हैं। यह भी एक दृष्टिसे ठीक हो सकता है। सब अपने-अपने काममें लगे हुए हैं। वहाँ प्रस्तावकी क्या आवश्यकता है? फिर भी, कुछ प्रस्ताव तो आवश्यक हो सकते हैं। वे कौन-से हों, यह तो मैं नहीं कह सकता, क्योंकि मैं आपके सम्मेलनमें पूरा-पूरा भाग नहीं ले सकता हूँ। आपको कोई प्रस्ताव न सूझे, और सिर्फ चर्चा ही चर्चा हो, तब तो जरूर कामको आज ही बन्द कर दें, या कि कोई निश्चित कार्यक्रम बना लें। यहीं पर कुछ-न-कुछ कर जाइए। जितने पैसे यहाँ खर्च हुए हैं उन्हें रख जाइए। सावलीका अच्छी तरह निरीक्षण कीजिए। हम इतने कार्यकर्त्ता यहाँ एकत्र हों, और सावलीके लिए कुछ न कर जायें, यह तो इस सम्मेलनकी बड़ी सख्त टीका हुई। इस विचारसे महादेवको बड़ा दुःख हुआ। सावलीकी-सी दुर्दशा सब जगह है — गन्दगी है, पानी है, आपसमें झगड़े हैं। इन सब बातोंके लिए हम जो-कुछ कर सकें, कर जायें। एक सूचना आई थी कि एक दिन सब आठ घंटे कातें। पर वह उड़ गई। बहाना यह बताया गया

१. ये प्रश्न जमनालालजीने पूछे थे।

कि इतने चरखे कहाँसे लाये? इतने चरखे न हो, तो आधे चरखोसे भी काम चल सकता था। कोई धुनते, कोई कातते। लेकिन चरखेकी बात भी छोड़ देता हूँ। इस देहातमें जितनी गन्दगी है उसीको साफ कर डालिए। मुझे बालासोरकी याद आती है। वहाँ सेनेटरी इन्स्पेक्टरने कहा कि अगर ५० आदमी मिल जायें, तो यहाँका तालाब साफ हो सकता है। मैंने लोगोसे कहा और उसे पचास आदमी मिल गये। सावलीमें भी इस प्रकारका बहुत काम है। आप ऐसा ही कोई काम उठायें। सम्मेलनके लिए आपने चार हजार रुपये खर्च किये हैं। चार हजार रुपयेका यहाँ कोई काम कर जाइये। अब हम प्रस्तावके युगसे निकल गये हैं। तो इस सम्मेलनसे कौन-सी नई दृष्टि सीखकर अपने-अपने स्थानको लौटेंगे?

सबसे कठिन प्रश्न ग्रामोके उद्योगका है। स्वास्थ्यका है। हाँ, देहातियोके कर्जकी बात न करे। यह बोझ न ले। पर उनके स्वास्थ्यको तो जरूर अच्छा कर ले। यह भी कांग्रेसका ही काम है। पर अब समय हो गया। इसलिए इस विषयको यही छोड देता हूँ और दूसरे प्रश्नोकी ओर मुड़ता हूँ।

प्र० : सेवकोंको अपने-अपने कामोमें आजीवन रुचि कैसे पैदा हो सकती है?

उ० : इसका उत्तर तो 'गीता'-माताने दे दिया है — *अभ्याससे, महावरेसे*।[1]

प्र० : क्या अपरिग्रही व्यक्ति ट्रस्टी हो सकता है?

उ० : हाँ, हो सकता है। इसमे कोई सैद्धान्तिक विरोध तो नही है। (एक सदस्यकी शंकाके उत्तरमें) अगर विनोबाजीके विषयमें मैंने भिन्न राय दी है, तो उसका कारण व्यक्तिगत होना चाहिए।

प्र० : डॉ० अम्बेडकरके रुखके विषयमें आपकी क्या राय है?

उ० : डॉ० अम्बेडकरकी जगह अगर मै होता, तो मुझे भी इतना ही क्रोध आता। उस स्थितिमे रहकर शायद मैं अहिंसावादी नही बनता। क्रोधवश मनुष्य चाहे जो कर डालता है। डॉ० अम्बेडकर जो-कुछ करे, हमें नम्रतासे सहना चाहिए। इतना ही नही, बल्कि हरिजनोकी सेवा इसीमे है। अगर वे हमें सचमुच जूतोसे मारे, तो भी हमे सहन करना चाहिए। पर उनसे डरना न चाहिए। डॉ० अम्बेडकरकी कदमबोसी करके उन्हे समझानेकी भी जरूरत नही। इससे कुसेवा होगी। वे या अन्य हरिजन, जो हिन्दू धर्म पर विश्वास न रखते हो, यदि धर्मान्तर करे, तो वह भी हमारी शुद्धिका ही कारण होगा। हम इसी योग्य है कि हमारे साथ ऐसा व्यवहार हो। हमारा तो केवल यह काम है कि सावधान होकर शुद्ध बन जाये। खुशामदकी कोई जरूरत नही। इसलिए मैंने उनकी घोषणापर दुःख प्रकट किया और आत्म-शुद्धि करनेको कहा। इससे अधिक कुछ नही किया।

प्र० : आपके मतमें और समाजवादमें कौन-सी समानता और भेद है?

उ० : समानता तो काफी है। 'सबै भूमि गोपालकी' बन जाये यह तो मैं भी चाहता हूँ। सब सम्पत्ति प्रजाकी है, यह भी मैं मानता ही हूँ। भेद यह है कि वे लोग मानते है कि इसका प्रारम्भ हम सब एक साथ करे। मैं कहता हूँ, अपने

१. भगवद्गीता, अध्याय ६, श्लोक ३५।

व्यक्तिगत आचारमे तो इसका प्रारम्भ हमे तुरन्त कर देना चाहिए। यदि हमारी ऐसी श्रद्धा है, तो कमसे-कम हम अपनी निजी जायदाद तो समाजको अर्पण कर दे। एक भी कौडी जबतक कोई रखेगा, तबतक वह समाजवादी नही है। वे कानूनसे काम लेना चाहते हैं। कानूनमें दबाव होगा। आज वे यह सब जो कहते नही हैं, इसका कारण तो यह है कि यह उनके वसकी बात नही है—असमर्थ साधु हैं। कम्युनिस्ट—समाजवादी जबरदस्ती करना चाहते हैं। पर वे लाचार हैं। हम डेमोक्रैट, जनसत्तावादी हैं।

प्र० : पं० जवाहरलालजी और आपके विचारोंमें क्या भेद है?

उ० : भेद तो काफी है, और वह जाहिर भी है। हमारे बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ था, उसमे बताई हुई स्थिति आज भी कायम है।[1] लेकिन विचार-भेदको जानते हुए भी, हम एक-दूसरेका आदर करते है। और जहाँ तक हो सके, साथ-साथ काम करना चाहते है।

प्र० : सेवकोंकी अपनी व्यक्तिगत सेवाकी मर्यादा क्या हो?

उ० : इसका बडा अच्छा नियम तो "त्यजदेकं कुलस्यार्थे"[2] इस श्लोकमें मिल जाता है। व्यक्तिकी सेवा वही तक करे, जहाँ तक समाजकी सेवाका विरोध न हो। मेरा लड़का बीमार है, माँ बीमार है, या पत्नी बीमार है, और मुझे लखनऊमे अध्यक्ष बनने जाना है तो मै लड़केको, माताको और पत्नीको भाई आदिके सिपुर्द करके चला जाऊँगा।

प्र० : क्या अहिंसक लोग निर्जीव अण्डा खा सकते हैं?

उ० : यह व्यक्तिगत चीज है। जिसे कोई आपत्ति न हो वह खाये। इसमे तटस्थ वृत्ति रखनेकी वजह तो यह है कि आज हिन्दू लोग अहिंसाकी व्याप्ति केवल खाने-पीने तक ही मानते हैं। मैंने इसे गौण स्थान दिया है। अगर यह कहे कि हमे तो जीनेके लिए यह करना पड़ता है, तब तो एक निवाला भी खाना हिंसा है। इस विषयमे सबके लिए सर्वसाधारण नियम नही बना सकते। मैंने अपने हाथो आश्रममें रहते हुए आश्रमके लड़कोको कॉडलिवर आइल पिलाया है। डॉक्टरके नुस्खेमे तो शराब या मास बार-बार आता ही है। आजकल तो ग्रन्थियाँ (ग्लैंड) देने लग गये हैं। पूछनेपर डॉक्टर लोग मनु महाराजका हवाला देकर मरीजको जिन्दा रखनेके लिए झूठ बोल देते हैं। सारे ससारमे धार्मिक दृष्टिसे मासाहारसे परहेज करनेवाले केवल हिन्दुओंमे ही हैं। उनमे भी कुछ वैश्य, जैन और कुछ थोडेसे ब्राह्मण। क्या मुसलमान, पारसी आदिका हम त्याग करे? मैंने मांसाहारी अहिंसक और निरामिप-भोजी हिंसक भी देखे हैं। कुछ तो मासाहार इसलिए नही करते कि उनको उसमे रुचि ही नही है, सस्कार नही है। मैंने जब कर्त्तव्य समझकर मास खाया, तो मेरे

१. देखिए खण्ड ५५, पृ० ४४६-५० तथा परिशिष्ट १४।
२. त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनापदस्यार्थे आत्मर्थे पृथिवीं त्यजेत्॥

बुरे हाल हुए थे। निरामिषाहारी अभिमान न करे। अहिंसा एक अनोखी चीज है। वह भावनाका विषय है, सिर्फ बाहरी आचारका नही।

प्र० : दरिद्र औरतोंकी सन्तान-वृद्धि रोकनेके लिए क्या उपाय करना चाहिए?

उ० : हमारा तो कर्त्तव्य यही है कि उन्हे संयमका धर्म ही समझाएँ। कृत्रिम उपाय तो मर जाने जैसी बात है। और मैं नही समझता कि देहाती स्त्रियाँ उन्हे अपनायेंगी। प्रेमाबहन तो खुद ही एक विकाररहित चित्तवाली कुमारिका है। स्वयं ब्रह्मचारिणी है इस विश्वाससे उसे काम करना चाहिए। उसके जैसी स्त्रियोका काफी असर होगा। उनके बच्चोंके लिए दूध प्राप्त करनेकी चेष्टा करनी चाहिए।

प्र० : सन्तति-निरोधके लिए स्त्रियाँ तो संयम करना चाहें, पर पुरुष बलात्कार करें, तब क्या किया जाये।

उ० : यह तो सच्चे स्त्री-धर्मका सवाल है। प्रेमाबहनने उसको जान लिया है। सतियोंको मैं पूजता हूँ। पर उन्हे कुएँमे नही गिराना चाहता। स्त्रीका सच्चा धर्म तो द्रौपदीने बताया है। पति अगर गिरता हो, तो स्त्री न गिरे। स्त्रीके संयममें बाधा डालना शुद्ध व्यभिचार है। यदि वह बलात्कार करने आये, तो उसे थप्पड़ मारकर भी सीधा करना उसका धर्म है। व्यभिचारी पतिके लिए वह दरवाजा बन्द कर दे। अधर्मी पतिकी पत्नी बननेसे उसे इनकार करना चाहिए। हमें स्त्रियोके अन्दर यह हिम्मत पैदा कर देनी चाहिए।

प्र० : मध्यम वर्गकी स्त्रियोंका सन्तति-निरोधके विषयमें क्या कर्त्तव्य है?

उ० : मध्यम वर्गकी हो या बादशाही वर्गकी हो, भोग भोगना हमारे हाथमें है। लेकिन परिणामके बादशाह हम नही बन सकते। सिद्धि होगी या नही, यह शंका करना हमारा काम नही है। हमारा काम तो सिर्फ यही है कि सत्य धर्म सिखायें। मध्यम श्रेणीकी स्त्रियाँ नये-नये उपाय काममें लाये, तो हमें मना करना चाहिए। संयम ही एकमात्र उपाय हो सकता है। प्रेमाबहन अपना उदाहरण उनके सामने पेश करे। इसपर भी वे न मानें तो सन्ततिको बर्दाश्त करे।

प्र० : पतिको उपदंश (सिफलिस) जैसा कठिन रोग हो तब स्त्री क्या करे?

उ० उस हालतमें सन्तति-निरोधके उपायोसे भी स्त्रीका बचाव नहीं हो सकता। ऐसे पतिको क्लीव ही समझकर उसे दूसरी शादी कर लेनी चाहिए। पर इसके लिए स्त्रियाँ इतनी विद्या सीख ले जिससे वे स्वावलम्बी बन जाये।

प्र० : आप समाजवादियोंकी तरह 'सबै भूमि गोपालकी' तो मानते हैं। लेकिन आज तो एक आदमी जमीन जोतता है और दूसरा उसे चूसता है। इस हित विरोधको हम अहिंसा द्वारा हल करना चाहते है। और धन कमानेमें तो पाप करना ही पड़ता है। ऐसी हालतमें क्या धनिकोसे आर्थिक सहायता लेना पाप नहीं है।

उ०. हमारे लिए तो तत्त्वको पूरी तरह केवल जान लेना भर शक्य है। उस धर्मका पूरा-पूरा पालन तो केवल परमात्मा ही कर सकता है। हम अपूर्ण और

मर्यादित आत्माएँ है। इसलिए मै धन कमानेको अधर्म मानते हुए भी धनिकोसे धन ले लेता हूँ। जबतक मेरा यह खयाल है कि ऐसा करके मै धनिको और समाजकी सेवा ही करता हूँ, तबतक इस तरह धन लेना मै दोष नही समझता। और तबतक मै समाजवादीका मुकाबला भी कर सकता हूँ। लेकिन उसकी दलीलोका उत्तर तो मुझे मूक सेवा द्वारा ही देना होगा। जो यह मानते हो कि धनिकोसे पैसा नही लेना चाहिए, उनके लिए वही कर्त्तव्य है। पर सबके लिए वह धर्माधर्म है। मै तो शरीर-श्रमके लिए पागल हूँ। इसमे सब-कुछ आ जाता है। "सुज्ञेषु किं बहुना?"

गांधी सेवा संघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० ५९-६३

२६९. एक पत्र[1]

[५ मार्च, १९३६ या उसके पूर्व][2]

मै तो उत्सवमे शामिल होनेकी पूरी आशा कर रहा था, लेकिन ईश्वरकी इच्छा कुछ और ही थी। वैसे मेरे आने-जानेपर लगा प्रतिबन्ध कुछ-कुछ हटा लिया गया है, फिर भी मुझे किसी भी सार्वजनिक कार्यक्रममें शामिल होनेकी मनाही है। दिल्ली जा सकता था तो गुरुकुल भी आ सकता था। लेकिन वहाँ मै किसी काम से नही, बल्कि आराम करनेके लिए जा रहा हूँ और यह आशा करता हूँ कि मेरी असमर्थताको गुरुकुलके सभी लोग समझेगे और इसके लिए क्षमा करेगे। मै यह आशा भी करता हूँ कि मेरी वहाँ आनेकी असमर्थतासे गुरुकुलको लोगो द्वारा दिये जानेवाले दान और अन्य प्रकारकी सहायतामें कोई कमी नही आयेगी। गुरुकुल ऐसे दान और सहायताका बहुत बड़ा पात्र है। उसे मेरी शुभकामनाएँ तो सदासे प्राप्त ही रही है। मै तो नही आ सकता, लेकिन मुझे इस बातकी खुशी है कि सरदार पटेल वहाँ जा रहे है। उनके जानेका मतलब मेरा जाना ही है, क्योकि वे मेरी ओरसे वहाँ मेरा पूर्ण प्रतिनिधित्व करने जा रहे है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ५-३-१९३६

१ और २. ५ मार्च, १९३६ के महादेव देसाईके तारके अनुसार, जहाँसे यह पत्र लिया गया है, आचार्य देवशर्मा गांधीजीसे गुरुकुल कांगड़ीके दीक्षान्त समारोहमें शामिल होनेका आग्रह करने के लिए खास तौरपर सावली गये थे। सम्भवत यह पत्र आचार्य देवशर्मा की मार्फत भिजवाया गया था। देखिए "सन्देश: गुरुकुलके दीक्षान्त समारोहके अवसर पर", ९-३-१९३६ के पूर्व भी।

२७०. पत्र : प्रभावतीको

सावली
[५ मार्च, १९३६][1]

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। उक्त पत्र पढकर मैंने फाड दिया। मै देखता हूँ कि तू अब परेशान होने लगी है। किन्तु यह याद रख कि सुख-दुःख मनकी तरगे है। दुःखको दुःख मानना ही नही चाहिए। भगवान्का विस्मरण ही दुःख है। हाँ, यदि जयप्रकाशकी इच्छा हो और तू उसकी किसी प्रकारकी सेवा कर सकती हो तो उसके साथ अवश्य घूमना। उसे नियमित रूपसे दवा देना, भोजन देना और उसके सामानकी देख-भाल करना, यह सब सेवा ही है। और इस प्रकार जितना अनुभव मिल सके उतना प्राप्त करना। यदि पटना-जैसी जगह जाये तो वहाँ तुझे अपने सम्बन्धियोसे अवश्य मिलना चाहिए। ऐसे सभी काम रसपूर्वक किन्तु तटस्थ भावसे करने चाहिए। यदि तू अपनी तबीयत बिगाड़ेगी तो उससे मुझे दुःख ही होगा। अपनी खुराकका ध्यान रखना। तुझे जो अनुभव प्राप्त हो सो मुझे लिखना।

कल हम सावलीसे रवाना हो जायेंगे। आज यहाँ कृष्णदासका[2] विवाह सम्पन्न हो गया। दोनो हर तरहसे बिलकुल सादे थे। रोज पहननेवाले कपड़ोके सिवा उन्होने और कुछ नही पहना था। किसी तरहकी भेंट आदि नही थी। इतना सादा विवाह तो मैंने देखा ही नही।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

हम ८ तारीखको दिल्ली पहुँच जायेंगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३१२) से।

१. बापुना पत्रो-१०: श्री प्रभावतीबहेनने, पृ० ७८ के आधारपर।
२. छगनलाल गांधीके पुत्र जिनका विवाह मनोज्ञा देवीके साथ सम्पन्न हुआ था।

२७१. पत्र : अनसूया साराभाईको

५ मार्च, १९३६

चि० अनसूया बहन[1],

तुम्हारा पत्र तुम्हे शोभा देता है।

हाँ, तुम्हारी दी गई लुटिया मैं प्रेमपूर्वक इस्तेमाल कर रहा हूँ और शीशा भी। क्या तुम जानती हो ये चीजे कहाँकी है? उस्तरा इस्तेमाल करनेका अवसर नही आया। इस कारण बात तो केवल भविष्यकी है। यह तो मै जानता हूँ कि धातुओकी चादरे बाहरसे आयात होती हैं। किन्तु यह लुटिया तो जर्मनीमे बनी हुई है। अभी फिलहाल चादरोका आयात तो होता ही रहेगा, किन्तु करोडोके मूल्यके बर्तन तो यही बनने चाहिए। अगर जर्मन सिल्वरकी चादरे नही आ सकती तो हमे उसके बिना ही काम चलाना चाहिए। पीतलके बर्तनो पर कलई चढा सकते है या कुछ और उपाय ढूँढ सकते हैं। मतलब तो इतना ही है कि प्रत्येक वस्तु खरीदते समय हमें ग्रामवासियोका ध्यान रखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कल सावलीसे रवाना हो जाऊँगा और ८ ता० को दिल्ली पहुँचनेकी आशा रखता हूँ।

मूल गुजराती (जी० एन० ११५६२) से।

२७२. पत्र : रामनरेश त्रिपाठीको

वर्धा
५ मार्च, १९३६

भाई रामनरेशजी,

आपका खत मिला है और सटीक मानस भी। आजकल आरामके दिनोमें रोज आध घटा रामायण सुनता हू। तीन दिनसे आपकी पुस्तक पढता हूं। जो प्रसंग चल रहा है सो तो पढ़ता ही हूं। और भूमिकासे आरभ किया है। अब जीवनी चलती है। मेरी तो आपके अनुवाद पर श्रद्धा है।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री रामचरितमानस मे प्रकाशित अनुकृतिसे।

१. अम्बालाल साराभाईकी बहन और अहमदाबाद मजदूर आन्दोलन की नेता।

२७३. पत्र : कृष्णचंद्रको

सावली
५ मार्च, १९३६

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा पत्र मिला। अच्छा किया। अब थोड़ा खत लिखता हु। खट्टी चीजोसे जो परिणामका तुमको अदेशा है ऐसा कुछ हुआ देखा नही है। हा लेकिन दूध-घीके त्यागसे ऐसे होता है सही। फिर भी खट्टी चीज थोडे दिनोके लिये छोडकर अनुभव ले लो। बधकोषके लिये कच्चा लसुन एक तोला तक खानेके समय खाकर देखो। इससे बहुत लाभ होता है, ऐसा मैंने प्रत्यक्ष अनुभव करके देखा है। नीमके पते मत छोडो। उससे हानि होनेका तो सभव ही नही है।

तुमारा कार्यक्रम आजकल क्या रहता है?

मैं ८ तारीखको दिल्ही पहोचनेकी आशा रखता हू।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८४) से।

२७४. भाषण : गांधी सेवा संघकी बैठकमें – ५

सावली
५ मार्च, १९३६

दो दिनसे मै आप लोगोमे से हरएकसे परिचय करनेका प्रयत्न कर रहा था। पर निष्फल हुआ। मेरी इच्छा थी कि एक-एकसे मिलता और उनकी शकाओका समाधान करता। इससे उनका भी समाधान होता और मेरा भी। व्यक्तिगत रूपसे मिलनेका मुझे शौक-सा हो गया है। पर मैंने सोचा कि यदि मुझे काम करना है, तो इस मोहको छोड़ना चाहिए। आज लोगोने सयम करके उस मोहको छोडा, और किसीने मुझसे मिलनेका प्रयत्न नही किया। मुझे उसे परिश्रमपूर्वक छोडना पडा।

आज मुझे बडा सयम करना पडा। कृष्णदासके विवाहमें मैं बोल न सका, इसका मुझे दुख हुआ। इस नव-दम्पतिको मैंने दो शब्द भी नही कहे। किसी दिन इस शरीरका वियोग भी सहन करना ही होगा। तो आजसे ही हम इसके लिए तैयार क्यो न हो? मेरा और आपका ऐसा स्थायी सम्बन्ध होना चाहिए कि जिस पर शारीरिक वियोगका कोई असर ही न हो।

अब प्रभुदासके प्रश्नोंके उत्तर देता हूँ।[1] वह पूछता है, हम दरिद्रोंसे एकरूप कैसे हो सकते हैं। इसका मतलब यह है कि वह प्रयत्न कर रहा है, लेकिन अभी सफल नहीं हुआ है। इसका निचोड़ यह निकलता है कि यह कष्टसाध्य वस्तु है। हम लोगोंने शहरी जीवन बिताया है। इसलिए शहरी जीवनकी कुछ इच्छा रह गई है। दूसरी ओरसे ग्राम-सेवाकी इच्छा बढ़ती जा रही है।

दरिद्रोंके साथ तादात्म्यका मैं कोई क्रम नहीं बना सकता, मेरे पास कोई क्रम है भी नहीं। विनोबाने कुछ बतलाया हो, तो मुझे पता नहीं है। स्थूल तादात्म्य कब और कितना होगा, बता नहीं सकते। किसीको पूरा हो सकता है, और किसीको आधा, और किसीको तो जन्मभर भी नहीं हो सकता। पर हमारे दिलमें तो ऐक्य कर लेना चाहिए। हार्दिक ऐक्यके बाद बुद्धि अपने-आप ही वैसी हो जायेगी। और उस दिशामें हमारी गति धीरे-धीरे हो जायेगी। सफलता मिलना न मिलना ईश्वरके हाथ है। इसकी मुझे परवाह नहीं। मुख्य वस्तु प्रयत्न है।

उसका दूसरा प्रश्न है कि क्या हर १५ रुपयेमें से ४ रुपये मासिक किसी दरिद्र व्यक्तिको पहुँचानेके लिए खर्च करनेका नियम बनाया जाये? मुझसे ऐसा नियम नहीं बन सकता, और न वह आवश्यक ही है। रुपये देनेपर भी निश्चित रूपसे नहीं कह सकते कि हमारा उनका समभाव हो गया। बाहरी वस्तु भीतरी बातका प्रमाण नहीं है। राज्यके द्वारा अगर ऐसा कानून बनाया जाये, तो लोग उसमें से छूटनेकी कोशिश करेंगे।[2]

प्रश्न : ग्रामवासियोंके आर्थिक शोषणको मिटाकर जबतक उन्हें प्रत्यक्ष अर्थ-लाभ न कराया जाये, तबतक वे हमारी तरफ उदासीन भाव ही रखेंगे। उनका सबसे विकट प्रश्न आर्थिक शोषणका है। उसमें हम ग्रामीणोंकी क्या सहायता करें?

उत्तर : हमें जो ये उलझनें होती हैं, उसका कारण यह नहीं है कि देहाती हमको समझते नहीं, बल्कि यह है कि हम उन्हें समझ नहीं सकते। यह दुःखकी बात है। मैं भी मेरे विचार अभीतक अच्छी तरह नहीं समझा पाया हूँ। हमारा काम अभी नया है। अभी एक वर्ष भी नहीं हुआ। जनताकी सेवा करनेके लिए अभी हमारे पास पूरा अनुभव भी तो नहीं। मैं स्वयं अभी देहातमें नहीं बैठ सका। लेकिन अनुसंधान किया है। कुछ पूर्व प्रयोग किये हैं। दक्षिण आफ्रिकामें लाखों देहातियोंके

१. पहले विनोबाजीने ४ मार्चको इन प्रश्नोंका उत्तर दिया था। गांधीजीने ५ मार्चको प्रवचनके बाद इन प्रश्नोंका उत्तर दिया।

प्रश्न १ : हममें से जो लोग आज तक तो मध्यमवर्ग का जीवन बिताते आये हैं, परन्तु अब दरिद्र वर्ग से एकरूप होना चाहते हैं, वे किस क्रम से अपने जीवनमें परिवर्तन करें, जिससे निश्चित रूप में ३ या ४ वर्ष में वे उन दरिद्रों से एकरूप हो जायें?

प्रश्न २ : मध्यम अथवा उच्च वर्ग के लोग दरिद्रों से अपनी सद्भावना किस तरह प्रकट कर सकते हैं? क्या इस प्रकार का कोई नियम बनाना ठीक होगा कि संघ के सदस्य कोई ऐसा उपाय करें, जिससे उनके खर्च में से फी १५ रुपयेमें से ४ रुपये दरिद्रोंके घरमें सीधे पहुँच जाये।

२. इसके उपरान्त राजेन्द्र प्रसाद के एक प्रश्न को छोड़कर बाकी प्रश्न स्वामी आनन्द ने पूछे थे।

बीच रहा हूँ। उनकी कठिनाइयोका मुझे अनुभव है। मेरा एक यह भी अनुभव है कि हम देहातियोमे विश्वास नही पैदा कर सके, इसके कारण हमने नही सोचे है। उन कारणोको हमे ढूँढना हैं। हम इस आशासे काम करते है और खर्च करते है कि देहाती हमारी बात मान लेगे। जब हम उन्हे समझा जायेगे तब वे भी हमें चिपक जायेगे। तबतक हम उनकी सफाई करे, दो-चार औषधियाँ बाँटें और आरोग्यके नियमोका ज्ञान दे। वैद्यराज बनकर न जायें। हमने औषधि दी और उसे मिल गई, बस इतनेसे ही सन्तोष मान ले। अधिक फलकी आशा न करे। आर्थिक मदद हम दें या न दे, लोग उदासीन रहे या न रहे, इससे हमें कोई मतलब नही। मैंने तो ग्राम-सेवकोसे कई बार कहा है कि तुम निराश क्यो होते हो? हम तो भगी होकर गये है न? भगीको तो जूठनसे भी सतोष हो जाता है। इसी वृत्तिसे हम भी जायें। वे गाली दें तो सुन ले। मारपीट करे तो वह भी सह ले। यह बात नही कि उनकी आर्थिक स्थिति ठीक नही है, इसलिए वे नही आ रहे है। पैसे देनेपर भी वे नही आयेगे। पैसे भी लेगे और सफाईका काम भी लेंगे। बस, हम इस तरह काम करें कि बीमारोको दवा दें, लोग जहाँ टट्टी जायें, जाने दें। उनसे यो भी न कहें कि बहन यहाँ न जाओ, वहाँ जाओ। चुपचाप साफ कर ले। यही अहिंसा है। उनके आरोग्यकी रक्षा करना, उसका मार्ग बताना और सफाई करना यही मार्ग है। किसी-न-किसी रोज वे समझ जायेंगे। यदि इसका असर न हुआ, तो अहिंसा-जैसी कोई चीज ही नही है।

प्रश्न: इसके अलावा भी कुछ करनेकी आवश्यकता है या नहीं?

उत्तर: अगर हम कर सके तो करें, लेकिन दोनोमे सम्बन्ध जोड़नेकी आवश्यकता नहीं है। दोनो स्वतन्त्र सेवाएँ है। अगर अर्थलाभ होनेवाली सेवा न भी कर सकें, तो पहली तो करे ही। और इससे अधिक हमसे न हो पाये तो चिन्ता नही।

प्रश्न: देहातियोंको उनकी जरूरतकी चीजें किफायतसे मिलें इस गरजसे क्या कोई ग्रामसेवक दूकान खोलकर उसमें पान, बीड़ी, तमाखू, मछली, चाय आदि चीजें भी रख सकता है?

उत्तर: ग्रामवासियोकी जेबमे एक पैसा भी अधिक पहुँचानेकी गरजसे हम सब उपाय काममे ला सकते है। लेकिन यह ग्राम-सेवककी अपनी शक्ति और दक्षतापर निर्भर है कि वह दूकान खोले या नही। मै यह निश्चित नियम बनाकर नही दे सकता कि ग्राम-सेवक अपनी दूकानमें किन-किन चीजोको बेचे? प्रत्येक सेवक अपनी शक्तिका विचार करके अपनी मर्यादा स्थिर कर ले। देहाती दूकानवालोके साथ मुकाबला करना होगा और देहातियोकी आदतोका भी विचार करना होगा। अगर मै चला जाऊँ और देखूँ कि तमाखू और बीडीके सिवाय काम नही चल सकता, तो मै इन चीजोको भी बेचूँगा, हालाँकि मै तमाखूको शराबसे भी खराब मानता हूँ। हजारों बरसकी आदत एक दिनमें नही मिटेगी। मैंने तमाखू-बीडी छुड़ानेका काम नही किया है। आदर्श एक वस्तु है, व्यवहार दूसरी बात है, और दूसरे लोग क्या कर सकते है यह तीसरी बात है।

प्रश्न: तो क्या आप शराब भी बेचेंगे?

उत्तर: नही, शराब नही बेचूंगा। जिस चीजसे देहाती नफरत करते है और खुद पीनेवाला भी जिसे बुरा समझता है, वह उसे नही दूंगा। लेकिन अगर मैं विलायतमे चला जाऊँ और मैं उसे छुड़ा न सकूँ, तो बेचूँगा। और कोई मछली खानेवाले है, या मास खानेवाले है, और साफ चीज चाहते है, तो वे भी अपने हाथसे दूंगा।

मेरे कहनेका शब्दार्थ लेकर कोई अर्थका अनर्थ न करे। जिस चीजको लोग बुरा समझते है, उसे छुडानेकी कोशिश तो करता ही रहूँगा। पर जबतक छुड़ा नही सकता, तबतक वह उनको दे दूंगा और अपना काम करता रहूँगा। दूकान खोलना बड़ी कठिन बात है। लक्ष्मीदास-जैसा चतुर आदमी तो बहुत-कुछ कर सकता है। ग्राम-सगठनका रास्ता बडा ही विकट है। इसका कोई राज-मार्ग नही है। जो हृदयसे सेवा करेगा, उसे सच्चा मार्ग मिल जायेगा।

प्रश्न: क्या गाँवोमें बनी हुई या पैदा होनेवाली चीजोके लाने, ले जानेके लिए हमें मोटर लारियोके बजाय बैलगाड़ियोसे ही काम नहीं लेना चाहिए?

उत्तर: इस प्रश्नने मुझे परेशान कर दिया है। मेरे पास इसका ऐसा कोई उत्तर नही जो आपके हृदयको स्पर्श कर सके। आपसे तो इतना ही कहना है कि मैं लाचार हूँ। मोटर दिनो-दिन देहातोपर चढाई करती जा रही है। इसमे गोसेवाका प्रश्न है। हमे श्रद्धापूर्वक प्रयत्न करना चाहिए। मैं आपसे सिद्धान्त कह दूं? अगर हम गो-सेवाको अच्छी तरह समझनेकी कोशिश नही करेंगे, तो गाय भी खाने लग जायेंगे। आज भी अगर डॉक्टर सलाह दे, तो लोग दवाके रूपमे गोमास खाने लग जायेंगे। भैंसके दूधसे आप अपना काम चला ही नही सकते। मैंने तो वैष्णव कुलोमे भी दवाके नामपर गोमास खाते हुए देखा है। पर याद रहे, अगर गाय मर जाये तो हम भी मर जायेंगे। मोटर देहातपर चढाई कर रही है। अगर यही होता रहा, तो हिन्दुस्तान दक्षिण आफ्रिका बन जायेगा। मैं तो छोटे-छोटे खेतोका भी पक्षपाती नही हूँ। लेकिन यह भी नही चाहता कि बीस-बीस पचीस-पचीस हजार एकड़ जमीन किसी एकके पास हो। आज गो-सेवा मोटरसे महँगी है। लेकिन यह प्रश्न तो वैसा ही है, जैसा खादीका था। दो आने गजकी खद्दर सत्रह आने गज मैंने बेची है। मैं तो आदर्शकी बात कहता हूँ। हमारा तो यही कर्त्तव्य है कि श्रद्धासे काम करते रहे।

राजेन्द्र प्रसाद: लेकिन क्या यह सिद्ध है कि मोटरसे कम खर्च पड़ता है?

उत्तर: बिलकुल नहीं, सस्ते-महँगेका प्रश्न झूठा है। माँग और पूर्तिका कानून मानवी नही राक्षसी है।

प्रश्न: क्या आपको स्वदेशीकी व्याख्याके अनुसार अहमदाबादका चावल और खण्डवाका गेहूँ बम्बईमें मँगवाना ठीक होगा? क्या यह जरूरी नहीं कि हर चीजपर अधिकसे-अधिक लाभकी मात्रा नियत कर दी जाये?

उत्तर: लाभकी मात्रा और स्थल दोनोकी मर्यादा बनानी चाहिए। पूरा चावल बम्बईसे मँगाकर यहाँ हम न खाये। सीताराम शास्त्री चावल बम्बई भेजते है। पर असलमे उन्हे गुण्टूर भेजना चाहिए। न्याय तो यह है कि चावल जहाँ हो वही उसे काममे लाना चाहिए। मेरी स्वदेशीकी परिभाषा है तो पुरानी, लेकिन सच है। उसके अनुसार काम करते हुए ही हम एक नया अर्थशास्त्र बना लेगे। सच्चा अर्थशास्त्र वही है जो नीतिसे चलेगा। इसमे निष्फल हो तो भी, मानो कि सफल हुए।

प्रश्न: ग्राम-सेवक ग्रामीणोंसे काम लेनेके बजाय मध्यस्थ लोगों (आढ़तियों, एजन्टों, दलालो)का उपयोग करते हैं। क्या यह ठीक है?

उत्तर· जहाँ तक हो सके सीधा काम लेना चाहिए।

प्रश्न: पूरा [हाथकुटा] चावल, हाथ-पिसा आटा, तेल आदि शहरोंमें भी बनवाये जा सकते हैं। क्या इसे ग्रामोद्योग कहेंगे?

उत्तर· आज आहार-सुधारके नामपर दिशा-भूल हो रही है। दूध देहातमें काफी नही मिलता। इसलिए डॉ० तिलक कहते है कि बम्बईसे सूखा दूध मँगाकर खाओ। यह भयकर वस्तु है। ऐसा हरगिज न करे। गाँवोके शोषणको हर तरहसे हमे रोकना चाहिए। देहातियोको समझाना चाहिए कि वे दूध न बेचें।

गांधी सेवा संघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० ६७-७०

२७५. भाषण: गांधी सेवा संघकी बैठकमें – ६[1]

सावली
६ मार्च, १९३६

प्रश्न: गत वर्ष देशी रियासतोंके विषयमें जो नीति आपकी सम्मतिसे संघ द्वारा निर्धारित हुई थी, उसके बारेमें क्या आपके खयालसे वह समय नहीं आ गया है कि जब संघ देशी राज्योंके कामकी ओर अधिक ध्यान दे और उसके लिए जोरदार प्रयत्न करे?

उत्तर: मैंने क्या स्वीकार कराया था वह तो भूल गया हूँ। लेकिन इस विषयमें मेरी जो नीति रही है, उसका मुझे ठीक-ठीक पता है। इस विषयमें जोरदार प्रयत्न तो अवश्य करना चाहिए। परन्तु मैं कैसे बताऊँ कि जोरदार किसे कहा जाये? राज्य द्वारा जो-कुछ हो सकता हो उसे अच्छी तरह करनेमें तन्मय हो जाना, यही जोरदार प्रयत्न है।

प्रश्न: क्या उन राज्योंमें भी आपकी नीति वही सहयोगकी रहेगी, जहाँ प्रधान मन्त्री, सेनापति, पुलिस-अधिकारी आदि अंग्रेज या अंग्रेजोंके आदमी ही नियुक्त करके राज्यको अनेक अंशोंमें ब्रिटिश शासनका ही रूप दिया जा रहा है?

1. गांधीजीने सबसे पहले स्वामी आनन्दके बाकी बचे हुए प्रश्नोंके उत्तर दिये और उसके बाद देशी रियासतोंके विषयमें रामनारायण चौधरी के प्रश्नोंके उत्तर दिये।

उत्तर देशी राज्य अपने राज्यमे सारेके सारे कर्मचारी अंग्रेज ही रखें तो भी हमारी नीतिमे कोई परिवर्तन नही हो सकता। ऐसी हालतमे वहाँ जो कठिन परिस्थिति उत्पन्न हो जायेगी उसकी मै कल्पना कर सकता हूँ। लेकिन उसका कोई इलाज नही है। सभी अधिकारी अंग्रेज हो जाये, तो शासन तो राज्यके नामपर ही चलेगा न?

प्रश्न: आपके इस अभिप्रायमें अब कोई फर्क हुआ या नहीं कि देशी राज्योंके प्रश्नोंमें ब्रिटिश राज्यका हस्तक्षेप न हो? यदि नहीं तो आपने श्री मणिभाई और श्री जमनालालजीको ऐसा क्यों करने दिया?

उत्तर श्री जमनालालजीने तथा मणिलालजीने जो-कुछ किया वह मेरी सम्मति से ही किया है। पर इस विषयमे मेरी जो नीति थी, अब भी वही है। नीति द्वारा मै एक सिद्धान्त बनाता हूँ। पर उसके व्यवहारकी मर्यादा बाँधना नही चाहता। मै स्वय स्वप्नमे भी ब्रिटिश हस्तक्षेपकी इच्छा नही रखता। लेकिन कुछ अपवादात्मक प्रसग हो, तो उसमे जो हस्तक्षेप कराना चाहते है, उन्होने अपनी मर्यादा बाँध ली है। प्रत्येक व्यक्तिको अपनी मर्यादा बाँध लेनेका अधिकार है, और अगर मुझे कोई पूछनेके लिए आये तो उस व्यक्तिका खयाल करके उसके लिए भी मै मर्यादा बना सकता हूँ। किसीने मुझसे पूछा कि श्री जमनालालजी जो कर रहे है, क्या कोई दूसरा आदमी उसी हालतमे कर सकता है? मैने जवाब दिया कि जमनालालजीको लेकर मेरे पास आओ तब जवाब दूंगा। जो आदमी परिस्थितिको अच्छी तरह जानता है, वही इस बातका विचार करके मर्यादा कायम कर सकता है कि अमुक परिस्थितिमे सिद्धान्तकी मर्यादा क्या होनी चाहिए। उसका वर्ताव दूसरेके लिए दृष्टान्त रूप नही हो सकता। उसमे उस व्यक्तिकी योग्यताका भी खयाल होता है। जमनालालजी और मणिलालजीको जाने देनेमे हस्तक्षेप करानेका उद्देश्य नही था, इतना मै कह सकता हूँ। लेकिन मान लिया जाये कि सिद्धान्तको छोड दिया। तो भी उसे दृष्टान्त बनानेके लिए नही, बल्कि मेरी त्रुटिके कारण समझिए। जो दृढ हो वह सिद्धान्तका ही अनुसरण करे।

हिंसक और अहिंसक प्रवृत्तियाँ एक साथ चल रही है। ईश्वर उनका द्रष्टा है। जनता परिणाम देखती है। हम हेतु देखेंगे। अहिंसाका जिस तरह अमल मैं करता हूँ वह नई-सी चीज मालूम होती है। जैनोने और बौद्धोने भी अहिंसाके प्रयोग किये। लेकिन वह आहारमे मर्यादित हो गई है। राजनीतिक और सामाजिक कामोमे भी हिंसक और अहिंसक दोनो शक्तियाँ प्रेरक हो जाती है। बाह्यत उनके स्वरूपमें फर्क नही दीख पडता, पर हेतुमे होता है। हर चीजमे इस बातको ध्यानमें रखे तो हानि न होगी, और कठिनाइयाँ भी न रहेगी।

प्रश्न: क्या देशी राज्योके ही प्रश्नोंकी चर्चा करनेवाले अखबार आपकी नीतिके अनुसार चलाये जा सकते है?

उत्तर. मुझे डर है कि ऐसे समाचारपत्र, मेरी नीतिके अनुसार नही चलाये जाते। परन्तु जिनका दृष्टिकोण ही भिन्न हो उनको मै किस तरह समझाऊँ। मेरी

दृष्टिमे देशी राज्योके लिए अलग पत्रोकी जरूरत ही नही है। हमारा काम अखबारोके जरिये नही होगा। मेरी तो सलाह है कि हम मौन धारण करके कार्य करे। देशी राज्योके अधिकारी जितना करने दें, उतना ही करे। ऐसा न कर सकें तो हट जाये। जितना ब्रिटिश भारतमे सिद्ध करेगे उतना ही वहाँ भी होगा। त्रैराशिकके हिसाब जैसी यह बात है। देशी राज्योकी प्रजा तो गुलामोकी गुलाम है। मेरी दृष्टिसे जो काम करते है, वे गुलाम थोड़े ही है, लेकिन अहिंसाकी दृष्टिसे काम करनेवालोको बहुत विचारसे चलना पडता है। वहाँ जो-कुछ बन पड़े हमे इसी दृष्टिसे करना चाहिए जिससे ब्रिटिश हस्तक्षेप हो ही न सके। देशी राज्योमें किये जानेवाले आन्दोलनसे हिन्दुस्तानको स्वराज्य हासिल न हो सकेगा। परन्तु ब्रिटिश हिन्दुस्तानमे स्वराज्य प्राप्त होनेपर देशी राज्योमे वह जरूर ही आ जायेगा। मौ० अबुल कलाम आजादने एक बार कहा था कि सारा देश गुरुद्वारा है। उसी समय मेरी बुद्धिमे यह बात आ गई कि सारा देश जेलखाना है। रियासतोमें तो डबल जेल है। जेलमें जैसी रियायतें मिल सकती है, वैसी रियासतोमे मिलती है।

मुझे आप लोगोसे दो बाते कहनी है। पहले भी अनधिकार रूपसे कही थी, आज भी अनधिकार रूपसे ही कहूँगा। मैंने दुखके साथ सुना है कि जो 'गाधी-विचार-समिति'[1] बनी थी, वह टूट गई। वह सघके प्रस्तावसे नही, स्वेच्छासे बनी थी इसलिए उसे टूटनेका अधिकार भी था। परन्तु सुनता हूँ कि वह इस खयालसे टूटी है कि इस समितिके विषयमे मेरी राय अनुकूल नही है। मुझसे पूछना तो था। मै तो पास ही पड़ा था। अगर कोई आदमी कहे कि बापू तो यह चाहते है, वह चाहते है, तो किसीका मत मानो। यह मेरा दुर्भाग्य है कि मेरी भाषामे से दो चार अर्थ निकाले जा सकते है। मै कोशिश तो करता हूँ कि मै ऐसी भाषा बोलूँ या लिखूँ कि उसमें से केवल एक ही अर्थ निकल सके। लेकिन भाषा लूला साधन है। और मै कोई भाषाका पण्डित नही हूँ। ऐसी शक्ति मै कहाँसे लाऊँ कि जो कुछ मेरे दिमागमें है, वह सब लिखकर रख दूं? मेरे शब्दोका भिन्न-भिन्न लोगोपर भिन्न-भिन्न असर पडता है। मेरा मतलब यह नही था कि मेरे विचारोका प्रचार करनेका काम आप करे ही नही। मै यह नही मानता कि मेरे विचारोको प्रकट करना धर्म है। पर मुझे यह मोह जरूर है कि मै अपने विचारोको सत्य मानता हूँ। और इस कारण मुझे यह भी मोह है कि उन्हे अपने साथियोको समझाऊँ। मुझमें उच्चारण-शक्ति भी है। तब अवश्य प्रचार-कार्य भी हो ही जाता है। मै अपने विचारोका प्रचार चाहता भी हूँ। पर मै समझ रहा था कि आप लोग आडम्बर कर रहे है। उसे मै टालना चाहता था। यह बात नही थी कि समिति कायम ही न हो। ऐसी मेरी राय नही थी। समिति हो, पर ऐसी हो कि जैसी मै चाहता हूँ। जब तक मै जिन्दा हूँ तब तक तो कह भी सकता हूँ। मुझे बोलना भी पडता है। तब ऐसी समिति होनेमें क्या हानि है? मेरे विचार और मेरी भाषाका प्रचार करनेमे यह

१. देखिए पृ० २३७।

समिति निमित्त रूप हो सकती है। इससे मैं चाहता हूँ कि यह समिति फिर बन जाये और अपनी मर्यादामें रहकर काम करे। भला यह कभी हो सकता है कि जिस काममें काकासाहब हो उसे मैं बुरा समझूँ? मुझे यह डर नहीं था कि समिति कोई बुरा काम करेगी। लेकिन मैं सावधान क्यों न करूँ? अगर यह भी मान ले कि मैं इस समितिके कामको मिटाना चाहता था, तो भी दूसरे सदस्य इस कामको मिटानेमें क्यों मेरे साथ हो गये, और अकेले काकासाहबको इस कामको अपनी जवाबदेही पर करना क्यों आवश्यक हुआ?

महादेवभाई : आपसे किसने कहा कि समिति मिट गई? वह तो सिर्फ स्थगित कर दी गई है। जब चाहे काम कर सकती है।

गांधीजी : मैंने जो-कुछ सुना उसपर से कहता हूँ। अगर नहीं मिटी है, तब तो खुशीकी बात है। काकासाहबने मुझे आश्वासन दिया कि वे स्वयं इस कार्यको करनेवाले हैं। पर अब तो समिति ही उन्हें इसमें सहयोग दे।

दूसरी बात जो मुझे कहनी है, वह संघके कार्यके साथ सम्बन्ध रखती है। मैंने जो यह कहा था न कि सब सेवक दिन-भर कुदाली लिये रहे और उस रातको दो-तीन घंटे चर्चा हो, सो इससे मेरा मतलब यह तो नहीं था कि संघको मिटा दें। इतने आदमी है, क्षमता भी रखते हैं, ऐसे मौकेपर मैं कुछ नहीं कहूँगा। मैं वृद्ध हूँ, मृत्युके नजदीक हूँ। स्मरण-शक्ति भी कम हो गई है। इसलिए जो याद आता है वह कह देता हूँ। मैंने जो-कुछ कहा आपके काममें प्रोत्साहन देनेके लिए कहा, आपकी वृद्धिके लिए कहा। मैं जो कहूँ उससे ऐसा न समझे कि वह (अर्थात् गांधी) चीजें करता है बल्कि [मातिए तू]-कुछ बताना चाहता है। उसमें से नई टीका ग्रहण करे। आज तो संघ सीधे रास्ते जा रहा है। उस समय उसको मिटानेकी बात मैं कहूँ इतनी मेरी बुद्धि क्षीण नहीं हुई है।

एक नई बात है, लेकिन समय रहेगा तो वह कहूँगा। पहले आगामी सम्मेलनकी बात लेता हूँ। आगामी सम्मेलन ऐसे स्थानपर हो जो रेलवेसे इतनी दूर न हो कि जहाँ पैदल या बैलगाड़ीसे न जा सके। मेरी तरफसे तो पचास मील भी हो तो कोई हर्ज नहीं। लेकिन तब यह शर्त हो कि सब पैदल ही जायें। सामान भी बैलगाडी पर जाये, मोटरपर नहीं। मेरे जैसे पंगू न आये तो न सही। लेकिन मैं तो जरूर आऊँगा। मुझे या तो बैलगाड़ी दे या कन्धेपर ले जाये। इसमें मुझे कोई शर्म नहीं है। हमें वहाँ जाकर उस देहातको बनाना है। ऐसा क्षेत्र ढूँढ ले कि जहाँ डाक्टर और इंजीनियर भी न हो। वहाँ अगर जलका कष्ट है, तो कुआँ बनायें। अगर गायें न हो तो गायें रखें। मेरे नजदीक तो यह आग्रह है कि हम गायका ही दूध पियें। दूधको हरगिज न छोड़े। गो-सेवाके बारेमें अपने दिलकी बात कहूँ तो आप रोने लग जायेंगे और मैं भी रोने लग जाऊँ। इतना दर्द मेरे दिलमें भरा हुआ है।

मैं तो कहूँगा कि गाय ही रखे। इतना भी आग्रह न हो तो हम भारतवर्षकी सेवा कैसे कर सकेंगे? जब मुझे कोई दुराग्रही कहता है तब मैं समझता हूँ कि हाँ, अब कुछ आग्रह है। मेरे नजदीक आग्रह तो यह है कि भैंसका नहीं गायका ही

दूध पिये और दूध न छोड़े। यह आग्रह करते-करते मै मर जाऊँ तो भी मुझे सन्तोष है। जहाँ गायका दूध हो, भाजी और शुद्ध पानी आदि पैदा कर सकते हो, ऐसा देहात ढूंढकर आजसे ही तैयारी करे। यह दूर भी हो तो कोई चिन्ताकी वात नही। आसपासकी जनताकी सेवा करेगे और प्रतिक्षण नया-नया अनुभव लेते रहेगे। मेरी दृष्टिसे जो शुद्धतम दृष्टि है वह मैने बता दी। अगर सम्मेलनको बुलाना हो तो आजसे ही तैयारी करे। देहातका पूरा निरीक्षण करे। बहुत दिनोसे हमारा पतन हो गया है। अपने उद्धारकी ताकत हमारे अन्दर नही है। काग्रेसका सब काम मेरी इच्छाके मुआफिक नही चल रहा है। यह कहकर मै काग्रेसकी टीका नही कर रहा हूँ। लेकिन जिस देहातका नाम भी आपने नही सुना ऐसे स्थानपर कभी काग्रेस [का सम्मेलन] करेगे?

अगले सम्मेलनकी तैयारीके लिए हमें ग्यारह महीने मिले तो भी अधिक नही है। जगह ऐसी हो कि जहाँ सेवकोको काफी काम मिल जाये। अगर वहाँ गायोकी कमी हो तो हम आसपासकी ले जायें, उनका वहाँ पालन करे और वहाँके लोग अगर उन्हे पालनेको तैयार हो तो उन्हे वही छोड दे, अन्यथा वापस ले जाये।

यदि हम इस प्रकार काम करें तो बहुत बडे व्याख्यानसे जो लाभ होता है, उससे कही अधिक लाभका अनुभव होगा। यह सब मै शुद्धतम आदर्शकी दृष्टिसे कहता हूँ। इसमे पैसेकी बात नही है। बुद्धिकी ही वात है। सम्मेलन बारह महीने बाद कराना है। मै सेगाँवमे आमन्त्रण दे सकता हूँ। लेकिन मुझे वैसा करने नही देते। जिसे सम्मेलन कराना हो उसे एक महीनेके अन्दर-अन्दर निमन्त्रण भेज देना चाहिए। वहाँ डॉक्टर, इजीनियर, बढई, राज वगैरहका काम हमें ही करना चाहिए। भैसका दूध आप कैसे बरदाश्त करते है, मै समझ नही सकता। इसलिए गायके दूध और सागका उचित प्रबन्ध होना चाहिए।

अब एक नई बात आप लोगोसे कहना चाहता हूँ। सोचा था कि विनोबा सुनाये। पर अब समय है तो मै स्वय कह देता हूँ। मेरा स्वभाव ही ऐसा है कि अच्छी बाते सबके साथ बाँट लेता हूँ। बातका आरम्भ तो बहुत-वर्षों पुराना है। छगनलाल उसका साक्षी हो सकता है। मै जुलू युद्धमें गया था। साल तो छगनलाल बता सकेगा।

छगनलाल गांधी: सन् १९०६।

गाधीजी. ठीक, उस वक्तकी बात है। और बडी बुलन्द बात है। देखो, ईश्वरका खेल इसी तरह चलता है। मेरा निश्चय हो गया कि जिसको जगतकी सेवा करनी है उसके लिए ब्रह्मचर्य पालन करना आवश्यक है। विवाहित दम्पतिको भी ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए। इससे मेरा मतलब यह था कि उन्हे प्रजोत्पादन-क्रियामे नही पडना चाहिए। मै यह समझता था कि जो प्रजोत्पादन करते है वे ब्रह्मचारी नही हो सकते। इसलिए मैने ब्रह्मचर्यका आदर्श छगनलाल आदिके सामने रखा। उस वक्त तो मै बिलकुल जवान था। और जवान तो सब-कुछ कर सकता है। मै आपसे कह दूँ कि आप सब ब्रह्मचारी बने, तो क्या वह होनेवाली बात है?

वह तो एक आदर्श है। इसलिए मैं तो विवाह भी करा देता हूँ। एक आदर्श देते हुए भी यह तो जानता ही हूँ कि ये लोग भोग भी करेंगे। प्रजोत्पादन और ब्रह्मचर्य एक दूसरेसे विरोधी है, ऐसा मेरा खयाल रहा।

पर गुरुवारको विनोबा मेरे पास एक उलझन लेकर आये। एक शास्त्र-वचन है, जिसकी कीमत मैं पहले नहीं जानता था। उस वचनने मेरे दिलमें एक नया प्रकाश डाल दिया। उसका विचार करते-करते मैं बिलकुल थक गया, उसमें तन्मय हो गया। अब भी मैं उसीसे भरा हूँ। ब्रह्मचर्यका जो अर्थ शास्त्रोंमें बताया है, वह अति शुद्ध है। नैष्ठिक ब्रह्मचारी वह है, जिसने जन्मसे ही ब्रह्मचर्यका पालन किया हो, स्वप्नमें भी जिसका वीर्य-स्खलन न हुआ हो। लेकिन् मैं नहीं जानता था कि प्रजोत्पत्तिके हेतु जो संभोग करता है उसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी क्यों माना गया है। कल यह बुलन्द बात मेरी समझमें आ गई। जो दम्पति गृहस्थाश्रममें रहते हुए केवल प्रजोत्पत्तिके हेतु ही परस्पर संयोग और एकान्त करते हैं, वे ठीक ब्रह्मचारी ही हैं। आज हम जिसे विवाह कहते हैं वह विवाह नहीं, उसका आडम्बर है। जिसे हम भोग कहते हैं वह भ्रष्टाचार है। यद्यपि मैं कहता था कि प्रजोत्पत्तिके लिए विवाह है, फिर भी मैं यह मानता था कि इसका मतलब सिर्फ यही है कि दोनोंको प्रजोत्पत्तिसे डर न मालूम हो, उसके परिणामको टालनेका प्रयत्न न हो, और भोगमें दोनोंकी सहमति हो। मैं नहीं जानता कि उसका इससे भी अधिक कोई मतलब होगा। पर यह भी शुद्ध विवाह नहीं है। शुद्ध विवाहमें तो केवल ब्रह्मचर्य ही है। शुद्ध विवाह कब कहा जाये? दम्पत्ति प्रजोत्पत्ति तभी करे जब जरूरत हो, और उनकी जरूरत हो तभी एकान्त भी करे। अर्थात् संभोग प्रजोत्पादनको कर्त्तव्य समझकर तथा उसके लिए ही हो। इसके अंतिरिक्त कभी एकान्त न करे। एकान्तवास भी न करें। यदि एक पुरुष इस प्रकार हेतुपूर्वक संभोगको छोड़कर स्थिरवीर्य हो, तो वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी के बराबर है। सोचिए, कि ऐसा एकान्तवास जीवनमें कितनी बार हो सकता है? वीर्यवान् नीरोग स्त्री-पुरुषोंके लिए तो जीवनमें एक ही बार ऐसा अवसर हो सकता है। ऐसे व्यक्ति क्यों नैष्ठिक ब्रह्मचारीके समान न माने जायें? जो बात मैं पहले थोडी-थोडी समझता था वह आज सूर्यकी तरह स्पष्ट हो गई है। जो विवाहित हैं, इसे ध्यानमें रखें। पहले भी मैंने यह बात बताई थी। पर उस समय मेरी इतनी श्रद्धा नहीं थी। उसे मैं अव्यावहारिक समझता था। आज व्यावहारिक समझता हूँ। पशु-जीवनमें दूसरी बात हो सकती है। लेकिन मनुष्यके विवाहित जीवनका यह नियम होना चाहिए कि कोई भी पति-पत्नी बिना आवश्यकताके प्रजोत्पत्ति न करें और बिना प्रजोत्पादनके हेतुके संभोग न करें।

गांधी सेवा संघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, ७८-८२

२७६. ग्राम-पुनर्निर्माण

सावली मध्यप्रान्तके चाँदा जिलेमे एक छोटा-सा गाँव है। इसमे हरिजनोकी आबादी बहुत है, जिनमें से ज्यादातर महाराष्ट्र चरखा संघके तत्त्वावधानमें होनेवाले खादीके उत्पादनमे लगे हुए है। २९ फ़रवरीसे ६ मार्च तक वहाँ गाधी सेवा सघके सदस्यो और कुछ अन्य कार्यकर्त्ताओका सम्मेलन हुआ। जिन लोगोको उसमें बुलाया गया, उन्हे हिन्दीमे निमन्त्रण-पत्र भेजा गया था और इस बातकी सूचना दे दी गई थी कि वे अपने साथ लालटेन, लिखने-पढनेका सामान, कार्ड, लिफाफे, उनपर लगानेके टिकट और नहाने-धोनेका साबुन लेते आये। साथ ही, यह बात भी उसमे थी कि वैसे तो सावलीमे किसी भी प्रकारका दूध मिलना मुश्किल है, लेकिन गायका दूध तो प्राय. मिल ही नही सकता। इसलिए जो लोग गायका घी ही खानेके आदी हो उन्हे अपने लायक घी भी साथमे लाना चाहिए। सावली पहुँचनेपर यह बात और मालूम हुई कि जो ३०० स्त्री-पुरुष वहाँ एकत्र हुए थे उनके लिए दूध तो ३४ मील दूर चाँदासे मँगाना पड़ता था और ताजी शाक-सब्जियाँ १२० मील दूर नागपुरसे आती थीं।

सावली तो उन गाँवोका एक नमूना है। जिन कठिनाइयोका ऊपर जिक्र किया गया है, वे तो वहाँके अधिकाश गाँवोमे मौजूद है।

हिन्दुस्तानमे गायकी पूजा होती है, पर अधिकाश गाँवोमे गायका दूध ही नही मिलता। यहाँ आबोहवा ऐसी है कि हर जगह शाक-सब्जियाँ पैदा हो सकती है, मगर अनेक गाँवोमे ताजा सब्जियाँ भी नही मिलती। ऐसी हालतमे हमारे हजारो दरिद्रताग्रस्त गाँवोमें लिखने-पढनेके सामानकी दिक्कत पेश आये तो कोई अचरजकी बात नही। गाँवोमे तो प्राय. निरक्षरताका ही राज्य है, और जो लोग लिख-पढ सकते है उनके पास इतने पैसे नही है कि उन्हे वे लिखने-पढनेके सामान और डाकके टिकटो पर खर्च कर सके। इस बातकी छानबीन करनेसे कोई लाभ नही कि क्या भारतके गाँव हमेशासे ऐसी ही हालतमे थे, जैसे वे आज है। अगर वे इससे अच्छे कभी भी न रहे हो, तो यह हमारी उस प्राचीन सस्कृतिके लिए लज्जाकी बात है जिसपर हम फूले नही समाते है। लेकिन अगर वे कभी भी अच्छे न रहे होते तो सदियोसे हम अपने चारो तरफ जो पतन देख रहे है, जिसका सावली तो सिर्फ एक नमूना है, उसमें वे टिक ही कैसे पाते?

हरएक देश-प्रेमीके सामने समस्या यह है कि वह इस पतनको किस तरह रोके, या दूसरी तरह से कहे तो भारतके गाँवोका किस तरह पुनर्निर्माण करे, जिससे कि हर किसीके लिए गाँवोमे जीवन उतना ही सुविधापूर्ण हो जाये, जैसा कि शहरोमें समझा जाता है। निस्सन्देह हरएक देशभक्तके सामने यही एक काम है। सम्भव है कि गाँवोकी हालत सुधरनेके काबिल ही न रही हो, ग्रामीण सभ्यताके दिन लद गये

हो और ७ लाख गाँवोकी जगह ७०० सुव्यवस्थित शहर खडे हो जाये जिनकी जनसख्या ३० करोड़ नही बल्कि ३०० करोड हो। लेकिन अगर हिन्दुस्तानकी किस्मतमे यही बदा हो, तो वह एक ही दिनमे तो नही हो जायेगा। गाँवो और गाँववालोकी इतनी विशाल सख्याको मिटानेमे और शेपको शहरो तथा शहरी नागरिकोके रूपमे परिणत करनेमे समय तो लगेगा।

लेकिन ग्राम-पुनर्निर्माणकी सम्भावनामे जो विश्वास करते है उन्हे तो किसी खयाली बातमे विश्वास करके बैठ रहनेके वजाय सच्चे हृदयसे और युक्तियुक्त रीतिसे अपने कार्यक्रमपर अमल करना ही होगा। सावलीके उदाहरणसे उनकी आँखे खुल जानी चाहिए। किसी भी गाँवकी इतनी बिसात तो होनी ही चाहिए कि ३०० स्त्री-पुरुष वहाँ सुविधापूर्वक टिक सके, उन्हे ताजी खुली हवा, हरी-भरी जगह, स्वस्थ गायोका वढिया दूध और साथ-साथ ताजी सब्जियाँ और फल भी मिल सके। इनमे से अनेक चीजें अगर शहरोसे खरीदकर वहाँ मँगानी पडे, तो समझना चाहिए कि सचमुच ही उनमे कोई वडी गहरी खरावी है।

ऐसा कोई जादू नही कि लकडी घुमाते ही एक साथ यह सारा परिवर्तन हो जाये। हाँ, धैर्य और लगनके साथ हम लगे रहे तो पुनर्निर्माणके कार्यक्रमको विना किसी विशेष कठिनाईके आगे वढाया जा सकता है। लेकिन यह तभी हो सकता है जब उत्साही कार्यकर्त्ता ठीक ढगसे अपने गाँवोका पुनर्निर्माण करनेके दृढ़ निश्चय और लगनके साथ गाँवोमे जाकर बैठ जाये। जवतक ऐसा न हो, कुछ नही हो सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-३-१९३६

२७७. पत्र : अमृत कौरको

[दिल्ली]
८ मार्च, १९३६

प्रिय वागी,

यहाँ पहुँचा तो पाया कि तुम्हारा पत्र यहाँ पहलेसे ही मेरी राह देख रहा है।

मौसम गरम तो नही है, लेकिन इसमें ठडक-जैसा भी कुछ नही है। झाँसीके पास वर्षा भी हुई थी। हम सब सकुशल है। हमारे दलमे नवीन[1] और वा, इन दोका इजाफा हो गया है। पुरी भी हमारे साथ था।

हम ज्यो ही यहाँ पहुँचे, मैंने तुम्हे एक तार भेजा।[2] आशा है, तुम्हे मिल गया होगा।

ओढनेके कपड़ोमें, जिन्हे गलतीसे शाल या दुपट्टा कहा जाता है, लगाई झालर पर तुम गर्व कर सकती हो। मुझे तो तुम्हारी कताई पर गर्व है। कारण, सच्ची

१. व्रजलाल गांधी के पुत्र।
२. दिल्ली पहुँचनेपर गांधीजी ने जो तार भेजा था वह उपलब्ध नहीं है।

कला तो कताई ही है। और तुम्हारे लिए — यानी एक 'नौसिखिए' के लिए तो यह प्रयत्न सर्वथा योग्य है। इस बातके लिए तो कभी-कभी बागीको भी प्रशंसा मिल सकती है। उसपर स्नेह रखनेवाले —

जालिमकी ओरसे

[पुनश्च:]

परमात्माकी कृपा रही तो ११ तारीखको तुम गाडीमें सीधे हरिजन बस्ती आ जाओगी।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६५) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६३७४ से भी।

२७८. पत्र: प्रभावतीको

८ मार्च, १९३९

हालाँकि तू अपने पत्रमें नहीं लिखती, किन्तु तेरी चिन्ता मुझे जरूर नजर आ रही है। यदि तुझे अनुमति मिल जाये तो तू अपनी इच्छानुसार अवश्य आ सकती है। यदि तू अपनी स्थिति पूरी दृढ़ता और शान्तिपूर्वक जयप्रकाशके सामने रखे तो यह उसकी बहुत बड़ी सेवा होगी। मुझे भय है कि तू अपनी स्थिति पूरी तरहसे जयप्रकाशके सामने रख नहीं सकी, और यदि रख सकी है तो उसका जयप्रकाश पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, अर्थात् वह तेरी बातको सच नहीं मानता। यदि उसे यह विश्वास हो जाये कि तुझमें विकार नामकी कोई चीज नहीं है तो वह अवश्य शान्त हो जायेगा। जैसे पानी आगको बुझा देता है, उसी प्रकार तेरी निर्विकारता उसकी कामाग्निको अवश्य बुझा देगी। यदि तुझे भगवान् पर विश्वास है तो तू डरती क्यों है, अशान्त क्यों रहती है? तू मुझे यह वचन दे गई थी कि तू अशान्त नहीं होगी। उक्त वचनका पालन करना। मुझे लिखती रहना। . .[1] याद रहे अपने कथनका पालन करना, शान्त रहना, अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना, जब आ सके तब आ जाना। हम लोग यहाँ लगभग पन्द्रह दिन तो रहेंगे।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

१. मूलमें यहाँ कुछ अंश छोड़ दिया गया है।

२७९. सन्देश : गुरुकुल कांगड़ीके दीक्षान्त समारोहके अवसर पर

[९ मार्च, १९३६ के पूर्व][1]

गुरुकुलसे विदा लेनेवाले स्नातकोंको अपना आशीर्वाद देते हुए सरदार पटेलने सबसे पहले उनके नाम भेजा महात्मा गांधीका सन्देश पढ़ा। सन्देशमें उन्होंने उनसे सत्यमय, शुद्ध और सेवामय जीवन व्यतीत करने और इस बातको कभी न भूलनेको कहा था कि जिस संस्थासे वे विदा ले रहे थे उसे स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दने स्थापित किया था, जिन्होंने अन्तिम साँस तक राष्ट्रकी सेवा करते हुए अपने प्राण उत्सर्ग किये।

वार्षिकोत्सवका समापन करते हुए भी सरदार पटेलने महात्मा गांधीका सन्देश पढ़कर सुनाया, जिसमें उन्होंने लोगोंसे गुरुकुलको उदारतापूर्वक दान देनेका अनुरोध किया था। अपने सन्देशमें महात्माजीने यह आशा प्रकट की थी कि वहाँ उपस्थित सभी लोग गुरुकुलके कोषको दान देकर भर देंगे, क्योंकि वह संस्था जनताके दिये दानसे ही चलती है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-३-१९३६

२८०. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

दिल्ली
९ मार्च, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तो तुम कमलाको सदाके लिए यूरोपमें छोड़कर लौट आये। फिर भी, उसकी आत्मा कभी भारतसे बाहर नहीं थी, और हममें से अनेककी भाँति, सदा तुम्हारा रत्न-भण्डार बनकर रहेगी। मैं उस अन्तिम वार्तालापको कभी नहीं भूलूँगा, जिसने हमारी[2] चार आँखोंको गीला किया था।

१. दीक्षान्त समारोह ९ मार्चको हुआ था।
२. गांधीजी और कमला नेहरूकी। इन दोनोंकी बम्बईमें अन्तिम भेंट उस समय हुई थी जब कमला नेहरू इलाजके लिए यूरोप जा रही थीं।

यहाँ भारी जिम्मेदारी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। वह तुम पर ही डाली गई है, क्योंकि तुम उसे उठानेकी क्षमता रखते हो। तुम्हारे पास आनेका मुझे साहस नही होता, मेरे शरीरमे पहले जैसी लचक वापस आ गई होती तो साहस करता। मेरे शरीरमें कोई भीतरी खरावी नही है। वजन भी बढ़ा ही है। परन्तु तीन ही महीने पहले जो जीवन-शक्ति इसमें थी वह जाती रही। विचित्र वात यह कि मुझे कभी बीमारी महसूस नही हुई। फिर भी, शरीर कमजोर हो गया था और मापक-यन्त्र ऊँचा रक्तचाप बताता था। मुझे सावधान रहना पडेगा।

मै आरामके लिए कुछ दिन दिल्लीमे हूँ। अगर तुम्हारी मूल योजना कार्यान्वित हो जाती तो मै अपनी मुलाकातके लिए वर्धामे रह जाता। वहाँ तुम्हारे लिए अधिक शान्त वातावरण रहता। लेकिन तुम्हारे लिए एक-सी ही वात हो, तो हम दिल्लीमे मिल सकते है। वहाँ मै कमसे-कम इस महीनेकी २३ तारीख तक रहूँगा ही। लेकिन अगर तुम वर्धा ज्यादा ठीक समझो तो मै वहाँ इससे पहले भी लौट सकता हूँ। अगर तुम दिल्ली आओ तो किंग्सवेमे नये बने हरिजन-निवासमे मेरे साथ ठहर सकते हो। खासी अच्छी जगह है। जब बता सको तो मुझे बता देना कि हमारे मिलनेकी कौन-सी तारीख रहेगी। राजेन्द्रबाबू और जमनालालजी तुम्हारे साथ है या होगे। वल्लभभाई भी होते, परन्तु हम सबने सोचा कि वह अलग रहे तो बेहतर रहेगा। दूसरे दोनो वहाँ राजनीतिक चर्चाके लिए नही, मातमपुरसीके लिए ही गये है। राजनीतिक चर्चा तब ही होगी जब हम सब मिलेगे और तुम घरेलू कामकाज निपटा लोगे।

आशा है, इन्दुने कमलाके निधनका और तुमसे तुरन्त विलग होनेका दुःख भली प्रकार सहन कर लिया होगा। उसका पता क्या है?

कामना है कि तुम हर प्रकारसे सकुशल रहो।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२८१. पत्र : मिर्जा इस्माइलको

हरिजन बस्ती
किंग्सवे, दिल्ली
९ मार्च, १९३६

प्रिय सर मिर्जा[1],

अब मुझे थोड़ा-बहुत पत्र-व्यवहार करनेकी छूट मिल गई है; इसलिए यह पत्र लिखकर आपको सूचित कर रहा हूँ कि आपका निमन्त्रण मिल गया, जिसे मैं अपने लिए अत्यन्त मूल्यवान समझता हूँ। आप तो जानते ही हैं कि आपके साथ और आपकी देख-रेखमें रहना मुझे कितना पसन्द है। लेकिन मैं कह नहीं सकता कि गरमीके मौसममें मैं कैसा रहूँगा, और भाग्य मुझे कहाँ ले जायेगा। अभी तो यही कह सकता हूँ कि मेरी इच्छा अवश्य है।

आप सबको मेरा प्यार।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१७९) से।

२८२. पत्र : नारणदास गांधीको

९ मार्च, १९३६

चि० नारणदास,

क्या आश्रममें कोई अन्य ऐसा व्यक्ति नहीं है जो भानुशंकरका हिसाब देख सके? वर्षका हम अनुमान तो कर ही सकते हैं। सही वर्ष भानुशंकर तो बता ही सकता है।

कल हम दिल्ली पहुँचे। कान्ति, नवीन और कनु मेरे साथ हैं। सभी आनन्द कर रहे हैं। नवीनको तो मैं उसकी तबीयतकी वजहसे यहाँ लाया हूँ। इस महीने तो यहाँ ठंडक ही रहती है।

१. मैसूर के दीवान।

मै समझता हूँ कि एक पखवाडा तो यहाँ लग ही जायेगा। मै काफी अच्छा अनुभव कर रहा हूँ। कृष्णदासका विवाह बहुत सादगीसे सम्पन्न हुआ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८४ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

२८३. पत्र: नरहरि द्वा० परीखको

९ मार्च, १९३६

चि० नरहरि,

आशा है सुमित्रा अच्छी तरह काम कर रही होगी। ध्यान रखना कि वह स्याहीसे लिखने लगे।

आशा है रामजीकी तरफसे तुम्हे कोई परेशानी नही होती होगी। गोशाला ठीक ढंगसे चल रही होगी।

एक पखवाडा दिल्लीमे बितानेकी इच्छा है। फिर जो हो सो ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९२) से।

२८४. पत्र: जाईजी पेटिटको

९ मार्च, १९३६

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र मिला। ईश्वर कडाईसे तुम्हारी कसौटी कर रहा है और तुम उसमें ठीक उतरती जा रही हो, यह भी उसकी कृपा ही है।

एक श्लोक, जिसका हम यहाँ प्रार्थनामें रोज सस्वर पाठ करते हैं, कहा गया है. "सुख सुख नही है; दुःख दुःख नही है। भगवान्का स्मरण ही सच्चा सुख है, और उसे भूल जाना ही वास्तविक दुःख है।" यह अच्छा है कि हीरा तुम्हारे साथ है।

जब तुम्हे ठीक लगे तब मुझे दो पंक्तियाँ तो लिख ही दिया करो। क्या निकट भविष्यमें स्वदेश आनेकी कोई सम्भावना है?

मैं अच्छा हूँ। पहलेकी तरह तो अब शायद मुझसे काम हो ही नही सकेगा। निस्सन्देह मुझे आरामकी जरूरत है। फिलहाल हम दिल्लीमे है। बा मेरे साथ है। सम्भवतः हम पन्द्रह दिनमे वर्धा वापस लौट जायेगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१५५) से।

२८५. पत्र : वनमाला न० परीखको

९ मार्च, १९३६

चि० वनमाला,

तुझे आनन्दीसे यह पता चल गया होगा कि मैं तुझसे बात क्यो नही कर सका। मेरी तो बहुत इच्छा थी कि सुमित्राके पूरे समाचार तुझसे सुनूं, किन्तु ईश्वर क्या हमारी सभी इच्छाएँ पूरी होने देता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८५) से। सी० डब्ल्यू० ३००८ से भी; सौजन्य . वनमाला एम० देसाई

२८६. पत्र : सुमित्रा गांधीको

९ मार्च, १९३६

चि० सुमित्रा,

तू पत्र क्यो नही लिखती? वहाँ आनन्द कर रही होगी। खूब खेलना और खूब पढना। केवल पढते रहना निरर्थक है और केवल खेलते रहना भी निरर्थक है। यह पत्र पढ सकी या नही? दादी माँ मेरे साथ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८६) से। सी० डब्ल्यू० ३००९ से भी, सौजन्य . वनमाला एम० देसाई

२८७. पत्र : द्रौपदी शर्माको

९ मार्च, १९३९

चि० द्रौपदी,

शर्माका खत आया है, उससे मालूम होता है कि तुम बीमार रहती है। यह क्या बात है? मुझको अब थोड़ा लिखनेकी इजाजत मिल गई है; इसलिये यह लिखा है। मैं दिल्ही आया हूं। अगर मुझको मिल जाओगी तो अच्छा होगा। अनुकूल स्थान तो यहां है ही।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९२ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

२८८. पत्र : मीराबहनको

दिल्ली
१० मार्च, १९३९

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे अनुभव रोचक हैं। मेरे वापस लौटने तक तुम्हें दिन नहीं गिनने चाहिए। मैं यथासम्भव शीघ्र आ जाऊँगा, विशेष रूपसे इस कारण कि जवाहरलाल ३ अप्रैलसे पहले नहीं आ रहे हैं।[1] यह तो बेकारका झोला पड़ गया था। वे कल ही आ रहे हैं।

यहाँ मौसम अभी निश्चित रूपसे ठंडा है। अमतुस्सलामकी हालत वहाँसे कहीं बेहतर है। और ब्रजकृष्णकी भी।

आशा करता हूँ कि तुम्हें एक बढ़िया घोड़ी मिल गई होगी।

तुम्हारा वजन इस समय तुम्हारे सामान्य वजनसे बहुत कम है। तुम्हारा वजन बढ़ना चाहिए। दूध या घी, या दोनोंकी मात्रा बढ़ानेमें संकोच मत करना और इनके अलावा जिस चीजकी भी आवश्यकता हो वह ले लेना। तुम्हारे शरीरपर कुछ मांस चढ़ना चाहिए।

१. अगले दो वाक्य गांधीजी ने पत्र समाप्त होने के बाद लिखे थे।

मेरी तबीयत ठीक है और मेरे आसपास काफी शान्ति रहती है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७८९ से भी।

२८९. पत्र : बच्चूभाई भी० रामदासको

१० मार्च, १९३६

चि० बच्चूभाई,

तुम्हारे बारेमें गंगाबहनका पत्र मिला है। मुझे लगता है कि वैद्य जुगतरामकी सलाह ठीक है। फिलहाल तुम्हारी खुराक दूध और फल ही होने चाहिए। इसके साथ तुम ग्लूकोज ले सकते हो। फिलहाल तुम्हारे लिए गेहूँ या ऐसे ही अनाजोंसे बनी चीजें न लेना ही अच्छा होगा। दूधके बदले दहीकी छाछ ले सकते हो। यह आसानीसे पच जाती है और वायु पैदा नहीं करती। अच्छी गायका धारोष्ण दूध वायु पैदा नहीं करता। दूध थोड़ा-थोड़ा करके लेना चाहिए। दूध और फल एक साथ खानेके बजाय कुछ अन्तरसे खाने चाहिए। फिलहाल तो रसदार फल ही खाने चाहिए, जैसे कि संतरा, मुसम्बी, अंगूर, अनार, अनन्नास, पपीता। दही खट्टा नहीं होना चाहिए। जुगतरामसे पूछकर यदि लहसुनकी दस-एक कलियाँ रोज खाओ तो अच्छा हो। हालमें ही लहसुनके बहुत-से गुण मेरे सुननेमें आये हैं। ऐसा लगता है कि दूधको पचानेमें वह बहुत मदद करता है। लहसुनका अर्क डॉ० तलवलकरके भाई बनाते हैं। मैं तो इस बीमारीमें भी लहसुनकी मोटी-मोटी पच्चीस कलियाँ रोज खा लेता था। अब उसकी जरूरत नहीं रही, इसलिए नहीं लेता। दूध और फलोंके रसमें ग्लूकोज मिलाया जा सकता है। भैंसका दूध नहीं लेना चाहिए, क्योंकि हो सकता है वह तुम्हें भारी लगे। यदि गायका दूध भी भारी लगे तो घरमें बकरी पालकर उसका दूध लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७१९) से।

२९०. पत्र : रणछोड़लालको

११ मार्च, १९३६

चि० रणछोड़लाल,

अहमदाबाद छोडनेके बादसे ही मै तुम्हे पत्र लिखनेका विचार करता रहा हूँ। किन्तु मै थोडे ही पत्र लिख पाता हूँ जिससे या तो यह छूट जाता था या फिर लिखना भूल जाता था। आज तो मैने सुबह ही इस बातको नोट कर लिया था। पत्र लिखनेका कारण भाई मावलकरको हुआ दुख है। उनका तुमपर गहरा विश्वास था और उनके मनमे तुम्हारे प्रति बहुत सम्मान था। अब तुम्हारे ऊपरसे उनका विश्वास उठ गया है और वे सरदारको लिखते है कि उसका कारण तुम स्वय हो। तुमने अपने बम्बई जानेके बारेमे न तो उनसे विचार-विमर्श किया और न उन्हे किसी तरहकी खबर ही दी। उन्हे इस बातका दुख है। अब तो उनके मनमे तुम्हारे उद्देश्यकी पवित्रताके बारेमे भी सन्देह पैदा हो गया है और उन्हे इस बातका पश्चात्ताप होता है कि उन्होने तुमपर विश्वास किया। यह सब क्या हुआ है? वे लिखते है कि बहुत-से मित्रोके चेतावनी देनेके बावजूद उन्होने तुमपर विश्वास करके ठीक मौकेपर तुम्हारी मदद की। मुझे सब समझाओ। मावलकरकी शकाओका समाधान करना। तुम्हे मावलकर-जैसे सच्चे और नि स्वार्थ मित्रको खो नही देना चाहिए। लेनदारोका तुमपर जो विश्वास है उसे गँवाना मत। फकीर भले हो जाना किन्तु सत्यकी साखको मत खोना। लौटती डाकसे मै तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा। आशा है मोतीबहन आनन्दपूर्वक होगी। अभी तो मै यही हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य : नारायण देसाई

२९१. पत्र : प्रभावतीको

दिल्ली
११ मार्च, १९३६

चि० प्रभा,

मैं समझता हूँ कि मेरे पत्र तुझे नियमित रूपसे मिलते रहते होंगे। तेरा अन्तिम पत्र सितावदियारासे था। जयप्रकाश द्वारा लिखित पुस्तक[1] मुझे मिल गई है। मैं उक्त पुस्तक पढ रहा हूँ। उससे कहना कि पढ़नेके बाद मैं अपनी सम्मति भेज दूंगा। यहाँ आज भयकर ठड है, सनसनाती हवा चल रही है। आज डॉ० अन्सारीने मेरी जाँच की। रक्तचाप १५६/९४ निकला, किन्तु कल साँझको अधिक था। इसलिए डाक्टर यह सोचते है कि अभी मुझे एक सीमाके भीतर रहकर ही काम करना चाहिए। तुझे सितावदियारामे घरका दूध मिलता है, यह बहुत अच्छा हुआ। जितना दूध बढ़ा सके उतना तुझे बढाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५९) से।

२९२. पत्र : जयप्रकाश नारायणको

[१२ मार्च, १९३६][2]

चि० जयप्रकाश,

तुमारी किताब मैंने ध्यान से पढ़ी — मुझे अच्छी लगी — अगर उसमे मुझपर जो हमला किया है काफी अज्ञान मेरे बारे में बताता है। यह तो दुर हो सकता है। लेकिन तुमारे अभ्यास पर मैं मुग्ध हुं। इतना कहनेके बाद मैं यह कहु कि तुम्हारे पुस्तक मे मैंने हमारे दर्द का इलाज नही पाया है। जो तुमने बताया है वह इस मुल्क के लिये आज तो उपयुक्त नही है। जो तुम चाहते हो वह सब करीब करीब मे और बहुत काग्रेसवाले चाहते हैं। लेकिन उसे पाने का तरीका तुमारे तरीके से भिन्न है। मेरी दृष्टि मे तुम्हारा तरीका उस भूमि के लिये चलने के योग्य नही। मेरे तरीके

१. व्हाई सोशलिज्म?
२. यह पत्र प्रभावती'को लिखे एक पत्र के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

पर मुझे ऐसा कोई राग नही है कि मैं दुसरे कि विशेषता न देख सकुं। शुभ प्रयत्न करते हुए भी तुम्हारी वात मुझे जचती नही है।

वंगालके अधिवेशन का तुम्हारा व्याख्यान मेरे साथ घूम रहा था उसे आज मैंने पढा। तुम्हारा विशारदो की कमेटी का प्रस्ताव मुझे अच्छा लगा है। ऐसा कोई शक्स तुम्हारे ख्याल मे है, जो उस कार्य को अच्छी तरह कर सके? उस वारे में और कोई कदम तुमने उठाया है। तुम्हारी किताव से और तो वहूत ख्याल आये और आते रहेंगे उस वारेमें तो ईस वक्त नही लिख सकता हु। प्रभा लिखती है कि तुम्हारे शरीर की तुम कोई फिक्र नही करते हो। यह तो अच्छी वात नही है।

बापुके आशीर्वाद

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य. नारायण देसाई

२९३. पत्र : प्रभावतीको

दिल्ली
१२ मार्च, १९३६

चि० प्रभा,

अभी तेरा पत्र नही मिला। कल तो मैंने तुझे एक छोटी-सी चिट्ठी[1] लिखी थी। आज जयप्रकाशकी पुस्तकके वारेमें मैंने जो पत्र लिखा है उसे भेजने-भरको यह लिख रहा हूँ। अभी तो तुम दोनो शायद इलाहाबाद गये होगे। जमनालालजी तो वहाँ गये ही हैं। राजेन्द्रवावू भी गये थे।

जयप्रकाशकी पुस्तक तेरे भी पढने और विचार करने लायक है। यदि मेरे विचार सही हो तो उसमें प्रकट किये गये कुछ विचार गलत हैं। क्या किसी [व्यक्तिकी] विचारधारा इसीलिए वड़ी मानी जाये क्योंकि उसे सभी चाहते है? राजकुमारीको आज आना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६०) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२९४. पत्र : शंकरभाई बी० पटेलको

दिल्ली
१२ मार्च, १९३६

चि० शकरभाई,

मैंने तो तुम सबकी बहुत खोज-खबर ली थी, किन्तु कोई आया ही नही। तुमने जाति-बन्धन तोड़ दिया, यह तो बहुत ही अच्छा हुआ।[1]

श्री शकरभाई
जामसी विला, एलिस ब्रिज
अहमदाबाद, बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८८) से। सी० डब्ल्यू० ५१ से भी, सौजन्य मगलाबहन बी० देसाई

२९५. पत्र : मंगलाबहन बी० देसाईको

[१२ मार्च, १९३६][2]

चि० मगला,

पुत्र कुपुत्र हो सकता है किन्तु माता-पितासे ऐसा थोडे ही हुआ जा सकता है। अत मेरा आशीर्वाद तो तुम दोनो लो। किन्तु इसकी शर्त तो तुम दोनो जानते ही हो। सेवा करना और आश्रमको शोभान्वित करना। जीवन भोगके लिए नही बल्कि सेवाके लिए है और सयमके बिना सेवा करना असम्भव है। अत दोनो सयमी बनना और दीर्घायु होना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८८) से। सी० डब्ल्यू० ५१ से भी; सौजन्य : मगलाबहन बी० देसाई

१. शंकरभाई पटेलकी पुत्री मगला का अन्तर्जातीय विवाह हुआ था।
२. यह और पिछला शीर्षक-एक ही कागजपर लिखे हुए है।

२९६. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

दिल्ली
१३ मार्च, १९३६

प्रिय आनन्द,

हाँ, जब भी आ सको, बेशक आ जाओ। सिर्फ यहाँ हरिजन बस्तीमें तुम्हें भीड़के कारण रहनेको स्थान शायद न मिले। अभी-अभी बहुत-से मेहमानोंका आगमन होनेवाला है, और तुम्हें मेरे साथ बातचीतका बहुत ही कम अवसर मिलेगा। आशा करता हूँ तुम दोनों अच्छी तरह होगे।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

२९७. सन्तति-निग्रह [-१]

मेरे एक साथीने[1] जो मेरे लेखोंको बड़े ध्यानके साथ पढ़ते रहते हैं, जब यह पढ़ा कि मैं सन्तति-निग्रहके लिए सम्भवतः उन दिनों सहवासकी बात स्वीकार कर लूँगा जिनमें गर्भ रहनेकी सम्भावना नहीं होती, तो उन्हें बड़ी बेचैनी हुई। मैंने उन्हें यह समझानेकी कोशिश की कि कृत्रिम साधनोंसे सन्तति-निग्रह करनेकी बात मुझे जितनी खलती है, उतनी यह नहीं खलती, और फिर यह है भी अधिकतर विवाहित दम्पतियोंके ही लिए। पर बहस बढ़ते-बढ़ते हमें इतनी गहराईमें उतारती चली गई जिसकी हम दोनोंमें से किसीने आशा नहीं की थी। मैंने देखा कि यह तरीका भी उन मित्रको कृत्रिम साधनोंसे सन्तति-निग्रह करने-जितना ही नापसन्द था। इससे मैं समझा कि यह मित्र स्मृति-ग्रंथों द्वारा लगाये गये इस प्रतिबन्धको साधारण मनुष्योंके लिए व्यवहार-योग्य समझते हैं कि पति-पत्नीको भी तभी सहवास करना चाहिए, जब सचमुच सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा हो। इस नियमको मैं जानता तो पहलेसे था; लेकिन उसे इस रूपमें पहले कभी नहीं माना था, जिस रूपमें इस बातचीतके बाद मानने लगा हूँ। अभी तक तो, पिछले कितने ही सालोंसे मैं इसे एक आदर्श परामर्श ही मानता आया हूँ, जिसपर अक्षरशः अमल नहीं करना है। इसलिए मैं समझता था कि सन्तानोत्पत्तिकी खास इच्छाके बिना भी यदि विवाहित स्त्री-पुरुष एक-दूसरेकी रजामंदीसे सहवास करें तो वे वैवाहिक उद्देश्यकी पूर्ति करते हैं और इससे स्मृतियोंका आदेश

१. विनोबा भावे।

भंग नही होता। लेकिन स्मृतिके आदेशको जिस नये रूपमे अब मै लेता हूँ वह मेरे लिए मानो एक इलहाम है। स्मृतियोका जो यह कहना है कि जो विवाहित स्त्री-पुरुष इस आदेशका दृढताके साथ पालन करे वे वैसे ही ब्रह्मचारी है जैसे अविवाहित रहकर सदाचारी जीवन व्यतीत करनेवाले होते है, उसे अब मै इतनी अच्छी तरह समझ गया हूँ जितना पहले कभी नही समझा था।

इस नई समझके अनुसार सहवासका एकमात्र उद्देश्य अपनी काम-वासनाको तृप्त करना नही, बल्कि सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा ही है। सामान्य काम-पूर्ति तो, विवाहकी इस दृष्टिसे, भोग ही मानी जायेगी। जिस आनन्दको अभी तक हम निर्दोष और वैध मानते आये है उसके लिए ऐसे शब्दका प्रयोग कठोर तो मालूम होगा, लेकिन मै प्रचलित प्रथाकी बात नही कर रहा हूँ, बल्कि उस विवाह-शास्त्रको ले रहा हूँ जिसे हिन्दू-ऋषियोने निरूपित किया है। हो सकता है कि इसे पेश करनेका उनका तरीका त्रुटिपूर्ण हो या बिलकुल गलत ही हो, लेकिन मुझ-जैसे व्यक्तिके लिए तो, जिसका विश्वास है कि अनेक स्मृति-ग्रथ अनुभवपर आधारित है और उनकी प्रेरणाका मूल अनुभवमे ही है, उनके अर्थको पूरी तरह स्वीकार किये बिना कोई चारा ही नही। प्राचीन ग्रन्थोको उनके पूरे अर्थोमे ग्रहण करके प्रयोगमे लानेके अलावा और कोई ऐसा तरीका मै नही जानता जिससे उनकी सचाईकी जाँच की जा सके, भले ही ऐसी जाँच कितनी ही कडी क्यो न प्रतीत हो और उससे निकलनेवाले निष्कर्ष कितने ही कठोर क्यो न लगे।

ऊपर मैने जो-कुछ कहा है उसको देखते हुए, निरोधको या ऐसे दूसरे उपायोसे सन्तति-निग्रह करना बड़ी भारी गलती है। मै यह अपनी जिम्मेदारीको पूरी तरह समझते हुए लिख रहा हूँ। श्रीमती मार्गरेट सैंगर और उनके अनुयायियोके लिए मेरे मनमे बडे आदरका भाव है। अपने उद्देश्यके लिए उनके अन्दर जो अदम्य उत्साह है, उससे मै बहुत प्रभावित हुआ हूँ।[1] यह भी मै जानता हूँ कि स्त्रियोको अनचाहे बच्चोकी सार-सँभाल और परवरिश करनेमें जो कष्ट उठाना पडता है, उसको लेकर उनके मनमे ऐसी स्त्रियोके प्रति बडी सहानुभूति है। साथ ही, यह भी मै जानता हूँ कि अनेक उदार धर्माचार्यो, वैज्ञानिको, विद्वानो और डाक्टरोंने भी सन्तति-निग्रहके इस तरीकेका समर्थन किया है, जिनमे से अनेकको तो मै व्यक्तिगत रूपसे जानता और काफी मानता भी हूँ, लेकिन इस सम्बन्धमे मेरी जो मान्यता है उसे अगर मै पाठको या सन्तति-निग्रहके इस तरीकेके इन महान् समर्थकोसे छिपाऊँ तो मै अपने ईश्वरके प्रति, जोकि सत्यके अलावा और कुछ नही है, झूठा साबित होऊँगा। और सचमुच अगर मैने अपनी मान्यताको छिपाया तो यह निश्चित है कि अपनी गलतीको, अगर मेरी यह मान्यता गलत हो, मै कभी नही जान सकूँगा। इसके अलावा, मै उन अनेक स्त्री-पुरुषोकी खातिर भी अपनी यह राय जाहिर कर देना जरूरी समझता हूँ जो सन्तति-निग्रह सहित अनेक नैतिक समस्याओके बारेमे मेरा मार्ग-दर्शन और परामर्श स्वीकार करते है।

१. देखिए पृ० १६५-७०।

सन्तानोत्पत्तिके नियमन तथा नियन्त्रणकी आवश्यकताको तो गर्भ-निरोधक साधनोके समर्थक और अन्य उपायोसे इसे करनेकी पैरवी करनेवाले, दोनो समान रूपसे स्वीकार करते है। आत्म-सयमसे सन्तति-निग्रह करनेमे जो कठिनाई होती है, उससे इनकार नही किया जा सकता। परन्तु यदि मानव-जातिको अपने अस्तित्वको पूरी तरह सार्थक बनाना है तो इसके सिवा इस उद्देश्यकी पूर्तिका कोई और उपाय ही नही है। मेरा यह हार्दिक विश्वास है कि यदि इस चर्चित उपायको सार्वभौमिक मान्यता मिल गई तो मानव-जाति भारी नैतिक पतनके गड्ढेमे गिर जायेगी। इस तरीकेके समर्थक इसके विरुद्ध प्राय जो प्रमाण पेश करते है उनके बावजूद मै यह कहता हूँ।

'मेरा विश्वास है कि मुझमें कोई अन्ध-विश्वास नही है। सत्य केवल इसलिए सत्य नही कि वह प्राचीन है। और किसी चीजको बस प्राचीन होनेके कारण ही सन्देहकी दृष्टिसे नही देखना चाहिए। जीवनके कुछ बुनियादी सत्य है जिनको सिर्फ इसीलिए नही त्याग सकते कि उनपर अमल करना मुश्किल है।

इसमे शक नही कि आत्म-सयम द्वारा सन्तति-निग्रह है कठिन, लेकिन अभी तक ऐसा कोई नजर नही आया जिसने सजीदगीके साथ इसकी उपयोगितामे सन्देह किया हो या यह न माना हो कि निरोधक साधनोंकी अपेक्षा यह कही श्रेष्ठ है।

और मै समझता हूँ कि सहवासको ही सबसे बड़े सुखका साधन माननेके बजाय यदि सहवासको दृढतासे मर्यादित रखनेके शास्त्रोके आदेशको पूर्णत स्वीकार कर लें तो आत्म-संयमका पालन अपेक्षाकृत आसान भी हो जायेगा। जननेन्द्रियोका काम तो सिर्फ यही है कि विवाहित दम्पतिके द्वारा यथासम्भव सर्वोत्तम सन्तानोत्पत्ति करें। और यह तभी हो सकता है, और होना चाहिए, जबकि स्त्री-पुरुष दोनो सहवासकी नहीं बल्कि सन्तानोत्पत्तिकी इच्छासे ही, जो ऐसे सहवासका परिणाम होती है, प्रेरित हो। अतएव सन्तानोत्पत्तिकी इच्छाके बिना सहवास करना अवैध समझा जाना चाहिए और उसपर नियन्त्रण होना चाहिए।

ऐसा नियन्त्रण साधारण आदमियो पर लागू हो सकता है या नहीं, इसपर आगे विचार किया जायेगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-३-१९३६

१. देखिए पृ० २९२-४।

२९८. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

किंग्सवे, दिल्ली
१४ मार्च, १९३६

प्रिय सतीश बाबू,

प्रफुल्लने[1] आपका और हेमप्रभाका[2] दुखद हाल सुनाया। उसने बताया है कि आप दोनो बीमार है और बहुत चिन्तित है। मैंने हालचाल पूछा था, सो हेमप्रभाका कुछ पक्तियोका एक कार्ड मिला था।

अपनी स्थिति और काम-काजका पूरा विवरण मुझे अवश्य भेजिए। आप दोनो 'गीता' और 'रामायण'के भक्त है। इसलिए चिन्ता तो आपको होनी ही नही चाहिए। और अगर हम स्वय ठीक सावधानी बरते तो बीमारीसे भी छुटकारा पानेकी आशा कर सकते है।

अपनी बीमारीके दौरान मै आपके विषयमे हमेशा सोचता रहा हूँ। और आपका वह पगला पुजारी कैसा है? अरुण[3] कैसा है? वह कहाँ है? क्या करता है? चारु क्या करती है? हरिजन-कार्यके बारेमे क्या हो रहा है? आपकी अनेक प्रवृत्तियोके बारेमे मुझे कोई जानकारी नही है।

मै स्वस्थ-प्रसन्न हूँ और कमसे-कम इस महीनेकी २३ तारीख तक दिल्ली रहनेकी उम्मीद करता हूँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२८) से।

२९९. पत्र : मीराबहनको

१४ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा दूसरा पत्र सामने रखा है। आशा है, तुम्हें मेरा पत्र[4] भी मिल गया होगा। जवाहरलालके आनेपर मै तुम्हारे सन्देशकी बात सोचूंगा। वह यहाँ १७ तारीख तक रहेगे और हरिजन बस्तीमे ठहरेगे।

अवश्य ही देहातमे असली ग्रामवासियोसे होनेवाला हरएक घनिष्ठ सम्पर्क हमे नई जानकारी और नई आशा देता है, हाँ, उससे हमे अपने मार्गकी कठिनाइयोका

१. प्रफुल्लचन्द्र घोष।
२. सतीशचन्द्र दासगुप्त की पत्नी।
३. सतीशचन्द्र दासगुप्तका पुत्र।
४. देखिए पृ० २२१।

भी पता चल जाता है।' मेरा हृदय वही है। मैं नही जानता कि मेरे प्रयत्नोका परिणाम क्या होगा।

मेरा खयाल है मैं तुम्हे बतला चुका हूँ कि डॉ० अन्सारीने क्या निदान किया था। मेरी दशा उन्हे सन्तोषप्रद तो लगी पर उनकी बिलकुल पक्की राय है कि मुझे अभी कुछ समय तक अपने कामकी गतिमे तेजी नही आने देनी चाहिए। जितना आवश्यक है, उतना विश्राम मै कर रहा हूँ।

राजकुमारी यही है और सदाकी भाँति पास ही बैठी है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१५) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८१ से भी।

३००. पत्र : मणिलाल गांधीको

१४ मार्च, १९३६

चि० मणिलाल,

आज पत्र लिखनेके बाद मधुमेहके रोगीकी खुराकके बारेमे तुम्हारा प्रश्न मुझे याद आया। इस खुराकमे श्वेतसार और शक्कर तनिक भी नही होनी चाहिए। अतः केला, आलू, चावल, गेहूँ, गुड़, शक्कर आदि नही खानी चाहिए। गेहूँको मोटा-मोटा दलकर उसमे से आटा निकाल देनेके बाद जो दलिया रह जाये उसकी थोडी-सी महेरी खाई जा सकती है। उसमे नमक डाला जा सकता है या आटा निकाल देनेके बाद दलियेको पीसकर उसकी रोटी बनाई जा सकती है। दूध, दही, शाक, हरी मटर, लौकी और खट्टे फल खाये जा सकते है, किन्तु मीठे फल नही खाने चाहिए। खास खुराक दूध और सब्जियाँ है, और इससे तबीयत बिलकुल सुधर जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४८) से।

३०१. पत्र : द्रौपदी शर्माको

१४ मार्च, १९३६

चि० द्रौपदी,

तुमारा खत मिला। उसीको मैं शर्माको भेजाता हू। मेरा दिल्लीमे [रहना २][1] ३ ता० तक तो है ही। इतनेमे मुझको मिल जायगी तो अच्छा लगेगा। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। बहुत काम तो नही कर पाता। शक्ति है लेकिन डाक्तरोकी मनाई है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९२-३ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

३०२. पत्र : हीरालाल शर्माको

१४ मार्च, १९३६

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला है। उस परसे मैंने द्रौपदीको यहा बुलाई। परिणाममे यह खत मिला। मैंने फिर भी उसे आनेका लिखा है।

तुम अनुभव ठीक ले रहे हो। यहा आने पर कुछ कालेजोमे सीखनेका बाकी न रहे तो अच्छा होगा। वहा जबतक कुछ ज्ञान पानेका बाकी रहे तबतक रहो। बाकी मेरे विचार तो है ही कि नैसर्गिक उपचारके लिये भिन्न साधना ही है। हा शरीरके प्रत्येक अवयवोका ज्ञान और रसायणशास्त्रका अत्यावश्यक है, सही।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २३६-७ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

१. मूलमें यहाँ एक शब्द पढ़ा नहीं जा सका। इसे अनुमानसे भरा गया है।

३०३. पत्र : कृष्णचन्द्रको

दिल्ली
१४ मार्च, १९३६

चि० कृष्णचंद्र,

रोजनिशि तो नित्य लिखना ही। जैसे नित्य खाते है ऐसे ही प्रार्थना करे, रोजनिशि लिखे। कभी-कभी खाना तो छोडना पडता है लेकिन जबतक शक्ति रहती है रोजनिशि छूट ही नही सकती और जबतक शुध्धि रहती है प्रार्थना छुट नही सकती।

यदि लसून शुरू करोगे तो वायु तो होगा ही नही। काली मीरचकी आवश्यकता नही रहेगी।

औषधरूपमें लसुन और दूध लेनेसे ब्रह्मचर्यमे हानि नही होनी चाहिये। निर्वल मनुष्योकी विकारवृत्ति बढती है और वीर्यपात भी होता है। ऐसोके लिये दूधादि पदार्थ आवश्यक हो जाते है। आरोग्यकी पुस्तक[1] मे मैने जो-कुछ दूधके बारेमें लिखा है उस विचारमे थोडा परिवर्तन तो हुआ ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८५) से।

३०४. पत्र : मीराबहनको

दिल्ली
१६ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा तीसरा पत्र पहुँच गया। मुझे खुशी है कि तुम्हारे पास घोडा है। खर्चकी परवाह न करो। वे जिसमे ठीक समझेगे उस मदमें डाल देगे। तुम्हे हर काम आरामसे करना चाहिए और तेज धूप हो तब विश्राम करना चाहिए। गरमीके दिनोमे सारा काम दस बजे सुबहसे पहले और ४ बजे शामके बाद हो। जितने फल ले रही हो उससे अधिक लेने चाहिए। सिर पर ठण्डी पट्टी रखना जरूरी है। निरी गीली पट्टीकी अपेक्षा मिट्टीमे ज्यादा देर तक ठण्डक रहती है।

मौसम बराबर गरम होता जा रहा है। अब तीसरे पहरके तीन बजनेवाले है और ओढ़नेको मेरे पास कुछ नही है। मै पखा सहन कर सकता हूँ।

१. देखिए खण्ड ११ और १२।

मेरा खयाल है, तुम्हारे शब्दकोश मैंने वर्धामे देखे थे। लेकिन मैं पूछताछ करूँगा और प्रयास करूँगा कि शब्दकोश तुम्हे मिल जाये।

हाँ, तुम जाजूजीके मनमे जितनी दिलचस्पी पैदा कर लोगी, उतना ही गाँवोमे काम करनेके लिए अच्छा रहेगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१६) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८२ से भी।

३०५. पत्र : खुशालचन्द गांधीको[1]

१६ मार्च, १९३६

आदरणीय भाईकी सेवामे,

चि० कृष्णदासके विवाहके सम्बन्धमे मैंने काशीकी[2] उपस्थितिमे आपको लिखनेका संकल्प किया था। किन्तु स्थान परिवर्तन हो जानेके कारण मैं उक्त संकल्पकी बात भूल गया। उसकी याद मुझे कल आई। ऐसा विवाह तो उक्त दम्पति और बड़े-बूढोके पुण्य-प्रतापसे ही सम्पन्न होता है। बहुत-से स्नेहीजनोके आशीर्वादके बीच रविशंकर महाराज-जैसे सच्चे ब्राह्मणके हाथो उसका विवाह हुआ। कृष्णदास कन्याके पिताके द्वारपर नही गया, बल्कि कन्याके पिता ही अपनी पुत्रीको लेकर कृष्णदासके कर्मक्षेत्रमे उसके पास आ गये थे। कन्याने कृष्णदासके हाथके कते सूतकी सफेद साडी ही पहनी थी। अन्य आभूषणोमे काशी और मेरे हाथके सूतकी मालाएँ थी। कृष्णदासके गुरु विनोबा तो उपस्थित थे ही। अगले दिन ही वर-कन्या अपने गुरुके साथ सेवाकार्यमे लग गये। कन्याको जो-कुछ दिया गया उसमे रत्ती-भर सोनेकी अँगूठी तक नही थी। विवाह-कार्यमे शायद दो रुपये भी खर्च नही हुए होगे। कन्या मुझे भली लगी है। ऐसा विवाह मैंने तो पहले देखा नही। अन्य विवाहोमे भी सादगी तो थी किन्तु इतना पवित्र वातावरण मैंने अन्यत्र नही देखा। अत मैं यह मान लेता हूँ कि यह सब जानकर आप दोनोको सन्तोष होगा।

मोहनदासके दंडवत् प्रणाम

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. गांधीजीके चचेरे भाई।

२. खुशालचन्द गांधीकी पुत्र-वधू और छगनलाल गांधीकी पत्नी।

३०६. पत्र : नारणदास गांधीको

१६ मार्च, १९३६

चि० नारणदास,

साथका पत्र[1] पिताजीको पढवा देना। मै यह जानता ही हूँ कि पुरुषोत्तम[2] के विवाहके समय जो सम्भव होगा सो अवश्य किया जायेगा। किन्तु जिस प्रकार हम परिस्थितियोके कर्ता हो सकते है उसी प्रकार परिस्थितियाँ भी हमपर सवारी कर सकती हैं न? दैव और पुरुषार्थका द्वन्द्व चलता ही रहेगा।

मैंने भानुशंकरसे तारीखें पूछी हैं। किन्तु क्या भानुशंकरका हिसाब बहीखातेमें नही मिलेगा? या हो सकता है कि पैसा गो-सेवा सघके या ऐसे ही किसी खातेमें जमा हुआ हो। मै यहाँ २३ तारीख तक तो रहूँगा ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८५ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी

३०७. पत्र : लीलावती आसरको

१६ मार्च, १९३६

चि० लीलावती,

आशा है मेरा पत्र तुझे मिल गया होगा। यह पत्र तो कार्यवश लिख रहा हूँ। पुस्तकोकी अलमारियोमें कही हिन्दी-अंग्रेजी और अंग्रेजी-हिन्दी शब्दकोश होने चाहिए। उक्त कोश या तो मीराबहनके है या प्रभावतीके। उन्हे खोजकर मीराबहनको दे देना। यदि कोश पुस्तकोमें न हो तो रामजीलालसे कहना कि कहीसे तलाश करके मीराबहनको दे दे। मै लौटकर उसे नये दिलवा दूँगा और मँगनीके कोश वापस करवा दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

साथके पत्र तू स्वयं ही पहुँचाना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३८) से। सी० डब्ल्यू० ६६१३ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. नारणदास गांधीके पुत्र।

३०८. पत्र : द० बा० कालेलकरको

१६ मार्च, १९३६

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। हो सकता है कि मैं २८-२९ तक वर्धा न पहुँच सकूँ। शंकरलालका बहुत आग्रह है कि मुझे लखनऊ[1] जाना चाहिए। वहाँ [पहुँचने]की तारीख २८ है। मैं कुछ निर्णय नहीं कर पा रहा हूँ कि मुझे क्या करना चाहिए। देखूँ, भाग्य मुझे कहाँ ले जाता है। किन्तु मैं देखता हूँ कि तुम परेशानीमें पड़ गये हो। मैं लाचार हूँ, किन्तु तारीख तय कर पानेपर मैं तुम्हें तुरन्त सूचित करूँगा। यदि मेरे बिना तुम्हारा काम चल जाये तो निश्चय ही २८-२९ तारीख रखना। इस अनिश्चयकी स्थितिमें तुम अपना कार्यक्रम स्वयं तय कर लेना। मैं आज बम्बई तार दे तो रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८९४) से।

३०९. पत्र : चन्द त्यागीको

[१६ मार्च, १९३६ के पश्चात्][2]

तुम्हारे उर्दू हरफ पढ़कर मैं हैरान होता हूँ। दूध न छोड़ा जाय लेकिन मिठाई-घी छोड़ दिया जाय।

बापूके आशीर्वाद

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२६५) से।

१. अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग संघकी प्रदर्शनीका उद्घाटन करनेके लिए।

२. चन्द त्यागीके १६ मार्च, १९३६ के पत्रके उत्तरमें। अपने पत्रमें उन्होंने आहारके सम्बन्धमें गांधीजीकी सलाह माँगी थी।

३१०. पत्र : डॉ० शमशेर सिंहको

१७ मार्च, १९३६

प्रिय शम्मी,

अमृतने मुझे तुम्हारा सन्देश दिया; साथमे कुछ और भी— अपने आँसू। उसने अत्यन्त दुखी मनसे किसी तरह अपनेको सँभालकर तुम्हारा सन्देश सुनाया।

अमृतने अपने प्रति तुम्हारे गहरे स्नेहके बारेमे बहुत-सी बातें बताई। वह सब सुनकर मुझे तो विश्वास ही नहीं हो पा रहा था और न ऐसा विश्वास मैं करना ही चाहूँगा कि अब तुम दोनोमें परस्पर उदासीनताका भाव आ गया है और सो भी अमृतके जीवनमे मेरे प्रवेश करनेके कारण। उसने मुझे बताया है कि जीवनके प्रति मेरे दृष्टिकोणसे वह १९१५ से ही प्रभावित होने लगी थी। मेरे लिए तो उसका स्नेह और सहयोग एक बहुमूल्य निधि है। लेकिन तुम दोनोके बीचके स्थायी प्रेमकी बलि चढाकर मैं न उसका स्नेह चाहता हूँ और न सहयोग। मैं जानता हूँ कि अच्छे-बुरे दिनोमे केवल तुम्हीने उसका साथ दिया है। तुम सबसे मेरे सम्बन्धके कारण अगर कुछ होना चाहिए तो यह नही कि तुम्हारा पारस्परिक स्नेह-बन्धन ढीला हो, बल्कि वह और भी दृढ़ हो। इसलिए मेरे लिए क्या करना ठीक होगा, बताना। इतना मैं कह सकता हूँ कि अभी वह जिन सार्वजनिक प्रवृत्तियोमे लगी हुई है उनसे उसे विमुख करनेका अपराध तो मैं अपने सिर कभी नही लूँगा। वैसे मैं उन प्रवृत्तियोको अधिक शुद्ध अवश्य बनाना चाहूँगा, अर्थात् मैं इस बातकी कोशिश करूँगा कि वह अब तककी अपेक्षा अधिक अनासक्तिपूर्वक कार्य करे। लेकिन, अमृतके सम्बन्धमे मैं सब-कुछ तुम्हारे परामर्शसे ही करूँगा। अगर तुमसे कभी मेरा मतभेद होगा तो तुम्हे वैसा बता दूँगा। लेकिन जब अमृतका अधिकसे-अधिक कल्याण ही हम दोनोका ध्येय होगा तो मतभेद नही हो सकता। वह ऐसा कोमल पुष्प है जिसे मुरझाने नही दिया जा सकता।

तुम्हे खुद अपना और उसके ग्राम-कार्यका ध्यान रखना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

३११. एक पत्र

१७ मार्च, १९३६

तुम्हे लिखनेमे मुझपर कोई जोर नही पडता। सच मानो, डॉ० अन्सारीने मुझे काफी छूट दे रखी है। मै सब-कुछ सुविधासे करता हूँ और खूब प्रसन्न रहता हूँ। लेकिन जब इस शरीरकी अवधि समाप्त हो चुकेगी तो लाख परवाह करके भी इसे कायम नही रखा जा सकेगा। हम तो सिर्फ अनुमान लगा लेते है — और सो भी शायद घटनाके घटित हो चुकनेके बाद — कि ऐसा अमुक कारणोसे हुआ। लेकिन हमारा अनुमान भी सम्भावित तथ्यो पर ही आधारित होता है। इसलिए मै समझता हूँ कि हमें अपने जीवन या अपने प्रियजनोके जीवनके बारेमे कोई चिन्ता नही करनी चाहिए।

महादेवको तुम्हारे पत्रमे उसके प्रति तुम्हारी अरुचिकी बू मिली है। मैंने तो उसके इस विचारका प्रतिवाद किया है, लेकिन मै जानता हूँ कि बात क्या है, यह तो तुम मुझे साफ-साफ बता ही दोगी। तुम्हारे पत्रमें उसका कोई जिक्र नही है, यह तो सच है ही। तुम्हारे साथ हुई बातचीतसे मुझे लगा कि तुम चाहती थी कि मैं तुम्हारे साथ अकेले रहूँ। गोशीबहनने मुझसे कुछ और ही कहा। उसने मुझे जगहकी तफसील भी बताई। तुम्हारा पहला सुझाव मै समझ गया।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

३१२. पत्र : प्रभावतीको

दिल्ली
१८ मार्च, १९३६

चि० प्रभा,

इस बार तेरा पत्र बहुत विलम्बसे मिला। तुझे ऐसा नही करना चाहिए। तुझे ऐसा काम ही क्या है? कमसे-कम तुझे एक पोस्टकार्ड लिखना चाहिए।

जवाहरलाल कल यहाँ पहुँच गये। मुझे प्रदर्शनीके लिए लखनऊ जाना पड़ेगा। मैं २८ तारीखको वहाँ पहुँचूँगा। मेरा विचार २९को वहाँसे चल कर वर्धा जानेका है। फिर जो हो सो ठीक है। शेष तुझे कान्ति लिखेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९८) से।

३१३. ग्राम-निवासके सम्बन्धमें मेरी कल्पना[1]

दिल्ली
१९ मार्च, १९३६

यदि वा चाहे तो उसे लेकर या न चाहे तो अकेले ही मैं सेगाँवमें एक झोपड़ी बनाकर रहनेकी सोचता हूँ।

मीराबहनवाली झोंपड़ी शायद मेरे लिए काफी न हो।

झोपड़ी बनानेमें कमसे-कम खर्च करना चाहिए। १०० रु० से ज्यादा खर्च तो आना ही नहीं चाहिए।

मुझे आवश्यक सहायता सेगाँवसे ही प्राप्त करनी चाहिए।

जब-जब जरूरत हो मुझे मगनवाड़ी जाते रहना चाहिए। ऐसा करनेके लिए जो वाहन मिले उसका उपयोग करना चाहिए।

. . .[2] के पास ही मीरा . . .[3] रहे। मेरी सेवाके लिए समय न दे, लेकिन वह गाँवके काममें मदद दे सकती है।

आवश्यक हो तो महादेव, कान्ति आदि उसी गाँवमें रहे। उनके लिए सादी झोपड़ी बनानी चाहिए।

ऐसा करते हुए बाहरके जिन कामोंमें मैं भाग ले रहा होऊँ उनको जारी रखूं।

कोई खास जरूरत न हो तो बाहरके लोग मुझसे मिलनेके लिए सेगाँव न आयें। मगनवाडी जानेके जो दिन तय हुए हों उन दिनों वे मुझसे मिल लिया करें।

बाहर भ्रमण करनेकी जरूरत होने पर . . .[4]

मेरा पूर्ण वि . . .[5] करनेसे विशेष . . .[6] लाभ और ग्रामोद्योगका काम ज्यादा तेजीसे चलेगा, ग्रामोद्योगोंकी तरफ लोगोंका अधिक ध्यान जायेगा।

ऐसा करनेसे मीराबहनकी विपुल क्षमताका पूरा उपयोग होगा। और महादेव, कान्ति आदिको भी नये ढगका और अच्छा अनुभव प्राप्त होगा।

मेरे गाँवमें बस जानेसे मेरी कल्पनामें जो दोष होंगे वे उभर आयेंगे। अन्य लोगोंको प्रोत्साहन तो मिलेगा ही।

सेगाँवमें ही बसनेका . . .[7] नहीं है, पर यह तो घटना-क्रममें सहज हो गया है। लेकिन कोई दूसरा गाँव अधिक ठीक मालूम हो तो उस पर विचार करनेको मैं तैयार हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७७) से।

१. गांधीजीने अपनी यह कल्पना जमनालाल बजाजको लिख भेजी थी।
२ से ७. मूलमें अस्पष्ट है।

३१४. पत्र : अनसूया बजाजको

१९ मार्च, १९३६

चि० गोदावरी,[1]

तुमारा खत मिला। तुम कब उठती है यह नहि बताया। सारवर[2] अनावश्यक वस्तु है और ज्यादा खानेसे हानिकर है। सारवरके वदलेमे मोसममें गडेरी खाना अच्छा है। सारवरसे गुड़ अच्छा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१३४) से।

३१५. पत्र : मीराबहनको

दिल्ली

सुबह ४ बजे, २० मार्च, १९३६

चि० मीरा,

इस बारका तुम्हारा पत्र आँखें खोलनेवाला है। तुमने जमनालालजीके खेतके कुएँके बारेमें जो कुछ लिखा है, उससे मनमें अशान्ति है।[3] परन्तु इससे यही मालूम होता है कि हमारे मार्गमें कितनी जबरदस्त कठिनाइयाँ है। तुम्हे इन सबके बीच भी तन्दुरुस्त और शान्त रहना चाहिए, जैसे मै रहनेकी कोशिश कर रहा हूँ। तुम अनुमान कर ही सकती हो कि मेरे लिए यहाँ का काम भी इतना आसान तो नही है। मुझे अपने कार्यके राजनीतिक पक्ष और गाँवोसे सम्बन्धित मसलेके बारेमे कठिनाई महसूस हो रही है। लेकिन डॉ० अन्सारीका कहना है कि मेरी दशामे क्रमश: सुधार हो रहा है और वे चाहते है कि मै अपनी क्षमता जाँचनेके लिए कुछ अधिक शारीरिक तथा मानसिक श्रम करूँ। और मेरे मनमें शान्ति है। १८ तारीखकी शामको रक्तचाप १५४/९२ था। मुझे २८ तारीखको प्रदर्शनीका उद्घाटन करने लखनऊ जाना पड़ेगा। उसके बाद वर्धा जानेकी बात है। २८ तारीखके बाद क्या होगा, मै निश्चित तौर पर नही कह सकता। लेकिन मुझे शीघ्र ही पता लग जायेगा।

आशा है कि तुम्हारा बुखार फिर नही लौटा होगा और अपने घोड़ेसे तुमको सन्तोष होगा।

१. यह अनसूया बजाजका दूसरा नाम था।

२. चीनी।

३. सवर्ण हिन्दू लोग हरिजनों द्वारा कुएँके इस्तेमाल पर आपत्ति उठा रहे थे।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१७) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७८३ से भी।

३१६. पत्र: मीराबहनको

दिनके दो बजे, २० मार्च, १९३६

चि० मीरा,

अभी मेरे सामने एक दूसरा पत्र पड़ा हुआ है। इस तरह बार-बार ज्वर हो जानेके समाचारसे मैं चिन्तित हो उठा हूँ। अगर तुम गाँवोंमें रहकर स्वस्थ नही रह सकती, तो तुम्हे मगनवाड़ीमें रहकर वहीसे जो-कुछ बने, करना चाहिए। खुद अपने प्रति हिंसाका बरताव करो, यह भी ठीक नही है। वहाँकी कठिनाइयोंके बारेमें जमनालालजीको क्यो नही लिखती? जब मैंने उनसे कुएँकी कठिनाईका[1] जिक्र किया तो उन्होने इस बातका बुरा माना कि यह मै क्यो बता रहा हूँ। उन्होने कहा कि तय तो यह हुआ था कि अपनी सारी कठिनाइयाँ तुम सीधे उन्हींको बता दिया करोगी। शायद तुम्हारा जवाब यह हो कि वह दलील तो अब खत्म हो चुकी। मैं कहूँगा 'नही, बिलकुल तो नही।' जबतक तुम सेगाँवकी देखभाल कर रही हो तबतक सीधे उनको लिखना तो तुम्हारा फर्ज है ही, मगर इसका मतलब यह नही कि तुम्हे मुझे लिखना ही नही चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च:]

पालकके बीज मैं जुटा दूँगा। तुम्हारा मतलब भाजीसे तो नही है?

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१८) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७८४ से भी।

१. देखिए पिछला शीर्षक

३१७ पत्र : अब्बास के० वर्तेजीको

२० मार्च, १९३६

चि० अब्बास,

तेरा पत्र मिला। तू विवाह कर रहा है, यह ठीक है। तुम दोनो दीर्घजीवी और सुखी होओ। आश्रमकी मर्यादाका तुम दोनों पालन करना। क्या यह लड़की पढी-लिखी है? यदि वह पढी-लिखी हो तो मुझे पत्र लिखे। उसकी वय कितनी है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३१२) से।

३१८ पत्र : लिली ही० शाहको

२० मार्च, १९३६

चि० लिली,

तू तो अब उड़नेवाली है। किन्तु जिस पत्रमें तू आशीर्वाद माँग रही है उसे स्याहीसे लिखनेकी फुरसत भी तुझे नही मिल सकी! क्या तू काममें इतनी व्यस्त है या खुशीसे पागल हो गई है? चाहे जो हो, किन्तु मेरा आशीर्वाद तो तुम दोनोको है ही। तुम दोनोंका जीवन पवित्र हो, पवित्र बना रहे और देशहितके लिए समर्पित हो।

बापूके आशीर्वाद

[मार्फत] श्री हीरालाल अमृतलाल शाह
चापशी बिल्डिंग
प्रिंसेस स्ट्रीट, बम्बई–२

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७२०) से, सौजन्य लिलीबहन ए० पण्ड्या

३१९. पत्र : प्रभावतीको

२० मार्च, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र आज ही मिला। मैं लखनऊ ३ तारीखको नहीं बल्कि २८ तारीखको जाऊँगा। २९ तारीखको वहाँसे वापस लौटूँगा। बहुत करके तो मैं वर्धा जाऊँगा। आजकल भटकनेमें ही मेरा जीवन बीत रहा है। यह मुझे अच्छा तो नहीं लगता, फिर भी इसीमें श्रेय होगा। अनुभवमें तो वृद्धि होती ही है। तू जयप्रकाशकी पुस्तक पढ़नेका प्रयत्न तो कर, हालाँकि उसका हिन्दी अनुवाद तो [आगे-पीछे] होगा ही।

जवाहरलालसे मेरी बातचीत चल रही है और मैं समझता हूँ कि अभी कुछ दिन और चलेगी।

डॉ० अन्सारी आकर मुझे फिर देख गये। मेरे स्वास्थ्यकी प्रगतिसे वे सन्तुष्ट हैं। वजन वही १११ पौंड चल रहा है। रक्तचाप १५४/९२ था। रक्तचाप साँझको लिया गया था किन्तु फिर भी अच्छा माना जायेगा। यदि तू लखनऊमें होगी तो अच्छा है। मैं नहीं जानता कि मुझे कहाँ ठहराया जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६१) से।

३२०. पत्र : नारणदास गांधीको

२० मार्च, १९३६

चि० नारणदास,

तुमने ग्रामोद्योग और सफाईके प्रचार-कार्यमें हाथ लगाया है, यह मुझे तो बहुत अच्छा लगा है। इस कार्यमें तुम्हें सफलता अवश्य मिलनी चाहिए।

मेरे विचारसे ये कार्य भी स्वराज्यके अविभाज्य अंग हैं।

भानुशंकरकी तारीखें याद नहीं हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३२१. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२० मार्च, १९३६

चि० काका,

मेरी स्थिति कितनी दयनीय है। कोई मुझे पूरी तरहसे समझ ही नही सकता। कही ऐसा न हो कि मेरी तवीयत विगड़ जाये इसलिए कोई मुझसे ठीक तरहसे कुछ पूछता नही और मैं पूरी तरहसे बात नही करता। इसका परिणाम यह हुआ कि मैं सम्मेलनके[1] बारेमें समझ ही नही सका कि तीन-चार सौ व्यक्तियोको आमन्त्रित किया जायेगा और मुझे उसका सभापतित्व करना होगा। इसके अतिरिक्त स्वागत-समिति भी होगी! इस सारी झझटमें मुझे कैसे डाला जा सकता है? ऐसा कुछ भी करनेकी अभी तो मुझे मनाही है। मैं तो यह समझा था कि मुझे कुछ देर एक कोठरीमे बैठे रहना है और जो सुझाव मै देना चाहूँ सो देना है। मैं पूरी तरह बात नही समझ सका, इसमे दोष तो मेरा ही है यह मै स्वीकार करता हूँ। किन्तु इस प्रकार स्वीकार कर लेनेसे हमारा निस्तार थोड़े ही होनेवाला है। इससे जमनालालजी को बहुत आश्चर्य और दुःख भी हुआ। मैंने पत्रका उत्तर देनेकी जिम्मेदारी ली है और एक लम्बा तार दिया है। तार तो मुंशीके पते पर ही दिया है, क्योंकि तुम कहाँ होगे, इसका मुझे पता नही था। राजेन्द्रबाबू तो ऐसा सोचते हैं कि २५-२६ को जो हिन्दी [साहित्य] सम्मेलन होनेवाला है यदि उसके तुरन्त बाद ही यह समारोह रख दिया जाये तो अच्छा होगा। ऐसा करनेसे खर्चसे बचा जा सकेगा। तुम इसपर विचार करना। क्या जवाहरलाल इसमें कुछ रुचि लेते है? अप्रैलके अन्तमे शायद वे आ भी सकते है और यदि हम उन्हे अध्यक्ष बनायें तो कैसा रहे? आतिथ्य तो होगा ही। स्वागताध्यक्ष कोई अन्य होना चाहिए। यदि तुम स्वागत-समितिको जरूरी मानो तो जाजूजी कैसे रहेगे? या फिर तुम स्वय ही क्यो नही?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८९५) से।

१. अखिल भारतीय साहित्य परिषद्।

३२२. सन्तति-निग्रह–२

आज हमारे समाजकी ऐसी दशा है कि आत्म-सयमकी कोई प्रेरणा ही उससे नही मिलती। हमारा पालन-पोषण ही शुरूसे उससे विपरीत दिशामें होता है। माता-पिताकी मुख्य चिन्ता तो यही होती है कि जैसे भी हो अपनी सन्तानका ब्याह कर दे जिससे वे चूहोकी तरह बच्चे जनते रहे। और अगर कही लडकी पैदा हो जाये तब तो जितनी भी कम उम्रमें हो सके, बिना यह सोचे कि इससे उसका कितना नैतिक पतन होगा, उसका ब्याह कर दिया जाता है। विवाहकी रस्म भी क्या है, मानो दावतो और बेमतलब तमाशोकी एक लम्बी दु खकथा ही है। गृहस्थका जीवन वैसा ही होता है जैसा कि पहलेसे होता आया है, यानी भोगका एक विस्तार ही होता है। छुट्टियाँ और सामाजिक उत्सव भी इस तरह रखे गये है, जिनसे विलासपूर्ण रहन-सहनकी ओर ही अधिकसे-अधिक प्रवृत्ति होती है। साहित्य, जो एक तरहसे गले मढ़ा जाता है, उससे भी आम तौर पर पाशविक वृत्तियोको प्रोत्साहन मिलता है। अत्यन्त आधुनिक साहित्य तो प्राय. यही शिक्षा देता है कि विषय-भोग ही कर्त्तव्य है और पूर्ण सयम एक पाप।

ऐसी हालतमें आश्चर्य क्या कि काम-पिपासाका नियन्त्रण असम्भव नही तो कठिन अवश्य हो गया है? फिर अगर हम यह मानते है कि सन्तति-निग्रहका अत्यन्त वाछनीय और विवेकपूर्ण एव सर्वथा हानिरहित साधन आत्म-सयम ही है, तो हमें सामाजिक आदर्श और वातावरणको ही बदलना होगा। इस इच्छित उद्देश्यकी सिद्धिका एकमात्र उपाय यही है कि जो व्यक्ति आत्म-सयमके साधनमे विश्वास रखते है वे दूसरोको भी उससे प्रभावित करनेके लिए अपने अटूट विश्वासके साथ खुद ही इस पर अमल शुरू कर दे। ऐसे लोगोके लिए, मै समझता हूँ. विवाहकी जिस सकल्पनाकी मैने पिछले सप्ताह चर्चा की थी[1] वह बहुत महत्त्व रखती है। उसे भली-भाँति ग्रहण करनेका मतलब है अपनी मन स्थितिको बिलकुल बदल लेना, अर्थात् पूर्ण मानसिक क्रान्ति। यह नही कि सिर्फ कुछ चुने हुए व्यक्ति ही ऐसा करे; बल्कि यही समस्त मानव-जातियोके लिए एक सर्वमान्य नियम बन जाना चाहिए। इसके उल्लघनसे मानव प्राणियोका दर्जा घटता है। इसकी सजा भी उन्हे तुरन्त मिलती है। जैसे अनचाहे बच्चोकी संख्यामे वृद्धि, बीमारियोका सतत बढते जाना और मनुष्यका ईश्वरके प्रति दायित्व रखनेवाले नैतिक बोधसे संपन्न जीवका धरातलसे पतन। इसमें शक नही कि कृत्रिम साधनो द्वारा सन्तति-निग्रहसे नव-जात शिशुओकी सख्या-वृद्धिपर किसी हद तक अंकुश रहता है, और साधारण स्थितिके मनुष्योका तगीसे थोडा बचाव हो जाता है; लेकिन इससे व्यक्ति और समाजकी जो नैतिक हानि होती है उसका

१. देखिए पृ० २७४-६।

पार नही। इसलिए कि जो लोग भोगके लिए ही सहवासकी अपनी इच्छाकी तृप्ति करते हैं; उनके लिए जीवनका दृष्टिकोण ही बिलकुल बदल जाता है। उनके लिए विवाह एक पवित्र धार्मिक सम्बन्ध नही रह जाता। इसका मतलब है, उन सामाजिक आदर्शोका एक बिलकुल ही दूसरा मूल्याकन, जिन्हे अभी तक हम बहुमूल्य निधिके रूपमें सहेजते रहे हैं। निस्सन्देह जो लोग विवाहके पुराने आदर्शोंको अन्ध-विश्वास मानते है, उनपर इस दलीलका असर नही होगा। इसलिए मेरी यह दलील सिर्फ उन्ही लोगोके लिए है जो विवाहको एक पवित्र सम्बन्ध मानते है और स्त्रीको पाशविक सुखका साधन नही, बल्कि सन्तानके सद्गुणोकी सरक्षक और मानवकी जननीके रूपमे मानते हैं।

मैंने और मेरे साथी कार्यकर्ताओने आत्म-सयमकी दिशामें जो प्रयत्न किया है, उसके अनुभवसे मेरे इस विचारकी पुष्टि होती है, जिसे मैंने यहाँ प्रस्तुत किया है। विवाहकी प्राचीन सकल्पनाके प्रखर प्रकाशमे होनेवाली खोजसे इसे बहुत ज्यादा बल प्राप्त हो गया है। मेरे लिए तो अब विवाहित जीवनमें ब्रह्मचर्य बिलकुल स्वाभाविक और अनिवार्य स्थिति बनकर अब स्वय विवाहकी ही तरह एक सहज तथ्य हो गया है। सन्तति-निग्रहका और कोई उपाय व्यर्थ और अकल्पनीय मालूम पड़ता है। एक बार जहाँ स्त्री और पुरुषमें इस विचारने घर किया नही कि जननेन्द्रियोका एकमात्र और महान् कार्य सन्तानोत्पत्ति ही है, फिर वे सन्तानोत्पत्तिके अलावा किसी और उद्देश्यसे सहवास करना अपने रज-वीर्यको एक दण्डनीय क्षति पहुँचाना मानने लगेंगे और उसके फलस्वरूप स्त्री-पुरुषमे होनेवाली उत्तेजनाको भी अपनी अमूल्य शक्तिकी वैसी ही दण्डनीय क्षति समझने लगेगे। हमारे लिए अब यह समझना मुश्किल नही है कि प्राचीन कालके वैज्ञानिकोने वीर्य-रक्षाको क्यो इतना महत्त्व दिया और क्यो इस बात पर उन्होने इतना जोर दिया कि हम समाजके कल्याणके लिए उसे शक्तिके सर्वोत्कृष्ट रूपमे परिणत करे। उन्होने तो स्पष्ट रूपसे इस बातकी घोषणा की है कि जो (स्त्री या पुरुष) अपनी कामवासना पर पूर्ण नियन्त्रण कर ले वह शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक -- सभी प्रकारकी इतनी शक्तियाँ प्राप्त कर लेता है जो अन्य किसी उपायसे प्राप्त नही की जा सकती।

ऐसे अनेक सिद्ध ब्रह्मचारियोकी बात तो दूर एक भी ऐसा व्यक्ति हमे अपने बीचमें दिखाई नही पड़ता, इससे पाठकोको घबराना नही चाहिए। अपने बीच जो ब्रह्मचारी आज हमे दिखाई देते है वे सचमुच बहुत अपूर्ण नमूने हैं। उनके लिए तो बहुतसे-बहुत यही कहा जा सकता है कि वे ऐसे साधक है, जिन्होने अपने शरीर पर सयम कर लिया है, पर मन पर अभी सयम नही कर पाये है। ऐसे दृढ वे अभी नही हुए हैं कि उन पर प्रलोभनका कोई असर ही न हो। लेकिन यह इसलिए नही कि ब्रह्मचर्यकी प्राप्ति बहुत दुसाध्य है, बल्कि इसलिए कि सामाजिक वातावरण ही उसके विपरीत है और जो लोग ईमानदारीके साथ यह प्रयत्न कर रहे है, उनमें से अधिकाश अनजाने सिर्फ पाशविक वासनाके सयमका यत्न करते है, जबकि इसमें सफल होनेके लिए उन सभी प्रकारकी वासनाओके सयमका यत्न किया जाना चाहिए, जिनके चगुलमे मनुष्य फँस सकता है। साधारण स्त्री-पुरुषोके लिए ब्रह्मचर्यकी उपलब्धि असम्भव तो नही है, पर

इसके लिए उनको किसी भी हालतमें उससे कम प्रयत्न या साधना नही करनी पड़ेगी जितनी कि किसी भी एक विज्ञानमे निष्णात होनेके अभिलाषी किसी विद्यार्थीको करनी पडती है। यहाँ ब्रह्मचर्यसे जो अभिप्रेत है, उसका अर्थ जीवनके विज्ञानमें निष्णात होना ही है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २१-३-१९३५

३२३. सुधारकोंकी मर्यादा

जबसे डॉ० अम्बेडकरने धर्म-परिवर्तनकी धमकीका बमगोला हिन्दूसमाजमे फेंका है, उन्हे अपने निश्चयसे डिगानेके लिए हरचन्द कोशिशे की जा रही है। जो हरिजन थोडे-बहुत साक्षर है और अखबार पढ सकते है, उनपर भी डॉ० अम्बेडकरकी धमकी का असर हुआ है। उन्होने हिन्दू सस्थाओ या सुधारकोसे इस धमकीके साथ नौकरियो, छात्र-वृत्तियो आदिकी माँग शुरू कर दी है कि अगर ऐसा न किया गया तो वे हिन्दू धर्म छोडकर उस धर्मको ग्रहण कर लेगे जो ऐसी सहूलियतें देनेको तैयार है और जिसके प्रतिनिधियोकी ओरसे इसका आश्वासन उनको मिल चुका है।

इसमें शक नही कि जिन्हे अपने पूर्व-पुरुषोके धर्मकी जरा भी परवाह है उनके लिए ये धमकियाँ भारी चिन्ताकी चीज है। लेकिन जिन लोगोका हिन्दू-धर्म अथवा यो कहे कि किसी भी धर्ममे विश्वास ही न रह गया हो, उनके साथ समझौता करनेसे कोई लाभ नही होगा, क्योकि धर्म सौदेकी चीज नही है। कौन किस धर्ममे रहे, यह निश्चय करना तो हरएक व्यक्तिका अपना ही काम है। धर्मको किसी भी रूपमे खरीदा नही जा सकता। और आध्यात्मिक बातोके लिए अगर इस तरहकी कोई बात कही जा सकती हो तो हम यही कह सकते है कि धर्मका सौदा तो अपने रक्तसे ही किया जा सकता है। अतएव अगर कोई हरिजन हिन्दू धर्म छोडना चाहे तो उसे ऐसा करनेकी पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

हाँ, ऐसे समय सुधारकके लिए अपने हृदयको टटोलना आवश्यक है। उसे सोचना चाहिए कि कही मेरे या मेरे पडोसियोके व्यवहारसे दुखी होकर तो ऐसा नही किया जा रहा है? अगर यही बात हो, और उसे मालूम पडे कि सचमुच उसका या उनका व्यवहार उचित नही था, तो उसे अपने व्यवहारमें परिवर्तन लाना चाहिए।

यह तो एक मानी हुई बात है कि अपनेको सनातनी कहनेवाले हिन्दुओकी एक बडी सख्याका व्यवहार ऐसा है जिससे देश-भरके हरिजनोको अत्यधिक असुविधा और खीझ होती है। आश्चर्य यही है कि इतने ही हरिजनोने हिन्दू-धर्म क्यो छोडा, और दूसरोने भी क्यो नही छोड़ दिया? यह तो उनकी प्रशसनीय वफादारी या हिन्दू-धर्मकी श्रेष्ठता ही है जो उसी धर्मके नाम पर इतनी निर्दयता होते हुए भी लाखो हरिजन उसमे बने हुए है।

हरिजनोकी इस आश्चर्यजनक वफादारी और उनके अनुपम धीरजका यही तकाजा है कि हरएक सवर्ण हिन्दू इस वातका ध्यान रखे कि हरिजनोके साथ वैसा ही व्यवहार हो जैसाकि किसी भी अन्य हिन्दूके साथ होता है। इसलिए सवर्णोको चाहिए कि एक ओर तो जो हरिजन हिन्दू-धर्म छोड़ना चाहते हो उन्हे नौकरियाँ और छात्रवृत्तियाँ प्राप्त करानेके रूपमें रिश्वत देकर ऐसा करनेसे रोकनेकी कोशिशे न करें और दूसरी ओर जीवनके हर क्षेत्रमे हरिजनोंके साथ पूरा न्याय किये जाने पर जोर दें। निस्सन्देह, सुधारकोंका यह काम है कि हरिजन खुद शिकायत करे, इससे पहले ही वे उनकी जरूरते जान-समझ ले। हरिजन-सेवक सघ अस्पृश्यता-निवारणके लिए सबसे वडी सस्था है। उपयुक्त हरिजन छात्रोको छात्र-वृत्तियाँ देनेकी अत्यन्त उदार नीति ग्रहण करके इसने वडी बुद्धिमानी की है। जहाँतक हो सकता है यह हरिजनोको ही नौकर रखता है, लेकिन यह किसी हालतमें बेरोजगार हरिजनोके लिए नौकरियाँ तलाश करनेका 'ब्यूरो' नही है। वैसे आम तौर पर जो हरिजन कोई काम करना चाहे उनके लिए नौकरियोकी कोई कमी नही, वशर्ते वे उस कामके लायक हो। सबसे वडी कठिनाई जो हजारो हरिजनोको होती है वह तो पीने तथा घर-गृहस्थीके अन्य कामोके लिए शुद्ध पानीका न मिलना, सार्वजनिक स्कूलो तथा अन्य सस्थाओमें प्रवेश न पाना, गाँववालो द्वारा हमेशा तग किया जाना और मन्दिरोमें प्रवेश न मिलना है। ये ऐसी असुविधाएँ है जिनका वहुसख्यक हरिजनोको रात-दिन अपने जीवनमे अनुभव होता रहता है। यदि सामूहिक रूपसे उन्होने हिन्दू-धर्मको छोडा तो वह इन असुविधाओके ही कारण होगा जो उन सबको एक समान भुगतनी पडती है और जिनके कारण उनकी स्थिति हिन्दू-समाजमे कोढी-जैसी है। हिन्दू-धर्मको इस समय कड़ी अग्नि-परीक्षामे से गुजरना पड़ रहा है। अगर यह नष्ट हुआ तो वह वैयक्तिक या सामूहिक धर्म-परिवर्तनसे नहीं वल्कि सवर्ण कहे जानेवाले हिन्दुओ द्वारा हरिजनोके लिए मौलिक न्यायसे भी इनकार किये जानेके पाप-स्वरूप होगा। अतएव धर्म-परिवर्तनकी हर धमकी सवर्णोंको इस वातकी चेतावनी है कि अगर समय रहते वे न चेते तो फिर पानी सिरसे ऊपर हो जायेगा।

एक शब्द उन अधीर और जरूरतमन्द हरिजनोसे भी। हिन्दू संस्थाओ या व्यक्तियोसे सहायता माँगते समय वे धमकियाँ न दें। उन्हे तो अपने मामलेके औचित्यके वलपर ही निर्भर रहना चाहिए। हरिजनोमें से ज्यादातर तो यही नही जानते कि धर्म-परिवर्तनका अर्थ क्या है। वे तो, सवर्ण लोग अपनी खुदगर्जीके लिए जो दुर्व्यवहार उनके साथ करते है उसे चुपचाप सहते रहते है। उन्हीकी सहायता करना हिन्दू-सुधारकोका मुख्य काम होना चाहिए, फिर वे स्वय चाहे कोई शिकायत करें या नहीं। जो हरिजन इतने प्रवुद्ध है कि अपने साथ हो रहे हीन व्यवहारको समझते और महसूस करते है और साथ ही यह भी जानते है कि धर्म-परिवर्तनका क्या अर्थ है, वे या तो इतने अच्छे हिन्दू है कि अपने पूर्वजोके धर्मका परित्याग नही कर सकते और इसलिए हर तरहकी सहायताके योग्य पात्र है, या वे धर्मसे उदासीन होनेके कारण हिन्दू-धर्ममें वने रहनेके लिए सवर्ण हिन्दुओसे वदलेमे किसी भी सहायताका

दावा नही करना चाहते। अतएव प्रबुद्ध हरिजनोसे मैं कहूँगा कि स्वय उनका भी भला इसीमें है कि भौतिक उन्नतिके लिए धर्म-परिवर्तनकी धमकी न दें। और सुधारकोको जहाँ एक ओर उन धमकियोके आगे हर्गिज नही झुकना चाहिए, वही दूसरी ओर सवर्ण हिन्दुओके हाथो हरिजनोके साथ कोई अन्याय न हो, इसके लिए उन्हे सतत प्रयत्न करते रहना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-३-१९३६

३२४. पत्र: क० मा० मुंशीको

दिल्ली
२१ मार्च, १९३६

भाई मुंशी,

सम्मेलनके बारेमे काकाका एक पत्र जमनालालजीके नाम आया था जिससे उन्हे बहुत आश्चर्य हुआ और मैं भी घबरा गया। उसके आधार पर मैंने आज उन्हे तुम्हारे पते पर एक लम्बा तार दिया है। मैंने काकाको पत्र भी लिखा है।[1] मुझसे लम्बे भाषणकी आशा नही रखनी चाहिए। मेरी हालत अभी ऐसी नही है कि मैं इतनी बडी मण्डलीका सभापति बन सकूँ। मैंने जब अपनी स्वीकृति दी थी उस समय मैं यह मानता था कि वहाँ मुट्ठीभर लोग होगे, और हम एक-दूसरेके साथ आपसमे विचारोका आदान-प्रदान करेंगे। किन्तु लगता है तुम्हारा विचार बड़े पैमाने पर सम्मेलन करनेका है। पहलेसे पूरी जानकारी प्राप्त न करनेका दोष तो मेरा ही माना जायेगा। अत: अब जो उचित जान पड़े वैसा करना। राजेन्द्रबाबूका सुझाव[2] मुझे तो पसन्द है। उस अवसर पर वे स्वयं भी उपस्थित रह सकते हैं और शायद जवाहरलाल भी उपस्थित हो। वे [जवाहरलाल] शायद सभापतित्व करनेको भी तैयार हो जायें। स्वागताध्यक्ष काकाको या अन्य किसी व्यक्तिको क्यो नही बनाते? यदि तुम परिषदका आयोजन हिन्दी सम्मेलनके बाद करो और स्वागत-समिति बनाना ही चाहो तो तुम्हे जमनालालजी मिल जायेंगे।

आशा है तुम दोनो सकुशल होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५९८) से। सौजन्य: क० मा० मुंशी

१ और २. देखिए पृ० २९१।

३२५. पत्र: तारा ना० मशरूवालाको

२१ मार्च, १९३६

चि० तारा,

आखिर तूने मुझे पत्र नहीं ही लिखा। तेरी चिन्ता कहो या तेरी याद रोज आती रहती है। तू अपनी बीमारीकी अवहेलना करती है इसे मैं दोष मानता हूँ। तुझमें अनेक गुण है किन्तु शरीरकी अवहेलनाकी बात खलती है। तुझे रोगपर विजय पानेका 'पुरुषार्थ' करना चाहिए। तूने गौरीशंकरभाईसे उपचार कराना छोड़ दिया तो कोई बात नहीं। जिसपर तेरा विश्वास हो उसका उपचार कर। तुझे अपने पास रखनेको तो मैं तैयार ही हूँ। यदि मैं तेरी बात समझ पाया होऊँ तो जबतक तू मेरे पास रही तबतक तुझे किसी तरहकी परेशानी नहीं हुई। एक काम कर, एक तोला कच्चे लहसुनको अच्छी तरह पीसकर उसके दो भाग करके अपने भोजनके साथ सात दिन तक खाकर देख। इसका मुझ पर तो बहुत ही अच्छा असर हुआ था। शरीरके विषको निकालने और पेटकी वायुको दूर करनेमें यह बहुत लाभप्रदायक है। डॉ० अन्सारीने ओषधके रूपमें नवीनको यह लिख दिया था। हरा लहसुन, गाँठ और पत्तियोंके साथ खाना चाहिए और पहले उसे अच्छी तरह धोकर फिर पीसना चाहिए। लहसुन स्वादके लिए नहीं बल्कि औषधिके रूपमें खाना है। मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२६) से। सी० डब्ल्यू० ५००२ में भी, सौजन्य . कनुभाई ना० मशरूवाला

३२६. भेंट: एम० सी० राजाको[1]

[२२ मार्च, १९३६][2]

राव बहादुर राजाने[3] . . . परिसीमन समितिकी सिफारिशों पर चर्चा की। विधान-सभा द्वारा नियुक्त एक समिति हाल ही में उन पर विचार कर चुकी थी। उन्होंने गांधीजीसे कहा कि वह अब आगेकी कार्रवाईके बारेमें अपने सुझाव दें।

. . . मैं यह तो नहीं बतला सकता कि उनके सुझाव क्या थे . . . पर मुझे इतनी छूट जरूर है कि मैं अन्य विषयों पर हुई उनकी बातचीतका सारांश आपको बतला सकता हूँ। राव बहादुर राजा एक बड़े पैमाने पर धर्म-परिवर्तनोंकी दायित्वहीन चर्चासे बड़े आशंकित थे और जानना चाहते थे कि क्या हरिजनोंके बीच धर्मके जोरदार प्रचारका कार्य शुरू नहीं किया जा सकता। उन्होंने कहा कि उदाहरणके तौर पर ऐसी भजन-मण्डलियाँ बनाई जा सकती हैं जो हरिजन बस्तियोंमें जाकर भजन और कथाएँ सुनाएँ। उन्होंने पूछा कि क्या इसके लिए संघ[4] उत्तर भारतसे कुछ मण्डलियाँ नहीं भेज सकता। गांधीजीने कहा:

उत्तर भारतसे मण्डलियाँ भेजी तो जा सकती हैं, लेकिन दक्षिणको उत्तरका मुंह ताकनेकी कोई जरूरत ही नहीं। दक्षिण भारतके पास तो भजनोंका अपना ही अपार भण्डार मौजूद है और वहाँ प्रान्तमें ही भजन-मण्डलियाँ खड़ी कर लेना बहुत आसान है। मैंने त्यागराजके प्रेरणादायक भजन सुने हैं और इसके बारेमें आपको श्रीयुत राजगोपालाचारी तथा डॉ० राजन और अनेक सुझाव देंगे। आपको मलाबारके विषयमें तो कवि वल्लतोल नारायण मेननसे अच्छा कोई मार्ग-दर्शक मिल नहीं सकता। मैं आपको बतलाता हूँ कि हरिजनोंमें भी संगीतकी प्रतिभाके धनी अनेक बालक मौजूद हैं जिनका हम अबतक कोई उपयोग नहीं कर पाये हैं। मुझे भावनगरके अपने हरिजन-दौरेमें[5] एक हरिजन बालक मिला था। उसने अपने सादे-से गीतोंके बल पर ही श्रोताओंको मंत्र-मुग्ध कर दिया था। अनसूयाबहनकी हरिजन बच्चोंकी

१. महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' से लिया गया है।

२. हिन्दू से।

३. केन्द्रीय विधान-सभाके सदस्य।

४. सम्भवतः अभिप्राय हरिजन सेवक संघसे है।

५. १ से ३ जुलाई १९३४ तक।

किंडरगार्टन पाठशालामे[1] एक ऐसा प्रतिभाशाली बच्चा था जो बडे उस्तादोकी तरह तबला-वादन करता था और वहाँ इतनी ही अच्छी गायकी करनेवाले बच्चे भी थे।

डॉ० अम्बेडकरके मनमे कटुता पैदा होना बिलकुल वाजिब है। जितना अपमान और तिरस्कार उनको सहना पडा है उतनेके बाद तो हममे से कोई भी क्यो न होता उसके मनमे भी कटुता और नाराजगी आ ही जाती। जब कटु होने और अपनी नाराजगी जाहिर करने पर कोई प्रतिबंध नही तब फिर वह भी ऐसा क्यो न करे। मेरी रायमें वह जिस चीजको समझ नही रहे है वह यह है कि इसके लिए जिम्मेदार हिन्दू लोग है, हिन्दू धर्म नही।

राजा : लेकिन क्या अब भी उनको वैसा तिरस्कार झेलना पड़ता है? वह तो पहलेकी बात रही होगी।

गाधीजी उस प्रकारका तिरस्कार तो जरूर अब नही किया जाता, हाँ, लेकिन आज भी किसी सनातनी ब्राह्मणके घरमें उनका स्वागत तो नही किया जायेगा।

राजा : परन्तु वह किसी सनातनी ब्राह्मणके घरमें प्रवेश क्यों करना चाहते हैं?

गाधीजी. यह नही कि वह प्रवेश करना चाहते है, पर इस रुखसे उनको नाराजगी है। और यदि शेष सभी सवर्ण लोग उनके साथ बहुत ठीक वर्ताव करते होते तो उनको सनातनी ब्राह्मणोके इस निषेध तकसे कोई नाराजगी न रहती। इसी प्रकार यदि कोई सनातनी हिन्दू ब्राह्मण कुछ हिन्दुओके साथ डॉ० अम्बेडकरको भी अपने यहाँ दावत पर बुलाये और उनके वहाँ पहुँचने पर वह डाक्टरको सबमे अलग बैठने के लिए कहे, तो शेष सभी हिन्दुओका कर्तव्य हो जाता है कि वे डॉ० अम्बेडकरके साथ उसके घरसे चले जाये। यदि हम सभी इसी तरह वर्ताव करते तो डॉ० अम्बेडकर सहज ही अपनेको हममे से ही एक मानने लगते।

राजा : मैं समझ गया। लेकिन, महात्माजी, हम काफी आगे बढ़ चुके हैं और हम इसका अन्त करके ही दम लेंगे।

गाधीजी निस्सदेह। हमने अस्पृश्यताके दानवको धराशायी कर दिया है, पर बात यह है कि वह इतना विशाल है कि दम तोडते-तोड़ते भी काफी कुछ गडबडी और बदमाशी कर सकता है। पर मै तो मनमें उस दिनका सपना सँजोए हूँ जब समाजमे प्रत्येक हरिजनका दर्जा उतना ही ऊँचा उठा दिया जायेगा जितना कि तथाकथित उच्च वर्णके हिन्दुओमे बड़ेसे-बडोको मिला हुआ है। डॉ० अम्बेडकरने एक बार मुझसे यह दो-टूक प्रश्न किया था कि क्या अस्पृश्यता जब बिलकुल मिटा दी जायेगी तब शूद्रको समाज में ऊँचेसे-ऊँचा वह दर्जा मिल जायेगा जिसकी कामना उन जैसे व्यक्ति करते है। मैंने उनसे कहा था कि तब यदि उनको शूद्रकी श्रेणीमे रखा जायेगा तो अन्य सभी हिन्दू भी इसी श्रेणीमें माने जायेगे। आजके समाजमे वर्ण अपनी ऊँची सामाजिक प्रतिष्ठा जतलानेका एक साधन बन गया है। सच्चे वर्णकी मेरी जो सकल्पना है उसका अब अस्तित्व नही रह गया है। विशुद्धतम हिन्दू-धर्मकी

१. अभिप्राय 'बालगृह' से है। गाधीजी इसे २९ जून, १९३४ को देखने गये थे।

दृष्टिमें तो ब्राह्मण, चीटी, हाथी और श्वपच (कुत्तेका मास खानेवाले) सभीका एक ही दर्जा है।[1] और चूंकि हमारा दर्शन इतने उच्च मानसिक धरातलका है और चूंकि हम उस पर अमल करनेमें असमर्थ रहे हैं, इसलिए वही दर्शन आज हमारे बीच सड़ाँध पैदा करने लगा है। हिन्दू-धर्म सारे मानवोके ही नही, समस्त जीवोके भाईचारेका आग्रह रखता है। यह एक ऐसी सकल्पना है कि इसे समझनेमें दिमाग चकराने लगता है, लेकिन हमें उस स्तर तक ऊपर उठना पड़ेगा। मनुष्य और मनुष्यके बीच एक वास्तविक, जीवन्त समानता स्थापित करते ही हम मनुष्य और समस्त ब्रह्माण्डके बीच समानता स्थापित करनेमे समर्थ हो जायेंगे। उस दिनके उदय होते ही हमारी धरती पर शान्ति और पारस्परिक मानवीय सद्भावना प्रतिष्ठित हो जायेगी।

राव बहादुर राजाने कहा कि पता नहीं नये संविधानके तहत हरिजन लोग कांग्रेस पार्टी या जस्टिस पार्टी या इसी तरहके अन्य दलोंके साथ अपनेको बिलकुल एक कर सकेंगे या नहीं। इसके बारेमें गांधीजीकी सलाह बिलकुल स्पष्ट थी। उन्होंने कहा :

आप लोगोको किसी भी दलके साथ अपनेको बिलकुल एक नही करना चाहिए। सरकारकी वर्तमान प्रणालीसे सम्बन्धित मेरे विचारोमें कोई परिवर्तन नही हुआ है, परन्तु आप लोग युगोसे जिस प्रकारकी निर्योग्यताओसे पीडित रहते आ रहे है, उनको देखते हुए, मैं यह उम्मीद नही करता कि आप भारतके सबसे अधिक प्रगतिशील दलके साथ भी अपनेको बिलकुल एककार करे। सरकार आपको जो भी दे उसे आप स्वीकार कर ले, लेकिन अपना आत्म-सम्मान बनाये रखे। इसी तरह कांग्रेसके कार्यक्रममें मद्य-निषेध, नमक-कर हटाना, आदि जो भी अच्छी चीजें है उनकी आप ताईद करे और सरकारको जता दें कि आप हरिजनोको किसी भी तरहसे भारतकी गरीब जनतासे अलग नही होने देंगे, क्योकि उसके और आपके हित समान हैं। आप किसी भी दलमें शामिल न हो, पर साथ ही किसी भी सूरतमें देशको बेचनेके लिए तैयार न हो। यदि आप ऐसा कर पाये, तो भारतमें हरिजनोकी आवाजमें काफी वजन रहेगा। ऐसे हरिजन जाग्रत होने पर एक ऐसी शक्ति बन जायेंगे जिसे कोई मिटा नही सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-३-१९३६

१. भगवद्गीता, अध्याय ५, श्लोक १८।

३२७. पत्र : मीराबहनको

दिल्ली
२३ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्रसे मुझे अनेक अर्थोंमे अशान्ति मिली। तुम अबतक चगी नही हो पाई। अगर सेगाँवका जीवन तुम्हारे अनुकूल नही, तो तुम्हे उसे समय रहते छोड़ देना चाहिए; विहारकी तरह नही करना जिसे तुमको खाट पकड लेने पर छोडना पडा था। भले ही मुझे अपनी मर्यादाएँ मालूम न हो, पर तुम्हे तो बार-बार सावधान करते रहनेकी जरूरत है ही। तुम्हे अपना स्वास्थ्य चौपट नही कर लेना चाहिए।

और यह भी सम्भव है कि यह बीमारी भी मुझसे अलग पड़ जानेके कारण हो, यद्यपि इस बार पिछली मर्तबा-जैसे हालात पहलेसे मौजूद नही है। मुझे लिखे अपने पत्रको फिरसे पढ़ो। एक प्रति तुमने रखी है। यदि उसमे परिवर्तन करनेकी आवश्यकता पड़े तो भयकर होगा। लेकिन भयकर हो या न हो, आवश्यकता हो तो परिवर्तन करना ही चाहिए। बस एक बात नही होनी चाहिए — यह कि निजी सेवाके लिए मेरे पास रहो। मेरा खयाल है कि हमने आपसमें समझकर जो एक चीज तय कर ली है और जो किसी भी प्रकारके दबावके बिना तय हुई है उसे तुम प्रसन्न-चित्त रहकर निभा सकती हो। इसका मैंने उल्लेख किया, बस सिर्फ इसीको लेकर तुमको अपना मन अशान्त नही होने देना चाहिए।

मै इसकी बिलकुल कोई चर्चा न करता; करनी इसलिए पडी कि यहाँ अपने ठहरनेकी अवधि मुझे मजबूरन बढानी पड रही है और कह नही सकता कि कबतक ठहरना पडेगा। जो भी हो, मध्य अप्रैलके बाद तो नही ही खिचेगा और ७ अप्रैलसे पहले भी नही। ५ अप्रैल तक मेरा कार्यक्रम निश्चित हो चुका है।

हाँ, समाचारपत्रोका विश्वास मत करो। डॉ० अन्सारी मुझे रोज-रोज अधिक ढील देते जा रहे है। कल रात उन्होने पाया कि मै चार दिन पहलेके मुकाबले अब ज्यादा चगा हूँ। अब वे चाहते है कि मै हर दिन दो बार एक-एक घण्टे टहला करूँ और पहलेसे ज्यादा दिमागी काम करूँ। वह यह जाँचना चाहते है कि शारीरिक और मानसिक श्रमकी मेरी क्षमताकी सीमा क्या है। मैंने आज 'हरिजन' के लिए एक लेख लिखनेके अलावा अनेक पत्र भी लिख डाले है।

इस साल देश-भरमें मौसम कुछ बड़ा अजीव-सा चल रहा है। यहाँ इन दिनों खूब-तेज सनसनाती हवाएँ चल रही है। वैसे मार्चमें ऐसा कभी नही रहता था।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२०)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७८६ से भी।

३२८. पत्र : बलीबहन एम० अडालजा और कुमीबहन टी० मणियारको

२३ मार्च, १९३६

चि० वली और कुमी,

लिखनेको कुछ विशेष तो नहीं है, किन्तु तुम दोनो बहनोंने मुझे पत्र लिखा था इसलिए उसकी प्राप्तिकी सूचना दे रहा हूँ। तुम दोनो साबरमतीमें आकर मुझसे मिल गईं इससे मुझे तो बहुत प्रसन्नता हुई। आशा है बच्चे आनन्दपूर्वक होंगे और कुमी अब मानसिक रूपसे शान्त होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५५)से; सौजन्य. मनुबहन सु० मशरूवाला

३२९. पत्र : मनु गांधीको

२३ मार्च, १९३६

चि० मनुड़ी,

बहुत दिनो बाद तेरा पत्र मिला। मईके महीनेमें यदि मैं और बा वर्धामें नहीं होंगे तो मैं देखूंगा कि क्या करना उचित होगा। तू अपनी मौसियोंकी अनुमति लेकर तैयार रहना। बा अमृतसरसे आज ही लौटी है। मदालसा उसके साथ गई थी। आशा है तेरा स्वास्थ्य अच्छा होगा।

तू मुझे पत्र लिखनेमें आलस मत करना।

मैं और कुछ दिन अभी इसी तरफ रहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५६) से; सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला

३३०. पत्र : मीराबहनको

दिल्ली
२५ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। यह दो पंक्तियाँ सिर्फ यह बतानेको लिख रहा हूँ कि मुझे कांग्रेसके लिए रुकना है। इसलिए १५ अप्रैलसे पहले तो वहाँ नही आ पाऊँगा। मुझे दु:ख है, लेकिन इसे रोका नही जा सकता था। बस अभी कविवर[1]से मिलने जाने ही वाला हूँ। डॉ० अन्सारीका निदान अभी आशाजनक ही है। मैनोमीटर लगाने पर ८ प्वाइंट वृद्धि दिखाई दी। लेकिन वे चिन्तित नही है। वे इस बात पर आग्रह कर रहे है कि मै लहसुन लेता रहूँ। कल भी तुम्हे लिखा है।[2]

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२१)से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७८७ से भी।

३३१. पत्र : बलवन्तसिंहको

२५ मार्च, १९३६

चि० बलवतसीघ,

तुमारे दोनो खत पढ लिये। यदि सावलीमें शाति न मिले या शरीर अच्छा न रहे तो अवश्य जहाँ उचित हो वहा जाओ और साथ मेरे आशीर्वाद ले जाओ। ज्यादा किशोरलालभाई लिखेंगे। उनको मैंने काफी लिखा है।[3]

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८३)से।

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

२. इस प्रकारका कोई पत्र उपलब्ध नहीं है। लगता है गाधीजीका अभिप्राय २३ मार्चवाले पत्रसे ही था।

३. पत्र उपलब्ध नहीं है।

३३२. पत्र : प्रभावतीको

२५ मार्च, १९३६

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला। मैं यह पत्र रातमें लिख रहा हूँ, इसलिए अधिक नहीं लिखूंगा।

जवाहरलालसे काफी बातें हुई हैं। किन्तु उनके बारेमें क्या लिखूं? शायद मुझे ३ तारीख तक लखनऊमें रुकना पड़ेगा। उसी तारीखको मैं इलाहाबाद जाऊँगा। वहाँसे फिर शायद ७ तारीखको लखनऊ पहुँचूंगा। और कांग्रेस अधिवेशन तक वहाँ रहूँगा। इसलिए मैं यह मान लेता हूँ कि तू मुझे कहीं-न-कहीं तो मिलेगी ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६५)से।

३३३. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

दिल्ली
२७ मार्च, १९३६

प्रिय गुरुदेव,

मेरे तुच्छ प्रयत्न ईश्वरकी कृपासे सफल हुए। यह रही वह रकम।[1] अब आप शेष कार्यक्रम रद करनेकी घोषणा करके जनताके मनको राहत दें। ईश्वर आपको अभी वर्षों सकुशल रखे।

सप्रेम आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२८८) से।

१. गांधीजीने रवीन्द्रनाथ ठाकुरको ६० हजार रुपयेका एक ड्राफ्ट भेजा था।

३३४. चर्चा : हरिजन-सेवकोंके साथ[1]

[२७ मार्च, १९३६][2]

हरिजन-सेवक[3] : हम लोगोंने तो स्वामी श्रद्धानन्दजीसे प्रेरणा प्राप्त की है।

गांधीजी : केवल आप लोग ही नहीं, हममें से बहुतोंको स्वर्गीय स्वामीजीके उच्च जीवनसे प्रेरणा मिली है। . . .

ईसाई मिशनरियोंका दुष्टतापूर्ण प्रचार-कार्य रोकनेके लिए आप क्यों नहीं कुछ करते? उनका प्रचार-कार्य विफल करनेके लिए हिन्दू मिशनरी क्यों न तैयार कराये जायें? महात्माजी, यह सारा कार्य-क्षेत्र अपने हाथमें ले लेनेकी आपमें पर्याप्त शक्ति है, पर आवश्यकता है प्रचारकोंकी।

सुनिए, बात यह है कि हरिजन-सेवक-संघ बनानेका हमारा यह मतलब नहीं था। हरिजनोंकी अयोग्यताओंको दूर करना और जो सामाजिक स्तर शेष हिन्दुओंका है उसतक हरिजनोंको लाना, यही संघका उद्देश्य है। रही आपके प्रचार-कार्यकी बात, सो सबसे अच्छा प्रचार-कार्य तो अपना व्यक्तिगत उदाहरण होगा। प्रत्येक हरिजन-सेवक यदि पवित्रता और सादगीका अनुकरणीय जीवन बिताये, हरिजनोंपर सदैव प्रेमकी वर्षा करे, तो मुझे पूरा विश्वास है कि किसीके प्रत्युत्तरमें हमें कोई प्रचार-कार्य करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

पर कुछ ऐसे स्थान हैं जहाँ मिशनरी चटसे पहुँच जाते हैं। वहाँ वे करते-कराते तो कुछ खास नहीं, बस, वहाँ एकाध पानीका नल लगवा देते हैं या एकाध अच्छी-सी सड़क बनवा देते हैं, और उनसे लाभान्वित होनेवालोंसे एलान करवा देते हैं कि उन्होंने ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया है। वे बेचारे अकसर इस तरहके ईसाई बन जाते हैं, पर ईसाई बननेकी घोषणा करनेके सिवा वे ईसाई धर्मका और कुछ भी पालन नहीं करते। वे हमेशा अपने हरिजन भाइयोंका सुख-दुःख बँटाते हैं, और उन्हींके हिन्दू त्यौहार मनाते हैं। मर्दुमशुमारीमें शायद अपनेको ईसाई लिखा देनेके सिवा वे सब तरहसे हिन्दू ही रहते हैं।

सच है। वे हरिजन ही रहेंगे, और मिशन भी उनकी कुछ बहुत कद्र नहीं करेंगे। हमारा कर्त्तव्य तो यह है कि कट्टरपंथी हिन्दुओंमें हम डटकर ठोस काम करें, जिससे कि वे हरिजन भाइयोंको अपने समाजमें सगे भाई-बन्धुओंकी तरह

१ और २. हरिजन-सेवक, जिनमें कुछ हरिजन भी थे, गांधीजीसे उनके दिल्ली-निवासके "अंतिम दिन" अर्थात् २७ मार्चको मिले थे।

३. वे हरिजन-सेवक जो आर्य-समाजके सदस्य थे।

दाखिल कर ले, और वे बेचारे जिन अयोग्यताओंके आज शिकार हो रहे है उन अयोग्यताओंका हमेशाके लिए अन्त कर दें।

मगर कट्टर हिन्दुओंके दिलमें हम यह बात बिठायें कैसे? उनके साथ हम लड़ाई-झगड़ा मोल ले ले? लोकल बोर्डके कुओंको ही लीजिए; हरिजनोंके लिए ये कुएँ यों मोल तो दिये गये है, पर कट्टरपंथी लोग उन्हें उनसे पानी भरने दें तब न? तो क्या हम अपने हरिजन भाइयोंको यह सलाह दें कि वे उन कट्टरपंथी लोगोंके विरोधकी जरा भी परवाह न करें और यह चुनौती दे दें कि जो भी वे करना चाहें कर लें?

हाँ, आप ऐसा कर सकते है, पर वहाँ, जहाँ कि आपको कोई भय न हो और जहाँ आपको पूरा भरोसा हो कि किसी तरहका कोई विरोध या सघर्ष नही होगा और हरिजन किसीसे दबेंगे नही। किन्तु यह विरोध तो अब धीरे-धीरे सभी जगह कम होता जा रहा है और मुझे विश्वास है कि चुनौती देनेकी कोई जरूरत नही पड़ेगी।

महात्माजी, जब अस्पृश्यता नष्ट हो जायेगी तब आप हमारा कौन-सा वर्ण निश्चित करेंगे?

मै वर्ण निश्चित करनेवाला कौन होता हूँ? पर अगर मेरी चले तो मै तो यह घोषणा कर दूँ कि हम सब हिन्दू है, सब एक ही वर्णके है। यह मैने बार-बार स्पष्ट कर दिया है कि वास्तवमे आज वर्ण तो कोई रहा ही नही। जब हम स्वराज्य प्राप्त कर लेगे, अपनेको जब हम शुद्ध कर लेगे, तब कही हम चार वर्णोको उनके सर्वोत्कृष्ट रूपमे स्थापित कर सकेंगे। किन्तु वर्ण तब किसी मनुष्यको उच्चतर पद या अधिकार नही देगा, वह तो उसे और भी बडे उत्तरदायित्व और कर्त्तव्योंमें नियोजित करेगा। सेवाकी भावना लेकर जो लोग समाजको ज्ञान देंगे, वे ब्राह्मण कहलायेगे। वे यह दावा नही करेगे कि वे औरोसे बडे है। वे तो समाजके सच्चे सेवक होगे। सामाजिक प्रतिष्ठा या अधिकारोकी असमानताका जब अन्त हो जायेगा, तब हम सब बराबर हो जायेंगे। मै नही जानता कि सच्चे वर्ण-धर्मका हम कब पुनरुद्धार कर सकेंगे। वर्ण-धर्मके वास्तविक पुनरुद्धारका अर्थ होगा सच्चा प्रजातन्त्र।

हम लोग आज न सवर्ण हिन्दुओंके साथ रोटी-व्यवहार चाहते हैं, न बेटी-व्यवहार। हम तो बस सच्ची नागरिकताके अधिकार चाहते है। हमें भी उन्हींकी तरह वैसे ही अवसर मिलने चाहिए। मैं चाहता हूँ कि मेरा लड़का वकील या बैरिस्टर या डाक्टर, जो भी बनना चाहे उसे बननेकी पूरी आजादी हो।

यह तो आप जानते ही है कि आपका लडका वकील, डाक्टर या जो भी बनना चाहे, बन सकता है। इसमें कोई कानूनी रुकावट तो है ही नही। हाँ, बाधक तो ये रूढियाँ, सख्त दुराग्रह और अधविश्वास हो रहे है। सो सघ अपनी शक्तिभर इस दुराग्रह और अधविश्वासके विरुद्ध लड़नेका प्रयत्न कर रहा है। डॉ० अम्बेडकर बैरिस्टर है ही, और अब प्रोफेसर है। पर आज सवर्णोकी तरह उनके साथ

जो बराबरीका वर्ताव नही किया जाता उसका कारण तो लोगोकी यह विवेकहीन रूढिप्रियता ही है। रूढिवादियोको आप कानूनके बलपर विवश तो नही कर सकते। आप तो शिक्षाके द्वारा रूढ़िवादियोका मत-परिवर्तन कर सकते है। नासिकका एक उदाहरण लीजिए। वहाँ एक हरिजन बीड़ियाँ वेचा करता था। जब तक किसीको यह मालूम नही पड़ा कि वह हरिजन है तब तक तो उसकी दूकान खासी अच्छी चलती रही। पर ज्यो ही मालूम हुआ कि वह हरिजन है, लोगोने उसकी दूकानसे बीड़ी खरीदनी बन्द कर दी। हम उसकी दुकानसे बीड़ी खरीदनेके लिए लोगोको किस तरह मजबूर करे? उनसे हम सिर्फ यही कह सकते है कि किसी मनुष्यका, उसके अमुक जातिमे जन्म लेनेके कारण, बहिष्कार करना अमानुषिक और अधार्मिक है।

पर लोग हमें हरिजन क्यों कहें, हिन्दू क्यों नहीं?

मै जानता हूँ कि आपमे से कुछ थोड़े-से लोगोको यह 'हरिजन' नाम बुरा लगता है। पर इस नामकी उत्पत्ति आपको जान लेनी चाहिए। आप लोगोको पहले 'दलितवर्ग' या 'अस्पृश्य' अथवा 'अछूत' कहा जाता था। ये सब नाम स्वभावत: आपमें से अधिकाश लोगोको बुरे लगते थे, अपमानजनक-से मालूम होते थे। आपमें से कुछ लोगोने इन नामोपर अपना विरोध भी प्रगट किया, और मुझे एक अच्छा-सा नाम ढूँढ देनेके लिए लिखा। अग्रेजीमे 'डिप्रेस्ड'से एक बेहतर शब्द 'सप्रेस्ड' मैंने ले लिया था, पर जबकि मै अच्छा हिन्दुस्तानी नाम सोच रहा था, एक मित्रने मुझे 'हरिजन' शब्द बतलाया। यह शब्द उन्होने एक महान् सन्तके भजनमे से लिया था[1]। यह शब्द मुझे जँच गया, क्योकि यह आपकी दीन-दशाको बडी अच्छी तरह व्यक्त करता था, और साथ ही, इसमे कोई अपमान-जैसी बात भी नही थी। 'हरिका भक्त' यह हरिजन शव्दका अर्थ है, और चूँकि हरि असहायोका सहायक है, और असहाय ही स्वभावत. हरिकी शरण लेते है, इसलिए मैने देखा कि मेरे-जैसोकी अपेक्षा यह आप लोगोके लिए अधिक उपयुक्त है। क्योकि मुझे तो हरिजन बननेकी अभी अभिलाषा ही है, और आप लोग तो स्वभावसे ही हरिजन है। पर इसपर आप कहेगे कि 'जब आपका लक्ष्य ही हरिजनोको हिन्दू बनानेका है तो उन्हे सीधे हिन्दू क्यो नही कहते?' जब तक अस्पृश्यता दूर करनेमे मुझे सफलता नही मिलती, तबतक मै और क्या कर सकता हूँ?

पर आज तो यह नाम तिरस्कारके अर्थमें प्रयुक्त हो रहा है। एक ब्राह्मणको अगर हम हरिजन कहते है तो वह हमें पीटनेकी धमकी देता है।

तब वह ब्राह्मण नही है। आपको मालूम है कि तुलसीकृत रामायणमे हरिजन शब्द आया है। परशुरामसे लक्ष्मण सच्चे क्षत्रियके लक्षणोका वर्णन करते हुए कहते है :

सुर महिसुर हरिजन अरु गाई। हमरे कुल इन्ह पर न सुराई।।

(अर्थात्, देवता, ब्राह्मण, भगवानके भक्त और गाय इनपर मेरे कुलमे वीरता नही दिखाई जाती।) 'हरिजन'का अर्थ यहाँ भगवानका जन, भगवानका भक्त है,

१. नरसिंह मेहता; देखिए खण्ड ४७, पृ० २६९।

चाहे वह किसी भी जाति या वर्णका हो। हरिजन शब्दका यह सुन्दर अर्थ हम सभी को हृदयगम करना होगा, और अपनेको इस नामके योग्य बनानेका प्रयत्न भी करना होगा।

बस, एक प्रश्न और है। आप अपने संघको 'हरिजन-सेवक-संघ' कहते हैं। आवश्यकता क्या कि संघ हमारे नामसे व्यर्थ लाभ उठाये? हरिजन-सेवक-संघ जो रुपया खर्च करता है उसमें से १४ आने तो हरिजनेतर लोगोंकी जेबमें चले जाते हैं और मुश्किलसे २ आने गरीब हरिजनोंके पल्ले पड़ते हैं।

अब यहाँ तो आप भारी अज्ञानसे काम ले रहे है। आप जो कहते है मै तो उससे बिलकुल उलटी बात साबित कर सकता हूँ। आपके पास अपने इस आरोपका कोई सबूत भी है? चलिए, मै इस पर बाजी लगाता हूँ। जो आप कहते है उसे अगर आप साबित कर सके तो आपके पास जो प्रमाण हो उन सबको लेकर आप वर्धा आ सकते हैं। मै आपको मार्ग-व्यय अपने पाससे दे दूंगा और अगर आप मुझे कायल कर सके तो मै खुद कह दूँगा कि मै हार गया, और उसके लिए फिर उचित प्रायश्चित करूँगा। और अगर आप साबित न कर सके, तो मै आपसे रेल-किराया तो वापस नही लूँगा, पर यह आशा जरूर करूँगा कि सघके विरूद्ध एक निराधार आरोप करनेके लिए सार्वजनिक रूपसे आप माफी मागेगे। सघका बहीखाता जो देखना चाहे, देख सकता है। मै आपसे कहता हूँ कि सघका हिसाब-किताब आप जब देखेगे तो आप इस बातके कायल हो जायेगे कि आपने जो कहा है बात वास्तवमे उससे बिलकुल उलटी है।

हाँ, एक बात आप अवश्य साबित कर सकते है – यह कि कुछ सेवक ऐसे है जिन्हे सौ-सौ रुपये मासिक तक वेतन दिया जाता है। पर जहाँ यह बात है, वहाँ ऐसे सेवकोके द्वारा हजारो रुपये हम हरिजनोको देते है। यह भी बात है कि जिसे हम सौ रुपये देते है, वह इससे बहुत ज्यादा पैसा आसानीसे दूसरी जगह पैदा कर सकता था। मै यह भी माननेको तैयार हूँ कि कुछ सेवक ऐसे हे जिन्हे उतना ही पैसा देना पडता है जितना कि उन्हे दूसरी जगह मिलता। पर अगर स्वयसेवक न मिलते हो, या मौजूदा कार्यकर्त्ताओकी सेवाएँ आप इससे बेहतर शर्तोपर प्राप्त न कर सके, तो उस हालतमे क्या किया जा सकता है? फिर भी, मै आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि व्यवस्थापर हमारा खर्च १५ प्रतिशतसे ऊपर नही जाता, और बाकी सब रुपया हरिजनोके हित-कार्योपर ही खर्च होता है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-४-१९३६

१. जो हरिजन उस वक्त उपस्थित थे उन्होंने स्वय उक्त आरोपका खंडन किया और यह स्वीकार किया कि हरिजन-कोषका अधिकांश पैसा हरिजनोंकी ही जेबमें जाता है।

३३५. मन्दिर-प्रवेश

हरिजन-सेवक-सघने हालमे मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमे जो महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव[1] पास किया है वह पाठकोको याद होगा। कोई यह खयाल न बना बैठे कि चूँकि इस प्रश्नके बारेमे आजकल कुछ अधिक सुननेमे नही आ रहा है, इसलिए सघने या तो इसे भुला दिया है या छोड दिया है। पण्डित मालवीयजीका नासिक जाना और उनके चारो ओर विशाल जन-समूहका एकत्र हो जाना — इस सबसे प्रकट होता है कि कुल मिलाकर जनता अस्पृश्यता-निवारणके विरुद्ध नही है, यद्यपि इससे यह भी मालूम हुआ कि सनातनी लोग अब भी अस्पृश्यता छोडनेको तैयार नही। मगर धीरे-धीरे इस चीजके विकसित होने तक प्रतीक्षा करते रहना सम्भव नही। स्थानीय सघोका यह अनवरत प्रयत्न होना चाहिए कि वे मौजूदा मन्दिरोको खुलवाये और नये मन्दिर भी बनवाये जो केवल हरिजनोके लिए नही, बल्कि सबके लिए हो। अगर ये नये मन्दिर अच्छी स्वच्छ जगहोमे हो और उनके साथ पाठशाला, सत्सगका स्थान और धर्मशाला हो, तो तमाम वर्गोके हिन्दुओमे ये मन्दिर अवश्य ही लोकप्रिय और उपयोगी साबित होगे। वहाँ नित्य साँझको या नियत दिनोपर सामूहिक प्रार्थनाएँ हो, और कभी-कभी धार्मिक कथा-वार्ताका भी आयोजन किया जाये। ये मन्दिर अगर ठीक तरहसे चलाये जाये, तो हरिजनोके लिए मौजूदा मन्दिर खोलनेके विरुद्ध जो दुराग्रह देखनेमे आ रहा है, उसे दूर करनेमे इनसे काफी मदद मिलेगी। हरिजनोके लिए जहाँ मन्दिर खोले जाये, वहाँ यह ध्यान अवश्य रखा जाये कि उनके साथ कोई भेद-भाव तो नही बरता जा रहा है। अन्य हिन्दुओके लिए जिन शर्तोपर वे खुले हुए है ठीक उन्ही शर्तोपर हरिजनोके लिए खोले जाये।

यह बतलानेकी आवश्यकता नही कि भिन्न-भिन्न जगहोमे वाछित उद्देश्य साधनेके लिए भिन्न-भिन्न तरीके ग्रहण किये जाये। निस्सन्देह पूर्ण अहिंसाका पालन तो हर हालतमें किया जाये। हमारा विचार यह नही है कि एक साथ एक ही प्रकारका अखिल भारतीय आन्दोलन चलाया जाये। कहाँ कितने जोर और किस तरीकेसे आन्दोलन चलाया जाये, यह तो हरएक जगहकी अपनी-अपनी परिस्थितियोपर निर्भर करता है। जहाँ

१. दिल्लीमें ६ से ८ फरवरी तक हुई वार्षिक बैठकमें पारित, जो इस प्रकार था: "चूँकि हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेश दिलानेमें अब और अधिक विलम्ब होनेसे हिन्दू-धर्मको भारी हानि पहुँचेगी, और चूँकि हरिजनोंको अविलम्ब जो न्याय पानेका पूरा अधिकार है यह मन्दिर-प्रवेश उसका ही एक भाग है, इसलिए अखिल भारतीय हरिजन-सेवक-संघका केन्द्रीय मण्डल संकल्प करता है कि हरिजनोंके लिए मन्दिर-प्रवेशका अधिकार हासिल करनेके लिए तत्काल कारगर कदम उठाये जायें और इस लक्ष्यकी पूर्ति करानेके लिए कार्यकारिणी समितिसे कहा जाये कि वह गांधीजीसे परामर्श करके इस दिशामें आवश्यक कार्रवाई करे।"

भी कोई सक्रिय अल्पमत मन्दिर खोलनेके विरुद्ध हो, वहाँ मन्दिर नही खोलने चाहिए। कोई भी मन्दिर खोला जाये इसके पहले व्यावहारिक मतैक्य अपने पक्षमें कर लेना चाहिए। इसलिए जरूरत इस बातकी है कि स्थानीय लोकमतको मन्दिर-प्रवेशके पक्षमे कर लेनेका अनवरत प्रयत्न किया जाये।

हिन्दू रियासतोमे स्थिति कुछ भिन्न है। जहाँके राजा या उसके अधिकारी मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हो, वहाँ तो मन्दिर खोलनेके सम्बन्धमें कोई दिक्कत होनी ही नही चाहिए। यह प्रश्न त्रावणकोर राज्यमे काफी महत्त्वपूर्ण बन गया है। अन्य अधिकाश स्थानोमें मन्दिर-प्रवेशके विषयमें हरिजन उदासीन-से है। त्रावणकोरकी स्थिति इससे उलटी है। इस राज्यके हरिजनोकी बहुत बडी सख्या और जगहोके हरिजनोसे काफी उन्नत है। उनमे कितने ही अच्छे-अच्छे पदोपर है, कितने ही वकील और डाक्टर है। अनेक कालेजोमे शिक्षा प्राप्त किये हुए है। उनकी स्वतन्त्रतामे कोई रुकावट आती है, तो उनका भडकना या तैशमे आना स्वाभाविक है और सबसे ज्यादा खीझ तो उन्हें मन्दिर-प्रवेश सम्बन्धी प्रतिबन्धपर है। सुनते हैं कि वहाँ सवर्णोंका एक बड़ा समुदाय इस प्रतिबन्धको हटानेके बिलकुल पक्षमे है। फिर त्रावणकोरके महाराज भी सुसस्कृत है, और श्रीमती महारानी साहिबा भी। निश्चय ही चन्द रूढिप्रिय लोगोके विरोधके कारण यह अत्यावश्यक सुधार, जो आजसे बहुत पहले हो जाना चाहिए था, रुक नही सकता, भले ही उनका अपने-अपने क्षेत्रोमे बडा प्रभाव हो। मगर हरिजन-सेवकोको ठीक-ठीक मत-सग्रह करके या ऐसे ही किसी जरियेसे यह नितान्त स्पष्ट रूपसे जतला देना चाहिए कि सवर्ण हिन्दुओकी एक बहुत बडी सख्या निश्चित रूपसे त्रावणकोरके मन्दिरोको हरिजनोके लिए ठीक उन्ही शर्तोपर खोलनेके पक्षमे है, जिन शर्तोपर कि ये स्वय मन्दिरोमें जाते है। सम्भव है कि महाराजा त्रावणकोर अपने राज्यके लोकमतसे ज्यादा आगे न बढें, पर मै यह कल्पना नही कर सकता कि वे स्पष्टतया प्रकट लोकमतके विरुद्ध जायेगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-३-१९३६

३३६. नवयुवकोंसे

आजकल बडे-बूढे जो-कुछ भी कहे उसपर विश्वास न करना कही-कही युवकोमे एक फैशनकी बात हो गई है। मै ऐसा कहनेके लिए तैयार नही कि इस बातमे बिलकुल ही औचित्य नही है। परन्तु मै देशके युवक-युवतियोको सावधान करना चाहता हूँ कि बडे-बूढे जो-कुछ कहे उसका हमेशा केवल इसीलिए खण्डन करना कि वह बूढे-बूढ़ियो द्वारा कहा गया है, सही नही है। जिस प्रकार समझदारीकी बाते अकसर बच्चोके मुँहसे निकल जाती है, उसी प्रकार अकसर बूढ़ोके मुँहसे भी निकलती है। सबसे ठीक नियम यही है कि हर बातको बुद्धि और अनुभवकी कसौटी पर कसा जाये, भले ही वह किसीके भी मुँहसे निकली हो। मै फिरसे कृत्रिम निरोध द्वारा संतति-नियमन करनेकी बात पर आता हूँ। हमारे अन्दर यह बात जमा दी गई है कि काम-वासनाकी तृप्ति मनुष्यका उतना ही पवित्र कर्त्तव्य है, जितना कि वैध रूपमें लिये गये कर्जकी अदायगी करना, और यह भी कहा जाता है कि ऐसा न करनेके फलस्वरूप बुद्धिके ह्रासका दण्ड भुगतना पड़ेगा। इस काम-वासनाको सन्तानोत्पत्तिकी इच्छासे पृथक् कर दिया गया है, और निरोधकोके हामी कहते है कि गर्भाधान तो एक आकस्मिक घटना है, जिसे दोनो पक्षोको यदि सन्तानकी इच्छा न हो तो रोकना ही चाहिए। मै दावेमे कहता हूँ कि इस सिद्धान्तका प्रचार सभी स्थितियोमे अत्यन्त ही खतरनाक है। भारत-जैसे देशमें तो यह और भी खतरनाक है, क्योकि यहाँ मध्यम श्रेणीका पुरुष-वर्ग अपनी प्रजनन क्रियाके दुरुपयोगके कारण बुद्धिसे दुर्बल बन गया है। यदि काम-वासनाकी तृप्ति कर्त्तव्य है, तब तो जिस अप्राकृतिक व्यसनके बारेमे मैंने कुछ समय पहले लिखा था[1], वह, और तृप्तिके अन्य कई तरीके भी, श्लाघनीय हो जायेंगे। पाठकोको ज्ञात होना चाहिए कि बडे-बडे आदमी भी, जिसे काम-वासनाका विपर्यास कहा जाता है, उसका समर्थन करते पाये गये है। इस कथनसे पाठकोको आघात लग सकता है। परन्तु यदि किसी भी कारणसे इस बुराई पर प्रतिष्ठाकी छाप लग जायेगी, तो लडके लडकियोमे समलैंगिक वासना-पूर्तिकी एक आँधी-सी चल पड़ेगी। मेरे लिए निरोधकोका उपयोग उन साधनोसे बहुत भिन्न नही है, जिनका लोगोने अपनी काम-वासनाकी तृप्तिके लिए आश्रय लिया है और जिनके परिणामोकी जानकारी बहुत थोडे लोगोको ही है। मुझे मालूम है कि गुप्त कुटेवने पाठशालाके लड़के-लडकियोका कैसा भयकर विनाश किया है। विज्ञानके नामपर कृत्रिम साधनोके प्रचलित होने और समाजके प्रसिद्ध नेताओकी उसपर मुहर लग जानेसे समस्या और बढ गई है; और जो सुधारक सामाजिक जीवनकी शुद्धिका काम करते है, उनका कार्य फिलहाल असम्भव-सा हो गया है। मै पाठकोको यह सूचना देते हुए

१. देखिए पृ० ५०-१ और खण्ड ६१, पृ० ७-८ भी।

कोई विश्वासघात नहीं कर रहा हूँ कि ऐसी कुमारी लड़कियाँ मौजूद हैं, जिनकी कच्ची उम्र है और जो स्कूल-कालेजोंमें पढ़ती हैं, परन्तु जो सन्तति-निग्रह सम्बन्धी साहित्य और पत्रिकाओंका बड़े चावसे अध्ययन करती हैं और उनके पास गर्भ-निरोधक भी मौजूद हैं। निरोधकोंके प्रयोगको विवाहित स्त्रियोंतक सीमित रखना असम्भव है। विवाहके उद्देश्य और उच्चतम उपयोगकी कल्पना ही यदि पाशविक वासनाकी तृप्तिके रूपमें की जाये और यह विचारतक न किया जाये कि इस प्रकारकी तृप्तिका कुदरती नतीजा क्या होगा, तो विवाहकी सारी पवित्रता ही नष्ट हो जाती है।

मुझे इसमें जरा भी शक नहीं कि जो विद्वान् स्त्री-पुरुष मिशनरी जोशके साथ कृत्रिम साधनोंके प्रयोगके पक्षमें आन्दोलन कर रहे हैं, वे देशके युवकोंकी अपार हानि कर रहे हैं। उनको यह मिथ्या विश्वास है कि ऐसा करके वे उन गरीब स्त्रियोंको संकटसे बचा लेंगे, जिन्हें अपनी इच्छाके विरुद्ध मजबूरन बच्चे पैदा करने पड़ते हैं। बच्चोंकी संख्या मर्यादित करनेकी जरूरत जिन लोगोंको सचमुच है उनके पास तो इनकी आसानीसे पहुँच भी नहीं होगी। हमारी गरीब औरतोंके पास न तो वह जानकारी होती है और न वह तालीम ही जो पश्चिमकी स्त्रियोंके पास होती है। अवश्य ही यह आन्दोलन मध्यम श्रेणीकी स्त्रियोंकी तरफसे नहीं किया जा रहा है, क्योंकि उन्हें कम-से-कम इस जानकारीकी जरूरत उतनी नहीं है जितनी कि निर्धन वर्गोंकी स्त्रियोंको है।

परन्तु जो सबसे बड़ी हानि यह आन्दोलन कर रहा है वह यह है कि पुराना आदर्श छोड़कर यह उसके स्थानपर एक ऐसा आदर्श स्थापित कर रहा है, जिस पर यदि अमल हुआ तो जातिका नैतिक और शारीरिक विनाश निश्चित है। वीर्यके अपव्ययको प्राचीन साहित्यमें जो इतना भयंकर माना गया है, वह कोई अज्ञानजन्य अन्ध-विश्वास नहीं था। कोई किसान अगर अपने पासका बढ़िया-से-बढ़िया बीज पथरीली जमीनमें बोये या कोई खेतका मालिक बढ़िया जमीनवाले अपने खेतमें अच्छे बीजकी बोआई ऐसी परिस्थितियोंमें कराये जिनमें उनका उगना असम्भव हो, तो उनके लिए क्या कहा जायेगा? भगवानने पुरुषको ऊँची-से-ऊँची शक्तिवाला बीज प्रदान किया है और स्त्रीको ऐसा खेत दिया है जिसके बराबर उपजाऊ धरती इस भूमण्डलमें और कहीं नहीं है। अवश्य ही पुरुषकी यह भयंकर मूर्खता है कि वह अपनी इस सबसे कीमती सम्पत्तिको व्यर्थ जाने देता है। उसे अपने अत्यन्त मूल्यवान् जवाहरात और मोतियोंसे भी अधिक सावधानीके साथ इसकी रक्षा करनी चाहिए। इसी तरह वह स्त्री भी अक्षम्य मूर्खता करती है, जो अपने जीवोत्पादक क्षेत्रमें बीजको नष्ट हो जानेके इरादेसे ही ग्रहण करती है। वे दोनों ईश्वर-प्रदत्त क्षमताके दुरुपयोगके अपराधी माने जायेंगे और जो क्षमता उन्हें दी गई है वह उनसे छीन ली जायेगी। कामकी प्रेरणा एक सुन्दर और उदात्त भाव है। उसमें लज्जित होनेकी कोई बात नहीं। परन्तु वह सन्तानोत्पत्तिके लिए ही है। उसका और कोई उपयोग करना ईश्वर और मानवता दोनोंके प्रति पाप है। सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन पहले भी थे और आगे भी रहेंगे परन्तु उन्हें काममें लाना पहले पाप समझा जाता था। पापको पुण्य कहकर

उसका गौरव बढाना हमारी पीढीके ही भाग्यमे वदा था। मेरे खयालसे कृत्रिम साधनोके हिमायती भारतके युवकोकी सबसे बडी कुसेवा यह कर रहे है कि उनके दिमागमे गलत विचारधारा भर रहे है। भारतके युवक-युवतियोको, जिनके हाथमे देशका भाग्य है, इस झूठे स्वेतासे सावधान रहना चाहिए, और ईश्वरने उन्हे जो खजाना दिया है उसकी रक्षा करनी चाहिए, और इच्छा हो तो, उसे उसी काममे लगाना चाहिए जिसके लिए वह बनाया गया है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २८-३-१९३६

३३७. भाषण : लखनऊकी खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें[1]

२८ मार्च, १९३६

मुझे आशा नही थी कि ईश्वर मुझे इस प्रदर्शनीको खोलनेका मौका देगा। मेरी स्थिति कुछ ऐसी थी कि आखिरी वक्त तक प्रदर्शनीके कार्यकर्त्ताओको मै यह विश्वास न दिला सका कि मै अवश्य ही आ जाऊँगा। शुरूसे ही मेरा दिल तो बहुत चाहता था कि इस प्रदर्शनीको खोलनेके लिए मै यहाँ जरूर आऊँ। यद्यपि मै यह जानता हूँ कि डॉ० मुरारीलाल और श्री शकरलाल बैकरने इस प्रदर्शनीको जुटानेमे बहुत अधिक परिश्रम किया है, तो भी उनकी इस मेहनतके पीछे कल्पना मेरी ही थी। इस तरहकी प्रदर्शनीके बारेमे बरसोसे अपने दिलमे जो कल्पना मै रखता आया था, उसको मै इस प्रदर्शनीमे देखता हूँ। १९२० मे काग्रेसका जब नया विधान बनाया गया था, तब पहली बार हमारा ध्यान गाँवोकी ओर गया। उसके बादसे ही हम अपने देहाती भाई-बहनोके विषयमे भी कुछ सोचने लगे। नये विधानके बाद अहमदाबादकी काग्रेसके साथ जो नुमाइश हुई थी, उसमे मैने इस सम्बन्धकी अपनी कुछ कल्पनाओको मूर्त्त रूप देनेकी चेष्टा की थी। मै मानता हूँ कि देहातो और देहातियोके बारेमे मैने खूब सोचा है। और यह तो मैने हमेशा ही कहा है कि हिन्दुस्तान हमारे चन्द शहरोमे नही बल्कि सात लाख गाँवोसे बना है। आज हम लोग जो यहाँ इकट्ठे हुए है, देहातके नही, शहरके रहनेवाले है और हममे से कइयोका यह खयाल है कि हिन्दुस्तान शहरोमे है और देहातवाले शहरवालोकी खिदमतके लिए है। यही वजह है कि हम देहातोके बारेमे, उनके सुख-दुख और भूख-प्यासके सम्बन्धमें बहुत कम सोचते है। हम इस बातका कभी खयाल नही करते कि उन्हे क्या खाने-पीनेको मिलता है और क्या पहनने-ओढनेको। काग्रेसका काम करनेवाले

१. हरिजन, ४-४-१९३६ में महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' के अन्तर्गत इस भाषणका सक्षिप्त रूप "ए यूनीक एक्जिबिशन" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। इसकी प्रस्तावनामें महादेव देसाईने लिखा है: "कांग्रेसने अपने बम्बई अधिवेशनमें जो प्रस्ताव पारित किया था उसके तहत अ० भा० चरखा-संघके मत्री श्री शंकरलाल बैंकर और ग्रामोद्योग सघके मन्त्री जे० सी० कुमारप्पाकी सहायतासे लखनऊ काग्रेसकी स्वागत-समितिने लखनऊमें एक प्रदर्शनीका आयोजन किया है, जिसका उद्घाटन २८ मार्चको शामको गांधीजीने किया।"

चन्द लोग ऐसे जरूर हैं, जो देहातियोंके सुख-दु:खमें हाथ बँटानेकी कोशिश करते हैं। लेकिन इन थोड़े-से लोगोंके नामपर शहरवाले यह दावा नहीं कर सकते कि वे देहातवालोंकी सेवा करते हैं।

देहातोंकी जो हालत है, उसे मैं खूब जानता हूँ। मेरा खयाल है कि हिन्दुस्तानको घूमकर जितना मैंने देखा है, उतना कांग्रेसके नेताओंमें से किसीने नहीं देखा है। पंजाबसे लेकर कन्याकुमारी तक जितना भ्रमण मैंने किया है उतना और किसीने नहीं किया। यह बात मैं किसी अभिमानके वश होकर नहीं कह रहा हूँ। मैं तो सिर्फ यह बतलाना चाहता हूँ कि देहातके बारेमें जो-कुछ मैं कहता हूँ वह पूरे तजुर्बेके आधारपर कहता हूँ। मैं यह कह सकता हूँ कि हिन्दुस्तानके देहातोंको शहरवालोंने इतना चूसा है कि उन बेचारोंको अब रोटीका एक टुकड़ा भी वक्तपर नहीं मिलता और वे दाने-दानेको तरसते हैं। यह बात अकेला मैं ही नहीं कहता; जिन अंग्रेजोंकी यहाँ हुकूमत है वे यह तो नहीं कह सकते कि हिन्दुस्तान भूखों मर रहा है, लेकिन उनमें से किसीने अबतक यह नहीं कहा कि हिन्दुस्तानियोंको भरपेट खाना मिलता है। क्या आप जानते हैं कि देहातवालोंको खानेके लिए क्या मिलता है? अगर चावल मिलता है तो दाल नहीं मिलती, और रोटी मिलती है तो सागभाजी नहीं मिलती। कहीं-कहीं तो देहातवाले सिर्फ सत्तू खाकर जीते हैं। यह सत्तू क्या है सो मैं आपको बताऊँ? लोग मटर, चना और जौ वगैरह भूनकर पीस लेते हैं और अगर मिला तो थोड़ी मिर्च और गन्दा-सा नमक मिलाकर उसीको खा लेते हैं। यही उनकी खुराक होती है। इस खुराक पर कैसे वे जिन्दा रह सकते हैं, कैसे तगड़े और तन्दुरुस्त बन सकते हैं और कैसे उनकी बुद्धिका विकास हो सकता है? यह बिलकुल नामुमकिन बात है। अगर हम लोगोंको इस खुराक पर जीना पड़े तो शायद दूसरे ही दिन हम शिकायत करेंगे कि इसे खाकर जीना हमारे लिए सम्भव ही नहीं है। तन्दुरुस्त रहना, काम करना और दिमागसे सोचना तो दूरकी बात है।

देहातवालोंकी इन्हीं सब मुश्किलोंका खयाल करके पिछले साल बम्बईमें कांग्रेसने अखिल भारतीय ग्रामोद्योग-संघ नामक एक नई संस्था खोली।[1] इससे पहले अखिल भारतीय चरखा-संघ द्वारा देहातमें खादीका काम हो रहा था। आज भी हो रहा है, लेकिन अकेले इससे मुझे कभी सन्तोष न था। मैं तो कई वर्षोंसे यह मानता आ रहा हूँ कि खादीके अलावा दूसरे भी ऐसे अनेक धन्धे हैं, जो गाँववालोंके जीवनके लिए बहुत आवश्यक और उपयोगी हैं और जिनसे उनकी हालत एक बड़ी हदतक सुधारी जा सकती है। इसके लिए हमें यह देखना है कि देहातवाले कैसे रहते हैं, क्या काम करते हैं और उनके कामको कैसे तरक्की दी जा सकती है। यही वजह है कि कांग्रेसने गाँवोंमें काम करनेवाले चरखा-संघ और ग्रामोद्योग-संघको इन प्रदर्शनियोंके आयोजनका भार सौंपा है। इस बारकी यह प्रदर्शनी अपने ढंगकी पहली प्रदर्शनी है। इसकी रचनाके पीछे कल्पना मेरी रही है। यह देहातवालोंके हितके लिए है। लेकिन उन्हें लखनऊ लाना तो बड़ा कठिन काम है। उनमें से असंख्य स्त्री-पुरुष तो

१. देखिए खण्ड ५९, पृ० ४७७-८१।

ऐसे है कि जो लखनऊका नाम तक नही जानते। हमारे लिए यह कोई अचरजकी बात नही है, बल्कि बडे रज और शर्मकी बात है। इसीलिए इस नुमाइशके जरिये हम दिखाना यह चाहते है कि भूखसे बेहाल इस हिन्दुस्तानमें भी आज ऐसे-ऐसे हुनर, उद्योग-धन्धे और कला-कौशल मौजूद है, जिनका हमें कभी खयाल भी नही होता। इस नुमाइशकी यही विशेषता है।

अगर आप शहरोमे होनेवाली दूसरी नुमाइशोसे इसकी तुलना करेंगे तो मै आपसे कहूँगा कि आपको इसमे निराशा होगी। लेकिन यदि आप देहातवालोका खयाल लेकर वैसी नजरसे इसे देखेंगे तो आपको इस नुमाइशसे कभी नाउम्मीद न होना पड़ेगा। साथ ही मै यह भी कहूँगा कि यह नुमाइश कोई तमाशा नही है और न इसे तमाशा बनानेका कभी खयाल ही रहा है। यह नुमाइश तो एक ऐसी चीज है जिससे आदमी बहुत-कुछ सीख सकता है। जिन्होने इसे बनाया है उन्होने तो अपने वश-भर इसे तमाशा न बनानेकी ही चेष्टा की है। लेकिन अकसर काग्रेसके साथ होनेवाली नुमाइशसे काग्रेसका खर्च निकालनेका खयाल रहता है और अब तक की काग्रेस-प्रदर्शनियोका आयोजन बहुत-कुछ इसी खयालसे होता रहा है। लेकिन आजकी इस नुमाइशसे पैसा पैदा करनेका इरादा असलमे कभी नही रहा। मद्रास काग्रेसके साथ जो नुमाइश हुई थी उसमे हमे सबसे ज्यादा पैसा मिला था। लखनऊमें भी चाहें तो काफी पैसा मिल सकता है।

पर यह नुमाइश तो एक ऐसी चीज है जिसमें मनुष्य बहुत-कुछ सबक सीख सकता है। इसे देखनेका सबसे अच्छा तरीका यह है कि कोई अगर कुछ सीखना चाहे तो जबतक यह नुमाइश खुली है तब तक इससे फायदा उठाकर वह बहुत-कुछ सीख सकता है। हम इसे कुछ सीखनेकी दृष्टिसे देखे, तमाशेकी दृष्टिसे नही। मै तो यह मानता हूँ कि जो एक बार इस नुमाइशको देख लेगा, उसे फौरन ही पता चल जायेगा कि हिन्दुस्तानके देहातोमे अब भी कितनी ताकत भरी पड़ी है।

देहातोकी इस ताकतको पहचानकर जो २८ करोड़ देहातियोकी सेवा करता है, वही काग्रेसका सच्चा सेवक है। जो इन करोडोकी सेवा नही करता, वह काग्रेसका सरदार या नेता हो सकता है, सेवक या बन्दा नही बन सकता।

मृतप्राय या अधमरा होनेपर भी हिन्दुस्तानमे जो ताकत आज मौजूद है, उसका खयाल आपको इस नुमाइशमें मैसूर, मद्रास और कश्मीरसे आये हुए कारीगरोके हुनरोको देखकर होगा। इन कारीगरो द्वारा बडी मेहनतसे बनाई हुई रुपयोकी चीजोको कौड़ियोंके मोल खरीदकर हमने उन्हे जिस दशाको पहुँचा दिया है, वह हमारे लिए जरा भी शोभास्पद नही है। चरखा-सघ और ग्रामोद्योग-संघके जरिये हम इस बातकी कोशिश कर रहे है कि इन कारीगरोको अपनी मेहनतके बदलेमें पूरी मजदूरी मिले, ताकि वे सुखसे रह सके। लेकिन हमारी यह कोशिश बगैर आपकी मददके कैसे कामयाब हो सकती है? हम तो यह चाहते है कि जिन लोगोको पहले सारा दिन काम करने पर दो पैसे दिये जाते थे उन्हे दो आना, तीन आना या चार आना दें और अगर हो सके तो आठ आना और एक रुपया भी दें। लेकिन यह तो

तभी हो सकता है जब आप हमे इस बातकी गारटी दें कि उनकी बनाई चीजोको आप पूरे दाम देकर खरीदेगे। किन्तु मै यह जानता हूँ कि आज आप इसके लिए तैयार नही है।

इस बातको यही छोड़कर मैं आपका ध्यान नुमाइशके अन्दर रखी हुई चीजोकी ओर दिलाना बेहतर समझता हूँ। आम तौरपर हमारी नुमाइशें सिनेमाका ठाठ बन जाती है। यहाँ वह सब ठाठ नही है। और नुमाइशका यह सीधा-सादा-सा दरवाजा मेरी इस बातका सबूत है। दरवाजेपर हल, पहिये, पजे और नरही वगैरह जो लगे है, सो सब हमारे ग्राम-जीवनके सूचक है। दरवाजेके आस-पास दोनो ओर हमारे ग्राम-जीवनका परिचय करानेवाले जो चित्र लगे है, वे श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरके शान्ति-निकेतनसे आये हुए श्री नन्दलाल बोसकी प्रेरणासे उन्हीकी देखरेखमें बने है। नन्दलाल बाबू तो हिन्दुस्तानके एक बड़े ऊँचे कलाकार है। नुमाइशके अन्दर जिस चित्र-शालाका निर्माण उन्होने किया है, वह तो अवश्य ही देखने योग्य है। उससे हमे हिन्दुस्तानकी पुरानी कलाके उत्कर्षका बोध होता है, और इस समय जो ज्ञात और अज्ञात कलाकार देशमे मौजूद है उनकी सामर्थ्यका परिचय करानेवाली कृतियाँ देखनेको मिलती है।

देहातवालोके बारेमें मै अपने-आपको बहुत विज्ञ समझता हूँ। लेकिन इस नुमाइशमे तो मुझे भी सबक सिखानेवाली कई चीजें मै देख रहा हूँ। अगर मेरी तन्दुरुस्ती ठीक रही तो मै इसे कई बार आकर देखनेवाला हूँ। मै यह मानता हूँ कि मै यहाँसे बहुत-कुछ सीखकर जा सकता हूँ। जो सीखना चाहते है वे तो प्रवेश-द्वारकी रचना और आस-पास बने हुए इन चित्रोंसे भी बहुत-कुछ बिना पैसा खर्च किये ही सीख सकते है।

इनके अलावा भी नुमाइशके अन्दर कई चीजें ऐसी है जिनका गौरवके साथ उल्लेख किया जा सकता है, लेकिन मैंने तो एक देहातीके ढगसे बहुत थोडेमे कुछ बातें आप लोगोको बतला दी है। अगर मै कलाकार होता तो इन्ही सब वस्तुओंका ऐसा वर्णन आपको सुनाता कि आप सुनकर मुग्ध हो जाते। लेकिन मेरे-जैसे देहातीके लिए यह सम्भव नही है। मै देहाती हूँ या नही, यह तो मै नही कह सकता, लेकिन मेरा दिल देहाती है, इसमें मुझे जरा भी शक नही। इसलिए मैंने इस नुमाइशका जिक्र एक देहातीकी हैसियतसे आपके सामने किया है। हाँ, बैड-बाजो और खेल-तमाशोंका अभाव देखकर आप निराश न हो। ये नुमाइशे इन चीजोके लिए है ही नही। यहाँ तो आपको कुछ ऐसे बेहाल आदमी देखनेको मिलेगे, जो दिन-भर मेहनत करके मुश्किलसे दो-चार आने पाते है।

इस नुमाइशमे तो नुमाइशी चीजोके अलावा ऐसे कारीगर भी यहाँ आये है, जो अपने हुनर आपको बतानेको तैयार है। आप उनके पास बैठकर उनसे बहुत-सी बाते सीख सकते है। ऐसा सुभीता और ऐसा अवसर छोडने योग्य नही है। इसीलिए मै कहता हूँ कि आप जो चन्द लोग यहाँ आ गये है, वे इस नुमाइशके लिए मेरे प्रचारक बन जाये और दूर-दूर तक इसका सन्देश पहुँचा दे। वरना आपके सिर

यह इलजाम रहेगा कि देहातवालोके लाभके लिए जो नुमाइश की गई थी उसकी आपने उपेक्षा की।

आप यह याद रखिए कि यह नुमाइश देहातवालोके लिए नही, आपके लिए है। देहातवाले इसे क्या देखेगे? वे तो इसे देखकर यही कहेगे कि उँह, इसमे क्या रखा है। इससे अच्छी-अच्छी चीजे हम अपने गॉवमे दिखा सकते है। इसलिए मै कहता हूँ कि यह नुमाइश तो शहरवालोके लिए है। और यदि मै इसके लिए आपसे पैसा न लूँ तो किससे लूँ? क्या देहातवालोसे लूँ? उनके लिए जैसी नुमाइश मै चाहता हूँ, मौका मिलनेपर वैसी नुमाइश भी मै करके दिखाऊँगा और यदि मै मर गया तो मेरे पीछे रहनेवाले उसे करके दिखायेगे।

इस नुमाइशके लिए स्वागत-समितिने इस नुमाइशपर ३५ हजार रुपयेके खर्चका बजट बनाया है। मै जानता हूँ कि इस कार्यमे उसे कई परेशानियो और मुसीबतोका सामना करना पडा है। स्वागत-समितिने जो ३५००० रुपया खर्च किया है, उसे वापस दे देना आपका फर्ज है, इसीलिए तो मै आपको अपना प्रचारक नियुक्त कर रहा हूँ। इस प्रचार-कार्यका कोई कमीशन मै आपको नही दूँगा। लेकिन ईश्वर जरूर देनेवाला है। अगर आपको उसपर एतबार है, तो वह आपका कमीशन जरूर आपको भेज देगा।

मै भी आपके इस शहरमे थोड़े दिन पडा रहनेवाला हूँ। मै रोज यह पता लगाता रहूँगा कि किस तरह आप मेरी एजेन्सीका काम करते है। आपके कामकी परीक्षाके लिए मै नुमाइशके खजाचीसे रोजाना यह पूछता रहूँगा कि आपने नुमाइशके लिए कितने आदमी और कितने पैसे भेजे। मै उम्मीद करता हूँ और अदबके साथ कहता हूँ कि नुमाइशके लिए रखे गये आठ आने या चार आनेके टिकटके लिए कोई शिकायत आपको नही होनी चाहिए। अगर आप लोगोकी पूरी सहायता रही तो हमारा यह इरादा है कि हम यहाँ आनेवाले देहाती किसानो और मजदूरोको यह नुमाइश मुफ्तमे देखनेका मौका दे। लेकिन यह तभी हो सकता है, जब आप लोग लाख-दो लाखकी सख्यामे इस नुमाइशको देखने आये और मेरा हौसला बढ़ा दे। वरना यह सुनकर कि आज नुमाइशमे दो हजार आदमी आये, कल एक हजार और परसो कोई भी नही आया, मुझे सदमा पहुँचेगा। लेकिन अगर मेरे-जैसे देहातीके नसीबमे यह भी लिखा है तो उसे सह लूँगा। अन्तमे, मै यह कहूँगा कि इस प्रदर्शनीमें जो त्रुटियाँ रह गई है, मुझे उम्मीद है, आप उन कमियोको दरगुजर करके इसमे जो-कुछ सीखने लायक है, सो जरूर सीखेंगे।

हरिजन-सेवक, ४-४-१९३६

३३८. पत्र : मीराबहनको

लखनऊ
२९ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

रातके ८.२५ बजे हैं। बिस्तरपर जानेका समय हुआ ही चाहता है। मैंने अभी-अभी मौन लिया है।

तुम्हारे पत्र मुझे समयसे मिलते रहे हैं। प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसरपर मैं बिना कोई तनाव-थकावट महसूस किये ३८ मिनटसे अधिक समय तक बोल सका। यह [प्रदर्शनी] सफल होगी या नहीं, अभी कहना मुश्किल है। शंकरलालने तो बड़े साहस और लगनसे काम किया है।

लखनऊसे हम ३ अप्रैलको रातकी गाड़ीसे चलेंगे और ४ से ७ तक इलाहाबाद रहकर ८ को लखनऊ वापस आ जायेंगे। सब-कुछ ठीक रहा तो १२ या १३ तारीखको लखनऊसे वर्धाके लिए प्रस्थान करनेकी आशा रखता हूँ। आशा है, तुम धीरे-धीरे ठीक होती जा रही होगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७८८ से भी।

३३९. पत्र : लीलावती आसरको

२९ मार्च, १९३६

चि० लीलावती,

तेरे दो पत्र — एक मानसिक शान्तिका द्योतक और दूसरा अशान्तिका — मिले। मुझे तो दोनों अच्छे लगे। जब तक तू अपने मनकी बात मुझसे नहीं छिपायेगी तब तक मैं तेरा पथ-प्रदर्शन बराबर कर सकूँगा। यदि यह शान्ति बनी रहे तो अच्छा हो। किन्तु सम्भवतः यदि तुझे फिर अशान्तिका अनुभव हो तो मैं घबरानेवाला नहीं हूँ। इस प्रकार धीरे-धीरे प्रयत्न करते हुए किसी दिन तेरा चित्त सर्वथा स्थिर हो जायेगा। मैंने तो तेरे बारेमें कदापि आशा नहीं छोड़ी और तू भी मत छोड़ना। आशा है कि

अब तो मैं १५ अप्रैल तक वहाँ पहुँच जाऊँगा। इससे पहले पहुँचनेकी सम्भावना कम ही है। किन्तु यदि दो दिन देर हो जाये तो डरना मत।

अपने स्वास्थ्यका खूब ध्यान रखना। यह कहा जा सकता है कि तूने पिंजाईमें अच्छी प्रगति की है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

साथका पत्र[1] मीराबहन तक पहुँचा देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३९) से। सी० डब्ल्यू० ६६१४ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

३४०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

लखनऊ
३० मार्च, १९३६

मुझे लॉर्ड हैलीफैक्सका कोई पत्र नही मिला है। सारा किस्सा मनगढन्त[2] है। यह देखकर दु:ख हुआ कि जिम्मेदार अखबार भी सिर्फ सनसनी फैलानेके उद्देश्यसे खबरे छापते है। वे चाहते तो इन खबरोकी सत्यता-असत्यताकी पुष्टि बातकी-बातमें कर ले सकते थे।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-३-१९३६

३४१. पत्र : उमादेवी बजाजको

३० मार्च, १९३६

चि० ओम्,

मैं जानता हूँ कि मेरी बीमारी तेरे लिए पत्र न लिखनेका अच्छा बहाना बन गई है। पर तू यह जानती है कि तेरे पत्र मेरे लिए बोझ कतई नही होते। किन्तु यदि तू यों पत्र लिखने लगे तो तू 'सोती सुन्दरी'[3] नहीं रह जायेगी न?

यह पत्र लिखनेका कारण तो यह है कि तू वहाँ खुश नही रहती, तुझे घरकी याद आती है और कभी-कभी आँसू भी बहाती है। तू इतनी नाजुक कबसे बन गई?

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. कुछ अखबारोंने ऐसी खबर छाप दी थी कि लॉर्ड हैलीफैक्स लिनलिथगो और गांधीजीके बीच मुलाकात करानेका प्रबन्ध करा रहे हैं।

३. १९३३ के हरिजन-दौरेके समय उमादेवी बजाज गांधीजीके साथ थीं। उन्हें जब भी मौका मिलता वे झपकियाँ ले लेती थीं। इसी कारणसे यह उनका उपनाम पड़ा।

हम लोग तो जहाँ रहें, उसे ही घर समझें। आखिर हम लोग तो इस दुनियामें चन्द रोजके मुसाफिर ही हैं न? मैंने तो वह भाग देखा नहीं है, पर कहा जाता है कि वहाँकी हवा बहुत अच्छी है और वह जगह भी उतनी ही सुन्दर है। आशा है तू श्री डकनसे[1] मिली होगी। वहाँका वर्णन लिखना।

लखनऊमें काकाजी, मदालसा, हम सब साथ ही हैं। हम तीन तारीखको इलाहाबाद जायेंगे और बहुत करके ८ को लौट आयेंगे। पन्द्रह तारीखके आस-पास वर्धा पहुँचनेकी आशा है।

मेरी तबीयत अब ठीक मानी जा सकती है। क्या तुझे 'हरिजन-सेवक' मिलता है? मैं समझता हूँ कि अब तो तू अंग्रेजी भी अच्छी तरह समझती होगी।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३४२-३

३४२. पत्र : विट्ठल ल० फड़केको

३० मार्च, १९३६

चि० मामा,

मैं नहीं जानता कि सरदारने तुम्हें उत्तर दिया या नहीं। वे जैसा कहें तुम वैसा ही करना। मैं तो इतना ही चाहता हूँ कि यदि तुम्हें वहाँ अधिक समय तक न रहना पड़े तो मकानके पचड़ेमें मत पड़ना।

आदर्श मन्दिरके सम्बन्धमें 'हरिजन' में मैंने जो टिप्पणी[2] लिखी है वह तुमने पढ़ी होगी। यदि न पढ़ी हो तो पढ़ लेना। तुम्हें ध्यानमें रखते हुए यह अंश लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३४) से।

१. डंकन ग्रीनलीज।
२. देखिए पृ० ३०९-१०।

३४३. पत्र : चम्पाबहन र० मेहताको

३० मार्च, १९३६

चि० चम्पा[1],

मै कश्मीरमे केवल खादी भण्डारके श्री सुरेन्द्र मशरूवालाको जानता हूँ। तू उन्हे सीधे पत्र लिखना। यह पत्र तू भेजना चाहे तो भेज देना। जैसा वे कहे वैसा करना।

पता है :

अखिल भारतीय चरखा सघ भण्डार

श्रीनगर

कश्मीर

आशा है तुम सब अच्छे होगे। माताजी खूब स्वस्थ होगी। प्रभाशंकर[2] तो बिल्कुल चगे हो गये होगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री चम्पाबहन

शशिभुवन

साबरमती

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९६९३) से सौजन्य : मुलुभाई नौतमलाल

३४४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

३० मार्च, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। मेढके बारेमे तो बा ने खूब मेहनत की थी। यदि वहाँसे किसी प्रकारकी सहायता मिल ही न सके तो भले जो-कुछ बचा हो वह सब खतम हो जाये। शरीर स्वस्थ हो जायेगा तो फिरसे कमा लेनेमें देर नही लगेगी। बाकी तो ईश्वर जैसे हमें रखे वैसे रहे और उसीमें आनन्द मानें।

१. डॉ० प्राणजीवन मेहता के पुत्र, रतिलाल, की पत्नी।

२. चम्पाबहनके पिता।

सीताको अ० के पास रखनेकी बात मैं समझ गया। तुम दोनोंको जैसा उचित जान पड़े वैसा ही करना चाहिए। यदि सबका स्वास्थ्य ठीक बना रहे तो मैं इसे बड़ी बात मानूंगा।

हम आजकल लखनऊमें हैं। कांग्रेसकी बैठक होने तक यहाँ रहेंगे और उसके बाद वर्धा।

मेरा स्वास्थ्य अब पहलेसे अच्छा माना जायेगा, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि पहले जितनी ताकत आ गई है।

कृष्णदास अपनी पत्नीके साथ लखनऊ आया है। प्रभुदास[1] तो अम्बा[2] सहित पहलेसे ही यहाँ है। वह अपना चरखा सबको दिखा रहा है।

रामदासने फिर एक दूसरा काम हाथमें लिया है। ऐसा करते-करते वह कहीं-न-कहीं जम ही जायेगा। देवदास और लक्ष्मी अभी तो बम्बईमें हैं। जमनादासने तो वहाँ अपना कारोबार शुरू कर ही दिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४९) से।

३४५. पत्र : इन्दिरा नेहरूको

३० मार्च, १९३६

चि० इंदु,

कमलाके जानेसे तुमारी जिम्मेदारी कुछ बढ जाती है। लेकिन तुमारे लिये मुझे तो कोई चिंता नहीं है। ऐसी शाणी हो गई है कि अपना धर्म अच्छी तरह समजती है। कमलामें ऐसे गुण थे जो सामान्यतया अन्य स्त्रीयोंमें नहीं पाये जाते हैं। मैं ऐसी आशा बाध बैठा हु की यह सब गुण तुमारेमें इतनी ही मात्रामें प्रदर्शित होंगे जैसे कमलामें थे। ईश्वर तुम्हे दीर्घायाषी करे और कमलाके गुणोंका अनुकरण करनेकी शक्ति दे।

जवाहरलालसे इस वखत खूब बातें कर सका हू। तीन अपरेलको यहासे अलाहाबाद जाउंगा। कांग्रेस तक रहनेका निश्चय हो गया है।

मुझे वर्धा ही उत्तर भेजो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी प्रतिसे : गाधी-इन्दिरा गाधी करेस्पांडेंस, सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. छगनलाल गांधीके पुत्र।
२. प्रभुदास गांधीकी पत्नी।

३४६. पत्र : जमनालाल बजाजको

कैम्प लखनऊ
१ अप्रैल, १९३ [६][1]

चि० जमनालाल,

हिन्दी साहित्य सम्मेलनके इदोर अधिवेशनके थैली[2] में से जो धन संग्रह हुआ हो उसमे से रु० १५००० (पद्रह हजार) मात्र श्री मंत्री, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रासको भिजवा देवें।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २९६०) से।

३४७. पत्र : अमृत कौरको

लखनऊ
३ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

हालाँकि तुम यहाँ आज तक रुक सकती थी, लेकिन तुम मगलवारको ही चली गईं, अच्छा हुआ। तुम्हारा तार अच्छा था और तुम्हारा पत्र भी पिछले पत्रो जैसा अच्छा था। हाँ, यहाँ भी वर्षा हुई थी, लेकिन प्रदर्शनी मे बहुत नुकसान नही हुआ, क्योकि धूल-भरी आँधी और ठडी हवाने पर्याप्त चेतावनी दे दी थी। दर्शकोकी सख्या बढ़ रही है। अवश्य यह अच्छा ही हुआ कि तुमने अपनी भाभीसे अपने लिए खादी खरीदनेको कह दिया था। मै समझता हूँ कि कल वह [प्रदर्शनी] गई थी और काफी मात्रामें [खादी] खरीदी। मै आशा करता हूँ कि यह सारी खादी उन्होंने केवल तुम्हारे लिए ही नही खरीदी है। मेरे मनमें तुम्हारे लिए ३५ रुपयेकी एक अत्यन्त सुन्दर चटाई खरीदनेका लोभ आया था। लेकिन मैंने लोभका सवरण कर लिया। महादेवका मन उसे खरीदनेका था।

मुझे खुशी है कि नबीबक्श[3] ने तुम्हे बता दिया कि वह हरिजन रसोईमें क्यों नही खा सकता था। मै अमतुल सलामसे इसके बारेमें बात करूँगा। यह पत्र

१. मूलमें '१९३५' लिखा हुआ है, किन्तु गांधीजी लखनऊमें १ अप्रैल, १९३५ को थे।

२. एक लाख रुपयेकी थैली, जो हिन्दी-प्रचारके लिए गांधीजीको दी जानी थी; देखिए खण्ड ६०, पृ० ४८७।

३. अमृत कौरका अनुचर।

सुबहकी प्रार्थनासे पहले लिख रहा हूँ। घबरा मत जाना। मैं ३ बज कर ५० मिनट पर उठा था।

सुबह टहलनेके वक्त मैं तुम्हारी कमी सबसे ज्यादा महसूस करता हूँ। और दूसरे समय तो मेरी तुमसे बहुत कम भेंट होती थी।

आशा है ज्यादा-से-ज्यादा जुलाई तक तुम आ जाओगी।

आशा है शम्मी का जुकाम आदि ठीक हो गया है और बेरिल पूरी तरह स्वस्थ हो गई है।

तुम दोनोंको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६६) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६३७५ से भी।

३४८. तार: वल्लभभाई पटेलको

३ अप्रैल, १९३६

सरदार वल्लभभाई
बिड़ला हाउस
नई दिल्ली

तार भेजिए कि क्या आपका स्वास्थ्य इतना ठीक है कि आप निश्चित रूपसे सोमवारको इलाहाबादमें उपस्थित हो सकेंगे।[1]

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. ६ अप्रैलको कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकके लिए।

३४९. पत्र : सी० एफ० एण्ड्र्यूजको

३ अप्रैल, १९३६

प्रिय चार्ली,

मुझे तुम्हारे वे पत्र मिले थे जिनके जवाब महादेव तुम्हे देता रहा था। मुझे कुछ समयके लिए प्रतिदिन कुछ पत्र लिखने और थोड़ा-बहुत 'हरिजन' के लिए लिखनेकी अनुमति मिल गई है।

यह पत्र तुम्हे यह सूचित करनेके लिए है कि मेरे दिल्लीमे रहते हुए गुरुदेवके वहाँ आ जानेसे ६०,००० रुपये इकट्ठा कर सकना सम्भव हो गया जिससे कि सारा घाटा पूरा हो गया।[1] गुरुदेव बहुत प्रसन्न हुए और उन्होने अपना शेष दौरा रद कर दिया। इससे तुम देख सकते हो कि ईश्वर किस प्रकार काम करता है। इस खबरमे तुम्हे चिन्ता करनेकी आदतसे छुटकारा पानेमें मदद मिलनी चाहिए।

मै इस समयखादी-प्रदर्शनी और कांग्रेस-अधिवेशनके सिलसिलेमे लखनऊमे हूँ। मै काग्रेसमे कोई सक्रिय भाग नही ले रहा हूँ। हम इस माहके मध्य तक वर्धा वापस लौटनेकी आशा करते है।

मुझे आशा है कि तुम, अर्थात् तुम्हारा काम फूल-फल रहा है।

सप्रेम,

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९८८) से।

३५०. पत्र : अगाथा हैरिसनको

३ अप्रैल, १९३६

प्रिय अगाथा,

प्रत्येक डाकवाले दिन मै तुम्हारी याद करता हूँ और फिर उसे गुजर जाने देता हूँ ताकि जितने पत्र लिखनेकी मुझे अनुमति है उनकी सख्यामें वढ़ोतरी न हो। हालाँकि सख्याकी कोई सीमा निर्धारित नही की गई है, लेकिन मै उनकी[2] सलाहकी भावनाका पालन करनेकी कोशिश करता हूँ।

१. देखिए "पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", २७-३-१९३६।

२. डाक्टरोंकी।

मेरी और जवाहरलालकी इत्मीनानके साथ काफी लम्बी बातें हुई है। यह पत्र पाने तक तुम्हे कांग्रेसमे हुए विचार-विमर्शका परिणाम मालूम हो जायेगा।

नये आनेवाले वाइसराय और मेरे बीच बातचीत होगी, इस आशयके सनसनीखेज और मिथ्या समाचार भारतीय अखबारोंमे प्रकाशित हुए है।[1] इन्हे पढकर तुम्हारा मन भी उसी प्रकार वितृष्णासे भर उठा होगा जिस प्रकार कि यहाँ हम लोगोका भर उठा है। बेचारे लॉर्ड हैलीफैक्सको भी बीचमें घसीटा गया है। आजकल अखबारोमें छपनेवाली किसी चीज पर मै विश्वास नही करता। आशा है तुम भी ऐसा ही करती हो।

तुम सबको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९३) से।

३५१. पत्र : अमतुस्सलामको

३ अप्रैल, १९३६

बेटी अमतुस्सलाम,

तेरा लम्बा खत मिला। ध्यानसे पढा। बापाके खतसे मै जरा-भी दुखी नही हुआ हूँ। मै जानता हूँ कि तू हारनेवाली नही है। रुक्मिणीबहन[2] के ताने तुझ पर असर नही करेंगे, यह भी मै मानता हूँ। लेकिन बापाके खतकी ध्वनि यही है कि सचमुच तेरी वहाँ जरूरत नही है। तू जहाँ होगी वहाँ सेवा तो करेगी ही, वह बात अलग है। मै तेरी सेवाकी जहाँ जरूरत हो वही तुझे रखना चाहता हूँ। और दूसरी जगह तो तेरी जरूरत है ही। इसलिए मैने बापाको लिखा कि अगर अमतुस्सलामकी सचमुच वहाँ जरूरत न हो तो मेरे पास भेज दें। अब बापा जो कहे सो करना।

तू मुसलमान है इसलिए लोग तेरा दोप निकालते है, यह तो बिलकुल गलत है। लेकिन हो सकता है, तू स्त्री है और कुमारिका है, इसलिए कोई दोष देखे। लेकिन तू यह पक्की मान कि ऐसे लोग होगे भी तो इने-गिने ही। जो तेरी पवित्रताके लिए तुझे पूजते है और चाहते है, ऐसे असख्य लोग है। लेकिन तुझे पूजाकी या निन्दाकी क्या परवाह? मै तुझपर शक लाऊँ तब तू फिकर करना। सेगाँव पहुँच जा। बापाके पाससे निकल भाग।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३३) से।

१. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", ३०-३-१९३६।
२. एन० आर० मलकानीकी पत्नी।

३५२. सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन

एक सज्जन लिखते हैं :[१]

हालमें 'हरिजन' में श्रीमती सैंगर और महात्मा गांधीकी मुलाकातका जो विवरण प्रकाशित हुआ है[२] उसके बारेमें मैं कुछ कहना चाहता हूँ।

इस बातचीतमें जिस खास बातकी ओर ध्यान नहीं दिया गया मालूम पड़ता वह यह है कि मनुष्य अन्ततोगत्वा एक कलाकार और स्रष्टा है। कम-से-कम आवश्यकताओंकी पूर्ति पर ही वह सन्तोष नहीं करता बल्कि सुन्दरता, रंग-बिरंगापन और आकर्षण भी उसके लिए आवश्यक होता है। . . . उसने तो अपनी प्रत्येक आवश्यकताको कलाका रूप दे रखा है और उन कलाओंकी खातिर मनों खून बहाया है। मनुष्यकी रचनात्मक बुद्धि नई-नई कठिनाइयों और समस्याओंको पैदा करके उनका समाधान निकालनेके लिए उसे प्रेरित करती रहती है। रूसो, रस्किन, टॉल्स्टॉय, थोरो और गांधीजी उसे जैसा 'सरल-सादा' बनाना चाहते हैं वैसा वह बन नहीं सकता। फलतः युद्ध भी उसके लिए एक आवश्यक चीज है, और उसे भी उसने एक महान् कलाके ही रूपमें परिणत कर दिया है।

प्रकृतिका उदाहरण देकर मनुष्यकी बुद्धिसे अपील करना व्यर्थ है, क्योंकि वह तो उसके जीवनसे बिलकुल ही मेल नहीं खाती है। 'प्रकृति' उसकी शिक्षिका नहीं बन सकती। . . . कट्टर निराकारवादी नीत्सेका कहना है कि "कलाकारकी दृष्टिसे प्रकृति कोई आदर्श नहीं है। वह तो अत्युक्ति तथा विकृतीकरणसे काम लेती है और बहुत-सी चीजोंको छोड़ जाती है। प्रकृति तो एक आकस्मिक घटना है। 'प्रकृतिसे' अध्ययन करना मेरी दृष्टिमें एक खराब चिह्न है, यथा नगण्य चीजोंके सामने धूलमें लोटना अच्छे कलाकारके योग्य नहीं है।" . . . जब सन्तानोत्पत्तिकी आवश्यकता न रहे तब मैथुन-कार्यको बन्द कर देना या केवल सन्तानोत्पत्तिकी इच्छासे प्रेरित होकर ही मैथुन करना इतनी स्वार्थपरक, इतनी प्राकृतिक, इतनी ज्यादा 'व्यावहारिक' बात है कि हमारे दार्शनिकके कथनानुसार, वह उसकी कला-प्रेमी प्रकृतिको अपील नहीं कर सकता। . . .

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।
२. देखिए पृ० १६५-७०।

. . . आत्म-संयम या ब्रह्मचर्यका महत्त्व मैं किसी प्रकार कम नहीं करना चाहता। काम-वासना पर नियंत्रण स्थापित करनेकी कलाका यह सर्वोच्च उदाहरण है जिसकी मैं हमेशा सराहना करूँगा। लेकिन जैसे अन्य कलाओंकी सम्पूर्णता हमारे जीवनमें (और नीत्सेके अनुसार) हमारे 'सम्पूर्ण' जीवनमें, कोई हस्तक्षेप नहीं करती, वैसे ही ब्रह्मचर्यके आदर्शको मैं जीवनके अन्य मूल्यों पर प्रभुत्व नहीं जमाने दूँगा, जन-संख्या-वृद्धि-जैसी समस्याओंके हल करनेके साधन के रूपमें तो उसका उपयोग करूँगा ही नहीं। . . . मैं समझता हूँ कि इन बातोंको मद्देनजर रखकर ही शास्त्रों ('प्रश्नोपनिषद्')में यह कहा गया है कि "ब्रह्मचर्यमेव तद् यद् रात्रौ रत्या संयुज्यते" – अर्थात् केवल रात्रिमें ही (याने दिनके असाधारण समय को छोड़कर) सहवास किया जाये तो वह ब्रह्मचर्य जैसा ही है। यहाँ साधारण वैषयिक जीवनको भी ब्रह्मचर्यके ही समान बताया गया है। उसमें इतनी कठोरता तो जीवनके विविध मूल्योंमें उलटफेर करनेके फलस्वरूप ही आई है।

इस पत्रके समान ही ऐसे सभी पत्रोको, जिनमें कोरा शब्दाडम्बर, गाली-गलौज या आरोप-आक्षेप न हो, मैं सहर्ष प्रकाशित करूँगा, जिससे पाठकोके सामने समस्या के दोनो पहलू आ जाये और वे अपने-आप किसी निर्णय पर पहुँच सकें। इसलिए इस पत्रको मैं बडी खुशीके साथ प्रकाशित करता हूँ। खुद मैं भी यह जाननेके लिए उत्सुक हूँ कि जिस बातके विज्ञान-सिद्ध और हितकारी होनेका दावा किया जाता है तथा अनेक प्रमुख व्यक्ति जिसका समर्थन करते है, उसका उज्ज्वल पक्ष देखनेकी कोशिश करने पर भी मुझे वह क्यो इतना विकर्षित करती है।

लेकिन मेरे सन्तोषकी कोई ऐसी बात सिद्ध नही होती जिससे मुझे इसका विश्वास हो जाये कि विवाहित जीवनमे मैथुन स्वय कोई अच्छाई है और उसे करने-वालोको उससे कोई लाभ होता है। हाँ, अपने खुदके तथा अपने अनेक मित्रोके अनुभव परसे इससे विपरीत बात मैं जरूर कह सकता हूँ। हममे से किसीने भी मैथुन द्वारा कोई मानसिक, आध्यात्मिक या शारीरिक उन्नति की हो, यह मैं नही जानता। क्षणिक उत्तेजन और सन्तोष तो उससे अवश्य मिला; लेकिन उसके बाद ही थकावट भी जरूर हुई। और जैसे ही उस थकावटका असर मिटा नही, कि मैथुनकी इच्छा भी तुरन्त ही फिर जाग्रत हो गई। हालाँकि मैं सदासे ही एक कर्त्तव्यनिष्ठ कार्यकर्ता रहा हूँ, फिर भी मुझे अच्छी तरह याद है कि विषय-भोगके कारण मेरे काममे बडी बाधा पड़ती थी। इस कमजोरीको समझकर ही मैंने आत्म-सयमका रास्ता पकडा, और इसमें सन्देह नही कि तुलनात्मक रूपसे काफी लम्बे-लम्बे समय तक मैं जो बीमारीसे बचा रहता हूँ और शारीरिक तथा मानसिक रूपसे जो इतना अधिक और विविध प्रकारका काम कर सकता हूँ, जिसे देखनेवालोने अद्भुत बताया है, उसका कारण मेरा यह आत्म-सयम या ब्रह्मचर्य-पालन ही है।

मुझे भय है कि उक्त सज्जनने जो-कुछ पढ़ा उसका उन्होने गलत अर्थ लगाया है। मनुष्य कलाकार और स्रष्टा है, इसमें तो शक नही। सुन्दरता और रग-विरगापन भी उसे चाहिए ही। लेकिन मनुष्यकी कलात्मक और रचनात्मक प्रवृत्तिने अपने सर्वोत्तम रूपमे उसे यही सिखाया है कि वह आत्म-सयममे कलाका और अनुत्पादक सहवासमें (जो सन्तानोत्पत्तिके लिए न हो) कुरूपताका दर्शन करे। उसमें कलात्मकताकी जो भावना है उसने उसे विवेकपूर्वक यह जाननेकी शिक्षा दी है कि विविध रगोका चाहे-जैसा मिश्रण सौन्दर्यका चिह्न नही है, और न हर तरहका आनन्द ही अपने आपमें कोई अच्छाई है। कलाकी ओर उसकी जो दृष्टि है उसने उसे यह सिखाया है कि वह उपयोगितामे ही आनन्दकी खोज करे, अर्थात वही आनन्दोपभोग करे जो हितकर हो। इस प्रकार अपने विकासके प्रारम्भिक कालमें ही उसने यह जान लिया था कि खानेके लिए ही उसे खाना नही चाहिए, जैसाकि हममें से कुछ लोग अभी भी करते हैं, बल्कि जीवन टिका रहे, इसलिए खाना चाहिए। बादमे उसने यह भी जाना कि जीवित रहनेके लिए ही उसे जीवित नही रहना चाहिए, बल्कि अपने सहजीवियोंकी और उनके द्वारा उस प्रभुकी सेवाके लिए उसे जीना चाहिए जिसने उसे तथा उन सबको बनाया या पैदा किया है। इसी प्रकार जब उसने विषय-सहवास या मैथुन-जनित आनन्दकी बात पर विचार किया तो उसे मालूम पडा कि अन्य प्रत्येक इन्द्रियकी भाँति जननेन्द्रियका भी उपयोग या दुरुपयोग होता है और इसका उचित कार्य अर्थात् सदुपयोग इसीमें है कि केवल प्रजनन या सन्तानोत्पत्तिके ही लिए सहवास किया जाये। इसके सिवा और किसी प्रयोजनसे किया जानेवाला सहवास असुन्दर है और ऐसा करनेवाले व्यक्ति और उसकी नस्लके लिए इसके बहुत भयकर परिणाम हो सकते हैं। मै समझता हूँ, अब इस दलीलको और आगे बढ़ानेकी कोई जरूरत नही।

उक्त सज्जनका यह कहना ठीक ही है कि मनुष्य अपनी आवश्यकतासे प्रेरित होकर कलाकी रचना करता है। इस प्रकार आवश्यकता न केवल आविष्कारकी जननी है, बल्कि कलाकी भी जननी है। इसलिए जिस कलाका आधार आवश्यकता नही है, उससे हमें सावधान रहना चाहिए।

साथ ही,, अपनी हरएक इच्छाको हमें आवश्यकताका नाम नही देना चाहिए। मनुष्यकी स्थिति तो एक प्रकारसे परिवीक्षात्मक है। इस परिवीक्षाकी अवधिमे आसुरी और दैवी दोनो प्रकारकी शक्तियाँ अपने खेल खेलती है। किसी भी समय वह प्रलोभनका शिकार हो सकता है। अत॰ प्रलोभनोका प्रतिरोध करते हुए उसे अपना पुरुषार्थ सिद्ध करना चाहिए। जो अपने काल्पनिक बाहरी दुश्मनोसे तो लड़ता है किन्तु अपने अन्दरके विविध शत्रुओंके आगे उँगली भी नही उठा सकता, या उन्हे अपना मित्र समझनेकी गलती करता है, वह योद्धा नही है। "उसे युद्धकी आवश्यकता बेशक है" किन्तु पत्र-लेखक का यह कहना गलत है कि इसी "आवश्यकताके फलस्वरूप युद्धको मनुष्यने एक महान कलाके रूपमे परिणत कर दिया है"। युद्धकी कला तो उसने अभी सीखी ही नही। झूठे युद्धको उसने उसी तरह सच्चा मान लिया है जैसे हमारे पूर्वपुरुषोने बलिदानका गलत अर्थ लगाकर अपनी दुर्वासनाओंके बजाय बेचारे निर्दोष पशुओंका बलिदान शुरू कर दिया, जैसाकि बहुत-से

लोग आज भी करते हैं। अबीसीनियाकी सीमा पर आज जो-कुछ हो रहा है उसमें निश्चय ही न तो कोई सौन्दर्य है और न कोई कला। उक्त सज्जनने उदाहरणके लिए जो नाम चुने है वे भी (अपने) दुर्भाग्यमे ठीक नही चुने। क्योकि रूसो, रस्किन, थोरो और टॉल्स्टॉय तो अपने समयमें प्रथम श्रेणीके कलाकार थे और उनके नाम उस समय भी याद किये जाते रहेंगे जब हममे से बहुत-से लोग मर चुके होंगे और भुला दिये गये होंगे।

'प्रकृति' शब्दका उक्त सज्जनने जो उपयोग किया है वह भी ठीक नही किया मालूम पड़ता है। प्रकृतिका अनुसरण या अध्ययन करनेके लिए जब मनुष्योको प्रेरित किया जाता है तो उनसे यह नही कहा जाता कि वे जगली कीडे-मकोडो या शेरकी तरह काम करने लगे, बल्कि उसमे अभिप्राय यह होता है कि मनुष्यकी प्रकृतिका उसके सर्वोत्तम रूपमें अध्ययन किया जाये। मेरे खयालमें वह सर्वोत्तम रूप मनुष्यकी सुसस्कृत प्रकृति है, भले ही यह सुसस्कृत प्रकृति कुछ भी हो। लेकिन शायद इस बातको जाननेके लिए काफी प्रयत्नकी आवश्यकता है। पुराने लोगोंके उदाहरण देना आजकल ठीक नही है। उक्त सज्जनसे मेरा कहना है कि नीत्से या 'प्रश्नोपनिषद्'को बीचमें घुसेडना व्यर्थ है। मेरी दृष्टिमे इस बारेमें कुछ बड़े लोगोने क्या कहा है, उसका हवाला देनेकी जरूरत नही है। देखना यह है कि जिस बारेमे हम चर्चा कर रहे है उसमे शान्त विवेक क्या कहता है। प्रश्न यह है कि हम जो यह कहते है कि जननेन्द्रियका सदुपयोग केवल इसीमें है कि प्रजनन या सन्तानोत्पत्तिके लिए ही उसका उपयोग किया जाये और उसका अन्य कोई उपयोग दुरुपयोग ही है, यह बात ठीक है या नही? अगर यह ठीक है, तो फिर दुरुपयोगको रोककर सदुपयोग पर जानेमें कितनी ही कठिनाई क्यों न हो, उससे वैज्ञानिक शोधकको घबराना नही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-४-१९३६

३५३. द० भा० हिन्दी प्रचार-भवनके लिए अपील

सेठ जमनालाल बजाजने निम्नलिखित अपील प्रकाशित की है:

दक्षिण भारतमें राष्ट्रभाषा हिन्दीका प्रचार शुरू हुए १८ वर्ष हो गये हैं। महात्मा गांधीने हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागके द्वारा १९१८में यह कार्य आरम्भ किया था। तबसे यह कार्य दिन-दिन बढ़ता ही जा रहा है। इस समय यह कार्य दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा द्वारा संचालित हो रहा है, जिसके आजीवन अध्यक्ष महात्मा गांधी हैं। सभाने इन १८ वर्षोंमें दक्षिण भारतमें मजबूत नींव पर राष्ट्रभाषा हिन्दीका एक विशाल मन्दिर खड़ा कर दिया है।

सभाका कार्य न केवल विस्तृत और प्रगतिपूर्ण ही हुआ है, बल्कि गत पाँच-छः वर्षोंसे स्वावलम्बी भी होने लगा है। दक्षिणके विभिन्न भाषा-भाषी चारो प्रान्तोंमें करीब ४५० केन्द्रोंके द्वारा जो कार्य हो रहा है, उसके अलावा सभाके प्रयत्नसे स्कूलों और कालेजोंमें भी हिन्दी पढ़ाई जाती है। कुल विद्यार्थियोंकी संख्या ४०,००० से ऊपर है।

१८ वर्षके सफलतापूर्ण कार्यक्रमके बाद इस समय सभा अपने लिए एक भवन-निर्माणकी आयोजना कर रही है। इसके लिए मद्रास कारपोरेशनसे साढ़े तीन एकड़ जमीन वह प्राप्त कर चुकी है। कारपोरेशनके मेयर जनाब अब्दुल हमीदखाँ साहब एम० एल० सी० के कर-कमलोंसे ९ फरवरी, १९३६ को उक्त भवन-निर्माणके लिए शिलान्यास-महोत्सव भी हो चुका है।

सभाकी कार्यकारिणी-समितिने यह निश्चय किया है कि १९३६ के अन्त तक भवन-निर्माणका काम पूरा हो जाये। अपना कार्यालय, प्रेस और विद्यालय वहाँ ले जाया जाये। इसके लिए एक लाखके खर्चका अन्दाजा लगाया गया है। इस आयोजनासे सभाके कार्यालयके लिए भवन ही नहीं बनेंगे, बल्कि प्रेस, पुस्तकालय, वाचनालय तथा कार्यकर्त्ताओंके लिए वास-स्थान भी बनेंगे। पचास विद्यार्थियोंके रहने व शिक्षा पानेके लिए एक प्रचारक-महाविद्यालय भी बनेगा। हिन्दी अनिवार्य बनाकर साधारण शिक्षा देनेके लिए एक पाठशाला भी खोली जायेगी। विद्यार्थियों, कार्यकर्त्ताओं और आसपासकी जनताके उपयोगके लिए एक प्रार्थना-मन्दिर और व्यायामशाला भी बनेगी। जिस समय सारे भवन तैयार हो जायेंगे और सभाके सब विभागोंके कार्य वहाँ चलने लगेंगे, उस समय दक्षिणके विभिन्न भाषा-भाषी लगभग २०० व्यक्तियोंका एक अपूर्व गाँव बस जायेगा, जहाँ सब कार्यवाही एवं पठन-पाठनका माध्यम राष्ट्रभाषा हिन्दी होगी।

यहाँ [का वातावरण] अन्य वर्तमान अन्तर्प्रान्तीय संस्थाओंके वातावरणसे एकदम विपरीत होगा, जिसमें भारतीय संस्कृति, भारतीय साहित्य, भारतीय भावनाका भारतीय भाषा द्वारा समुद्धार और समुन्नति होगी।

इन सब भवनोंके लिए इस प्रकार आनुमानिक व्यय लगाया गया है:[1]

इस कार्यकी महत्ता व आवश्यकताको देखते हुए यह रकम कम ही कही जा सकती है। इस समय सभा मासिक ३०० रुपयेके करीब घर-भाड़ा मद पर ही खर्च कर रही है। भवन बन जानेके बाद इस मदसे ३६०० रुपये सालाना बचत हो सकती है, जो रकम प्रचार-कार्यको आगे बढ़ानेके काममें आ सकती है।

१. इसके बाद जमीन और विभिन्न भवनोंके निर्माण पर होनेवाले खर्चका ब्योरेवार तख़मीना दिया गया था जो यहाँ नहीं दिया गया है। कुल व्ययका अनुमान एक लाख रुपयेका था।

यद्यपि यह पूरी रकम अकेले देनेवाले अनेक दातागण इस पुण्यभूमिमें मिल सकते है, फिर भी सभाकी यह इच्छा है कि इस पुण्य-कार्यमें अधिकसे-अधिक लोगोसे दान मिले और इस तरह धन-संग्रह किया जाये जिससे दाताओंको भार न मालूम हो। इसलिए निम्नलिखित चार श्रेणियोके दाताओंसे सहायता माँगी जायेगी:

पहली श्रेणी	१००० रुपये व अधिक देनेवाले
दूसरी श्रेणी	५०० से १००० रुपये तक देनेवाले
तीसरी श्रेणी	२५० से ५०० रुपये तक देनेवाले
चौथी श्रेणी	१०० से २५० रुपये तक देनेवाले

इस तरह पहली श्रेणीके २०, दूसरी श्रेणीके ५०, तीसरी श्रेणीके १०० और चौथी श्रेणीके ३०० दाता प्राप्त हो सकें तो १,००,००० रुपये प्राप्त किये जा सकेंगे। जो दाता ५०० रुपयेसे १००० रुपये तक दान देंगे उनके नाम सभा-भवन के प्रमुख स्थानोंमें पत्थरों पर खुदवाये जायेंगे।

हम इस विशाल देशके धनी गण्य-मान्य महान देशप्रेमी सज्जनोंसे प्रार्थना करते है कि वे अपनी शक्तिके अनुसार इसमें हमारी मदद करके हमारा हाथ बँटायें। दातागण अपना दान कोषाध्यक्ष, दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभा, १०७, आर्मीनियन स्ट्रीट, मद्रास, या सभाके हिसाबमें इंडियन बैंक, मद्रास, या इण्डो-कमर्शियल बैंक, मद्रास, में जमा कर सकते है।[1]

इस अपीलके साथ मेरी हार्दिक सहमति है और मैं आशा करता हूँ कि हिन्दी भाषाके प्रेमी एक लाखकी माँग पूरी कर देनेमे अपना पूरा योग देंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-४-१९३६

३५४. पत्र : अमृत कौरको

इलाहाबाद
५ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र आज यथासमय आया। मेरे लखनऊ पहुँचने तक यदि शाल बिका नही होगा तो तुम्हे वह मिल जायेगा। लेकिन तुम्हे एक प्रकारकी ग्रामीण कलाका विकास करना होगा, जो सस्ती होते हुए भी सुन्दर होती है। सन्तति-निग्रहके बारेमें मेरे सबसे ताजा लेख[2] में तुमने कलाके बारेमें कुछ देखा होगा। तुमने स्वीकार

१. अपीलका पूर्ण पाठ *हरिजनसेवक* के ११-४-१९३६ के अंकमें उपलब्ध है। इसे उससे मिला लिया गया है।

२. देखिए पृ० २२७-३०।

किया है कि रद्दी बाँसके टुकड़ेमें नवीन[1] ने काठका जो चम्मच बनाया है वह सुन्दर है, फिर भी सस्ता है।

तुम्हारी-जैसी स्त्रियों द्वारा ग्राम-सेवाका काम हाथमें लेनेका महत्त्व तुम्हारी इस क्षमतामें है कि सस्तेपनकी आवश्यकतापर जोर देते हुए भी तुम उसे आकर्षक बना दो। शायद वास्तविक कला वही है जो पैसेकी दृष्टिमें सस्ती हो।

आज इससे ज्यादा नहीं।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६७)से, सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६३७६ से भी।

३५५. पत्र : मीराबहनको

५ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे तमाम खत यहाँ यथाक्रम पहुँच गये। ऋतु यहाँ भी अस्थिर रही है। आँधी-मेह भी आये। आशा है कि बरसात शुरू होने तक मौसम स्थिर रहेगा।

मैंने तुम्हें जो तारीखें दी थीं, वे कायम हैं।[2] हम यहाँसे ७ तारीखको प्रस्थान करके ८ तारीखको प्रातःकाल लखनऊ पहुँचेंगे।

आनन्द-भवनमें मेरा वही कमरा है, आसपास वही सब चीजें। सिर्फ मोतीलालजी और कमला नहीं हैं—कितनी बड़ी कमी है। बूढ़ी माँ को ढाढ़स बँधाना लगभग असम्भव है। उनका स्वास्थ्य नष्ट हो गया है। पर उनकी बहादुरी कायम है।

कुछ भी हो जाये, तुम अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करो। मुझे बड़ी खुशी है कि सजीला[3] तुम्हारे पास है। वह ज़रूर एक जिन्दादिल साथी होगा।

हाँ, तुम्हारे आजकलके जीवन पर मुझे ईर्ष्या है। मेरा शरीर शहरोंमें मजे कर रहा है, मगर मेरा दिल देहातोंमें है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२४) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७९० से भी।

१. व्रजलाल गांधीके पुत्र।

२. देखिए "पत्र : मीराबहनको", २९-३-१९३६।

३. मीराबहनका घोड़ा।

३५६. भाषण : हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें[1]

५ अप्रैल, १९३६

महात्मा गांधीने सम्मेलनके मंत्री श्री नर्मदाप्रसादका पत्र पढ़ कर सुनाया जिसमें उन्होंने बीमारीकी वजहसे सम्मेलनमें उपस्थित न हो सकने पर दुःख प्रकट किया था और ५०० रुपयेका दान देनेकी बात लिखी थी। महात्मा गांधीने [हिन्दीमें] बोलते हुए कहा कि इन घोषणाओं[2] से भवन-निर्माण-कार्यके लिए जो कर्ज लिया गया था वह पूरा हो गया है, लेकिन भवन अभी अधूरा है। यह एक दुःखकी बात है कि जबकि श्री टंडन[3] ने चार लाख रुपयेकी अपील की थी, लोगोंने बहुत कम दान दिया है। श्री टंडनने यह अपील उस कार्यके लिए की थी जिसका सम्बन्ध उस भाषासे है जिसे भारतने अपनी राष्ट्रभाषाके रूपमें स्वीकार किया है। देशमें इस समय सचमुच भुखमरी व्याप्त है। बेशक तत्वतः भारतके करोड़ों लोगोंको एक जूनका भोजन भी नसीब नहीं होता और संसारके किसी भी देशकी अपेक्षा भारतमें गरीबी और भुखमरी कहीं अधिक है, लेकिन मैंने यहाँ 'भुखमरी' शब्दका प्रयोग एक भिन्न अर्थमें किया है। लाखों रुपयोंका दान भी भाषामें प्राण नहीं फूंक सकता। यह तभी हो सकता है जब कोई ऐसा व्यक्ति जन्म ले जिसका हृदय इस भाषाके लिए उमड़ पड़े, ठीक उसी तरह जिस तरह बंगालमें कवि ठाकुरका हृदय बँगला भाषाके लिए उमड़ पड़ा और जिन्होंने बँगला भाषाको एक जीवन्त भाषा बना दिया। वह भाषा कभी नहीं मरी। तुलसीदास और सूरदासने हिन्दी भाषाके लिए नहीं लिखा। उनके हृदय और विचार (उनके काव्यमें) बह निकले जिससे समस्त मानवताको लाभ हुआ। भारतमें एक ऐसे व्यक्तिका जन्म होगा जो २३ करोड़ व्यक्तियोंकी भाषाको फिरसे जीवित करनेकी दिशामें आवश्यक प्रयत्न करेगा।

यह कार्य एक या दो आदमियोंके प्रयत्नोंसे नहीं बल्कि समस्त हिन्दी भाषा-भाषियोंके प्रयत्नोंसे ही चल सकता है।[4]

[अंग्रेजीसे]

लीडर, ७-४-१९३६ और हिन्दी संग्रहालय: संक्षिप्त परिचय, पृ० ८

१. गांधीजीने हिन्दी साहित्य सम्मेलनके पुस्तकालय और संग्रहालयका उद्घाटन किया था। वे सम्मेलनके अध्यक्ष थे। देखिए अगला शीर्षक भी।

२. इससे पहले २,२५० रुपयेकी दान-राशिकी घोषणा की जा चुकी थी।

३. पुरुषोत्तमदास टंडन।

४. यह वाक्य हिन्दी संग्रहालय : संक्षिप्त परिचय से लिया गया है।

३५७. टिप्पणी: हिन्दी संग्रहालय, इलाहाबादकी दर्शक-पुस्तिकामें

५ अप्रैल, १९३६

आज उद्घाटन क्रिया की।[1]

मो० क० गांधी

हिन्दी संग्रहालय: संक्षिप्त परिचय, पृ० ८

३५८. तार: केरल हरिजन सेवक संघके अध्यक्षको

[६ अप्रैल, १९३६ के पूर्व][2]

इतनी दूरसे मार्गदर्शन करना कठिन है। लेकिन आदेशोंके विरुद्ध कुछ न कीजिए।[3] घर-घर जाकर हस्ताक्षर प्राप्त करें। सभाएँ आयोजित करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ६-४-१९३६

३५९. पत्र: एल्बर्ट एच० वेस्टको

लखनऊ

८ अप्रैल, १९३६

प्रिय वेस्ट,[4]

एक लम्बे अरसेके बाद, शायद कितने ही सालोंके बाद, आपका पत्र पाकर और आपके सुपरिचित हस्ताक्षर देखकर मुझे बहुत आनन्द हुआ।

सोराबजी[5] के बारेमें मुझे खेद है। हालाँकि मैं इतनी दूर बैठा हूँ कि हिसाब-खाता इस समय मुझे अनुपलभ्य है, फिर भी मैं पूरे विश्वासके साथ कह सकता हूँ

१. इसके बाद गांधीजीने संग्रहालयको ५,००० रु० दान करनेकी घोषणा की।

२. यह रिपोर्ट दिनाक "त्रिवेन्द्रम, ६ अप्रैल" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

३. केरल हरिजन सेवक संघने मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनके सम्बन्धमें जत्थे संगठित किये थे जो पैदल गाँव-गाँव जाकर प्रचार करते थे और लोगोंके हस्ताक्षर प्राप्त करते थे। त्रावणकोरमें जिला-मजिस्ट्रेटने जत्थों पर प्रतिबन्ध लगा दिया था।

४. दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके निकट सहयोगी।

५. सोराबजी रुस्तम, पारसी रुस्तमजीके पुत्र।

कि मुझे सालोंसे, कभी भी, न तो रायटरकी एजेंसीके मार्फत और न ईस्ट इंडियन ट्रेडिंग कम्पनीके मारफत या डॉ० नानजीके मार्फत कोई रकमें प्राप्त हुई हैं। मुझे ट्रस्टसे जो-जो रकमे प्राप्त हुई थी वे सब मि० डूलकी सिफारिश पर, जिसका कि — यदि मेरी याददाश्त ठीक है तो — दूसरे न्यासियोंने भी समर्थन किया था, सोराबजीके इस्तेमालके लिए ऋणके रूपमें वापस भेज दी गई थी और इस मामलेमें सोराबजीकी बीमा पॉलिसी प्राप्त प्रतिभूतिके रूपमें मान ली गई थी।

बीमा पॉलिसीकी किस्तकी अदायगी नहीं हुई और सम्भवत पॉलिसी बेकार हो गई है। यह कर्ज मैंने बहुत हिचकिचाहटके बाद दिया था, किन्तु मुझे लगा था कि मुझे यह करनेका अधिकार है। कारण कि यदि पारसी रुस्तमजी जीवित होते तो वे यही चाहते कि उन परिस्थितियोंमें मैं सोराबजीकी मदद करूँ। बेशक, अभी तक ऋणकी आंशिक अदायगी भी नहीं हुई है। हाँ, काफी साल हुए बच्चोंको पुरस्कार देनेके निमित्त एक छोटी-सी रकम मिली थी। वह रकम अभी भी जमा है और प्रति वर्ष पुरस्कार बाँटे जाते हैं। इसके अलावा सूचित करने लायक कोई बात नहीं है, क्योंकि दोनों ट्रस्टोंकी ओरसे या उनके वास्ते जमा किया गया कोई धन मेरे पास नहीं है। प्रामाणिक कथनके लिए मैं आपका पत्र और यह उत्तर नारणदास गांधीके पास भेज रहा हूँ जिनके जिम्मे आश्रमका हिसाब-खाता है। यदि मेरे कथनमें कोई गलती है तो मैं उसे सुधार लूँगा।

आपकी जाँच-पड़तालका जो परिणाम निकले कृपया उसे मुझे सूचित करते रहिएगा।

आशा है आप सब कुशल-मंगलसे होंगे और श्रीमती पाइवेल भी, जिनकी आयु अब तो शतक तक पहुँच चली होगी। अब आपका क्या हाल-चाल है?

आप सबको प्यार,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एल्बर्ट एच० वेस्ट,
२५६, मूर रोड
डर्बन, नेटाल
दक्षिण आफ्रिका

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

३६०. पत्र : अमृत कौरको

८ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

अपने तारके जवाबमें मैं तुम्हारे तारकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। तुम्हे इतनी जल्दी-जल्दी जुकामका शिकार नही होना चाहिए। मुझे पूरा विश्वास है कि तुम समझदारीके साथ प्राकृतिक ढगसे रहो तो जुकामसे बच सकती हो। मेरे मनमें हल्का-सा भय यह भी है कि तुम जो अन्दर रेशमी कपड़े पहनती हो उसके कारण ही तुम्हारी त्वचा इतनी सुकुमार हो गई है। बार-बार नहाने और उससे भी ज्यादा बार मुँह धोनेके कारण तुम्हारी त्वचाको रगड़ सहनी पडती है। इसके अलावा तुम साबुनका जो बहुत अधिक इस्तेमाल करती हो इससे त्वचाकी चिकनाई नष्ट हो जाती है। इसी चिकनाईकी मददसे प्रकृति त्वचाकी रक्षा करती है। शायद तुम्हारे जुकामके यही तीन बाह्य कारण है। इसके बारेमे शम्मीके साथ बात करना और यदि उनके अन्दरका डॉक्टर मेरे विचारोका समर्थन करे तो आवश्यक परिवर्तन कर डालो — सब एक साथ नही, बल्कि एक-एक करके।

खुर्शेद[1] यही है और पेरीन[2] भी। मैंने तुम्हारा मेमो उनको भेज दिया है ताकि वे चुनाव कर ले। मैंने ६०० रुपयेसे अधिककी पूंजी लगानेका अधिकार नही दिया है। तुम्हे उन चीजो पर कोई घाटा नही उठाना चाहिए। शाल और चाकू अन्य वस्तुओके साथ पैक कर दिये जायेंगे।

यह पत्र लिखते समय प्रभा[3] मेरे पास बैठी है। वह चार दिन पहले लखनऊ आई थी।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६८)से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६३७७ से भी।

१. दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

२. पेरीन कैप्टेन, दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

३. प्रभावती, जयप्रकाश नारायणकी पत्नी।

३६१. पत्र: मार्गरेट स्पीगलको

लखनऊ
९ अप्रैल, १९३६

चि० अमला,

मैं तुम्हारा पत्र पानेको और यह जाननेको कि तुम्हारा क्या हाल-चाल है, अत्यन्त व्यग्र था। इसलिए तुम्हारा लिखा पत्र देखकर और वह भी गुजरातीमें, मुझे बहुत खुशी हुई। मैं देखता हूँ कि तुमने अपनी खादीको भुला दिया है, लेकिन अपनी गुजरातीको नहीं भुलाया है। लेकिन यह तो कुछ नहीं है। कृत्रिम ढंगसे अच्छा होनेके बजाय पूरी तरहसे सहज और स्वाभाविक रहना और बुरा होना ज्यादा अच्छा है।

मुझे खुशी है कि तुम्हारी माँ[1] शीघ्र ही तुम्हारे पास आ जायेंगी और तुम उनके लिए पैसे बचा रही हो। मुझे आशा है कि तुम बिलकुल ठीक-ठाक हो।

हम इसी १५ तारीख तक वर्धा पहुँचनेकी आशा करते हैं।

मैं तुम्हें अमला ही कहता हूँ। लेकिन अगर तुम चाहो कि मैं तुम्हें किसी और नामसे सम्बोधित करूँ तो बता देना।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे: स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३६२. पत्र: लीलावती आसरको

१० अप्रैल, १९३६

चि० लीलावती,

तू प्रसन्न, शान्त और पूरी तरह कर्त्तव्य-परायण रह रही होगी। मैं आशा तो कर रहा हूँ कि वहाँ १५-१६ तारीखको पहुँच जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४०) से। सी० डब्ल्यू० ६६१५ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

१. मार्गरेट स्पीगलकी माँ जर्मनीमें थीं

३६३. पत्र : पुरुषोत्तम नारणदास गांधीको

लखनऊ
१० अप्रैल, १९३६

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। मेरा आशीर्वाद तो तू साथ ही लेकर घूमता है। दीर्घायु हो। मैं तो तुझे भक्त मानता हूँ। तेरे लिए सदा कुशल ही है। यदि तुझे कब्ज बना ही रहता हो तो रोज भोजन करते समय ताजा या सूखा आधा तोला लहसुन पीस कर दही या दूधमें पी लिया कर। भोजन करनेके एक घंटा पहले पी ले तो अच्छा। यदि तीन दिनमें लाभ होता दिखे तो इसे जारी रखना।

बापूके आशीर्वाद

पुरुषोत्तम नारणदास गांधी
मिडिल स्कूलके सामने
नवुं परुं
राजकोट, काठियावाड़

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३६४. आन्तरिक खतरा

कोई भी शक्तिशाली आन्दोलन या संस्था बाह्य आक्रमणोंसे नहीं मर सकती। आन्तरिक क्षय ही उसकी मृत्युका कारण हो सकता है। यह बात अ० भा० चरखा संघ और अ० भा० ग्रामोद्योग संघ या हरिजन सेवक संघ जैसे महान अखिल भारतीय संगठनोंके बारेमें बिल्कुल सच है। और भी अखिल भारतीय स्तर के संगठन हैं, लेकिन यहाँ मैं उनका उल्लेख नहीं कर रहा हूँ। यहाँ मैं केवल प्रथम दो संगठनों को ले रहा हूँ, क्योंकि वे करोड़ों ऐसे गाँववालोंके हितोंका प्रतिनिधित्व करते हैं और उन हितोंको बढ़ानेका प्रयत्न कर रहे हैं जो सालमें चार महीने काम न होनेके कारण मजबूरन बेकार बैठे रहते हैं, और इस कारण इतना भी नहीं कमा पाते कि ठीकसे जिन्दा रह सकें। तीसरे संगठनका उल्लेख मैं इसलिए कर रहा हूँ क्योंकि उसका उद्देश्य समाजके करोड़ों उपेक्षित-तिरस्कृत मनुष्योंका प्रतिनिधित्व करना है। इस प्रकार ये तीनों संगठन अच्छे उद्देश्योंको लेकर चल रहे हैं और इसलिए इन्हें

न केवल बाहरी आक्रमणसे कोई हानि नही होनी चाहिए बल्कि उससे और भी फूलना-फलना चाहिए।

यह स्पष्ट है कि वे केवल आर्थिक सहायताके बल पर पनप नही सकते। इसलिए जिन चीजोकी सबसे ज्यादा जरूरत है, वे है — असदिग्ध और निष्कलक चरित्र, कार्यकी पद्धतिके बढ़ते ज्ञानके साथ अनवरत प्रयत्न, और अत्यन्त सादा जीवन। कार्यके ज्ञानसे शून्य और ग्रामीणोके सादे जीवनकी अपेक्षा अधिक शान-शौकतकी जिन्दगी बसर करनेवाले चरित्रहीन कार्यकर्त्ता गाँववालोपर किसी प्रकार भी अच्छा असर नही डाल सकते, फिर चाहे गाँववाले हरिजन हो या अन्य कोई।

इन पक्तियोको लिखते हुए मुझे उन कार्यकर्त्ताओका स्मरण आ रहा है जिन्होने सच्चरित्र और सादगीके अभावमे ग्रामीणोके हितको तथा अपनेको भी नुकसान पहुँचाया है। सौभाग्यसे दुश्चरित्रताकी स्पष्ट मिसाले बहुत कम है। किन्तु इस कार्यमें सबसे बडी रुकावट कार्यकर्त्ताओकी ग्रामीण जीवनके स्तरपर अपने जीवनको चला सकनेकी अयोग्यता है। अगर प्रत्येक कार्यकर्त्ता अपने कामकी इतनी कीमत लगाने लगे जिसका बोझ ग्रामसेवक सस्था उठा न सके, तो नतीजा यह होगा कि इन सस्थाओको अपना कारोबार समेटना पडेगा।

थोडी-सी अस्थायी अवस्थाओको छोड़कर इन सस्थाओमें कार्यकर्त्ताओको शहरोंके पैमाने पर तनख्वाहे देनेका इसके सिवा कोई मतलब नही कि गाँवो और शहरोके बीच की खाईको पाटा नही जा सकता। हमे इस तथ्यको अपनी आँखोसे ओझल नही होने देना चाहिए कि ग्राम-सुधारका आन्दोलन शहरियोके लिए भी उतना ही शिक्षाकी वस्तु है जितना कि स्वयं ग्रामीणोके लिए है। शहरसे आये कार्यकर्त्ताओको ग्रामीण मनोवृत्ति अपनाकर उसके अनुसार ग्राम्य-जीवन बितानेकी कला सीखनी चाहिए। इसका यह मतलब कभी नही कि वे भी ग्रामीणोकी तरह आधे भूखे रहने लगें। इसका तो सिर्फ इतना ही मतलब है कि उनके पुराने जीवनके ढगमें मौलिक परिवर्तन होना चाहिए। जहाँ एक तरफ गाँवोके जीवन-स्तरको ऊँचा उठानेकी जरूरत है, वहाँ दूसरी तरफ शहरोके जीवन-स्तरको नीचा करनेकी जरूरत है, लेकिन इस तरह कि उनका कार्यकर्त्ताके स्वास्थ्यपर कोई बुरा असर न पड़े।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-४-१९३६

३६५. अप्रमाणित खादी

अ० भा० चरखा संघकी तमिलनाडु शाखाके मन्त्रीने श्री शंकरलाल बैंकरको लिखा है:[१]

> अपना खादीका माल प्रमाणित करनेके लिए तिरुपुरके पुराने खादी-व्यापारियोंने एक संघ बनाया है।
>
> उद्देश्य उनका यह है कि बढ़ी हुई कीमत पर वे अपने मौजूदा मालको बेचें और सारे प्रान्तमें फुटकर विक्रेताओंको खूब अच्छा कमीशन दें और अपने उसी पुराने ढर्रे पर खादी तैयार करायें तथा कारीगरोंको कम मजदूरी दें। अनेक पुरानी कत्तिनें, जो या तो हमसे रुई नहीं खरीद सकतीं, या जो सूतकी किस्ममें सुधार नहीं कर सकती, सम्भव है कि वे इन व्यापारियोंके लिए कातना जारी रखें। तो भी हम इन व्यापारियोंके प्रयत्नोंको रोकनेके लिए गाँवोंके लोगोंमें जोरोंका प्रचार करनेका प्रबन्ध कर रहे हैं। जगह-जगह पर्चे वगैरह बाँट कर और अपने संघ तथा इन व्यापारियोंके संघके उद्देश्य और कार्यके विषयमें खानगी बातचीत और व्याख्यानोंके द्वारा हम अपना प्रचार-कार्य कर रहे हैं। हमारे कार्यकर्त्ता घर-घर जाकर कत्तिनोंको बतलाते हैं कि सूतकी किस्म में वे किस तरह सुधार कर सकती हैं।
>
> ये व्यापारी अब भी जनताको धोखा देनेके लिए हमारे संघके नामका उपयोग करते चले जाते हैं। इनके साइनबोर्ड, चिट्ठी-पत्रीके कागज, बिल, बीजक, थानोंके लेबिल आदि सब पर "चरखा संघ द्वारा प्रमाणित" छपा रहता है। मैंने अभी उस दिन उन्हें लिखा था कि वे हमारे संघका नाम अपने कागज-पत्रों परसे फौरन काट दें। उस पर एक व्यापारीने हमारे पत्रका यह जवाब दिया है:
>
> 'आपका २-३-३६ का पत्र पढ़कर आश्चर्य हुआ है। आप लिखते हैं कि अगर मैं "चरखा संघ द्वारा प्रमाणित" इन शब्दोंको एक हफ्तेके अन्दर नहीं काट देता हूँ, तो आप कानूनी कार्रवाई करेंगे। आपका अखिल भारतीय चरखा संघ कोई रजिस्टर्ड संस्था तो है नहीं . . . । न आपको, और न किसी अन्य व्यक्तिको इस पर आपत्ति या विरोध प्रगट करनेका अधिकार है। . . .'
>
> अखबारोंमें मैंने इस विषयमें लिख दिया है। हरेक कांग्रेस-सभामें चरखा संघकी प्रमाणित खादी रखवानेका भी मैं प्रबन्ध कर रहा हूँ। मैलापुर कांग्रेस

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

कमेटी और वेदारण्यम नगर कांग्रेस कमेटीने तो पहले ही हमसे खादी बेचनेके प्रमाणपत्र लिये हैं। मैं आशा करता हूँ कि दूसरी कमेटियाँ भी शीघ्र ही हमें प्रमाणपत्रोंके लिए लिखेंगी और खादी अपने यहाँ रखने और बेचनेकी व्यवस्था करेंगी।

कृपाकर आप यह स्थिति महात्माजीको अच्छी तरह बतला दें और उनसे यह प्रार्थना करें कि अखबारोंमें इस आशयकी एक अपील वे निकाल दें कि जो लोग अपने लिए खुद नहीं कात सकते वे केवल चरखा संघ द्वारा प्रमाणित खादी ही खरीदें, साथ ही जरा तिरुपुरके व्यापारियोंको भी आगाह कर दें।

अभी-अभी जो व्यापारी प्रमाणित खादी बेचते थे उनका खादीके नये नियमोको माननेसे इनकार करनेके बाद यह अप्रमाणित खादीका व्यापार जारी रखना और इस तरह अपनेको प्रमाणपत्रोके अयोग्य बनाना निस्सन्देह एक अनुचित काम है। उनकी यह बात देश-भक्तिके विरुद्ध है और अमानुषिक भी है। गरीब कत्तिनोका और कुछ हद तक आसानीसे विश्वास कर लेनेवाले ग्राहकोका शोषण उन्हे नही करना चाहिए। मेरा तो उनसे यह आग्रह है कि वे नये खादी-विधानको मान ले और चरखा-संघसे प्रमाणपत्र ले ले, अथवा नये नियमोसे यदि उन्हे सन्तोष नही है तो कोई दूसरा धंधा करने लगे। उनका यह प्रत्युत्तर देना अनुचित है कि चरखा सघ चूँकि कोई रजिस्टर्ड संस्था नही है इसलिए वे जो चाहे सो कर सकते हैं। इन आपत्ति उठानेवालोसे मैं तो यही कहूँगा कि उनका उस सस्थाकी इस तरह अवगणना करना जिसके आदेशोंका उन्होने अभी तक पालन किया है, नैतिक और सामाजिक नियमोका उल्लघन करना है।

मगर जहाँ मै यह उम्मीद करता हूँ कि अप्रमाणित खादी बेचनेवालोके प्रति की हुई मेरी यह अपील विफल नही जायेगी, वहाँ मै यह भी चाहूँगा कि तमिलनाडु शाखाके मत्री कत्तिनोको नये नियमोसे अच्छी तरह परिचित करा दे और उन्हें इस बातपर राजी कर ले कि कम मजदूरीपर उन्हे हर्गिज नही कातना चाहिए। सबसे प्रभावकारी इलाज कत्तिनोके ही हाथमें है।

तमिलनाडु शाखाके मंत्रीने काग्रेस कमेटियो तथा गरीब ग्रामवासियोंके अन्य हितचिन्तकोसे खादी बेचनेके लिए प्रमाणपत्र लेने और इस तरह सख्त मेहनत करनेवाली कत्तिनोंकी प्रत्यक्ष सेवा करनेके लिए जो अपील की है उसका मैं हृदयसे समर्थन करता हूँ। उनके सक्रिय सहयोगसे अप्रमाणित खादीकी बिक्री बहुत-कुछ रुक सकेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-४-१९३६

३६६. तार: जे० ए० डी० नौरोजीको

११ अप्रैल, १९३६

जे० ए० डी० नौरोजी
७८, नेपियन सी रोड
बम्बई

कमला नेहरू स्मारककी अपीलके लिए आपकी स्वीकृतिकी राह देख रहा हूँ।[1]

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य . प्यारेलाल

३६७. भाषण: लखनऊकी खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें[2]–२

लखनऊ,
१२ अप्रैल, १९३६

गांधीजीने उपस्थित लोगोंसे प्रदर्शनी देखनेकी, और एक बार ही नहीं, बल्कि दो बार, तीन बार और चार-चार बार तक देखनेकी, और सम्भव हो तो वहाँकी प्रत्येक चीजको अपनी अन्तरात्माकी आँखों व कानोंसे देखने-सुननेकी अपील की। उन्होंने कहा कि इस तरह वे प्रदर्शनीको देखें तो उन्हें उसमें एक-से-एक बढ़कर चमत्कार दिखाई देंगे। आगे बोलते हुए गांधीजीने कहा:

उस दिन मैंने आपसे यह कहा था[3] कि यह नुमाइश कोई सिनेमा-जैसी तमाशेकी चीज नही है। मेरे यह कहनेका आशय असलमे कितना गहरा था इसे आप अच्छी तरह समझ ले। आप मेरी आँखो और कानोंको लेकर इस प्रदर्शनीमें घूमेगे, तो आपके मुँहसे यह निकल ही पड़ेगा कि 'वाह! कैसी सुन्दर प्रदर्शनी है।' यहाँ ऐसे अनेक नवयुवक होगे, जो किसी स्त्रीका नाच देखकर उसके हाव-भावो पर मोहित हो 'वाह-वाह' कहने लग जाते होगे। पर भगवानने हमे जो आँखे दी है, वे किसी स्त्रीका नाच देखकर 'वाह-वाह' कहनेके लिए नही दी है। माताके रूपमे हम उसे

१. कमला नेहरू स्मारक न्यासकी बैठक ७ अप्रैल, १९३६ को इलाहाबादमें हुई थी।

२. इस भाषणको महादेव देसाई लिखित लखनऊ-प्रदर्शनीके विवरणमें से लिया गया है और १८-४-१९३६ के **हरिजन** में अंग्रेजीमें छपी रिपोर्टसे मिला लिया गया है।

३. २८ मार्च, १९३६ को प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसर पर; देखिए पृ० ३१३-७।

पहचानें इसीलिए भगवानने हमे ये आँखें दी है। यहाँ आप आयेगे, तो अपनी आँखो और कानोको पवित्र बनायेंगे। प्रत्येक अशिक्षाप्रद वस्तुके बहिष्कारका यहाँ प्रयत्न किया गया है। मेरी आँखोंसे आप देखेंगे, मेरे कानोसे सुनेंगे तो आपके मुँहसे जो 'वाह' निकलेगी वह शुद्ध 'वाह' होगी, गन्दी 'वाह-वाह' नही। दरगाह, मसजिद अथवा मन्दिरमें खुदा या रामका नाम सुनकर हम आनन्द-मग्न हो जाते है। इस नुमाइशको भी आप वैसी ही पवित्र वस्तु समझे। यहाँ आपको कोई राग-रग या तमाशा देखनेको नही मिलेगा। आप तो इसे मेरी आँखोसे देखे। यह नही कि किसी 'महात्मा'की आँखोसे आप देखें। मैं तो एक देहाती हूँ, एक प्राकृत मनुष्य हूँ। इसलिए आप तो इस ग्रामोद्योग-प्रदर्शनीको मेरे जैसे एक देहाती और प्राकृत मनुष्यकी ही आँखोसे देखें।

चार बार देखनेकी फीस १ रुपया देकर कोई भी व्यक्ति यहाँ चार सबक सीख सकता है। पत्थरके चश्मे होते हैं यह आपने सुना ही होगा। यहाँ तो आप पत्थरके चश्मे बनते हुए देखते है। यह काम आप और कहाँ सीखने जायेंगे? पर यह तो कुछ मुश्किल-सा काम है। यहाँ कागज भी बनता है। कागजका हुनर कितनी तरक्की कर गया है यह देखकर आप हैरान हो जायेंगे। कागज तो १० बरसका लडका भी बनाना चाहे तो बना सकता है। कागज बनाना यहाँ आप अच्छी तरह ध्यानसे देख जाये तो अपने घर जाकर आप इस धन्धेको शुरु कर सकते है। आप तो यहाँ एक-से-एक नई चीज कदम-कदम पर देखेंगे, और देखकर चकित हो जायेंगे।

पश्चिमसे आई हुई हर-एक चीजमें चमत्कार देखनेके तो हम कुछ आदी-से हो गये है। आप चमत्कार देखना चाहें तो आप यहाँ भी देख सकते हैं। इससे भी छोटी प्रदर्शनी अगर मै लगाऊँ तो मैं उसमें भी चमत्कार दिखा सकता हूँ। यहाँ एक कुम्हारकी दूकान पर मिट्टीकी छोटी-छोटी सुन्दर चीजे देखकर मै तो हैरान हो गया। स्याही रखनेके लिए मैंने उस दूकानसे एक छोटी-सी सुन्दर दावात खरीदी है। मै समझ रहा था कि उसकी कीमत छह-सात आने होगी, पर जब मुझसे कहा गया कि वह तो एक पैसेकी है, तो मेरे अचरजका पार न रहा। आप तो उसे देखकर शायद यह कहेगे कि वह जर्मनी या जापानकी बनी हुई तो नही है? पर वह तो देहातकी बनी हुई चीज है। इसे आप चमत्कार नही कहेगे तो किसे कहेंगे? ऐसे-ऐसे चमत्कार आप यहाँ पायेंगे। हाड़-पिंजरोके देश उडीसाको तो आप जानते ही होंगे? अस्थि-कंकालोके उस भुखमरे दरिद्र देशसे भी कुछ कारीगर यहाँ आये हुए है। उनकी बनाई हुई हाथीदाँतकी, सीगकी और चाँदीकी चीजोको आप जाकर देखिए। कैसी चमत्कारी चीजें हैं। यही नही कि वे चीजें यहाँ बनी-बनाई रखी है; वे किस तरह बनाई जाती हैं यह भी आप जाकर देख सकते है। आप देखे कि हाड़-पिंजरो तकमे बसनेवाली मनुष्यकी आत्मा किस तरह निर्जीव सीगो और धातुमे प्राण डाल सकती है। एक बहनने उस दिन 'कृष्ण'की हाथीदाँतकी एक छोटी-सी मूर्ति खरीदी। वह भगवान कृष्णको पूजनेवाली नही थी, पर अब वह मुझसे कहती है कि वह उस सुन्दर सलोनी मूर्तिकी पूजा करने लगी है। क्या इसे आप चमत्कार नही कहेंगे?

पर हमारी आदत कुछ ऐसी विगड़ गई है कि आँखोके सामने ही जो चमत्कार हो रहे है वे हमें नगण्य-से लगते है और वाहरकी चीजोमे हमें कला-ही-कला दिखाई देती है। यूरोपके किसी पानीके सोतेसे एक अजीव-से नामका पानी यहाँ आता है और वह हमारे लिए जादू-जैसा चमत्कारी असर पैदा करनेवाला हो जाता है। कहते है कि वह हाजमेके लिए अनोखा गुणकारी है और हमारा पवित्र गंगाजल, जो कही अधिक शोधक और प्रकृतिसे ही कीटाणु-नाशक होता है, हमे एक गन्दे पोखरके पानीसे कुछ अधिक अच्छा नही जँचता।

दूर-दूरसे जो कारीगर या शिल्पी प्रदर्शनीमें आये हुए थे उनकी बनाई चीजोंको खरीदकर उनकी कद्रदानी जरूर करनी चाहिए, इस विषयमें अपील करते हुए गांधीजीने कहा:

यह तो आप देख ही रहे है कि त्रावणकोर, कश्मीर, कटक आदि कितनी-कितनी दूरसे यहाँ कारीगर आये हुए है। ये वेचारे तो अपनी कलाओका प्रदर्शन करके कुछ पैसा पैदा करनेके लिए ही आये है। इसलिए जिन्हे भगवानने पैसा दिया है, उन्हे यहाँ कोई-न-कोई चीज तो खरीदनी ही चाहिए। यह वात नही कि यहाँ एक पैसेकी चीजके दो रुपये लिये जाते है। हाँ, यह दूसरी वात है कि आप किसी चीज पर मुग्ध होकर उस पर दो रुपये न्योछावर कर दें। जो चीज आप यहाँ लेगे उसका पैसा किसी धनी या किसी विचौलिएकी जेवमे नही जायेगा। वह तो उस गरीव देहातीकी जेवमें जायेगा, जिसके कि हम सव देनदार है। हम लोग देहातियोकी कीमत पर जी रहे हैं। देहातियोको शहरवाले चूस रहे है, इस शोषणका कुछ-न-कुछ वदला तो हमें देना ही चाहिए। शहरवालो और देहातियोके वीच जो भारी खाई है उस पर पुल तो वँध गया है, देरी तो हम दोनोके मिलने-भर की है। यह मिलाप ग्रामोद्योगको अपनानेसे ही होगा। यह कोई दान देनेकी वात नही है, मैंने तो यह शुद्ध वनियापनेकी वात कही है। जो लोग ये चीजें खरीदे वे भी वाह-वाह कहते जाये और कश्मीर, त्रावणकोर, कटक आदिसे जो कारीगर आये है वे भी जव अपने-अपने घर जाये तो कहे कि 'वाह! लखनऊमे हमारी चीजोकी कितनी अच्छी कद्रदानी हुई।' मेरी इन वातोको आप दिलमे लिख ले तो मै यह मान लूँगा कि मेरे व्याख्यानकी भी फीस मुझे मिल गई है।

जगह तंग थी, और लोग ठसाठस भरे हुए थे। धूप भी तेज हो चली थी। ऐसेमें लोग भला शान्तिके साथ कैसे वैठ सकते थे? इसलिए गांधीजीने अपने जिस भाषणको वड़े सुन्दर और रोचक ढंगसे आरम्भ किया था, उसे समाप्त करते हुए काफी जोरदार और भावपूर्ण शब्दोंमें उन लोगोंसे निम्नलिखित अपील की, जिनके हृदयके भावोंको हमारी यह प्रदर्शनी स्पर्श नहीं कर सकी थी:

जिस तरहके दृश्यका मैंने आपके सामने यह चित्र खीचा है, वह अगर आपके दिलोको हिला नही सकता और भूखो मरते हुए देहातियोकी खातिर थोड़ा-सा भी त्याग करनेके लिए आपको प्रेरित नही करता, तो फिर खुदा ही आपका मददगार है। इकवाल का 'सारे जहाँसे अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा', यह राष्ट्रीय गीत आज

भी हमारे दिलको एक बार तो हिला ही देता है। हिन्दुस्तानकी यह तस्वीर जब उन्होंने अपनी इस गजलमें खींची होगी कि—

परबत जो सबसे ऊँचा, हमसाया आसमाँका;
वह सतरी हमारा, वह पासबाँ हमारा।
गोदीमें खेलती हैं जिसकी हजारों नदियाँ;
गुलशन है जिनके दमसे रश्के जिनाँ हमारा।।

तब उनके दिलकी आँखोंके आगे जरूर कोई ऐसी ही कल्पना रही होगी। हम 'झंडा अभिवादन' करने जाते हैं, और अपने राष्ट्रीय झंडेका हमें अभिमान भी है। पर मैं आपसे कहता हूँ कि इस अभिमानका कोई मूल्य नहीं, अगर आप हिन्दुस्तानकी बनी हुई चीजोंको पसन्द नहीं करते और विदेशी चीजोंपर मर रहे हैं। हमारे गरीब देहाती भाई-बहनोंकी बनाई हुई चीजोंकी प्रदर्शनी देखकर जिनका दिल नहीं हिलता और उनके लिए जो थोड़ा-सा भी त्याग नहीं करना चाहते, उनका भारतकी पूर्ण स्वतन्त्रताके बारेमें बड़ी-बड़ी बातें करना बेकार है।

हरिजन-सेवक, १८-४-१९३६

३६८. एक पत्र[1]

[१३ अप्रैल, १९३६ के पूर्व][2]

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। बुद्धिमानीका तकाजा है और यह बहुत अनुभवसे भी प्रमाणित है कि विगतकाल कितना ही पापपूर्ण या खराब रहा हो, मनुष्यको उसके ऊपर कभी शोक नहीं करना चाहिए। विगतकालकी याद तो तभी उपयोगी है जबकि उससे लाभ उठाया जाये, हमने यदि कुछ अच्छे काम किये हों तो आगे और भी अच्छे काम करें और जो कुछ खराब काम किये हों उनकी पुनरावृत्ति न होने देनेके लिए अपनी पूरी शक्तिसे प्रयास करें। मेरा मत है कि किसी पापको दुबारा न करनेका संकल्प सर्वोत्तम ढंगका प्रायश्चित्त है। मैं एक ही उपाय बता सकता हूँ और वह है अडिग आस्थाके साथ रामनामका जाप। इससे आपको निश्चय ही मानसिक शान्ति प्राप्त होगी और आप चाहें या न चाहें, वह आपके अन्दर यदि कोई बुराई है तो उसे नष्ट कर डालेगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

१. प्रेषी एक अवकाश-प्राप्त एकाउंटेन्ट था। उसने गांधीजीको लिखा था कि हालाँकि मैं ६५ वर्षका हूँ लेकिन मैं बहुत तीव्र वासनाका अनुभव करता हूँ और विगत वर्षोंमें धारण किये गये अपने अमुक व्रतोंका मैंने भंग किया है।

२. साधन-सूत्रमें यह पत्र १३ अप्रैल, १९३६ के पत्रोंके पहले रखा गया है।

३६९. पत्र : अमृत कौरको

लखनऊ
१३ अप्रैल, १९३६

प्रिय उन्मत्त पगली,

तुम्हारे दो पत्र मेरे सामने है। मै शायद कल प्रस्थान कर दूं और परसो तो निश्चित ही कर दूंगा। अगर स्थान-परिवर्तनके कारण मै भूल नही गया, जैसाकि मेरे साथ अकसर होता है, तो वर्धा पहुँचकर मैं तुम्हे तार कर दूंगा।[1]

पार्सल तैयार किया जा रहा है।

मुझे १०० रुपयोका ध्यान है। इस रकमको कमला-स्मारकमे दिये जानेवाले अपने चन्देकी रकममें जोड़ दो। तुम दो-एक दिनमे सूचना देखोगी। तुम सुविधासे जितना दे सको, दो। अगर तुम उन्हे अच्छी तरहसे जानती थी और एक ऐसी स्त्रीके रूपमे जानती थी जिसके अन्दर विरल आध्यात्मिक सौन्दर्य था, तो वैसी दशामें तुम आसानीसे चन्दा जमा कर सको तो करो। मै यह नही चाहता कि तुम किसी भी प्रकारसे अपनेको थकाओ और न इसलिए करो कि मै तुमसे कह रहा हूँ।

अगर मै सेगाँवमे बस गया तो निश्चय ही मै वाहरी दुनियाके लोगोके लिए सुलभ रहूँगा और जड़मति, पागल और इसी ढंगके लोगोके लिए तो निश्चय ही। और तुम मुझ पर भरोसा रखो कि मै भाई गधेका ध्यान रखूंगा। इसीलिए 'चिन्ता मत करो।'

मैंने खुर्शेदबहनसे खरीदारीका काम जल्दी निपटानेको कहा है।

मगनवाड़ीमें अस्पतालके भवनके लिए तुम पैसा अवश्य देना।

और अधिक समय नही है।

सप्रेम,

जालिम

श्रीमती राजकुमारी अमृत कौर
जालन्धर शहर
पजाब

मूल अंग्रेज़ी (सी० डब्ल्यू० ३७७०) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६८७६ से भी।

१. देखिए "पत्र : अमृत कौरको", २०-४-१९३६ और २१-४-१९३६।

३७०. टिप्पणी : एस० ए० ब्रेलवीको

१३ अप्रैल, १९३६

नही, मैं चन्द टुकड़ोंके लिए पद स्वीकार नही करूँगा[1], लेकिन ठोस लाभ होगा तो पद स्वीकार कर लूँगा। मैंने मसानीको मना कर दिया था कि मैं जो-कुछ कहूँ उसका उपयोग न करे और मैंने जो-कुछ कहा उसका उन्होने समर्थन किया था।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

३७१. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१३ अप्रैल, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। एजेंटके विवाह पर लिखा गया लेख पढ लिया। इस लेखमें तर्क तो ठीक दिये गये है किन्तु अंग्रेजी अच्छी नही कही जा सकती। कुछ गलतियाँ रह गई है; किन्तु इसमें कोई हर्ज नही है। वह तो केवल तुम्हारा ध्यान उस ओर दिलानेकी दृष्टिसे ही है। मुख्य बात तो परिमार्जित विचार ही है। यदि भाषा भी निर्दोष हो सके तो अच्छा। दूसरेकी भाषामें होनेवाली गलतियाँ क्षम्य मानी जानी चाहिए।

हम अभी तक लखनऊमें है। बहुत करके १५ तारीखको यहाँसे चले जायेंगे। फिलहाल तो वर्धा ही जाना है। मैं वर्धाके पास एक गाँवमें बसनेका विचार कर रहा हूँ। निमु[2], कृष्णदास[3], उसकी पत्नी मनोज्ञा, प्रभुदास[4] और अम्बा[5] आदि

१. महादेव देसाईने लिखा है: "ब्रेलवीने गांधीजीको बताया कि मसानीने उनसे कहा था कि गांधीजीका रुख दिनों-दिन कांग्रेस द्वारा "मन्त्रिपद" स्वीकार न करनेकी ओर झुकता जा रहा है।"

२. निर्मला, रामदास गांधीकी पत्नी।

३. छगनलाल गांधीके कनिष्ठ पुत्र।

४. छगनलाल गांधीके ज्येष्ठ पुत्र।

५. प्रभुदास गांधीकी पत्नी।

अभी यहाँ है। उमिया[1] और उसके पति शकरलाल[2] हमारे पास ही रहते है। जयसुखलाल[3] भी आये हुए है और प्रदर्शनीके पास ठहरे है। प्रदर्शनी अच्छी रही।

कान्ति[4], नवीन, कनु[5] और बा तो मेरे साथ थे ही। जमनालालजी, जानकीदेवी और मदालसा भी यही है। काफी लोग इकट्ठा हो गये है। बहुत करके कल तक सब बिखर जायेंगे।

रामदास, देवदास और लक्ष्मी इन दिनो बम्बईमें ही है।

मै ठीक कहा जा सकता हूँ।

मेढ क्रमश: स्वस्थ होता जा रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आज जलियाँवालाबाग-दिवस है। इस विचार से हममे से कुछ लोगोने उपवास किया है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५०) से।

३७२. पत्र : मीराबहनको

१३ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

अब तुम्हारे दो पत्रोका जवाब देना है। ज्यादा कुछ कहनेको नही है। अगर मै कल रवाना नही होता तो १५ को निश्चय ही हो जाऊँगा।

सेगाँव दिमागमें बसा हुआ है। जमनालालजीको आधा तो राजी कर लिया है।

यह जानकर कि सजीलाको तुमने एक वफादार और समझदार साथी पाया है, मुझे बड़ी खुशी होती है। तुम्हारे साहसके कार्य मुझे डराते है।[6] मै जानता हूँ इस तरह डरना बेजा है। हम सबका रक्षक भगवान है। परन्तु तुम्हारी तरफसे चिन्ता रहती है और मै चाहता हूँ कि जिन दुर्घटनाओकी पूर्व-सम्भावना दिखती हो, तुम्हे उन सबसे बचना चाहिए।

आशा है तुम मुझे मिलोगी तब तन्दुरुस्त और प्रसन्न होगी।

१. जयसुखलाल गांधीकी पुत्री।

२. शंकरलाल अग्रवाल।

३. जयसुखलाल गांधी।

४. हरिलाल गांधीके पुत्र।

५. नारणदास गांधीके पुत्र।

६. उस पर मीराबहनने *बापूज लेटर्स टु मीरा* नामक पुस्तकमें लिखा है: "गाँवके लम्बे रास्तोंसे अँधेरेमें घर लौटनेके सिलसिलेमें।"

हाँ, कु[मारप्पा][1] ने मेरे कमरोंको यथासम्भव आकर्षक बनानेमें अपना सारा दिल लगा दिया है और वह भी मेरी रुचिके मुताबिक।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

आज हम सब लोग उपवास कर रहे हैं। मैंने अपना उपवास अभी-अभी तोड़ा है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७९१ से भी।

३७३. एक पत्र[2]

१४ अप्रैल, १९३६

तुम्हारा पत्र आश्चर्य उत्पन्न करता है। वह थोड़ा-बहुत ठीक भी लगता है। शायद तुम्हारे लिए यह भाषा स्वाभाविक हो गई है। जप करनेका तुम्हारा उल्लेख मुझे प्रभावित नहीं करता। ऐसा ही पत्र तुमने मगनवाड़ीमें लिखा था। अनेक व्रत लेकर भी तुम विषय-विकारोंसे भरे हुए थे और फिर भी तुमने यह बात छुपाकर रखी थी। तुम्हारे इस पत्रसे शुद्धि प्रकट नहीं होती; ऐसा लगता है कि दोष विवश होकर स्वीकार किया है। मुझे उसमें पश्चात्ताप नहीं दिखाई देता। हो सकता है मैं भूल कर रहा हूँ। सम्भव है तुमने जीवनका नया अध्याय शुरू किया हो। मैं चाहता तो यही हूँ। रामजीभाई को सारे पत्र दिखा देना और उनके सामने सारा दोष स्वीकार कर लेना। अपनी भाषामें से अलंकार और अन्य फाजिल बातें निकाल डालो। कमसे-कम विशेषणोंका उपयोग करो। तुम्हारा पहला ही वाक्य खटकता है : "जिसे भीरुतावश अस्वीकार किया था, उसे नम्रताके साथ स्वीकार करनेकी धन्य घड़ी प्राप्त करा देनेके लिए हमको कृपालु अन्तरयामीका धन्यवाद मानना चाहिए।" 'हमको' किसलिए? मुझे तो धन्यवाद माननेका कोई कारण दिखाई नहीं देता। तुमने जैसा वर्णन किया है वैसा एकाएक आदमीके साथ हो जानेकी बात मैंने कभी नहीं जानी। तुमने लिखा है, अगर तफसीलमें जाऊँ तो कदाचित् अपनी निर्दोषता सिद्ध कर सकूँ। यह लिखकर तुमने, यदि कुछ पश्चात्ताप हुआ भी था तो उसे हलका कर डाला है। तुम निर्दोष हो यदि ऐसा लगे तो तुम्हें तफसीलमें जरूर

१. भारतन कुमारप्पा।
२. नाम छोड़ दिया गया है।

जाना चाहिए। साधु पुरुष अपने कन-भर दोषको मन-भर बनाते हैं, तुम वैसा कैसे कर सकते हो? तुमने तो जितना था उसे भी बहुत दिनों तक छुपाया।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

३७४. भाषण: अ० भा० दलितवर्ग सम्मेलनमें

१४ अप्रैल, १९३६

महात्माजी पाँच मिनट बोले। उन्होंने कहा, हरिजनोंको मेरा हार्दिक आशीर्वाद प्राप्त है। आप लोग धीरजसे काम लें, क्योंकि अस्पृश्यताका अभिशाप बहुत पुराना है और इसे एक दिनमें समाप्त नहीं किया जा सकता। आप लोग साफ-सुथरे रहें। आप लोग विश्वास रखें कि मैं हमेशा आप लोगोंके साथ हूँ और आपमें से ही एक हूँ।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, १७-४-१९३६

३७५. बातचीत: विदेशी आगन्तुकोंके साथ[1]

[१६ अप्रैल, १९३६ के पूर्व][2]

"यह किताबका कवर हमारे यहाँकी स्त्रियोंका बनाया हुआ है", पोलैंडकी महिलाने कहा। गांधीजीने धन्यवाद देते हुए पूछा:

क्या वहाँ सिर्फ स्त्रियाँ ही कातती और बुनती हैं, और पुरुष कुछ नहीं करते?

कातनेका काम तो केवल स्त्रियाँ ही करती हैं। लेकिन पुरुष निठल्ले रहते हो यह बात नहीं। वे और-और दस्तकारियोंके कामोंमें लगे हुए हैं। लकड़ीकी इस सन्दूकचीको ही लीजिए। यह हमारे यहाँके पुरुषोंकी बनाई हुई है।

[गृह उद्योगोंका] यह पुनरुद्धार क्या आपके यहाँ अभी हाल ही की चीज है, या यह आन्दोलन कुछ पहलेसे चल रहा है? बुद्धिशाली वर्गों तक भी यह पहुँचा है या उनके और जनसाधारणके बीचमें खाई पड़ी हुई है?

१. यूरोपमें ग्रामोद्योग विकास आन्दोलनका प्रतिनिधित्व करनेवाली दो महिलाएँ, जिनमें से एक पोलैंड और दूसरी फ्रांसकी थी, गांधीजीसे मिलने आई थीं। इन्होंने गांधीजीको हाथ-कता और हाथ-बुना किताबोंका एक कवर और एक छोटी-सी लकड़ीकी सन्दूकची भेंट की।

२. इसे महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' में से लिया गया है। उसके अनुसार यह बातचीत लखनऊमें हुई थी। गांधीजी १६ अप्रैलको लखनऊसे रवाना हो गये थे।

नहीं, हमारे यहाँके बुद्धिशाली वर्ग इसे बड़े शौकसे अपना रहे हैं और यह आन्दोलन हमारे यहाँ कुछ पहलेसे चल रहा है और दिन-ब-दिन बढ़ ही रहा है।

पर आप दोनों एक साथ किस तरह काम करने लगीं? आप लोगोंके बीचमें तो दक्षिण-उत्तर जैसा अन्तर है। पोलैण्ड एक कृषि-प्रधान देश है और फ्रांसमें कल-कारखानोंकी भरमार है, दोनोंमें यह मेल कैसा?

हम लोग कई सालसे एक साथ काम करते आ रहे हैं। फ्रांसमें भी एक ग्रामोद्योग आन्दोलन चल रहा है। हमने सोचा कि हिन्दुस्तानमें जाकर हमें वहाँकी हरेक चीजका प्रत्यक्ष अध्ययन करना चाहिए। हमें यह मानना ही चाहिए कि हमें यहाँसे बहुत-कुछ सीखना है।

उन्होंने बताया कि उनका विचार भारतवर्ष पर एक पुस्तक लिखनेका था, और वे यह जानना चाहती थीं कि ऐसा करके क्या वे भारतकी कुछ सेवा कर सकती हैं।

आप कर सकती हैं, अगर आप पोलैंड और फ्रांस या यूरोपकी जनताके लिए लिखें, पर भारतवर्षके लिए लिखकर आप कुछ नहीं कर सकतीं।

वे थोड़ी देरके लिए कुछ झिझक-सी गईं, और समझ नहीं सकीं कि इससे आखिर गांधीजीका आशय क्या है।

मैं बतलाता हूँ। अगर आप लोगोंने सचमुच हमारे गाँवोंसे कुछ सीखा है, तो आप अपने देशवासियोंको ही उससे लाभ पहुँचा सकती हैं। पश्चिमसे मैं जो सीखता हूँ वह मैं अपने देशको दे देता हूँ। हालाँकि आज हमारी हालत गिरी हुई मालूम होती है, तो भी हमारे गाँव अब भी दुनियाको कुछ-न-कुछ तो सिखा ही सकते हैं। और आप जो वहाँ जाकर कहेंगी वह अगर आपके देशवासियोंको अपील कर गया, तो हमारे ऊपर उसकी प्रतिक्रिया हुए बिना नहीं रहेगी। आपने अगर सचमुच हमारे गाँवोंसे कोई लाभप्रद चीज सीखी है, तो मैं समझूँगा कि मैं जो कहता हूँ वह सार्थक है। शायद इस नुमाइशने अनेक सम्भावनाएँ आपकी आँखोंके सामने रख दी हैं।

मैं तो वहाँ कई हफ्ते खर्च करना और अतीतके वातावरणसे अपनी आत्माको विभोर करना पसन्द करूँ। आप वहाँ कारीगरोंको वाकई काम करते हुए देखेंगी — उड़ीसा और कश्मीर तकके कारीगर आपको वहाँ दिखाई देंगे। और वहाँ आप उनके पुराने-से-पुराने देहाती औजार भी देखेंगी। और आप उन्हें इन्हीं औजारोंकी सहायतासे चाँदी और ऊनकी मंत्र-मुग्ध कर देनेवाली सुन्दर-से-सुन्दर भड़कीली चीजें तैयार करते देख सकती हैं। आप मेरे लिए कृपाकर जो ये चीजें लाई हैं, प्रदर्शनीमें जाकर इसी तरहकी चीजोंसे इन्हें आप मिलायें और देखें कि कारीगरीमें वे चीजें इनसे कितना आगे निकल जाती हैं। वहाँ जरा पाटनके कारीगरोंको आप साड़ियोंके उम्दासे-उम्दा नमूने और डिजाइन काढ़ते हुए देखिए, कितना कमाल करते हैं। यह काम अब सिर्फ चार कुटुम्ब करते हैं, जबकि किसी जमानेमें हजारों कुटुम्ब इस दस्तकारीसे अपनी रोजी चलाते थे। वे लोग कुछ ऐसे पुराने खयालके हैं कि मरते मर जायेंगे, पर

अपने हुनरका पता अपने पड़ोसी तकको न लगने देंगे। पर हमने कुछ कारीगरोको प्रकाशमे लाकर खडा किया है। अगर हम इस कामके कारीगरोको उचित पारिश्रमिक देनेको तैयार हो जाये, उन्हे इतना पैसा देने लगे कि जिसमें अच्छी तरह उनका उदर-पोषण हो जायें वे स्वस्थ और सुखी रहने लगे, तो इस प्रकार का कुछ काम पुनरुज्जीवित किया जा सकता है और वह आज भी अपना वही पुराना गौरव प्राप्त कर सकता है। यह अब करीब-करीब पूर्ण प्रदर्शनी है, अर्थात् आयोजकोको जो बँधा हुआ समय मिला, और जैसी-जैसी कठिनाइयोका उन्हे सामना करना पड़ा, उस सबको देखते हुए यह प्रदर्शनी जितनी पूर्ण बनाई जा सकती थी उतनी पूर्ण यह है। लेकिन दूसरी अनेक दस्तकारियोमे लगे हुए अच्छेसे-अच्छे कारीगरोको अगर हम यहाँ ला सकते तब जो प्रदर्शनी बनती उसके मुकाबलेमें तो यह प्रदर्शनी भी न ठहरती।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-४-१९३६

३७६. पत्र : मनु गांधीको

१६ अप्रैल, १९३६

चि० मनुडी

तूने मुझसे जवाब तो तुरन्त माँगा था, किन्तु मुझे फुरसत नही मिली। अब तुझे अपने कहे मुताबिक आ जाना है। अभी तो बा और मैं वर्धामें ही है। तू जरूर आ जा। तेरी अपनी कोई योजना तो नही है ना? आज हम वर्धा रवाना होगे। तेरी तबीयत अच्छी होगी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५९) से, सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला

३७७. भाषण : सेगाँवके निवासियोंके समक्ष

सेगाँव
[१७ अप्रैल, १९३६ के पश्चात्][१]

मीराबहन, जो आप लोगोंके बीचमें रहती है, यहाँ हमेशाके लिए बस जानेका इरादा लेकर ही आई थी। मगर मैं देखता हूँ कि वह अपनी इस मशाको पूरा करनेकी स्थितिमें नही है। वह यहाँ बनी भी रहे, तो ऐसा करनेके लिए उन्हे भारी मानसिक द्वन्द्व करना पडेगा। कमी उनमे इच्छा-शक्तिकी नही है, पर शायद शरीर अशक्त है। यह तो आप लोग जानते ही हैं कि हम दोनो इतने दिनोंसे एक सामान्य सेवाके बन्धनमे बँधे हुए हैं। इसलिए मैंने सोचा कि मीराबहन जो काम नहीं कर सकी उसे पूरा करना मेरा धर्म हो जाता है। इसलिए अगर ईश्वरकी मरजी हुई तो मैं आप लोगोंके बीचमें रहनेको आपके गाँवमें आ जाऊँगा। ईश्वर मुझे वह शक्ति दे जो उसने मीराबहनको प्रदान नही की।

पर भगवानकी भी इच्छा अनेक माध्यमोसे प्रगट होती है और अगर आप लोगोका सद्भाव मुझे नही मिलेगा तो मैं भी अपने काममें असफल ही रहूँगा। बचपनसे ही मेरा यह सिद्धान्त रहा है कि मुझे उन लोगोंके ऊपर अपना भार नही डालना चाहिए जो अपने बीचमें मेरा आना अविश्वास, सन्देह या भयकी दृष्टिसे देखते हो। आप लोगोंकी सेवा करनेके सिवा यहाँ आनेकी दूसरी कोई बात मुझे सोचनी ही नही चाहिए। पर कई जगह मेरी उपस्थिति और मेरा कार्यक्रम काफी भयकी दृष्टिसे देखा जाता है। इस भयके पीछे यह कारण है कि अस्पृश्यता-निवारणको मैंने अपने जीवनका एक ध्येय बना लिया है। मीराबहनसे तो आपको यह मालूम ही हो गया होगा कि मैंने अपने दिलसे अस्पृश्यता सम्पूर्णतया दूर कर दी है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, राजपूत, महार, चमार, सभीको मैं समान दृष्टिसे देखता हूँ और जन्मके आधारपर माने जानेवाले इन तमाम ऊँच-नीचके भेदोको मैं पाप समझता हूँ। इन भेदभावोंके कारण ही हम दु:ख भोग रहे हैं और ऊँच-नीचकी इस दुष्ट भावनाने हमारे जीवनको दूषित और भ्रष्ट कर दिया है। पर मैं आपको यह बता दूँ कि मैं अपने इन विश्वासोको आप लोगोंके ऊपर लादना नही चाहता। मैं तो दलीलें देकर, समझा-बुझाकर, और सबसे बढ़कर अपने उदाहरणके द्वारा आप लोगोंके हृदयसे अस्पृश्यता या ऊँच-नीचका भाव दूर करनेका प्रयत्न करूँगा। आपकी सडको और बस्तियोंकी चारो तरफसे सफाई करना, गाँवमे कोई बीमारी हो तो यथाशक्ति सहायता पहुँचानेकी चेष्टा करना और गाँवके नष्टप्राय गृह-उद्योगो या दस्तकारियोंके

१. इसे महादेव देसाई लिखित 'वीकली लेटर' में से लिया गया है। इसके अनुसार गांधीजी लखनऊसे लौटनेके शीघ्र बाद ही सेगाँव गये थे। वह वर्धा १७ अप्रैल, १९३६ को पहुँचे थे।

पुनरुद्धार-कार्यमे सहायता देकर आप लोगोको स्वाश्रयी बननेकी शिक्षा देना — इस तरह मै आपकी सेवा करनेका नम्रतापूर्वक प्रयत्न करूँगा। आप अगर मुझे अपना सहयोग देंगे तो मुझे प्रसन्नता होगी। अगर आपने सहयोग न दिया तो आप लोगोमें जो यहाँ रहते है, उनमे अपनेको जज्ब कर देनेमे मै सन्तोष मान लूँगा।

मै आशा करता हूँ कि मै यहाँ आकर बस जाऊँगा। पर अन्तमें तो सब ईश्वरकी इच्छापर ही निर्भर करता है। मै यह कब जानता था कि वह मुझे हिन्दुस्तानसे दक्षिण आफ्रिका भेज देगा और दक्षिण आफ्रिकासे साबरमती आना होगा। और फिर साबरमतीसे मगनवाड़ी और अब मगनवाड़ीसे उठकर आपके गाँवमे आना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-५-१९३६

३७८. ईसाई मित्रोंसे

प्रिय भाई गांधी,

. . . दुनियाके एक सर्वोच्च तत्त्वज्ञानी और त्यागी सेवकके रूपमें आपका नाम रोशन हो रहा है। हिन्दुस्तानमें आप 'महात्मा' कहे जाते है और सचमुच इस तरह आपकी पूजा होती है मानो हिन्दुस्तानके अनेक देवावतारोंमें आप भी एक अवतार है।. . . आपके आश्रम या शिक्षणालयोंमें कोई झगड़ा या पापकृत्य हो जाये तो उसके लिए उपवास करनेकी आपकी टेव भी ऐसी है, जिससे भारतवासियोको यह विश्वास हो जाता है कि आप परमात्माकी कृपा अर्जित कर सकते हैं और उससे दूसरोंका कल्याण हो सकता है। लेकिन क्या किसीने कभी प्रेमवश आपको यह लिखने और इस बातकी चुनौती देनेका भी साहस किया है कि अपने खुदके पापसे व्यक्तिगत रूपमें आपको कैसे मुक्ति मिलेगी? क्योकि अपने प्रारम्भिक जीवनमें आपने जो पाप किया है उसे आपका समस्त आत्म-दमन, उपवास, प्रार्थना और सुकृत्य भी नहीं धो सकते। अपने जीवनके तीस या इससे भी कुछ अधिक वर्ष तो आपने भोग-विलासके मनमाने जीवनमें ही बिताये है, बिना ईश्वरका पवित्र नाम-स्मरण किये या बिना यह सोचनेकी कोशिश किये कि ईश्वरने किसलिए आपको पैदा किया है। . . .

अगर, जैसाकि आप अपना विश्वास बताते है, ईसामसीह परमात्माके अनेक अवतारोंमें से एक और सबसे अन्तिम अवतार हो, तो फिर या तो आपको उसके ईश्वर-प्रभव होनेके आश्चर्यजनक दावोंको कबूल करना चाहिए या उन सबको भूलचूक करने वाले एक साधारण मनुष्यके दावे, मानकर अस्वीकार कर देना चाहिए। और जब ईसामसीह कहता है, जैसाकि अपने समयके यहूदियोंसे

उसने कहा था कि "अगर तुम यह विश्वास नहीं करते कि मै परमेश्वर हूँ तो तुम अपने पापोंमें सड़ते हुए मर जाओगे," या "मै ही मार्ग हूँ, सत्य हूँ, और मै ही जीवन हूँ; मेरी कृपा बिना कोई ईश्वरके पास नहीं पहुँचता," तो आप या तो उसे धोखेमें पड़ा हुआ मानें या जान-बूझकर झूठ बोलनेवाला कहें। इसके सिवा मुझे और कोई उपाय नहीं दीखता। मै नित्य यह प्रार्थना करता हूँ कि प्रभु ईसा उसी प्रकार आपके अन्दर ईश्वरी इलहाम उतारे जैसाकि "टारससकी आत्मा" के साथ किया था, जिससे इस सांसारिक पापसे मुक्त होनेके पहले आप भारतके करोड़ों व्यक्तियोको 'उसके' अमूल्य रक्तके सफल बलिदानकी क्षमता या अमोघता बता सकें।

यह मेरे एक पुराने अग्रेज मित्रका एक नमूनेका पत्र[1] है, जो प्राय. हर छठे महीने नियमपूर्वक ऐसे पत्र लिखते रहते हैं। यह मित्र बहुत सच्चे और मेरे सुपरिचित हैं। लेकिन दूसरे भी अनेक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हे मै नही जानता, पर जो विना किसी दलीलके इसी ढगकी बातें मुझे लिखते रहते हैं। अब चूँकि अपने स्वास्थ्यके कारण मै प्रत्येक व्यक्तिको अलग-अलग नहीं लिख सकता, इसलिए इस पत्रको सबके जवाबका आधार बनाता हूँ। प्रसगवश 'हरिजन' के पाठकोको भी, जो मेरा पथ-प्रदर्शन स्वीकार करते है, यह मालूम हो जायेगा कि मेरा धार्मिक विश्वास किस प्रकारका है।

जिन सज्जनने मुझे ऊपरवाला पत्र भेजा है, वे एक अक्षरचारी व्यक्ति हैं। बाइबिलमे यह स्पष्ट उल्लेख होते हुए भी कि "तत्त्वको शब्दार्थ नष्ट कर देता है और भावार्थ उसमें प्राण डाल देता है," वह बाइबिलके हरएक उद्धरणका शाब्दिक अर्थ करते हैं। मैंने तो पहली ही वार जब बाइबिल पढी तो मुझे मालूम हो गया कि उसकी बहुत-सी बातोका यदि मैं शाब्दिक अर्थ लगाऊँ या उसके हरएक वाक्यको ईश्वर-वचन मानूँ तब तो उसके अनेक अशोसे मै सहमत नही हो सकता। जैसे-जैसे मैं विभिन्न धर्मोंके ग्रन्थोका अध्ययन करता गया, मुझे लगा कि उन सबको, यहाँ तक कि वेदो और उपनिषदोको भी, हम इसी रूपमें ग्रहण कर सकते हैं। इसलिए ईसाके एक निर्दोष कुमारी कन्याके गर्भसे उत्पन्न होनेकी कथाको मैंने रहस्यपूर्ण मानकर अपने मनको समझा लिया। क्योकि ईसाके जन्मसे सम्बन्धित पद्याशोको उनके शाब्दिक अर्थमे ग्रहण करना तो मेरे लिए कठिन ही है, और अगर मै उन पद्योका शाब्दिक अर्थ लगाऊँ भी, तो इससे ईसाके प्रति मेरा श्रद्धा-भाव बढेगा नही। इसका यह मतलब नही कि बाइबिल लिखनेवाले झूठी-मूठी बातें गढ़नेवाले थे। हाँ, भक्तिवश उन्होने बढाकर लिखा है। मैंने तो अपनी युवावस्थासे शास्त्रोके बारेमें यह तय किया है कि उनमे नैतिक शिक्षाकी जो बात हो उसे ही मानना चाहिए। उनमे वर्णित चमत्कारोमें मेरी कोई दिलचस्पी नही है। ईसाने जो चमत्कार किये बताते है उनमें मै अक्षरश विश्वास करता होता, तो भी मै ऐसे किसी उपदेशको नही मान सकता था जो नैतिक न हो। चाहे जो हो, मेरे लिए, और मै समझता हूँ कि मेरी ही तरह लाखोंके

१. इसके कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

लिए, धर्म-शिक्षकोके शब्दोमे एक जीती-जागती शक्ति है, जो साधारण मनुष्यो द्वारा कहे हुए वैसे ही शब्दोमें नही होती।

ईसा, मेरे लिए, दूसरोके समान ससारके एक महान् धर्म-शिक्षक थे। अपने समयके लोगोंके लिए वह निश्चय ही "एकमात्र ईश्वर-प्रभव पुत्र" थे। पर उन लोगोका जो विश्वास था वही मेरा भी हो, यह जरूरी नही है। मेरे जीवन पर ईसाका कुछ कम प्रभाव नही है, क्योकि मैं उसे अनेक ईश्वर-प्रभव पुत्रोमें से एक मानता हूँ। 'प्रभव' विशेषणका, मेरे लिए, उसके शब्दार्थकी अपेक्षा कही गहरा और सम्भवत विशाल अर्थ है। इसका अर्थ मै आध्यात्मिक जन्म करता हूँ, अर्थात् अपने समयमे ईसा ही ईश्वरके सबसे सन्निकट थे।

जो लोग उनकी शिक्षाओको स्वीकार करते थे उनके पाप-निवारणार्थ ईसाने अपनेको सर्वथा निर्दोष बनाकर उनके सामने अपना उदाहरण रखा। लेकिन उनके लिए उस उदाहरणका कोई मूल्य नही, जिन्होने उसके सहारे अपने जीवनको उन्नत करनेका कभी कष्ट नही किया। किन्तु जैसे सोनेको तपानेसे उसकी मूल खोट दूर हो जाती है उसी प्रकार इस दिशामे नये सिरेसे कोशिश की जाये तो परिष्कृत मनुष्य हर पापसे ऊपर उठ जाता है।

मैं अपने अनेक पापोंको स्पष्टसे-स्पष्ट रूपमें स्वीकार कर चुका हूँ। लेकिन मैं हमेशा अपने कन्धोंपर उनका बोझ लादे नही फिरता। यदि, जैसाकि मैं समझता हूँ, मैं ईश्वरकी ओर जा रहा हूँ, तो मैं सुरक्षित हूँ। क्योकि मै उसकी उपस्थितिकी कोमल ऊष्माको अनुभव करता हूँ। मै यह जानता हूँ कि आत्म-सुधारके लिए यदि मैं आत्म-दमन, उपवास और प्रार्थना पर ही निर्भर रहूँ तो कोई लाभ न होगा। लेकिन जैसी मुझे उम्मीद है, अगर ये बातें अपने सिरजनहारकी गोदमे अपना चिन्ताकुल सिर रखनेकी आत्माकी आकांक्षाको व्यक्त करती है तो इनका भी मूल्य है।

मेरे लिए तो 'गीता' ही ससारके सब धर्म-ग्रन्थोकी कुंजी हो गई है। ससारके धर्म-ग्रन्थोंमें गहरे-से-गहरे जो रहस्य भरे हुए है उन सबको यह मेरे लिए खोल कर रख देती है। उन सब धर्म-ग्रंथोको मै हिन्दू धर्म-शास्त्रोकी ही तरह आदर-भावसे देखता हूँ। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि नाम तो सुविधाके लिए रख लिये गये है। जब मै इस बातको दृष्टिके सामने से हटा देता हूँ तो फिर मेरे लिए सब एक है। हम सब उसी परमात्माकी सन्तान है। ससारके सभी महान् धर्म-शिक्षकोने शब्दोके हेर-फेरके साथ यही बात कही है कि "मै कहता हूँ कि प्रत्येक वह मनुष्य जो 'प्रभु-प्रभु' कहकर मुझे पुकारा करता है स्वर्गमे प्रवेश नही करेगा। केवल वही मनुष्य स्वर्गमे प्रवेश पायेगा जो परम-पिता परमेश्वरकी इच्छाका पालन करेगा"।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-४-१९३६

३७९. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
१८ अप्रैल, १९३६

प्रिय पगली,

हम लोग कल दोपहरको बिलकुल आरामसे यहाँ पहुँच गये थे। आशा है तुम्हे मेरा तार समय पर मिल गया होगा। सरदार और राजेन्द्रबाबू मेरे साथ ही आये, इसलिए हम काफी लोग हो गये थे। लेकिन हम लोग एक ऐसी ट्रेनसे आये जिसमे हमारे सहयात्रियोको कोई असुविधा नही पहुँची। इटारसीसे हम लोग पैसेन्जर गाडीसे आये।

मेरा कार्यक्रम यह है कि मै मईके मध्य तक वर्धा और उसके आसपास रहूँगा। इसके बाद लगभग एक पखवाड़ेके लिए हम लोग शायद पचगनी जाये।

आशा है तुम्हारा गला बिलकुल ठीक होगा। तुम्हे इन बीमारियोसे छुटकारा पा लेना चाहिए। तुम ऐसा किस तरह कर सकती हो, सो मै नही जानता। लेकिन मुझे लगता है कि इसका एक सरल प्राकृतिक उपाय है।

जवाहरलाल यहाँ इसी महीने लगभग २४ तारीखको आयेंगे।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६९) से, सौजन्य. अमृत कौर। जी० एन० ६३७८ से भी।

३८०. पत्र : वालजी गो० देसाईको

१८ अप्रैल, १९३६

चि० वालजी,

नैनीताल अवश्य जाओ। अगर जीवराम[1] दानके साथ सासके नामको जोडनेका मोह छोड सके तो अच्छा। यदि न छोडे तो नाम रख लेंगे।

५०० रुपयेमे कोई अच्छी गोचर भूमि मिलनेकी सम्भावना कम ही है। यह रकम वह गोपबन्धु चौधरीको गोसेवाके कामके लिए सौप दे।

बापूके आशीर्वाद

१. कच्छके जीवराम कोठारी, जो गरीबोंकी सेवाके लिए उड़ीसामें बस गये थे।

[पुनश्च :]

पता ठीक न होनेके कारण तुम्हारा पत्र कल मिल पाया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४७७) से; सौजन्य . वालजी गो० देसाई

३८१. पत्र : आर० रामस्वामीको[1]

[१९ अप्रैल, १९३६ के पूर्व][2]

गांधीजीको आपका इसी ८ तारीखका पत्र प्राप्त हुआ। इस पत्रसे उन्हें आश्चर्य हुआ, क्योंकि आप जैसा शिक्षित व्यक्ति भी यह नहीं समझता कि खादीके मूल्यमें थोड़ी-सी वृद्धि होनेका कारण क्या है। इसमें वृद्धि करनेका कारण यह है कि गरीब कतैयोंको वास्तवमें गुजारे लायक वेतन दिया जा सके। वास्तविक गुजारे लायक वेतन तो हम अभी भी नहीं दे सके हैं, लेकिन खादीके मूल्यमें हालमें जो वृद्धि हुई है उसके चलते इतना सुनिश्चित हो गया है कि उसे दो जून भरपेट भोजन मिल सके। आप स्वयं गरीब हैं, लेकिन जो स्त्री-पुरुष आपसे कहीं ज्यादा गरीब हैं, क्या उनके वेतनमें इस मामूली वृद्धि पर भी आपको आपत्ति है?

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-४-१९३६

३८२. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२० अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा यह कहना ठीक है कि मैं किसी भी चीजके बारेमें चिन्ता नहीं करता, और इसीलिए तुम्हें जो लगातार खाँसी आती है, और जिसको तुम इतना मामूली बताती थीं, उसके बारेमें भी चिन्ता नहीं करता। लेकिन चिन्ता न करनेका मतलब ऐसी सूचनाकी उपेक्षा करना या उसके महत्त्वको कम करके आँकना नहीं है। तुम इतनी सुकुमार क्यों हो? मौसममें तनिक भी परिवर्तनसे तुम अस्वस्थ क्यों हो जाती हो? अगर इसका कारण आहार हो, तो तुम पुरानी [आहार] प्रणाली

१. रामस्वामी सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनीमें एक क्लर्क था। उसने गांधीजीको खादीके मूल्यमें वृद्धि किये जानेका विरोध करते हुए पत्र लिखा था। यह पत्र महादेव देसाईने उसके उत्तरमें लिखा था।

२. यह रिपोर्ट "कुड्डालूर, दिनांक १९ अप्रैल, १९३६" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

पर फिरसे लौट आओ। ऐसे किसी भी कारणवश तुम्हें अपना स्वास्थ्य खतरेमें नही डालना चाहिए। मनुष्यके जीवनमे ऐसे प्रसग आते है जब उसे हर चीजका बलिदान करना होता है। निश्चय ही अकस्मात् अपनाई गई एक नई प्रणालीको ऐसा प्रसग नही माना जा सकता। मेरा निजी रुझान हमेशा प्राकृतिक-चिकित्साके पक्षमे रहता है। लेकिन इसे तुमको तबतक नही अपनाना चाहिए जबतक शम्मी सहयोग न करे, तुम्हारा उसमें विश्वास न हो, और तुम्हे एक उचित मार्ग-दर्शक न मिल जाये। मार्ग-दर्शक तो मिल सकता है लेकिन शायद शम्मी सहमत न हो और तुम्हे उसमें विश्वास न हो। केवल पसन्द करना कोई महत्त्व नही रखता। कृपया अपनी बीमारियोसे खिलवाड़ मत करो। एक बागीको भी प्रकृतिके नियमोके आगे झुकना पड़ता है।

मैं कल ज्यादा अच्छी खबरकी प्रतीक्षा करूँगा।

तुम सब लोग तारवाले दुःखद प्रसंगसे अवगत हो।[1] सुबह होनेसे पहले ही तुमने चहचहाना शुरू कर दिया था।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

बिजलीका स्टैंड अब मेरी मेजकी शोभा बढ़ा रहा है। भारतन उसे कल ले आये।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७०) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६३७९ से भी।

३८३. पत्र : विट्ठल ल० फड़केको

२० अप्रैल, १९३६

चि० मामा,

सरदारने तुम्हे झोंपड़ी बनानेकी अनुमति दे दी है, इसलिए मुझे अधिक कुछ नही लिखना है। खर्च कमसे-कम ही किया जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३५) से।

१. देखिए "पत्र : अमृत कौरको", २१-४-१९३६।

३८४. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

२० अप्रैल, १९३६

चि० भुजंगीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। फिलहाल तो मेरे निवासकी बात अनिश्चित है। फिर भी स्थिर हो जानेके बाद तुम्हे अपने पिताजीकी आज्ञा ले ही लेनी चाहिए। उनकी मर्जीके खिलाफ मेरा तुम्हे अपने पास रखना उचित नही कहा जा सकता। तुम्हे धीरज रखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६३८) से।

३८५. पत्र : देवदास गांधीको[1]

२० अप्रैल, १९३६

मेरी नजरमे तो 'हिन्दुस्तान टाइम्स' बिलकुल निकम्मा अखबार हो गया है। इसमे एक भी जानने योग्य खबर नही होती। जो खबरे होती है वे नुक्सानदेह होती है। यदि इसमें सुधार न हो सके तो तुम्हे इससे अलग हो जाना चाहिए। एक भी समाचारपत्र ऐसा दिखाई नही देता जिसमें दी गई खबर पर विश्वास किया जा सके। मै उदाहरण नही दूंगा। पारसनाथ[2] को महादेवने लिखा था, किन्तु कोई सुधार नही हुआ। तुम तो शायद ही कुछ कर सको! कौन कर सकता है?

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८०१८) से; सौजन्य · घनश्यामदास बिडला

१. देवदास गांधी १९३४ में हिन्दुस्तान टाइम्स से सम्बद्ध हो चुके थे।
२. पारसनाथ सिन्हा, हिन्दुस्तान टाइम्स के प्रबन्धक।

३८६. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२१ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारे पत्रसे उत्साहवर्धक समाचार मिला। तुम्हे यह सुननेका चाव है कि तुम्हारे पत्रोका मै सदैव स्वागत करता हूँ और उनकी चाह करता हूँ। अच्छा, तो मै तुम्हे अन्तिम रूपसे बताता हूँ कि तुम मुझे नियमित रूपसे अवश्य लिखा करो। अलबत्ता, जब लिखनेके कारण तुम्हे थकान होती हो तब मत लिखना। इसे ऐसा काम समझकर मत करना जिसे करना ही है।

तुम गलत समझती हो, लेकिन मूर्ख लोग तो गलत समझते ही है। तुम्हारे पत्र लखनऊमे यथासमय प्राप्त हुए थे। लेकिन बेचारा कनु अन्यमनस्कताके कारण भूल ही गया कि तुम शिमलामे हो। मेरी याददाश्त काफी खराब है, लेकिन इतनी ठीक थी कि तुम्हे तार भेजूं। किन्तु मै यह स्वीकार करूँगा कि अपने पहुँचनेके कुछ घटे बाद मुझे उसका ख्याल आया।

तुम जो सूत चाहती हो, उसे मै अवश्य प्राप्त करूँगा। मै उसे बँटवा देनेकी कोशिश करूँगा।

फिरसे बीमार मत पड़ना। वहाँ कार रखनेका क्या लाभ है? निश्चय ही जालन्धरमें उसकी ठीक देखभाल की जा सकती है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२१) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६८७७ से भी।

३८७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२१ अप्रैल, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

टिप्पणियाँ अच्छी लिखी गई हैं। तुम्हारे उत्तर काफी हृदतक पूर्ण हैं और सीधे तो है ही।

आगामी बैठक[1] के बारेमें चिन्तित क्यों होते हो? अगर चर्चा हुई तो वह एक-दूसरेको अपने विचारोंके ठीक होनेका विश्वास करानेको ही तो होगी। जब तुम समझो कि किसी प्रस्ताव पर पूरी तरह बहस हो चुकी तब चर्चा बन्द कर देना। आखिर तुम तो यही चाहते हो कि सब साथी मिलकर काम करें, और मुझे ऐसा होनेकी बड़ी आशा है।

मैं २३ तारीखकी शामको नागपुर पहुँच रहा हूँ।

मैं चाहता हूँ कि रणजीत[2] अपनी ओर ध्यान दे। मुझे खुशी है कि वह खाली चला गया। आशा है, सरूप[3] तुम्हारे साथ जायेगी।

सरदार अभी तक बीमार हैं और अभी तो सिर्फ छाछपर हैं। ८ मईके बाद मैं उन्हें नन्दी हिल पर ले जा रहा हूँ। काश तुम भी आ सकते!

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० १७५

१. कांग्रेस कार्य-समिति की।

२. रणजीत पण्डित।

३. रणजीत पण्डितकी पत्नी और जवाहरलाल नेहरूकी बहन, विजयलक्ष्मी।

३८८. पत्र : मीराबहनको

२१ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

जमनालालजीने मकान बनानेका काम शुरू करनेका पूरा अधिकार दे दिया है।[1] तुम कल शामको या २३ तारीखको सुबह आ जाओ, तो सब बातें समझा सकता हूँ। २३ की शामको मैं नागपुर चला जाऊँगा और वहाँसे २६ को सायंकाल या अधिक-से-अधिक २७ को प्रात लौट आऊँगा।

शेष मिलने पर।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२८) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९४ से भी।

३८९. पत्र : चन्द त्यागीको

वर्धा
२१ अप्रैल, १९३६

भाई चन्द त्यागी,

पिताका मृत्यु तो सब पुत्रको चुभता है लेकिन ऐसा होना तो नही चाहीये। क्योंकि हम सबको भी किसी न किसी रोज वही राह जाना है। जो चीज जन्मके साथ ही लेकर हम इस जगत्में प्रवेश करते है इसका शोक क्यो? शोक, हो तो जन्मका हो।

मैंने तो समजा था कि राजकिशोरी[2] को वहा नही आना है। हम गरीब है गरीबके जैसे रहना चाहते है। ऐसी हालतमें हम रेलगाडीमें पैसे खामखा क्यो खर्च करे। ऐसा माननेमें मैंने कुछ गलती की है क्या। अथवा तुमने विचार बदल दिया है? कैसा भी हो मेरे तरफसे राजकिशोरीको कोई रुकावट नही होगी। जब चाहे तब जा सकेंगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०९८) से।

१. मकान सेगाँवमें बनना था।
२. चन्द त्यागीकी पुत्रवधू।

३९०. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२२ अप्रैल, १९३६

प्रिय पगली,

केवल मूर्ख लोग ही ऐसी मूर्खतापूर्ण व्याख्या कर सकते है, और चूँकि तुम ए० आई० वी० आई० ए०[1] (अ० भा० ग्रामोद्योग सघ)का इतना प्रतिभाशाली नमूना और एजेंट हो इसलिए स्वभावत. तुम चाहोगी कि और लोग भी तुम्हारे ही जैसे हो। मै उन लोगोका मार्ग-दर्शक हूँ और ईश्वर ही मेरी रक्षा करे' !!

क्या तुम समझती हो कि इस धरतीपर कोई भी चीज बिना परेशानीके की जा सकती है? तुम अपने सामानको बिना परेशानीके खोल भी नही सकती। तब तुम्हारे यह कहनेका क्या फायदा है कि अगर बिना किसी परेशानीके किया जा सके तो मै शहद भेजनेके अपने वादेको पूरा कर दूं? मै तुम्हे बताता हूँ कि बिना थोडी-सी परेशानीके इसे नही किया जा सकता। लेकिन यह परेशानी उठाई जा रही है और शहद भेजा जा रहा है। चेक भेजना, तब उसमें खर्चकी रकमको भी शामिल कर लेना। उसके बाद तुम्हे जो पार्सल भेजे जायेंगे वे सीधे कलकत्ता या शिलांगसे भेजे जायेंगे और तुम चाहो तो उन्हे वी० पी० पी० से भेजा जायेगा। अगला पार्सल तुम जब चाहो तब मुझे सूचित कर देना। अगर आस्ट्रेलियन शहदके मुकाबले यह शहद पसन्द हो तो सब लोगोको इसे खाने दो। मुझे विश्वास है कि शिलागका शहद विदेशी शहदसे अच्छा होता है, चाहे वह इसी कारण हो कि वह ज्यादा ताजा होता है।

तुम्हारी लेस, तोशक और दोनो तरफसे पहनी जा सकनेवाली साड़ी उसी बक्समें है जिसमें तुम्हे भेजा जानेवाला सामान रखा जा रहा था। अबतक वह तुम्हे मिल जाना चाहिए। मै जानता हूँ कि इसमें कुछ घपला हो गया था। मूर्ख अकेली एक तुम्ही नही हो। तुम शायद मूर्खोंकी रानी हो!!! क्या हो?

कल मै नागपुर जाऊँगा और शायद २५ को, अथवा २७ को अवश्य वापस लौट आऊँगा। २९ या ३० को मै सेगाँव जाऊँगा जो यहाँसे ५ मील दूर है, और जब मेरी जरूरत होगी तब वापस लौटूंगा। मै सरदारके साथ ९ मई या उसके आसपास मैसूर-स्थित नन्दी हिल जाऊँगा। महादेव और अन्य लोग मेरे-साथ जायेंगे। वर्ना मै आग्रह करता कि महादेव तुम्हारे पास एक महीनेके लिए चला जाये। हम लगभग १ जूनको बंगलोर पहुँचेगे और करीब १० जूनको वहाँसे रवाना होंगे। यह

१. लेटर्स टु राजकुमारी अमृत कौर में अमृत कौरने लिखा है: "मैंने इसका अर्थ किया 'ऑल इंडिया विलेज ईडियट्स एसोसिएशन' (अ० भा० ग्रामीण मूर्ख संघ)।"

भ्रमण इसलिए जरूरी है क्योंकि डॉ० अन्सारी चाहते हैं कि सरदार किसी पहाड़ी स्थान पर जाये। वह मेरे बिना जायेंगे नही। अगर मुझे मैसूर न जाना होता तो मै पचगनीमें एक पखवाड़ा बहनोंके साथ बिताता। उन्हे निराश करते मुझे दुख होता है।

बेशक अगर मुझे शिमला आना पड़ा तो मै तुम्हारे यहाँ ही रहूँगा। लेकिन ऐसा नही लगता कि निकट भविष्यमें ऐसा होगा। जहाँ तक तुम्हारी बात है, मै जाड़ेके तीन महीने तुम्हे अपने पास रखूँगा। तब तुम निरीक्षणमे आहार-चिकित्सा करना। शम्मी इसके बारेमे क्या कहेगा?

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२२) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६८७८ से भी।

३९१. पत्र: रामी के० पारेखको

२२ अप्रैल, १९३६

चि० रामी[1],

तेरा पत्र मिला। यदि तू मनुको रखना ही चाहती है तो रख ले। मुझे सरदारके साथ १० मईके आसपास मैसूर प्रान्त जाना पडेगा। वहाँसे हम १० जूनके आसपास वापस लौट सकेंगे। इसका यह अर्थ हुआ कि तब तक मनु तेरे पास रहेगी; यही न? जूनमें मै एक गाँव में रहने लगूंगा जहाँ मनुको साथ रखूंगा। कह नही सकता चौमासेमें वहाँ रह पाऊँगा या नही। कोई बात पक्की नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२५) से।

१. हरिलाल गांधीकी बड़ी लड़की।

३९२. पत्र : मनु गांधीको

२२ अप्रैल, १९३६

चि० मनुड़ी,

रामीबहनको लिखे गये पत्रमें तू मेरा जवाब देख लेना। मौसियोको अलगसे नहीं लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५७) से, सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला

३९३. पत्र : किशनलालको

२२ अप्रैल, १९३६

चि० किशनलाल,

ऐसा लगता है कि तू अपराध मेरे गले मढना चाहता है। तू स्वयं पत्र नहीं लिखता और मुझसे पानेकी उम्मीद रखता है। तूने मेरी तरफसे ठीक वकालत नहीं की न? तू पास हो गया, यह अच्छी बात थी। खूब होशियार और नेक बन।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५८) से, सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला

३९४. पत्र : अमतुस्सलामको

२२ अप्रैल, १९३६

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

तुम्हारा खत मिला। रोना तो छोड़ना चाहिए। काम जितना हो सके उतना ही किया जाये। त्यागीकी बहुत आशा न की जाये। अच्छे है, लेकिन अपना चित्त ठिकाने नहीं रख सकते हैं। तुम्हारे इन्जेक्शन लेना हैं। जल्दी शुरू कर दो। कान्ति तो मेरे साथ ही है। मेरी तबीयत अच्छी है। गर्मी तो है। मे[1] आठके नजदीक सरदारको लेकर बगलूर जाना होगा।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३२) से।

३९५. पत्र: गोविन्द वी० गुर्जलेको

२३ अप्रैल, १९३६

प्रिय गुर्जले[2],

जिन मुसीबतोंका तुमने जिक्र किया है, अगर हम उनका हिम्मतसे सामना करे तो वे हमारे चरित्रको सुदृढ़ बनायेंगी। मुझे आशा है कि उत्पीड़ित परिवार इस अग्नि-परीक्षासे बेदाग निकल आयेगा।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३८५) से।

१. मई मास।

२. उर्फ भिक्षु निर्मलानन्द।

३९६. पत्र : कार्ल बुट्टोको[1]

२३ अप्रैल, १९३६

मुझे अभी-अभी तुम्हारा रोचक पत्र मिला। हाँ, मै जर्मनी व यूरोपके दूसरे हिस्सोमें होनेवाली घटनाओमे दिलचस्पी ले रहा हूँ। वहाँकी स्थिति बहुत उलझी हुई है और बदतर होती जा रही है। यह केवल पशु-बलकी ही आजमाइश नही है, बल्कि ऐसी खराब ढगकी कूटनीतिकी आजमाइश भी है, जिसका इतिहासमे इससे पहले कोई अनुभव नही मिलता। जैसाकि तुम जानते हो, मेरे प्रयत्न इससे पूर्णत भिन्न स्तरपर है। मै कुछ दिखा तो नही सकता, फिर भी मेरी आस्था प्रबलतर होती जा रही है, विशेषकर यूरोपकी घटनाओको देखकर।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

३९७. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा

२३ अप्रैल, १९३६

चि० नारणदास,

मै नन्दी दुर्ग जा रहा हूँ; सरदार साथ रहेगे। अगर तुम भेज सको और वह आना चाहे तो मै कुसुम[2]को अपने साथ ले जा सकता हूँ। हम यहाँसे ८को रवाना हो जायेंगे। सरदार अहमदाबादसे यहाँ आयेंगे; वह उन्हीके साथ आ सकती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. कार्ल बुट्टोने जर्मनीकी आन्तरिक दशाके बारेमें विस्तारसे लिखते हुए हिटलरकी बहुत प्रशंसा की थी।

२. व्रजलाल गांधीकी पुत्री।

३९८. भाषण: अ० भा० साहित्य परिषद्में

नागपुर
२४ अप्रैल, १९३६

अपना छपा हुआ भाषण पढ़नेसे पहले भूमिकाके तौरपर बोलते हुए गांधीजीने कहा:

साहित्यिकोकी परिषद्में तो मैं अपना यह अनधिकार प्रवेश ही मानता हूँ, और खासकर तब, जब मैं इस बातको भली-भाँति जानता हूँ कि मेरा हिन्दी साहित्यका ही नही, बल्कि गुजराती साहित्यका भी ज्ञान नगण्य-सा ही है। गुजराती व्याकरण तकका ज्ञान मेरा साधारण-सा ही है। पर मुझसे कहा गया है कि देशके बडे-बडे साहित्य-कारोको एक जगहपर एकत्रित करना असम्भव-सा काम है। शेरोकी तरह अपने-अपने पिंजडोमें ही वे सुरक्षित है, पर उन्हे एक जगह लाकर रखना और उनसे एक साथ काम लेना कठिन है। यह सोचा गया कि मैं एक तटस्थ व्यक्ति हूँ, और फिर 'महात्मा' हूँ, शायद मैं इन महान् साहित्यकारोको एकत्रित करनेमें कुछ योग दे सकूं। सो मैं आप लोगोके बुलानेसे यहाँ आ गया हूँ, पर मैं यहाँ यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि प्रत्येक प्रान्तके विभिन्न भाषा-भाषी साहित्यिकोको एक स्थान पर इकट्ठा कर देने और अपने देशकी समृद्ध भाषाओका अच्छे-से-अच्छा साहित्य भारतकी आम जनताके लिए सुलभ करके उनकी सेवा करनेका काम मैं आरम्भ-भर कर देता हूँ।

बस, मेरा इतना ही काम है। इस हेतु मैं थोड़े समयके लिए यहाँ आ तो गया हूँ पर आप यह जान ले कि मेरा मन यहाँ नहीं है, और वर्धामें भी नही है। मेरा दिल तो गाँवोमे है। इधर कई दिनोसे मैं सरदारके साथ लड़ रहा हूँ कि वे मुझे वर्धाके पास एक गाँवमें बैठ जाने दे। वे तो अब भी नही मान रहे है, पर मेरे मनको सन्तोष नही होता, और ईश्वरने चाहा तो मैं आशा करता हूँ कि जल्द ही वर्धाके पास एक गाँवमें बैठ जाऊँगा। पर इसका यह अर्थ नही कि जो काम मैं अभी कर रहा हूँ वह नही करूँगा, या अपने मित्रोको या उन्हे, जो मेरी सलाह लेना चाहेगे, सलाह नही दूँगा। सिर्फ मेरा पता बदल जायेगा। मैं अपने सब साथियोसे, जो ग्राम-कार्य कर रहे है, ग्रामोमे जा बसने और ग्रामवासियोकी सेवा करनेके लिए कहता रहता हूँ। मुझे लगता है कि मैं जबतक खुद किसी गाँवमे नही बैठ जाता हूँ, तबतक मैं दूसरोसे उसपर ठीक-ठीक अमल नही करा सकता।[1]

१. यहाँ तकका अंश **हरिजन** में प्रकाशित महादेव देसाईके 'वीकली लेटर'से लिया गया है, और इसके बादके चार अनुच्छेद **हितवाद** से लिये गये हैं।

अपने भाषणके दौरान गांधीजीने बताया कि डाक्टरोंने मुझे बहुत परिश्रम करनेसे मना किया है।

आगे बोलते हुए गांधीजीने हिन्दी (हिन्दुस्तानी) और उर्दूके झगड़ेकी चर्चा की और कहा कि इसका मुख्य कारण यह है कि हिन्दू और मुसलमान अपनेको एक-दूसरेका दुश्मन मानते हैं। दक्षिण आफ्रिकासे लौटनेके बादसे मैं यह झगड़ा देख रहा हूँ। वास्तवमें झगड़ेका कोई कारण नहीं है, क्योंकि अगर मुसलमान लोग हिन्दीका एक शब्द भी प्रयोग न करनेकी कसम खा लें तो भी उसे निभा नहीं सकते। इसकी वजह यह है कि दोनोंका व्याकरण एक जैसा है। इसी तरह हिन्दीके कट्टर समर्थक फारसी या उर्दूके शब्दोंको निकाल नहीं सकते। यह चीज तुलसीदासकी रामायणमें देखी जा सकती है जिसमें फारसी और अरबी शब्दोंका काफी प्रयोग किया गया है।

गांधीजीने कहा कि हिन्दी या हिन्दुस्तानी ही भारतवर्षकी राष्ट्रभाषा बन सकती है, क्योंकि यह एक व्यापक भाषा है और यह बाहरी प्रभावोंको भी ग्रहण करती है, इस अर्थमें कि इसमें सभी भाषाओंकी उत्तम चीजोंको आत्मसात् कर लिया गया है। उन्होंने हिन्दीको सरल बनानेका सुझाव दिया और उसे संस्कृतनिष्ठ बनानेकी जो कोशिश है उसकी निन्दा की। गांधीजीने कहा कि सभी भाषाओंके चालू मुहावरोंको हिन्दीमें अपनाया जाना चाहिए।

गांधीजीने कहा कि हिन्दी किताबोंका पहले अंग्रेजीमें और फिर बँगला अथवा अन्य किसी भाषामें अनुवाद करनेकी प्रवृत्ति अच्छी नहीं है। अगर आप लोग देशी भाषा चाहते हैं, यदि आप लोग जिस उद्देश्यको लेकर चले हैं उसे पूरा करना चाहते हैं तो जहाँतक भारतकी आम जनताका सवाल है, आपको अंग्रेजीका बहिष्कार करना चाहिए। अंग्रेजी एक विश्व-भाषा है और उसका अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व है। मैं अंग्रेजीके महत्त्वको कम नहीं आँकता, लेकिन हिन्दुस्तानीको भारतवर्षकी राष्ट्रभाषा बनना ही होगा। लोगोंके मनसे यह विचार खत्म हो जाना चाहिए कि उत्तम साहित्यकी रचना केवल अंग्रेजी भाषामें ही हो सकती है। आगे बोलते हुए उन्होंने कहा:[1]

अपनी-अपनी भाषा और अपनी-अपनी सस्कृतिके अन्धकूपोमें मडूकोकी तरह पडे रहनेमे लोग जो आज सन्तोप मान रहे है, और जाने दो, अपने पड़ोसी प्रान्ततक की भाषा और साहित्यसे परिचित होनेके लिए तैयार नही है, यह कितने दु.खकी बात है। हो सकता है कि हमारे मुट्ठी-भर साहित्यिक व्यक्ति विभिन्न प्रान्तीय भाषाओका अध्ययन और दूसरे प्रान्तोकी अच्छी-अच्छी साहित्यिक पुस्तकोका अपनी-अपनी भाषामे अनुवाद कर रहे हो। पर हमे इतनेसे सन्तोष होनेका नही। हमे तो अभी इससे कही अधिक प्रयत्न करना है।

१. इसके बादके दो अनुच्छेद हरिजनसे लिये गये है।

विद्वान् लोग एक-दूसरेके साहित्यका कुछ ज्ञान पावें इतनेसे ही हमें सन्तोष होनेका नही है। हमें तो देहाती साहित्यकी भी दरकार है और देहातियोंमें आधुनिक साहित्य के प्रचारकी भी। शरमकी बात है कि चैतन्य [महाप्रभु]की प्रसादी भारतवर्षके सारे भाषा-भाषियोको अप्राप्य है। तिरुवल्लुवरका नामतक शायद हम सब नही जानते होगे। उत्तर भारतकी जनता तो उस सन्तका नाम जानती ही नही। उसने थोडे शब्दोमें जैसा ज्ञान दिया है वैसा बहुत कम सन्त लोग कर सके हैं। इस बारेमें इस वक्त तो तुकारामका ही दूसरा नाम मेरे ख्यालमे आता है।[1]

पर इसके लिए हमे विभिन्न भाषाओके वर्तमान सत्साहित्यको ऐसी लोकप्रिय भाषामे, जिसे सब प्रान्तोकी जनता आसानीसे पढ़ सके, सुलभ तो बनाना ही है; साथ ही, नये साहित्यका, शुद्ध निर्दोष हितकारी साहित्यका निर्माण भी हमें करना होगा।[2]

अगर हम सारे हिन्दुस्तानके साहित्यके विशाल क्षेत्रमें प्रवेश करे तो क्या उसकी कुछ सीमा-मर्यादा होनी चाहिए? मेरी दृष्टिमें तो अवश्य होनी चाहिए। मुझे पुस्तको-की सख्या बढ़ानेका मोह कभी नही रहा है। प्रत्येक प्रान्तकी भाषामे लिखी और छपी प्रत्येक पुस्तकका परिचय दूसरी सब भाषाओमे होना मै आवश्यक नही मानता हूँ। ऐसा प्रयत्न यदि सम्भव भी हो तो उसे मै हानिकर समझता हूँ। जो साहित्य ऐक्यका, नीतिका, शौर्यादि गुणोका, विज्ञानका पोषक है, उसका प्रचार प्रत्येक प्रान्तमें होना आवश्यक और लाभदायक है।[3]

आजकल शृंगारयुक्त अश्लील साहित्यकी बाढ़ सब प्रान्तोंमे आ रही है। कोई तो यहाँतक कहते है कि एक शृंगारको छोड़कर और कोई रस है ही नही। शृंगार रसको बढ़ानेके कारण ऐसे सज्जन दूसरोको 'त्यागी' कहकर उनकी उपेक्षा और उपहास करते है। जो सब चीजोका त्याग कर बैठते हैं वे भी रसका तो त्याग नही कर पाते। किसी-न-किसी प्रकारके रससे हम सब भरे है। दादाभाईने देशके लिए सब कुछ छोड़ा था, पर वे तो बड़े रसिक थे। देश-सेवाको ही उन्होने अपना रस बना रखा था। उसीमे उन्हे प्रसन्नता मिलती थी। चैतन्यको रसहीन कहना रसको ही नही जानना है। नरसिंह मेहताने अपनेको 'भोगी' बताया है, यद्यपि वे गुजरातके भक्त-शिरोमणि थे। आपको न अखरे तो मै तो यहाँतक कहूँगा कि मै शृंगार रसको तुच्छ रस समझता हूँ, जब उसमे अश्लीलता आ जाती है तब उसे सर्वथा त्याज्य मानता हूँ। यदि मेरी चले तो मै इस सस्थामें ऐसे रसको त्याज्य मनवा दूँ। इसी तरह कौमी भेदोको, धर्मान्धताको तथा प्रजामें अथवा व्यक्तियोमे वैमनस्यको जो साहित्य बढ़ाता है उसका भी त्याग होना आवश्यक है।[4]

यह कार्य कैसे किया जाये? [क० मा०] मुंशीजी और काका साहबने एक हदतक हमारा मार्ग साफ कर रखा है। व्यापक साहित्यका प्रचार व्यापक भाषामें

१. इस अनुच्छेदका यह अन्तिम वाक्य **हरिजनबन्धु** से हिन्दीमें लिया गया है। इसके बादका अनुच्छेद **हरिजन** से लिया गया है।

२. इसके बादका अंश **हरिजनबन्धु** में से लिया गया है।

३. इसके बादका अनुच्छेद **हरिजन** से लिया गया है।

४. इसके बादके अनुच्छेद **हरिजनबन्धु** से लिये गये है।

ही हो सकता है। ऐसी भाषा अन्य भाषाकी अपेक्षा हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही है। हिन्दीको हिन्दुस्तानी कहनेका मतलब यह है कि उस भाषामे फारसी मुहावरेके शब्दोका त्याग न किया जाये।

अंग्रेजी भाषा कभी सब प्रान्तोके लिए वाहन (या माध्यम) नही हो सकती। यदि हम सचमुच हिन्दुस्तानके साहित्यकी वृद्धि चाहते है, भिन्न-भिन्न भाषाओमे जो रत्न छिपे पड़े है उनका प्रचार भारतवर्षके करोड़ो मनुष्योमे करना चाहते है, तो हम हिन्दुस्तानीकी मार्फत ही कर सकते है। इस दृष्टिसे मुशीजीने प्रसिद्ध लेखक प्रेमचन्दकी सहायतासे मासिक 'हस' निकाला है। उसे समृद्ध बनानेकी आवश्यकता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-५-१९३६, **हरिजनबन्धु**, १७-५-१९३६ और **हितवाद**, २६-४-१९३६

३९९. एक युवककी कठिनाई

नवयुवकोके लिए मैने 'हरिजन'मे जो लेख लिखा था,[1] उसपर एक नवयुवक, जिसने अपना नाम गुप्त ही रखा है, अपने मनमें उठे एक प्रश्नका उत्तर चाहता है। यो तो गुमनाम पत्रोपर कोई ध्यान न देना ही सबसे अच्छा नियम है, लेकिन जब कोई सार-युक्त बात पूछी जाये, जैसीकि इसमें पूछी गई है, तो कभी-कभी मै इस नियमको तोड़ भी देता हूँ।

पत्र हिन्दीमें है और कुछ लम्बा है। उसका साराश यह है:

> आपके लेखोको पढ़कर मुझे सन्देह होता है कि आप युवकोके स्वभावको कहाँतक समझते है। जो बात आपके लिए सम्भव हो गई है वह सब युवकोके लिए सम्भव नही है। मेरा विवाह हो चुका है। इतने पर भी मै स्वय तो संयम कर सकता हूँ, लेकिन मेरी पत्नी ऐसा नही कर सकती। बच्चे पैदा हो यह तो वह नही चाहती, लेकिन विषयोपभोग करना चाहती है। ऐसी हालतमें मै क्या करूँ? क्या यह मेरा फर्ज नही है कि मै उसकी भोगेच्छाको तृप्त करूँ? दूसरे जरियोसे वह अपनी इच्छा पूरी करे, इतनी उदारता तो मुझमें नही है। फिर अखबारोमे मै जो पढ़ता रहता हूँ उससे मालूम पडता है कि विवाह-सम्बन्ध कराने और नवदम्पतियोको आशीर्वाद देनेमे भी आपको कोई आपत्ति नही है। यह तो आप अवश्य जानते होगे, या आपको जानना चाहिए, कि वे सब उस ऊँचे उद्देश्यसे ही नही होते जिसका कि आपने उल्लेख किया है।

[1] देखिए पृ० ३११-३।

पत्र-लेखकका कहना ठीक है। विवाहके लिए उम्र, आर्थिक स्थिति आदिकी कसौटी मैंने बना रखी है। उसको पूरा करके जो विवाह होते है मैं उनकी मगल-कामना करता हूँ। इतने विवाहोमे मैं शुभ-कामना करता हूँ इससे सम्भवत. यही प्रकट होता है कि देशके युवकोको इस हदतक मैं जानता हूँ कि यदि वे मेरा पथ-प्रदर्शन चाहे तो मैं वह दे सकता हूँ।

इस भाईका मामला मानो. इस तरहका एक नमूना है, जिसके कारण यह सहानुभूतिका पात्र है। लेकिन सम्भोगका एकमात्र उद्देश्य प्रजनन ही है, यह मेरे लिए एक प्रकारसे नई खोज है। इस नियमको जानता तो मैं पहलेसे था, लेकिन जितना चाहिए उतना महत्त्व इसे मैंने पहले कभी नही दिया था। अभी हालतक मैं इसे खाली एक पवित्र इच्छामात्र समझता था। लेकिन अब तो मैं इसे विवाहित जीवनका ऐसा मौलिक विधान मानता हूँ कि यदि इसके महत्त्वको पूरी तरह मान लिया जाये तो इसका पालन कठिन नही है। जब समाजमे इस नियमको उपयुक्त स्थान मिल जायेगा तभी मेरा उद्देश्य सिद्ध होगा। मेरे लिए तो यह एक जीवन्त विधान है। जब हम इसका भग करते है तो उसके दण्डस्वरूप बहुत-कुछ भुगतना पड़ता है। पत्र-प्रेषक युवक यदि इसके उस महत्त्वको समझ जाये जिसका कि अनुमान नही लगाया जा सकता, और यदि उसे अपनेमे विश्वास और अपनी पत्नीके लिए प्रेम हो, तो वह अपनी पत्नीको भी अपने विचारोका बना लेगा। उसका यह कहना कि मैं स्वय सयम कर सकता हूँ, क्या सच है? क्या उसने अपनी पाशविक वासनाको जन-सेवा जैसी किसी ऊँची भावनामे परिणत कर लिया है? क्या स्वभावत. वह ऐसी कोई बात नही करता, जिससे उसकी पत्नीकी विषयभावनाको प्रोत्साहन मिले? उसे जानना चाहिए कि हिन्दू शास्त्रानुसार आठ तरहके सहवास माने गये है, जिनमें सकेतो द्वारा विषय-प्रवृत्तिको प्रेरित करना भी शामिल है, क्या वह इससे मुक्त है? यदि वह ऐसा हो और सच्चे दिलसे यह चाहता हो कि उसकी पत्नीमे भी विषय-वासना न रहे, तो वह उसे शुद्धतम प्रेमसे सराबोर करे, उसे यह नियम समझावे, सन्तानोत्पत्तिकी इच्छाके बगैर सहवास करनेसे जो शारीरिक हानि होती है वह उसे समझाये और वीर्य-रक्षाका महत्त्व बतलाये। इसके अलावा उसे चाहिए कि अपनी पत्नीको अच्छे कामोकी ओर प्रवृत्त करके उनमे उसे लगाये रखे और उसकी विषय-वृत्तिको शान्त करनेके लिए उसके भोजन, व्यायाम आदिको नियमित करनेका यत्न करे। और इन सबसे बढ़कर, यदि वह धार्मिक प्रवृत्तिका व्यक्ति है तो अपने उस जीवित विश्वासको वह अपनी सहचरी पत्नीमे भी पैदा करनेकी कोशिश करे। क्योकि, मुझे यह बात कहनी ही होगी कि ब्रह्मचर्य-व्रतका तबतक पालन नही हो सकता जबतक कि मनुष्यको ईश्वरमे, जो कि जीता-जागता सत्य है, अटूट विश्वास न हो। आजकल तो यह एक फैशन-सा बन गया है कि जीवनमे ईश्वरका कोई स्थान नही समझा जाता और सच्चे ईश्वरमें अडिग आस्था रखनेकी आवश्यकताके बिना ही सर्वोच्च जीवन तक पहुँचनेपर जोर दिया जाता है। मैं अपनी यह असमर्थता कबूल करता हूँ कि जो अपनेसे ऊँची किसी दैवी शक्तिमे विश्वास नही रखते, या उसकी

जरूरत नही समझते, उन्हे मैं यह बात समझा नही सकता। पर मेरा अपना अनुभव तो मुझे इसी ज्ञानपर ले जाता है कि जिसके नियमानुसार सारे विश्वका सचालन होता है उस शाश्वत नियममे अचल विश्वास रखे बिना पूर्णतम जीवन सम्भव नही है। इस विश्वाससे विहीन व्यक्ति तो समुद्रसे अलग आ पडनेवाली उस बूंदके समान है जो नष्ट होकर ही रहती है। परन्तु जो बूंद समुद्रमे ही रहती है वह उसकी गौरव-वृद्धिमे योग देती है और हमें प्राण-तत्त्व प्रदान करनेका सम्मान उसे प्राप्त होता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-४-१९३६

४००. पत्र : अमृत कौरको

२७ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारे दो पत्र मिले। महादेवके पास जो अच्छी सटीक रामायण है उसकी एक प्रति तुम्हे भेज दी जायेगी।

तुम्हारा चेक यथासमय मिल गया। रकम आदेशानुसार यथोचित रूपमें बाँट दी जायेगी।

शिमलावाले पार्सलमें मुलायम रेशेवाला गद्दा, दोनो तरफसे पहनी जानेवाली साडी, तुम्हारी जाली और दो चाकू होने चाहिए।

नागपुरसे मैं कल रात लौटा। मैंने बहुत काम किया, लेकिन थकान मुझे ज्यादा नही हुई।

कार्य-समितिकी बैठक चल रही है। लेकिन उसके सब सदस्य ज[मनालालजी] के घर पर हैं।

आशा है, तुम्हारी कामना पूरी होगी और तुम्हे कमसे-कम चार महीने तो गले की तकलीफ नही होगी।

सप्रेम,

जल्दीमें,
बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२३) से; सौजन्य . अमृत कौर। जी० एन० ६८७९ से भी।

४०१. पत्र : मीराबहनको

२७ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

सम्भव है, उबालनेका बर्तन पत्र-वाहकके साथ आ जाये। नहीं तो मेरे साथ आयेगा।[1] बा की तबीयत बहुत ठीक नहीं है। सेगाँवमें बकरियाँ हैं? हों तो मैं अपने साथ नहीं लाना चाहता।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२९) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७९५ से भी।

४०२. पत्र : मीराबहनको

२८ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

आवश्यक वस्तुएँ मैं साथ लेता आऊँगा। मैं कल नहीं आ सकता। कार्य-समिति-की बैठक अभीतक हो रही है और जबतक सदस्य यहाँ हैं, मैं नहीं आ सकता। वहाँ मुझे १० दिन अबाधित रूपमें किसी सूरतमें नहीं मिलेंगे। मुझे यहाँ रविवारको रहना ही पड़ेगा और अगर डॉ० अम्बेडकर[2] आयें तो १ और २ मईको भी रहना होगा। फिर मैं ५ या ६ तारीखसे वहाँ अनुपस्थित रहूँगा। मैं ८ तारीखको बंगलोर के लिए प्रस्थान करनेकी आशा करता हूँ। अत: ५ या ६ को वहाँसे जानेके बाद मैं फिर वहाँ नहीं लौटूँगा। इसलिए वे दस दिन घटकर अब ३०-३१ तथा ४ और

१. **बापूज लेटर्स टु मीरा** नामक अपनी पुस्तकमें मीराबहनने लिखा है: "अपनी कुटियाके लिए ठीक स्थानका चुनाव करनेके उपरान्त बापू मेरे पास पेड़ोंके नीचे मेरे शिविरमें आकर कुछ दिन ठहरनेका विचार कर रहे थे . . .।"

२. इसके बारेमें मीराबहनने लिखा है: "डॉ० अम्बेडकर आये अवश्य, परन्तु वे बापूसे पेड़ोंकी छायामें सेगाँवमें मिले।"

५ मई रह गये हैं, और ५ मईका भी पक्का नही है। इतने दिन भी वहाँ रह सका तो मैं शुक्र मानूँगा। बा की तबीयत अभी भी ठीक नही है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७९६ से भी।

४०३. पत्र: मीराबहनको

वर्धा
२९ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

ईश्वरने चाहा तो कल आ रहा हूँ। कागज भेजा जा रहा है। शेष मिलने पर। आशा है, ७ बजे प्रात:कालके करीब तुमसे आ मिलूँगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७९७ से भी।

४०४. तार: अमृतलाल वि० ठक्करको

३० अप्रैल, १९३६

बापा
"सेवक"
दिल्ली

यदि अमतुलकी सेवाएँ वास्तवमें आवश्यक नही है तो उसे यहाँ शीघ्र ही भेज दो।

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

४०५. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

सेगाँव
[२९/३० अप्रैल, १९३६][1]

भाई बापा,

चिमनदासको पत्र लिखा है। चौइथरामको[2] लखनऊसे ही लिख दिया था। अमतुस्सलामका काम कठिन है। यह मेरे पास भी सुखी नही होगी और फिर अब तो मै गाँवमे जाकर रहनेवाला हूँ। फिलहाल तो मैं सरदारको लेकर नन्दी दुर्ग जा रहा हूँ। सरदार कैदी है और मैं जेलर। यानी वे बीमार है और मैं नर्स। मैं वहाँ अमतुस्सलामको ले जानेके लिए तैयार हूँ। रुक्मिणीके अत्याचारसे भागनेमें कोई सार नही है। इससे तो उसे बढावा ही मिलेगा। रुक्मिणीको सुधारनेका उपाय खोजना पड़ेगा। इसलिए अमतुस्सलामके मामलेको इस तरह सोचें कि क्या उसे वहाँ रखना जरूरी है। यदि वहाँ उसकी जरूरत है तो उसे वहाँ रखा जाये और रुक्मिणीके पख काट दिये जाये। यदि उसकी वहाँ जरूरत न हो-तो उसे फौरन मेरे पास रवाना कर दो। उसे वहाँ भेजनेका उद्देश्य यह था कि एक तो उसकी महत्त्वाकाक्षा वहाँ सेवा करनेकी थी और दूसरे मैं मानता था कि वहाँ उसकी जरूरत है। इस विचारसे कि जो आ जाये उससे काम लेना है, उसे वहाँ रखना बिलकुल जरूरी नही है। इस तरह सोचकर जो उचित लगे सो करनेका आपको पूरा अधिकार है। उसका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

अब शास्त्रीके बारेमे। वह यहाँ आया था। बहुत-सी बाते हुई। गणेशन की गालियोके बारेमे उसका कहना बहानाभर है। पैसा इकट्ठा करनेकी उसमें शक्ति ही नही है और इसीलिए वह थक गया। मैं तो उससे निराश हो गया हूँ। मेरी समझमे तो वह दिया गया काम टेबल कुर्सीपर बैठकर कर सकता है। सम्भव है हिसाब भी रख सके। पत्र आदि ठीक लिख सकता है। लेकिन उसमे सस्था चलानेकी शक्ति नही है। मौलिकता नही है, आत्मविश्वास नही है, उत्साह नही है, हिम्मत-जैसी कोई चीज नही है। आदमी भला है और ईमानदार है। इसलिए मेरी सलाह है कि उसे कुम्भकोणमके कामसे मुक्त करके उसका वजन भाष्यम अय्यगारके ऊपर डाल दो। उसे जो करना होगा करेगा। प्रतापमलके बारेमे मेरा यह कहना है कि यदि जगन्नाथ दास उसे लेना चाहे तो ले ले, लेकिन खर्चका वजन हमे नही उठाना चाहिए। वे मद्राससे या जहाँसे चाहे पैसा पैदा करके काम चलाना चाहे तो चलायें। गणेशन नही रह सकता। भाष्यम अय्यगार और वेंकटसुब्बैया जिम्मेवारी उठा

१. गांधीजीने यह पत्र २९ अप्रैलको लिखना आरम्भ करके अगले दिन समाप्त किया था।
२. चौइथराम गिडवानी।

सके तो तुम जितना सौप सकते हो, उन्हे सौप दो। जो करना चाहो उसे हिम्मतके साथ कर डालो। इस बातकी सावधानी रखना कि जो काम करो उसमे न शास्त्री रहे और न गणेशन। शास्त्रीको किसी दूसरी जगह लगा दो। मै चाहता हूँ कि उसका भार मेरे ऊपर न रखा जाये। मेरा मन गाँवमे घूम रहा है। अमतुस्सलाम वाला हिस्सा मैने वर्धामे लिखा था और बादमे लोग आ गये इसलिए पड़ा रह गया। अब उसे यही आज सेगाँवमे दूसरे दिन पूरा करूँगा। सेगाँव वर्धासे पाँच मील दूर है। बगलोरसे लौटकर रह सकूँ तब समझो। अभी तो इसे महात्माका ढोग ही मानना।

सरदार मुझे नन्दी दुर्ग नही ले जा रहे है, मै उन्हे ले जा रहा हूँ। बहुत दिनोसे तुम्हे नही लिखा था, इसलिए इतना गाँवमें बैठकर गाँवमे बने कागज, कलम और स्याहीसे लिख रहा हूँ तो क्या यह पर्याप्त नही माना जायेगा?

अमतुस्सलामके लम्बे पत्रका जवाब[1] इसीके साथ है। तुम उसे पढकर सुना देना।

बापूके वन्देमातरम्

[पुनश्च]

जवाब वर्धाके पते पर देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५८) से।

४०६. पत्र: अगाथा हैरिसनको

दोबारा नहीं पढ़ा

वर्धा
३० अप्रैल, १९३६

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा १७ तारीखका पत्र मिला। जवाहरलालसे इससे कमकी आशा नही हो सकती थी। उनका अभिभाषण[2] उनके ईमानका इकबाल है। उनके मन्त्रिमण्डलकी रचनासे तुम देखती हो कि उन्होने अधिकाश वे लोग चुने है, जो परम्परागत विचार अर्थात् १९२० से आरम्भ हुए विचारोका प्रतिनिधित्व करते है। बेशक, उसमे से अधिकाश मेरे विचारोका प्रतिनिधित्व करते है। सम्भव हो तो मै नये सविधान[3]को आज नष्ट कर देना चाहूँगा। उसमे शायद ही ऐसी कोई चीज है जो मुझे पसन्द हो।

१. उपलब्ध नहीं है।
२. लखनऊमें हो रहे कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनके अध्यक्ष-पदसे।
३. १९३५ के भारत सरकार अधिनियमके अन्तर्गत।

मगर जवाहरलालका रास्ता मेरा रास्ता नही है। भूमि आदिके बारेमें मै उनका आदर्श स्वीकार करता हूँ। लेकिन मै उनके तरीकोमें से लगभग किसीको स्वीकार नही करता। मै वर्ग-सघर्षको बचानेके लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दूँगा। और मुझे आशा है कि वह भी ऐसा ही करेगे। लेकिन वह ऐसा मानते है कि इस (संघर्ष) को टालना सम्भव नही है। मै ऐसा मानता हूँ कि यह कतई सम्भव है, विशेष रूपसे यदि मेरा तरीका स्वीकार कर लिया जाये। मगर अपने तरीकोको पेश करनेमें उग्र होते हुए भी जवाहरलाल कार्यमे गम्भीर है। जहाँतक मै उन्हे जानता हूँ, वह संघर्षको जल्दी नही ले आयेगे। और अगर यह उनपर आ पडे तो वह उससे बचनेकी कोशिश भी नही करेगे। परन्तु शायद इस मामलेमें सारी काग्रेस एक विचारकी नही है। कुछ-न-कुछ मतभेद जरूर है। मेरे उपायमें सघर्षको टालनेकी योजना रहती है। उनके उपायमें यह योजना नही है। मेरा अपना खयाल यह है कि जवाहरलाल अपने साथियोके बहुमतके निर्णय मान लेगे। उनके जैसे स्वभाववाले आदमीके लिए यह अत्यंत कठिन है। अभीसे उन्हे ऐसा लग रहा है। वह जो-कुछ करेगे, शराफतके साथ करेंगे। यद्यपि जीवनके प्रति हमारे दृष्टिकोणोके बीचकी खाई बेशक चौडी हुई है, फिर भी दिलोंमें हम एक-दूसरेके जितने नजदीक शायद आज है, उतने पहले कभी नही थे।

यह पत्र सार्वजनिक उपयोगके लिए नही है। लेकिन तुम्हें आजादी है कि तुम इसे अपने मित्रोको दिखा सकती हो।

मै नही समझता कि अपने प्रश्नके उत्तरमे तुम इससे ज्यादा कुछ चाहती होगी। शेष बाते तुम्हे महादेव लिखेगा।

सप्रेम,

बापू

कुमारी अगाथा हैरिसन
२, क्रैनबोर्न कोर्ट
एलबर्ट ब्रिज रोड,
[लन्दन] एस० डब्ल्यू० ११

[अंग्रेजीसे]

फाइल न० ३००१/एच०/पृ० १३-५, पुलिस कमिश्नर, बम्बई। गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६ से भी; सौजन्य: नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

४०७. पत्र : नारणदास गांधीको

३० अप्रैल, १९३६

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। सरदार अलग रास्तेसे जायेंगे। कुसुमको वर्धा भेजना। हम ८को यहाँसे रवाना हो जायेंगे, इसलिए वह उसके पहले यहाँ पहुँच जाये। ओढने-पहननेके गरम कपड़े साथ लेती आये; फाजिल कुछ न लाये।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आजका दिन सेगाँवमें विता रहा हूँ। आशा है, इसे अपना निवास वना सकूँगा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म; (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८८ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

४०८. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

सेगाँव

३० अप्रैल, १९३६

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने हिसाब देकर ठीक किया। कितना अच्छा हो यदि हम इस अवधिमें चंदा इकट्ठा करनेकी शक्ति पैदा कर लें!

आशा है भड़ौंचका मामला निपट गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३५) से।

४०९. पत्र : प्रभावतीको

३० अप्रैल, १९३६

चि० प्रभा,

तेरे दो पत्र मिले हैं। पैसेके विषयमें समझ गया। पिताजीका पत्र सुन्दर है ही। उन्होंने तुझे पैसा भेजनेके बारेमें जो लिखा है सो मैंने देख लिया। मैंने जो भेजा है सो उन्हें बता देना।

तूने तबीयतके विचारसे दूध छोड़ा है तो ठीक है। प्रयोगके विचारसे ऐसा करना उचित नहीं होगा। बेहोशी आ गई थी, इसका कारण दूध न लेना हो सकता है। चिन्ता तो तुझे करनी ही नहीं चाहिए। जबतक माता-पिताका आशीर्वाद तुझे प्राप्त है, उनके मनमें तुझे लेकर कोई असन्तोष नहीं है, तबतक चिन्ता किस बातकी? दुनिया जो चाहे सो कहे। जयप्रकाशके साथका हिसाब तो तुझे ही निपटाना पड़ेगा। उसका मामला अलग है। इसलिए यदि तू चिन्ता करे और बीमार हो जाये तो यह बात नहीं चलेगी। चाहे जैसी परिस्थिति क्यों न हो, जो व्यक्ति शान्त और निश्चिन्त रह सकता है वही 'गीता'का उपासक माना जा सकता है। तुझे ऐसा ही बनना है। तू मुझे अब बराबर पत्र लिखा कर।

जयप्रकाश कल मिलने आया था। पटवर्धन साथमें था। तेरे पत्रका जवाब तो नहीं दिया, किन्तु तेरे भविष्यके बारेमें बातचीत की। उसने कहा कि वह तुझको तीन महीने बनारसकी पाठशालामें रखना चाहता है। वहाँ मॉन्टेसरी पद्धति सीखनेकी बात है। उसके बाद पटना जानेकी बात है। उसने मेरी राय पूछी। मैंने कहा इसमें कोई हर्ज नहीं। बनारसकी पाठशालामें तीन महीनेका अनुभव ले ले। बादमें जो होगा देख लेंगे। हर हालतमें तबीयत ठीक रखना।

नन्दी और बंगलोरमें एक महीना लग जायेगा। बादमें तो यहीं लौट आना है। मैं आज सेगाँव आ गया हूँ। तीन दिन तो रुकूँगा ही। फिर दो या तीन दिनके पश्चात् तारीख ८ को मैं बंगलोरके लिए रवाना हो जाऊँगा। तेरा सामान जयप्रकाशके साथ चला गया होगा और उसके साथ बातचीत हो गई होगी। मेरे साथ सेगाँवमें प्यारेलाल ही हैं। बा बीमार है, इसलिए यहाँ नहीं आई।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

पता वर्धाका मानकर पत्र लिखना। मैसूरमें पता इस तरह होगा : नन्दी दुर्ग, बंगलोरके पास।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९२) से।

४१०. बातचीत : एक कार्यकर्त्ताके साथ[1]

३० अप्रैल, १९३६[2]

बापू, इस गाँवमें आकर आप बैठ जायें, इसके बजाय आप ग्राम-पुनर्रचनाका कार्यक्रम लेकर सारे देशमें दौरा करनेकी बात सोचें तो कैसा होगा? मैं नहीं कह सकता कि आपके उस हरिजन-प्रवास[3]में ईश्वरका कैसा अनुग्रह था, लोगोंके हृदयमें उसने किस तरह एक मूक क्रांति पैदा कर दी थी। यह काम और किसी भी तरह नहीं हो सकता था। तो क्या आप उसी तरहका दौरा फिरसे नहीं कर सकते?

[गा० :] नही भाई। हरिजन-कार्य और ग्राम-पुनर्रचना, इन दोनो कार्योमें कोई सादृश्य नही। हरिजन-कार्यमे व्यावहारिक और सैद्धान्तिक दो दृष्टियाँ मिली हुई थी। पर यहाँ मै उन दोनोको मिला नही सकता। इतने दिनोसे मैं ग्राम-कार्यके विषयमें सिद्धान्त ही सिद्धान्तकी बात कर रहा हूँ, कभी बाते करता हूँ, कभी लोगोको सलाह देता हूँ। ग्राम-कार्यमे क्या-क्या मुसीबतें आती है उनका मैंने खुद अनुभव नही किया। अगर किसी गाँवमें, गाँवके लोगोके बीचमे, गरमी, बरसात और जाडा काटकर एक बरसके बाद मै दौरा करूँ तो मै गाँवोके सम्बन्धमे ज्ञान और अनुभवके साथ बात कर सकूँगा। अभी न मैंने वह ज्ञान प्राप्त किया है, न अनुभव। कल मै गजानन नाइकका काम देखने सिंदी गाँव गया था। वहाँ की हालत तो पहलेसे शायद ही कुछ अच्छी है, पर गजानन नाइक अपना काम धीरज और उत्साहके साथ बराबर किये जा रहे है। कल सवेरे जब मैंने उन्हे वहाँ काम करते देखा, तो मैंने अपने मनमें कहा, "गजाननके साथ अगर मै खुद काम करता होता तो जो-जो कठिनाइयाँ उनके सामने आ रही है उनका अवश्य मुझे काफी निकटसे अनुभव हो जाता।" यह बात मुझे आज पहलेसे भी अधिक स्पष्ट हो गई है कि मेरा स्थान गाँवमें ही है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-५-१९३६

१. इस अंशको महादेव देसाई लिखित 'वीकली लेटर' में से लिया गया है।
२. गांधीजी ३० अप्रैलकी सुबहको ही मगनवाड़ीसे सेगाँव रहने चले आये थे।
३. ७ नवम्बर, १९३३ से लेकर २ अगस्त, १९३४ तक।

४११. पत्र : एस्थर मेननको

[३० अप्रैल, १९३६ या उसके पश्चात्][1]

प्यारी बिटिया,

मुझे तुम्हारा लम्बा पत्र मिला, जिसे मैंने बड़े चावसे पढा है। तुम्हारे सामने एक टेढ़ी समस्या है। यदि तुम आ सको तो नन्दी हिल मुझसे मिलने आ जाओ। मैं १० मईको वहाँ पहुँचूंगा। परमात्मा तुम्हे राह दिखायेगा। तुम्हे चिन्ता नही करनी चाहिए। जब तुम परिस्थितियोंको बदल नही सकती तो फिर जो-कुछ सामने आये उसका सामना करो।

मैं तुम्हे सेगाँव नामक गाँवसे लिख रहा हूँ, जहाँ मैं बस जाना चाहता हूँ। मीराबाई पहलेसे ही इस गाँवमे है। अगर मैं यहाँ बस गया तो वह किसी दूसरे गाँवमें जायेगी। यदि सम्भव हुआ तो मैं यहाँ अपने साथ किसी भी पुराने सह-कार्यकर्त्ताको नही रखना चाहता।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (नं० १३७) से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

४१२. पत्र : बाल द० कालेलकरको

[१ मई, १९३६ से पूर्व][2]

मैंने जो-कुछ कहा है, अगर उसे तुमने पचा लिया है[3] तो उक्त काम तुम्हे खुद करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

१. सेगाँवके उल्लेख परसे निर्धारित जहाँ गांधीजी ३० अप्रैलको पहुँच गये थे।

२. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि यह पत्र १ मई, १९३६ को बाल द० कालेलकरको लिखे पत्रसे पहले लिखा गया था; देखिए पृ० ३८६।

३. बाल कालेलकरने लिखा था कि काकासाहब या किशोरलाल मशरूवालाको समाजवाद पर एक पुस्तक लिखनी चाहिए।

४१३. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
१ मई, १९३६

प्रिय बागी,

यदि तुम पगली न होती तो बागी न होती। इस प्रकार यह प्रश्न बराबर उठता है कि तुम्हारे लिए कौन-सी उपाधि ज्यादा ठीक है। और चूँकि उपाधियाँ कोई स्वय तो लगा नही सकता और बागीकी उपाधि तुम्हारी अपनी पसन्द है, इसलिए मैं समझता हूँ कि तुम्हारे लिए पगली का प्रयोग मुझे पसन्द करना चाहिए। हालाँकि मुझे जालिम कहा जाता है लेकिन मैं तुम्हे अनुचित प्रश्रय इसलिए देता हूँ ताकि आजकी बागी कलकी इच्छुक दासी बन सके।

खैर, आखिरकार मैं सेगाँव आ गया हूँ। प्यारेलाल मेरे साथ है। मुझे उसकी जरूरत थी। बा को भी आना था, लेकिन उसकी तबीयत खराब थी। तुम्हे यह जानकर खुशी होगी कि लगभग पूरा रास्ता मैंने पैदल पार किया। लेकिन इससे मुझे कोई तकलीफ नही हुई। बाकी के तीन-चौथाई मीलके लिए मैंने बाँदी (गाडी) ले ली थी, क्योकि हम रास्ता भूल गये थे और दूसरे लोग मेरे बारेमे परेशान हो रहे थे। हम कल आये है। रात बहुत सुहावनी थी।

दोनो तरफसे पहनी जा सकनेवाली साडी तो निश्चय ही तुम्हारी अपनी पसन्द थी। मैं यह भूल गया कि वह शाल थी या साडी। यदि खेस तुम्हारे पास वापस पहुँच गया है तो भूल हुई है। उसे तो वापस मेरे पास आना होगा।

आशा है तुम्हे अपने रुपये मिल गये होगे। अब और नही लिखूंगा, क्योकि महादेवको इसे लेकर एकदम रवाना होना है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२४) से, सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६८८० से भी।

४१४. पत्र : बाल द० कालेलकरको

[१ मई, १९३६][1]

चि० बाल,

मैंने जो लिखा था[2] सो विचारपूर्वक लिखा था। यदि मेरे विचार तुम सबको सचमुच ठीक लगे हों तो अपनी-अपनी हदतक उसका ठीक शास्त्र बनाना तुम्हारे बसकी बात होनी ही चाहिए। यदि इस बातका विश्वास हो गया हो कि पृथ्वी गोल है तो फिर इसका प्रमाण भूगोलकी किसी अच्छी पुस्तकमें से ढूँढ़कर दिखानेके बजाय तुम्हें अपनी भाषामें अपने ढंगसे प्रस्तुत कर सकना चाहिए, और अपने वचनको सिद्ध कर दिखाना चाहिए। यही बात मेरे अथवा दूसरोंके विचारोंके बारेमें है। अन्ततोगत्वा धर्म-सम्बन्धी अन्तिम प्रमाण भी वेद अथवा 'गीता' अथवा 'भागवत्' पर निर्भर न होकर अपनी अडिग श्रद्धापर निर्भर होना चाहिए। ऐसी श्रद्धासे उत्पन्न बुद्धि ही ठीक प्रमाण दे सकती है।

मैंने कहा कि "यह काका का ही प्रताप है"।[3] इससे मेरा अभिप्राय यह था कि तुम दोनो भाइयोंको काकाने निस्संकोच होकर गुजराती सिखायी और तुम्हे एक गुजरातीकी तरह ही बड़ा किया। यदि उनका मन संकीर्ण होता तो वे तुम्हे किसी अन्य भाषासे बातचीत [न] करने देते और तुम्हारा लालन-पालन कही महाराष्ट्रमें ही किया गया होता। मैं ठीक कह रहा हूँ न?

मैं यह सब यहाँ सेगाँवमें दूसरे दिन लिख रहा हूँ। कल आ गया था। बेशक, मुझे यह जगह पसन्द है। तुम्हें मेरी उड़ीसा यात्रा याद है न? वहाँ जैसी छाया मिलती थी वैसी ही यहाँ है। मैं सन्तुष्ट हूँ। मेरी कुटी तो मेरी गैरहाजिरीमें बनेगी। फिलहाल तो मैं सरदार को लेकर बंगलोर — नन्दी जाऊँगा।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

१. गांधीजी सेगाँव ३० अप्रैल, १९३६ को पहुँचे थे।

२. देखिए "पत्र : बाल द० कालेलकरको", १-५-१९३६ के पूर्व।

३. गांधीजीने लिखा था कि बाल द० कालेलकर द्वारा भाईका 'परमानन्द पुरस्कार' जीतना "काकाके प्रतापको ही प्रकट करता है"।

४१५. पत्र : प्रभावतीको

१ मई, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र ठीक समय पर मिल गया है।

तेरा सामान कान्ति भेजेगा।

२५ रुपयेका मनीआर्डर भेज रहा हूँ। फिर ऐसी गफलत मत करना। इसमें सम्भव है कि गफलतसे लज्जाका हाथ अधिक रहा हो। यदि ऐसी बात हो तो ऐसी शर्म भी नहीं करनी चाहिए।

अपने समयका सदुपयोग करना।

तेरा दूध न लेना चिन्ता उत्पन्न करता है। स्वास्थ्यमें ऐसी क्या खराबी है जिससे दूध छोड़ना पड़े? तबीयत कदापि नहीं बिगाड़नी चाहिए।

मेरी तबीयत तो अच्छी ही है। कल रात वजन लिया गया था, ११० पौंड निकला, अर्थात् जितना दिल्लीमें था उतना ही। खुराक भी लगभग वैसी ही है।

यहाँसे ८ या ९ मईको सरदारको लेकर नन्दी, बंगलौर जाना है। वहाँ एक महीने रहनेकी सम्भावना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५३) से।

४१६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव

१ मई, १९३६

भाई वल्लभभाई,

महादेव आज रवाना नहीं हो सकेगा। एक सबल कारण तो तारमें दे दिया है। दूसरा कारण 'हरिजन' है। इसे निबटा दे तो तुम उसे ज्यादा भी रोक सकते हो। महादेवको सब-कुछ समझा दिया है। इसलिए यहाँ अधिक नहीं लिख रहा हूँ।

तुम अपनी तन्दुरुस्ती ठीक नहीं कर लोगे तो झगड़ा होगा।[1]

सचमुच इस गाँवकी आबहवा बहुत अच्छी है। रातको अच्छी ठंडक थी। खाने-पीनेकी सुविधाका ध्यान रखा जा रहा है। परन्तु इसके बारेमें तो मैं फुरसतके वक्त लिखूँगा। डॉक्टर (अम्बेडकर) और वालचन्द[1] सेगाँवमें मिले थे। वे फिर आयेंगे।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
८९, वार्डन रोड
बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९५

४१७. सुधारक बहनोंसे

एक बहनसे मेरी जो गम्भीर बातचीत[2] हुई उससे मुझे भय होता है कि कृत्रिम सन्तति-निग्रह-सम्बन्धी मेरी स्थितिको अभीतक लोगोंने काफी अच्छी तरह नहीं समझा है। सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोंका मैं जो विरोध करता हूँ वह इस कारण नहीं कि वे हमारे यहाँ पश्चिमसे आये हैं। कुछ पश्चिमी चीजें तो हमारे लिए वैसी ही उपयोगी हैं जैसीकि वे पश्चिमके लिए हैं और कृतज्ञताके साथ मैं उनका प्रयोग भी करता हूँ। अतएव सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनों का मेरा विरोध तो केवल उनके गुण-दोषकी दृष्टिसे ही है।

मैं यह मानता हूँ कि सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोंका प्रतिपादन करनेवालोंमें जो सबसे अधिक बुद्धिमान हैं वे उन्हें उन स्त्रियों तक ही मर्यादित रखना चाहते हैं जो सन्तानोत्पत्तिसे बचते हुए अपनी और अपने पतियोंकी विषयवासनाको तृप्त करना चाहती हैं। लेकिन, मेरे खयालमें, मनुष्योंमें यह इच्छा अस्वाभाविक है और इसको तृप्त करना मानव-कुटुम्बकी आध्यात्मिक प्रगतिके लिए घातक है। इसके खिलाफ अन्य बातोंके साथ अकसर लॉर्ड डॉसनकी यह राय पेश की जाती है:[3]

> विषय-युक्त प्रेम संसारकी एक प्रचण्ड और प्रधान शक्ति है। . . . आप चाहें तो इसे स्वस्थ दिशा प्रदान कर सकते हैं, किन्तु इसके प्रवाहको रोक नहीं सकते; और यदि इसके प्रवाहका स्रोत अपर्याप्त या जरूरतसे ज्यादा प्रतिबन्ध-युक्त हुआ तो यह अनियमित स्रोतोंसे निकल पड़ेगा। आत्म-संयम भी एक सीमाके बाद टूट जाता है, और यदि किसी जातिमें विवाह होनेमें

१. वालचन्द हीराचन्द, एक उद्योगपति।
२. श्रीमती सैंगरसे; देखिए पृ० १६५-७०।
३. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

कठिनाई होती हो या बहुत देरमें जाकर विवाह होते हों तो उसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि अनुचित सम्बन्धोंकी वृद्धि हो जायेगी। . . .

फिर सन्तानोत्पत्तिके अलावा भी विषय-युक्त प्रेमका अपना प्रयोजन है। विवाहित जीवनमें स्वस्थ और सुखी रहनेके लिए यह अनिवार्य है। . . . इस तरह एक-दूसरेको जो पारस्परिक आनन्द प्राप्त होगा उससे उन दोनोंमें एक स्थायी बन्धन स्थापित होगा और उससे उनका विवाह-सम्बन्ध स्थिर होगा। . . .

अब मै यह सब छोड़कर सन्तति-निग्रहके सबसे जरूरी प्रश्नपर आता हूँ। . . . जिन कारणोसे प्रेरित होकर अभिभावक लोग सन्तति-निग्रह करना चाहते है उनमें कभी-कभी तो स्वार्थ होता है, लेकिन वे बहुधा सम्मानजनक और उचित ही होते है। विवाह करके अपनी सन्तानको जीवन-संघर्षके योग्य बनाना, मर्यादित आय, जीवन-निर्वाहका खर्चा, विविध करोका बोझ — ये सब इसके लिए जोरदार कारण हैं। . . . बहुत-से लोग कहते हैं, 'सम्भव है कि सन्तति-निग्रह आवश्यक हो, परन्तु एकमात्र जिस उपायसे सन्तति-निग्रह करना ठीक हो सकता है वह तो स्वेच्छापूर्ण संयम ही है।' लेकिन ऐसा संयम या तो व्यर्थ होगा या यदि उसका कोई असर पड़ा तो वह अव्यावहारिक और स्वास्थ्य तथा सुखके लिए हानिकर होगा। परिवारके लिए मान लो, हम चार बच्चोंकी मर्यादा बना लें तो यह विवाहित स्त्री-पुरुषके लिए एक तरहका संयम ही होगा, जो काफी अन्तरसे सन्तानोत्पत्ति होनेके कारण ब्रह्मचर्यके समान ही माना जायेगा और जब हम इस बातपर ध्यान दें कि आर्थिक कठिनाईके कारण विवाहित जीवनके प्रारम्भिक वर्षोंमें बहुत कठोर संयम करना पड़ेगा, जबकि विषयेच्छा बहुत प्रबल रहती है, तो मैं कहता हूँ कि यह इच्छा इतनी तीव्र होगी कि अधिकांश व्यक्तियोके लिए उसका दमन करना असम्भव होगा और यदि उसे जबरदस्ती दबानेका यत्न किया गया तो स्वास्थ्य और सुखपर उसका बहुत बुरा असर पड़ेगा, और नैतिकताके लिए भी वह बहुत खतरनाक होगा। . . .

लॉर्ड डॉसन बहुत बड़े डॉक्टर है, इससे इनकार नही किया जा सकता। लेकिन डॉक्टरके रूपमें उनका जो बड़प्पन है उसके लिए काफी आदरका भाव रखते हुए भी मैं उनके कथनकी प्रामाणिकता पर सन्देह करनेका साहस करता हूँ, खासकर उस हालतमें जबकि यह उन स्त्री-पुरुषोके अनुभवके विपरीत है जिन्होने आत्म-सयमका जीवन बिताया है किन्तु उससे उनकी कोई नैतिक या शारीरिक हानि नही हुई। वस्तुत: बात यह है कि डॉक्टर लोग आम तौरपर उन्ही लोगोके सम्पर्कमे आते हैं जो स्वास्थ्यके नियमोकी अवहेलना करके कोई-न-कोई बीमारी मोल ले लेते हैं। इसलिए बीमारोको अच्छा होनेके लिए क्या करना चाहिए यह तो वे अकसर सफलताके साथ बता देते है, लेकिन यह बात वे हमेशा नही जानते कि स्वस्थ स्त्री-पुरुष किसी खास दिशामें क्या कर सकते है। अतएव विवाहित स्त्री-पुरुषो पर सयमका

जो असर पड़नेकी बात लॉर्ड डॉसन कहते है उसे अत्यन्त सावधानीके साथ ग्रहण करना चाहिए। इसमे सन्देह नही कि विवाहित स्त्री-पुरुष अपनी विषय-तृप्तिको स्वत. कोई बुराई नही मानते, उनकी प्रवृत्ति उसे वैध माननेकी ही है, लेकिन आधुनिक युगमे तो कोई बात स्वयंसिद्ध नही मानी जाती और हरएक चीजकी बारीकीसे छानबीन की जाती है। अत यह मानना सरासर गलती होगी कि चूँकि अबतक हम विवाहित जीवनमे विषय-भोग करते रहे है इसलिए ऐसा करना ठीक ही है या स्वास्थ्यके लिए उसकी आवश्यकता है। बहुत-सी पुरानी प्रथाओको हम छोड़ चुके है और उसके परिणाम अच्छे ही हुए है। तब इस खास प्रथाको ही उन स्त्री-पुरुषोके अनुभवकी कसौटीपर क्यो न कसा जाये, जो विवाहित होते हुए भी एक-दूसरेकी सहमतिसे संयमका जीवन व्यतीत कर रहे है और उससे नैतिक तथा शारीरिक, दोनो तरहका लाभ उठा रहे है?

लेकिन मै तो विशेष आधारपर भी भारतमें सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोका विरोधी हूँ। भारतमे नवयुवक यह नही जानते कि विषय-सयम क्या है। इसमे उनका कोई दोष नही है। छोटी उम्रमें ही उनका विवाह हो जाता है। यह यहाँकी प्रथा है। विवाहित जीवनमें सयम रखनेको उनसे कोई नही कहता। माता-पिता तो अपने नाती-पोते देखनेको उत्सुक रहते है। बेचारी बाल-पत्नियोसे उनके आसपासवाले यही आशा करते है कि जितनी जल्दी हो वे पुत्रवती हो जाये। ऐसे वातावरणमे सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोंसे तो कठिनाई और बढ़ेगी ही। जिन बेचारी लडकियोसे यह आशा की जाती है कि वे अपने पतियोंकी इच्छा-पूर्ति करेंगी, उन्हे अब यह और सिखाया जायेगा कि वे बच्चे पैदा होनेकी इच्छा तो न करे पर विषय-भोग किये जाये, इसीमें उनका भला है। और इस दुहरे उद्देश्यकी सिद्धिके लिए उन्हे सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोंका सहारा लेना होगा!!!

मै तो विवाहित बहनोके लिए इस शिक्षाको बहुत घातक समझता हूँ। मै यह नही मानता कि पुरुषकी ही तरह स्त्रीकी काम-वासना भी अदम्य होती है। मेरी समझमे, पुरुषकी अपेक्षा स्त्रीके लिए आत्म-संयम करना ज्यादा आसान है। हमारे देशमें जरूरत बस इसी बातकी है कि स्त्री अपने पति तकसे 'ना' कह सके, ऐसी सुशिक्षा स्त्रियोको मिलनी चाहिए। स्त्रियोको हमे यह सिखा देना चाहिए कि अपने पतियोके हाथकी मात्र कठपुतली या साधन बन जाना उनके कर्त्तव्यका अग नही है। कर्त्तव्यकी ही तरह स्त्रीके अधिकार भी है। जो लोग सीताको रामकी आज्ञाकारी दासीके रूपमें ही देखते है वे इस बातको महसूस नही करते कि उनमे स्वाधीनताकी भावना कितनी थी और राम हरएक बातमे उनका कितना खयाल रखते थे। भारतकी स्त्रियोसे सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन इख्तियार करने के लिए कहना तो बिलकुल उल्टी बात है। सबसे पहले तो उन्हें मानसिक दासतासे मुक्त करना चाहिए, उन्हे अपने शरीरकी पवित्रताकी शिक्षा देकर राष्ट्र और मानवताकी सेवामें कितना गौरव है इस बातकी शिक्षा देनी चाहिए। यह सोच लेना ठीक नही है कि भारतकी स्त्रियोका तो उद्धार ही नहीं हो सकता, और इसलिए सन्तानोत्पत्तिमें रुकावट डालकर अपने

रहे-सहे स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए उन्हे सिर्फ सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन ही सिखा देने चाहिए।

जो बहनें सचमुच उन स्त्रियोके दु.खसे दु.खी हैं, जिन्हे इच्छा हो या न हो फिर भी बच्चोके झमेलेमें पडना पड़ता है, उन्हे अधीर नही होना चाहिए। वे जो-कुछ चाहती है वह एकदम तो सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोके पक्षमें आन्दोलन चलानेसे भी नही होनेवाला है। हरएक उपायके लिए सवाल तो शिक्षा देनेका ही है। इसलिए मेरा कहना यही है कि वह शिक्षा सही ढगकी हो।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २-५-१९३६

४१८. पत्र : एम० मुजीबको

सेगाँव, वर्धाके निकट
२ मई, १९३६

प्रिय मुजीब[1],

तुमने मुझे जो-कुछ लिखा वह लिखकर बिलकुल ठीक किया। मैंने जो-कुछ किया और जो-कुछ हुआ, उसका पूरा ब्योरा तुम्हे आकिलने दे दिया होगा। चूँकि तुम्हारा पत्र[2] इतना अच्छा और इतना महत्त्वपूर्ण है, इसलिए मेरा विचार है कि बिना तुम्हारा नाम दिये उसे 'हरिजन' में प्रकाशित करूँ और उसका जवाब भी लिखूँ।[3] आशा है तुम मेरा उत्तर देखोगे। अगर उससे तुम्हें सन्तोष न हो तो मुझे फिर पत्र लिखनेमें हिचकना नही। अगर दे सकता हूँ तो मैं तुम्हे पूरा सन्तोष देना चाहता हूँ। तुम्हारे पत्रमे कुछ हिस्से है जिनमे तुमने गलतियाँ की है।

जिनको जानता हूँ उन सबको मेरा प्यार।

तुम्हारा,
बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० १४६४) से; सौजन्य : एम० मुजीब

१. जामिया मिलिया इस्लामियावाले।

२. देखिए परिशिष्ट २।

३. देखिए "हिन्दी या हिन्दुस्तानी", ९-५-१९३६ और १६-५-१९३६।

४१९. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

२ मई, १९३६

चि० अम्बुजम्,

मद्रासमे तुम्हारा पत्र मिला। मैं इस महीनेकी आठ तारीखको मद्राससे होता हुआ बंगलोर रवाना होनेकी आशा करता हूँ। मै नौ तारीखकी शामको मद्राससे गुजरूँगा। सम्भव हो, तो तुम मुझे स्टेशन पर मिल सकती हो। बा, महादेव, वही लड़के[1] [और] कुमारप्पा निश्चय ही मेरे साथ होगे। मैं सरदारकी खातिर नन्दी हिल जा रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०६) से; सौजन्य : एस० अम्बुजम्माल

४२०. पत्र : वियोगी हरिको

२ मई, १९३६

भाई वियोगी हरि,

यहा 'हरिजन सेवक'का काम तो है ही, हरिजनोकी अन्य सेवा तो हर जगह है। अब तीसरा पैदा हुआ है। जमनालालजीकी इच्छासे हिंदी सम्मेलनने हिंदी प्रचारका कार्य एक विशेष समितिको सिपुर्द किया है जो वर्धामें केंद्रित होकर कार्य करेगी। उस समितिके तुमको मंत्री बनानेकी हम सबकी इच्छा है। बाबा राघवदास[2] तो है। वे गोरखपुर नही छोड़ सकते है? क्या तुमको यह कार्य प्रिय है, क्या वर्धा आना पसद करोगे? क्या वहाका हरिजन शिक्षाका काम वगैरह रजके छूट सकता है? यदि नही तो तुमारे ध्यानमें ऐसा कोई शख्स है जो हिंदी प्रेमी है और जो मंत्रीका कार्य कर सकता है और वर्धामें रह सकता है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९९) से।

१. कान्ति गांधी और कनु गांधी।

२. संयुक्त प्रान्तके एक प्रसिद्ध समाजसेवक।

४२१. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२ मई, १९३६

बापा,

तुम्हारी 'गश्ती चिट्ठी' जो तिरुचेंगोडुके हरिजनोंके बारेमें है, मैंने ध्यानसे पढ़ी। ऐसे मामलेमें हम क्या करें? जो पैसा दिया जाता है वह एक तरहसे धर्म छोड़नेके बदलेमें दिये गये दाम होते हैं। एक तरहसे नहीं भी होते। किन्तु "पेट करावे वेठ, पेट वाजो वजडावे"।[1] इसका उपाय तो एक ही है कि हम उनका दुःख दूर करें। किन्तु तिरुचेंगोडुके 'हमारे भाई' पैसेके मोहमें फँसे हैं और इसलिए हम निरुपाय हैं। यदि हम अधिक पैसा दे सकें तो वे हमारे साथ हो जायेंगे, किन्तु यह तो नुकसानका सौदा है। "तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि"।[2] फिर भी राजाजीको स्थानीय अनुभव है। वे जैसा कहें सो करना ठीक होगा। तुमने उन्हें लिखा ही है, इसलिए मैं उन्हें कुछ नहीं लिखता। जब वे वर्धामें थे, तबतक तुम्हारा पत्र मुझे नहीं मिला था।

अमतुस्सलामके प्रश्नको किस तरह हल करना है, सो मैं लिख चुका हूँ।[3]

वियोगी हरिके नाम लिखा मेरा पत्र पढ़कर उन्हें देने योग्य लगे तो दे देना। अर्थात् यदि तुम उन्हें किसी भी तरह न छोड़ सको तो पत्र देनेका कोई अर्थ नहीं है। यदि वहाँ उनका पूरा-पूरा उपयोग नहीं हो सकता तो यहाँ सम्भव हो जायेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५५) से।

१. पेट वेगार करवाता है, पेट बाजा बजवाता है, अर्थात् पेटकी खातिर क्या नहीं करना पड़ता।

२. भगवद्गीता, २, २७।

३. देखिए "पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको", २९/३०-४-१९३६।

४२२. पत्र : द्रौपदी शर्माको

२ मई, १९३६

चि० द्रौपदी,

तुमको खत लिखनेके बाद शर्माका खत मुझको भी मिला था। रामदासको भेजा है। [और] रामदासको लिखा है तुमको भेज देवे। हा मैं सरदारको लेकर बेंगलुर मइसुर ८ तारीखको जाउंगा। अब मैं एक देहातमें रहने आ गया हूँ। अमतुल सलाम लिखा करती होगी।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९२-३ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

४२३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
३ मई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

मेरे दायें हाथको आराम चाहिए। तुम शायद सलग्न पत्र[1] पढना चाहोगे। इसे लौटानेकी आवश्यकता नही।

खुर्शेदने मुझे कमला-स्मारकके विषयमें अपने नये सुझावके बारेमे लिखा है। अगर यह अस्पतालका अनुकल्प है तो मेरे विचारमे यह अस्वीकार्य है। और यह कार्य तीन लाख रुपयेमें पूरा नही हो सकता।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. सम्भवत: ३० अप्रैल, १९३६ को अगाथा हैरिसन को भेजे गये पत्रकी प्रति; देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", १२-५-१९३६ भी।

४२४. पत्र : जमनालाल बजाजको

३ मई, १९३६

चि० जमनालाल,

श्रीमन्नारायणके साथ बातें की। मुझे वह भा गया है। उसकी काव्यशक्ति अच्छी है। अभी उसे बढ़नेकी हौस है। कुटुम्ब अच्छा मालूम होता है।

वह समाधि देखी। अब उसमें क्या काम हो रहा है, यही नहीं समझ पाया। जाननेकी इच्छा है सही।

समाधिवाले बगीचेकी देख-रेख धर्माधिकारी करे। उसका यहाँ मन लग गया है, ऐसा जान पड़ता है। उससे सभी लोग सन्तुष्ट हैं; अपने काममें लगा रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७८) से।

४२५. भाषण: अ० भा० ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें[1]

वर्धा
३ मई, १९३६[2]

जब मैं मगनवाड़ी आ रहा था तब मैंने रविवारका बाजार जो हर आठवें दिन लगता है, देखा। उसमें तो कच्चा माल और कच्चे मालकी बनी हुई चीजें काफी आती हैं। इस प्रदर्शनीमें ये चीजें बहुत ही कम मिकदारमें हैं। इससे मुझे लगा कि इस बाजारके मुकाबलेमें मेरी प्रदर्शनी क्या है? इन दोनोंमें मुख्य अन्तर तो यह है कि गाँवों और शहरोंके लोगोंकी सेवाकी ही दृष्टिसे इस प्रदर्शनीका आयोजन किया गया है, और बाजार व्यापारकी मंडी है, जहाँ गाँवके लोगोंका शोषण होता है। उन बेचारोंको अपना माल सस्ते-से-सस्ते भावपर, कभी-कभी तो लागतसे भी कम भावपर बेचना पड़ता है। इस प्रदर्शनीमें बेचने-खरीदने जैसा तो शायद ही कुछ हो। इस प्रदर्शनीका प्रयत्न वर्धावासियोंको यह समझानेका है कि अपने आसपासके गाँवोंके प्रति उनका क्या धर्म है और गाँववालोंको यह सिखानेका है कि वे

१. मगनवाड़ीमें आयोजित इस प्रदर्शनीका उद्घाटन गांधीजीने किया था। उस अवसरपर दिये गये उनके इस भाषणको महादेव देसाई लिखित 'वीकली लेटर' में से लिया गया है।

२. बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-५-१९३६ के अनुसार।

हर सूरतसे अपनी स्थिति किस प्रकार सुधार सकते हैं। प्रदर्शनी यह सिखाती है कि गाँव किस तरह स्वच्छ रखना चाहिए, गाँववालोंको क्या खाना चाहिए और अपने ग्रामोद्योगोको किस तरह सुधारना चाहिए ताकि जितना वे आज कमाते है उससे कुछ अधिक कमाने लगे। और शहरके लोग गाँववालोको किस-किस तरह चूसते है, और अगर वे उनका माल खरीदे तो उनकी किस तरह उत्तम सेवा कर सकते है, इन सब बातोंपर यह प्रदर्शनी शहरके लोगोका ध्यान बलपूर्वक आकर्षित करेगी। लखनऊकी प्रदर्शनीने हमें यह दिखा दिया कि गाँवोके कारीगरोके अन्दर आज भी कैसा अद्भुत हुनर है। यहाँ मै आप लोगोको एक बात बताऊँ कि यहाँ हमने प्रवेश-टिकट नही लगाया है। लखनऊमे यह बात नही थी। अखबारोमें ऐसी खबरें आई है कि वहाँकी प्रदर्शनीको भारी घाटा हुआ है; पर वे खबरे झूठी है। टिकटोकी बिक्रीसे २५,००० रुपयेसे ऊपर ही रकम आई, और दूकानोका किराया आया वह अलग। इसलिए यह बिलकुल सम्भव है कि थोडा-सा मुनाफा भी हुआ हो। लखनऊमें जैसी प्रदर्शनी हुई थी वैसी प्रदर्शनी वहाँके लोगोको शायद बरसो फिर देखनेको न मिले। कुम्भका मेला भले बारह बरस बाद आये, पर उसका एक नियम तो है। लेकिन कांग्रेस [अधिवेशन] और प्रदर्शनी तो शायद ही फिर उस जगह हो, और हो भी तो इसका कोई निश्चित अन्तराल नही। इसका खास कारण तो यह है, जैसी कि मै आशा करता हूँ, कि अब कांग्रेस [अधिवेशन] और प्रदर्शनीके लिए बड़े-बडे शहर नही, बल्कि छोटे-छोटे कस्बे ही चुने जायेंगे। किन्तु यहाँकी जैसी स्थानीय प्रदर्शनियाँ तो हर साल बिना किसी खर्चेके सजाकर इनके द्वारा शिक्षा दी जा सकती है। गाँवके तेलीको ही ले, आज उसकी हालत गिरती ही चली जा रही है। सस्ता और नकली माल मिलाकर तेलको वह बिगाड रहा है। यहाँ उसे यह सीखनेको मिलेगा कि बिना मिलावटका बिलकुल शुद्ध तेल घानीसे काढनेमें क्या फायदा है। कागज बनानेवालेको यहाँ यह सीखनेको मिलेगा कि वह किस तरह मजबूत और साफ कागज बना सकता है। हम आगे यह भी बतला सकेंगे कि इन क्रियाओमें हमें क्या-क्या सुधार करने चाहिए। मुझे यह मालूम है कि इस साल हम अपने पड़ोसके लोगों और गाँवोपर कम ही असर डाल सके है। पर इससे मै निराश नही होता। हमें तो आगे बढनेका प्रयत्न करते ही जाना है। आप लोग जो यहाँ आये है, गाँवोंमे ग्रामोद्योगकी इन चीजोका प्रचार करनेवाले एजेंट बन जायें और इस प्रदर्शनीमें लोगोंको खींच लायें। मगर आज दुख तो यह है कि शहरके लोगोकी गाँववालोंके प्रति लापरवाही बढ़ती ही जाती है। वे यह भी मानते है कि निकट भविष्यमें गाँव नाशको प्राप्त होनेवाले है। अगर हम मिलका बना माल खरीदेंगे और हाथका नही खरीदेंगे तो अवश्य ऐसा होनेको है। इसलिए जो लोग यहाँ आज इकट्ठे हुए है उन्हें ग्रामवृत्तिके सन्देशका प्रचार करनेके लिए बाहर निकलना होगा।

कारखाना कुछ सौ लोगोंको जीविका देता है। तेलकी मिल खडी करके रोज सैकड़ों मन तेल आप निकाल सकते है, पर हजारो तेलवालोको बेकार करके।

इस शक्तिको मैं संहारक शक्ति कहता हूँ। रचनात्मक शक्ति तो करोड़ों हाथोंसे की जानेवाली श्रमकी शक्ति है; सर्वोदय, सर्वकल्याण इसी रचनात्मक शक्तिसे हो सकता है।[1] यंत्रोंकी शक्तिसे ढेरो माल तैयार किया जाये, और कल-कारखाने सरकारी अधिकारमें हों, तब भी उससे कुछ हासिल होनेका नही।

किन्तु पूछा जाता है कि यन्त्र-शक्तिका उपयोग करके लाखो-करोडो लोगोका श्रम बचाकर उन्हे बौद्धिक विकास साधनेका अवकाश क्यो न दिया जाये? एक हदतक ही अवकाश लाभप्रद हो सकता है और वह जरूरी है। बाकी, शारीरिक श्रम करके मनुष्य पसीनेकी कमाई खाये ऐसा ईश्वरीय नियम है। और मुझे तो यदि हमारे अन्दर अपनी जरूरतकी चीजे, यहाँतक कि खाने-पीने तककी चीजे जादूकी लकड़ी फेर देनेसे पैदा करनेकी शक्ति आ जाये तो उस शक्तिसे डर ही लगेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-५-१९३६

४२६. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
४ मई, १९३६

प्रिय पगली,

चूँकि महादेव यही है और तुम्हारा पत्र लाया है, इसलिए मुझे यह पत्र उसके हाथ ही भेज देना चाहिए। मगनवाडीमें तुम्हारी डाक आम तौरपर शामको आती है। इसलिए मैं तुम्हारे पत्रोका उत्तर उसी दिन नही दे पाता। सेगाँवमें तुम्हारी डाक काफी रात गये आती है, यह भी वैसी ही बात हुई। अत. आनेवाले पत्रोंमें तो कोई देरीकी बात है ही नही।

तुम्हारा कहना ठीक है। 'पागलो'से सख्त गरमीमें नही मिलना चाहिए। अगले साल अगर तुमने हमें शिमला बुलाया तो हम फरवरी या शुरू मार्चमें भेंट करेंगे!!!

लखनऊवाला तुम्हारा पार्सल अबतक तुम्हारे पास पहुँच जाना चाहिए।

---

१. बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-५-१९३६ की रिपोर्ट में यहाँ लिखा है: "आवश्यकताकी वस्तुओंका यंत्र-शक्तिसे उत्पादन करनेके फलस्वरूप दसियों हजार व्यक्ति बेरोजगार कर देना और लम्बे समयका अवकाश देना मेरी रायमें आसुरी तरीका है, जबकि मानव-श्रम द्वारा सहयोग करके उत्पादन करनेका प्राचीन तरीका दैवी तरीका था, अर्थात् मानव-जातिको विकासके लिए उन्मुख करनेवाला था। प्राचीन तरीकेका अपना प्रभाव होता था। अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ बुराईको दूर करनेका प्रयत्न कर रहा है और प्रदर्शनियाँ इस उद्देश्यकी पूर्तिका एक उपाय हैं।"

जिन सब भौतिक सुखोंकी मुझे जरूरत थी लगभग वे सब मुझे प्राप्त हैं। जो मेरे पास नहीं हैं, उनका अभाव मुझे अखरता नहीं। और यदि मैं चाहूँ तो उन्हें प्राप्त कर सकता हूँ।

कु[मारप्पा][1] के बारेमें तुमने जो सलाह दी है उसका निश्चय पहले ही कर लिया गया था। वह मेरे संग नन्दी जा रहा है और मुझे उम्मीद है कि बंगलोरमें मैं [उसके] टासिल्स कटवा दूँगा।

तुम इस बातसे आश्वस्त रहो कि मेरा वक्त सेगाँवमें बड़े मजेमें गुजर रहा है। इसलिए तुम कोई चिन्ता न करना।

तुम सबको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२५) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६८८१ से भी।

४२७. पत्र: प्रभाशंकर पट्टणीको[2]

डाकखाना वर्धा
४ मई, १९३६

सुज्ञ भाईश्री,

क्या आपके यहाँ गोपनाथ[3] या ऐसा ही कोई ठंडी आबहवाका स्थान है? विनोबाके भाई बालकृष्णसे आप आश्रममें मिले ही हैं। वे विद्वान हैं, संगीत जानते हैं, किन्तु उनका शरीर बिलकुल बिगड गया है, इसीलिए वे एकान्तप्रिय हो गये हैं। आनाजाना सहन नही कर सकते। चाहता हूँ गोपनाथ अथवा स्थानका जो नाम हो वहाँ उन्हें एक कोठरी मिल सके। भाई जीवनलाल[4] को भी मैंने लिखा है कि यदि चोरवाडमें सम्भव हो तो घरकी व्यवस्था करे।

मै सेगाँवमें हूँ और महादेव बम्बईमे है। मै सरदारको लेकर ८ तारीखको नन्दी दुर्ग जा रहा हूँ। इसलिए यदि यह पत्र आपको समयपर मिल जाये तो कृपया तारसे जवाब दीजिए।

आशा है आप बिलकुल ठीक होंगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[पुनश्च:]

कृपया डाक वर्धाके पतेपर भेजें।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९४७) से। सी० डब्ल्यू० ३२६४ से भी; सौजन्य: महेश पट्टणी

१. जे० सी० कुमारप्पा।
२. भावनगर राज्यके दीवान।
३. भावनगर राज्यमें समुद्रके किनारेका स्वास्थ्यवर्धक स्थान।
४. जीवनलाल मोतीचन्द शाह, जिन्होंने गांधीजीके खादी तथा हरिजन कल्याण-कार्यमें उनको आर्थिक सहायता दी थी।

४२८. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
५ मई, १९३६

प्रिय पगली,

अब तक तो तुम्हे सेगाँवसे एक से ज्यादा पत्र तो निश्चय ही मिल गये होगे। मुझे पूरा यकीन है कि एक-दो दिन में तुम्हे वह स्थान और वहाँका जीवन अच्छा लगने लगेगा। बा मेरे साथ कल आई है। मै पूरे रास्ते पैदल ही चला। इसमे मुझे पूरे दो घटे लगे। लेकिन इसकी वजह यह रही कि हम रास्ता भूल गये थे। हम सब रास्तेसे अपरिचित थे और कोई मार्ग बतलानेवाला हमारे सग था नही। और मेरा मौन था। मै पूरा रास्ता पौने दो घटेमे आरामसे तय कर सकता हूँ। इस पैदल सफरसे मुझे कोई तकलीफ नही हुई और मै शामकी सैरके लिए ताजा था। महादेव और लीलावती पैदल चलकर रात साढे आठ बजे पहुँचे और जहाँ काम चल रहा है वही जमीन पर सो गये। हम सब वही सोते हैं, हमारे चारो ओर दोहरी खाइयाँ है और उनके किनारे-किनारे खोदकर निकाली हुई मिट्टी की दीवार जैसी है। यहाँ जो सब्जियाँ उगती है हम वही खाते हैं। इस प्रकार हमे तरह-तरहकी सब्जियाँ तो नही मिल पाती लेकिन यह सोचकर कि हम यही पर पैदा होनेवाली सब्जियाँ खा रहे है, हमे राहत तो मिलती है। यदि यह प्रतिवन्ध जारी रहा तो इससे दूसरी सब्जियोकी खेती करनेकी प्रेरणा मिलेगी। इतना तो रहा सेगाँवके वारेमें।

अव लखनऊसे आनेवाले पार्सलके वारेमें बताता हूँ। उस दिन तो तुमने यह लिखा था कि तुम्हे सूचना मिली है कि कुमारी एलाने ६०० रुपयेसे ऊपरका पार्सल भेज दिया है। तुम्हे यह भी आशा थी कि तुमने जो खेस भेजा था वह इस पार्सलमें नही होगा। वह पार्सल कहाँ है? पतोके साथ-साथ आदेश भी यथोचित रूपसे दे दिये गये थे। लेकिन [उस समय] सव-कुछ अस्तव्यस्त था। हर आदमीने वहुत ज्यादा काम किया था। पार्सल शिमला चला गया, इसका मुझे दुःख है। मै समझता हूँ कि गलत पते पर चीजे भेजनेसे कितनी दिक्कत होती है। इस वारेमें मैंने खुर्शेदसे एकसे ज्यादा वार कह दिया था, और फिर जेराजाणी[1] से भी कह दिया था। देखें, आखिर क्या होता है। पार्सल प्राप्त करनेसे पहले तुम अपना चेक मत भेजना। वैसे, कुतूहलवश मै यह जानना चाहूँगा कि गलत पतेके कारण तुम्हे कितने पैसे ज्यादा देने पडे।

१. विट्ठलदास जेराजाणी, एक खादी कार्यकर्ता।

यदि जालंधर [म्युनिसिपल कमेटी] के लिए तुम्हारे नामांकनकी बात उठे तो मैं मानता हूँ कि तुम्हे उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। और मैं मान रहा हूँ कि कालेजका कार्य-भार तुमने सँभाल लिया है। ऐसी चीजें हँसीमें नहीं टाली जा सकती।

कु[मारप्पा] के बारेमे भी तुम्हारा कहना ठीक है। वह नन्दी हिल आ रहे हैं। मैं देखूंगा कि क्या किया जा सकता है। जब तक मुझे इस बातका यकीन नही हो जायेगा कि आपरेशन कराना जरूरी है और सर्जन अपने काममें माहिर है तब तक मैं आपरेशन नही होने दूंगा। भारतन भी सम्भवत: कोडाइकनाल जायेगा।

मेरे रवाना होनेकी तारीख ८ मई है, याद रखना। मैं सेगाँवसे ८ की सुबह रवाना होऊँगा।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२६) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६८८२ से भी।

४२९. पत्र : जमनालाल बजाजको

५ [मई][1], १९३६

चि० जमनालाल,

इसके साथ अकरते[2] का पत्र है। यह समझना मुश्किल है कि सच बात क्या है। बुवा[3] का प्रचार करते हुए संकोच करना आवश्यक मानता हूँ। उनसे परिचित हो जाना ठीक है। अधिक अनुभवके बिना उनका सार्वजनिक उपयोग करना अनुचित मानता हूँ। समय मिलने पर इस विषयकी तफसीलमें जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७९) से।

१. पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १७९ के आधार पर।
२. जे० एस० अकरते, नागपुरके एक वकील।
३. एक साधु।

४३०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

६ मई, १९३६

चि० प्रेमा,

अब तू पत्र लिख सकती है। हम ८ तारीखको नन्दी दुर्ग जा रहे हैं।

मालूम होता है तूने अच्छे अनुभव लिये हैं। अपने मनमें शका हो तो भी हम दूसरोको कांग्रेसके सदस्यता-पत्रपर हस्ताक्षर करनेसे रोक नही सकते। लोग दोप छिपाकर (कांग्रेसमें) शरीक तो होगे ही। अन्तमे अच्छे आदमी अधिक होगे तो सब कुशल ही होगा।

महाराष्ट्रीय प्रोफेसरके पत्रकी बात बिलकुल सच्ची है।[1] मगर उनकी कल्पना सर्वथा असत्य है। लडकियोके कधे पर हाथ रखकर मै अपनी विपय-वृत्तिका पोषण करता था, ऐसा उस लेखकके पत्रका अर्थ किया जा सकता है। उसका कहना तो भिन्न ही था।

परन्तु बात यह है कि लडकियोके कधे पर हाथ रखना मैने बन्द किया उसके साथ मेरी विपय-वासनाका कोई सम्बन्ध नही। उसकी उत्पत्तिका कारण केवल बेकार पड़े-पड़े खाते रहनेमे था। मुझे वीर्य-पात हुआ। परन्तु मै जाग्रत था और मन अंकुशमें था। मै कारण समझ गया और तबसे डाक्टरी आराम लेना मैने बन्द कर दिया। और अब तो मेरी स्थिति जैसी थी उससे अच्छी कही जा सकती है। इस बारेमें तुझे अधिक पूछना हो तो पूछ सकती है। चूंकि तुझसे मैने बडी आशाएँ रखी हैं इसलिए तुझे मेरे विषयमे जो-कुछ जानना हो वह मुझसे जान ले।

इधर-हालमे मैने जो लेख लिखे हैं, वे सचमुच विचार करने लायक है। यदि तू उन्हे समझ गई हो तो ब्रह्मचर्यका मार्ग सरल हो जाता है। जननेन्द्रिय विपय-भोगके लिए हरगिज नही है, यह यदि स्पष्ट हो जाये तो सारी दृष्टि बदल जायेगी न? जैसे कोई रास्तेमे क्षय-रोगीके खूनके बलगमको मणि मानकर उसे हथियानेको ललचाये और वह बलगम है ऐसा जानकर शान्त हो जाये, वैसी ही बात जननेन्द्रियके उपयोगके विपयमे है। बात यह है कि ब्रह्मचर्यकी मान्यता इतनी दृढ या स्पष्ट कभी थी ही नही। और अब तो नई शिक्षा इसकी निन्दा करती है, मर्यादित विपय-सेवनको सदगुण मानती है, और उसे आवश्यक बताती है। इन सब बातों पर विचार करना।

१. यह पत्र पूनाके एक प्रोफेसरने गांधीजीके लेख "प्रभु कृपाके बिना कुछ नहीं" (देखिए पृ० ३२४-६) के विषयमें लिखा था।

बहनोंका[1] जो अनुभव तूने भेजा है वह सुन्दर कहा जायेगा।
अभी तो इतना काफी है।
कदाचित् लीलावती तेरे पास आ जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३८०)[सी०] सी० डब्ल्यू० ६८१८ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कटक

४३१. पत्र : अमतुस्सलामको

६ मई, १९३६

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला। तुमको क्या लिखूं? डाक्टर अन्सारीका तार आया है।[2] वे कहे ऐसा करो। मैं तो तुमको बंगलोर ले जाना चाहता था। अब तो देखें क्या होता है? तुम्हारे खामोशीसे दवा करना है। पहली बात है कि अच्छी हो जाओ। बादमें देखा जायेगा क्या करना चाहिए।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३४) से।

४३२. भाषण : खादी-यात्रामें[3]

पवनार
[६ मई, १९३६][4]

गांधीजीने कहा, मैं यह जानता हूँ कि जो सुन्दर प्रभाव विनोबाके काव्यपूर्ण व्याख्यानने डाला है उसे दूसरा व्याख्यान देकर बिगाड़ना नहीं चाहिए। पर मुझे तो सिर्फ यह एक ही बात कहनी है कि आप लोगोंमें जो श्रद्धा और उत्साह है उसे मैं अगले वर्ष इस एक मोटी कसौटी पर कसकर माप लेना चाहता हूँ। उन्होंने कहा :

विनोबाकी श्रद्धाके सौवें भागसे भी आप लोग खादीके मन्त्रकी साधना करें तो मुझे सन्तोष हो जायेगा। हमें तो गरीबोंको यह बताना है कि कपासकी कीमतपर

१. प्रेमाबहनको सासवडकी दो विवाहित बहनोंने बताया था कि वे विवाहके बाद भी बरसों ब्रह्मचर्यका पालन करती रहीं।

२. बापू अमतुस्सलामको अपने साथ बंगलोर ले जाना चाहते थे। लेकिन डा० अन्सारीने अमतुस्सलामकी तबीयत देखी और बापूको तार दिया कि वे खुद अमतुस्सलामका इलाज करेंगे।

३. महादेव देसाई अपने 'वीकली लेटर'-में, जहाँ से यह भाषण लिया गया है, लिखते हैं कि 'यात्रा' "मराठी भाषी मध्य-प्रान्तमें खादीमें विश्वास रखने वालोंका एक वार्षिक सम्मेलन था"।

४. गांधीजी पवनार ६ मई, १९३६ को पहुँचे थे।

खादी मिल सकती है, अर्थात् जो कपासको पैदा करते हैं उन्हें वह मुफ्त पड़ सकती है। और इसके लिए हमें हाथकी चरखीका प्रचार करना चाहिए, इससे रुईका तंतु और बिनौलेकी शक्ति सुरक्षित रहती है। हम अगर कहें तो जमनालालजी खुशीसे अपनी जिनिंग फैक्टरी बन्द कर देंगे। पर उसका कुछ मूल्य नहीं। अगर आप सब लोग कपासको हाथकी चरखीसे ओटने लग जायें तो वह आप ही बन्द हो जायेगी।' विनोवाने दीपककी जो उपमा दी है वह सचमुच सुन्दर है। प्रकाशके आगे जैसे अंधकार नहीं ठहरता, उसी तरह खादीके आगे गैर-खादी खड़ी नहीं रह सकती। खादीमें अगर आप लोगोंकी ज्ञानपूर्वक भक्ति और सतत निष्ठा बनी रहेगी तो खादी अवश्य संक्रामक बन जायेगी। और ऐसा करके ही आप कूपमंडूकतासे उसे निकाल सकते हैं, और अपने आसपासके लोगोंमें उसे फैला सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-५-१९३६

४३३. तार: जी० रामचन्द्रनको

७ मई, १९३६

जी० रामचन्द्रन,[1]
थेकड़
त्रिवेन्द्रम्

आशा है कि रामेश्वरी नेहरू[2] के विवेकपूर्ण मार्गदर्शनमें सम्मेलनको सफलता मिलेगी और वह मन्दिर-प्रवेश तथा अन्य प्रश्न इस प्रकार सुलझा सकेगा जिससे कि हिन्दू-धर्म अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्त होकर शुद्ध बन सके।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे. प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य. प्यारेलाल

१. हरिजन सेवक संघ, केरलके सचिव।
२. हरिजन सेवक संघकी अध्यक्ष, जिन्होंने सर्व-केरलीय मन्दिर-प्रवेश सम्मेलनकी अध्यक्षता की थी।

४३४. पत्र : मीराबहनको

७ मई, १९३६

चि० मीरा,

मैं कल ८ तारीखको रवाना हो रहा हूँ। अमतुस्सलाम नहीं पहुँची है। डॉ० अन्सारीने उसे रोक लिया है। लीलावती महादेवके साथ बम्बई चली गई है। वह शायद तुम्हारे पास सेगाँवमें मईके अन्तिम सप्ताहमें या जूनके आरम्भमें पहुँचे। मैं समझता हूँ कि तुम्हें इसपर आपत्ति नहीं होगी कि वहाँ आकर वह कामको समझना शुरू करे और लोगोंसे जान-पहचान कर ले। बलवन्तसिंह भी तुम्हारे पास एक महीना रह सकता है। अगर वह आता है तो उससे तुम्हें मदद ही मिलेगी। मैंने आज सुबह उससे कहा है। इस समय तुम जो कार्य कर रही हो वह तुम्हारे लिए बहुत ज्यादा है। फिर भी, मैंने जो नियुक्तियाँ की हैं, यदि तुम उनसे सहमत न हो तो मुझे बता देना। मैंने बलवन्तसिंहका नाम इसलिए सुझाया है क्योंकि तुम मुन्नालालको[1] लेना चाहती थी। रही बात लीलावतीकी, उसे लेनेके लिए तो तुम तैयार ही थी। वैसे मैं जानता हूँ कि वह एक अलग बात थी। यदि वह पहले ही आ जाये तो यह एक उचित अवसर है। वैसे उसके आनेमें मुझे सन्देह है। वह तो महज मेरा साथ चाहती है। लेकिन तुम मुझे अपनी इच्छाएँ साफ-साफ बता देना और उन इच्छाओंकी पूर्ति की जायेगी।

धुरमुस आज सुबह तुम्हारे पास पहुँच गये होंगे। उन्हें हर हालतमें रविवारको वापस लौटाना है।

सैंडिलोकी बात मैं समझता हूँ।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

कल मैं सारे रास्ते पैदल ही चला। दृश्यावली अत्यन्त सुन्दर थी।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७९८ से भी।

१. मुन्नालाल जी० शाह।

४३५. पत्र : एन० आर० मलकानीको

७ मई, १९३६

प्रिय मलकानी,

मैं तुम्हारी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि अगर रुक्मिणीकी पसन्द या नापसन्दकी वजहसे लोगोंको बस्तीसे बाहर निकालना पड़े तो अमतुस्सलामके अलावा और बहुत-से लोगोको भी बस्ती छोडनी पडेगी। मैंने ब्प्पासे भी यह बात कही है। उन्होंने तो तुम्हारी और स्वय अमतुस्सलामकी शान्तिके लिए यह सुझाव दिया है कि अमतुस्सलाम बस्ती छोड दे। लेकिन मुझे मालूम है कि तुम ऐसी शान्ति नही चाहते। रुक्मिणीकी हर बातको सहन करना, लेकिन उसकी बात न मानना तुम्हारी जबर्दस्त कसौटी है। यदि अमतुस्सलामको अपनी सेहतके लिए बस्ती छोड़नी पड़े तो छोड देनी चाहिए। अब मेरे पास डॉ० अन्सारीका तार आया है कि उन्होंने अमतुस्सलामको रोक लिया है। अब मैं उनके उस पत्रकी राह देख रहा हूँ जिसे लिखनेका उन्होंने वायदा किया है।

मेरी सहानुभूति पूरी तरह तुम्हारे साथ है।

इसके साथ अमतुस्सलाम और रुक्मिणीके लिए पत्र भी है। यदि तुम्हे पसन्द न आये तो तुम रुक्मिणीको पत्र मत देना।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२१) से।

४३६. पत्र : रुक्मिणी मलकानीको

७ मई, १९३६

चि० रुक्मिणी,

क्या कर रही है? अमतुल सलाम जैसी भली लडकीने तुमारा क्या बिगाडा है। मलकानी जैसे पतिको सताना तुमारे लिये अच्छा नही है। तुमने मुझे क्या वचन दीया है? शात हो जाओ। मलकानीके काममें मदद करो, सबके साथ प्रेमसे रहो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२०) से।

४३७. पत्र : अमतुस्सलामको

७ मई, १९३६

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

तुमको खत नही लिखे गये, क्योकि तुम्हारे आनेकी इन्तजारीमे रहा। जब डाक्टर साहब कहते है (कि) तुम्हारे पहाड़ पर जानेकी जरूरत ही नही है, तो खामखा क्यो जाना? भले वही रहो। अब समझा कि ठक्करबापा कंकास (झगडा) मिटानेके लिए ही कहते थे कि तुम्हारा कुछ काम नही। मलकानी तो साफ-साफ कहते है कि उनको तुम्हारी दरकार है। इसलिए अब तो तुम्हारे हरिजन-वासमें ही रहना है। ढाके[1] जानेकी कोई जरूरत इस वक्त नही है, आगे जो-कुछ हो, पटियाला जा कर क्या किया? अब तो हरिजन लडकीका सवाल उठता नही है।...[2] के कहनेका तो डर नही। वह तो दिल चाहे वैसा बोले। दीवानी है। मैंने उसको लिखा तो है। मै बापाको लिख रहा हूँ। मेरे साथ कान्ति और कनु है। महादेव और ....[3] पूना होकर आयेंगे। कुमारप्पा बादमें आयेंगे।[4]

बापूकी दुआ

बापूके पत्र–८: बीबी अमतुस्सलामके नाम, पृ० ७०-१

४३८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

७ मई, १९३६

भाई घनश्यामदास,

महादेव पुना गया है। चद्रशकर[5] बीमार है। पुनासे बेंगलोर मिलेगा। मैं कल यहांसे बंगलोर जाता हूं। नदीदुर्ग पर आधा महीना रहूंगा। उसके बाद बैंगलूरमें वल्लभभाईके लिये वहां जाता हूं।

१. दिल्लीके समीप एक हरिजन गाँव।

२ और ३. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिये गये हैं।

४. मूल पत्र उर्दू लिपिमें था जिसे पुस्तकमें देवनागरीमें छापा गया है।

५. चन्द्रशंकर प्राणशंकर शुक्ल, *हरिजनबन्धु* के सम्पादक।

परमेश्वरी[1] के वारेमें पारनेरकर[2]का अभिप्राय तो लिया; और भी लूगा। परमेश्वरीको गो-सेवा सघके दस हजार दिलानेमे देर हो रही है। तीन सालमें विरुद्ध मत दिया है इसलिये सभा वुलानी होगी। यह तो जुन मासमें ही हो सकती है। अव पारनेरकरका विरुद्ध मत आया है। इसलिये और भी मुश्किल आवेगी। पारनेरकर अनुभवी तो है, सावरमतीमे वरसो तक काम किया है। आजकल धुलियामें गो-सेवा सघकी तरफसे काम कर रहा हूं।[3]

दिनकर[4] मुझे मिल गया। उसे मैंने कहा है हारना नही चाहीये। तुमको सतोप देना ही चाहीये। तुमारी सच्चाईके वारेमे अथवा तुमारी मेहनतके वारेमे कुछ शक नही है। लेकिन तुमारी कार्यदक्षताके वारेमे घनश्यामदासजीको अवश्य सदेह पैदा हुआ है। ऐसा मैंने उसको कह दिया है। तुमको वह मिल जायेगा। उचित किया जाय।

मुझको सेगाव अच्छा लगा है।

आवश्यकता पैदा होनेपर वंगलूर आ जाना — वहाका जलवायु तो अच्छा ही है।

वापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९०१९ से; सौजन्य : घनश्यामदास विड़ला

४३९. भाषण : अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघमें[5]

७-मई, १९३६

मैं यह समझता था कि जो लोग अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके सदस्य हैं वे इसके नियमोसे भी अवश्य परिचित होंगे। इसका एक नियम यह है कि इस सघकी सालमें एक वार आम बैठक हुआ करेगी, चाहे उसकी जरूरत हो अथवा न हो। और यदि सदस्योको यह नियम ज्ञात है तो निस्सन्देह प्रत्येक सदस्यका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि जब तक ऐसा ही कोई कार्य न आ पड़े जिसे टाला न जा सके, वह सभामें अवश्य शामिल हो। मुझे यह वात समझमे नही आती कि जो लोग अनुपस्थित हैं उनमें से किसीने भी पत्र लिखकर सभामें अनुपस्थित रहनेका कारण सूचित नही किया है। किसी भी सदस्यका यह समझना कि एक अकेले उसके अनुपस्थित रहनेका कोरम पर कोई प्रभाव नही पड सकता, एकदम गलत है।

१. दिल्लीमें घनश्यामदास बिड़लाकी गोशालामें एक विशेषज्ञ।

२. यशवन्त महादेव पारनेरकर।

३. यहाँ 'है' होना चाहिए।

४. दिनकरराय पण्ड्या।

५. इस संघकी प्रथम वार्षिक आम बैठक दिनमें ३ बजे होनेवाली थी, लेकिन कोरम पूरा न होनेकी वजहसे स्थगित कर दी गई। बादमें यह सभा रातको ८ बजे हुई।

हमारा उद्देश्य है कि हम अपने साढे सात लाख गाँवोमें से हर गाँवमें कम-से-कम एक सदस्य बनाये। लेकिन हमारी वास्तविक सदस्य-सख्या ५१७ है। और उसमें से भी अधिकांश सदस्य इस सभामें उपस्थित नही है। यह शोचनीय है, लेकिन इससे मुझे निराशा नही होती। जो लोग यहाँ उपस्थित है उन्हें अनुपस्थित लोगोके पास कम-से-कम यह सन्देश ले जाना चाहिए कि संघके मन्त्रीको अपने न आनेके कारणके सम्बन्धमे सूचित करना उनका कर्त्तव्य था। उन्होने सभामें न आनेका कारण तक नही बताया है, इससे पता चलता है कि वे लोग आलसी है, और जिसमें आलस्य हो, ऐसा व्यक्ति हमारे-जैसे संघका सदस्य होनेके नाकाबिल है।[1]

महात्मा गांधीने कहा कि कार्यकर्ताओंका फर्ज गाँववालोंकी सेवा करना है। यदि उन्हें ऐसा लगे कि स्थानीय अधिकारियोंकी वजहसे सेवा करनेके लिए अमुक स्थानका वातावरण उनके अनुकूल नहीं है और वैसी स्थितिमें यदि वे अपना कार्यक्षेत्र बदल देते है तो उससे कुछ नुकसान नहीं होगा। यदि बाहरी शक्तियोंके कारण उनके लिए किन्हीं स्थानों पर काम करना कठिन हो जाता है तो हमारा देश इतना बड़ा है कि वे किसी और स्थान पर जाकर अपना काम कर सकते है। और यदि आन्तरिक शक्तियोंके कारण उन्हें कार्य करनेमें दिक्कतें पेश आती हों तो यह उनका कर्त्तव्य है कि उन कठिनाइयों पर विजय पायें।

कुछ सदस्य बाहरी कठिनाइयोकी चर्चा करते है। मेरा खयाल है कि उनमें से अधिकाश कठिनाइयाँ काल्पनिक है। वहाँ हम कितना-कुछ कर पाये है जहाँ बाहरी कठिनाइयाँ नही है? सिंदी और सेगाँवका ही उदाहरण ले जहाँ गजानन और मीराबहन इतने उत्साह और लगनपूर्वक ग्रामीणताकी भावनाको लेकर काम कर रहे है कि हममे से प्रत्येक व्यक्ति उनसे स्पर्धा कर सकता है। लेकिन उन्हे भी कितनी उपलब्धि हुई है जो हम दिखा सकें? उसका कारण हमारी जनताकी — मालिकोंकी — जडता है, आलस्य है। हम चाहते है कि वे लोग कुछ करें, यथा अपने वातावरणको स्वच्छ बनायें, पौष्टिक भोजन खाये और अपने कामके घटोको नियमित करे ताकि उनकी आयमें इजाफा हो। लेकिन उन्हे इन सब चीजोमें विश्वास ही नही है। उन्होने अपनी स्थितिको सुधारनेकी आशा ही छोड दी है।

हमे तीन तरहकी बुराईसे लड़ना है जो हमारे गाँवोको बड़ी मजबूतीके साथ जकड़े हुए है: (१) सामूहिक स्वच्छताका अभाव, (२) दोषयुक्त आहार, (३) जड़ता।

सेगाँवमें, जहाँ मीराबहन काम कर रही है, बाहरी परिस्थितियाँ किसी भी स्थानकी अपेक्षा अधिक अनुकूल हैं। वहाँके जमीदार हैं जमनालालजी और बाबासाहब देशमुख। वे लोग कोई बाधा उपस्थित नही करते; बल्कि वे तो मीराबहनकी मदद करते है। और फिर भी क्या आप यह समझते है कि वहाँके लोग मीराबहनके साथ काफी सहयोग करते है? वे लोग जानबूझकर बाधाएँ खड़ी करते हो, सो बात नही

१. इसे महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' में से लिया गया है। इसके बादका अनुच्छेद बॉम्बे क्रॉनिकल से लिया गया है।

है। उन्हे अपने कल्याणमें कोई दिलचस्पी नही है। वे सफाईके आधुनिक तरीकोंके कायल नही है। वे अपने खेतोको खोदने अथवा ऐसा काम करनेके अलावा जिसके कि वे आदी है, अन्य कोई कार्य नही करना चाहते। ये कठिनाइयाँ वास्तविक और गम्भीर है। लेकिन इनसे हमें विचलित नही होना चाहिए। हमारी अपने ध्येयमें अटल आस्था होनी चाहिए। हमे लोगोके साथ धीरजसे काम लेना होगा। गाँवोंमें काम करनेके मामलेमें हम लोग खुद अनाडी है और हमे चिरकालिक रोगसे निपटना है। अगर हमारे अन्दर अध्यवसाय और धैर्य है तो हम अनेक कठिनाइयो पर विजय पा सकते है। हम लोग तो नर्सोंकी तरह है जो अपने उन मरीजोको छोडकर नही जा सकती जिन्हे असाध्य रोगसे पीडित बताया जाता है।

इसका एकमात्र तरीका यही है कि हम उनके बीचमे जाकर रहे और उनके सरक्षकोंके रूपमें नही बल्कि उनके भगियो, नर्सो और सेवकोके रूपमें काम करें तथा अपने समस्त पूर्वग्रहो और पक्षपातोको भूल जायें। आइए, हम एक पलके लिए स्वराज्यको भी भूल जायें और निश्चय ही उन "दौलतमन्दो" को भी भूल जाये जिनकी उपस्थिति हमे कदम-कदम पर दुखी करती है। वे तो अपनी जगह है ही। इन बडी-बडी समस्याओंको हल करनेके लिए तो बहुत-से लोग लगे हुए है। हमे चाहिए कि हम गाँवके (अपेक्षाकृत) मामूली लगनेवाले कामको हाथमे ले जो इस समय तो जरूरी है ही और उस समय भी जरूरी रहेगा जब हम अपने ध्येयको प्राप्त कर लेंगे। बेशक, यदि हम गाँवमें काम करनेके अपने उद्देश्यमे सफल हो जाते है तो हमारी यह सफलता ही हमें हमारी मंजिलके निकट ले जायेगी।[1]

गांधीजीने कहा कि मैं आशा करता हूँ कि सेगाँव सतत प्रयत्नोंका एक आदर्श उदाहरण बन जायेगा और अन्य स्थानों पर भी कार्यकर्ता उसी उत्साह और शक्तिसे काम करेंगे। इस क्षेत्रमें जो सफलता प्राप्त की गई है उसके बारेमें किसी नतीजे पर पहुँचना अभी मुश्किल है। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि संघने आपके सम्मुख जो त्रिसूत्री कार्यक्रम रखा है आप उसके प्रभावोंको अच्छी तरह समझनेका प्रयत्न करेंगे। इस कार्यक्रममें सबसे पहले सफाईकी दशाओंमें सुधार करना है, गन्दगीको दूर करना है तथा गाँववालोंकी उन आदतोंको छुड़ाना है जिनसे गन्दगी फैलती है। तात्पर्य यह कि हमें खुद अपने उदाहरण तथा सतत प्रयत्नोंके द्वारा गाँववालोंको शिक्षित करना है।

कार्यक्रमके दूसरे भागमें लोगोंकी भोजन-सम्बन्धी आदतोंमें आमूल परिवर्तन करनेकी बात कही गई है जिससे कि देहातोंके लोग देहातोंमें सामान्यतः उपलब्ध होनेवाले खाद्य-पदार्थोसे अधिक ताकत प्राप्त कर सकें। इसके लिए यह जरूरी है कि पुराने जमानेकी तरह ही खाद्य-पदार्थोका संरक्षण गाँवोंमें किया जाये, और शुद्ध खाद्य-पदार्थोको शहरोंमें न भेजा जाये बल्कि वे गाँववालोंको ही उपलब्ध होने चाहिए।

१. इसके बादका अंश बॉम्बे क्रॉनिकल से लिया गया है।

कार्यक्रमका अन्तिम भाग यह है कि किसानोंको खाली समयका सदुपयोग करना सिखाया जाये। मृत और मृतप्राय उद्योगोंको पुनरुज्जीवित किया जाये और समस्त वर्गके लोगोंको सिखाया जाये कि वे अपने खाली समयका सदुपयोग कैसे करें।

महात्मा गांधीने कहा, मैं स्वीकार करता हूँ कि ये सब कार्य कठिन हैं और मेरे जो मित्र यह कहते हैं कि मैंने अपने जीवनकी सान्ध्य-वेलामें चरखा-आन्दोलनके प्रसार अथवा अस्पृश्यता-निवारणकी अपेक्षा अपने सिर पर कहीं अधिक बड़ी जिम्मेदारी ले ली है, वे गलत नहीं कहते। ये दोनों कार्य महत्त्वपूर्ण होते हुए भी गाँवोंके पुनर्निर्माणके विशाल कार्यके अंग मात्र हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-५-१९३६, और बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-५-१९३६

४४०. पत्र : मीराबहनको

८ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा मधुर पत्र मिला। मैं ६ बजे शामके बाद ग्रैंड ट्रंक एक्सप्रेससे रवाना होऊँगा। गाँवमें होकर जाने वाली सड़कके बारेमें मेरी [जमनालाल बजाजसे] लम्बी बात हुई थी। वे इस पर विचार कर रहे हैं। तुम पूरी तरह तन्दुरुस्त और प्रसन्न-चित्त रहो। मेरी कुटिया अधूरी रह जाये तो भी बूतेसे ज्यादा मेहनत न करो।[1] झुंझलाना भी नहीं।

आशा है फर्श कूटनेके औजार तुम्हें मिल गये होंगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३३) से; सौजन्य . मीराबहन। जी० एन० ९७९९ से भी।

१. बापूज़ लेटर्स टु मीरा नामक अपनी पुस्तकमें मीराबहनने लिखा है: "कुटिया और गोशाला के मकानों का काम पूरे जोर के साथ हो रहा था। सिर्फ छ: सप्ताह में कुटिया, गोशाला, सड़क और पहाड़ी पर मेरी झोंपड़ी पूरी होनी थी। बलवन्तसिंह, मुन्नालालभाई और मैं खुद सुबह से रात तक पूरी तेजी से काम करते थे। इतने पर भी हमारा सारा काम पूरा होने से पहले ही बरसात शुरू हो गई। परन्तु बापू जब १६ जून को मूसलाधार मेह में वहाँ रहने के लिए आ पहुँचे, तब तक घर रहने लायक बन गया था।"

४४१. पत्र : पांडुरंग ना० राजभोजको

८ मई, १९३६

भाई राजभोज,

चपल इत्यादि बनानेका धंदाको बढाना मैं आवश्यक मानता हू। मेरी आशा है कि इस काममा निपुण हो जाओगे। बगैर निपुणताके सतोष नही मानना।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९५) से।

४४२. भाषण : ग्राम-कार्यकर्त्ता प्रशिक्षणालयमें

वर्धा

८ मई, १९३६

मैं स्वीकार करता हूँ कि प्रशिक्षणालय खोलनेके बारेमें मैं सशक था।[1] मुझे लगा कि विद्यार्थियोंको क्या हम कुछ भी सच्ची सहायता इसके द्वारा दे सकेंगे? इसके लिए हमारे पास साधन या ग्रामसेवाका इतना अनुभव भी है? यह भी मुझे शका थी कि जिस प्रकारके ग्रामसेवकोकी जरूरत है वैसे और उतनी बडी सख्यामे विद्यार्थी आयेंगे भी? पर मुझे खुशी है कि मेरी ये सारी शकाएँ सच्ची नही निकली। और तीन महीनेके इस थोडे-से-समयमें हमे आशातीत सफलता मिली है।

पर आज मुझे कहना तो आपके भावी कार्य और जीवनके आदर्शके विषयमें है।

जिस अर्थमे आज अग्रेजीका "कैरियर" शब्द प्रयुक्त होता है वैसा "कैरियर" बनाने आप यहाँ नहीं आये है। आज तो मनुष्यकी कीमत पैसेसे आँकते है और उसकी शिक्षा बाजारकी बिक्रीकी चीज बन गई है। मनमे यह पैमाना लेकर अगर आप लोग यहाँ आये है तब तो यह समझ लो कि आपके नसीबमे निराशा ही लिखी है। आप यहाँसे शिक्षा प्राप्त करके निकलेंगे तो शुरूमें जो दस रुपये माहवार पारिश्रमिक आपको मिलेगा, अत तक वही मिलता रहेगा। किसी बड़ी फर्मके मैनेजर या बड़े अफसरको जो तनख्वाह मिलती है, उसके साथ इसका मुकाबला न करना।[2]

१. यह प्रशिक्षणालय अ० भा० ग्रामोद्योग संघ द्वारा जनवरीमें खोला गया था और इसमें ३७ विद्यार्थी थे।

२. यहाँ तक का अश महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' से लिया गया है और इसके बादके तीन अनुच्छेद बॉम्बे क्रॉनिकल से लिये गये है।

आपको अपने अन्दर विनम्रताकी सच्ची भावना पैदा करनी है और ग्रामीण समाजके जीवनमें आपको जो भूमिका निभानी है, उसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

आपकी महत्वाकांक्षा यह होनी चाहिए कि गाँववालोकी और ज्यादा लगनसे सेवा करे। ज्यादा बड़ी तनख्वाह पानेका विचार आपके मनमें नही होना चाहिए। आप लोग जो वेतन पायेंगे, भारतीय नागरिक सेवाके सदस्य उससे सौ गुना ज्यादा वेतन पाते है। लेकिन आप लोग उनके मुकाबले भारतके कम मूल्यवान सेवक नही होगे।

आज आपके भाग्यका निर्धारण जिस आर्थिक व्यवस्थाके अन्तर्गत होता है वह बडी अस्तव्यस्त है क्योंकि इसमें ऐसे लोग भी है जिनका वेतन किसी भारतीयकी औसत आमदनीसे करीब एक हजारसे दो हजार गुना तक ज्यादा है।

हमे तो ये चालू पैमाने (स्टैण्डर्ड) ही बदल देने है। हम आपको ऐसे किसी "कैरियर" का वचन नही देते। बल्कि सच्ची बात तो यह है कि इस तरहकी अगर आपकी महत्त्वाकाक्षा हो तो हम उससे आपको बचा लेना चाहते है। आशा हम यह रखते है कि आपका भोजन-खर्च ६ रुपये मासिकके भीतर हो। एक आई० सी० एस० का खाना-खर्च शायद ६० रुपये मासिक आयेगा। पर इसका यह मतलब नही कि वह किसी तरह आपसे शारीरिक शक्ति, बुद्धि या नैतिकतामे बड़ा होगा। यह राजसी भोग भोगते हुए भी, सम्भव है, वह शारीरिक शक्ति, बुद्धि या नैतिकतामें आपसे कम ही हो। मैं मानता हूँ कि आप अपनी शक्तिको रुपये-पैसेके गजसे नापनेके लिए इस शिक्षणशालामे नही आये है; नगण्य-सा निर्वाह-खर्च लेकर देशको अपनी सेवा देनेमे ही आप आनन्द अनुभव करते है। शेयर बाजारमे एक मनुष्य भले हजारो रुपये कमाता हो, पर वह हमारे इस कामके लिए बिलकुल निकम्मा साबित हो सकता है। वह मनुष्य हमारी सीधी-सादी परिस्थितिवाली जगहमे आ जाये तो वह दुःखी ही होगा, जिस तरह कि हम उसकी परिस्थितिवाली जगहमे पहुँच जायें, तो दुखी होगे। देशके लिए हमे आदर्श मजदूरोकी जरूरत है। वे इस बातकी चिन्तामें न पड़ें कि उन्हे खाने-पहननेको क्या मिलेगा या गाँवोंके लोग उन्हें क्या-क्या सुख-सुविधाएँ देंगे। अपनी आवश्यकताओंको वे श्रद्धापूर्वक ईश्वर पर छोड़ दें, और इसमें उन्हे जो भी कठिनाइयाँ या दुःख सहने पड़ें उनमें भी वे सुख मानें। ७ लाख गाँवोका जिस देशमें विचार करना है वहाँ यह सब अनिवार्य है। हमें ऐसे वेतनभोगी सेवक नही पुसा सकते, जिनकी नजर हमेशा वेतन-वृद्धि, प्रोविडेंट फण्ड या पेंशन पर रहती है। हमारे लिए तो ग्रामवासियोंकी निष्ठामय सेवामें ही सन्तोष है।

आपमें से कुछ लोगोंके मनमें यह प्रश्न उठ रहा होगा कि गाँवोके लोगोके लिए भी यही पैमाना है क्या? निश्चय ही नही। यह तो हम सेवकोके लिए है, हमारे स्वामी जो ग्रामवासी है उनके लिए नही। इतने बरसोसे हम उनके ऊपर भार-रूप बने हुए है। उनकी स्थिति कुछ सुधरे, इसलिए अब हम अपनी इच्छासे गरीबी स्वीकारना चाहते है। हमे करना यह है कि आज जो वे कमाते है उसमें वे हमारे प्रयत्नसे कुछ वृद्धि कर सके। ग्रामोद्योग संघका यही उद्देश्य है। जैसे सेवकोका मैंने

वर्णन किया है उनकी सख्या संघमें अगर बढती न गई तो यह उद्देश्य सफल नही हो सकेगा। आप सब इस प्रकारके ग्रामसेवक बनें।[1]

अन्तमें गांधीजीने आशा व्यक्त की कि यह संस्था भारतके विभिन्न भागोकी ग्रामीण जनताके बीच एकताकी कड़ी बनेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-५-१९३६, और बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-५-१९३६

४४३. हिन्दी या हिन्दुस्तानी – १

इस अकमें दूसरी जगह पाठक एक आदरणीय मित्रका लिखा हुआ एक बहुत रोचक पत्र पढेंगे।[2] यह पत्र नागपुरमें जमा हुए उन प्रतिनिधियोके सामने पढ़ा गया था, जिन्होने वहाँ भारतीय साहित्य-परिषद् कायम की है। इसी तरहका एक खत एक मुसलमान मित्रने भेजा है, और उसके साथ इसी विषय पर लिखा गया पिछली २७ अप्रैलके 'बॉम्बे क्रॉनिकल'का अग्रलेख[3] भी भेजा है। ये पत्र और लेख मुख्तलिफ प्रान्तोके लिए एक सामान्य भाषाके बारेमे मेरे विचारोसे मिलते-जुलते विचार ही प्रकट करते हैं। फिर भी मुझे डर है कि इस बारेमें मैंने जो समझौता किया है, उसकी शायद कुछ मर्यादाएँ हैं। इसलिए उन्हे सबके सामने रख देना जरूरी है। अगर उन्हे मर्यादाएँ मान भी लिया जाये, तो उनके पीछे उसी उद्देश्यको पूरा करनेका इरादा है जो मेरे मित्रोके सामने है।

शुरुमे ही मै उस शंकाको दूर कर देना चाहता हूँ, जो कुछ मुसलमानोमे पैदा हो गई है। सारा वातावरण सन्देहसे भरा हुआ है, हर किसीके कामो और बातोंको सन्देहकी निगाहसे देखा जाता है। जो लोग पूरी साम्प्रदायिक एकता चाहते है, और सन्देहका कोई मौका अपनी तरफसे पैदा नही होने देना चाहते, उनके लिए मेरी रायमें सबसे अच्छा रास्ता यह है कि वे क्षणिक जोशसे बचे रहकर ईमानदारीसे काम करते रहे। परिषद्के जैसे कामोमे तो जोशका कोई मौका ही पैदा नही होता। परिषद्का मकसद हिन्दुस्तानकी तमाम भाषाओमे से अच्छी-से-अच्छी चीजोका सग्रह करके उनको देशके अधिक-से-अधिक लोगोके लिए उस भाषाके जरिये सुलभ बनाना है, जिसे अधिक-से-अधिक देशवासी समझ सकते है। निस्सन्देह उर्दू अनेक भाषाओमें से एक है और उसमें हीरो और जवाहरोके ऐसे खजाने भरे हुए है जो सारे देशवासियोकी आम जायदाद होने चाहिए। जो हिन्दुस्तानी मुसलमानोके दिलको या भारतीय दृष्टिसे की गई इस्लामकी व्याख्याको जानना चाहता है, वह उर्दूकी उपेक्षा नही कर सकता। अगर यह परिषद् मौजूदा उर्दू-साहित्यके खजानेका

१. इसके बाद का अंश बॉम्बे क्रॉनिकल से लिया गया है।
२. देखिए परिशिष्ट २, और पृ० ३९१ भी।
३. देखिए परिशिष्ट ३।

ताला खोलकर उसे सर्वसुलभ नही बना सकेगी, तो वह अपने फर्ज और मकसदको पूरा नही कर सकेगी।

पत्र भेजनेवाले मित्रने एक भूल की है, जिसे मै दूर कर देना चाहता हूँ। उनके सामने टण्डनजीके भाषण[1] का पूरा पाठ नही था, जो उन्होने बनारसमें नही, इलाहाबादमे दिया था; नही तो वे यह समझनेकी भारी भूल न करते कि टण्डनजीने २२ करोड हिन्दी बोलनेवालोकी जो बात कही थी, वह उनके बारेमे कही थी जो आजकल बनावटी हिन्दी लिखते है। उन्होने यह साफ तौर पर कह दिया था कि उनका मतलब विन्ध्याचलके उत्तरमें रहनेवाले उन लोगोसे था, जिनमे ७ करोड़ मुसलमान भी शामिल है, जो उस भाषाको बोलते और समझते है, जिसका जन्म व्रजभाषासे हुआ है और जिसका व्याकरणी ढाँचा उसीसे लिया गया है। उसका हिन्दी नाम भी अपना असली नही है। इस भाषाको यह नाम उन मुसलमान लेखकोंका दिया हुआ है जो उत्तरमे रहनेवाले लोगोके लिए उसमे लिखते थे, और जो उस भाषा जैसी ही थी जो उनके हिन्दू भाई लिखते थे। उसके बाद इसकी दो शाखाएँ हो गई — देवनागरी मे लिखी जानेवाली उत्तरके हिन्दुओंकी भाषाको 'हिन्दी' और फारसी या अरबी लिपिमे लिखी जानेवाली मुसलमानोकी भाषाको 'उर्दू' कहा जाने लगा। यह सच नही है कि सारे देशके मुसलमानोंकी आम जबान उर्दू है। मुझे मालूम है कि अलीभाइयोके और मेरे लिए मलाबारके मोपलोके साथ उर्दूमें बात करना कठिन हो गया था। हमे एक मलयाली दुभाषिया साथमें लेना पड़ा था। पूर्वी बंगालके मुसलमानोंके बीचमे जानेपर भी हमे वैसी ही मुसीबतका सामना करना पड़ा था। टण्डनजी और राजेन्द्रबाबूके 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग करनेका ठीक वही मतलब था, जो मेरे इन मित्रका है। 'हिन्दुस्तानी' शब्दका प्रयोग करनेसे उनका मतलब कुछ ज्यादा साफ न हो पाता।

उन लेखकोंके बारेमें मेरे दोस्तकी शिकायत बिलकुल सही है, जो ऐसी 'हिन्दी' लिखते है, जिसको उत्तर भारतके भी बहुत ही कम लोग समझ सकते है। जॉन्सनकी भाषाकी तरह यह प्रयत्न भी जरूर नाकाम होनेवाला है।

खत भेजनेवाले सज्जन पूछ सकते है कि 'हिन्दी या हिन्दुस्तानी' का हठ छोड़ कर सीधा-सादा 'हिन्दुस्तानी' क्यो नही काममे लाया जाता? मेरे पास इसके लिए सीधी-सादी एक ही दलील है। वह यह है कि मेरे सरीखे नये व्यक्तिके लिए २५ बरसकी पुरानी संस्थाको अपना नाम बदलनेके लिए कहना गुस्ताखी होगी, खासकर तब जब कि उसका नाम बदलने जैसी कोई जरूरत भी साबित नही की गई है। नई परिषद् पुरानी संस्था[2] की ही उपज है, और वह उत्तर भारतमे रहनेवाले और एक ही मादरी जबान बोलनेवाले हिन्दू-मुसलमान दोनोकी जरूरियात पूरी करना चाहती है। उसके लिए भाषाके नामका इतना महत्त्व नहीं है, भले ही उसको 'हिन्दी' कहा जाये या 'हिन्दुस्तानी'। मुझे दोनो ही शब्दोसे एक-सा सन्तोष है।

१. श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन द्वारा ५ अप्रैल, १९३६ को इलाहाबादमें हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें दिया गया भाषण।

२. हिन्दी साहित्य सम्मेलन।

'हिन्दी' शब्दका प्रयोग करनेवालोसे मुझे कुछ झगडा नही है, वशर्ते कि उनकी भाषा भी वही हो जो मेरी है।

'अखिल भारतीय', इन शब्दोके प्रयोग पर किये गये एतराजको मै नही समझ सका हूँ। सारे देशके हिन्दू इसको निश्चय ही समझते है। और मै यह कहनेका साहस भी कर सकता हूँ कि उत्तरमें रहनेवाले ज्यादातर मुसलमान भी इसे समझ लेगे। अभी हमारे जमानेकी भारतकी सभ्यता साँचेमे ढल ही रही है। हममे से बहुतेरे इस यत्नमे लगे हुए है कि उन सब सभ्यताओका एक मिला-जुला रूप तैयार किया जाये, जो इस समय आपसमे टकरा रही है। अलग रहनेकी कोशिश करनेवाली कोई भी सभ्यता जिन्दा नही रह सकती। इस समय भारतमे ऐसी कोई तहजीव बाकी नही बची है जिसे बिलकुल शुद्ध आर्य सभ्यता कहा जा सके। आर्य लोग यहाँके आदिम निवासी थे, या विदेशी आक्रमणकारी थे, इस बहससे मुझे कोई खास मतलब नही। मेरा मतलब इतना ही बतानेका है कि मेरे बहुत पुराने पुरखे पूरी आजादीके साथ एक-दूसरेसे घुलते-मिलते थे, और हम वर्तमान पीढीकी उनकी सन्तान उसी मिलावटके फल है। यह तो भविष्य ही बता सकेगा कि इस परिषद्को जन्म देकर हम अपने देश या छोटी-सी दुनियाकी कुछ भलाई कर रहे है या सिर्फ उसके लिए भार बन रहे है। लेकिन मुझको तो इतना सन्तोष है कि नई परिषद् और हिन्दी साहित्य सम्मेलन, दोनो ही भारतकी सब भाषाओकी तमाम अच्छाईको एक साथ मिलानेका सुन्दर काम कर सकते है। अगर वे उसे नही करेंगे, तो नष्ट हो जायेगे। पर मिलानेका यह मतलब हरगिज नही है कि हम उसको हर ऐसी चीजसे बिलकुल अलग ही कर दे, जिसमें से आर्यपन, अरबीपन या अग्रेजीपनकी अधिक गन्ध आती है।

इस बहसको मै इस हफ्ते ज्यादा बढाना नही चाहता। कुछ और भी विचारने लायक जरूरी बातें है। आशा है कि मै अगले सप्ताह उन पर विचार कर सकूँगा।[1]

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ९-५-१९३६

४४४. पत्र : अमृत कौरको

९ मई, १९३६

प्रिय भावी दासी,

मै यह पत्र ट्रेन परसे लिख रहा हूँ जो मद्रासके निकट पहुँचती जा रही है। वर्धामे हम जिस ट्रेनमे थे उसमे भीड बहुत थी जिसके कारण हम तीन दलोमे बँटे हुए थे। रात दस बजेके करीब हमे आरामसे सोनेकी जगह मिल गई। काश! तुम हमारे साथ होती। तुम्हे यात्रामे मजा आता, अलबत्ता गर्मी जरूर थी। रास्तेमे मै हरिजन-कार्यके लिए अबतक १८६ रु० इकट्ठे कर चुका हूँ। मद्रास पहुँचनेसे पहले मै इन्हे २०० रुपया करनेकी आशा रखता हूँ।

१. देखिए "हिन्दी या हिन्दुस्तानी-२", १६-५-१९३६।

जब तुम अकारण बागी होनेके बजाय इच्छुक दासी बन जाओगी तब मैं भी जालिम नहीं रहूँगा। अभी तो तुम एक काल्पनिक जालिमके प्रति एक कल्पित बागी हो। तुम्हारी मूर्खता तुम्हे इतनी स्पष्ट बातको भी देखने देगी या नही, यह एक अलग सवाल है। मैं प्रतीक्षा करूँगा और देखूंगा।

आशा है, तुमने जो-जो चीजें चाही थी, पार्सलमे उसमे से काफी-कुछ होगी। एला के पाससे जो बडा पार्सल आनेवाला था उसका क्या हुआ? मैं यह नही समझ सका कि तुम्हे जाली क्यो नही मिली। मैं इस बारेमें पूछताछ करूँगा।

कु[मारप्पा] और शान्ता[1] एक-दो दिनमे मेरे पीछे-पीछे आ जायेंगे। मैंने कु[मारप्पा]से बम्बईमे एक-दो दिन और ठहरनेके लिए कहा है जिससे उसकी पूरी जाँच हो सके।

आशा है कि सन्तति-निग्रह पर वाद-विवादके मामलेमे तुम अपने विरोधियोके टक्करकी साबित हुई थी। अहिंसा कोई आसान काम नही है। यह विश्वकी सबसे सूक्ष्म शक्ति है। इसको पकड़ पाना आसान नही है और मनुष्य धोखेमें पड जाता है। लेकिन यह मुझे मालूम है कि अहिंसाके मामलेमे तर्क-वितर्कमे तुम भले ही हार सकती हो, लेकिन तुम उस विश्वाससे नही डिगोगी जो तुम्हारे अन्दर विवेक-बुद्धिका समर्थन मिलनेसे पहले ही आ गया था। क्या ऐसी बात नही है?

मेरा पता है. नन्दी हिल, मैसूर राज्य या फिर सिर्फ बगलोर सिटी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२७) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६८८३ से भी।

१. एक १

४४५. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

ट्रेनमे
९ मई, १९३६

प्रिय भगिनी,

त्रिवेन्द्रम गई वह वहुत अच्छा हुआ।[1] कार्यका महत्व देखकर ही मैंने इतने दूर जानेकी तकलीफ दी। मेरा विश्वास है कि तुमारे जानेसे वहुत लाभ हुआ है।

यह खत मैं ट्रेनमे लिख रहा हू। महादेवको पुना भेजना पडा। चद्रशकर जो हरिजनका काम देखता है बीमार हो गया है। नदी दुर्गमे महादेव मिलेगा। यदि सभव हो तो मुझे नदी दुर्गमे मिलो और वहाके सब हाल सुनाओ। यदि आना अशक्य हो तो मुझे सब हाल लिखो। उमीद है कि तुमारा स्वास्थ्य अच्छा रहा होगा।

वापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९८२) से। सी० डब्ल्यू० ३०७८ से भी; सौजन्य रामेश्वरी नेहरू

४४६. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको

मद्रास
९ मई, १९३६

भारतीय अथवा विश्व-राजनीति पर टीका-टिप्पणी करनेसे इनकार करते हुए गांधीजीने एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे कहा :

मुझसे मौसमके वारेमे वेशक वात कीजिए, लेकिन राजनीतिके वारेमे नहीं। राजनीतिसे सन्यास लेनेके वाद अव मेरे लिए राजनीति और राजनीतिज्ञोंके वारेमे चर्चा करना उचित नही होगा।

उसी तरह महात्माजीने अबीसीनियाके प्रश्न पर भी टीका-टिप्पणी करनेसे इनकार कर दिया, लेकिन इटलीके वाणिज्य-दूतको पण्डित जवाहरलाल नेहरूने जो प्रत्युत्तर दिया था उसे उन्होंने रुचिके साथ पढ़ा।

स्वास्थ्यके बारेमें पूछताछ करनेपर महात्माजीने कहा कि अव तो मैं काफी अच्छा हूँ। यात्रा बुरी नहीं थी। मैं समुद्र-तटवर्ती इलाकोसे होकर ही यात्रा करता

१. देखिए "तार : जो० रामचन्द्रनको", ७-५-१९३६।

रहा जहाँ समुद्री हवा चला करती थी। वर्धामें बहुत गरमी थी और आधी रात तक गरम हवा चलती रहती थी।

वर्धा लौटनेसे पहले नन्दी हिलकी यात्राका, जहाँ गांधीजी १५ दिन रहेंगे तथा बंगलोरकी यात्राका, जहाँ भी वे शायद १५ दिन ही रहेंगे, उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा :

मेरे जेलर (श्री वल्लभभाई पटेल) वहाँ (बगलोरमे) मुझे लेनेके लिए मुझसे आधा घटा पहले ही मौजूद होगे। हो सकता है कि इस बार मुझे उनका (श्री वल्लभभाईका) जेलर बनना पडे क्योकि इस बार मैं अपनी नही बल्कि उनकी रोग-मुक्तिके लिए नन्दी हिल जा रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-५-१९३६

४४७. भेंट : सी० वी० रामन और डॉ० रैहमको[1]

[१० मई, १९३६ या उसके पश्चात्][2]

अपने मेहमानका गांधीजीसे परिचय कराते हुए सर चन्द्रशेखरनने कहा, "इन्होंने एक ऐसा कीड़ा ढूँढ़ निकाला है, जो १२ वर्ष तक बिना अन्न और बिना जलके रह सकता है, और प्राणिशास्त्रके सम्बन्धमें और भी शोध करनेके लिए यह हमारे हिन्दुस्तानमें आये हैं।"

[गाधीजी :] उस जीवाणुके रहस्यका जब आप पता लगा ले तब कृपाकर मुझे भी बताइएगा।

[प्रो० रैहम :] मैं वैज्ञानिक तो हूँ ही, मठवासी साधु भी हूँ। जब मैंने आपको प्रणाम करनेके लिए यहाँ आनेका निश्चय किया तब मेरे मनमें आया कि एक-दो प्रश्न आपसे पूछ लूँ। क्या पूछ सकता हूँ?

हाँ, हाँ, खुशीसे।

डॉ० रैहम परेशान थे कि दुनियामें ये परस्पर-विरोधी अनेक धर्म क्यों हैं, और उन्हें यह शंका थी कि इस पारस्परिक वैर-विरोधके मिटानेका कोई रास्ता है भी या नहीं।

यह तो ईसाइयो पर निर्भर करता है। रास्ता है, अगर वे दूसरोके साथ मेल-मिलाप करनेका निश्चय कर ले। पर ऐसा वे करेगे नही। वे तो इसका ऐसा

१. महादेव देसाईने अपने 'वीकली लेटर' में लिखा है: "स्विट्ज़रलैंड के प्रसिद्ध जीवशास्त्री प्रो० रैहमको लेकर एक दिन शामको सर चन्द्रशेखरन वेंकट रामन गांधीजीसे मिलने नन्दी हिल आ गये थे।"

२. गांधीजी १० मई, १९३६ को नन्दी हिल पहुँचे थे।

हल बतलाते हैं कि जिस ईसाई धर्मको वे मानते हैं उसे सारा ससार स्वीकार कर ले। मेरा एक ईसाई मित्र ३० वर्षसे यह समझानेके लिए ही मेरे पीछे पडा हुआ है कि हिन्दू धर्मसे तो सिवा अध पतनके और कुछ हो नही सकता, अत· मुझे ईसाई धर्म स्वीकार कर लेना चाहिए। जब मैं जेलमे था तब अलग-अलग जगहोसे 'सिस्टर थेरेसाके जीवन-चरित्र' की एक-दो नही, तीन प्रतियाँ मेरे पास भेजी गई थीं, और यह इस आशासे कि सिस्टर थेरेसाके उदाहरणका अनुसरण करके मैं ईसा मसीहको एकमात्र ईश्वर-पुत्र और अपने त्राताके रूपमे स्वीकार कर लूँ। मैंने उस पुस्तकको भक्तिपूर्वक पढ डाला, किन्तु सन्त थेरेसाके प्रमाणसे भी मैं यह बात स्वीकार न कर सका। अगर मेरी उम्र और अवस्थामे इस प्रश्नके विषयमे ऐसा कहा जा सके कि मेरा मन नये विचार ग्रहण कर सकता है तो मैं कहूँगा कि मैं उसके लिए तैयार हूँ। किसी भी सूरतमे इतनी मानसिक तत्परता रखनेका दावा मैं अवश्य करता हूँ कि पॉलको, जबकि उसका नाम साल था, जो अनुभव हुए थे वैसे अनुभव अगर मुझे हो तो धर्म-परिवर्तन करनेमे मुझे कोई आनाकानी नही करनी चाहिए।

पर आज तो मैं रूढिग्रस्त ईसाई धर्मके विरुद्ध बगावत कर रहा हूँ, क्योकि मेरा विश्वास है कि इस धर्मने ईसाके सन्देशको तोड-मरोडकर विकृत बना डाला है। ईसा एशियाके रहनेवाले थे। उनका सन्देश अनेक माध्यमोसे होकर यूरोप पहुँचा है, और जब उसे रोमन बादशाहका पृष्ठपोषण मिला तब वह साम्राज्यवादी पथ बन गया और आज तक वह उसी रूपमें चला आ रहा है। बेशक, उसमें एण्ड्रयूज या एल्विन[1] जैसे ऊँचे व्यक्ति भी हैं, किन्तु ऐसे व्यक्ति विरल ही हैं। पर उसका साधारण झुकाव वही है जो मैंने बताया है।

कुछ दिन हुए बम्बईमें सर्व-धर्म-सभा हुई थी। अभी इस प्रकारकी वास्तविक सभा होनेमे स्पष्ट रुकावट यह है कि न तो हम सब धर्मोकी समता स्वीकार करते हैं, न एक दूसरेके धर्मके प्रति हमारे हृदयमे आदर-भाव है। हमे यह नही भूलना चाहिए कि वह धर्मोकी सभा थी, न कि चन्द धर्म-बुद्धिवाले मनुष्योकी सभा। मैं पूछता हूँ, उस सभामे क्या ईसाई धर्म अन्य धर्मोके साथ समताका भाव लेकर उपस्थित हुआ था? खुल्लमखुल्ला न सही, तो भी चुपके-चुपके वे हमारे अनेक देवी-देवताओकी टीका करते रहते है, पर वे यह भूल जाते है कि उनके भी तो अनेक देवी-देवता हैं।

डॉ० रैहम इस तरहके जवाबके लिए तो शायद तैयार नहीं थे। उन्होंने इसका कोई जवाब न देकर दूसरा प्रश्न किया: "अगर हम मिल नही सकते, तो क्या आज जो यह नास्तिकता बढ़ रही है इसका सामना भी नहीं कर सकते?"

सर सी० वी० रामन अबतक चुपचाप बैठे बातें सुन रहे थे। पर अब उनसे नही रहा गया। बोले, "इसका जवाब मैं देता हूँ। ईश्वर अगर है तो इसी दुनियामें है, और अगर नहीं है तो उसकी खोज करना बेकार है। कितने ही लोग मुझे

१. वेरियर एल्विन।

नास्तिक मानते हैं, पर मैं नास्तिक हूँ नहीं। दिन-दिन भौतिक-शास्त्र और खगोल-शास्त्रमें जो नये-नये अनुसन्धान हो रहे हैं, मुझे मालूम होता है कि वे ईश्वरके अस्तित्वको अधिकाधिक प्रत्यक्ष बतानेवाले हैं। महात्माजी, धर्मोंमें एकता नहीं हो सकती। पूर्ण भ्रातृभाव स्थापित करनेके लिए तो विज्ञान ही सबसे बढ़िया साधन है। विज्ञानशास्त्री आपसमें सब भाई-भाई हैं।

[गांधीजी :] पर इसके विपर्ययके विषयमे आप क्या कहेंगे? जो विज्ञानशास्त्री नही हैं, वे भाई-भाई नही है क्या?

सर सी० वी० रामन मजाक ताड़ गये और बोले: "पर विज्ञानशास्त्री तो हम सब लोग हो सकते हैं।"

[गांधीजी], इसके लिए तो आपको इस्लामकी तरह साइन्सका कोई कलमा बनाना होगा।

सर सी० वी० रामनने कहा, "विज्ञान सत्यकी शोधके सिवा और कुछ भी नहीं। और वह सत्य केवल भौतिक जगत्का ही नहीं, बल्कि तर्क, मनोविज्ञान, नीति आदि समस्त क्षेत्रोंका है। सच्ची वैज्ञानिक दृष्टिका रहस्य ही यह है कि असत्यको त्यागनेके लिए वह सदा तत्पर रहती है। वह हमें डंकेकी चोटपर बतलाती है कि असत्यसे चिपटे रहनेमें कोई लाभ नहीं। प्राणिशास्त्रकी सबसे हालकी शोध, मुझे मालूम होता है, यह है कि मनुष्य-जीवन और तिर्यक्-योनिके जीवनके बीच कोई तात्त्विक अन्तर नहीं है और मुक्ति तो वंश-रक्षाकी प्राणिसहज प्रेरणाको, जातिकी सेवामें व्यक्तिका बलिदान कर देनेकी सहज बुद्धिको परिपूर्ण बनानेमें है।"

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-५-१९३६

४४८. तार: एसोसिएटेड प्रेसको[1]

११ मई, १९३६

डा० अन्सारीकी मृत्यु[2] एक जबर्दस्त धक्का है। वे मुसलमानोमें, और हिन्दुओमें भी, श्रेष्ठ व्यक्तियोमें से थे। मेरे लिए तो उनकी मृत्यु एक व्यक्तिगत क्षति है। वे और मैं तो बढ़ती हुई सामाजिक बुराइयोंके विरुद्ध एक अभियान चलानेकी योजना बना रहे थे। यदि वे राजाओंके डाक्टर

१. यह तार महादेव देसाईने निम्नलिखित टिप्पणीके साथ एसोसिएटेड प्रेसके नाम भेजा था: "हम सब आज सुबह एसोसिएटेड प्रेससे डा० अन्सारीकी अचानक मृत्युका भयानक समाचार पाकर स्तब्ध रह गये। गांधीजीने तत्काल यह सन्देश प्रेसके नाम भेजा।"

२. डा० मु० अ० अन्सारीकी मृत्यु १० मईको देहरादूनसे दिल्ली जाते हुए ट्रेनमें हो गई थी।

थे तो वे गरीबोंके भी डाक्टर थे। ऐसे हजारों लोग उनकी मृत्यु पर शोक मनायेंगे जिनके कि वे एकमात्र आश्रय और मार्गदर्शक थे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-५-१९३६

४४९. तार : बेगम अन्सारीको

११ मई, १९३६

अभी-अभी डाक्टर अन्सारीके गुजर जानेकी खबर सुनी। आपका दुख मेरा भी दुख है। मैं तो एकाएक अनाथ जैसा अनुभव करता हूँ। मैं जानता हूँ कि आपको अल्लाहमें गहरी आस्था है। इसलिए आपको मेरे जैसे साधारण आदमियोंके दिलासेकी जरूरत नहीं है। बेचारी जोहरा[1]। भगवान आप सब पर कृपा रखे। सरदार वल्लभभाई यहीं हैं और मेरे साथ वह भी अपनी संवेदनाएँ भेजते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-५-१९३६

४५०. पत्र : जाकिर हुसेनको[2]

११ मई, १९३६

डाक्टर अन्सारीकी मौतकी खबर मुझे तुम्हारा तार आनेसे पूर्व ही मिल गई थी। मैंने बेगम साहिबाको तार व प्रेसको सन्देश भेजा है।[3] मैंने जोहराको भी लिख दिया है।[4] मैं इस बारेमें तुमसे पूरे विवरणकी आशा करता हूँ। कृपया मुझे बताओ कि 'प्रैक्टिस' व घरकी देखभाल कौन करेगा। इस मौतसे मैं जितना निराश हो गया हूँ वैसी निराशा मुझे कम ही मौतोंसे होती है। मैंने डा० अन्सारीके बारेमें सोचा था कि वे तो शतायु होंगे। मैं जानता हूँ कि मेरा यह सोचना गलत था। इसलिए जब मुझे प्रेस-तार मिला, तो पहले तो मुझे विश्वास ही नहीं हुआ। वे अनेक मनुष्योंके जीवन-अंग बन चुके थे। किन्तु परमात्मा महान् है। वही देता है, और वही ले लेता है। हम उसके उद्देश्योंको कभी नहीं जान सकते। हम उसकी व्यवस्थासे लड़नेका दुस्साहस नहीं कर सकते। हमें आशा करनी चाहिए और विश्वास रखना चाहिए

१. डॉ० अन्सारीकी लड़की।
२. जामिया मिलिया, दिल्लीके प्रधानाचार्य।
३. देखिए पिछले दो शीर्षक।
४. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

कि जिस प्रकार उनके जीवनमे हमेशा अच्छाई ही सामने आई, उसी प्रकार इस भले मित्रकी मृत्युसे कुछ अच्छाई ही सामने आयेगी। मै अच्छी तरह जानता हूँ कि जामियाके लिए उनकी मौतका क्या मतलब है। मेरी तुम सबके साथ हार्दिक सहानुभूति है।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

४५१. पत्र: अमृत कौरको

नन्दी हिल, मैसूर
११ मई, १९३६

प्रिय पगली,

अभी-अभी मुझे तुम्हारा पत्र मिला। हम कल यहाँ सकुशल पहुँच गये। कल रविवार था और इसीलिए हालाँकि मुझे तुम्हारा खयाल आया था, लेकिन मैंने तुम्हे तार देनेका विचार छोड़ दिया। जो लोग गाँववालोसे मिलने-जुलनेका प्रयत्न करते है उन्हे यह भूल जाना पडता है कि तार-जैसी भी कोई चीज होती है। उनके लिए हफ्तेमे एक डाक ही सब कुछ होती है, और कभी-कभी तो वह भी नही। सेगाँवमें सप्ताहमे एक बार डाक आनी चाहिए, लेकिन मुझे बताया गया है कि वर्धाका डाकिया सेगाँवके किसी भी आदमीको, जो उसके सामने पड़ता है और जिस पर उसे भरोसा होता है, पत्र थमा देता है!!!

तुम्हारे पत्रोको जब मैं पढ लेता हूँ और उनका उत्तर दे देता हूँ तो वे सब फाड़ दिये जाते हैं।

आशा है कि मैंने जो पत्र[1] ट्रेन पर पेंसिलसे लिखा था वह तुम्हे मिल गया होगा। यह मद्रासमे छोड़ा गया था।

मैं पहाडीकी तलहटीसे ऊपर तक पैदल चलकर गया। इसमे मुझे डेढ घटे लगे और इसमे मैंने ५ मीलसे ज्यादा रास्ता तय किया। मै वहुत धीरे-धीरे चला। इसलिए कोई थकान नही हुई। डा० अन्सारीकी इच्छा थी कि सरदार गर्मियाँ किसी पहाड़ी स्थल पर बिताये। लेकिन वह स्वय ही न रहे। जाहिर है कि उनकी मौत एकदम-अचानक हो गई। मेरे लिए तो यह बहुत बडी व्यक्तिगत क्षति हुई। मैं वहुतसे मामलोमे उनकी सलाह पर निर्भर करता था।

ज[ालधर] म्युनिसिपल कमेटीके लिए अपनी नामजदगीका तुम विरोध न करो, इसके लिए तुमपर जो दवाव डाला जा रहा है, उसे मैं अच्छी तरह समझता हूँ।

१. देखिए पृ० ४१५-६।

पागल लोग चूँकि ईमानदार और इस कारण निष्पक्ष होते है इसीलिए उनकी हमेशा माँग रहती है। वरना यह बात तुम्हारे सग क्यो होती? तुम, जोकि सब पागलोकी राजकुमारी हो—पुश्तैनी अधिकारके बलपर नही, बल्कि अपनी योग्यताके आधार पर।

शिमलाको कम गन्दा बनानेका जो तुम प्रयत्न कर रही हो, उसमें मुझे ऐतराज नही है। बस तुम्हे बीमारी नही लगनी चाहिए। तुम म्युनिसिपल कमेटीसे क्यो नही कहती। बेशक, सेगाँव और सिन्दीके बारेमे जो बात सच है वही शिमलाके काले शहरके लिए भी सच होगी। तुम शायद जानती होगी कि मद्रासका हिन्दुस्तानी बस्ती-वाला पुराना भाग आज भी काला शहर कहलाता है। किसी भी नगर-पिताको यह नही सूझा कि उसका नाम बदल दे, हालाँकि कुछ सडकोके नाम उन्होने देशभक्तोके नाम पर रख दिये है। शिमलाकी ऊँचाइयोपर पहुँचने मात्रसे ही हमारे अन्दर सहसा सफाईकी आदते नही आ सकती। लेकिन यदि म्युनिसिपल कमेटी चाहे तो वह सफाई-स्वच्छता लागू करवा सकती है। वहाँ तो बहुत-सी चीजे ऊपरसे थोपी जाती है। लेकिन सफाई-स्वच्छताके नियमोको यदि ऊपरसे लागू किया जाये, तो इसमें आपत्तिकी गुंजाइश सबसे कम ही होगी।

खैर, नन्दी हिल वास्तवमे स्वच्छताका आदर्श है, हालाँकि इसमें शक नही कि यह स्वच्छता ऊपरसे लागू की गई है। यहाँका वातावरण सुन्दर है। स्वर्ग जैसी शान्ति है। यहाँ कोई मोटर-कार, या अन्य किसी प्रकारकी गाडियाँ नही है, यहाँ तक कि रिक्शे भी नही है। यहाँ आरामसे केवल ३० परिवार ही रह सकते है। इससे ज्यादा-को रहने ही नही दिया जाता। मै नही समझता कि नन्दी हिलसे ज्यादा एकान्त, स्वच्छ और शान्त कोई और पहाडी है। सरदार तो यहाँकी शान्तिको देखकर खुशीमे पागल है। मै जानता हूँ कि यदि तुम यहाँ होती तो तुम भी इसे पसन्द करती।

कु[मारप्पा] बुधवारको पहुँच रहे है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७१) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३८० से भी।

४५२. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

नन्दी हिल
१२ मई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

अगाथाके नाम मेरा उत्तर[1] मैंने तुम्हारे पास इस कारण भेजा कि मैं जान लूँ कि मैंने तुम्हारा रवैया ठीक-ठीक बयान किया है या नहीं।

मगर मुझे खुशी है कि तुम मुझीसे निपट रहे हो। मैं किसी "ऐसी प्रणालीका समर्थन करनेका, जिसमें सतत और विनाशकारी वर्ग-संघर्ष निहित है," या ऐसी प्रणालियोंके समर्थन करनेका, जिनका वास्तविक आधार हिंसा पर है, या कुछ लोगोंकी छोटे-मोटे कसूरोंके लिए आलोचना और निन्दा करनेका और जो दूसरे लोग कहीं अधिक महत्वपूर्ण दुर्बलताओंके अपराधी हैं, उनकी तारीफ करनेका दोषी नहीं हूँ।

सम्भव है, अनजानेमें मुझसे तुम्हारे बताये हुए अपराध होते हों। ऐसा है तो तुमको मुझे ठोस उदाहरण देने चाहिए। मैं पहले ही स्वीकार कर चुका हूँ कि तुम्हारा काम करनेका तरीका जैसा मुझे दिखाई देता है उससे मेरा ढंग भिन्न है। मगर वर्तमान प्रणाली सम्बन्धी [हमारे] दृष्टिकोणमें कोई अन्तर नहीं है।

डा० अन्सारीकी मृत्यु एक भारी धक्का है। मेरे लिए उनकी दोस्ती महज राजनैतिक मित्रतासे कहीं अधिक थी।

आशा है, तुम थोड़ी-सी ठंडी हवा खानेके लिए खाली जा रहे हो या मेरे पास आ रहे हो।

स्वरूपसे कह देना कि उसके दो खत मिले हैं। सर तेजको मैं लिखूंगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३६; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए "पत्र : अगाथा हैरिसनको", ३०-४-१९३६।

४५३. पत्र : डॉ० नूर एम० मलिकको

१२ मई, १९३६

प्रिय मित्र,

आपका २ अप्रैलका पत्र पाकर मुझे बहुत आनन्द हुआ। आपका भारत वापस लौट आना मुझे बहुत पसन्द है फिर भी मुझे आपको इस बातके लिए प्रोत्साहन नही देना चाहिए, क्योकि मेरे विचारमे आप जिस स्थितिमे है वही आपके लिए बेहतर है। भारतमे एक नया अस्पताल चलाना बडा ही कठिन कार्य है।

हृदयसे आपका,

श्री नूर एम० मलिक, एम० डी०
७४०७, ट्वेल्फ्थ ऐवेन्यू
डेट्रॉयट, मिशिगन

अंग्रेजीकी प्रतिसे · प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

४५४. पत्र : शर्माको

१२ मई, १९३६

प्रिय शर्मा,

मुझे खेद है कि पिछली ३० ता० के आपके पत्रको मै केवल अब पढ पाया हूँ। हाँ, लखनऊ-प्रदर्शनीमे स्वदेशी-सम्बन्धी जो व्यग-चित्र मैने देखे थे, मुझे बहुत पसन्द आये। यदि उनकी प्रति उपलब्ध हो तो मै अपने लिए एक प्रति चाहूँगा।

जिस स्वदेशी प्रदर्शनीमे मिलका कपडा रखा जाये वहाँ खादी-प्रदर्शनका प्रश्न टेढा है। जब शकरलाल बैंकर लखनऊमे थे तब आपने इस पर उनसे चर्चा कर ली होती तो अच्छा था। यदि ऐसी प्रदर्शनियोमे खादीका प्रदर्शन नही किया जाता तो इस अभावके पीछे ठोस व्यावसायिक कारण है। किन्तु मै तैयार हूँ कि इस विषय पर मुझे कायल किया जा सके। किन्तु आपके लिए सबसे पहला कदम होगा कि आप इस मामले पर शंकरलाल बैंकरका विचार-परिवर्तन कर ले।

हृदयसे आपका,

मैनेजर
इलाहाबाद स्वदेशी लीग
इलाहाबाद

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४५५. पत्र : एम० बी० गोडबोलेको

१२ मई, १९३६

प्रिय डॉ० गोडबोले,

कृपया मुझे क्षमा कीजिएगा कि मैं इससे पूर्व आपके पिछले १५ मार्चके पत्रका उत्तर नही दे सका। उत्तर देना असम्भव था क्योकि मैं इधर-उधर घूम रहा था। अभी कुछ ही दिन हुए मैं उसे पढ पाया। मुझे खेद है कि डॉ० लिण्डलाहरकी पुस्तके पढ जानेके मामलेमे मुझे आपको निराश करना होगा। उन ग्रन्थोके पुनर्मुद्रणका कोई लाभ मुझे नही दिखा। लेखकके कुछ निष्कर्ष तो मताग्रहपूर्ण है और कुछ दूसरे निष्कर्ष मात्र अपर्याप्त निरीक्षणके आधार पर बने है।

हृदयसे आपका,

बापू

डॉ० एम० बी० गोडबोले
पोस्ट बॉक्स न० १९
पूना सिटी

अग्रेजीकी प्रतिसे. प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य. प्यारेलाल

४५६. तार: प्रभावतीको

१३ मई, १९३६

प्रभावती
बाबू हरसूदयाल
सिताब दियारा

नियमपूर्वक पत्र भेजे हैं। आज लिख रहा हूँ। आशा है तुम अच्छी होगी।

बापू

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य: प्यारेलाल

४५७. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

नन्दी हिल
१३ मई, १९३६

प्रिय भाई,

हाँ, मुझे अन्सारीकी मृत्यु पर सहानुभूतिकी आवश्यकता थी। अतः आपके पत्रका बहुत-बहुत स्वागत है। बहुत कम मौतोंसे मैं उदास और निराश होता हूँ। इस मौतने मुझे उदासी और निराशासे भर दिया है। न केवल हम दोनोंके दिल एक थे बल्कि हममें बहुत-सी बातें भी एक-सी थी। हम दोनोंके दिमागमें कुछ संयुक्त योजनाएँ भी थी। ये सब एक ही धक्केमें चूर-चूर हो गई हैं। आपने दिल्लीके पुराने दिनोंकी चर्चा करके मेरे शोकको तीव्र कर दिया है।

आशा है, आप मजेमें हैं। इससे पूर्व कि मैं तथा सरदार यहाँसे चले जायें, हमारी भेंट अवश्य होनी चाहिए।

सप्रेम,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २८६

४५८. पत्र : प्रभावतीको

१३ मई, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा तार कल रातको मिला। तेरा दुःख किस तरह दूर करूँ? पत्र तो मैंने तुझे लिखा ही है।[1] इसमें जयप्रकाशके मिल जानेकी और तेरे बनारस जानेको कहनेकी बात लिखी है। तुझे धीरज नही खोना चाहिए। मैं पत्र न लिखूँ, यह नही हो सकता। तुझे देर-सबेर मिले, यह अलग बात है। तेरे तारसे ऐसा लगा कि तू १५ तारीखको श्रीनगर पहुँच जायेगी। इसलिए यह पत्र श्रीनगर भेज रहा हूँ। तेरी तबीयत अच्छी हो गई होगी। तू दूध बराबर ले रही होगी। बनारस जानेके बारेमें क्या तय हुआ? तू जो-कुछ लिखना चाहे खुलकर लिखना। संकोच मत करना। तेरी इच्छाके अनुकूल तेरे पत्रोंकी व्यवस्था करूँगा। हम यहाँ रविवारको आ गये। यह जगह उत्तम है।

१. देखिए "पत्र : प्रभावतीको", ३०-४-१९३६।

शान्ति और एकान्त मिलता है। पहाड़ छोटा है, इसलिए थोड़े ही व्यक्ति रहते हैं। तू यहाँ होती तो तुझे अच्छा लगता। बा भी तेरी याद करती है। यहाँ सरदार, मणि,[1] कुसुम गांधी, तारा मशरूवाला,[2] नवीन, कान्ति, कनु, बा, मैं और सरदार, इतने लोग हैं। कुमारप्पा और शान्ता आनेवाले हैं और चारेक दिनोंमें काकासाहब आयेंगे। सरदार ठीक रहते हैं। ताराके बारेमें तो जब वह अच्छी हो जाये तब। हो तो जायेगी। कुसुम कमजोर तो है किन्तु उसके यहाँ ठीक हो जानेकी आशा है। ऐसा लगता है कि हम यहाँ १५ जून तक रहेंगे। इसमें से कुछ समय बंगलोरमें जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६३) से।

४५९. पत्र : अमृत कौरको

नन्दी हिल
१४ मई, १९३६

प्रिय पगली,

बीमार पड़ना तो तुम्हारी पुरानी आदत है। मेरी इतनी इच्छा होती है कि तानाशाही अधिकारका प्रयोग करके तुम्हें इस सुन्दर स्थल पर खींच लाऊँ। यहाँ न कोई चिन्ता है, न कोलाहल, यहाँ धूलका नाम नहीं है। यहाँ तो पूर्ण शान्ति, सुव्यवस्थित हरियाली और ताजगी देनेवाली ठंडक है। कोई सामाजिक समारोह नहीं, टेनिसके लिए बढ़िया मैदान हैं और सैरके लिए सुन्दर रास्ते। किन्तु बेचारा तानाशाह एक पागल विद्रोहिणीके आगे क्या कर सकता है? इसीलिए तुम्हें तो यहाँ नन्दीकी स्वच्छ ताजी हवा खानेके बजाय कष्ट भुगतना और शिमलाकी धूल ही फाँकना है। आशा है तुम्हारे अगले पत्रमें कुछ अच्छी खबर मिलेगी। खबरदार, जो ऐसी सेहतमें तुम उन गन्दे स्थलों पर जाओ।

कु[मारप्पा] और शान्ताको अभीसे कुछ आराम महसूस होने लगा है। वे खूब पैदल सैर करते हैं।

हाँ, बेशक तुम्हारा पूर्ण स्वामिभक्त नबीबख्श[3] भी तुम्हारे साथ सेगाँव आये।

सप्रेम,

अधिकारविहीन जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७२) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६३८१ से भी।

१. मणिबहन पटेल।
२. किशोरलाल मशरूवालाकी बहन।
३. अमृत कौरका पुराना सेवक।

४६०. पत्र : मीराबहनको

१४ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। हाँ, यहाँ बहुत बढ़िया मौसम है। मेरा व्यक्तिगत प्रेम तो यह चाहता है कि तुम हमारे साथ इस मनोहर पहाडीकी शान्ति और एकान्तका आनन्द लो, मेरा अवैयक्तिक प्रेम यह कहता है कि तुम जहाँ हो वही अच्छी हो, क्योकि वह तुम्हारे कर्त्तव्यका अग है। कुमारप्पा और शान्ता कल यहाँ आ गये। सरदार यहाँ पहलेसे बहुत अच्छे हैं। वह खूब दूर-दूर तक टहलने जाते हैं और उनकी खुराक भी पहलेसे ज्यादा अच्छी हो गई है।

डा० अन्सारीके देहान्तसे मुझे बडा आघात पहुँचा। अभी तक उसका असर मिटा नही है। कितनी ही बातोमे मुझे उनका न होना अखरता है।

मुझे खुशी है कि झोपड़ेके काममें तुम्हारी अच्छी प्रगति हो रही है। सडकके बारेमे मैंने तुम्हारा कथन समझ लिया। जो उत्तम हो वही करो। इन मामलोमे तुम्हारे निर्णय पर मुझे अटूट श्रद्धा है।

बलवन्तसिंह और मुन्नालाल तुम पर किसी भी प्रकारसे भार न होने चाहिए। उनके नामके पत्र साथमे है।[1]

आशा है जब तक यह पत्र तुम्हारे पास पहुँचेगा, बरोड़ाकी जमीन[2] ले ली जायेगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३४) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८०० से भी।

१. बलवन्तसिंहको लिखे पत्रके लिए देखिए अगला शीर्षक। मुन्नालालको लिखा पत्र उपलब्ध नहीं है।

२. *बापूज लेटर्स टु मीरा* नामक पुस्तकमें मीराबहनने लिखा है: "मेरी कुटियाके लिए पहाड़ी परकी जमीन।"

४६१. पत्र : बलवन्तसिंहको

नन्दी दुर्ग
१४ मई, १९३६

चि० बलवतसिंह,

मीराबहनने खबर दी है कि सेगाव पहूच गये हो। अच्छा हूआ। अब मीरा-बहनकी सेवा करो, और प्रफुल्लित रहो। मेरी आशा है कि कही जानेकी इच्छा तक मेरे आने तक नही होगी। गोविंद और दशरथको अच्छी तरह तैयार करो। शरीर अच्छा रखो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८४) से।

४६२. पत्र : एस्थर मेननको

१४ मई, १९३६

प्यारी बिटिया,

परमात्मा तुम्हे अपने इस आदर्श-वाक्यका पालन करनेकी पूरी शक्ति दे कि 'दुख और सुख दोनोमे हानि-लाभको समान मानना कोई आसान काम नही है।' खैर, मै जानता हूँ कि तुम्हारा जीवन व्यर्थ नही है। तुम्हारा मेरे पास न आना बिलकुल उचित है। तुम तभी आओगी जब परमात्मा चाहेगा।

मुझे आशा है कि तंगई[1] फिरसे बिल्कुल स्वस्थ हो गई है। बच्चोको चुम्बन। तुम देखना कि क्या वे मुझे पत्र लिखेंगे। यहाँ उनके लिए एक छोटा-सा पत्र है।[2]

उन्हे लिखनेके लिए फुसलाना मत।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सख्या १३९) से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. एस्थर मेननकी पुत्री।
२. देखिए अगला शीर्षक।

४६३. पत्र: नान[1] और तंगई मेननको

१४ मई, १९३६

प्यारी बच्चियो,

क्या तुम्हे याद है कि एक समय था, जब तुम मुझे पत्र लिखा करती थी? क्या तुम नही जानती कि तुम बुद्धि व आयु मे बडी हो गई हो? तगईकी बीमारीके बारेमे सुन कर मुझे दुख हुआ। तुम्हारे जैसे कोमल बच्चोके लिए टोप पहनना आवश्यक है।

प्यार व चुम्बन सहित,

बापू

[पुनश्च.]

आजकल मै जहाँ हूँ वहाँके बारेमे एस्थर तुम्हे सब बता देगी।

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड, पृ० १२२

४६४. पत्र: अमृतलाल वि० ठक्करको

१४ मई, १९३६

भाई बापा,

इसके साथ २०० रुपयेका सोफिया वाडियाकी तरफसे दिया गया चेक भेज रहा हूँ। उसे इसकी पहुँच भेजना आवश्यक नही है। मुझे भेजना।

शास्त्रीके विषयमे आपकी बात समझ गया। मद्रासमे चार घटेके कामका विवरण सलग्न है। जगन्नाथदासने कोडम्बक्कममे प्रार्थना रखी थी। मैने कहा कि जब तक इस बातका आश्वासन नही मिलता कि सस्था चलाई जाती रहेगी, मै नही जाऊँगा। जगन्नाथ-दासने आश्वासन दिया सो भेज रहा हूँ। सँभाल कर रखना। प्रतापमलजी भी मिले थे। उन्होने भी आर्थिक कष्ट दूर करना स्वीकार किया है; किन्तु आश्रमके योग्य वातावरण उत्पन्न करनेवाला कोई व्यक्ति माँगते थे। ऐसा व्यक्ति कहाँसे लाऊँ? यहाँ वेकट सुब्बैयासे मिला और उससे बात की। उसने और दूसरे लोगोने शास्त्रीके बारेमे अपनी नापसन्दगी जाहिर की। वेकट सुब्बैयाका कहना है कि वे शास्त्री और

१. एस्थर मेननकी पुत्री।

गणेशनके बिना काम चला लेंगे। चारमें से कोई एक वारी-वारीसे इस जगह जाता रहेगा। जो कर सका हूँ सो यह है। अब तुम वहाँसे लिखो और उनसे साफ कह दो कि गणेशन और शास्त्रीको छोड़ दें। शास्त्रीका इस्तीफा तो स्वीकार कर ही लिया है। तुम जगन्नाथदासके कथनका उपयोग कर सकते हो और अपनी यह आशा व्यक्त कर सकते हो कि चार आदमियोंसे काम चल जायेगा।

अमतुस्सलामको डॉ० अन्सारीने रोक लिया था इसलिए उसे जगह देना। बेचारा मलकानी लिखता है कि उसे रुक्मिणीके कारण जाना पड़ा, यह बात उसे असहनीय-सी लगती है। रुक्मिणी तो किसीको भी बर्दाश्त नहीं कर पाती।[1] इसलिए क्या सबको चला जाना चाहिए? मैंने उसे सख्त चिट्ठी लिखी है।[1] अमतुस्सलाम उसकी बातोंपर शायद ही ध्यान दे। यदि तुम उसे काम सौंपते रहो तो वह खुश बनी रहेगी।

मैं सोचता हूँ कि डाक तुम्हारे पास खोलकर और देखकर भेजी जाती है। चेक आदि हो तो वे तुम्हारे पीछे-पीछे न घूमते रहें।

तुम भी काफी यात्रा कर रहे हो। लगता है नये सिरेसे जवान हो रहे हो। यदि तुम्हारे अनुभवोंका लाभ लोगोंको मिले तो वे अमूल्य बन जायेंगे। गढवाल तो बहुतोंके लिए एक 'बन्द किताब' है। मैंने सुना है कि वह बहुत ही रमणीक और बहुत ही गरीब अंचल है।

हम तो नन्दी दुर्गकी हवा खा रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२२) से।

४६५. पत्र : पुरुषोत्तम और विजया[2] गांधीको

नन्दी दुर्ग
१४ मई, १९३६

तुम्हारा सम्बन्ध दीर्घकाल तक निभता रहे और तुम दोनों अपना जीवन सेवामें ही बिताओ यह मेरी इच्छा और आशीर्वाद है। विवाहित जीवनमें विषय-भोगके लिए स्थान ही नहीं है और स्त्री-पुरुष संग केवल सन्तानोत्पत्तिके लिए ही होता है, यह स्पष्ट करते हुए मैंने अभी-अभी जो लेख[3] लिखा है वह तुम दोनोंको ठीक लगे तो उस प्रकार चलनेका प्रयत्न करना। ऐसा जीवन व्यतीत करनेकी मर्यादाएँ हैं; उनका पालन करने पर ही यह सहज बन सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. ७ मई, १९३६ को।
२. हरखचंद मोतीचंद शाहकी पुत्री।
३. देखिए "सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन", ४-४-१९३६।

४६६. पत्र : नारणदास गांधीको

नन्दी दुर्ग
१४ मई, १९३६

प्रिय नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। वर-वधू[1] के लिए आशीर्वाद इसके साथ है। दोनोके लिए सूतकी मालाएँ भी इसीके साथ रख रहा हूँ। दूसरी चिट्ठियाँ भी इसीमे रहेगी।

कनु चैनसे है। वह अपने काममे मग्न रहता है। भावना उसमे भरपूर है। मुझे तो उसका भविष्य उज्ज्वल दिखता है।

कुसुम भी ठीक है। हम १५ [जून] तक तो मैसूरमे ही होगे, इसलिए अगर कुसुम वहाँ २०-२२ तक न पहुँचे तो कोई हर्ज तो नही है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८९ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

४६७. पत्र : लीलावती आसरको

१४ मई, १९३६

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला।

वहाँ तो गर्मी हो ही कैसे सकती है? समुद्र-तटकी यही तो खूबी है।

तू बहुत उतावली और बिना विचारे काम करनेवाली है। तूने सेगाँवमे बिना सोचे जो साहसका काम किया वह न किया होता तो भी तुझे सही रास्ता न सूझता। साहसके योग्य काम समयपर योग्य प्रसग पर किया जाये तो अच्छी चीज है; नही तो उसे दुस्साहस ही कहेगे। तूने जो-कुछ सेगाँवमे किया दुस्साहस था। उस किस्सेकी याद दिलानेका अभिप्राय इतना ही है कि फिर ऐसा न हो। तुझे वहाँ तो सावधानीसे चलना ही है।

मैने मीराबहनको लिख दिया है[2] कि यदि तू मेरे पहले वहाँ पहुँच जाये, तो तुझे जगह दे दे। उसकी स्वीकृति भी आ गई है। यदि तू जाती है तो धर्म समझ

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. ७ मई, १९३६ को।

कर जाना, मुझे खुश करनेके लिए नही। मैंने तो तुझसे कह दिया है न कि मै तुझे सेगाँव ले ही जाऊँगा। इसमे कोई अन्तर नही पडेगा। तबीयत मत बिगाड लेना। यहाँ सब मजेमे है। जगह खूब शान्त और छोटी-सी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४१) से। सी० डब्ल्यू० ६६१६ से भी, सौजन्य. लीलावती आसर

४६८. पत्र : शान्तिकुमार न० मोरारजीको

१४ मई, १९३६

चि० शान्तिकुमार,

तुम्हारा पत्र कल शामको ही मिला। आज तुम्हारा जन्म-दिन है। तार कहाँ भेजूं? तत्काल भेज दूं तो भी आज शायद ही मिले। २४५ हो गये है और हम नन्दी दुर्गमे है। मेरा आशीर्वाद तो है ही। दीर्घायु प्राप्त करो और अपनी शुद्ध प्रवृत्तियोको नित्य बढाते रहो।

माँजीको प्रणाम। गोकीबहन[1] और सुमतिको[2] आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७२५) से, सौजन्य शान्तिकुमार न० मोरारजी

४६९. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१४ मई, १९३६

चि० कृष्णचद्र,

मेरे पूर्व विचारो में परवर्तन हूआ है। पूर्वकालमे मै क्विनीन इ० का आग्रहपूर्वक त्याग रखता था। अब ऐसा नही है। थोडे समयके लिये लेनेसे कुछ हानि नही होती। सब नैसर्गिक उपायोको हम नही जानते है। जो जानते हैं वे सब बीमारीयोके लिये पर्याप्त नही है। नीमकी पत्तियां कटु होनेके ही कारण त्याज्य न मानी जाय। उसके गुण प्रसिद्ध है। ऐसे ही इमलीके कुछ गुण भी सर्वमान्य है। हरेक आदमीको कई वस्तु लाभदायी होनी ही चाहिये ऐसा कोई नियम नही है।

१. और २. शान्तिकुमार मोरारजीकी क्रमशः बुआ और पत्नी।

क्विनीनसे तुमको दूध प्रतिकूल हो गया है ऐसा माननेका कोई कारण नही है। दवाई का सवेरे भोजन नही लेनेका नियम जो रात्री भोजन नही करते उनके लिए नही है। लेकिन तुमको यदि प्रात भोजन अनुकूल न जचे तो उसे छोडना। प्रति सप्ताह उपवास करनेका भी नियम बनानेकी आवश्यकता नही है। जब बदहजमी जैसा प्रतीत हो तब उपवास अवश्य किया जाय। रीढ की हड्डीका दर्द दूर हूआ सो अच्छा हूआ। हाँ सेगाँवमे रहनेका विचार है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२७०) से।

४७०. तार: जमनालाल बजाजको

नन्दी
१५ मई, १९३६

जमनालाल बजाज
वर्धा

तारावहनकी[1] मृत्युका ब्योरा तारसे भेजिए।

वापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १८०

४७१. तार: सत्यदेवको

[१५][2] मई, १९३६

सत्यदेवजी
कनखल

ताराबहनकी मृत्युका ब्योरा तारसे भेजिए।

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१. इनका असली नाम मेरी चेजले था। मेरी चेजले बद्री-केदार की तीर्थ-यात्रा के दौरान बीमार पड़ गई थीं। उनकी अस्पतालमें मृत्यु हो गई। कनाडाके बैंकोंमें जमा अपना सारा धन और सारी सम्पत्ति वह गांधीजीके नाम वसीयत कर गई थी। देखिए "स्व० ताराबहन", २३-५-१९३६ भी।

२. साधन-सूत्रमें '१४' लिखा हुआ है जो सम्भवतः भूलसे लिखा गया है। गांधीजीको मेरी चेजलेकी मृत्युकी सूचना १५ मईको मिली थी; देखिए अगला शीर्षक।

४७२. पत्र : एफ० मेरी बारको

नन्दी हिल
१५ मई, १९३६

चि० मेरी,

मुझे अभी तार मिला है कि ताराकी हृषीकेशमें मृत्यु हो गई। खबरने स्तम्भित कर दिया, विश्वास ही नही होता। मुझे और कुछ ब्योरा नही मिला है। मैंने उसे तीर्थयात्राका[1] बीडा उठानेके विरुद्ध चेतावनी दे दी थी, पर उसकी इच्छा-शक्ति तो फौलादी थी, एक बार जो ठान लिया वह अडिग था। मैंने और ब्योरेके लिए तार भेजा है। शायद तुम्हे पूरी सूचना पहले ही हो। उसके क्षमाशील स्वभाव और उसकी उदारताने मुझे जीत लिया था। उसका मनुष्य-स्वभावकी साधुतामें विश्वास प्रशसासे परे था। अपने मान्य ध्येयके लिए उसने आत्मोत्सर्ग कर दिया है। शान्ता यही है और उसने कुमारी ब्लाइथका पता सूचित किया है। कुमारी ब्लाइथ उसकी साथिन थी। तुम्हे ताराके विषयमे जो-कुछ पता हो और मुझे बताना उचित समझो तो बताओ। तुम्हारा पत्र कल मिला। इतने दिनो तक मैंने तुम्हारी बातका अक्षरश पालन किया है और तुम्हे बिलकुल पत्र नही लिखा।

कुमारी मैडेनके पत्रकी मुझे प्रतीक्षा है और मुझे खुशी है कि वह एक साल तक तुम्हारे पास रहेगी। ताराकी इच्छा थी कि मै उसे [कुमारी मैडेनको] फिरसे मिलनेको बुलाऊँ, परन्तु तत्काल ऐसा करनेका सवाल ही नही उठा क्योकि मै नन्दी आनेवाला था। परन्तु मुझे लगता है कि यह नई व्यवस्था बेहतर है। फिर भी, उसे अपने जीवनमे परिवर्तन लानेमें जल्दबाजी नही करनी चाहिए। कुछ परिवर्तन यूरोपियनोके लिए नितान्त अशक्य है। हर एकको अपनी सामर्थ्यकी सीमा समझनी चाहिए। तुम बेशक अपनी बचतमे से छतके लिए या ऐसे ही कामोके लिए पैसे खर्च लो। तुम्हे ताराके जीवनसे एक पाठ तो सीखना ही होगा कि किसी काममे अति न करो।[2]

दफ्तर तो मगनवाडीमे ही है और वही रहेगा। सेगाँव अच्छा स्थान है। आशा है तुम्हारा वहाँ जल्दी ही आना होगा।

यह बडा सुन्दर स्थल है। ऊँचाई अधिक नही है। सबसे दूर और शान्त है। यहाँ अधिक लोग नही बस सकते। मोटर या गाडियाँ तो क्या, घोडे भी नही चलते। हम लोग पैदल आये। मुझे ढाई घटे लगे। लिखनेके कागजमे सब जगह उन्नति हो

१. बद्रीनाथ-केदारनाथकी यात्रा।

२. मेरी बार इस समय बैतूलके निकट खेडी नामक गाँवमें समाज-सुधारका कार्य कर रही थीं।

गई है। हाथसे कागज बनानेकी कलाके विशेषज्ञ, चौधरीने[1] क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिये है। कुछ समयके लिए तो ऐसे कागजकी माँग सुनिश्चित हो गई है। कुमारप्पा मेरे साथ है। वा तो है ही, और सरदार तथा मणिबहन भी। मै यहाँ सरदारके स्वास्थ्यकी खातिर आया हूँ। डाक्टर अन्सारीने वायु-परिवर्तनके लिए पहाड पर आने पर बडा जोर दिया था। परन्तु वह स्वय सिधार गये! ! प्रत्येक चीजके पीछे निस्सन्देह भगवानकी ही इच्छा होती है। हमारा कर्त्तव्य तो विनम्र भावसे प्रयत्नभर करनेका ही है।

तुम दोनोको प्यार।

बापू

[पुनश्च]

साथ का पत्र गोपालके लिए है।[2] पढनेका प्रयत्न करना और उसे दे देना, अथवा वह जहाँ भी हो भेज देना।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०६०) से। सी० डब्ल्यू० ३३९० से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

४७३. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१५ मई, १९३६

दोबारा नहीं पढ़ा

प्रिय सतीश बाबू,

हैजेके रोगियोको सुव्यवस्थित उपचारकी आवश्यकता होती है। लेकिन लगता नही कि वैसा उपचार अभी हमारे देशमे शक्य हो। हमारे यहाँ सामूहिक जिम्मेदारीकी कोई ऐसी भावना नही है। हममे से जिन कुछेक लोगोको इस जिम्मेदारीका बोध है उन्हे तबतक सतत उद्यम करते रहना पडेगा जबतक कि उसका कुछ प्रभाव दृष्टिगोचर न होने लगे।

क्या आप प्रदर्शनीके खर्चमे कमी करने और उसे अधिक शिक्षाप्रद बनानेके कुछ सुझाव दे सकते हैं? यह प्रदर्शनी[3] अपने सीमित रूपमे शिक्षाप्रद तो काफी थी परन्तु सस्ती नही। बादमे बडी सख्यामें दर्शनार्थी आये और अगर अब कुछ घाटा होगा भी तो नगण्य ही। २५,००० रुपये प्रवेश-शुल्कसे और ५,००० रुपये दुकानोसे

१. यादवराव एस० चौधरी, जो हाथसे कागज बनानेकी कलाके एक विशेषज्ञ थे।
२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
३. यह प्रदर्शनी मार्च-अप्रैलमें लखनऊमें हुई थी।

प्राप्त हुए। खादी खूब बिकी और दूसरी बहुत-सी चीजें भी। आपके पास तो विस्तृत मार्ग-दर्शन पुस्तिका होगी। उसे पढ़ डालिए और कुछ ठोस सुझाव दीजिए।

अगर निवासके अक्सर फेर-बदलसे आप चुस्त रहते हो तो ऐसा ही अपना कार्यक्रम बना लीजिए। एक निवास-स्थलको चिरस्थायी बनानेमें कोई लाभ नहीं। जब आपके लिए सेवाके कई मार्ग खुले हैं तो आपको वही मार्ग अपनाना चाहिए जो आपके स्वास्थ्यके लिए सबसे अनुकूल हो। यदि अतराई[1] का कार्य एकमात्र कार्य होता और अपरिहार्य होता तब तो मैं आपके इस आत्म-होमको समझ सकता था। अपने शरीरको सेवाका ठीक उपकरण बनाये रखनेके लिए आपको हर सम्भव यत्न करने चाहिए।

प्यारेलाल वहाँ हैं। आशा है वह आपका मार्ग-दर्शन स्वीकार करेगा।

आशा है हेमप्रभा और आप कुशलसे होंगे।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२९) से।

४७४. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

१५ मई, १९३६

चि० नरहरि,

तुम्हारा कार्ड मिला। सुमित्राके बारेमें तुम्हारी बात समझ गया। सरदारने वनमालाके पराक्रमकी बात सुनाई थी। मैं सुमित्राको चिन्तासे बचानेकी कोशिश कर रहा हूँ। तुमने उसे भेज कर ठीक ही किया। रामदास समझ गया है कि अपनी माँके पास जाकर सुमित्रा अपना कल्याण खटाईमें डालती है।

गो-सेवा सघके [2] रुपये गाधी सेवा सघमें जमा कर दिये गये हैं, यह स्पष्ट करनेवाला कागज साथ भेज रहा हूँ। इसे दाखिल दफ्तर कर देना।

यहाँ आबहवा सुन्दर है। सरदारका तो कहना है कि आबू गन्दा हो गया है और यह पहाडी सफाईकी दृष्टिसे आदर्श कही जा सकती है। शान्तिमें तो इसका कोई मुकाबला नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस०.एन० ९०९३) से।

१. बंगालमें एक स्थान।

२. साधन-सूत्रमें अस्पष्ट है।

४७५. एक महान् मित्र चला गया

'हरिजन' मे उन सब महान् पुरुषोकी मृत्यु पर, जो इस ससारसे सिधार जाते है, साधारणतया मै लिखता नही हूँ। 'हरिजन' एक विशेष प्रवृत्तिसे सम्बन्ध रखने-वाला पत्र है। आमतौर पर उन्ही व्यक्तियोकी मृत्युके विषयमे इसमे लिखा जाता है जिनका कि हरिजन-कार्यके साथ विशेष रूपसे सम्बन्ध होता है। कमला नेहरूके स्वर्गवास पर मैने 'हरिजन' मे जो नही लिखा उसमे मुझे असाधारण आत्म-सयमसे काम लेना पडा था। ऐसा करके मैने करीब-करीब अपने साथ जुल्म किया। मगर डॉ० अन्सारीके स्वर्गवास पर मुझे ऐसा आत्मनिग्रह करनेकी कोई जरूरत नही। कारण यह है कि हकीम अजमलखाँकी तरह ही वह भी मूलत हिन्दू-मुस्लिम एकताके एक प्रतीक स्वरूप थे। कडी-से-कडी परीक्षाके समय भी वह अपने विश्वाससे कभी डिगे नही। वह एक पक्के मुसलमान थे। हजरत मुहम्मद साहबकी जिन लोगोने जरूरतके वक्त मदद की थी, वह उनके वशज थे और उन्हे इस बातका गर्व था। इस्लामके प्रति उनमें जो दृढता थी और उसका उन्हे जो प्रगाढ ज्ञान था उस दृढता और उस ज्ञानने ही उन्हे हिन्दू-मुस्लिम एकतामे विश्वास करनेवाला बना दिया था। अगर यह कहा जाये कि जितने उनके मुसलमान मित्र थे उतने ही हिन्दू मित्र थे, तो इसमे कोई अत्युक्ति न होगी। सारे हिन्दुस्तानके काबिलसे-काबिल डॉक्टरोमे उनका नाम लिया जाता था। किसी भी जातिका गरीब आदमी उनसे सलाह लेने जाये, उसके लिए उनका दरवाजा हमेशा खुला रहता था। उन्होने राजा-महाराजाओ और अमीरोसे जो धन कमाया वह अपने जरूरतमन्द दोस्तोमे दोनो हाथोसे खर्च किया। कोई उनसे कुछ माँगने गया तो कभी ऐसा नही हुआ कि वह उनकी जेब खाली किये बगैर लौटा हो। और उन्होने जो दिया उसका कभी हिसाब नही रखा। सैकडो पुरुषो और स्त्रियोके लिए वह एक भारी सहारा थे। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नही कि सचमुच वह अनेक लोगोको रोता-बिलखता छोड़ गये है। वह अपने पीछे ऐसी पत्नी छोड गये है जो अत्यन्त ज्ञानपरायणा है, यद्यपि वह हमेशा बीमार-सी रहती है। वह इतनी बहादुर है और इस्लाम पर उनकी इतनी ऊँची श्रद्धा है कि उन्होने अपने प्रिय पतिकी मृत्यु पर एक आँसू भी नही गिराया। पर जो बहुत-से लोग मेरे ध्यानमें है वे ज्ञानी या फिलासफर नही है। ईश्वरमे तो उनका विश्वास धुंधला-सा ही है, पर डॉ० अन्सारीमे उनका जीवित विश्वास था। इसमे उनका कोई कसूर नही। डॉक्टर साहब की मित्रताके उनके पास ऐसे अनेक प्रमाण थे कि ईश्वरने जब उन्हे छोड दिया तब डॉक्टर साहबने उन्हे सहायता पहुँचाई। पर उन्हे यह क्या मालूम था कि डॉक्टर साहब भी उनकी मदद तभी तक कर

सके, जब तक कि सिरजनहारने उन्हें ऐसा करने दिया। जिस कामको वह जीवित अवस्थामें पूरा नहीं कर सके, ईश्वर करे वह उनकी मृत्युके बाद पूरा हो जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-५-१९३६

४७६. हिन्दी या हिन्दुस्तानी–२

गतांकके[1] 'हिन्दी या हिन्दुस्तानी' शीर्षक लेखमें यह तो मैं बतला ही चुका हूँ कि किस तरह और क्यों 'हिन्दी' और 'हिन्दुस्तानी' शब्दोंको समानार्थक समझता हूँ, और 'हिन्दी' शब्दका उपयोग जारी रखना क्यों जरूरी है।

गतांकमें इस सम्बन्धका जो पत्र[2] उद्धृत हुआ है उसमें 'हिन्दी' शब्दके इस्तेमाल पर यह एतराज उठाया गया है

> **पिछले जमानेमें मुसलमान हिन्दी सीखते थे, उसे एक अदबी जबानकी हैसियत देनेमें उन्होंने अपने हिन्दू भाइयोंसे ज्यादा नहीं तो उतनी ही कोशिश की है। लेकिन अदबी हैसियतके अलावा हिन्दीकी एक मजहबी और तहजीबी हैसियत है, जिसे मुसलमानोंकी पूरी जमात अपना नहीं सकती। इसके अलावा अब वह बहुत-से अलफाज अपने अन्दर शामिल कर रही है जो बिलकुल उसीके हैं, और वे लोग जो सिर्फ उर्दू जानते हैं उन्हें आमतौर पर समझ नहीं सकते।**

अगर पिछले जमानेके मुसलमानोंने हिन्दीको सीखा और उसे अदबी जबानकी हैसियत दी, तो मौजूदा जमानेके मुसलमान क्यों उससे किनारा करें? बेशक उस जमानेकी हिन्दीमें आजकी हिन्दीसे कहीं ज्यादा मजहबी और तहजीबी हैसियत थी। तो क्या किसी भाषाकी मजहबी और तहजीबी हैसियतकी वजहसे ही उस भाषासे हमें दूर रहना चाहिए? अरबी और फारसीसे क्या मैं इसीलिए बचूँ कि उन जबानोंकी धार्मिक और तहजीबी हैसियत है? अगर मैं उनसे प्रभावित नहीं होना चाहता या मेरे मनमें उनकी तरफ चिढ़ या नफरत है तो भले ही मैं उनसे प्रभावित न होऊँ। निःसन्देह अगर हमें सगे सहोदरोंकी तरह, जो कि हम हैं, एक साथ यहाँ रहना है, तो हम एक दूसरेकी संस्कृति या तहजीबसे क्यों कतरायें? और संस्कृत शब्दोंके इस्तेमाल पर झगड़ा करके खुद हिन्दी भाषाके खिलाफ विद्रोह क्यों करें? सीधे-सादे प्रचलित शब्दोंकी जगह संस्कृत शब्द रखने या तद्भव शब्दोंको संस्कृतके तत्सम शब्दोंका रूप देनेका कृत्रिम तरीका निःसन्देह निन्दनीय है। इससे तो भाषाकी सहज मिठास ही चली जाती है। मगर राष्ट्रके विकासके साथ-साथ केवल संस्कृत जाननेवाले हिन्दू

१. ९ मई, १९३६ के, देखिए पृ० ४१३-५।

२. देखिए परिशिष्ट २।

संस्कृत शब्दोका एक हद तक उपयोग करते है तो उनका ऐसा करना अनिवार्य है। सिर्फ अरबी जाननेवाले मुसलमान भी यही करते है, हालाँकि दोनो लिखते एक ही जवान है, और इसमे उनकी कोई खास पसन्दगी या नापसन्दगीकी वात नही है। पढे-लिखे हिन्दुओ और मुसलमानोको भाषाके दोनो ही रूपोका परिचय प्राप्त करना पडेगा। क्या अग्रेजी आदि सभी उन्नतिशील भाषाओके बारेमे यह वात सच नही है? शिक्षित अग्रेज 'सिम्पैथी' और 'फेलो-फीलिंग', या 'फादरली' और 'पैटरनल' या 'इयरली' और 'एनुअल', दोनो शब्दोको जानते है। कठिनाई तो हमारे लिए यह है कि आज हमारे दिल एक नही है और हममें से अच्छेसे-अच्छे लोगो पर भी आपसी सन्देहके जहरने असर डाल रखा है।

हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दू एक ही भाषाके मुख्तलिफ नाम है। हमारा मतलव आज एक नई भाषा बनानेका नही है, बल्कि जिस भाषाको हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दू कहते है उसे अन्तर्प्रान्तीय भाषा वनानेका हमारा उद्देश्य है। मै मानता हूँ कि श्री कन्हैयालाल मुशीने 'हस' की भाषाके समर्थनमे जो कहा है वह सही है। तमिल या तेलुगुकी किसी चीजका उल्था हिन्दी या हिन्दुस्तानीमे आप करें और उसमे सस्कृत शब्द न आये यह हो नही सकता। उनका आना लगभग अनिवार्य है, क्योकि उनमें सस्कृत शब्द बहुत ज्यादा है। यही हाल अरबी लफ्जोका है। अरबीकी किसी चीजका तर्जुमा अगर हम हिन्दी या हिन्दुस्तानीमे करने बैठे तो उसमें अरबी शब्दोको आनेसे हम रोक नही सकते। रवीन्द्रनाथकी 'गीताजलि' के हिन्दी या हिन्दुस्तानी अनुवादमें अगर सस्कृत शब्दोको, जिनकी बँगला भाषामे भरमार है, इरादतन बचाया जाये तो उसमे जो लालित्य या माधुर्य है वह बहुत कम हो जायेगा। मौलवी अब्दुल हक या आकिल साहब-जैसे साहित्यिक मुसलमानोंको आम जबानको केवल हिन्दुओ द्वारा बोली जानेवाली भाषाका रूप लेनेसे बचाना है तो अपना खास योग देना होगा। अगर मै कर सकूँ तो मै उनके दिमागसे उर्दू रूपको खालिस मुसलमानोकी जबान माननेका खयाल हटा दूँ, जिस तरह कि मै साहित्यिक हिन्दुओका यह खयाल दूर कर दूँ कि हिन्दी तो सिर्फ हिन्दुओकी ही भाषा है। अगर दोनोके दिलोसे यह खयाल जुदा नही होता तो उत्तर भारतके हिन्दुओं और मुसलमानोकी कोई आम जवान ही नही हो सकती, फिर उसे आप चाहे किसी भी नामसे पुकारें। इसलिए यहाँ हमे कमसे-कम नामके ऊपर झगडनेकी जरूरत नही। अगर पूरी सच्चाईके साथ आपका मतलब एक ही जबानसे है तो आप उसे चाहे जो नाम दे सकते है।

प्रश्न अब लिपिका रहता है। मुसलमान देवनागरी लिपिमे ही लिखे, इसपर हमे आज विचार नही करना है। और यह और भी कम विचारणीय विषय है कि इसपर जोर दिया जाये कि हिन्दुओके विशाल जनसमूहको अरबी लिपि अवश्य स्वीकार कर लेनी चाहिए। इसलिए हिन्दी या हिन्दुस्तानीकी मैने यह व्याख्या की है कि जिस भाषाको आमतौर पर उत्तर भारतके हिन्दू और मुसलमान बोलते है वह भाषा हिन्दी या हिन्दुस्तानी है, चाहे वह देवनागरी अक्षरोमे लिखी जाये, चाहे उर्दू खतमे। इसकी मुखालिफत भी हुई है, तो भी मै अपनी इस व्याख्या पर कायम हूँ। लेकिन

देवनागरी लिपिका निःसन्देह एक आन्दोलन चल रहा है जिसका कि साथ मैं हृदयसे दे रहा हूँ। और वह यह है कि विभिन्न प्रान्तोंमें — खासकर जिन प्रान्तोंमें संस्कृत शब्दोंका बहुत ज्यादा उपयोग होता है — बोली जानेवाली तमाम भाषाओंके लिए देवनागरी लिपिको सामान्य लिपि मान लिया जाये। किसी तरह हो, हिन्दुस्तानकी तमाम भाषाओंके ऊँचेसे-ऊँचे बहुमूल्य साहित्यको देवनागरी लिपिमें लिखनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-५-१९३६

४७७. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

नन्दी दुर्ग
१६ मई, १९३६

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। मेरा अप्रत्याशित पत्र[1] उसके पहले ही तुझे मिल गया होगा। उसमें जो बड़ी-बड़ी आशाएँ व्यक्त की गई हैं, वे तेरे-जैसे आश्रम-बालकसे ही रखी जा सकती हैं। विजयाकी मानसिक स्थिति कैसी है, यह तो वही जाने, किन्तु तुझे तो उसका शिक्षक बनना ही है। सामान्य हिन्दू-संसारकी यही स्थिति है। मैंने जिस विवाह-धर्मका उल्लेख उस पत्रमें किया है यदि उसके अनुसरणकी इच्छा हो तो मैंने उनकी मर्यादाओंके विषयमें तो लेख लिखा ही है। यदि बात कठिन लगे तो मानना चाहिए स्त्रीसंगका यह उद्देश्य अभी हृदयगत नहीं हुआ। एक पुस्तकमें लिखा है कि जब स्त्री बालकको जन्म देती है तब वह पतिके एक अंशको भी जन्म देती है। इसलिए पत्नीके गर्भवती होनेके बाद यह उचित है कि पति उसको रोज उसी प्रकार नमस्कार करे जैसे माताको करता है। यह सब बातें यों केवल बुद्धिका विलास लगती हैं। इनपर अमल किया जा सकता है, यह बात लोगोंके गले नहीं उतरती। जब कभी इनके अमलकी बात उठती है तो लोग पीछे हट जाते हैं। 'हरिका मार्ग शूरोंका होता है'[2] यदि यह विजयाको पढ़ा देना ठीक लगे तो पढ़ा देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. देखिए "पत्र : पुरुषोत्तम और विजया गांधीको", १४-५-१९३६।
२. "हरिनो मारग छे शूरानो"।

४७८. पत्र : नारणदास गांधीको

१६ मई, १९३६

चि० नारणदास,

इसके साथ पुरुषोत्तमके लिए पत्र है।[1] तुम्हारे नाम मेरी बहनका पत्र भी इसीके साथ है। ताराबहन चेजलेको तुम नही जानते। यह बडी परोपकारी महिला थी। दो बहनोके साथ बद्री-केदारकी यात्रा पर निकली थी। कल तार आया कि हृषीकेशमे उसका शरीरान्त हो गया। विदुषी थी और बडी सादगीसे रहती थी।

कुसुम बहुत मजेमे है। रोज मेरे साथ घूमने निकलती है। आशा तो है कि यहाँ इसका शरीर अच्छा हो जायेगा। कनु अपने काममे डूबा रहता है। दिलरुबापर हाथ जमा रहा है। दिलरुबाके साथ रोज 'रामायण' का पाठ चलता है। तीनो भाई[2] साथ-साथ गाते है। अब कुसुम भी उनके साथ ही गाती है। सरदार रोज चार घटे घूमते है। महादेव और मणि तब उनके साथ रहते है। इतना चलना मेरी शक्तिके बाहरकी बात है। कुमारप्पा और शान्ताबहन तो है ही। ये दोनो खूब घुलमिल गये है। काममे जुटे रहते है। बा यहाँ अच्छी रहती है। हमारी दुनिया इस तरह चल रही है।

कुसुमसे बातें करते हुए देखा कि बाल-मन्दिर घाटेमें चल रहा है। मेरी तो यह राय है कि अभिभावकोको हिसाब भेजकर सूचित कर दिया जाये कि यह खर्च अगर वे लोग नही उठा लेते, तो बाल-मन्दिर बन्द कर दिया जायेगा। यह भी बता देना चाहिए कि खर्चमे किराया आदि नही गिना गया है। कुसुमको जो ३५ या ४० रुपये वेतनमे दिये जाते है, उन्हे खर्चमे जोडना चाहिए। अन्य शिक्षक हो तो उन्हे जो दिया जाता हो, वह भी जोडना चाहिए। हरिजन और अन्य पिछडी मानी जानेवाली जातियोके बच्चोके लिए तो भीख माँगकर भी शाला चलाई जानी चाहिए, दूसरोके लिए नही, और बाल-मन्दिर तो कदापि नही। बिलकुल ही गरीब लोग अपने बच्चे भेज नही सकते, भेजनेकी ऐसी कोई बडी जरूरत भी नही है। यह सोचकर देखना और अगर बात तुम्हारे गले उतरे तो कमेटीके लोगोसे पूछकर अभिभावकोको १ महीने या २ महीनेका नोटिस देना। कुसुम कहती है कि शुल्क तो तुमने बढाया ही है। यह बढे हुए खर्चके अनुपातमे ही बढाया जाना चाहिए। शायद तुम्हे मालूम हो कि देशमे ऐसी अनेक शालाएँ है जो सारा खर्च निकाल कर

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. कान्ति गांधी, कनु गांधी तथा नवीन गांधी।

मालिकोंको मुनाफा कमाकर देती है। अनेक शालाएँ कमाई करनेका साधन है, जैसे [बम्बईका] भरडा हाई स्कूल। अहमदाबादका प्रोप्रायटरी हाई स्कूल और कुछ अन्य राष्ट्रीय शालाएँ और कुछ प्रयोगात्मक शालाएँ ही ऐसी है जो दानके सहारे चलती है। मुझे ऐसा लगता ही रहता है कि हमे यह छोडकर अपना समय हरिजनो और गाँवोमे लगाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९० से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी

४७९. पत्र: अमृतलाल टी० नानावटीको

१६ मई, १९३६

चि० अमृतलाल,

नीमुके पत्रमे तुम्हारी दो पंक्तियाँ देखी। शरीर सँभालना। शरीर जितना दूध, दही और घी माँगे उतना देना। तुम शरीर सँभाल कर रखोगे तभी तो मै तुमसे पूरा काम ले सकूँगा। भानुबापाको बताना कि फिर विघ्न उपस्थित हो गया है। जहाँ मकान बनवाना है उसका नया तखमीना लगवाना पड़ेगा। यह अटपटा काम है। कदाचित महादेवको नासिक जाना पडेगा।

क्या बादमे अदालतके समन के विषयमे कुछ सुना?

नीमुको जी-भर अध्ययन करनेकी सुविधा देना।

यहाँ सब मजेमें है। कहाँ यहाँकी ठंडक और कहाँ वहाँकी लू! फिर भी यह नही कह सकते कि मेरा शरीर वहाँकी अपेक्षा यहाँ अधिक अच्छा है। बात यह है कि गर्मी मुझे नुक्सान नही पहुँचाती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१४) से।

४८०. पत्र : अमतुस्सलामको

नन्दी दुर्ग
१७ मई, १९३६

प्यारी बेटी,

डाक्टर साहब[1] के बारे में तुमने जो लिखा है वह सब सही है। उनकी जोडी हमारे पास नही है। लेकिन हम क्या जाने उनकी मौतसे अच्छा है या बुरा? खुदा ही बेहतर जानता है। वह देता है, वह लेता है। हम तो डाक्टर साहब की मौत से भी सबक सीखे। जो उन्होने छोडा है सो हम करे। रोना, फाका करना फजूल है। खुदा को माननेवाले मौत से क्यो घबराये? पैदा होते है उनको मरना तो है ही। तुम्हारे अगले खतोका अब तो कुछ जवाब नही चाहती हो? अब न पटियाला जाना है, न मेरे पास आना है, न चित्रकूट जाना है। मेरे पास आनेका तुम्हारा दिल हो तब आ सकती है। बाकी तो हरिजन-आश्रम ही तुम्हारे लिए सब कुछ है। यह मेरे कहनेसे नही लेकिन डाक्टर साहब के आखिर के खतसे। डाक्टर साहब ने बताई हुई दवा तो खाती होगी। हम सब अच्छे है। त्यागीजी को अलग नही लिखता। राजकिशोरी खुश होगी।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३५) से।

४८१. पत्र : अमृत कौरको

नन्दी हिल
१८ मई, १९३६

प्रिय बागी,

डॉक्टर अन्सारीके विषयमे मैंने जो-कुछ लिखा[2] तुमने देखा होगा। मैं उनकी मृत्युपर स्वार्थवश ही रो सकता हूँ। परन्तु यदि मेरी तरह किसीको भी यह विश्वास हो कि केवल नाशवान् शरीरका ही अन्त हुआ है, उसके अन्तरकी अनश्वर आत्माका नही, तो उनकी मृत्युपर शोक मानना निरर्थक है। आत्मा तो पुराने वस्त्र उतारकर नये, और भी अच्छे वस्त्र धारण कर लेती है।[3] उनकी सेवाएँ व्यर्थ नही हुई हैं।

१. डॉक्टर अन्सारी।
२. देखिए पृ० ४३९-४०।
३. भगवद्गीता, २, २० और २२।

यदि हममे आस्था है तो हम विश्वास रख सकते है कि चाहे अदृश्य रूपसे सही, परन्तु उनका सेवा-दान अब भी जारी है। चूँकि हमे इन्द्रियोकी साक्षीपर निर्भर करनेकी आदत है जो कमजोर और बहुधा अविश्वसनीय भी होती है, हम यह मान ही नही पाते कि ससारमे अदृश्य रूपमे ऐसी बहुत-सी चीजें होती रहती है जिनकी अनुभूति इन्द्रियोसे नही हो सकती। वे चीजें इस क्षणभगुर तमाशेसे, जो इन्द्रियाँ हमें दिखाकर कभी रुलाती, कभी हँसाती है, कही अधिक स्थायी और उपयोगी है। खैर, बहुत हो गई यह ज्ञान-चर्चा।

हाँ, मै तुम्हारी बताई मर्यादाके भीतर ही तुम्हारे लिए हाथीदाँतकी वस्तुएँ और दूसरी चीजें प्राप्त करनेका प्रयत्न करूँगा।

कुमारप्पा खूब प्रगति कर रहे है। डॉक्टर सुब्बाराव उनका और शान्ताका परीक्षण २० तारीखके लगभग करेंगे।

आशा है तुमने दलीपको "आराम करने और भगवानका शुक्रिया मानने" के लिए राजी कर लिया होगा। कचहरीका काम उनके बिना भी कुछ सप्ताह या कुछ महीनो चलता रहेगा। सरकारने अपना काम चालू रखनेका पहलेसे ही अच्छा प्रबन्ध रखा है।

तुम मीराको निमन्त्रित न कर पानेका दुख क्यो करती हो? सयुक्त परिवारकी ये कुछ मजबूरियाँ है जो तुम्हे और मुझे माननी ही होगी। मैत्री स्वार्थ-पूर्तिके लिए नही होती, न होनी चाहिए। मीरा बिलकुल प्रसन्न है, हालाँकि वर्धाकी गर्मीमे वह पिघल रही है। वह इसीमे खूब प्रसन्न है कि मेरी कुटियाके निर्माणकी देख-रेख कर रही है। वह छोटी-से-छोटी बातकी ओर भी बहुत ध्यान दे रही है। उसे इस बातकी भी प्रसन्नता है कि भगवानने चाहा तो मै निकट भविष्यमें ही उसका पड़ोसी हो जाऊँगा।

तुम तो मुझे गुस्सा दिलाती हो। जब मुझसे मिलोगी तब कैलनबैक[1] के बारेमे सब कुछ भूल-जाओगी। मुझसे अपनी बात खोलकर क्यो नही करती? जो-कुछ भी मैंने कहा होगा उसका मजाक मुझे समझने दो या अगर उसमें कोई लज्जाजनक बात हो तो मै उसको स्वीकार कर लूँगा। अपने विषयमे कितनी ही बातें मेरे कानोमे पड़ती है जिनसे मै नितान्त अनभिज्ञ हूँ। यह बात भी ऐसी ही निकले, तो मुझे आश्चर्य न होगा।

तुम सबको प्यार।

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७३) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६३८२ से भी।

१. एक जर्मन वास्तुकार (आर्किटेक्ट) जो दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके मित्र और सहकर्मी थे। देखिए "पत्र: अमृत कौरको", २८-५-१९३६।

४८२. पत्र : मीराबहनको

१८ मई, १९३६

चि० मीरा,

आशा है नन्दीसे भेजा गया मेरा पत्र[1] तुम्हे मिल गया होगा।

हाँ, डॉ० अन्सारीकी मृत्यु मेरे लिए एक भारी व्यक्तिगत हानि है। जन्म और मृत्यु दोनो ही महान रहस्य हैं। यदि मृत्यु दूसरे जीवनकी पूर्व स्थिति नही है, तो बीचका समय एक निर्दय उपहास है। हमे यह कला सीखनी चाहिए कि मृत्यु किसीकी हो, और कभी भी हो, उसपर हम हरगिज रंज न करे। मेरे खयालमें ऐसा तभी होगा, जब हम सचमुच अपनी मृत्युके प्रति उदासीन होना सीखेंगे, और यह उदासीनता तब आयेगी, जब हम हर क्षण यह मानना सीख लेंगे कि हमे जो काम सौंपा गया है उसे हम कर रहे हैं। लेकिन यह कार्य हमे कैसे मालूम होगा? यह ईश्वरकी इच्छाको जाननेसे होगा। ईश्वरकी इच्छाका पता कैसे चलेगा? वह प्रार्थना और सदाचरणसे चलेगा। असलमें प्रार्थनाका अर्थ ही सदाचरण होना चाहिए। हम 'रामायण' से पहले हर रोज प्रार्थनामें एक भजन गाते है जिसकी टेक[2] यह है कि "जो हरिका भजन करते है उनकी लाज जाती कभी नही सुनी गई।" प्रार्थनाका अर्थ ईश्वरके साथ एक हो जाना है।

खुशी है कि मकान बनवानेमे प्रगति हो रही है। कम-से-कम फिलहाल वरोडाकी जमीन और मकान बनानेके लिए ३०० रुपये काफी होने चाहिए। मैं चाहता हूँ कि तुम बाडकी भी गुंजाइश निकाल लो। उसके लिए मजदूरी देनेकी आवश्यकता न होनी चाहिए। तुम्हारी देख-रेखमे बलवन्तसिंह और मुन्नालालको बाड लगा लेनी चाहिए। सामान पर तो लगभग कुछ भी खर्च न होना चाहिए। बाड और थोडी-सी छाया ही मुख्य चीज है। हम सब स्वस्थ और प्रसन्न है। लेकिन सरदार, शान्ता और कु[मारप्पा]को सबसे ज्यादा लाभ हो रहा है। पहाडकी ठंडी हवाकी जरूरत वास्तवमे इन्हीको है। औरोको इतनी नही है, इसलिए उन्हे इतना लाभ हुआ भी नही दिखता। मै देखता हूँ कि हम लोग १५ जूनसे पहले मैसूर नही छोड़ सकेंगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८०१ से भी।

१. देखिए पृ० ४२९।

२. "हरिने भजतां हजी कोईनी लाज जती नथी जाणी रे"।

४८३. पत्र : एस्थर मेननको

१८ मई, १९३६

प्यारी बेटी,

तुम्हारी परीक्षा हो रही है। तुम्हे कोडाई-जैसे ठडे स्थानपर भी फ्लू क्यो हो गया? परन्तु मैं जानता हूँ कि तुम इतनी यातनाओके होते हुए भी शान्त बनी रहोगी और अपने आदर्श-वाक्य[1] के योग्य सिद्ध होगी। जब तुम्हे अवकाश हो तब मुझे सूचित करना। मेरी दुआएँ व प्यार तुम्हारे साथ है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सख्या १४०) से; सौजन्य. राष्ट्रीय अभिलेखागार

४८४. पत्र : गोविन्द वी० गुर्जलेको

१८ मई, १९३६

प्रिय गुर्जले,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला। मेरी तुम्हारे पास आनेकी बड़ी इच्छा है, किन्तु आ नहीं सकता। मै यहाँ सरदारकी सेहतके वास्ते आया हूँ। मेरे साथ दूसरे मरीज भी है और मुझे अवश्य ही समयकी बचत करनी चाहिए।

मै तुम्हे सलाह दूंगा कि तुम बस बिलकुल एक-ग्रामीणकी तरह रहो। इस तरह तुम्हारा मासिक व्यय १० रुपयेसे भी कम होगा। अगर कोई उत्पादक-कार्य करनेको हो तो उसे पैसा देकर मजदूरोसे करवा लो। बुद्धियुक्त श्रम सदैव स्वावलम्बित होना चाहिए।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३९९) से।

१. देखिए १४ मई, १९३६ को एस्थर मेननको भेजा गया पत्र।

४८५. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

[१८] मई [,१९३६][1]

भाई बापा,

अमतुस्सलामके बारेमे समझ गया। उसकी मूर्खता तो हम बर्दाश्त कर सकते हैं, पर रुक्मिणीका व्यवहार खटकता है।

देखता हूँ राजाजीके सुझावों पर अमल नही हो सकता। दस हजार एकड़ जमीन तो हम आज ही प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु उसका उपयोग कौन करेगा? उसे आबाद किस रीतिसे करेंगे? मान लो यह जमीन धरमपुरमे मिली तो किस कामकी? इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि हम यह विचार नही कर सकते। हमारे पास सिवाय इसके और कोई उपाय नही है कि हम ईसाइयोकी करतूतकी कलई खोले और उनसे बढकर हरिजनोकी यथाशक्ति सेवा करें।

अब पहले तीन हजार रुपयेकी बात लेता हूँ। उन्होने यह बात मुझपर छोड़ दी है, इसलिए मैंने रुपया तुम्हे नही भेजा। यदि कही पानीकी खास तंगी देखूँगा तो इसे तत्काल खर्च कर दूंगा। मैं ऐसा समझा हूँ कि इसे अपने चालू कोषमें शामिल नही किया जा सकता। आप आज ही इसे किस काममे लगा सकते है? यदि ऐसी कोई बात हो या वह कह दे तो मैं यह रुपया भेज दूंगा; नही तो विचार यह है कि जिन हरिजन कुओंको सुधरवाना मुझे जरूरी लगेगा उन्हे तत्काल सुधरवा देंगे। बजाय इसके कि जरूरत पड़नेपर पैसे आपके पाससे मँगाये जाये, इसी पैसेको इस तरह खर्च कर देना क्या ठीक नही है? फिर भी आप जो चाहते है तदनुसार करनेको तैयार हूँ।

अब चौथी और नई चीजको लेता हूँ। सूरजबहन[2] ने जैसे-तैसे मकान छोड़ा ही था कि उसके लिए वीमेंस सर्वेट्स ऑफ इंडियाकी माँग आ गई। मुझे तो लगता है कि इन बहनोका विचार अलग ही किस्मका है। उसमे तो पश्चिमकी गन्ध आती है। मैंने आजतक बहनोमें जिस रीतिसे काम किया है, वे उस रीतिसे नही चलना चाहती। हो सकता है इनके कामकी आवश्यकता भी हो। किन्तु यह जायदाद इस प्रकारके काममे नही लगाई जा सकती, ऐसा मेरा खयाल है। फिर भी आप निःसंकोच होकर अपनी राय लिखिए। मैं भूल कर रहा होऊँ तो समझाइए। आप

१. जी० एन० रजिस्टरके आधार पर।

२. बम्बई भगिनी समाजकी एक कार्यकर्त्री।

वहाँ तप रहे है और मै यहाँ ठंडी आवहवाका मजा ले रहा हूँ। क्या किया जाये? मुझे आपसे ईर्ष्या हो आती है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५७) से।

४८६. पत्र : प्रभावतीको

१८ मई, १९३६

चि० प्रभा,

तू बड़ी चिन्ता दे रही है। तेरी पुर्जीको आये १२ दिनसे ऊपर हो गये। तेरा एक तार भी आया था। उसका उत्तर मैंने दे दिया था।[1] तू अब कैसी है? दूध लेना शुरू किया या नही? लेती है तो कितना? क्या निश्चय किया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६९) से।

४८७. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१८ मई, १९३६

चि० ब्रजकिसन,

तुमारे १ मई के खत को मै आज ही पहूंचता हुं। नंदी आने की तैयारी के अरसे में मिला वादमे ऐसे ही रहा। अव तो दा० अनसारी चले गये। उनकी चिकित्सा पर मेरा विश्वास इतना था कि जब कोई दरदी उनके नीचे रहता तव मैं निश्चित हो जाता था। अव तो मै नही जानता तुम क्या करोगे। बीमारी तो तुमारे पास ही रहती है। अव मुझे सब हाल दे दो।

भंडार वंध करना ही अच्छा था। तुमारा शरीर यह काम नहीं करने देगा। और दूसरों के भरोसे पर ऐसा काम करना मुश्केल हो जाता है। नायर[2] के बारे मे समजा। नायर के पास अगर कोई नही रहता है तो आश्रम वंध करना चाहीये। नायर या तो मलवार जाय अथवा हरिजन संघ के मातहत काम करे अथवा मेरे पास आ जावे। मेरे पास आ जानेका अर्थ यह है कि मैं कही भी रखुंगा। मैं सेगांवमे रहुगा वहां तो नही रख सकुंगा। यह खत उसको भी पढ़ा दो जिस से

१. १३ मईको; देखिए पृ० ४२६।

२. कृष्णन नायर।

अलग लिखने की आवश्यकता न रहे। अगर सारा खत नही तो इतना पैरा की नकल उसे दे दो।

तुमारे पास यदि रु० ५० बचते है या जो कुछ उस रकम मुझे भेज दो। मै उसका उपयोग यथेच्छा कर लूगा। अपने लिये जो खर्च आवश्यक माना जाय इतना ही रखा जाय।

तुमारे जब वर्धा आने का दिल हो तब आने की इजाजत तो है ही। तुमारे कुछ भी कायमी जिम्मेदारी का काम लेना ही नही, जब छोड़ना हो तब छुट सके ऐसी कोई सेवा मिले तो लेना बाकी कुछ भी नही लेना। तुमारा प्रथम कर्तव्य स्वास्थ्य सुधार है। किसी तरह उसे अच्छा करो। ऐसा देखा जाता है कि तुमको दिल्ली की आबोहवा सबसे ज्यादा अनुकूल है इसलिये तुमारे ज्यादातर वही रहकर ऐसी कोई उपरोक्त सेवा हो सके तो करना। अच्छा होगा यदि हरिजन निवास में किराया देकर एक कोठरी मे रहो। क्षमा कहती थी ऐसे यदि हरिजन निवास के नजदीक कुछ जमीन ले ले तो वहा तुमारे लिये एक कोठरी वह बना देवे उसमे रहो किराया लेवे तो किराया दो। अब तो मुझको जितनी सूचना देनी थी दे दी। एक रह जाती है गाडोदीयाजी[1] को एक नैसर्गिक इलाज करनेवाले हकीम मिले है उनसे मिलो शायद उनके उपचार तुमारे लिये लाभदायक हो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४७) से।

४८८. पत्र : अमतुस्सलामको

१८ मई, १९३६

प्यारी बेटी,

बापा से क्या लड रही है? बापा ने जो-कुछ लिखा सो तुम्हारे भला के लिए था ना? वे तुमको रुक्मिणी से बचाना चाहते थे। यह कोई गुनाह था क्या? बापा कहते है मै तुम से खुलासा करूँ। कहो क्या खुलासा करूँ?

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३६) से।

१. लक्ष्मीनारायण गडोदिया।

४८९. पत्र : अमृत कौरको

नन्दी हिल
१९ मई, १९३६

प्रिय अपभाषा शिक्षिका,

तुम तो अपनी पदवियोंमें वृद्धि कराती जा रही हो। सब तुम्हारी छातीमें नहीं समायेंगी। तब शायद तुम कुछ एकको छोड़ दोगी; या और भी अच्छा होगा कि तुम एक चुनकर बाकीको ठुकरा दो।

अभी आकाशमें ऐसी जोरोंकी बिजली चमकी है कि उससे बिजलीके सारे फ्यूज जल गये हैं और हम घोर अन्धकारमें बैठे हैं। मेरे लिए रुईकी वत्ती और खानेका तेल लेकर एक छोटा-सा दीपक जला दिया गया है। इस बँगलेमें बिजलीके बदले प्रकाशका और कोई प्रबन्ध नहीं मालूम होता।

यह अच्छा हुआ कि तुमने त्रावणकोरकी महारानीसे ५०० रुपयेका दान करवा लिया।

मैं आशा कर रहा हूँ कि रेडियो पर उर्दूमें प्रसारणके विषयमें तुम्हारी शर्तें मान ली जायेंगी। तुम वास्तवमें बधाईकी पात्र हो।

श्रीमती मार्सडेनको महादेवका काता हुआ बढ़िया सूत भेज दिया जायेगा। उसका ही सबसे बारीक है।

मुझे लेस ढूँढ़नी पड़ेगी। उसे खोना नहीं चाहिए।

आशा है तुम अब बिलकुल ठीक होगी।

कुमारप्पा और शान्ता खूब मजेमें हैं।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७४) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६३८३ से भी।

४९०. एक पत्र

१९ मई, १९३६

मेरी खोज बाह्य न होकर अन्तर्मुखी है। सम्भवत. खोज ही अपने आपमें पुरस्कार है। अगर मेरे मामलेमे किसी शरीरधारी गुरुकी आवश्यकता है, तो भगवान उसे मेरे पास भेज देगा।[1]

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य. नारायण देसाई

४९१. पत्र : प्रभावतीको

१९ मई, १९३६

चि० प्रभावती,

बहुत दिनोंके बाद आज तेरा पत्र मिला। मैंने तो तुझे तीन पत्र लिखे है। पहलीको, बारहवीं[2] को और अठारहवींको। अप्रैलमे लिखे थे सो अलग। अगर तुझे इनमें से एक भी न मिला तो दोष किसका? इतना तो तुझे मान ही लेना चाहिए कि तेरे पत्रका जवाब मै देता जरूर हूँ। और यदि तेरी तरफसे कोई पत्र न हो तो कार्ड लिखकर तकाजा जरूर करता हूँ। कान्ति क्यों नही लिखता, यह उससे पूछ रहा हूँ।

तेरी तारीखोका हिसाब गलत है। तेरा पत्र १७ को नही बल्कि १९को मिला था और तूने लिखा था १४ को। अर्थात् इस हिसाबसे मेरा यह पत्र तुझे २४ को मिल जाना चाहिए। यदि तबतक तुझे मेरे पत्र न मिलें तो इस पत्रकी पहुँच तारसे देना। यदि तेरा दूसरा पत्र इतने दिनोमें नही आता तो मै तेरे तारकी राह २४-२५ तक देखूंगा। हाँ, जयप्रकाशसे मुलाकात हुई थी। उसके साथ बाते हुईं। साथमें पटवर्धन था।

१. प्रेषीने गांधीजीको एक सुझाव दिया था कि वे मद्रासके निकट रहनेवाले अमुक व्यक्तिको अपने गुरुके रूपमें स्वीकार कर लें।

२. यहाँ '१३' के बजाय भूलसे '१२' लिखा गया है।

मैंने जो पत्र लिखा था, उसका जवाव तो उसने नहीं दिया; मैं यह समझ गया कि वह जवाव नही देना चाहता था। उसने तेरे भविष्यकी ही वात की। वह तुझे काशीमें तीन महीने मांटेसरी पद्धति सिखवाना चाहता है। उसकी इच्छा है कि इसके वाद तुझे पटनामें रहना चाहिए। उसने मेरी सहमति माँगी, मैंने तुरन्त दे दी। मांटेसरी सीखनेमें कोई नुकसान तो है ही नही। वैसे मुझे उसका मोह नही है। यदि तेरी यह इच्छा हो तो तू उसका अभ्यास पूरा करना। इसके वाद पटनामे या ऐसी किसी दूसरी जगहमे रहेगी न? इस विषयमे तो तू उससे वातचीत करके तय करेगी। इस पत्रमें हमारी वातचीतका सार आ गया। तेरा सामान जयप्रकाशके साथ भेज दिया गया है।

तू कैसी मूर्ख है? तवीयत खराव हो जाने पर भी तूने मुझे खवर नहीं दी। क्या बेहोशीका दौरा अभी तक आ जाता है? दूध पीना शुरू किया? वनारस क्यो जाना पड़ा था? और फिर सिताव दियारा किसलिए? श्रीनगरमें क्या कार्यक्रम रहता है?

अपने दलके विषयमें तो मैं तुझे लिख चुका हूँ। सव मजेमे है। सरदार रोज चार घंटे घूमते है। मणि और महादेव साथ होते हैं। कुमारप्पा और शान्ताको वहुत लाभ हुआ है। काका परसों आये। मैं ठीक हूँ। वा ठीक है। तारी और कुसुम कमजोर है। रामायण और प्रार्थना नियमानुसार चलते है। अयोध्या-काण्डके कल पूरे हो जानेकी सम्भावना हैं। पता मेरे ११ या १२ तारीखके पत्रमे दिया गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७०) से।

४९२. पत्र: रामी कुँवरजी पारेखको

१९ मई, १९३६

चि० रामी,

तेरा पत्र मिला। तूने लिखा, यह ठीक किया। मैं वर्धा पहुँचनेके बाद मनुको वुलवा लूँगा। अगर मनु चाहे तो अभी भी वर्धा जा सकती है; क्योंकि नीमु मगनवाड़ीमे रहनेके लिए चली गई है। तारीके बच्चोंकी तवीयत अच्छी रहती होगी। आशा है कुँवरजी[1] अच्छे होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२६) से।

१. रामीके पति।

४९३. पत्र : मनु गांधीको

१९ मई, १९३६

चि० मनुड़ी,

तू भली भाग निकली। तारीबहन यही है, यह तो तू जानती है न? सब मजेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२६) से।

४९४. पत्र : फतह-उल्ला-खाँको

नन्दी
२० मई, १९३६

मैं पवित्र 'कुरान' को 'बाइबिल' तथा 'जेंद अवेस्ता' की तरह आध्यात्मिक अनुभवोसे पूर्ण ग्रन्थ मानता हूँ। मुझे यह नही ज्ञात कि ससारके अन्य धर्म-ग्रन्थोकी अपेक्षा 'कुरान' आधुनिक समस्याओके अधिक वास्तविक समाधान प्रस्तुत करती है। आज प्रतियोगिता संसारके विभिन्न धर्म-ग्रन्थोंमे न होकर उनके प्रतिनिधियोमें है और फिर यह प्रतियोगिता इन प्रतिनिधियो और उन लोगोके बीच है जो धर्म-ग्रन्थोंकी प्रामाणिकताको बिलकुल मानते ही नही।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

४९५. पत्र : व्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२० मई, १९३६

चि० व्रजकिसन,

यूनियनके बारेमें तुमारा खत मैंने पढ़ लिया। सब बातका ख्याल करते हुए मुझे ऐसा लगता है कि तुमारे मजदूरोंके मामलेसे हाथ उठा लेना। उस कामको भूल जाओ तुमारी शक्तिके बाहर है, तुमारी बात चलनेवाली नहीं है। इसलिये अंतमें तुमारी हाजरीसे मजदूरोंको लाभके बदले हानि भी हो सकती है। तुमारा धर्म इस वखत शरीर सुधारनेका है। अमदावादसे कौन आ सकेगी? आनेवालाका क्या चल सकेगा? जो काम हमारी शक्तिमें है उसे ही करके संतुष्ट रहना। इसलिये योजनाके बारेमें अभिप्राय देना अनावश्यक है। दा० अनसारीके बारेमें सब हाल लिखो।

मेरा अगला खत मिला होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४६) से।

४९६. पत्र : आसफ अलीको

नन्दी हिल
बंगलोर
२१ मई, १९३६

प्रिय आसफ अली,

आपने अच्छा किया जो मुझे पत्र लिखा। दिवंगत बन्धु[1] के बारेमें आप मुझे जितनी भी सूचना दे सकें मेरे लिए कम ही है। वह मेरे लिए भाईसे कम तो थे ही नहीं। मैं जोहरा और जाकिर हुसेनको तो पत्र लिख ही चुका हूँ[2] कि मुझे सब ब्योरा लिख भेजें। कल या परसों तक उनका जवाब आ जाना चाहिए। लेकिन वे जो-कुछ न लिख सकें वह सब आपको लिख भेजना चाहिए।

स्मारकके मामलेमें मुझे भय है कि इस समय हमें उनकी स्मृतिके सर्वथा योग्य कुछ मिल नहीं सकेगा। कमलाके छोटे-से स्मारकके लिए भी कठिनाई पड़ रही

१. डॉ० मुख्तार अहमद अन्सारी।

२. देखिए पृ० ४२१-२।

है। लालाजीके स्मारकके बादसे मैं डॉ० अन्सारी जैसे महान् व्यक्तियोंके स्मारक बनवानेका समर्थन नही करता। मैं पैसोंके विचारसे नही बल्कि राजनैतिक स्थिति की दृष्टिसे, और अच्छे समयका इन्तजार करना चाहता हूँ। सरदार, जो यही है, वे भी मेरे इस मतसे सहमत है। किन्तु मुझे बताइए कि इस सम्बन्धमें 'जी०' और 'आर०' क्या कहते है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

४९७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२१ मई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

'हिन्दू' की दो कतरनें भेज रहा हूँ।[1] मैंने यह नही माना है कि सवाददाताने तुम्हारे विचार ठीक-ठीक व्यक्त किये हैं। लेकिन दोनो विषयो पर तुम सही विवरण भेज सको तो मैं देखना चाहूँगा।[2] स्त्रियोंको न रखनेका काम पूरी तरह तुम्हारा अपना ही था। सचमुच किसी औरने सोचा तक नही था कि मन्त्रिमण्डलमें किसी स्त्रीको न रखना सम्भव भी है। खादीके बारेमें मैंने तुम्हारा कथन यही समझा है कि देशकी वर्तमान अर्थ-व्यवस्थामें वह अपरिहार्य है और जब राष्ट्र अपने सच्चे

१. पहली कतरनमें लिखा था: बम्बई, १८ मई — श्री जवाहरलाल नेहरूने आज शाम स्त्रियोंकी एक सभामें बोलते हुए कहा कि कई स्थानों पर मुझसे पूछा गया है कि मैंने कार्य-समितिमें किसी महिलाको क्यों नहीं शामिल किया है। मुझे आश्चर्य है कि स्त्रियोंकी ओरसे ऐसा कोई सवाल नही पूछा जा रहा है।

आगे बोलते हुए उन्होंने कहा: "कार्य-समितिके सदस्योंको चुननेकी जिम्मेदारी कांग्रेस अध्यक्षकी होती है, और आप सब जानती हैं कि लखनऊमें क्या स्थिति थी। आप जानती है कि अपने विचारोंके लिए मुझे क्या कीमत चुकानी पड़ी थी, और मुझे आगे भी यह कीमत चुकानी पड़ेगी। कार्य-समितिके सदस्योंको चुनना इतना आसान नही था। आप यह भी जानती है कि अध्यक्षकी हैसियतसे मुझे लखनऊमें अनेक बाधाओंका सामना करना पड़ा था, और जो मैं चाहता था उसे नहीं किया गया। शायद मेरी जगह दूसरा आदमी इस्तीफा दे देता, लेकिन मैं भरसक अपना कार्य करना चाहता हूँ।"

दूसरी कतरनमें लिखा था: बम्बई, १८ मई — श्री नेहरू आज जब खादी भण्डारमें आये तब वहाँ उन्होंने इस बातमें सन्देह व्यक्त किया कि हाथ-कताई और बुनाई आर्थिक दृष्टिसे लाभकर चीजें हैं। संयुक्त प्रान्तके अनुभवसे वह कह सकते हैं कि ऐसा नहीं है। अतः वह मशीनोंके विकासके पक्षमें हैं।

२. देखिए परिशिष्ट ४, और खण्ड ६३ "झूठ-मूठका डर", ६-६-१९३६ भी।

स्वरूपको प्राप्त कर लेगा तब मिलके कपड़ेको अपना स्थान हाथके कपड़ेको देना पड़ सकता है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे: गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३६; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४९८. पत्र: मीराबहनको

२१ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा यह बुखार मुझे बिलकुल नापसन्द है। आशा करता हूँ कि तुमने उचित आराम लिया होगा। यदि तुम्हारी कुटिया निश्चित समय तक तैयार न हो सके तो कोई बात नहीं, मेरी कुटिया के लिए भी यही समझो। तुम्हें अपने शरीरसे खींच-खाँच कर काम नहीं लेना चाहिए और आवश्यकतानुसार खूब फल खाने चाहिए। मुझे खुशी है कि ब[लवन्तसिंह] और मु[न्नालाल] ऐन वक्त पर तुम्हारे पास पहुँच गये। तुम्हारे पास आनेको मैं अधीर हूँ, परन्तु आना १७ या १८ तारीखसे पहले नहीं हो सकेगा।

ताराकी मृत्युने मुझे काफी क्षुब्ध किया है। वह असाधारण रूपसे भली स्त्री थी और उसकी मनोशक्ति बड़ी प्रबल थी। उसका प्रेमभाव भी आश्चर्यजनक था। मुझे उसकी मृत्युका पूरा वृत्तान्त मिला है। बहादुर महादेवी[1] पूरे समय उसके साथ थी।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च:]

तुम्हें मालूम है बरोडावाली तुम्हारी जमीनका क्या मूल्य दिया गया था?

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३६) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८०२ से भी।

१. विनोबाकी शिष्या महादेवीताई।

४९९. पत्र : जमनालाल बजाजको

२१ मई, १९३६

चि० जमनालाल,

सचमुच ताराबहन असाधारण महिला थी। उसकी एकनिष्ठा, दृढ़ता, पवित्रता, उदारता और हिन्दुस्तानका प्रेम अवर्णनीय था। महादेवीने भी बहुत सुन्दर सेवा की और हिम्मत भी दिखाई।

मीराबहनका पत्र उसकी बीमारीका है। इस बहनके दोष नगण्य हैं। उसके गुण अनुकरण करने योग्य है। ईश्वर उसकी रक्षा करे।

मदालसा, ओम मजेमें हैं। दोनोंका पत्र वापस भेजता हूँ।

अपने शरीरकी सँभाल रखते होगे। जो खुराक मैंने लिखी है, क्या उसी तरह लेते हो? आराम पर्याप्त ले पाते हो? रोज घूमना होता है? पेढ़ूके लिए [मिट्टीकी] पट्टी लेनेकी जानकीबहनकी सलाह ठुकरा देने योग्य नहीं है।

यहाँ सब कुशल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८०) से।

५००. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२१ मई, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र यहाँ नन्दी दुर्गमें मिले। फोटो अच्छे हैं। रामदास और देवदासको भेज दिये गये। अली क्या कर रहा है? क्या अली और इस्माइल साथ-साथ व्यापार करते हैं? कौन-सा व्यापार करते हैं? बस्ती बढ़ जानेसे हैरान तो नहीं होते?

यदि कोई वहाँका काम सँभाल ले और तुम कुछ दिनोंके लिए यहाँ आ सको तो मुझे अच्छा लगे। यदि पैसेकी तंगी हो तो आनेका लोभ मत करना। यदि तुम सबका शरीर वहाँ अच्छा रहता हो और दूसरी सुविधाएँ भी हों तो मिलनेके लिए यहाँ आनेके विचारसे खर्चमें नहीं पड़ना चाहिए।

मुझे यह सुनकर आश्चर्य नही हुआ कि 'इंडियन ओपिनियन' का वहिष्कार किया गया है। जबतक लोगोंको जरूरत लगे निकालते रहे और जब पसन्द न आये, बन्द कर दे। हम निरर्थक आग्रह कदापि नही करेंगे। फिलहाल कितने ग्राहक है? इसमें कितने हिन्दू है, कितने मुसलमान? फुटकर प्रतियाँ भी बिकती है या नही?

सुशीलाका १३० पौंड वजन ज्यादा कहा जायेगा। यदि १० पौंड घटाना जरूरी हो तो सहज ही घट सकता है। स्टार्च कम लिये जाये। वह काफी फल खाये और जरूरत पड़े तो कुछ समयके लिए घी छोड दे, दूध न छोड़े, इसीसे वजन घट जायेगा। व्यायाम तो करना ही चाहिए। रोज कमसे-कम छ मील चलना चाहिए। अर्थात् ठीक गतिसे दो घटे। कटि-स्नान भी करे।

नन्दीमें कौन-कौन है, सो तो कदाचित् लिख चुका हूँ। न लिखा हो तो इतने लोग है: सरदार, मणिबहन, तारी, कुसुम गांधी, नवीन, कान्ति, कनु, बा, कुमारप्पा, शान्ताबहन (अंग्रेज महिला) और काका साहब। सरदार, मणिबहन और महादेव रोज चार-पाँच घटे घूमते है। कुमारप्पा और शान्ताबहन भी इतना ही घूमते है। शेष हम लोग दो घटे घूमते है। तारीको हवा माफिक आई है, अभी ऐसा नही कह सकते। यो नीचे जैसी थी, उससे यहाँ अच्छी कह सकते है। शरीर बिलकुल बिगाड डाला है। चिन्ता और उपचारके प्रति उपेक्षाके कारण शरीर बिगड़ा है। कुसुम भी कमजोर तो है ही, किन्तु तुलनामें अच्छी है।

रोज रामायण-पाठ होता है। काफी लोग शामिल हो जाते है। सुबह-शामकी प्रार्थना तो है ही।

कह सकते है कि अब देवदास अच्छा है। पत्र मेरी समझमे काफी बड़ा हो गया।

१५ जूनको वर्धा चले जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५१) से।

५०१. पत्र: लीलावती आसरको

२१ मई, १९३६

चि० लीलावती,

लगता है, तेरा वजन काफी बढ़ गया है। इस हिसाबसे तो तुझे वहाँ रखा ही जाना चहिए। तू गंगाबहनसे मिल आई यह बहुत अच्छा किया। तूने बचुभाई[1] की तबीयतके समाचार नही दिये।

तनसुख[2] को कितना वेतन मिलता है?

१. बचुभाई भीमजी रामदास।

२. तनसुख भट्ट।

घूमना शुरू करके तूने उतावली की। किसी भी बातमें उतावली मत कर। पाँवको आराम देकर पूरी तरह ठीक कर डाल। तू हाथका बना कागज काममें क्यो नही लाती? इसे आसानीसे कम दामोमें बनाया जा सकता है। मामूली समझी जानेवाली बातो पर भी ध्यान रखना ही चाहिए। जब तू वहाँ पड़ी ही है तो क्या जितनी ग्रामीण वस्तुओका उपयोग किया जा सकता है, उतनी वस्तुओका उपयोग नही करना चाहिए?

तू नागपुर चली जाना। सेगाँव पहुँचनेके पहले तू जहाँ-जहाँ जाना चाहे जा सकती है।

लगता है वर्धा बहुत जल्दी ही पहुँचा तो १७ तक पहुँचूँगा।

यहाँ सब कुशल है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बदरी-केदार जाते हुए ताराबहनका शरीर छूट गया। महादेवीने उसकी बड़ी सेवा की। उसे बहुत ज्वर हो आया था।

'हूडवल'[1] अर्थात् दुस्साहस।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४२) से।

५०२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२१ मई, १९३६

चि० प्रेमा,

नन्दी दुर्गमें तो रोजकी डाक लगभग रोज निबट जाती है, ऐसा कहा जा सकता है। तेरा १८ तारीखका पत्र कल शामको पढा। आज उसका उत्तर दे रहा हूँ।

तुझसे आशा तो जो रखता हूँ वही रखूँगा।[2] तू जैसा समझेगी और तेरी जितनी शक्ति होगी उसके अनुसार तू करती रहेगी।

तूने प्रश्न ठीक पूछा है। और भी अधिक स्पष्टतासे पूछ सकती है।[3] मुझे (स्वप्नमें) वीर्य-स्खलन तो हमेशा हुए हैं। दक्षिण आफ्रिकामें वर्षोंका अन्तर पडा होगा।

१. गांधीजीने १४ मईके अपने पत्रमें इस शब्दका उपयोग किया था।

२. प्रेमाबहनने ब्रह्मचर्य-पालनके बारेमें गांधीजीकी आशाके अनुरूप अपने सिद्ध न होनेकी आशंका व्यक्त की थी। देखिए खण्ड ६२, पृ० ३१४-६।

३. गांधीजीने ६ मई, १९३६ के अपने पत्रमें जो लिखा था, प्रेमाबहन उसपर सहसा विश्वास नहीं कर सकीं और उन्होंने आचार्य भागवतसे विचार-विमर्श किया और तत्काल उन्हें लिखा कि बात अधिक खुलासेवार कहें।

मुझे पूरा स्मरण नही है। यहाँ महीनोंका अन्तर होता है। स्खलन होनेका उल्लेख मैंने अपने दो-चार लेखोंमे किया है। यदि मेरा ब्रह्मचर्य स्खलन-रहित होता तो आज मै दुनियाके सामने बहुत अधिक वस्तुएँ रख सका होता। परन्तु जिसने पन्द्रह वर्षकी आयुसे लगाकर ३० वर्षकी आयु तक – भले अपनी स्त्रीके साथ ही सही – विषय-भोग किया, वह ब्रह्मचारी बनने पर वीर्यको सर्वथा रोक सके, यह मुझे लगभग असम्भव जैसा जान पड़ता है। जिसकी सग्राहक शक्ति पन्द्रह वर्ष तक दिन-प्रतिदिन क्षीण होती रही हो, वह एकाएक यह शक्ति प्राप्त नही कर सकता। उसका मन और शरीर दोनो दुर्बल बन चुके होते है। इसलिए मै अपनेको बहुत अपूर्ण ब्रह्मचारी मानता हूँ। परन्तु जहाँ पेड़ नही होते वहाँ एरड ही प्रधान हो जाता है, वैसी ही मेरी स्थिति है। मेरी यह अपूर्णता दुनियाने जान ली है।

जिस अनुभवने मुझे बम्बईमें सताया, वह तो विचित्र और दु:खदायी था। मेरे सब स्खलन स्वप्नमें हुए; उन्होंने मुझे सताया नही। उन्हे मै भूल सका हूँ। परन्तु बम्बईका अनुभव तो जाग्रत अवस्थामें हुआ। उस इच्छाको पूरा करनेकी तो मेरी वृत्ति बिलकुल नहीं थी; मूढ़ता जरा भी नही थी। शरीर पर मेरा पूरा काबू था। परन्तु प्रयत्न करते हुए भी इन्द्रिय जाग्रत रही। यह अनुभव नया था और अशोभनीय था। इसका कारण मैंने जो बताया वही है।[1] वह कारण दूर होने पर (इन्द्रियकी) जागृति बन्द ही हो गई अर्थात् जाग्रत अवस्थामें बन्द हो गई।

मेरी अपूर्णताके बावजूद एक वस्तु मेरे लिए सुसाध्य रही है। वह यह कि मेरे पास हजारो स्त्रियाँ सुरक्षित रही हैं। मेरे जीवनमें ऐसे अवसर आये है जब अमुक स्त्रियोंको, उनमें विषय-वासना होते हुए भी, उन्हे या यो कहो कि मुझे ईश्वरने बचाया है। मै सौ फीसदी मानता हूँ कि यह ईश्वरकी ही कृति थी। इसलिए इस बातका मुझे कोई अभिमान नही है। मेरी यह स्थिति मृत्युपर्यन्त कायम रहे, यही ईश्वरसे मेरी नित्य प्रार्थना रहती है।

शुकदेवकी स्थिति प्राप्त करनेका मेरा प्रयत्न है। उसे मै प्राप्त नहीं कर सका हूँ। वह स्थिति सिद्ध हो जाये तो वीर्यवान होते हुए भी मै नपुंसक बन जाऊँ और स्खलन असम्भव हो जाये।

परन्तु ब्रह्मचर्यके बारेमें जो विचार मैंने हालमे प्रकट किये है,[2] उनमे कोई अल्पोक्ति नही है, न अत्युक्ति है। इस आदर्श तक प्रयत्नसे कोई भी स्त्री या पुरुष पहुँच सकता है। इसका अर्थ यह नही कि इस आदर्श तक मेरे जीते-जी सारा ससार या हजारो मनुष्य भी पहुँच जायेंगे। इसमें हजारो वर्ष लगने हो तो भले ही लगें, फिर भी यह वस्तु सत्य है, साध्य है, सिद्ध होनी ही चाहिए।

मनुष्यको अभी बहुत लम्बा मार्ग तय करना है। अभी उसकी वृत्ति पशुकी है। केवल आकृति मनुष्यकी है। ऐसा लगता है कि चारो तरफ हिंसा फैली हुई

१. देखिए "पत्र: प्रेमाबहन कंटकको", ६-५-१९३६।
२. देखिए पृ० ३२७-३० और ३८८-९१।

है। जगत असत्यसे भरा है। फिर भी जैसे सत्य और अहिंसा-धर्मके विषयमें शका नही, वैसे ही ब्रह्मचर्यके विषयमे भी कोई शका नही है।

जो प्रयत्न करते हुए भी जलते रहते है वे वास्तवमें प्रयत्न नही करते। वे मनमें विकारोका पोषण करते हुए भी केवल स्खलन नही होने देना चाहते, स्त्री-सग नही करना चाहते; ऐसे लोगो पर ('गीता'का) दूसरा अध्याय[1] लागू होता है। वे मिथ्याचारी माने जायेंगे।

मै अभी जो कर रहा हूँ वह विचारशुद्धि है।

आधुनिक विचार ब्रह्मचर्यको अधर्म मानता है। इसलिए कृत्रिम उपायोसे सन्ततिको रोककर विषय-सेवनका धर्म पालना चाहता है। इसके विरुद्ध मेरी आत्मा विद्रोह करती है।

विषयासक्ति जगत्मे जरूर रहेगी, परन्तु जगत्की प्रतिष्ठा ब्रह्मचर्य पर निर्भर है और रहेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३८१) से। सी० डब्ल्यू० ६८१९ से भी; सौजन्य . प्रेमाबहन कटक

५०३. पत्र: मुन्नालाल जी० शाहको

२१ मई, १९३६

चि० मुन्नालाल,

तुम वहाँ ठीक समय पर ही पहुँचे हो। तुम मीराबहनकी ठीक जरूरतके समय पहुँचे, इसलिए तुम्हे ठीक काम भी मिल गया। मैं वहाँ १८को पहुँचनेकी आशा रखे हुए हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६०५) से। सी० डब्ल्यू० ६९९१ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

१. यह तीसरा अध्याय होना चाहिए; देखिए भगवद्गीता, ३, ६।

५०४. पत्र : अमृत कौरको

२२ मई, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा कागज तो सचमुच बहुत बढ़िया है। यह हाथसे बने कागजके उद्योगकी महान् उन्नतिका द्योतक है। मेरे विचारमें तुम्हारी यह योजना अच्छी है कि बिना कटा कागज मँगवा कर वहीं आवश्यकतानुसार कटवाया जाये। अगर तुम्हें वहीं काफी ग्राहक मिल सके तो इससे शायद वहाँ कुछ गरीबोंका पेट पल सकेगा। लेकिन तब सवाल उठेगा कि तुम्हारा इतने छोटे-छोटे कामो पर ध्यान रखना सार्थक भी होगा या नहीं? इसका निर्णय तुम्हीं कर सकती हो। जैसी तुम्हारी सेहत है उसकी सुरक्षाका ध्यान रखते हुए ही तुम्हे अपने शिमला-वासका यथासम्भव सदुपयोग करना होगा।

मुझसे मिलने पर बतानेके लिए तुम जो इतनी सारी बातें जमा कर रही हो, यह तुम्हारी मूर्खता है। जब वह महान् सुअवसर आयेगा उस समय तक तुम अधिकांश बाते भूल चुकी होगी। मुझे पक्का विश्वास है कि तुम इन सब बातोंको लिखकर नही रख रही हो। इसलिए कमसे-कम एक बार तो कुछ सयानेपनसे काम लो और अगली भेंटके लिए पहलेसे ही कुछ जमा करके न रखो। जब मिलेंगे तब और भी बहुत-कुछ बातें करनेकी होंगी। मुझे आशा है कि तुम आदमपुरवालोंको जो बतानेकी जरूरत है वह बता रही हो। किसी भी मूल्य पर तुम्हें धोखाधड़ीकी कोई बात बर्दाश्त नही करनी चाहिए। एक शुद्ध कार्यमें से किसी तरहकी धोखाधड़ीको मिटानेके लिए जो भी कीमत चुकानी पड़े, कम है।

क्या मैंने तुम्हें बताया था कि बदरी-केदारकी यात्रामें ताराकी मृत्यु हो गई? इसके विषयमें 'हरिजन'[1] देखना। वह उन अत्यन्त महान् महिलाओंमें से थी जिनसे मिलनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७५) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६३८४ से भी।

१. देखिए "स्व० ताराबहन", २३-५-१९३६।

५०५. पत्र : मीराबहनको[1]

नन्दी हिल
२२ मई, १९३६

चि० मीरा,

मेरा शरीर यहाँ है, परन्तु हृदय तुम्हारे पास है।[1] मुझे तुम्हारी चिट्ठीकी आशा थी, परन्तु मिली राधाकृष्णकी ओरसे। उसके पत्रसे तुम्हे वर्धा ले आनेका इरादा जाहिर होता है। आशा है इसकी जरूरत न हुई होगी। अवश्य ही जल्दी आराम होनेके लिए जो भी करना आवश्यक समझा जाये वह करना ही चाहिए। तुम्हे मकान बनानेके कार्यक्रम या और किसी बातकी चिन्ता नही करनी चाहिए। अच्छे स्वास्थ्यके बिना तुम किसी कार्यक्रमको पूरा नही कर सकती। आशा है कल अच्छी खबर आयेगी।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

हम ३१ तारीखको यहाँसे बंगलोर पहुँचेंगे।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३७) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८०३ से भी।

५०६. पत्र : चुन्नीलालको

२२ मई, १९३६

भाई चुन्नीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। ठक्कर बापा वहाँ आ रहे हैं, इसका यह अर्थ है कि अब सब-कुछ ठीक हो जाना चाहिए। अब मुझे कागजात भेजनेकी भी जरूरत नही रहती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

१. बापूस लेटर्स टु मीरा में मीराबहनने लिखा है: "मुझपर मलेरियाका सख्त हमला हो गया था। मेरा बुखार १०५ डिग्री हो गया था और मौसमका तापमान ११७ डिग्री पहुँच गया था। मैं अभी भी पेड़ोंकी छायामें रह रही थी और अब मेरे साथ बलवन्तसिंह और मुन्नालालभाई थे। जब लोगोंने मुझे वर्धा ले जाना चाहा तो मैंने कड़ा विरोध किया, क्योंकि मुझे वृक्षोंकी छायामें घोड़े और गायके साथ रहना अच्छा लगता था, बनिस्बत किसी शहरी बँगलेके।"

५०७. स्व० ताराबहन

कुमारी मेरी चेजले नामकी एक अंग्रेज बहन १९३४ में जब हिन्दुस्तान आई उन दिनो बम्बईमे काग्रेसका अधिवेशन हो रहा था।[1] जहाजसे उतरते ही वह काग्रेस-कैम्पमे पहुँची, और मेरे झोंपड़ेमे आकर उसने मुझसे कहा कि "मै मीराबहनको जानती हूँ और मीराबहनके साथ ही मै यहाँ आनेवाली थी, पर किसी कारणवश उनसे एकाध हफ्ते पहले ही मै विलायतसे रवाना हो गई"। गाँवोमें रहकर भारतकी सेवा करनेकी उसकी इच्छा थी। उसकी बातचीतसे मै कुछ खास प्रभावित नही हुआ, और मुझे लगा कि वह हिन्दुस्तानमें ज्यादा महीने ठहरनेकी नही। पर यह मेरी भूल थी। वह बहन कुमारी मेरी बारको जानती थी, जिन्होने बैतूल (मध्यप्रान्त) से चन्द मील दूर खेड़ी गाँवमें पहलेसे ही काम करना शुरू कर दिया था। मेरी बार कुमारी चेजलेको अपने साथ वर्धा ले आई और कुछ दिन हम सब वहाँ एक साथ रहे। कुमारी चेजलेका निश्चय देखकर तो मै चकित रह गया। मेरी बारके साथ उसने खेड़ीमें ग्राम-सेवाका कार्य आरम्भ कर दिया। भारतीय पोशाक पहन ली और अपना नाम ताराबहन रख लिया। खेड़ीमें उसने इस कदर सख्त परिश्रमसे काम किया कि बेचारी मेरी बार तो देखकर हकबका गई। वह मिट्टी खोदती और सिर पर टोकरी रखकर ढोती थी। अपना भोजन उसने इतना सादा बना लिया था कि स्वास्थ्य तक खराब हो गया। कनाडासे उसे काफी पैसा आता था, पर उसमे से वह सिर्फ दस रुपयेके लगभग ही अपने लिए रखती और बाकी सब ग्रामोद्योग सघको या हिन्दुस्तानके उन भाई-बहनोंको दे देती थी, जिनके सम्पर्कमे वह आती थी, और जिनके बारेमें उसे लगता था कि आगे चलकर वे अच्छे ग्रामसेवक बन सकते है और जिन्हे रुपये-पैसेकी कुछ जरूरत होती थी। मैंने उसे बहुत ही निकटसे देखा। उसकी फैयाजीकी कोई हद तक नही थी। मानव-प्रकृतिकी अच्छाईमे उसकी बहुत श्रद्धा थी। अपराधको वह भूल जाती थी। वह सच्ची ईसाई थी। क्वेकर सम्प्रदायकी थी, पर उसमे कोई सकीर्णता नही थी। दूसरोको अपने धर्ममे मिलानेमे उसका विश्वास नही था। लन्दन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्सकी वह ग्रैजुएट थी और एक अच्छी शिक्षिका थी। लन्दनमें कई साल तक उसने एक स्कूल चलाया था। उसने फौरन यह महसूस कर लिया कि हिन्दी उसे जरूर सीख लेनी चाहिए, और नियमित रीतिसे वह हिन्दीका अभ्यास करने लगी। बोलचालकी हिन्दी सीखनेके लिए वह कुछ महीने वर्धाके महिला-आश्रममें आकर रही, और वही उसने दो बहनोके साथ गर्मियोमे बदरी-केदार धाम जानेका

१. अक्टूबरके अन्तमें।

विचार किया। मैंने उसे इस खतरनाक यात्रासे आगाह कर दिया था। लेकिन जब वह एक बार निश्चय कर लेती थी तो ऐसे-ऐसे साहसिक कामोंसे उसका मन फेरना मुश्किल होता था। बदरी-केदारकी भयानक यात्रा उसे करनी ही थी, अत अपने मित्रोंके साथ उस दिन वह रवाना हो गई। १५ मईको कनखलसे मुझे यह संक्षिप्त तार मिला, "तारावहनका शरीरान्त हो गया।" हिन्दुस्तानके गाँवोंके लिए उसके हृदयमें जो प्रेम था उसमें कोई उससे बाजी नही मार सकता था। हिन्दुस्तानकी आजादीके लिए हममें से अच्छेसे-अच्छे लोगोमें जितना उत्साह है उससे कम तारावहनमें नही था। हीनभावना जहाँ भी देखती अधीर हो जाती थी। गरीब स्त्रियो और बच्चोसे वह इतनी आजादीके साथ मिलती थी कि देखते ही बनता था। सेवा करके वह किसीका उपकार कर रही है यह भावना तो उसमें थी ही नही। किसीसे उसने अपनी सेवा नही कराई, किन्तु कोई भी हो उसकी सेवा वह अत्यन्त उत्साहके साथ करती थी। उसने अपना अहकार धो डाला था। ऐसी मूक सेविका थी वह कि उसके बाये हाथको पता नही लगता था कि दाहिने हाथने क्या काम किया है। ईश्वर उसकी दिवगत आत्माको चिर शान्ति दे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-५-१९३६

५०८. रिश्वतखोरी

हिन्दुस्तानके रेलवे विभाग और कितने ही अन्य विभागोंमें मामूलके नाम पर रिश्वतखोरी एक मामूली-सी बात हो गई है। सामान्य जनता किसी सरकारी अफसरके परिचयमे आई नहीं कि अपने कर्त्तव्य-पालन तकके लिए उससे रिश्वत लेना उस अफसरका धर्म-सा बन जाता है। मुझे इस विषयमें खुद भी काफी अनुभव है। एक बार मैं तीसरे दर्जेका टिकट लेने गया और मेरी बारी आने पर मुझसे एक आना रिश्वतका माँगा गया, मैंने देनेसे साफ इनकार कर दिया। फिर तो मेरी बारी आई ही नही, क्योकि घूस देनेवालोको टिकट पहले मिलते थे। उस दिन मुझे अच्छी तरह याद है कि मैंने बड़ी तकलीफ उठाई। कभी-कभी मुझे टिकट लेनेके लिए घटो खड़ा रहना पड़ा है। चुगी और रेलवे ये दोनो ऐसे विभाग है जिनसे आम जनताका काफी काम पडा करता है। और इसीलिए इन्ही दो विभागोमे जनताको अधिकसे-अधिक तकलीफें उठानी पड़ती है। माल मँगाने और भेजनेमें लोगो पर कैसी-कैसी बीतती है, इस विषयमे एक भाईने मुझे पत्र लिखकर उन तकलीफोकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया है। वे लिखते है कि यदि हम माल मँगाते और भेजते समय रिश्वत नही देते हैं, तो काम करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। क्या इस बुराई का भी कोई इलाज हो सकता है? 'यह पत्र एक कार्यकर्त्ताने लिखा है। इस पत्रसे मुझे प्रतीत होता है कि पैसे कमानेके ऐसे अनीतिमय तरीकोको रोकने और उनका सामना करनेकी इच्छा भावनाशील कार्यकर्त्ताओंमे है। इस विषयमे

सलाह देना कठिन है। फिर भी यह तो स्पष्ट ही है कि रिश्वत तो किसी भी हालतमें नही देनी चाहिए; और यह भी स्पष्ट है कि सार्वजनिक कार्यकी भी हानि नही होनी चाहिए। जब कोई मामूली दर्जेका कर्मचारी अपनी सत्ताका दुरुपयोग करता है तो उसका हमारे पास कोई तात्कालिक इलाज नही होता। अगर हम उन्हे शिकायतकी धमकी देते है तो वह भी व्यर्थ है, क्योकि वे लोग ऐसी धमकियोके ऐसे अभ्यस्त होते है कि उनके ऊपर उनका रंचमात्र भी असर नही पड़ता। उन्हे अपनी सत्ताका पूरा ज्ञान है, और वे उसका उपयोग बड़ी सख्तीसे करते है, क्योकि इसमें भी उनको आर्थिक लाभ ही है। वे तो ऐसा ही मानते आये है कि रिश्वत भी उनके वेतनका एक हिस्सा ही है और उसे लेनेका उन्हे अधिकार है, और जहाँ पर उन्हें अपने इस अधिकारके भग होनेकी जरा-सी भी सम्भावना मालूम होती है, वहाँ वे अपनी शक्तिका पूरा परिचय देते है। पर वे अपनी ताकतका परिचय दें या न दें, देशके युवकोका तो यही कर्त्तव्य है कि वे इस अनीतिके खिलाफ अपनी आवाज उठाये। कुछ समयके लिए तो माल भेजने या मँगानेमें असुविधा भोगनी पड़ेगी। किन्तु इससे अगर एक भी कर्मचारी अनीतिके रास्तेसे मुँह मोड लेगा तो यह असुविधा उठाई जाने योग्य है। अगर कर्मचारियोको वेतन कम मिलता है तो उन्हे ज्यादा वेतनकी माँग करनी चाहिए, लेकिन जिस जनताकी सेवा करनेके लिए उन्हे वेतन मिलता है उससे वे घूस नही ले सकते। मुझे आशा है कि उच्चाधिकारी इस लेखको देखेंगे और इस व्यापक रूपसे फैली हुई बुराईको खत्म करनेके लिए प्रभावकारी कदम उठायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-५-१९३६

५०९. दहेजकी कुप्रथा

कुछ महीने हुए कि 'स्टेट्समैन' ने दहेज-प्रथा पर चर्चा छेडी थी। यह प्रथा करीब-करीब हिन्दुस्तान भरमें अनेक जातियोमे प्रचलित है। 'स्टेट्समैन' के सम्पादकने इस विषय पर सम्पादकीयमे अपने विचार भी प्रकट किये थे। 'यग इडिया' में मै अकसर इस निर्दय प्रथा पर लिखा करता था। उन दिनो इस रिवाजके बारेमें जो-जो निर्दयतापूर्ण बाते मुझे मालूम हुआ करती थी उनके स्मरण 'स्टेट्समैन' के इन लेखोने फिरसे ताजा कर दिये है। सिंधमें जिस प्रथाको 'देती-लेती' कहते है मैंने उसीको लक्ष्यमे रखकर 'यंग इडिया' में लेख लिखे थे। ऐसे काफी सुशिक्षित सिंधी थे, जो अच्छे लडकोंसे शादीके लिए फिक्रमद लडकियोके माता-पिताओसे बडी-बड़ी रकमे ऐठते थे। पर 'स्टेट्समैन' ने तो इस प्रथाके खिलाफ एक आम लड़ाई छेड दी है। इसमे सन्देह नही कि यह एक हृदयहीन रिवाज है। मगर जहाँ तक मै जानता हूँ, जन-साधारणमें दहेजका प्रचलन नही है। मध्यम वर्गके लोगोमे ही यह रिवाज पाया जाता है, जो भारतके विशाल जन-समुद्रमे बिन्दुमात्र है। बुरे-बुरे रिवाजोके

बारेमें जब हम बात करते है, तब साधारणत. मध्यमवर्गके लोग ही हमारे ध्यानमें होते है। गाँवोमें रहनेवाले करोडो लोगोके रिवाजो और तकलीफोके बारेमें हम अभी जानते ही क्या है?

फिर भी इसका यह अर्थ नही कि चूँकि दहेजकी कुप्रथा हिन्दुस्तानमें अपेक्षाकृत बहुत थोडेसे लोगो तक सीमित है इसलिए हम उसपर कोई ध्यान न दें। यह प्रथा तो नष्ट होनी ही चाहिए। विवाह खरीद-फरोख्तकी चीज तो रहनी ही नहीं चाहिए। दहेज-प्रथाका जात-पाँतके साथ बहुत नजदीकी सम्बन्ध है। जब तक वर या कन्याकी पसन्दगी किसी खास जातिके कुछ सौ नवयुवको या नवयुवतियो तक मर्यादित है, तब तक यह कुप्रथा जारी ही रहेगी, भले ही उसके खिलाफ दुनिया भरकी बातें कही जाये। इस बुराईको अगर जडसे उखाडकर फेक देना है, तो लडकियो या लडको या उनके माता-पिताओको जात-पाँतके ये बन्धन तोड़ने ही होगे। विवाह जो अभी छोटी-छोटी उम्रमे होते है उसमें भी हमे फेरफार करना होगा। और अगर जरुरी हो, याने ठीक वर न मिले, तो लडकियोमे यह हिम्मत होनी चाहिए कि वे अनब्याही ही रहे। इस सबका अर्थ यह हुआ कि ऐसी शिक्षा दी जाये जो राष्ट्रके युवको और युवतियोकी मनोवृत्तिमे क्रान्ति पैदा कर दे। यह हमारा दुर्भाग्य है कि जिस ढगकी शिक्षा हमारे देशमें आज दी जाती है उसका हमारी परिस्थितियोसे कोई सम्बन्ध नही, और इससे होता यह है कि राष्ट्रके मुट्ठीभर लडको और लड़कियोको जो शिक्षा मिलती है, उससे हमारी परिस्थितियाँ अछूती ही रहती है। इसलिए इस बुराईको कम करनेके लिए जो भी किया जा सके वह जरूर किया जाये, पर यह साफ है कि यह तथा दूसरी अनेक बुराइयाँ, मेरी समझमे, तभी दूर की जा सकती है, जब देशकी हालतोके मुताबिक, जो तेजीसे बदलती जा रही है, लडको और लडकियोको तालीम दी जाये। यह कैसे हो सकता है कि इतने तमाम लडके और लड़कियाँ, जो कालेजो तकमे शिक्षा हासिल कर चुके हो, एक ऐसी बुरी प्रथाका सामना न कर सके या करना न चाहे जिसका कि उनके भविष्य पर उतना ही असर पडता है जितना कि शादीका? पढी-लिखी लड़कियाँ क्यो आत्महत्या करें— इसलिए कि उन्हे योग्य वर नही मिलते? उनकी शिक्षाका मूल्य ही क्या, अगर वह उनके अन्दर एक ऐसे रिवाजको ठुकरा देनेकी हिम्मत पैदा नही कर सकती, जिसका किसी भी तरह पक्ष-समर्थन नही किया जा सकता, और जो मनुष्यकी नैतिक भावनाके बिलकुल विरुद्ध है? जवाब साफ है। शिक्षा-पद्धतिके मूलमें ही कोई त्रुटी है, जिससे कि लड़कियाँ और लड़के सामाजिक या दूसरी बुराइयोके खिलाफ लड़नेकी हिम्मत नही दिखा सकते। मूल्य या महत्त्व तो उसी शिक्षाका है जो विद्यार्थीके मस्तिष्कको इस तरह विकसित कर दे कि वह मानव-जीवनकी हर तरहकी समस्याओको ठीक-ठीक हल कर सकनेमे सक्षम हो सके।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-५-१९३६

५१०. पत्र : एफ० मेरी बारको

नन्दी हिल
२४ मई, १९३६

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम ताराके विषयमें मेरी टिप्पणी[1] 'हरिजन' में देखना। हाँ, उसने हृषीकेशमें हिन्दीमें वसीयतनामा लिखा था कि उसका सब-कुछ मुझे मिले। उसपर हस्ताक्षर हैं केवल 'तारावहन'। तुम्हें उसके सम्बन्धियोंका कुछ पता है? तुम्हें उसका कनाडाका पता मालूम है? यदि हो, तो लिख भेजो। इंग्लैंडमें उसकी मित्र है, कुमारी पी० ब्लाइथ, ऐन्थॉर्न स्कूल, क्वेकर्स लेन, पॉटर्स बार, लन्दन। मैंने उसे सविस्तार लिखा है और शान्ताने भी। तुम्हारा पत्र मैं सत्यदेवजीकी मार्फत सुमित्राको भेज रहा हूँ। उनका पता है, गुरुकुल कांगड़ी, यू० पी०।

कुमारी मैडेनका पत्र आया है। मुझे खुशी है कि तुमने उसके विषयमें मुझे पूरी सूचना दी है। इस उम्रमें आकर उनका देहातमें काम करना साहसकी बात है। परन्तु आस्था हो तो पहाड़ भी राई समान है। मैं उसे लिख रहा हूँ।

यहाँकी चढ़ाई तय करनेमें मुझे कोई कष्ट नहीं हुआ।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च.]

३१ मईके बाद १५ जून तक पता होगा, बंगलोर सिटी। साथका पत्र गोपालके लिए है।[2]

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३३९१) से; सौजन्य: एफ० मेरी बार

1. देखिए "स्व० ताराबहन", २३-५-१९३६।
2. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

५११. पत्र : मीराबहनको

२४ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा २१ तारीखका पत्र और विलम्ब शुल्कवाला २० ता० का पत्र, दोनो मुझे एक ही समय मिले। विलम्ब शुल्कवाले पत्रोंका अकसर यही हाल होता है। खैर, कोई हर्ज नही हुआ। रा[धाकृष्ण]का पत्र एक दिन पहले मिला था। मुझे पूरी आशा है कि तुम्हे फिर बुखार नही हुआ होगा और यह भी कि तुम अभी तक आराम कर रही हो। तुम मलेरियाके प्रकोपोंके बाद कभी भरपूर आराम नही लेती। मै कितना चाहता हूँ कि तुम्हे मलेरिया न सता पाये। तुम्हे तो आराम लेनेके लिए किसी पर्वतीय या समुद्रतटीय स्थान पर जाना चाहिए। मै सुगमतासे तुम्हे काठियावाडके एक समुद्रतट पर भेज सकता हूँ जहाँ तुम्हे शान्ति मिलेगी, मन प्रसन्न रहेगा और देहातमे सेवा करनेका अवसर मिलेगा। देखें, वर्षाकालमे हमारा क्या हाल होता है। महादेव वगैरहके लिए तो अभी कोई कमरे नही बन सकते।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३८) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८०४ से भी।

५१२. पत्र : मीराबहनको

२४ मई, १९३६

चि० मीरा,

मुझे खुशी है कि तुम्हे बुखारसे छुटकारा मिल गया है। बेशक, तुमने सन्तरोका आर्डर देकर ठीक किया था। और जिस फलकी तुम्हे जरूरत हो, बाहरसे मँगवा लेना। मेहनतका काम शुरू करनेसे पहले खूब आराम कर लो। और परिवर्तनके लिए किसी समुद्र-तटवर्ती स्थान पर जानेके मेरे सुझाव पर गम्भीरतासे विचार करो।

मै चाहूँगा कि तुम पार्टीशन बनवानेमे खर्च न करो। तुम्हे याद होगा छोटेलालने मेरे स्नानघरके लिए क्या व्यवस्था की थी। जरूरत हुई तो मै वैसा ही कामचलाऊ इन्तजाम कर लूँगा। अभी तो मुझे झोपड़े पर बैठनेवाले खर्चसे डर लग रहा है। आशा है दीवानजी मेरी नियत की हुई मर्यादाके भीतर ही खर्च कर रहे होगे। कुर्सी, चार दीवारें और ऐसी छत जिसमें से पानी न चुए और खुला बरांडा

और चारों तरफ बाड़, ये तो कमसे-कम होना ही चाहिए। लेकिन तुम तो मुझे एक रसोईघर, स्नानघर और गौशाला भी दे रही हो।

बाकी बातोको मेरे पहुँचने तक रहने दो।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

राम[1] और लक्ष्मी[2] को मेरे आशीर्वाद कहना। उनसे कहना कि मै आशा करता हूँ वे दोनो एक-दूसरेके और देशके योग्य सिद्ध होगे।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३९) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८०५ से भी।

५१३. पत्र : फरीद अन्सारीको

२४ मई, १९३६

प्रिय फरीद[3],

तुम्हारे पत्रने मुझे चौका दिया, पर सुखद रूपसे ही। तुम्हारे अक्षर लगभग हूबहू डॉक्टर अन्सारी जैसे हैं। मै आश्चर्य ही कर रहा था कि भला डॉक्टर साहबका पत्र कैसे आ सकता है कि तभी मैंने तुम्हारे दस्तखत देखे।

अम्माजानका धीरज और जोहराकी शोक-विह्वलता देखकर मुझे ताज्जुब नही होता। जोहरा तो कोमल कुसुम सदृश है। उसे जीवन-दर्शनका कोई ज्ञान नही है। अभी तक उसने प्यार ही प्यार पाया है। उसीमे वह पली है। अब बेचारी बच्ची अभाव महसूस करती है। यह अभाव तो पूरी तरह उसके विवाहके बाद भी नही मिटेगा। जोहराके प्रति डॉ० अन्सारीका प्यार अनोखा था। उसकी भलाई और उसकी खुशीकी खातिर वह क्या नही करते थे? और यह सब वह केवल शुद्ध नि:स्वार्थ प्रेमवश ही करते थे।[4]

मै तुम्हारी व्यथा भी समझता हूँ। तुम्हारे लिए वास्तवमें वे वैसे ही थे जैसा तुमने लिखा है। सत्य तो यह है कि वे एक नि:स्वार्थ मित्र और मार्ग-दर्शक थे। इतने महान् थे वे। उनकी स्मृति हमे बल दे और ऐसी शक्ति दे कि हम उनके गौरवके अनुरूप आचरण कर सके।

१ और २. अनुमानत: रामेश्वरदास पोद्दारके पुत्र श्रीराम और पुरुषोत्तमदास जजोरियाकी पुत्री लक्ष्मी।

३. डॉ० मुख्तार अहमद अन्सारीके भतीजे।

४. इसके बादका पत्रांश अत्यन्त अस्पष्ट और धूमिल होनेके कारण बहुत-से स्थानों पर अनुमानसे शब्द-पूर्ति की गई है।

तुम्हारा मुझसे सान्त्वना और शक्तिकी अपेक्षा रखना व्यर्थ है। मुझमें न तो उनके जैसी महान् सान्त्वना-प्रदायक शक्ति है और न वैसी सेवा-भावना ही है जैसी उनमें थी और तुम सबमें है। किन्तु यदि डॉक्टर अन्सारीके प्रति मेरा प्रेमभाव तुम्हारे, जोहराके तथा उन सब लोगोंके, जिनका वे खास खयाल रखते थे, दिलोंमें जगह पानेके लिए पर्याप्त है, तो मैं अपने उस प्रेमकी गवाही पेश करता हूँ। उनकी मृत्युने उस प्रेमको और भी अधिक गहरा कर दिया है जिसका आधार पहले ही बहुत मजबूत था।

आशा है तुम बराबर प्रगति कर रहे हो।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
महात्मा, भाग ४, में पृ० ११२-१३ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे। सी० डब्ल्यू० ९७९७ से भी।

५१४. पत्र : प्रभावतीको

२४ मई, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा तार आशाके अनुरूप समय पर मिल गया इसलिए बड़ा सन्तोष हुआ। इस परसे अनुमान यह लगाता हूँ कि पहलेके मेरे तीन पत्र[1] तुझे नहीं मिले हैं। वे मेरे पास भी लौटकर नहीं आये। इसलिए समझमें नहीं आता कि उनका क्या हुआ। जो हुआ है सो ठीक है। तुझे जो पत्र मिला है, उसमें मैंने पहले पत्रोंका सार तो दे ही दिया है। कान्तिने भी दो पत्र तुझे लिख दिये हैं। दूध आदि खुराक कितनी और क्या ले रही है, दिनका कार्यक्रम क्या होता है, आदि सभी-कुछ लिखना।

मैं दूर पड़ा हुआ हूँ तो क्या तुझे उनसे खुलकर बात नहीं करनी चाहिए? और उनकी सलाह नहीं लेनी चाहिए? इसमें संकोचकी कोई बात नहीं है। पत्र लिखकर पूछना सम्भव हो तो जरूर पूछ। किन्तु जिस विषयमें जल्दी निर्णय करना जरूरी लगे उसके बारेमें पिताजीकी मदद अवश्य लेनी चाहिए।

किसी भी परिस्थितिमें अन्तरका आनन्द तो जाना ही नहीं चाहिए। यह बात श्रद्धाका प्रधान लक्षण है। यहाँ सब ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

३१ को बंगलोर चले जायेंगे, इसलिए इसका जवाब बंगलोर देना। कुमार पार्क, बंगलोर सिटी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६६) से।

१. देखिए "पत्र : प्रभावतीको", १९-५-१९३६।

५१५. पत्र : नारणदास गांधीको

२४ मई, १९३६

चि० नारणदास,

प्रेमाकी मूल माँगके अनुसार उसकी बीमारीके बादका यह पहला पत्र तुम्हारे पास भेज रहा हूँ। विवाह[1] निर्विघ्न सम्पन्न हो गया होगा और मेरे पत्र भी मिल गये होंगे[2]।

बालकृष्ण चोरवाड पहुँच गया?

कुसुम अच्छी रहती है। रोज मेरे साथ घूमने जाती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

हम ३१ को नन्दीसे बंगलोर चले जायेंगे और बहुत करके १४ दिन वहीं रहेंगे। पता है : कुमार पार्क, बंगलोर सिटी।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९१ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

५१६. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२४ मई, १९३६

चि० मुन्नालाल,

लगता है तुम्हारा पहुँचना अच्छा हुआ। मीराबहनके साथको एक बड़ा सत्संग मानना। उनकी भरपूर सेवा करना। वे जो-कुछ कहें, उसे पूरे मनसे करते रहना। किसी भी रूपमें उनपर भार न पड़े। बलवन्तसिंहसे कपास साफ करनेकी पूरी क्रिया सीख लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६०४) से। सी० डब्ल्यू० ६९९२ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

१. पुरुषोत्तम गांधी और विजयाका।
२. देखिए "पत्र: पुरुषोत्तम और विजया गांधीको", १४-५-१९३६।

५१७. पत्र : जाकिर हुसेनको

२५ मई, १९३६

प्रिय जाकिर,

तुम्हारा पत्र मुझे अभी मिला है। उसी डाकसे अगाथा हैरिसनका डॉक्टर (मु० अ० अन्सारी) पर लेख मिला जो उसने नागपुरसे निकलनेवाले सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके 'हितवाद' नामक अखबारके लिए लिखा है। मेरे हृदयमे उनका क्या स्थान था यह जतानेके लिए तुम्हे वह लेख भेजता हूँ। मुझे मालूम था कि वह अपनी यूरोप-यात्रा अधूरी छोडकर चले आये थे।[1] यात्रा-भग न करनेकी मेरी विनती व्यर्थ गई। मेरे विना बुलाये ही वे मेरे पास दौडे आये और अपने परिचित कुशलतम डॉक्टरोको इकट्ठा कर लिया। प्रेमकी ऐसी असाधारण अभिव्यक्तिने मानो मेरे उपवासको लगभग सार्थक बना दिया। इसीका एक दूसरा पक्ष भी है। यह भी कहा जा सकता है कि मेरा उपवास करना मूर्खता थी, क्योकि उस कारण उन तीन सप्ताहोमे कितने ही श्रेष्ठतम डॉक्टरोका बहुमूल्य समय गया जिसको वे अपने अनेक कड़े रोगोवाले मरीजोके उपचार पर लगाते। कह नही सकता कि ऐसी प्रेमाभिव्यक्तियोका क्या मूल्य आँका जाये। हम तो केवल विनम्र भावसे अपनी क्षण-क्षणकी गतिविधिके मुख्य नियन्ताकी बुद्धिग्राह्य इच्छाका पालन ही कर सकते है।

इस लम्बे अनुच्छेदसे तुम्हें मेरी मन स्थितिका ज्ञान हुआ होगा। यो तो मुझे अपने दैनिक धन्धोंसे ही कम फुरसत मिल पाती है, परन्तु मेरी दशा बेचारी जोहरा जैसी ही है। यदि मुझे हर क्षण अपने कर्त्तव्य-पालनमे व्यस्त न रहना पड़ता तो मै भी उसके जैसा ही व्याकुल हो जाता।

पिछले तीन दिनोसे मेरे मनमे केवल तुम्हें लिखनेके लिए एक पत्रकी रूपरेखा बन रही है। फिर मुझे शुएब[2] का, और ख्वाजा[3] का और मतिभ्रमसे शेरवानी[4] का भी ध्यान आया। उस समय मुझे ध्यान ही नही रहा कि वह महान् पुरुष (शेरवानी) भी अब हमारे बीच नही है। कुछएक और भी मेरे परिचित मुसलमान भाई है, परन्तु इस समय तो ये ही नाम मेरे सामने थे।

यह तो मैं जानता हूँ कि डॉक्टर अन्सारी मेरे लिए जैसे अचूक मार्गद्रष्टा बन गये थे वैसा तुममे से कोई नही बन सकता। यह कोई योग्यताकी बात नहीं, यह तो केवल आस्थाकी बात है।

१. गांधीजीके २१ दिनके उपवासके समय जो ८ मई, १९३३ को शुरू हुआ था।

२. शुएब कुरेशी।

३. देखिए खण्ड ६३, "पत्र: ख्वाजा अब्दुल मजीदको", ७-६-१९३६।

४. तसद्दुक अहमद शेरवानी।

लिखते-लिखते मुझे लगा कि मुझे तुमपर भरोसा करके अपने दिलकी बात तुमसे कह देनी चाहिए। जो प्रश्न मैं पूछना चाहता था और अब भी चाहता हूँ, वह यह है कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर क्या तुम मेरे निकट डॉक्टर अन्सारीका स्थान लोगे? इस समय मुझे डॉक्टर [अन्सारी] का, ईश्वरमें आस्था रखनेवाले और धर्मभीरु एक सन्मित्रके प्रेमका अभाव उद्विग्न नहीं कर रहा है। इस समय मुझे हिन्दू-मुस्लिम समस्याके बारेमें एक अचूक मार्ग-दर्शकका अभाव उद्विग्न कर रहा है। इस विषय पर मेरा वर्तमान मौन मेरी उदासीनताका द्योतक नहीं, बल्कि दिन-प्रतिदिन बढ़ते इस विश्वासका द्योतक है कि एकता अवश्यम्भावी है। तो मैं पूछता हूँ, क्या तुम डॉक्टर अन्सारीका स्थान लोगे? इसका उत्तर देनेमें समाजके बीच अपने स्थानका ध्यान मत करो। यदि तुममें आत्म-विश्वास हो तो 'हाँ' कहो। न हो तो 'ना' कह दो। मैं तुम्हें गलत नहीं समझूँगा। मैं तुम्हें इतनी अच्छी तरह पहचानता हूँ और तुमसे इतना स्नेह करता हूँ कि तुम्हारे उत्तरका गलत अर्थ नहीं लगाऊँगा।

तुम मार्ग-दर्शक बनो या न बनो, कृपा करके इस प्रश्नका उत्तर दो जो मैंने औरोंके अलावा डॉक्टर अन्सारीसे भी अन्तिम पत्रमें पूछा था। सीमा-प्रान्त सरकारने हिन्दी या गुरुमुखीके माध्यमसे शिक्षा देनेवाले हिन्दू और सिख बालिका विद्यालयोंको आर्थिक सहायता देनेसे लगभग इनकार कर दिया है। क्या उसका यह कदम ठीक है? महीनोंसे मुझसे इस प्रश्नपर विचार प्रकट करनेको कहा जा रहा है। अभी तक मैं आग्रहको टालता रहा हूँ। परन्तु यह प्रश्न सिद्धान्तका है और इसके गर्भमें व्यापक परिणाम छिपे हैं। इस सिलसिलेमें मैंने साहबजादा सर अब्दुल कयूमको लिखा, परन्तु उनका उत्तर पढ़कर दुःख हुआ है। अपने विचार व्यक्त करनेसे पहले यदि तुम चाहो तो उनके पत्रकी प्रति भेज दूँगा।

मैं नहीं जानता कि हिन्दी-हिन्दुस्तानीके प्रश्नपर मुजीबने अपने पत्रमें जो विचार व्यक्त किये हैं उनसे तुम सहमत हो या नहीं।[1] मेरी इच्छा है, तुम्हारे अलावा मुजीब, आकिल और दूसरे मित्र भी 'हरिजन' में छपे मेरे दो लेख[2] पढ़ें और यदि उनसे सन्तोष न हो तो मेरे साथ इस विषयपर तर्क करें, चाहे खुले तौरपर 'हरिजन' के माध्यमसे या खानगी तौरपर। मुझे मतभेदका कोई कारण नहीं दिखता। यदि हो तो हमें उसे दूर करनेका प्रयास करना चाहिए।

तुम सबको प्यार,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

१. देखिए परिशिष्ट २।
२. देखिए "हिन्दी या हिन्दुस्तानी", ९-५-१९३६ और १६-५-१९३६।

५१८. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

नन्दी दुर्ग
२५ मई, १९३६

चि॰ भुजगीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। जवान आदमियोको पेसिलसे पत्र कभी नही लिखना चाहिए। किसीको नही लिखना चाहिए। पेसिलका लिखा हुआ कुछ समयके बाद धुंधला होजाता है और पढनेमे तकलीफ होती है।

तुम धीरज बनाये रखना। विनयशील बनना। हर मामलेमे आचरण शुद्ध रहा तो पिताजी तुम्हे नही रोकेगे। उन्हे तुम्हारी दृढताकी परीक्षा करनेका अधिकार है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी॰ एन॰ २६०३) से।

५१९. पत्र : जमनालाल बजाजको

२५ मई, १९३६

चि॰ जमनालाल,

इसके साथ गोपालका पत्र तुम्हें पढनेके लिए भेजता हूँ। तारावहनके जानेसे वह खूब घबराया-सा लगता है। उसमें दोष है, पर गुण भी है। उसकी जिम्मेदारी अब मेरे सिर आ पड़ी है। इसमें कठिनाई नही देखता। दूर बैठे बताते रहना है। अभी तो बीमाके काममें जुटा रहे; ग्रामसेवाके लिए तैयार होनेकी सूचना दी है। सुमित्रा और सुभद्राका मामला अटपटा है। उन्हे ताराबहन हरिद्वार ले गई थी, ऐसा खयाल है। मै जाँच कर रहा हूँ। उनके विचार भी जाननेका प्रयत्न करता हूँ। अगर गोपालके कहनेके मुताबिक सुमित्रा सुभद्राको हमें सौप दे तो उसका महिला आश्रममें रहना मुझे ठीक लगता है। सुमित्राको तो खेड़ी गाँवमे मेरीबहनके पास रहनेके लिए सूचित किया है। उसके खर्चके लायक शायद देना पड़े। अपना अभिप्राय जताना। तुम आराम जरूर लेना।

[पुनश्च :]

३० मई तक नन्दी — ३१ मईसे १५ जून तक बगलोर सिटी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी॰ एन॰ २९८१) से।

५२०. पत्र : रेहाना तैयबजीको

२५ मई, १९३६

प्रिय बहन रेहाना,

कितने महीनोंके बाद तेरा पत्र आया। कितनी सुन्दर गुजरातीमें! लगता है तू अपनी गुजरातीका ज्ञान बढाती जा रही है। यदि मैं अपनी उर्दूके विषयमें ऐसा ही कर सकता तो कितना अच्छा होता! किन्तु इसमें दोष उस्तानीका या मुरीदका?

अब्बाजानकी खबर तूने किस ढगसे दी है? जिसे बचाना चाहता है, खुदा उसे किस तरह बचा लेता है। कैसे सुन्दर प्रसग उत्पन्न करता रहता है। वह बडा चतुर सूत्रधार है। जब इच्छा करता है, डोर पकड़ कर हमें नाच नचाने लगता है। उसकी मर्जीके मुताबिक नाचते हैं तो वह डोर खीचता चला जाता है, किन्तु हमें इसका पता ही नही चलता। यदि हम उसके इशारेपर नाचना न चाहे तो हमें उसका डोर खीचना खटकता है और हम शिकायत करने लगते है। तू अब्बाजानको यह पढ़कर सुनाना और उनका चेहरा भाँप कर मुझे लिखना। उनमे पत्र सुनने योग्य शक्ति न हो और डाक्टरोकी इजाजत न हो तो पत्र दबा लेना।

तूने इतने अधिक कुटुम्बियोके नाम लिख दिये है कि सिवाय नामके उनका मेरे लिए कोई अर्थ नही है। मुझे किसीका चेहरा भी याद नही आता। नाम भी मुश्किलसे याद आते है। फिर भी मै एक कुटुम्बी तो हूँ ही। कैसा कुटुम्बी हूँ कि अपने कुटुम्बियोके नाम भी नही जानता! क्या किया जा सकता है? बडे कुटुम्बमें घुलमिल जानेवालेका यही हाल होता है न? नाम और रूप जाननेमें क्या रखा है? सभी एक माताके बालक है। यदि हम सचमुच इतना समझ ले तो नाम और रूपके बिना भी काम चला सकते है न? यह सभीको सुना देना और मेरी तरफसे माफी माँगना और माफी दिलाना। मेरी दुआ और आशीर्वाद तो पहुँचा ही देना।

हाय, डॉ० अन्सारीके जानेसे कितनी बडी खाई आ पडी। इसे भरना कठिन है। बेचारी जोहरा बेचैन है। उसके नाम अपनी टूटी-फूटी उर्दूमें आज ही एक दूसरा[1] पत्र लिख रहा हूँ।

सरदार और काका यहाँ है ही। सभी अब्बाजान और अम्मीजानकी बड़ी याद करते है।

१५ जून तक मेरा पता बगलोर सिटी रहेगा।

१. दोनों ही पत्र उपलब्ध नहीं है।

मेरे पत्र पढ़ तो पाती है न? हमीदा आ गई?

श्रीमती रेहाना तैयबजी
साऊथवुड

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

५२१. पत्र: एस० अम्बुजम्मालको

नन्दी दुर्ग
२५ मई, १९३६

चि० अबुजम्,

तुमारा खत मिला। आनन्द हूआ। कृष्ण स्वामी[1] अब सुखी होगा। बहूको तो सतोष है ना? तुमारा शरीर और मन दोनो अच्छे होगे। मात पिता भी आनन्दमे होगे।

यहा हवा अनुकूल है। सरदार खूब भ्रमण रोज करते है। दूसरे सब अच्छे है। मैं भी अच्छा हूँ।

हां, बगलूरमें कुछ १५ दिन रहेगे। ३१ को वहा जायेंगे। [तुम] भी आ सकेगी तो अच्छा होगा। वर्धा जानेका तो मद्राससे ही होगा।

कमला दो तीन दिनके लिये मेरे साथ रहना चाहती है। मैंने सम्मति भेज दी है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मुझे बताना कि तुम ऊपर लिखेको आसानीसे पढ सकती हो कि नही। वहाँ शैमरॉक काटेजमे श्रीमती एस्थर मेनन रहती है। यदि तुम मेरी ओरसे उनसे मिल सको तो मिलना और उनसे मित्रता करना।[2]

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०७) से; सौजन्य: एस० अम्बुजम्माल

१. अम्बुजम्मालका पुत्र।
२. पुनश्च के बादका अंश अंग्रेजीमें है।

५२२. तार: मगनलाल प्राणजीवन मेहताको

२६ मई, १९३६

मगनलाल प्राणजीवन मेहता
मुगल स्ट्रीट
रंगून

तुम्हे मुझसे मिले बिना वापस नही जाना चाहिए। इकतीस तारीख तक नन्दी हिल हूँ, तदुपरान्त एक पखवाड़े बगलोरमे। चाहे एक ही दिनके लिए, किन्तु आओ अवश्य।

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

५२३. पत्र: मीराबहनको

२६ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे २३ और २४ तारीखके दो पत्र आज पहुँचे।

बेशक अगर तुम सेगाँवमे अधिक सुखी और अच्छी रहती हो तो वहाँ चली जाओ। तुम्हे आराम और मनचाहा भोजन जिस समय चाहो, उस समय मिलना ही चाहिए। वहाँ किसीसे चुपचाप कह दोगी तो शायद सब चीजे ठीक हो जायेंगी। नक्शे[1] लौटा रहा हूँ। शुद्धियाँ नही की गई है। तुमने इस चीजको सोचकर ठीक बनाया है और यही रहेगी।

आज और अधिक नही, क्योकि डाक जा रही है और उसे पकड़ना है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८०६ से भी।

१. मीराबहनने बापूज लेटर्स टु मीरा में लिखा है: "मैंने मकानों, प्रार्थना-भूमि और चौकके लिए दो अलग-अलग तरहके नक्शे बनाये थे"।

५२४. पत्र : वियोगी हरिको

वंगलोर सिटी[1]
२६ मई, १९३६

भाई वियोगी हरि,

खत आज ही मिला। सुकीर्ति[2] की शादी के बारे में तार कल चला जायगा। अच्छा हुआ। दोनो को मेरे आशीर्वाद भेजो। भगवती प्रसादसे कहो मैं आशा करता हूँ यस लग्नके पीछे विषयासक्ति नहीं है लेकिन-शुध्ध धार्मिक भावना ही है। सुकीर्ति और भगवती प्रसादके भविष्यके शुध्ध वनने का वड़ा असर हिंदु संसार पर होगा।

तुमारे बारे में मैं लिख चुका हूँ। तुमारा निर्णय मुझे योग्य लगा है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथ का खत अमतुल सलाम को है ना।

सुकीर्ति के लग्न के साथ- ह० से० संघ को कुछ भी संबंध नहीं है यह स्पष्ट होना चाहिये। इसको अखबारो मे देनेकी भी अनावश्यकता है। भगवती के मातपिता इ० हैं? उसका जाति बहिष्कार है या होगा?

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१) से।

५२५. पत्र : के० हजारीसिंहको

[स्थायी पता.] वर्धा
२६ मई, १९३६

भाई हजारी सिंघ,

मैं नन्दी दुर्ग जा रहा था इतनेमें आपका पत्र आया। किताव मिले थे। किताव तो वर्धा रह गई। आपका खत मेरे सामने है।

मोरिश्यसमें मैं करीव दस दिन रहा था क्योंकि मेरा जहाज इतने दिन वहा ठहरा।[3] मेरी मुलाकातका कोई और अर्थ था ही नहीं इसलिये कम लोग जानते होंगे। मुसलमान भाईओका एक मकान था।[4] और इससे मुझे अन्य लोगोसे मिलने-

१. गांधीजीने यह पता स्पष्टत वियोगी हरि द्वारा उत्तर देने के लिए लिखा था।

२. हरिजन आश्रमकी एक सदस्या।

३. गांधीजी मॉरिशसमें वस्तुतः २० दिनके लिए रहे थे। देखिए खण्ड ३, पृ० २२६ तथा ५०७।

४. बादका अंश साधन-सूत्रमें जो अंग्रेजी अनुवाद दिया गया है उसपरसे लिया गया है।

का अवसर मिला। मैं एक सामाजिक उत्सवमें गवर्नरसे भी मिला। कृपया मेरे देश-भाइयोको आप मेरी शुभकामनाएँ पहुँचा दें। वन्देमातरम।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

ए हिस्ट्री ऑफ इंडियन्स इन मॉरिशस में प्रकाशित परिशिष्ट ई की अनुकृतिसे।

५२६. पत्र : मीराबहनको

२७ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे दो पत्रोका उत्तर कल मैंने जल्दी-जल्दीमें दिया था। मैंने वाड़वाले चौकके दोनो नक्शे भी लौटा दिये थे। मैंने तुम्हारे नक्शोको वारीकीसे नही देखा, क्योंकि मै तुम्हारे निर्णयको अपनेसे श्रेष्ठ समझता हूँ। इन मामलोके लिए तुम्हारे अन्दर सहज योग्यता है।

मेरे खयालसे मैं तुम्हे पहले ही वता चुका हूँ[1] कि महादेवके झोपड़ेके बारेमे अभी विचार करनेकी जरूरत नही है। पहले मैं यह देख लेना चाहता हूँ कि मेरे पैर टिकते है या नही। उसके वाद और इमारतो पर खर्च करनेका विचार करूँगा। धीरे-धीरे चलनेमे समझदारी है। पाँच दिनोका अनुभव कहता है कि महादेव आदि मगनवाड़ीमें रहे, तो भी सम्पर्क कायम रखा जा सकता है। यह सिर्फ सँभलकर कदम उठानेके समर्थनमें कहा है।

ज[मनालाल]के यहाँ तुमने जो अव्यवस्था देखी उसके वारेमे मिलनेपर मैं तुमसे वात करूँगा।

तुमने जिस तूफानका वर्णन किया है, उससे विदित होता है कि वर्षाऋतुमें देहातमें क्या हाल हो सकता है। शायद सेगाँवमें तो फिर भी स्थिति वेहतर इसलिए रही कि पवनारकी तरह वह ऊँची जगह पर नही है। हरएक स्थितिमें सुविधाएँ और असुविधाएँ दोनो होती हैं। इसलिए जो वस्तुएँ स्वय अस्थिर है, उनके वारेमें लम्बी-चौडी योजनाएँ न वनाना ही वेहतर है।[2]

मेरा खयाल है मै तुम्हे वता चुका हूँ कि हम यहाँसे उतरकर ३१ तारीखको वगलोर पहुचेंगे और वहाँ एक पखवाड़े रहेंगे। हम १० और १५ तारीखके वीच किसी भी दिन वगलोरसे रवाना होगे। यह वहाँके कार्यक्रमो पर निर्भर करेगा। मेरी

१. २४ मई, १९३६ के पत्रमें।

२. इसके वारेमें मीराबहनने लिखा है: "जब मैं बापूकी मिट्टीकी कुटिया बना रही थी, तब संयोगसे पवनारमें जमनालालजीके लिए पक्का ईंटोंका बँगला तैयार हो रहा था। उपरोक्त तूफानमें मिट्टीकी कुटिया दृढ़ खड़ी रही और ईंटोंका बँगला टूटकर ढह गया।"

इच्छा तो जल्दीसे-जल्दी रवाना होनेकी रहेगी। मुझे बाहर घूमनेसे कोई लाभ नही हुआ है। मेरा खयाल है सरदारको काफी लाभ हुआ है, उन्हे बगलोरमें पूरे पन्द्रह दिन रहनेकी जरूरत नही होगी। इसलिए अगर हम वहाँ पूरे पन्द्रह दिन रहे भी तो केवल कार्यवश ही रहेगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४१) से, सौजन्य . मीराबहन। जी० एन० ९८०७ से भी।

५२७. पत्र : मौलवी एम० अशरफको

स्थायी पता : वर्धा
२७ मई, १९३६

प्रिय अशरफ,

तुम मुझसे क्या आशा कर सकते हो? निस्सन्देह तुमने कुमारप्पा और शकर-लाल बैंकरको लिख दिया होगा। दोनो सस्थाओने[1] जो-कुछ साहित्य तैयार किया है, उसे वे तुम्हे भेज सकते है। मुझे अच्छी तरह पता है कि तुम 'हरिजन' नही चाहते जिसमें अस्पृश्यता और कुछ नैतिक समस्याओसे सम्बन्धित बातोकी चर्चा होती है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

मौलवी एम० अशरफ
राजनीतिक और आर्थिक सूचना विभाग
स्वराज्य भवन
इलाहाबाद

[अंग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल, १९३६, सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. अखिल भारतीय चरखा संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ।

५२८. पत्र : कन्हैयालाल और लीलावती मुंशीको

२७ मई, १९३६

भाई मुंशी और चि० लीलावती,

आपके प्रेमके वश हो जाऊँ तो आपका आतिथ्य स्वीकार करना ही पड़े; किन्तु फिलहाल तो मैं सरदारको रोकनेका भी निमित्त बन गया हूँ। कल हम लोगोंने की और हम इस निर्णयपर आये कि सरदार भी वहाँ [ऊटी] न जाये। तबीयतकी बातदृष्टिसे तो नन्दी सभीको, और सरदारको तो खासतौरसे अनुकूल जगह रही है। आप इस विषयमें तो सन्देह ही न करें कि नन्दी जैसा एकान्त वहाँ कदापि नहीं मिल सकता। अभी तो बंगलोर भी ठंडा है और हमें आशा है कि वहाँ जाकर कुछ काम निपटा सकेंगे। इसलिए सरदारको दो दिनके लिए भी दूर करना उचित नहीं लगता। बंगलोरमें कार्यक्रम भरपूर रहेगा इसलिए आप अपने अन्तिम दो दिन वहाँ बिताने आ जायें, ऐसा कहना चाहता हूँ। उस हालतमें कुछ बातें कर सकूँगा और कुछ काम भी निकाल लूँगा। ऊटीकी हवा तो अच्छी है ही, दृश्य भी उत्तम है। किन्तु केवल इसीके लिए वहाँ आनेका मन नहीं होता, न हिम्मत पड़ती है। आपके आतिथ्यका आनन्द तो सरदार ले चुके हैं। मैं भी किसी दिन लूँगा। प्रेमपान तो करता ही रहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५७४) से, सौजन्य : क० मा० मुंशी

५२९. पत्र : विट्ठल वी० दास्तानेको

नन्दी दुर्ग
२७ मई, १९३६

भाई दास्ताने,

ऐसा लगता है कि तुम मुझसे बहुत अधिककी अपेक्षा रखते हो। देशके सम्मुख इस बातको रखनेमें मेरे लिए इस समय क्या मर्यादा है वह तो तुम जानते ही हो। रही बात प्रचारकी; सो वह तो तुम्हारी अपनी कार्य-दक्षतामें निहित है ही।

देवके पत्रके उत्तरमें मैंने उनसे स्थान, नक्शा तथा अन्य तथ्य माँगे हैं। फिलहाल तुम्हारे प्रश्नोंके उत्तर इस प्रकार हैं :

(१) तुम्हें वहाँ चौमासेके दिनोंमें उचित सब्जियाँ उगानी चाहिए और फूलोंके पौधे भी। दिसम्बर तक पक जानेवाले अनाज भी बोने चाहिए। कांग्रेस [अधिवेशन]के समय इन सबका उपयोग हो जायेगा। अभीसे जमीनकी पैमाइश हो जानी चाहिए। वर्षाकालमें कौन-कौन-सी जगहें पानी वगैरहसे भर जाती है, यह भी नोट कर लेना। जो तालाब भर जाते है उनका भी पानी इकट्ठा करना चाहिए। इस कामके लिए तुम्हें अभीसे एक कुशल कृषि-विशारद और कुशल इंजीनियर रख लेना चाहिए। मैं यह मान लेता हूँ कि ये सेवाएँ तुम्हे निःशुल्क मिल जायेंगी।

शंकरलालसे फौरन मिल लो। इस सम्बन्धमें उसे जितनी जानकारी है उतनी और किसीको नही है। वास्तुकार म्हात्रेने दो अधिवेशनोंमें काम किया है, इसलिए उनको अभीसे वहाँ ले जाओ। और इस मामलेमें शंकरलालसे नन्दलाल बोस तथा शान्तिनिकेतनकी प्रदर्शनीकी सामग्रीके बारेमें पूछ लो। लक्ष्मीदाससे मिलना और जाजूजी तथा कुमारप्पासे भी।

पडाल और बैरकोंके लिए स्थान तथा समयके लेखे-जोखेमे म्हात्रे मदद करेंगे। समय कम-से-कम तीन महीने मानो, क्योंकि बरसात बन्द होते ही निर्माण-कार्य शुरू हो जाना चाहिए। सबसे पहले तो योजना बनाओ।

स्थान एक लाख लोगोंके लायक होना चाहिए, ऐसा समझना। आजसे ही स्वयंसेवक और सेविकाओंके नाम इकट्ठा करना शुरू कर दो। . .[1] और वत्सला[2] वगैरहसे ही श्रीगणेश करो।

गुजरातीकी प्रतिसे. प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५३०. पत्र : तिरुपुर खादी-उत्पादक संघको[3]

[२८ मई, १९३६ के पूर्व]

मैं तो केवल यह कहूँगा कि आप जिन परिस्थितियोंमें खादी बेच रहे हैं, वह गलत कार्य है। इससे उन दरिद्रोंके हितका घात होता है जिनकी खातिर अखिल भारतीय चरखा संघ कार्य करता है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-५-१९३६

१. नाम अस्पष्ट है।

२. विट्ठल वी० दास्तानेकी पुत्री।

३. संघने कहा था कि वे कतैयोंको उचित वेतन दे रहे थे और . . . यदि वास्तवमें उन्होंने वेतनमें कमी कर दी होती तो कतैये संघकी खातिर कातनेके बजाय अखिल भारतीय चरखा संघसे सम्पर्क स्थापित करते। यह भी कहा गया था कि अ० भा० चरखा संघ द्वारा मूल्योंमें जो वृद्धि की गई थी वह बहुत ज्यादा थी। देखिए "अप्रमाणित खादी" ११-४-१९३६।

४. यह रिपोर्ट दिनांक "तिरुपुर, २८ मई, १९३६" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

५३१. पत्र : अमृत कौरको

२८ मई, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र कल आया। यहाँकी डाक निकल जानेके बाद बाहरसे डाक आती है। तुम्हारा तो पूरा परिवार इकट्ठा हो गया है—जज, गवर्नमेंट मेम्बर, डॉक्टर और उनके बीच विद्रोहिणी बहन; और अब तुम चाहती हो कि कलेक्टर भाई भी आ जाये ताकि तुम्हारा सुख पूर्ण हो जाये। याद रखो कि बहनके प्यारका केवल यह अर्थ नही कि थकानसे पस्त भाईको खूब खिलाया जाये। उसको समझना चाहिए कि किस व्यक्तिको कैसा भोजन अनुकूल पडेगा। मैंने कितनी ही बार देखा है कि गरिष्ठ और पौष्टिक भोजन हानि भी पहुँचाता है। परन्तु अगर तुम्हे खानेकी चीजोका सही चुनाव करना नही आता तो तुम्हारा मेरे साथ रहना निष्फल रहा। हाँ, खाना पकानेका ढंग तुम्हारा अपना ही होना चाहिए।

तुम्हारे पत्रमे वह वाक्य पढकर मुझे विश्वास नही हुआ जो माना जाता है कि मैंने कैलनबैकसे कभी कहा था। मैंने दुबारा पढा और हँस पडा। इस प्रकार तो मै छोटे बच्चोके लिए भी कभी नियम नही निर्धारित करता। हालाँकि कैलनबैकको मुझ पर अगाध श्रद्धा थी, तथापि वे मेरी तथाकथित ऐसी निरंकुशता और उद्धतताको बर्दाश्त नही करते। और उनके जैसे श्रद्धावान व्यक्तिके साथ मुझे अपनी दोषाक्षमताका ऐसा दावा करनेकी जरूरत ही नही थी। अब तुम पूरी बात बताओ कि ऐसी बहुमूल्य सूचना देकर किसने तुम्हारा मनोरंजन किया है। तब शायद मै इस गम्भीर विषय पर कुछ और स्पष्टीकरण कर सकूँ। लेकिन मेरे इनकारका यह अर्थ नही कि मै विद्रोहियों और बेवकूफोके लिए नियम नही बनाऊँगा, या बनाकर उनके पालनकी अपेक्षा केवल इस कारण नही रखूँगा कि नियम मेरे बनाये हुए है। मुझे तो अपनी उपाधिकी सार्थकता पूरी करनी ही है, चाहे केवल इसी प्रयोजनसे कि तुम्हे अपने विद्रोही स्वभावको सिद्ध करनेका अवसर मिले। और यदि मेरे वचनोको सुनकर कोई इनको मेरे उद्धत स्वभावके प्रामाणिक उदाहरणके रूपमे उद्धृत करे तो भगवान ही बचाये ! ! !

बंगलोर उतरनेके बाद तुम्हे ऐसी बकवास लिखनेका समय मुझे नही मिलेगा। यहाँ तो शान्ति है इसलिए तुम्हे निरर्थक बाते लिखनेका अपेक्षाकृत अधिक अवकाश है।

आशा तो करता हूँ कि अपने निकटतम प्रियजनोके आतिथ्यका तुम्हारे दुर्बल स्वास्थ्य पर जोर नही पडता होगा। मै जानता हूँ कि प्रेमभरी सेवा करनेका और उसमे छोटी-सी-छोटी बातका ध्यान रखनेका तुम्हारे लिए कितना महत्त्व है और

तुममें ऐसा करनेकी पूरी क्षमता भी है। सौभाग्यसे तुम्हे ऐसे परिश्रमकी अतिसे रोकनेके लिए शम्मी वही है।

मीरा खूब बीमार थी परन्तु अब कुछ ठीक है। उसको जमनालालजीके बँगले पर भेज दिया गया था। अबतक वह सेगाँव लौट आई होगी।

रामेश्वरी नेहरू यहाँ तीन दिनके लिए आ रही है। उन्होने हरिजन-कार्यके लिए त्रावणकोरमे बडा सफल दौरा किया है।

तुम्हारी लखनऊ-प्रदर्शनी पर लिखित टिप्पणी[1] मे ऐसा कोई इशारा नही था कि उसे प्रकाशित न किया जाये। मैंने उसे ध्यानसे पढा, इसे तुमने लिखा है यह छिपानेके लिए कुछ परिवर्तन किये और छपने भेज दिया। बताना पढनेमे कैसी लगी। और तुम उसे छपवाना क्यो नही चाहती थी? अगली बार ऐसी बाते भली प्रकारसे अंकित कर देना ताकि तुम्हारी इच्छाका पता चल जाये। शहरकी एक महिलाके प्रदर्शनी-विषयक जो विचार है, उन्हें यदि जनता तक नहीं पहुँचना था तब तो उस टिप्पणीका कोई महत्त्व ही नही था।

इसके साथ मार्सडेनका एक पत्र है जो पढनेसे ताल्लुक रखता है।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

याद रखना, हम बगलोर सिटी ३१ ता० को पहुँचेंगे और १५ जून तक ही वहाँ रहेंगे।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२८) से, सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६८८४ से भी।

५३२. पत्र : अमतुस्सलामको

२८ मई, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

बहुत दिनोके बाद तेरा खत मिला। अब तुझे खत लिखनेमे मुझे डर लगता है। तू बहुत वहमी हो गई है। इसलिए अर्थका अनर्थ करती है। उर्दूमें लिखना भी बन्द करूँ या नही, सोच रहा हूँ। जिस खतमें जरा भी दुःख लगने जैसा कुछ भी नही था, उसीका उलटा अर्थ करके तू दुखी हुई। मैंने तो ठक्करबापासे लडाई न करनेके लिए लिखकर मजाक ही किया था।[2] मै तो जानता हूँ कि तू किसीसे

१. यह *हरिजन*, २३-५-१९३६ में "ए सिटी वुमन ऑन द लखनऊ एक्जिबिशन" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थी।

२. देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", १८-५-१९३६।

झगड़नेवाली नही है। इसलिए तेरे बारेमें लडाईकी बात कहूँ, तो वह विनोद ही हो सकता है न? ठक्करबापाका प्रेमपूर्ण खत मिला। सब ठीक हो गया ऐसा माना, इसीलिए तो मैंने विनोद किया। उससे खुश होनेके बजाय दु.ख कैसा?

अब तुझसे विनोद करना छोड़ दूं क्या?

वहाँ तेरे बारेमें अनेक प्रकारकी बातें होती भी हो तो भी क्या? उसमें भी तेरा वहमी स्वभाव तो काम नही करता है न? तुझे तो अपने कामसे मतलब है। हरिजन बालकोको पकाकर खिलाना, सब साफ-सुथरा रखना। इससे बढ़कर काम कौन-सा है? और फिर तेरे पास तो त्यागी और राजकिशोरी है, इसलिए मुश्किल नही होनी चाहिए।

अगर तूने अपना शरीर बिगाड़ा तो मुझे भारी पीड़ा होगी। डॉ० अन्सारीकी मौतका दु.ख भूल जाना चाहिए। वे जो काम छोड गये है, सो करना है।

पटियालामें भाइयोसे जो बात हुई वह ठीक नही है। उसमें तेरा पागलपन था, इसलिए तुझे जवाब भी ऐसे ही मिले। दुखी कुटुम्बी और क्या कहेगा? तेरी जिदके सामने सबको झुकना पडता है।

तेरी सूचना मिलनेसे पहले ही मैंने सरस्वतीको और उसकी माँको बुलाया है। मै मानता हूँ कि वे बंगलोर आयेंगे। कान्तिकी फिक्र न कर।

जवाब अब बंगलोर सिटीके पते पर देना।

सुकीर्ति और राजको खत लिखता हूँ। अपनी तबीयतकी खबर देना।

यह खत ठीक पढ पाई या नही, लिखना।

अब तो सब सवालोके जवाब आ गये न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५) से।

५३३. पत्र : राजकिशोरी त्यागीको

२८ मई, १९३६

चि० राजकिशोरी,

तुमारा खत मिला। महिलाश्रम में अच्छा न लगा तो वापिस जाने की जरूरत नही। तुमारे शेठजी[1] को इस बारे मे पत्र लिखना। महिलाश्रम मे क्या अच्छा न लगा सो मुझको विस्तार से लिखो।

अमतुल सलाम बहन के पास रहना तो बहतर है और त्यागी जी तो है। उनसे हिंदी का और गणीत का अभ्यास अच्छी तरह करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६३७) से। सी० डब्ल्यू० ४२८५ से भी; सौजन्य : चन्द त्यागी

१. जमनालाल बजाज।

५३४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२९ मई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा २५ तारीखका पत्र मिला।[1] तो तुम तूफानी गतिसे दौरा कर रहे हो। भगवान तुम्हे आवश्यक शक्ति दे। खालीमे एक सप्ताह रहना भी नियामत होगा।

मेरा इरादा खादी पर तुम्हारे बयानका सार्वजनिक उपयोग करनेका है।[2] मुझसे बहुत लोग पूछताछ कर रहे है। हमारे जो लोग खादी में विश्वास रखते है, उनमें तोड-मरोडकर प्रकाशित [किये गये तुम्हारे बयानके] सार-सक्षेप[3] से घबराहट फैल गई है। तुम्हारे बयान से स्थितिमे कुछ सुधार होगा।

कार्य-समिति मे किसी स्त्रीको न लेने के बारेमे तुम्हारे स्पष्टीकरणसे मेरा समाधान नही होता। यदि समितिमें किसी स्त्रीको रखनेकी तुमने जरा भी इच्छा प्रकट की होती तो पुराने लोगोमे से किसी एकको छोड देनेके बारेमे कुछ भी कठिनाई न होती। दबाव कहे तो केवल भूलाभाईके[4] लिए था। और जब उनका नाम पहली बार लिया गया तब तुम्हे कोई आपत्ति नही थी। किसी अन्य सदस्यके लिए कोई दबाव नहीं था। और फिर किसी समाजवादीका नाम छोडकर किसी स्त्रीको ले लेनेका विकल्प तो तुम्हारे लिए खुला हुआ था। परन्तु जहाँतक मुझे याद है, तुम्हें स्वय सरोजिनी देवीके स्थान पर किसीको चुननेमे कठिनाई थी और सरोजिनी देवीको तुम रखना नही चाहते थे। तुमने तो यहाँ तक कहा था कि कार्य-समितिमे सदा किसी-न-किसी स्त्रीको और मुसलमानोको एक निश्चित सख्यामें रखनेकी परम्परामें तुम्हारा विश्वास नहीं है। इसलिए, जहाँतक किसी स्त्रीको न लेनेका सम्बन्ध है, मेरे खयालसे, यह तुम्हारा अबाधित निर्णय था। इस परम्पराको तोडनेकी इच्छा या हिम्मत और कोई सदस्य न करता। मै तुम्हे यह भी बता दूँ कि कुछ काग्रेसी हल्कोमे सारा दोष मुझ पर थोपा जा रहा है, क्योकि यह कहा जाता है कि मैंने श्रीमती नायडूको नही रखने दिया और यह आग्रह किया कि कोई स्त्री न रखी जाये। यह बात, जैसा मैंने तुमसे कहा, ऐसी है जिसका मै साहस भी नही कर सकता था। किसी भी स्त्रीकी बात तो क्या, मैं श्रीमती नायडू तकको अलग नही कर सकता।

दूसरे सदस्योके विषयमें भी मेरा यह खयाल रहा है कि तुमने उन्हे इसलिए चुना कि कार्यकी दृष्टिसे ऐसा करना ठीक था। 'बेहया' या 'हयादार' का कोई

१. देखिए परिशिष्ट ४।

२. देखिए खण्ड ६३, "झूट-मूठका डर", ६-६-१९३६।

३. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", २१-५-१९३६ को पाद-टिप्पणी १।

४. भूलाभाई जे० देसाई।

सवाल नही था, क्योकि सभी अपने-अपने अन्त.करणके अनुसार सेवाकी उच्च भावनाओसे प्रेरित होकर काम कर रहे थे। मै बता दूँ कि तुम्हारे बयानसे, जिसका समर्थन तुम्हारे पत्रसे भी होता है, राजेन्द्रबाबू, राजाजी और वल्लभभाईको भी बडा दुख हुआ।[1] उनका खयाल है, और मै उनसे सहमत हूँ, कि उन्होने तुम्हारे साथीके रूपमें सम्मानजनक और पूर्ण निष्ठापूर्वक तुम्हारे साथ चलनेकी कोशिश की। तुम्हारे बयानसे ऐसा प्रकट होता है कि तुम पीड़ित पक्ष हो। मै चाहता हूँ कि तुम इस दृष्टिकोणको समझ लो और किसी भी तरह सम्भव हो तो इस खबरमे सुधार कर दो।

तीसरी बातके बारेमे मै उत्सुक हूँ कि सफाई हो जाये। मै अनुमान नही लगा सकता कि तुम क्या कहना चाहते हो, परन्तु उसे हमारे मिलने तक रहने दिया जाये। तुम पहले ही जितना दबाव सहन कर रहे हो, मै उसे बढाना नही चाहता।

डॉ० अन्सारीके स्मारकके विषयमे मैंने आसफ अलीको अपनी स्पष्ट राय दे दी है[2] कि पापा[3] की तरह डॉक्टरके स्मारकको भी राजनीतिक दृष्टिसे अच्छे दिनोकी प्रतीक्षा करनी चाहिए। क्या तुम्हारा खयाल इससे भिन्न है?

कमला-स्मारक धीरे-धीरे प्रगति कर रहा है।

राजकुमारीका पत्र साथमे है। इसमे इन्दुका उल्लेख है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

१० तारीख तक बंगलोर शहरमे हूँ।

अंग्रेजीसे: गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३६; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

५३५. पत्र: मीराबहनको

२९ मई, १९३६

चि० मीरा,

तो तुम पहले ही सेगाँव पहुँच गईं। कोई हर्ज नही। अगर तुम्हे जरूरी आराम वही मिले, तो यही वह जगह है जहाँ तुम्हारा हृदय भी होना चाहिए। अगर वर्षा आरम्भ हो गई तो अवश्य ही मकान नही बन सकते। इसलिए जितने भी मजदूर काममे आ सकते है, उन्हे दीवारो और छतके कामपर लगा दो। अगर ये तैयार हो और दीवारे सूख गई हो, तो बाकीका काम बरसातके बाद भी पूरा हो सकता है। लेकिन इस सारे प्रयत्नके बावजूद भी अगर हमारे लौटने तक इमारत रहनेके लिए

१. देखिए परिशिष्ट ५।

२. देखिए "पत्र: आसफ अलीको" २१-५-१९३६।

३. मोतीलाल नेहरू, जिनकी मृत्यु ६ फरवरी, १९३१ को हुई थी।

तैयार नही हो, तो मुझे चिन्ता नही होगी। तुम्हारे कमजोर शरीर पर भार नही पड़ना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

साथका पत्र मुन्नालालके लिए है। आशा है जानम्माल[1] की भेजी फलोकी टोकरी तुम्हे मिल गई थी।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०८ से भी।

५३६. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२९ मई, १९३६

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम दोनोकी[2] कड़ी परीक्षा हो रही है। चाहे जितनी वर्षा हो, चाहे जैसी आँधी आये, तुम्हे गाँवमे रहना सीखना है। शहरके लोगोकी आपत्तियाँ अलग है, फिर भी वे वहाँ बने रहते है और उसी तरह गाँववाले भी गाँव नही छोड़ते। हम न शहरके रह गये है और न गाँवके बन पाये है। हमारी अधरमे लटकती हुई स्थिति करुणाजनक है।

दोनोंको बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६०३) से। सी० डब्ल्यू० ६९९३ से भी, सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

५३७. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

२९ मई, १९३६

चि० अमृतलाल,

तुम्हारे तारका जवाब मिल गया होगा। तारसे जवाब देनेका अभिप्राय यह था कि यदि किसी कारणसे नीमू जाना न चाहे तो न जाये। नीमुके बम्बई जानेके प्रति मुझे उत्साह नही है। बम्बईमे उसकी बहन है, बहनोई है और भाई है। इसीलिए उसकी माताको नीमुकी सेवाकी खास जरूरत नही है। फिर भी रामदासका तार आनेके कारण जाना आवश्यक हो सकता है, इसीलिए मैने अनुमति दे दी है। यदि वह वहाँ हो तो उसे यह पढ़वा देना।

१. एस० अम्बुजम्मालकी मौसी।
२. मुन्नालाल शाह और बलवन्तसिंह।

साथके दूसरे पत्रोकी व्यवस्था करना। मीराबहनकी ओरसे यदि कोई डाक लेने न आया हो तो जमनालालजीके यहाँ डाकका पता चला लेना। यदि वहाँसे कोई न जाता हो तो [मगन]वाडीसे कोई जाकर दे आये। मुन्नालाल भी मीराबहनके साथ ही है।

अब पत्र बगलोर सिटीके पते पर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१५) से।

५३८. फिर वही आत्म-संयम

एक सज्जन लिखते हैं:

> **इन दिनों आपने ब्रह्मचर्य पर जो लेख[1] लिखे हैं उनसे लोगोंमें खलबली-सी मच गई है। जिनकी आपके विचारोंके साथ सहानुभूति है उन्हें भी लम्बे अर्से तक संयम रख सकना मुश्किल पड़ रहा है। उनकी यह दलील है कि आप अपना ही अनुभव और अभ्यास सारी मानव-जाति पर लागू कर रहे हैं। परन्तु खुद आपने भी तो कबूल किया है कि आप पूरे ब्रह्मचारीकी शर्तें पूरी नहीं कर सकते, क्योंकि आप स्वयं विकारसे मुक्त नहीं हैं। और चूँकि आप यह भी मानते हैं कि दम्पतिको सन्तानकी संख्या सीमित रखनेकी जरूरत है, इसलिए अधिकांश मनुष्योंके लिए तो एक यही व्यावहारिक उपाय है कि वे संतति-निग्रहके कृत्रिम साधन काममें लावें।**

मैं अपनी मर्यादाएँ स्वीकार कर चुका हूँ। आत्म-सयम बनाम कृत्रिम सतति-निग्रहके इस विवादमे तो ये ही मेरे गुण है। कारण, मेरी मर्यादाओसे यह स्पष्ट हो जाता है कि मैं भी अधिकाश मनुष्योकी भाँति दुनियावी आदमी हूँ और असाधारण गुणवान होनेका मेरा दावा भी नही है। मेरे सयमका हेतु भी बिलकुल मामूली था। मै तो देश या मनुष्य-समाजकी सेवाके खयालसे सन्तान-वृद्धि रोकना चाहता था। देश या समाजकी सेवाकी बात दूरकी है। इसकी अपेक्षा बडे कुटुम्बका पालन न कर सकना सन्तति-निग्रहके लिए अधिक प्रबल कारण होना चाहिए। वर्तमान दृष्टिकोणसे इस पैंतीस वरसके सयममें मुझे सफलता मिली है। फिर भी मेरा विकार नष्ट नही हुआ है और उसके विषयमे मुझे आज भी जागरूक रहनेकी जरूरत है। इससे भलीभाँति सिद्ध है कि मै बहुत-कुछ साधारण मनुष्य हूँ। इसीलिए मेरा कहना है कि जो बात मेरे लिए सम्भव हुई है वही दूसरे किसी भी प्रयत्नशील मनुष्यके लिए सम्भव हो सकती है।

१. देखिए पृ० ३२७-३०, ३८८-९१ तथा २७४-६, २९२-४ और ३११-३ भी।

कृत्रिम उपायोके समर्थकोके साथ मेरा झगडा इस बात पर है कि वे यह मान बैठे है कि मामूली मनुष्य सयम रख ही नही सकता। कुछ लोग तो यहाँ तक कहते है कि यदि वह समर्थ हो, तो भी उसे सयम नही रखना चाहिए। ये लोग अपने क्षेत्रमे कितने भी बड़े आदमी हो, मै अत्यन्त विनम्रता किन्तु विश्वासके साथ कहूँगा कि उन्हे इस बातका अनुभव नही है कि सयमसे क्या-क्या हो सकता है। उन्हे मानवीय आत्माको मर्यादित करनेका कोई हक नही है। ऐसे मामलोमें मेरे जैसे एक आदमीकी निश्चित गवाही भी, यदि वह विश्वस्त हो तो, न केवल अधिक मूल्यवान है बल्कि निर्णायक भी है। सिर्फ इसी वजहसे कि मुझे लोग 'महात्मा' समझते है, मेरी गवाहीको बेकार करार दे देना गम्भीर खोजकी दृष्टिसे उचित नही है।

परन्तु एक बहनकी दलील और भी जोरदार है। उनके कहनेका मतलब यह है:

> **हम कृत्रिम उपायोंके समर्थक लोग तो हाल ही में सामने आये हैं। मैदान आप संयमवादियोंके हाथमें पीढ़ियोंसे, शायद हजारों वर्षसे, रहा है। आप लोगोंने क्या कर दिखाया? क्या दुनियाने आत्म-संयमका सबक सीख लिया है? बच्चोंके भारसे लदे हुए परिवारोंकी दुर्दशा रोकनेके लिए आप लोगोंने क्या किया है? क्या आहत मातृत्वकी पुकारको आप लोगोंने सुना है? आइए, अब भी मैदान आप लोगोंके लिए खाली है। आप संयमका समर्थन करते रहिए, हमें इसकी चिन्ता नहीं है; और अगर आप पतियोंकी जबरदस्तीसे स्त्रियोंको बचा सकें तो हम आपकी सफलता भी चाहेंगे। मगर आप हमारे तरीकोंकी निन्दा क्यों करते हैं? हम तो मनुष्यकी साधारण कमजोरियों और आदतोंके लिए गुंजाइश रखकर चलते हैं और हम जो उपाय करते हैं अगर उनका ठीक-ठीक प्रयोग किया जाये तो वे करीब-करीब अचूक साबित होते हैं।**

इस व्यग्यमे स्त्री-हृदयकी पीडा भरी हुई है। जो कुटुम्बकी बढती हुई सख्याके मारे सदा दरिद्र रहते है, उनके लिए इस बहनका हृदय दयासे भरा हुआ है। यह सभी जानते है कि मानवीय दु खकी पुकार पत्थरके दिलोको भी पिघला देती है। भला यह पुकार उच्चात्मा बहनोको प्रभावित किये बिना कैसे रह सकती है? पर अगर हम भावावेशमे बह जाये और डूबतेकी तरह किसी भी तिनकेका सहारा ढूंढने लगे तो ऐसी पुकार हमे आसानीसे गुमराह भी कर सकती है।

हम ऐसे जमानेमे रह रहे है जिसमे मूल्य बहुत जल्दी-जल्दी बदल रहे है। धीरे-धीरे होनेवाले परिणामोसे हमको सतोष नही होता। हमे अपने इन सजातीयोकी भलाईसे, यहाँ तक कि केवल अपने ही देशकी भलाईसे तसल्ली नही होती। हमे सारे मानव-समाजका खयाल होता है। मानवता जिस लक्ष्यकी ओर बढ रही है, यह उस दिशामे एक बड़ी उपलब्धि है।

परन्तु मानवीय दुखोका इलाज धीरज छोडनेसे नही होगा, और न सब पुरानी बातोको सिर्फ पुरानी होनेकी वजहसे छोड देनेसे होगा। हमारे पूर्वजोने भी वे ही

स्वप्न देखे थे जो आज हमें उत्साहसे अनुप्राणित कर रहे है। शायद उनके स्वप्नोंमें इतनी स्पष्टता न रही हो। यह भी सम्भव है कि एक ही प्रकारके दु:खोका जो उपाय उन्होने वताया वह क्षितिजके आशातीत रूपमे विशाल हो जाने पर भी लागू हो।

और मेरा दावा तो निश्चित अनुभवके आधार पर यह है कि जिस तरह सत्य और अहिंसा मुट्ठीभर लोगोके लिए ही नही है वल्कि सारे मनुष्य-समाजके लिए रोजमर्राके व्यवहारकी चीजे है, ठीक उसी तरह संयम थोड़े-से महात्माओके लिए नही वल्कि सब मनुष्योके लिए है। और जिस तरह वहुत-से आदमियोके झूठे और हिंसक होने पर भी मनुष्य-समाजको अपना आदर्श नीचा नही करना चाहिए उसी प्रकार यदि वहुतसे या अधिकाश लोग भी आत्म-संयमका सन्देश स्वीकार न कर सकें तो इस विषयमे भी हमें अपना आदर्श नीचा नही करना चाहिए।

वुद्धिमान न्यायाधीश वह है जो विकट मामला सामने होने पर भी गलत फैसला नही करता। लोगोकी नजरमे वह अपनेको कठोर-हृदय वन जाने देगा, क्योकि वह जानता है कि कानूनको विगाड़ देनेमे सच्ची दया नही है।

हमे नाशवान शरीर या इन्द्रियोकी दुर्वलताको अपने भीतर विराजमान अविनाशी आत्माकी दुर्वलता नही समझ लेना चाहिए। हमें तो आत्माके नियमानुसार शरीरको साधना चाहिए। मेरी विनम्र सम्मतिमे ये नियम थोडेसे ही है और अटल है, और इन्हे सभी मनुष्य समझ और पाल सकते है। इन नियमोको पालनेमे कम-ज्यादा सफलता मिल सकती है, पर ये लागू तो सभी पर होते है। अगर हममे श्रद्धा है तो उसे सिर्फ इसीलिए नही छोड देना चाहिए कि मनुष्य-समाजको अपने ध्येयकी प्राप्तिमे या उसके निकट पहुँचनेमे लाखो वरस लगेगे। जवाहरलालकी भाषामें, हमारी विचार-धारा ठीक होनी चाहिए।

परन्तु उस वहनकी चुनौतीका जवाव देना तो वाकी ही रह गया। "सयम-वादी" हाथ-पर-हाथ धरे नहीं वैठे है। उनका प्रचार-कार्य जारी है। जैसे कृत्रिम साधनोसे उनके साधन भिन्न है, वैसे ही उनका प्रचारका तरीका अलग है और होना चाहिए। "संयमवादियों"को चिकित्सालयोकी जरूरत नही है, वे अपने उपायोका विज्ञापन भी नही कर सकते, क्योकि वह कोई वेचने या दे देनेकी चीजे तो है नही। कृत्रिम साधनोकी टीका करना और उनके उपयोगसे लोगोको सचेत करते रहना इस प्रचार-कार्यका ही अंग है। उनके कार्यका रचनात्मक पक्ष तो सदा रहा ही है। किन्तु वह तो स्वभावत ही अदृश्य होता है। सयमका समर्थन कभी वन्द नही किया गया है और इसका सवसे कारगर तरीका उदाहरण प्रस्तुत करनेका है। संयमका सफल अभ्यास करनेवाले सच्चे लोग जितने ज्यादा होगे, यह प्रचार-कार्य उतना ही अधिक कारगर होगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-५-१९३६

५३९. टिप्पणियाँ

वस्तु-विनिमय पर पुरस्कृत निबन्ध

जो लोग मुद्रा-विनिमयके स्थान पर वस्तु-विनिमयमे दिलचस्पी रखते है उन्हे याद दिलाया जाता है कि प्रतियोगिताकी अन्तिम तारीख निकट आ रही है। ३१ अगस्त, १९३५ के 'हरिजन' मे जो सूचना[1] छपी थी उसे मैं नीचे दे रहा हूँ

प्रमाणित व्यापारी, न कि अप्रमाणित खादी

अ० भा० चरखा सघके मत्रीको बर्मा-स्थित शाखाके व्यवस्थापकने लिखा है:[2]

११-४-१९३६ को 'हरिजन' में प्रकाशित गांधीजीके "अप्रमाणित खादी" शीर्षक लेखके सिलसिलेमें, मैं आपका ध्यान इस सच्ची बातपर आकृष्ट करना चाहता हूँ कि यहाँ बर्मामें भी नकली खादी काफी बिकती है; और आम तौर पर यहाँके अप्रमाणित व्यापारी ग्राहकोको यह बतलाते है कि वे चरखा संघ द्वारा प्रमाणित खादी ही मँगाते और बेचते है। कुछ थानों पर वे 'चरखा-संघ द्वारा प्रमाणित' यह मोहर छाप लेते है या कपड़ो पर चिट लगा देते है। . . .

इसलिए हमें बार-बार जनता तथा भोले-भाले ग्राहकोंको यह सचाई बतानी पड़ती है कि खद्दर या कोई भी कपड़ा चरखा संघ द्वारा प्रमाणित नहीं होता, बल्कि संघके व्यापारियों या खादी-भंडारोको प्रमाण-पत्र दिया जाता है, (और हम लोगोको यह सलाह देते रहते है कि जिन व्यापारियो या खादी-भण्डारोंको चरखा संघका प्रमाण-पत्र मिला हुआ है सिर्फ उन्हींके यहाँसे खादी खरीदनी चाहिए।) इस तरह आप देखेंगे कि 'प्रमाणित खादी' या 'अप्रमाणित खादी' इन शब्दोंका उपयोग करना हमारे लिए ठीक नहीं, क्योकि इससे अप्रमाणित व्यापारियोका पक्ष पुष्ट होता है।

अब, जबकि गांधीजी तकने इन शब्दोका अपने "अप्रमाणित खादी" शीर्षक लेखमें उपयोग किया है, मुझे विवश होकर यह गलती आपके सामने रखनी ही पड़ी, जो कि हम अनजानमें 'प्रमाणित खादी' या 'अप्रमाणित खादी' इन शब्दोंका उपयोग करके कर रहे है। हमारी इस भूलसे अप्रमाणित व्यापारियोको एक ऐसा साधन मिल जाता है जिससे कि वे खादीके ग्राहकोंको गलत रास्ते पर ले जाते है। . . .

१. यहाँ नहीं दी गई है। देखिए खण्ड ६१, पृ० ३९५-६।
२. यहाँ केवल कुछ अंश दिये गये हैं।

मैं खुशीसे यह संशोधन मान लेता हूँ। 'प्रमाणित खादी' कहकर जरूर हम गलती करते हैं। तमाम थानोंको प्रमाण-पत्र देना कठिन है, और ग्राहकोंसे यह आशा करना भी बेकार है कि वे हरएक चीजको खरीदते वक्त देख लिया करें कि वह असली है या नकली। इसलिए चरखा-संघने उन्हीं भण्डारों और व्यापारियोंको प्रमाणपत्र देनेका नियम रखा है, जो सिर्फ शुद्ध खादी ही बेचते हैं। मैं आशा करता हूँ कि खादी-प्रेमी, चाहे वे बर्माके हों या किसी दूसरे प्रान्तके, उन्हीं भण्डारों या व्यापारियोंसे खादी खरीदनेका निश्चय कर लेंगे, जिनके पास अखिल भारतीय चरखा-संघका प्रमाण-पत्र हो।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-५-१९३६

५४०. पत्र : मीराबहनको

नन्दी हिल

३० मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा २८ ता० का पत्र मिला।

अलबत्ता तुम टट्टीघर पर खर्च कर सकती हो। साबरमतीकी तरह उसके साथ ही एक स्नानघर भी खड़ा कर लेना अच्छा होगा।

अगर नाममात्रकी पहाड़ी पर तुम्हारे झोपड़ेसे वही काम चल जाये, तो मैं नहीं चाहूँगा कि तुम समुद्रतट पर जाओ।

आशा है १४को नहीं तो सोमवार, १५ जूनको हम जरूर वर्धा पहुँच जायेंगे। मेरी कोशिश यही होगी कि वहाँ किसी बोलनेके दिन पहुँचूँ। वह रविवार ही हो सकता है। लेकिन ऐसा न कर सका तो सोमवारको वहाँ पहुँचनेमें भी मुझे सन्तोष होगा।

तुमने अबतक हरिलालके इस्लाम-धर्म स्वीकार कर लेनेका समाचार सुन लिया होगा। अगर इसके पीछे उसका कोई स्वार्थपूर्ण उद्देश्य न हो, तो इस कार्रवाईके खिलाफ मुझे कुछ नहीं कहना है। परन्तु मुझे इसमें सन्देह है कि इस कदमकी तहमें उसका और कोई हेतु नहीं है। देखें अब क्या होता है।

कल हम यहाँसे उतर कर बंगलोर शहर चले जायेंगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८०९ से भी।

५४१. पत्र : रामदास गांधीको

३० मई, १९३६

. . .[1] अभी-अभी समाचारपत्रमे हरिलालके पराक्रमकी वात पढी। यदि वह ज्ञानपूर्वक निस्वार्थ बुद्धिसे मुसलमान हुआ होता तो कोई भी बुराई नही थी। किन्तु उसे तो पैसे और विषय-भोगका लोभ है। इन्हे सन्तुष्ट करनेके लिए वह चाहे जो करनेके लिए तैयार हो सकता है, नागपुरमें मेरे ऊपर ऐसी छाप उसकी वातचीतसे पड़ी थी। यदि मेरी यह मान्यता झूठ सिद्ध हो और वह अभी भी जीवनका नया श्रीगणेश कर सके तो मेरा परिताप समाप्त हो जायेगा। किन्तु यह तो शरावके साथ मासाहार जोडना हुआ, और मास खानेकी सुविधा तो उसने ले ही ली थी। यह सव होते हुए भी तुममे से कोई दुखी न हो। जो नसीवमें होता है, सो होकर रहता है। वह तो किसी भी धर्मका नही था, अव इस्लामका नाम लिया है, इसीलिए उसे धार्मिक तो नही कहा जा सकता। यदि वह सचमुच इस्लामकी खूवियोको अपने जीवनमें उतारे तो हमे सन्तोष ही होगा। यदि यह केवल ढोग हो तो दुख माननेकी भी कोई वात नही है।

इस उदाहरणसे हम सवको सावधान हो जाना चाहिए। हमें चाहिए कि हम जिस धर्मको माननेवाले हो, उसे समझें और उसके योग्य आचरण करे।

पत्र देवदासको भी पढवा देना और कुछ अश मणिलालको भेज देना।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य . नारायण देसाई

५४२. पत्र : प्रभावतीको

३० मई, १९३६

चि० प्रभा,

तुम्हारा पत्र मिला। आज ही आया था। मैंने उसे पढ़ा और तुरन्त ही फाड दिया। इसलिए इसे 'सिरके वल' लिख रहा हूँ। 'सिरके वल' अर्थात् जो याद रह गया उसके वल पर।

तेरे ऊपर वहाँ वोझ तो रहेगा ही। ईश्वर तेरी चिन्ता करेगा। काम अधिक पड़ जानेपर तू भोजन कम कर देती है, यह ठीक है। दूध न छूटे तो अच्छा। शायद सिताव दियारामें कुछ अधिक आराम मिल जाये।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

चन्द्रमुखी[1] और विद्यावती[2] के बारेमें समझ गया। तू बच गई। ताराबहनकी [मृत्युके][3] बारेमें तो तूने देख लिया होगा। मेरी राय यह है कि तुझे बनारस जाकर सीखनेका अवसर मिले तो सीख लेना। तू पढ़ना-लिखना तो चाहती ही है, इसलिए यह नया ज्ञान अच्छा ही रहेगा। नये लोगोंसे मुलाकात होगी। इससे जयप्रकाशको खुशी होगी। यदि तू तर्क देकर उसे समझा सके तो अलग बात है। बहुत तर्क न करना ही ज्यादा अच्छा है। साधारण बातचीत करनेसे समझाया जा सके तो ठीक है। बादकी बात तो बनारसका क्रम पूरा हो जाने पर ही सोचूँगा।

इतना कहनेसे बनारसके विषयमें तू मेरी राय समझ गई न?

चन्द्रकान्ताके विवाहका कुछ वर्णन भेज सके तो भेजना। सुमंगल [प्रकाश] कहाँ है? कैसा है? कुछ खबर है क्या? हम कल बंगलोर मिटी जा रहे हैं। वहाँसे अधिकसे-अधिक १३ को निकल कर १५ को वर्धा पहुँच जायेंगे। मैं तो वर्धासे पाँच मील दूर सेगाँवमें रहूँगा। हर हफ्ते शायद वर्धा जाना पड़े। मकान बन रहा है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

अखबारोंमें खबर है कि हरिलाल मुसलमान हो गया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७१) से।

५४३. बातचीत: सी० वी० रामन और उनकी पत्नीके साथ[4]

[३१ मई, १९३६के पूर्व][5]

विद्यार्थी लोग गांधीजीको अपना इन्स्टीच्यूट दिखाने ले जाना चाहते थे। मगर कैसे ले चलें? गांधीजीने कहा कि अगर वह उनकी बात मान लेते हैं तो फिर उन्हें और भी बहुत-से लोगोंकी प्रार्थना स्वीकार करनी चाहिए। कुछ विद्यार्थी उनके हस्ताक्षर लेना चाहते थे, और कुछ लोग हरिजनोंके लिए थैली भेंट करना चाहते थे।

१. जयप्रकाश नारायणकी भतीजी।

२. प्रभावती की बहन।

३. साधन-सूत्रमें अस्पष्ट है। अनुवाद गुजराती पुस्तक बापुना पत्रो–१०: श्री प्रभावती बहेनने से किया गया है।

४. सर सी० वी० रामन और श्रीमती रामन साइन्स इन्स्टीच्यूटके कुछ विद्यार्थियोंके साथ गांधीजीसे मिलने आये थे।

५. यह और इसके बादवाला शीर्षक महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' में से लिया गया है। उसके अनुसार यह बातचीत नन्दी हिल पर हुई थी जहाँ गांधीजी ३१ मई तक ठहरे थे।

[गांधीजी.] मैं तो चाहता हूँ कि तुम सब लोग मेरा हस्ताक्षर माँगो, जिससे मेरी हरिजन-थैली और भी भर जाये, लेकिन मुझे इन्स्टीच्यूट तक मत घसीटो।

गांधीजीकी अनिच्छाके पीछे यह अज्ञान भी था कि वे उन्हें किस इन्स्टीच्यूटमें ले चलनेके लिए कह रहे हैं, पर ज्यों ही उन्हें मालूम हुआ कि वह साइन्स इन्स्टीच्यूट है, उन्होंने उसी वक्त उनकी प्रार्थना मान ली। गांधीजीने कहा :

अगर आप लोग साइन्स इन्स्टीच्यूटकी बात कर रहे हैं, तब तो मैं वहाँ जरूर चलूँगा, बशर्ते कि सर सी० वी० रामन मुझे वहाँ कोई वैज्ञानिक चमत्कार दिखानेकी कृपा करें।

उन्होंने श्रीमती रामनसे कहा :

मैंने आपके पतिदेवकी जबानी आपकी बहुत तारीफ सुनी है, पर मुझे देखना है कि वह कहाँ तक सच है। उस दिन उन्होंने मुझे बताया था कि जब वह अपने विज्ञान-मथनमें तल्लीन रहते हैं, तब आप मानव-सेवा सम्बन्धी हर तरहकी प्रवृत्तिके लिए समय निकाल लेती हैं।

[श्रीमती रामन:] नहीं, नहीं, कोई ऐसा बहुत काम मैं कहाँ करती हूँ। जितना मुझे करना चाहिए उतना तो मैं नहीं करती हूँ। खादी, हरिजन-कार्य, समाज-सेवा और इसी तरहके दूसरे कामोंमें मुझे जरूर दिलचस्पी है। महात्माजी, यह तो आप जानते ही हैं कि चरखा मैं कई सालसे चलाती हूँ। कोई पन्द्रह साल हुए जब मैंने अपने हाथका काता हुआ कुछ सूत खादी बुनवा देनेके लिए आपके पास भेजा था, और स्व० मगनलाल गांधीने उसकी खादी बुनवाकर मेरे पास भेज दी थी। मगर मेरे पतिदेवका उन दिनों चरखेमें विश्वास नहीं था। वह मेरा चरखा छीन लेते और उसे पटक देते थे, तोड़ डालते थे, पर मुझे खुशी है कि मेरे जीवन-कालमें ही आज वह दिन देखनेको मिला जब वह मेरे चरखेका मजाक नहीं उड़ाते। वह भी अब चरखेमें विश्वास करने लगे हैं।

मुझे बड़ी खुशी हुई। अच्छा, तो मैं अब आपसे अपना कुछ काम लेना चाहता हूँ। क्या आप कभी स्व० कमला नेहरूसे मिली थीं?

महात्माजी, एक या दो बार उनसे मैं मिली थी। पर माता स्वरूपरानी नेहरूको मैं बहुत अच्छी तरह जानती हूँ।

पर यह तो आप जानती हैं कि कमला कितनी भली थी। आप जानती हैं कि देशकी सेवामें उन्होंने अपनेको किस तरह खपा दिया। पर मैं उनके जिस गुणका सबसे अधिक आदर करता हूँ वह उनका राजनीतिक कार्य नहीं, किन्तु उनका महान् चारित्रिक सौन्दर्य था। उनका वह नैतिक सौन्दर्य मेरी रायमें प्रत्येक स्त्री-पुरुषको जानना चाहिए।

जी, मैं उनकी सेवाओं और उनके नैतिक सौन्दर्यके विषयमें जानती हूँ।

तब तो आपको अवश्य उनके स्मारकके लिए, जो हम बनाना चाहते हैं, कुछ पैसा इकट्ठा करनेमें हमारा हाथ बँटाना चाहिए।

इसके बाद गांधीजीने उन्हें स्मारकका उद्देश्य अच्छी तरह समझाया।

[श्रीमती रामन:] जरूर महात्माजी, क्या मुझे इस बातका पता नहीं कि आप किस तरह देशबन्धु दासकी मृत्यु[1] के बाद कलकत्तेमें जमकर बैठ गये थे, और ८ लाख रुपये आपने इकट्ठे कर लिये थे? अगर आप उसी तरह यहाँ कुछ दिनोंके लिए जमकर बैठ जायें, तो आप निश्चय ही काफी रुपया इकट्ठा कर सकते हैं। उस स्मारकके धन-संग्रहमें मदद करनेका मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उन दिनों मैं कलकत्तेमें ही थी।

ठीक, पर उन दिनो जितना समय मेरे पास था, उतना अब नही है। पर आप यहाँ अपना सारा प्रभाव डाल सकती है और जितना रुपया इकट्ठा कर सके उतना कर सकती हैं।

श्रीमती रामन खुशीसे राजी हो गईं। बातें हो ही रही थी कि इतने में सर सी० वी० रामन आ पहुँचे। जब वे अन्दर आये, श्रीमती रामन हिन्दीमें बातें कर रही थीं। "यह हिन्दी क्या कुछ उपयोगी है?" उन्होंने श्रीमती रामनकी हिन्दी पर विनोदपूर्वक कटाक्ष किया। गांधीजीने कहा :

इसमे सन्देह ही क्या, यह हिन्दी उतनी ही उपयोगी है जितनी कि आपकी यह साइन्स।

सर सी० वी० रामन बोले, "कोई भी भाषा हो, उसे सीखनेकी इनमें आश्चर्यजनक शक्ति है। हिन्दी तो यह जानती ही है, पर बँगला भाषा यह हिन्दीसे भी अच्छी जानती है।"

[गांधीजी:] जरूर जानती होगी। कलकत्तेमे यह कई साल रही जो है।

"यह कारण जरूरी नहीं। मैं भी तो वहाँ इनके साथ रहा हूँ। पर मुझे तो बँगलाका एक शब्द भी नहीं आता। और अब यहाँ आकर इन्होंने कन्नड़ भी सीख ली है, और उसमें बात भी कर लेती है।" इसके बाद सर चन्द्रशेखर आश्चर्य प्रकट करते हुए कहने लगे कि हिन्दुस्तानके जनसाधारणकी भाषा कौन-सी भाषा हो सकती है, और एक क्षणके लिए ऐसा लगा कि वे अंग्रेजीकी ओर झुक रहे हैं। मगर उन्होंने यह बात उतनी संजीदगीसे नहीं बल्कि गांधीजीको शायद छेड़ने या उकसानेके लिए कही।

[गांधीजी:] हिन्दुस्तानके करोड़ो आदमी, जो बगैर सीखे ही हिन्दी जानते है, अगर वे अंग्रेजी सीखनेका प्रयत्न करे तो क्या आपके खयालमे उनके लिए यह एक दुर्भाग्यकी बात न होगी?

सर चन्द्रशेखर तुरन्त बोल उठे कि उन्हें खुशी है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी बड़ी तेजीसे दक्षिण भारतमें प्रगति कर रही है। उन्होंने कहा, "मैं हिन्दी भी जानता हूँ, महात्माजी। मैं हिन्दी अच्छी तरह समझ लेता हूँ। मैंने हिन्दी किसी ऐसे-वैसे

१. १६ जून, १९२५ को; देखिए खण्ड २७।

शिक्षकसे नहीं सीखी थी। मालवीयजी महाराज मेरे हिन्दीके गुरु हैं। जब मैं काशीमें था, तब कभी-कभी घंटों उनकी सुन्दर हिन्दी सुननेका मुझे अवसर मिलता था, और मुझे वह इतनी अच्छी लगती थी कि मैं उसे अनायास ही सीख गया। पर मैं हिन्दी बोल नहीं सकता। और इसके मूलमें [सही भाषा बोलनेका] अभिमानपूर्ण आग्रह है जो आपके समान ही मुझमें भी बहुत प्रबल है।"

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-६-१९३६

५४४. बातचीत : डॉ० एरिका डासन रॉसेन्थलके साथ[1]

[३१ मई, १९३६ के पूर्व][2]

[डॉ० रॉसेन्थल :] क्या आप मुझे बतलायेंगे कि लोगोंका सहयोग कैसे प्राप्त किया जाये?

[गांधीजी :] मैं तो खुद ही उस रहस्यको सीखनेकी कोशिशमें हूँ। आपने शायद सुना होगा कि मैं वर्धा-जैसे एक विशाल और विख्यात गाँवमें रहनेके बजाय अब एक सच्चे गाँवमें बसने जा रहा हूँ। अबतक मैं लोगोंसे और अपने साथियोंसे जो कहता आ रहा हूँ उस सबको अब अपने अनुभवकी कसौटी पर कसूँगा। मैंने जो यह कहा है कि मैं ग्राम-सेवाकी कला सीखने जा रहा हूँ, उससे निस्सन्देह मेरा आशय यह है कि लोगोंके बीचमें जाकर खुद अपने हाथसे वहाँ काम किया जाये, यही एकमात्र मार्ग है। पढ़े-लिखे संरक्षकोंको उनके बीचमें भेजकर या श्रीमतोंकी सहायता लेकर भी अब हमारा काम चलनेका नहीं। हमें तो अब स्व० मेरी चेजलेकी तरह उनके बीचमें जाकर खुद अपने हाथों काम करना होगा।

इस सिलसिलेमें गांधीजीने ताराबहन चेजले, जिनकी मृत्यु हाल ही में बदरी-केदारकी यात्रामें हो गई थी, की हृदय-स्पर्शी जीवन-कहानी बताई।

"मगर", डॉ० रॉसेन्थलने कहा, "उनके इस अति साहसके कामको तो मैं उतावलीका काम कहूँगी, इसलिए हमें मेरी चेजलेका अनुकरण नहीं करना चाहिए।"

मैं भी नहीं चाहता कि आप वैसा काम करें। मैं तो यहाँ उनकी भावनाकी बात कह रहा हूँ — उस भावनाकी, जिसमें कि उन्होंने गरीब-से-गरीब लोगोंके साथ तदाकार हो जानेकी कोशिश की। अगर आप चाहें तो वहाँ जाकर मिस मेरी बारका काम देख सकती हैं। वह कहीं ज्यादा समझदार हैं। वह अपनी मर्यादाओंको समझकर चलती है, और इतने पर भी वह वहाँके लोगोंमें पूरी तरहसे घुल-मिल गई हैं। वह जो काम कर रही है, आप खुद वहाँ जाकर देख सकती हैं।

१. डॉ० एरिका डासन रॉसेन्थल जर्मनीके सुविख्यात दार्शनिक और विद्वान डॉ० पॉल डासनकी पुत्री और एक डॉक्टरकी पत्नी थीं, जो यहूदियों पर होनेवाले नाजियोंके अत्याचारसे भागकर हिन्दुस्तान चले आये थे। मैसूर राज्यमें जो कल्याण-कार्य हो रहा था उस सबकी वे देख-रेख कर रही थीं। वह गांधीजीसे यह जानना चाहती थीं कि वह कौन-सा रहस्य है जिसे सीखकर लोग अपनी मदद अपने-आप कर सकते हैं।

२. देखिए पृ० ४९८, पाद-टिप्पणी ५।

जरूर देखूँगी। मेरे कहनेका मतलब यह है कि हिन्दुस्तानियोंके तमाम तौर-तरीकों और आदतोंको कोई भी विदेशी अपना नहीं सकता, और न उसे अपनाना चाहिए। उनके जीवनमें जो सबसे अच्छी चीज हो उसे ही वह अपनाये और पचाये। हिन्दुस्तानके कितने ही लोग यूरोप जाते हैं और यूरोपीय जीवनकी ऊपरी या बाहरी चीजोंको ग्रहण कर लेते हैं। इससे वे अपना भारी नुकसान करते हैं। मैं यह पसन्द नहीं करती।

आप जो कहती हैं वह सोलहों आने सही है। विदेशियोंको चाहिए कि वे जितना कुदरती तौर पर और आसानीसे ग्रहण कर सकें उससे अधिक ग्रहण करनेकी कोशिश न करें। मेरे खयालमें, मिस मेरी बारने बिलकुल ठीक किया है।

"जी हाँ, हमें उनके बीचमें वहाँ मिशनरियोंकी तरह जमकर बैठ जाना होगा", श्री डिसूजा ने, जो डॉ० रॉसेन्थलके साथ आये थे, कहा।

"ठीक है", डॉ० रॉसेन्थलने कहा, "पर लोगोंको धर्मान्तरित करनेकी इच्छासे नहीं। उनके अधिकांश कामको यह धार्मिक हेतु ही तो खराब कर देता है। धर्म-परिवर्तनको मैं घृणाकी दृष्टिसे देखती हूँ।"

इसमें सन्देह ही क्या, पॉल डासन जैसे महान् विद्वानकी पुत्री अगर ऐसा करती है तो यह उचित ही है।

तो भी, आपको शायद यह जानकर आश्चर्य होगा कि मैंने अपने पिताका लिखा हुआ एक ऐसा वाक्य देखा है, जिसे मैं समझ नहीं सकती। वह कहते हैं कि दरअसल मेरी समझमें यह नहीं आता कि लोग केवल इसीलिए किसी धर्मको स्वीकार करनेमें असमर्थ क्यों हैं, कि उन्हें बाह्य प्रलोभन दिये जाते हैं।

वह वाक्य इससे बिलकुल उलटा होगा। मुझे आप वह मूल पाठ दिखाइएगा। आप जैसा कहती हैं वैसा वह होगा नहीं।

अच्छी बात है, मैं आपके पास वह मूल पाठ लिखकर भेज दूँगी।

और अब अगर मेरी बात सही निकली और आपकी गलत, तो आपको यह मानना पड़ेगा कि आप अपने पिताकी जितनी अच्छी बेटी हैं, उसके मुकाबले मैं उनका कहीं अच्छा पुत्र हूँ।

हाँ, ठीक है। महात्माजी, मेरे खयालमें, जो यह धर्म हम लोगोंके दैनिक जीवनके साथ इतना ज्यादा मिल गया है कि जिसका कोई हिसाब नहीं, उसके खिलाफ तो हमें लड़ना ही होगा।

नहीं, अगर वह सच्चा धर्म है, तब तो हमें उसकी और भी ज्यादा जरूरत है।

मैं सच्चे धर्मको निकाल बाहर नहीं करना चाहती। मैं आपको एक उदाहरण देती हूँ। हमारे एक सेवा-केन्द्रमें एक बड़ी अच्छी हरिजन नर्स है। एक दिन एक ब्राह्मण अपने लड़केको लेकर वहाँ आया। उसके लड़केको फोड़ोंकी तकलीफ थी। डॉक्टरने नर्सकी मदद लेकर फोड़ोंको धोया, उनपर दवा लगाई और पट्टी बाँध दी। पर जब ब्राह्मण देवताको पता लगा कि उसके फोड़ोंकी मरहम-पट्टी अस्पृश्य नर्सने

की है तब उनकी घबराहट देखने लायक थी। उसने पासकी एक नदीमें लड़केको उसी वक्त ले जाकर नहलाया और उसकी तमाम मरहम-पट्टी धो डाली!

यह धर्म नही है। यह तो हद दरजेका घृणित मूढविश्वास है। इस तरहकी मिसाले अभी आपको मिलेगी, पर यह मूढविश्वास अब दिन-दिन कम होता जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-६-१९३६

५४५. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

बगलोर सिटी
३१ मई, १९३६

चि० चिमनलाल,

तुम्हारा कार्ड मिला। आश्चर्यकी बात है कि तुम पूरी तरह चगे नही हो पाते। फिर भी सीरमके इजैक्शनका क्या फल होता है, सो देखना। बबु[1] मुझे क्यों लिखेगी? अब तो वह विदुपी कहलाती है। अगर वह बीमार न पडे, कमजोर न हो तो मुझे उसके पत्र न लिखनेकी कभी शिकायत नही रहेगी। शिकायत करूँगा तो भी उससे कोई काम नही बनेगा, यह तो मै जानता हूँ। किन्तु यदि वह अपने शरीरको ताँबे-जैसा लाल बना डाले तो मैं शिकायतकी बात मनमे भी न आने दूँ।

तुम नारणदासवाले प्रसगको कितना अधिक महत्त्व दे रहे हो! यह अहिंसा नही है। अहिंसाका एक स्वरूप यह भी है कि दुख देनेवालेकी बात सोचकर दुखी न हो। भले ही वह दोस्त हो या दुश्मन। इसके सिवाय दोस्त हो तो उसके दृष्टिकोणको सोचकर देखना चाहिए। यदि उसने जो-कुछ कहा है या किया है, उसमे उसकी नीयत बुरी न हो तो कामके अयोग्य होते हुए भी दुख माननेकी क्या बात है। नारणदास जो कदम उठाता है सो द्वेषभावसे उठाता है, यदि तुम ऐसा न मानो तो फिर तुम उसकी भूल उसे बता भी सकते हो। यदि उसे भूल दिखाई न दे तो धीरज रखो। फिर भी उसका दुख तो कदापि मत मानो। यदि ऐसा मानो कि उसने जो-कुछ किया है द्वेषभावसे किया है तो भी मनपर खराश मत पडने दो, क्योंकि द्वेषी पुरुप तो दयाका पात्र है। जो दयाका पात्र है, उसके काम पर दुख कैसा? यह सब लिखनेमे हेतु यह है कि तुम अपनी मानसिक स्थितिका विश्लेषण करो, उसे अहिंसाकी कसौटी पर परखो और यदि उसमें तुम्हे अपनी भूल दिखे तो उसे सुधारो और मनको साफ करके स्वस्थ-चित्त बन जाओ।

बापूके तुम सबको आशीर्वाद

[पुनश्च:]

यहाँ १२ तारीख तक रहूँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० १८) से।

१. शारदा, चिमनलाल शाहकी पुत्री।

५४६. भाषण : चिकबल्लापुरमें[1]

३१ मई, १९३६

हिन्दीमें भाषण देते हुए महात्माजीने कहा कि डॉक्टरने मुझे ज्यादा परिश्रमकी मनाही की है, इस कारण मैं लम्बा भाषण नहीं दूँगा। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैसूरके महाराजा साहबका आज जन्म-दिवस भी है। मैं मैसूरकी प्रजाके साथ ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि उनके प्रिय शासकको भगवान दीर्घायु और समृद्धि प्रदान करे।

मेरी यह भी प्रार्थना है कि महाराजा साहब पर ईश्वरकी कृपा हो और वह मैसूरमें उत्तरोत्तर राम-राज्यकी स्थापना करनेमें सफल हों। प्राचीन कालमें राम-राज्यका अर्थ था ऐसा शासन जहाँ देशमें छोटीसे-छोटी प्रजा सहित सब लोगोंको शान्ति और सम्पन्नता प्राप्त हो।

गांधीजीने चिकबल्लापुरके निवासियोंको उनके हार्दिक स्वागतके लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा, मेरे और मेरे दलके सदस्योंकी नन्दी हिलमें प्रवासके दौरान बहुत अच्छी देखभाल हुई और हम सबको वहाँ रहकर बहुत लाभ हुआ। सरकार और जनताने मेरे प्रति जो अपार प्रेम प्रदर्शित किया, उसके लिए मैं तथा मेरे साथी बहुत आभारी हैं।[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-६-१९३६

५४७. भाषण : चिन्तामणिकी सार्वजनिक सभामें[3]

३१ मई, १९३६

श्रोताओंको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने कहा कि डॉक्टरोंने मुझे ऊँची आवाजमें बोलनेका निषेध किया है। सौभाग्यवश मैं चाहे ऊँचे स्वरमें बोलूँ चाहे नीची आवाजमें, आपके लिए दोनों एक ही बात है। क्या ही अच्छा होता यदि मैं आपकी भाषा जानता होता। इससे भी अच्छा शायद यह होता कि आपमें से बहुत-से लोग

१. महात्माजीके भाषणका इस्माइल शरीफने कन्नड़में अनुवाद किया।

२. गांधीजीको १०० रुपये की थैली भेंट की गई। उसे स्वीकार करते हुए उन्होंने मुस्कराकर कहा: "यह तो बहुत छोटी है, बस सौ रुपये! तीन बार धिक्कार है!"

३. २,००० से अधिक व्यक्तियोंकी इस सभामें नगर-परिषद्की ओरसे गांधीजीको मानपत्र भेंट किया गया था।

मेरे ही समान हिन्दी या हिन्दुस्तानीमें बोलनेकी रीतिको अपनाते। मुझे अभी भी आशा है कि मैं अपने जीवनकालमें ही भारतके शिक्षित वर्गको अन्तर्प्रान्तीय भाषा — हिन्दी या हिन्दुस्तानी — बोलता देख सकूंगा। मुझे ज्ञात है कि भारतके इस भागमें कुछ लोग धोखेमें समझ बैठे हैं कि हिन्दी-प्रचार आन्दोलन हिन्दीको प्रान्तीय भाषाओंका स्थान देनेके लिए चलाया गया है, पर इस विश्वासके मूलमें केवल घोर अज्ञान है। इस आन्दोलनसे काम-चलाऊ हिन्दी या हिन्दुस्तानीके ज्ञानमें अच्छी वृद्धि हुई है। इसका हार्दिक उद्देश्य प्रान्तीय भाषाओंको सशक्त और समृद्ध बनाना है। किन्तु प्रान्तीय भाषाएँ जबतक दूसरी भाषाओंको कुछ सहायता नहीं देतीं तबतक उनका विकास रुका रहेगा। अंग्रेजी भाषाका स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय है, और उसका एक सुनिश्चित महत्त्व है। परन्तु भारतके जन-मानसमें उसका निश्चय ही कोई स्थान नहीं है।

आगे बोलते हुए गांधीजीने कहा, आजका दिवस राज्यकी प्रजाके लिए महान् दिवस है, क्योंकि यह मैसूरके महाराजा साहबका जन्म-दिन है। मैं आप लोगोंके साथ मिलकर प्रार्थना करता हूँ कि परम शक्तिमान् परमेश्वर महाराजा साहबको दीर्घायु और समृद्धि प्रदान करे। (हर्ष-ध्वनि)

भारतके देशी नरेशोंके शासनके विषयमें आप लोगोंको मेरे विचार मालूम ही हैं। राजा लोग अपना कर्त्तव्य भूल गये हैं। प्राचीन कालमें उनकी शासन-व्यवस्था राम-राज्यका प्रतिरूप होती थी। राम-राज्यमें घोर निर्धनता जैसी चीजका नाम-निशान नहीं था। प्रजा पूर्ण शान्तिसे रहती थी। न कोई ऊँचा होता था, न नीचा। मेरी कामना यही है कि भारतके सब भागोंमें राम-राज्यके इस सिद्धान्तका पालन हो।

भाषण जारी रखते हुए गांधीजीने कहा कि हरिजन-कोषके लिए एक छोटी थैली[1] भेंट करके आपने अच्छा काम किया है। इसे छोटी इसलिए कहता हूँ क्योंकि आप लोग ज्यादा बड़ी थैली दे सकते थे। इसलिए हरिजन-कार्यके निमित्त आप कितना भी, और कुछ भी दें, तो भी पूरा प्रायश्चित्त नहीं होगा। आप लोगोंको तब तक चैन नहीं मिलेगा जब तक हरिजनोंको हिन्दू समाजके उच्चतम वर्गके बराबरका दर्जा नहीं मिल जाता। हरिजनोंको वे सारे अधिकार मिलने चाहिए जो अन्य हिन्दुओंको प्राप्त हैं। आपने हरिजनोंके लिए जो-कुछ थोड़ा-बहुत किया है उसका श्रेय लेनेके आप अधिकारी हैं, लेकिन मुझे खुशी है कि आप स्वीकार करते हैं कि अभी बहुत-कुछ करना बाकी है। अतः मैं आशा करता हूँ कि आप लोग इस दिशामें दुगने जोशके साथ प्रयास करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-६-१९३६

१. २०१ रुपये की।

५४८. भाषण : कोलारमें

३१ मई, १९३६

महात्माजीने नगर परिषद्‌को मानपत्रके लिए और नगरवासियोंको थैलीके लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा, महाराजा साहबकी वर्षगाँठ उनके प्रजाजन राज्य-भरमें बड़े हर्षके साथ मना रहे हैं। इस अवसर पर मैं भी कोलारकी जनतासे मिलकर महाराजा साहबके प्रति शुभकामना प्रकट करता हूँ कि यह दिन बार-बार आये। मुझे यह जानकर आनन्द हुआ कि नगर परिषद् हरिजनोंके लिए कुछ कार्य कर रही है। मुझे यह जानकर और अधिक खुशी हुई कि वह हरिजनोंके लिए और बहुत-सी चीजें करनेका विचार कर रही है। यदि अस्पृश्यताका पूर्ण उन्मूलन नहीं हुआ तो हिन्दू समाज नष्ट हो जायेगा। अतः जब तक अस्पृश्यता किसी-न-किसी रूपमें देशमें बनी रहेगी तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि हरिजनोंके लिए कुछ किया गया है।

गांधीजीने मैसूर सरकारको खादी केन्द्रोंकी स्थापनाके लिए बधाई दी और जनतासे खादी अपनानेकी प्रार्थना की। उन्होंने कहा कि मेरी इच्छा है कि मैं भारतके अन्य भागोंमें जाकर लोगोंसे कह सकूँ कि कमसे-कम मैसूर राज्यमें लोग खादी पहनते हैं और स्वदेशी वस्तुओंका उपयोग करते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-६-१९३६

५४९. भाषण : कोलार स्वर्ण-खान क्षेत्रमें मजदूरोंके सामने

३१ मई, १९३६

खानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंकी एक विशाल सभामें बोलते हुए गांधीजीने कहा कि समय बहुत कम होनेसे आपकी झोंपड़ियोंको मैंने बड़ी जल्दीमें देखा है। मुझे झोंपड़ियाँ इतनी छोटी और इतनी नीची छतकी मालूम हुईं कि वे मनुष्यके रहने लायक नहीं हैं। उनमें रोशनी बहुत कम पहुँचती है। आप लोग अगर इतना भर जान लें कि शिक्षा और बुद्धिमत्तापूर्ण एकताके द्वारा आप खुद अपने लिए कितना बड़ा काम कर सकते हैं, तो आपको यह मालूम हो जायेगा कि इन खानोंपर प्रबन्धकों और भागीदारोंसे आपका स्वामित्व कुछ कम नहीं है। जमीनके अन्दरसे आप यह जो सोना खोद-खोदकर निकालते हैं उससे आपका श्रमरूपी सोना कहीं ज्यादा कीमती है।[1]

१. इसके बादके दो अनुच्छेद हिन्दू से लिये गये हैं।

गांधीजीने खान-अधिकारियोंसे हार्दिक अपील की कि वे खानमें काम करनेवाले कुलियोकी दशाको सुधारें जिनकी वदौलत उन्हें अधिकतम लाभ प्राप्त होता है। महात्माजीकी इच्छा थी कि भूमि-गर्भमें काम करनेवाले कुलियोंको भी वही सुविधाएं मिलें जैसी उच्चतम वेतनवाले अधिकारियोंको मिलती हैं।

कोलार स्वर्ण-खान-क्षेत्रके कुलियोंके घरोंकी चर्चा करते हुए महात्माजी बोले कि प्रबन्धकोने गरीब मजदूरोके लिए ठीक मकानोकी व्यवस्था करनेके लिए जो-कुछ किया है, उसके लिए मै उन्हे वधाई नहीं दे सकता। मुझे पता चला है कि कुलियोसे प्रति झोंपड़ी १२ आनेसे लेकर १ रुपया तक किराया वसूला जाता है, जो बहुत ज्यादा है।

खानोके मालिकोंको याद रखना चाहिए कि मजदूरोके उचित दरजेको अगर उन्होने स्वेच्छासे स्वीकार न किया, और उनके साथ वैसा ही वर्ताव न किया जैसा कि वे खुद अपने साथ करते है तो वह समय दूर नहीं जब मजदूर जबरदस्ती अपनी उचित माँगोंको उनसे मनवा लेंगे। इसके बाद गांधीजीने अपने ट्रस्टके सिद्धान्तको समझाया, जो उन्होने अहमदाबादके मिल-मालिकोंके सामने रखा था। उन्होंने मजदूरोसे कहा कि यह सही है और उचित है कि वे अपने अधिकारोके लिए लड़ें, पर इसके साथ ही उन्हें अपना काम यह समझकर करना चाहिए, मानो वे खानें उनकी अपनी ही खानें है। शराव, जुआ और दूसरे दुर्व्यसनोंसे अलग रहनेके लिए भी गांधीजीने उनसे जोरदार शब्दोमें अपील की।[1]

गांधीजीने कहा कि जिस उद्देश्यके लिए यह धन इकट्ठा किया गया है उसे देखते कोलार स्वर्ण-खान क्षेत्रसे इकट्ठा की गई ६१९ रुपयेकी रकम बहुत नहीं मानी जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-६-१९३६, और हिन्दू, १-६-१९३६

१. इसके बाद का अनुच्छेद हिन्दू से लिया गया है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट – १

अ० भा० च० सं० का प्रस्ताव[1]

[११ अक्टूबर, १९३५ या उसके पूर्व]

१. इस परिषद्‌की राय है कि कतैयोको जो मजदूरी आज दी जा रही है वह अपर्याप्त है, इसलिए यह प्रस्तावित करती है कि इस मजदूरीमे बढ़ोतरी की जाये और एक ऐसा उचित प्रतिमान निर्धारित किया जाये कि जिससे आठ घंटे पूरी कार्य-दक्षतासे काम करनेके हिसाबसे कतैयोको कम-से-कम इतनी न्यूनतम मजदूरी तो मिले ही जिससे वे अपने लिए आवश्यक वस्त्र (२० गज प्रतिवर्ष) खरीद सके तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे कम-से-कम जितनी खुराक जरूरी है उसका प्रबन्ध कर सके। सभी सम्बन्धित-व्यक्ति प्रयास करें कि परिस्थितियोके अनुरूप इनके वेतन-मानमे ऐसी क्रमिक वृद्धि हो जिससे वह उचित प्रतिमान तक पहुँच जाये और कतैया-परिवारके कार्यरत सदस्योकी आमदनीसे परिवारका गुजारा भली-भाँति हो जाये।

२. उक्त प्रस्तावके पीछे जो उद्देश्य है उसको अमलमे लानेके कार्यमे अ० भा० च० सं० के कार्यकर्त्ताओके मार्गदर्शनके लिए सभी शाखाओं और निकायोको जो संघसे सम्बद्ध है या किसी दूसरी तरहसे इसके अधीन काम कर रहे है, यह मान लेना चाहिए कि जबतक परिषद्‌के आगेके अनुभवोके आधार पर इसमे कोई परिवर्तन नही किया जाता तबतक सघकी सुनिश्चित नीति निम्न प्रकार है:

(क) संघका उद्देश्य खादीके द्वारा भारतके प्रत्येक परिवारको वस्त्रके सम्बन्धमें स्वावलम्बी बनाना तथा कतैयोके, जिन्हे खादी-कारीगरोमे सबसे कम मजदूरी दी जाती है, तथा कपास उपजानेसे लेकर खादी बुनने तककी विभिन्न प्रक्रियाओमें कार्यरत दूसरे मजदूरोंके कल्याणार्थ काम करना है।

(ख) इसलिए यह आवश्यक है कि जो लोग खादी-उत्पादनके काममें लगे है, चाहे वे कारीगर हो या विक्रेता अथवा कुछ और,-वे अन्य दूसरे प्रकारके सभी वस्त्रका परित्याग कर खादी पहने।

(ग) सभी शाखाएँ और सम्बद्ध निकाय इस योजनाको इस प्रकारसे कार्यान्वित करेंगे कि इसमे कोई घाटा न हो। अर्थात् वे अपने-अपने निर्धारित क्षेत्र और अपने आस-पड़ोसकी जरूरतसे अधिक खादीका उत्पादन नही करेंगे, अपने प्रान्तके बाहर

१. यह प्रस्ताव संघकी परिषद्‌की एक बैठकमें पारित हुआ था; देखिए पृ० ३३ और ६९।

खादी तो वे कभी नही भेजेंगे, जबतक कि दूसरे प्रान्त अपनी जरूरतोकी पूर्तिके लिए उनसे वैसा करनेको नही कहते हैं।

(घ) फालतू उत्पादन रोकनेके लिए उत्पादक अपना व्यापार उन्ही कतैयो तक सीमित रख सकते हैं जिनकी साल-भरकी या कुछ महीनोकी रोजी-रोटी कताई पर ही निर्भर करती है। शाखाएँ और अन्य निकाय कतैयों और अन्य नियोजित कारीगरोका सही-सही विवरण रखेंगे और उनसे सीधे लेन-देन करेंगे। दी जानेवाली मजदूरी वस्त्र और भोजन पर ही खर्च हो, इसे सुनिश्चित करनेके लिए मजदूरीका एक अंश या सारी मजदूरी वस्तुओके रूपमें, यथा खादी अथवा अन्य जीवनोपयोगी वस्तुओके रूपमे दी जा सकती है।

(ङ) जहाँ पर एकसे अधिक खादी-उत्पादक सस्थाएँ काम कर रही हो वहाँ पर प्रत्येकका कार्य-क्षेत्र पहले ही निर्धारित कर दिया जायेगा ताकि उनकी गतिविधियोमें आपसी गडवड़ न हो, अनावश्यक प्रतिस्पर्धा न हो और दुहरा खर्च न हो। सघ निजी अभिप्रमाणित उत्पादकोको वढावा नही देगा। जो पहलेसे ही अभिप्रमाणित हैं उनमें से भी सघ उन्हीके अभिप्रमाणोका नवीकरण करेगा जो उन नियमोके अन्तर्गत ही काम करेंगे जो सघकी शाखाओं पर लागू होते हैं और सघसे किसी भी प्रकारकी क्षतिपूर्तिकी आशा किये विना ही सारी जोखिम उठायेंगे। उन्हें भली-भाँति वता दिया जायेगा कि समय-समय पर जो भी नियम वनाया जायेगा या जो निर्देश दिये जायेंगे उनका उल्लघन करने पर उनका अभिप्रमाण स्वत रद हो जायेगा।

(च) सघके अधीन काम करनेवाली सभी संस्थाओको यह समझ लेना चाहिए कि स्वावलम्बी खादीकी सारी योजनाको सफल वनाना उनका प्राथमिक तथा आवश्यक कर्त्तव्य है। शहरके लोगोकी या शहरके वाहरके खादी पहननेवाले ऐसे लोगोकी, जो स्वय सूत नही कातते, माँगकी पूर्ति करना एक गौण और पूरक उत्तरदायित्व है। किसी सस्थाके लिए ऐसी खादीका उत्पादन करना या उसे वेचना आवश्यक नही समझा जायेगा।

[अग्रेजीसे]

फाइल सख्या ४/१२/३६, होम, पोलिटिकल; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट – २

केवल हिन्दुस्तानीके लिए[1]

इस महीनेके प्रथम सप्ताहमे बनारसमे हिन्दी सग्रहालयके उद्घाटनके अवसर पर श्री पुरुषोत्तमदास टडन द्वारा दिये गये भाषणसे यह स्पष्ट हो गया है कि हिन्दी-उर्दूका प्रश्न जल्दी ही साम्प्रदायिक मसलेका रूप धारण कर लेगा। उन्होने घोषणा की कि एशियामे चीनी-भाषाके बाद सबसे अधिक लोग हिन्दी ही बोलते है। दूसरे शब्दोमे इसका अर्थ यह हुआ कि राष्ट्रभाषाकी समस्या सुलझ गई; चूँकि बहुसख्यक भारतीय हिन्दी बोलते है इसलिए हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होगी। जो लोग हिन्दुस्तानीकी हिमायत करते है उनकी सख्या कम है इसलिए उनकी कौन परवाह करेगा। इस सवालको सिरोकी गिनती करके तय करनेका मतलब सिर-फुटौवल करना ही है। श्री टडनके कहनेका चाहे जो वास्तविक अभिप्राय हो, मुझे तो यही लगता है कि एक और साम्प्रदायिक निर्णय जैसी तिरस्कृत चीजकी भूमिका तैयार की जा रही है।

आपकी प्रतिष्ठा और आपके व्यक्तित्वसे जो आशा बँधती है केवल उसीमें हमारा निस्तार निहित है। नीचे मै कुछ सुझाव दे रहा हूँ जो मेरे तुच्छ विचारमें युक्तियुक्त है और राष्ट्रभाषाके लिए ठोस आधार प्रदान कर सकते है। आप यदि इन पर विचार करते है और पाते है कि ये केवल आपके ही दृष्टिकोणसे नही बल्कि जिस उद्देश्यसे इन्हे दिया गया है उस दृष्टिकोणसे भी उपयुक्त है तो आप इन्हे दूसरोको भी बता सकते है। इस क्षण तो मै यही स्वप्न देख रहा हूँ कि ये आपके एक सार्वजनिक वक्तव्यका आधार बन सकते है।

ये सुझाव है :

१. कि हमारी राष्ट्रभाषा 'हिन्दुस्तानी' कहलायेगी, न कि हिन्दी।

२. कि हिन्दुस्तानीके बारेमे यह नही समझा जायेगा कि इसका किसी सम्प्रदाय-विशेषकी धार्मिक परम्पराओसे कोई विशिष्ट सम्बन्ध है।

३. कि यह कभी नही विचार किया जायेगा कि अमुक शब्द विदेशी है या देशज है, केवल यह देखा जायेगा कि उस शब्दका प्रयोग प्रचलित है या नही।

४. कि हिन्दू-लेखको द्वारा प्रयुक्त उर्दू शब्दोको तथा मुस्लिम लेखको द्वारा प्रयुक्त हिन्दी शब्दोको प्रचलित शब्द माना जायेगा। निस्सन्देह हिन्दी और उर्दूको साम्प्रदायिक भाषा नही समझा जायेगा।

१. देखिए पृ० ३९१, ४१३, ४४० और ४७६। एम० मुजीबके पत्रका अन्तिम हिस्सा ही यहाँ दिया गया है।

५ कि तकनीकी शब्दोंके चयनमें, विशेषकर राजनीतिक शब्दावलीमें, सस्कृत शब्दोंको प्राथमिकता नही दी जायेगी बल्कि यथासम्भव उर्दू, हिन्दी और सस्कृतके उपयुक्त शब्दोका चयन किया जायेगा।

६ कि यह माना जायेगा कि देवनागरी और अरबी, दोनो लिपियोका प्रयोग प्रचलित है और दोनो ही अधिकृत लिपियाँ हैं, और जिन सस्थाओकी नीतियोका सचालन हिन्दुस्तानीके अधिकृत समर्थको द्वारा होता है उनमें दोनो ही लिपियोको सिखानेका प्रबन्ध किया जायेगा।

कुछ मित्र ऐसे हो सकते है जिन्हे ये सुझाव मुसलमानोकी माँगे जैसे प्रतीत हो। ऐसी बात नही है। लेकिन मै जानता हूँ कि जबतक आपकी ओरसे तथा परिषद्की ओरसे कोई आश्वासन नही मिलता है तबतक मुस्लिम साहित्यकारोकी ओरसे राष्ट्रभाषाके हितमे कोई प्रयास करनेका प्रश्न ही नही उठ सकता। इसीलिए मैने ये सुझाव आपके सामने रखे है। यदि ये सुझाव तर्कहीन है तो मै जानता हूँ कि आप मुझे माफ कर देंगे और यदि ये अनुचित है तो भी आप नाराज नही होगे। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैने अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहा है और आपसे निवेदन करके यह दिखाना चाहा है कि मुझमे आपके विवेकके प्रति असीम सम्मानका भाव है और आपकी अगाध न्यायप्रियता और सहिष्णुतामे मेरा पूरा विश्वास है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-५-१९३६

परिशिष्ट – ३

हिन्दुस्तानीको लोकप्रिय बनायें[1]

अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, जिसका पच्चीसवाँ अधिवेशन सप्ताहान्तमें नागपुरमे हुआ था, के सामने दो उद्देश्य हैं. हिन्दी साहित्यका विकास करना और देश-भरमे हिन्दीको लोकप्रिय बनाना। हम यहाँ पर विशेपतया दूसरे उद्देश्य पर विचार करेगे। एक राष्ट्रभाषाकी आवश्यकतासे इनकार नही किया जा सकता और यह भी कहा जा सकता है कि अग्रेजी राष्ट्रभाषा नही हो सकती है। सिर्फ हिन्दी और उर्दूके प्रचलित मिश्रित रूप, जिसे आमतौर पर हिन्दुस्तानी कहा जाता है, मे ही सम्पूर्ण राष्ट्रभाषा बननेके गुण विद्यमान है, बशर्ते कि इस रूपको लोकप्रिय बनानेके लिए हर सम्भव प्रयास किया जाये, विशेषकर हिन्दुस्तानी साहित्यका विकास करके। इसका अर्थ यह हुआ कि बड़ी संख्यामे शास्त्रीय शब्दोको बिना ठूंसे ही हिन्दी और उर्दू साहित्यका विकास करना।

१. देखिए पृ० ४१३। लेखसे कुछ उद्धरण ही यहाँ दिये गये हैं।

इसे हिन्दुस्तानी कहें

दुर्भाग्यवश हम इस राष्ट्रीय उद्देश्यको ठीक तरहसे समझ नही रहे है। जो लोग भाषाकी शुद्धता या साहित्यिक लालित्यके बारेमे गलत विचार रखते है उनमें से बहुत लोग शास्त्रीय शब्दोके अधिकाधिक प्रयोग पर जोर देते है — हिन्दू लोग संस्कृतके शब्दों पर और मुसलमान लोग अरबी और फारसीके शब्दो पर। कभी-कभी तो सम्प्रदायवादी लोग जान-बूझकर इस प्रवृत्तिको बढ़ावा देते है और यहींसे हिन्दी-उर्दूका प्रश्न उठा है। बाबू राजेन्द्रप्रसादने इस पृथग्भावकी प्रवृत्तिकी कड़ी आलोचना की है, क्योकि इससे राष्ट्रभाषाके विकासमे बाधा पहुँचती है और लेखको और आम पाठकोके बीचकी खाई चौडी होती जाती है। उन्होने सहज भाषाके प्रयोगकी ठीक ही प्रशसा की है। और साथ-ही-साथ यह भी कहा है कि जहाँ आवश्यक हो वहाँ विदेशी शब्दोको भी आत्मसात् किया जाये। यदि उन्होने स्पष्ट शब्दोमे यह कहा होता कि जिस भाषाको विशेष रूपसे बढ़ाना है वह हिन्दुस्तानी ही होनी चाहिए, तो शायद उनकी बात और स्पष्ट हो गई होती। हम समझते है कि नागपुर अधिवेशनमें स्वय गाधीजीने भी यही सुझाव दिया था। हिन्दी-उर्दू विवादको हमेशाके लिए मिटाने और राष्ट्रभाषाको विकसित करनेका सबसे कारगर तरीका केवल हिन्दी या उर्दूके सहज या लोकप्रिय स्वरूपका प्रचार करना ही नही है, बल्कि उस भाषाको हिन्दुस्तानी कहना भी है। हिन्दुस्तानी ही इस भाषाका सबसे अधिक सार्थक नाम है। हिन्दी और उर्दूके अपने-अपने दावेको लेकर जो भ्रम और अनावश्यक विवाद उठा है उसे समाप्त करनेके लिए हमारा सुझाव है कि काग्रेस अध्यक्ष काग्रेसकी सभी संस्थाओको यह स्पष्ट निर्देश दें कि वे सिर्फ हिन्दुस्तानीको ही राष्ट्रभाषाके रूपमें मान्यता दे, और कोई भी काग्रेसी राष्ट्रभाषाके रूपमे हिन्दी या उर्दूके पक्षमे प्रचार न करे।

दोनों लिपियोंका प्रयोग करें

लगभग गत दो वर्षोमे यह प्रश्न सामने आ गया है कि राष्ट्रभाषाकी सर्वमान्य लिपि कौन-सी हो। बहुत-से लोगोका सुझाव है कि नागरी लिपिमे थोड़ा-बहुत सुधार करके उसे ही राष्ट्रीय लिपि बनाया जाये, क्योकि संस्कृतसे निकली हुई सभी जनभाषाओकी लिपियोका मूल यही है और इसलिए अधिकाश लोग इसे समझ लेते है। कुछ लोगोने रोमन लिपिके प्रयोगका सुझाव दिया है और कुछ दिन पहले यह अफवाह फैल गई थी कि अध्यक्ष जवाहरलालने भी इस सुझावका समर्थन किया है। अब उन्होने यह बात स्पष्ट कर दी है कि रोमन लिपिके प्रयोगके कुछ अपने फायदे है, लेकिन वह ऐसा नही समझते कि देशके अन्तर्गत कोई भी बड़ा समुदाय उसे अपनायेगा। नागरी लिपि पर भी अभी ऐसा कोई मतैक्य नही है जिसके आधार पर हिन्दुस्तानीके लिए केवल इसी लिपिको अपनाना न्यायसंगत हो सकता है। इसके अलावा अरबी लिपि, जिसका प्रयोग भारतके साथ-साथ एशिया और आफ्रिका और यहाँ तक कि यूरोपके अनेक देशोमे हो रहा है, के दावे की सहज अवहेलना नही की जा सकती। इन परिस्थितियोमे इस समस्यासे निपटनेका सबसे अच्छा रास्ता यही है कि प्रत्येक भारतीय नागरी और अरबी दोनो ही लिपियाँ सीखे। असहयोग

आन्दोलनके दौरान गांधीजीने यही सुझाया था और अनेक राष्ट्रीय विद्यालयो और महाविद्यालयोने पूरी निष्ठासे इसका पालन किया था। हम समझते है कि इस विषयमे उन्होने अपनी राय बदली नही है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-४-१९३६

परिशिष्ट – ४

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[1]

२५ मई, १९३६

महिलाओ और कार्य-समितिके बारेमे मैंने यही कहा था कि समितिमे किसी भी महिलाको न लिये जाने पर कुछ लोगोने मेरे सामने विरोध प्रकट किया है। चूँकि मै चाहता हूँ कि हमारे देशकी महिलाएँ और अधिक जागरूक बने और अपने राजनीतिक तथा सामाजिक दोनो प्रकारके अधिकारोकी प्राप्तिके लिए दबाव डाले, इसलिए मैंने इससे ज्यादा कड़े विरोधका भी स्वागत किया होता। मैंने उनका आह्वान किया कि वे सगठित होकर अपने उन अधिकारोके लिए आवाज उठाये जिन्हे यदि वे अपने पुरुष समुदायकी सद्भावनाका इन्तजार करे तो कभी प्राप्त नही कर सकती है। कार्य-समितिके बारेमे मैंने यही कहा कि इसका गठन असामान्य परिस्थितियोमे हुआ जिसमे मुझे असाधारण भूमिका अदा करनी पडी थी। एक हयादार अध्यक्ष शायद त्यागपत्र दे चुका होता, लेकिन मै तो बेहया ठहरा और इसीलिए कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर कांग्रेसके बहुमत द्वारा मेरा विरोध किये जाने पर भी मैंने गद्दी नही छोड़ी। इस विचित्र स्थितिका प्रभाव कार्य-समितिके गठनमे भी दिखाई पडा। परिस्थितियोको देखते यह समिति मेरी पसन्दकी नही हो सकती थी। भले ही तकनीकी तौर पर उसके गठनकी जिम्मेदारी मेरी ही थी। जहाँ विभिन्न दृष्टिकोणोका प्रतिनिधित्व होना होता है वहाँ कमजोरोको कौन पूछता है। आपका यह कहना बिलकुल सही है कि कार्य-समितिमे महिलाओके न लिये जानेका दोष मेरे ही सर पर है। लेकिन कहानी यहीपर समाप्त नही होती है। कार्य-समितिमे एक महिलाको लेना मैंने पसन्द किया होता, परन्तु जैसे-जैसे बात बढती गई, अनेक नये-नये नाम सामने आ गये जिनका रखना आवश्यक हो गया। फलस्वरूप चयन करनेकी गुंजाइश ही नही रह गई। अन्ततोगत्वा मुझे लगा कि मेरी बलासे कार्य-समितिमे चाहे कोई रहे या न रहे। समिति जिस रूपमे बनी वह मेरी बनाई हुई नही थी। मै मुश्किलसे उसे पहचान भी सकता था। कुछ लोगोको उसमे लिये जानेका तो, जैसा आप जानते है, मैंने कड़ा विरोध किया था। फिर भी अन्तमें मैंने पराजय स्वीकार कर ली, लेकिन यह बात मेरे मनसे नही निकली कि मै अपने सुविवेकके विरुद्ध दूसरोके

१. देखिए पृ० ४८९।

आगे हथियार डाल रहा हूँ। इस प्रकार पहली बैठकमे ही अध्यक्ष द्वारा समान दृष्टिकोणवाले सदस्योंकी एक समिति बनानेका सारा प्रयोजन ही लगभग विफल सिद्ध हो गया।

[अंग्रेजीसे]

फाइल सख्या ३२/१२/३६, होम, पोलिटिकल; सौजन्य. राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट – ५

वल्लभभाई पटेलका पत्र राजेन्द्रप्रसादको[1]

२९ मई, १९३६

आपका २४ तारीखका पत्र . . . मिला। उसके साथ कृपालानीने आपको जो मत्र लिखा है वह भी संलग्न था।

बम्बईमे दिये गये उनके[2] भाषणोने मुझे उद्विग्न कर दिया है। मुझे खद्दरके बारेमे उतनी अधिक चिन्ता नही है। यदि उनका यही रवैया रहा तो इसका परिणाम पलट कर उन्हीके सर पड़ेगा। का० स० मे सदस्योके मनोनयनके सम्बन्धमें, उन्होने जो व्यथित बेगुनाहीका रुख अख्तियार किया है, विशेषकर किसी भी एक महिलाको उसमे मनोनीत न किये जानेकी भूलके सम्बन्धमे उन्होने जो वक्तव्य दिया है, उसे मै सहन नही कर सकता। राजाजी भी बहुत क्षुब्ध है।

इन मुद्दो पर बापूने उन्हे लिखा था। उन्होने जो उत्तर दिया है उसके उद्धरण तथा का० स० मे मनोनयनके विषय पर बापूने उन्हे जो अन्तिम पत्र लिखा है, वे सब आपके सूचनार्थ इस पत्रके साथ संलग्न हैं। खादीके सम्बन्धमें उनका कहना है कि जो विवरण दिया गया है वह ठीक नही है और उन्होने अपने भाषणका सही विवरण दूसरे दिन जारी कर दिया था, हालाँकि मैंने उसे किसी भी अखबारमें नही देखा है। का० स० के बारेमे उन्होने जो जवाब दिया है वह बहुत घटिया है और मै नही समझता कि मैं उसे अपने गले उतार सकूंगा। यह एक अपमानजनक स्थिति है जिसमें कम-से-कम मैं तो किसी भी मूल्य पर ठहर नही सकता। उनसे आशा थी कि वे अपने साथियोके साथ शिष्टतापूर्वक पेश आयेंगे। लेकिन वे ऐसा नही कर सके हैं, अथवा यदि वे समझते है कि हम सब उनके लिए भार-स्वरूप हैं, तो हमें उनके रास्तेसे अवश्य ही हट जाना चाहिए।

मैं कल बगलोर जा रहा हूँ। वहाँ मै १२ तारीख तक रहूँगा और फिर हम सब अपने-अपने स्थानोको चले जायेंगे। आशा है आपका काम ठीक तरहसे चल रहा है।

[अंग्रेजीसे]

फाइल सख्या ३२/१२/३६ होम, पोलिटिकल; सौजन्य. राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. देखिए पृ० ४९०।

२. जवाहरलाल नेहरूके।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गाधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली गाधी साहित्य और तत्सम्बन्धी कागजातका केन्द्रीय सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

भारत कला भवन, वाराणसी।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय · पुस्तकालय तथा आलेख सग्रहालय, जिसमे गाधीजीसे सम्बन्धित कागजात रखे है।

'गुजराती' · वम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल'. बम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'लीडर' · इलाहाबादसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हरिजन': रामचन्द्र वैद्यनाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित अग्रेजी साप्ताहिक, जिसका प्रकाशन गाधीजीकी देखरेखमे ११ फरवरी, १९३३ को पूनासे आरम्भ हुआ था।

'हरिजनबन्धु' . चन्द्रशकर शुक्ल द्वारा सम्पादित तथा १२ मार्च, १९३३ से पूनासे प्रकाशित होनेवाला गुजराती साप्ताहिक।

'हरिजनसेवक' : वियोगी हरि द्वारा सम्पादित और २३ फरवरी, १९३३ से दिल्लीसे प्रकाशित होनेवाला हिन्दी साप्ताहिक।

'हितवाद' : नागपुरसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' नई दिल्लीसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' · मद्राससे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

प्यारेलाल पेपर्स . नई दिल्लीमे प्यारेलालके पास सुरक्षित कागजात।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी जो स्वराज्य आश्रम, वारडोलीमे सुरक्षित है।

होम डिपार्टमेंट, बम्बई सरकार।

'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अग्रेजी) सम्पादक. जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९५८।

'गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण'. प्रकाशक आर० एस० धोत्रे, वर्धा।

'टु द स्टुडेन्ट्स' (अग्रेजी) . सम्पादक और प्रकाशक . आनन्द तो० हिगोरानी, कराची, १९३५।

'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद' : सम्पादक काका कालेलकर, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'बापुना पत्रो – ६ : ग० स्व० गगाबहेनने' (गुजराती) सम्पादक : काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६० ।

'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) : सम्पादक · मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७ ।

'बापुना पत्रो – १० : श्री प्रभावतीबहेनने' (गुजराती) : सम्पादक : काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६६ ।

'बापुना पत्रो – २ · सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती) · सम्पादक . मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५२ ।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) . मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८ ।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' · हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम मुद्रणालय, प्रयाग, १९५७ ।

'बापूके पत्र – ८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम' : सम्पादक : काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६३ ।

'बापूज़ लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी) : नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४९ ।

'महात्मा : लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी,' खण्ड – ४ (अंग्रेजी) . डी० जी० तेन्दुलकर, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण - मन्त्रालय, भारत सरकार ।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) : सम्पादक . एलिस एम० बार्न्स, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९५६ ।

'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री' (अंग्रेजी) : सम्पादक टी० एन० जगदीशन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६३ ।

'श्रीमद्‌राजचन्द्र' (गुजराती) : सम्पादक : गोपालदास जीवाभाई पटेल, श्री जैन साहित्य प्रकाशन समिति, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, १९३५ ।

'श्रीरामचरितमानस' . सम्पादक . रामनरेश त्रिपाठी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, १९५२ ।

'सत्याग्रह इन गांधीजीज़ ओन वर्ड्स' (अंग्रेजी) · प्रकाशक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी, इलाहाबाद, १९३५ ।

'सुरीनामके प्रवासी भारतीयोंके नाम' . प्रकाशक · भवानी भीख मिश्र, सुरीनाम, डच गायना ।

'हिन्दी संग्रहालय : संक्षिप्त परिचय' · हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, १९५१ ।

'(ए) हिस्ट्री ऑफ इंडियन्स इन मॉरिशस' (अंग्रेजी) : के० हजारीसिंह, जनरल प्रिंटिंग एण्ड स्टेशनरी क० लि०, १९५० ।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१ अक्टूबर, १९३५ से ३१ मई, १९३६ तक)

१ अक्टूबर · गाधीजी वर्धामें थे।

२ अक्टूबर गाधीजीकी सढसठवी वर्षगाँठ मनाई गई।
इटलीका अबीसीनिया पर हमला।

५-६ अक्टूबर : काग्रेस द्वारा मत्रिमण्डल बनानेके सम्बन्धमे गाधीजीने काग्रेसी नेताओके साथ बातचीत की।

११ अक्टूबर . गाधीजीने सुरीनामके प्रवासी भारतीयोके नाम सन्देश भेजा।
अ० भा० चरखा सघकी परिषद्की बैठककी अध्यक्षता की।

१२ अक्टूबर . अ० भा० चरखा सघकी परिषद्की बैठकमें सम्मिलित हुए।

१३ अक्टूबर : अ० भा० चरखा सघकी परिषद्की बैठकमे भाग लिया।
रवीन्द्रनाथ ठाकुरको आश्वासन दिया कि शान्तिनिकेतनके लिए जितने पैसेकी जरूरत है उसे इकट्ठा करनेके लिए "मै कुछ भी उठा नही रखूँगा"।

१४ अक्टूबर . बी० आर० अम्बेडकरने हरिजनोको सलाह दी कि वे हिन्दू-धर्मका परित्याग कर उस धर्मको स्वीकार कर ले जो उन्हे शेष लोगोके समान दर्जा और व्यवहार दे सके।

१५ अक्टूबर समाचारपत्रोके माध्यमसे गाधीजीने बी० आर० अम्बेडकरसे अनुरोध किया कि "वे अपने क्रोधको शान्त करके अपने निर्णय पर एक बार फिर विचार करे"।

२० अक्टूबर . एक प्रतिनिधि-मण्डलको, जिसमे पतितपावन दास, डी० के० भगत, टी० ए० पुरोहित और डी० एस० शिन्दे शामिल थे, भेट दी।

२२ अक्टूबर ग्राम-सेवकोके समक्ष भाषण दिया।

२४ अक्टूबर 'श्रीमद्राजचन्द्र' की प्रस्तावना लिखी।

७-८ नवम्बर अ० भा० ग्रामोद्योग सघकी बैठकमे भाग लिया।

१० नवम्बर . राजचन्द्र जयन्तीके अवसर पर भाषण दिया।

१६ नवम्बर डी० के० देवधरकी मृत्यु हुई।

२३ नवम्बरके पूर्व . गाधीजीने वर्धाके प्राध्यापको और छात्रोके समक्ष भाषण दिया।

२३ नवम्बर : 'हरिजन' मे डी० के० देवधरके प्रति श्रद्धाजलि अर्पित की।

२४ नवम्बर · गुजरातियोसे अपील की कि वे गुजरात हरिजन सेवक सघके लिए दान दे।

३ दिसम्बर · मार्गरेट सैगरको भेट दी।

४ दिसम्बर विद्यागौरी नीलकण्ठके षष्टिपूर्ति समारोहके लिए सन्देश भेजा।
मार्गरेट सैगरको भेट दी।

७ दिसम्बर : अकस्मात् बीमार पड़ गये और विश्राम करनेकी सलाह दी गई।
१३ दिसम्बर : राजेन्द्रप्रसादसे भेंट की।
२७ दिसम्बरके पूर्व . 'सत्याग्रह इन गांधीजीज़ ओनवर्ड्स' की प्रस्तावना लिखी।
२८ दिसम्बरके पूर्व . कांग्रेस स्वर्ण-जयन्ती सम्मेलनके लिए सन्देश भेजा।
३१ दिसम्बर : इन्टरनेशनल फेडरेशन ऑफ फेलोशिपके सदस्योंसे मुलाकात की।

१९३६

७ जनवरी · म्यूरियल लेस्टर, डॉ० टोमिको कोरो तथा श्रीमती टायसीसे मुलाकात की।
९ जनवरी · गांधीजीके कुछ दाँत निकाले गये।
महादेव देसाईने एसोसिएटेड प्रेसको बताया कि "गत कुछ सप्ताहसे गांधीजीको उच्च रक्तचापकी शिकायत रह रही है, लेकिन उनकी दशामें धीरे-धीरे स्पष्ट सुधार हो रहा है।"
११ जनवरीके पूर्व गांधीजीने योने नोगूचीको भेंट दी।
१७ जनवरीके पूर्व · बिहार राजनीतिक परिषद्को सन्देश भेजा।
१७ जनवरी . बम्बई पहुँचे।
१९ जनवरी : कुछ और दाँत निकाले गये।
२० जनवरी : किंग जॉर्ज पंचमकी मृत्यु हुई।
२१ जनवरी : गांधीजीने क्वीन मेरीको तार द्वारा संवेदना-सन्देश भेजा।
२२ जनवरी : अहमदाबाद पहुँचे।
१. फरवरी · जवाहरलाल नेहरू कांग्रेस-अध्यक्ष निर्वाचित हुए।
९ फरवरी म्यूरियल लेस्टरसे मिले।
१२ फरवरी . प्रभाशंकर पट्टणीसे मिले।
१६ फरवरी हरिजन आश्रममें गये और आश्रमवासियोंके समक्ष भाषण दिया।
१८ फरवरी दिनशा वाछाका निधन हो गया।
१९ फरवरी . गुजरात विद्यापीठके छात्रोंके समक्ष भाषण दिया।
दिनशा वाछाको श्रद्धांजलि अर्पित की।
२१ फरवरी : वर्धा जाते हुए बारडोली पहुँचे।
अमेरिकी नीग्रो लोगोंके प्रतिनिधिमण्डलको भेंट दी।
२२ फरवरी : ग्राम-कार्यकर्त्ताओंकी सभामें भाषण दिया।
२३ फरवरी : वर्धा पहुँचे।
२८ फरवरी · कमला नेहरूकी मृत्यु हुई।
समाचारपत्रोंके माध्यमसे कमला नेहरूको श्रद्धांजलि अर्पित की, विजयलक्ष्मी पण्डितको संवेदना-सन्देश भेजा।
सावलीके लिए प्रस्थान किया।
२९ फरवरी . सावलीमें गांधी सेवा संघकी बैठकमें भाषण दिया।
अ० भा० ग्रामोद्योग संघकी प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।

१, ३ और ४ मार्च · गांधी सेवा संघकी बैठकमे भाषण दिये।
५ मार्च कृष्णदास गांधी और मनोज्ञाकी शादीमे सम्मिलित हुए।
गांधी सेवा संघकी बैठकमें भाषण दिया।
६ मार्च . गांधी सेवा संघकी बैठकमे भाषण दिया।
सावलीसे प्रस्थान किया।
७ मार्च दिल्ली जाते हुए वर्धा पहुँचे।
८ मार्च दिल्ली पहुँचे। हरिजन बस्तीमें ठहरे।
९ मार्च के पूर्व . गुरुकुलके दीक्षान्त समारोहके अवसर पर सन्देश भेजा।
९ मार्च गांधीजीने सुबह १० बजेसे शाम ५ बजे तक मौन-व्रत रखना शुरू किया।
१० मार्च जवाहरलाल नेहरू भारत लौटे।
१६ मार्च : सुबह १० बजे से शाम ५ बजे तक मौन-व्रत रखना बन्द कर दिया।
१७ मार्च जवाहरलाल नेहरूसे मिले।
१९ मार्च : जमनालाल बजाजको लिखी पर्चीमे गांधीजीने 'ग्राम-निवासके सम्बन्धमें अपनी कल्पना' को अभिव्यक्त किया।
२१ मार्च कांग्रेस कार्य-समितिने विचार-विमर्श शुरू किया।
२२ मार्च गांधीजीने एम० सी० राजाको भेट दी।
हरिजन सेवक संघकी बैठकमे भाग लिया।
२५ मार्च रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे मुलाकात की।
२७ मार्च . ६०,००० रुपयेका ड्राफ्ट रवीन्द्रनाथ ठाकुरके पास भेजा।
हरिजन सेवकोंके साथ बातचीत की।
२८ मार्च : लखनऊ पहुँचे।
खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।
३० मार्च समाचारपत्रोको दिये वक्तव्यमे इस खबरका खण्डन किया कि लॉर्ड हैलीफैक्स गांधीजी और लॉर्ड लिनलिथगोके बीच मुलाकात करानेका प्रबन्ध कर रहे हैं।
४ अप्रैल . इलाहाबाद पहुँचे।
५ अप्रैल कांग्रेस-अधिवेशनके लिए दक्षिण आफ्रिकाके प्रतिनिधि भवानीदयालने गांधीजीसे भेंट की।
हिन्दी साहित्य सम्मेलनके संग्रहालय तथा पुस्तकालयका उद्घाटन किया।
६ अप्रैल · गांधीजीने हरिजन बस्तीका दौरा किया।
तेजबहादुर सप्रू गांधीजीसे मिले।
७ अप्रैल · गांधीजीने कांग्रेस-कार्यसमितिकी बैठकमे भाग- लिया। इलाहाबादसे प्रस्थान किया।
८ अप्रैल : भारत लौटने पर सुभाषचन्द्र बोसको गिरफ्तार कर लिया गया।
लखनऊ पहुँचे।
१२ अप्रैल खादी प्रदर्शनीमें भाषण दिया।
१३ अप्रैल · जलियाँवाला बाग़ दिवस पर मौन-व्रत रखा।
नये संविधानको कांग्रेसने नामंजूर कर दिया।
१४ अप्रैल : अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलनमें भाषण।

१५ अप्रैल : शामको कांग्रेस पंडालमें हुई सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
१६ अप्रैलके पूर्व : दो विदेशी महिलाओंसे बातचीत की।
१६ अप्रैल : लखनऊसे प्रस्थान किया।
१७ अप्रैल : अपराह्णमें वर्धा पहुँचे।
१७ अप्रैलके पश्चात् : सेगाँव गये और ग्रामवासियोंके समक्ष भाषण देते हुए बताया कि मैंने आपके बीच बसनेका निर्णय किया है।
१८ अप्रैल : लिनलिथगोने वाइसराय-पद संभाला।
२३ अप्रैल : शामको वर्धासे प्रस्थान किया।
२४ अप्रैल : नागपुर पहुँचे।
सुबह अखिल भारतीय साहित्य परिषद्‌की अध्यक्षता की।
२६ अप्रैल : नागपुरमें हरिलालने गांधीजीसे भेंट की। रातको वर्धा पहुँचे।
२७ अप्रैल : वर्धामें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक हुई।
२८ अप्रैल : का० का० स० की बैठक में भाग लिया।
३० अप्रैल : गांधीजी प्रातःकाल सेगाँव चले गये।
१ मई : बी० आर० अम्बेडकर और वालचन्द हीराचन्दसे मुलाकात की।
३ मई : वर्धामें अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघकी प्रदर्शनीका उद्‌घाटन किया।
४ मई : सेगाँवमें।
६ मई : पवनारमें, खादी-यात्रामें भाषण दिया।
७ मई : वर्धामें अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघकी आम वार्षिक बैठकमें भाषण दिया।
८ मई : ग्राम-कार्यकर्त्ता प्रशिक्षणालयमें भाषण दिया।
शामको बंगलोरके लिए प्रस्थान किया।
९ मई : बंगलोर जाते हुए सुबह मद्रास पहुँचे।
एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको दी भेंटमें 'भारतीय अथवा विश्व राजनीति' पर टीका-टिप्पणी करनेसे इनकार कर दिया।
१० मई : नन्दी हिल पहुँचे।
डॉ० मु० अ० अन्सारीकी मृत्यु हुई।
१० मई या उसके पश्चात् : गांधीजीने सर सी० वी० रामन और डॉ० रैहमको भेंट दी।
११ मई : बेगम अन्सारीको तार द्वारा संवेदना-सन्देश भेजा।
एसोसिएटेड प्रेसको डॉ० मु० अ० अन्सारीकी मृत्यु पर सन्देश भेजा।
१४ मई : कैप्टेन सी० ऊमनसे मुलाकात की।
१५ मई : गांधीजीको मेरी चेजलेकी ऋषीकेशमें मृत्यु हो जानेका समाचार मिला।
२९ मई : हरिलाल गांधीने इस्लाम-धर्म ग्रहण करके अपना नाम अब्दुल्ला रख लिया।
३१ मईके पूर्व : सर सी० वी० रामन और उनकी पत्नीसे मुलाकात की।
डॉ० एरिका डासन रॉसेन्थलके साथ बातचीत की।
३१ मई : सुबह बंगलोर जानेके लिए नन्दी हिलसे प्रस्थान किया।
चिकबल्लापुर, चिन्तामणि, कोलार और बोरिंगपेट गये और वहाँ सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये।
कोलार स्वर्ण-खान क्षेत्रमें मजदूरोंके सामने भाषण दिया।
बंगलोरमें नगरपालिका बस्तीमें गये।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

ए

ओ

क

घ

च

छ

ज

ट

ठ

ड

त

थ

द

ध

न

प

भ

म

य

र

ह